सत्यनाम।

# कबीरपंथी-शब्दावली

कबीराश्रमाचार्य परमार्थी संत भारत पथिक

स्वामी श्री. युगलानन्द

विहारी निर्मित।


मुद्रक व प्रकाशक-

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,

कल्याण-बम्बई.

संवत २०१२, सन १९५५.

सतसुकृत आदि अदली अजर अचिंत पुरुष मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरतियोगसंतायन धनी, धर्मदासकी दया वचन वंश प्रतापी आचार्य्य—

१ चूरामणिनाम, २ सुदर्शननाम, ३ कुलपतिनाम, ४ परमोध गुरु बालापीरनाम, ५ कमलनाम, ६ अमोलनाम, ७ सुरतिसनेहीनाम, ८ हक्कनाम, ९ पाकनाम, १० प्रगटनाम, ११ धीरजनाम, १२ उग्र-नाम, १३ दयानाम साहबकी दया.

वर्तमान वचन वंश प्रतापी आचार्य कबीर साहबके अधिकारी आचार्य शिरोमणि १०८ श्रीमहंत काशीदासजी साहबकी तथा सर्व संत महंतोंकी दयासे

कबीरपंथी शब्दावली
प्रारंभः।

---

धर्मरक्षक सिद्धान्त ।

शब्द कहै सो कीजिये, गुरुवा बडे लबार ।
अपने अपने स्वार्थको, ठौर ठौर बटमार ॥

# अथ भूमिका प्रारम्भः ।

सत्यलोकके सत्यपुरुष, ज्ञानी सोइ अनूप ।
जोगजीत प्रभु आप हैं, आदिरूप अनुरूप ॥ १ ॥
सत्यनाम सतसुकृत विभु, अदली आदि अकाम ।
अजर अचिन्त पुरुष अहै, नाम मुनीन्द्र अनाम ॥ २ ॥
करुणामय कबीर गुरू, धर्मदासके पीर ।
देह धरि आय जगतमें, साइ विदइ शरीर ॥ ३ ॥
पच्छा पच्छमें जग फँसी, भूले सत्यकी राह ।
दोउ दीनके जीवको, आय लगावन थाह ॥ ४ ॥
सत्य पंथ परगटकरी, स्वसम्वेदकी रीति ।
भूल पाखण्ड छुडाइके, सत्यलखायी नीति ॥ ५ ॥
नीति लखायी सत्यकी, वचन वंश परकाश ।
वचन मानु सो वंश है, प्रगट कहा अविनाश ॥ ६ ॥
नाशमान सब जगत है, जहँ लग दृष्टि-विकास ।
वचन वंशकी शरणते, होय सत्यको भास ॥ ७ ॥
सत्य भासे जब जीवको, सत्य नाम आधार ।
काल भास तब छूटई, आवे सत्य विचार ॥ ८ ॥
सत विचार परतापते, परखे काल दयाल ।
बिना परख न मुक्ति है, बन्धन सदा विशाल ॥ ९ ॥
जड चैतन दो दृश्य हैं, जामे अटके जीव ।
वचन वंश निज गुरु अहै, देइ बताई पीव ॥ १० ॥
मूल लखे जब जगतको, परखे मान गुमान ।
भूल मिटे तब जीवको, पावे सत्य अमान ॥ ११ ॥

सत्य ज्ञानकी चाह जिहिं, धर्मदास तिहि नाम।
बोधे सो गुरु देव है, सत्य कबीर अकाम ॥ १२ ॥
बोध पाइ गुरु पद गहे, धर्मदास निज रूप।
इन्द्री ब्यालिस बोधिके, वंश ब्यालिस भूप ॥ १३ ॥
वचन गहे सो वंश है, विना वचन नहिं वंश।
वंश अंश सब वचन है, विना वचन विध्वंश ॥ १४ ॥
प्रकट कही गुरु कबीरने, वचन लखायो आप।
विना वचन कस होवई, सत्य असत्यको माप ॥ १५ ॥
सत्य असत्यके मापको, शब्दकीन आधार।
मुक्तामनि सोई अहै, जानै जाननहार ॥ १६ ॥
विना शब्द अन्धे भये, सूझ बाट ना बाट।
काल जाल अरुझाइके, पडे जगतके ठाट ॥ १७ ॥
ठाट बाटमें जगतके, भूले सत्य सुराह।
गुरू छाडि गुरुवा गहै, कौन कहै अवगाह ॥ १८ ॥
गुरुवा रूप जगत धरी, काल फँसावे जीव।
पक्षवादमें डालिके, सत्य छुडावे पीव ॥ १९ ॥
सत्य छाडि असत गाहि, सत औगुनकी खान।
शब्द विना परखे नहीं, पावे दुक्ख निदान ॥ २० ॥
दुक्ख मिटावन कारने, सत कबीर कहि दीन।
शब्द रूप मैं जगतमें, डोलों सदा परबीन ॥ २१ ॥
शब्द शब्द बहु अंतरा, सार शब्द मथि लेहु।
सार शब्द गरहन करी, त्याग असारको देहु ॥ २२ ॥
शब्द विनु सुरति आंधरी, कहू कहाँ को जाय।
द्वार न पावे शब्दको, फिरि फिरि भटका खाय ॥ २३ ॥
शब्द हमारा आदिका, सुनि मति जाहु सरकि।
जो चांहो निज तत्वको, शब्दे लेहु परखि ॥ २४ ॥

शब्दे मारा गिरपडा, शब्दे छाडा राज ।
जिन जिन शब्द विवेकिया, तिनका सँवँरा काज ॥ २५ ॥

शब्द कहै सो कीजिये, गुरुवा बडे लबार ।
अपने अपने स्वार्थको, ठौर ठौर बटमार ॥ २६ ॥

ताते धर्मनि कर परचारा । बिना शब्द नहिं जीव उबारा ।
शब्द गहे सो पंथ चलावे । बिना शब्द नहिं सत्य लखावे ॥

शब्द गहे सो भवजल पारा । बिना शब्द बूडे मँझधारा ॥
ताते वर्शन देहु चिताई । जो चाहे निज हित वह भाई ॥

शब्द हुकुम नहिं टारें कबहीं । आनन्द राज सुख विलसें तबहीं ॥
कहँ लगि कहों सुनो धर्मदासा । आगम भेद कियो परगासा ॥

( आगम संदेश )

इसी प्रकार सद्गुरु कबीर, आदिसे अंततक, जीवोंको कालसे बचनेके लिये, शब्दकी पारख करनेकी शिक्षा देते हैं । संसारमें शब्द जालही ऐसा जाल है जिसमें फँसकर जीव सुखदुख आवागमन जन्म मरण आदि द्वंदजमें पडकर अनन्त कष्ट भोगा करते हैं । इसी लिये सद्गुरुने उन शब्दजालोंको काटनेके लिये सत्य शब्द प्रकट कर जीवोंको दुखसे छूटनेका मार्ग बतलाया है । जिस प्रकार लोहेको काटनेके लिये लोहेकीही छेनी हथोड़ा और निहायकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार शब्दोंसेही शब्दकी परख कर. उसकी कोर कसरको निकाल. हंसके समान सारवस्तुको ग्रहण करनेका आदेश सद्गुरुने दिया है । किन्तु काल और कर्मके प्रतापसे, सत्यकी ओर बहुत कम लोगोंका झुकाव होता है और मायिक संसारमें लोग विशेष प्रवृत्त होकर काल कर्म कोही सत्य मानकर यथार्थ सत्यकी उपेक्षा करते हैं । यद्यपि यह दशा देखकर, उत्साह भंग हो जाता है, वृत्ति इस ओर जानेसे अटकती है, तथापि सद्गुरुके आदेश " धर्मदास मैं—

तोहि सुनावा । कै कै बार जिवन पर आवा ॥ जीवनकाज फिरौं मैं जाई । जे चीन्है तेहि लोक पठाई ॥ तुम क्यों चिन्ता मनमें आनो । आपन काज करो मन मानों ॥ " के अनुसार उसने जो कार्य्य सौंपा है सो करना प्रत्येकका कर्तव्य है । सद्गुरुने जन्मसेही मुझे कबीरपंथी वाणीके प्रकाशन और ग्रन्थोंके जीर्णोद्धारका कार्य्य सौंपा है । उसीकी आज्ञा और सहायतासे आजतक मैंने निष्काम वृत्तिसे अनेक ग्रन्थोंका प्रकाशन किया कराया है, इस ग्रन्थके भी प्रकाशनमें सद्गुरुकी दयाकाही हाथ है । विशेष प्रस्तावनामें देखना चाहिये ।

कबीराश्रम खरसिया स्टेशन
जि० बिलासपुर सी० पी०
हाल
कुबेरभवन राष्ट्रियशाला रोड
विले पारले बंबई.
ता० २७-१० ३१

भवदीय
श्रीयुगलानन्द बिहारी ।
( आचार्य्य कबीराश्रम )

सत्यनाम ।

# प्रस्तावना.
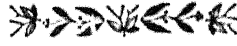
## मंगलाचरण ।

सत सुकृत सतयुग किये, सत्यनाम परचार ।
अगनित चिताय जीव जग, रहे काल झखमार ॥ १ ॥
नाममुनीन्द्र सुविदित है, त्रेता युगके माहिं ।
दुआपरमें करुनामय, कलियुग कबीर कहांहिं ॥ २ ॥
जासुचरण वन्दन करी, पाइ शब्द निशान ।
धर्मदास निजवंश सह, जगत गुरू परमान ॥ ३ ॥
ता कबीरके चरणमें, युगल दास शिरनाय ।
बार बार वन्दन करै, सतगुरु होहु सहाय ॥ ४ ॥
युगलदास के माथपर, सतगुरु दीना हाथ ।
युगल आनन्द पाइके, भये अनाथ सनाथ ॥ ५ ॥
वचन वंशहिं परगटकरो, दीना सत्य लखाय ।
शब्द लखे सो पारखी, पारख माहिं समाय ॥ ६ ॥
पारख पाई जगतमें, हंस रूप होय आप ।
आपन पौ सन्मुख रखै, मिटै सकल संताप ॥ ७ ॥
संताप मिटै तब जीवका, हंस रूप जब होय ।
षटकी[1] रेषा तब मिटै, निज स्वरूप लखि जोय ॥ ८ ॥
निज स्वरूपके लखतही, मिटै आस अरु भास ।
आसा बासा कलपना, सब ही होय विनास ॥ ९ ॥

---

१ षटकी रेषाको जाननेके लिये, " पंचदेहकानिर्णय " इसी ग्रन्थके पृष्ठ १६० से १६४ तक देखो ॥ और शरीरके अस्ति जायते आदि षट विकार ॥

माया ब्रह्म अरु जीवलों, ईश जगत परमान ।
सबही कल्पना छिनकमें, मेटे होय अमान ॥ १० ॥
मान मिटे जब जीवका, प्रत्यक्ष गुरु दरसाय ।
सत्य लोक सोइ जानिये, कह्यो कबीर समझाय ॥ ११ ॥

सद्गुरु कबीर अमर अविनाशी अजन्मा और विदेही होनेपरभी, करुणास्वरूप होनेके कारण, सदा करुणाकर जगतमें जीवोंको चेताने और काल जालसे छुडानेके लिये, विचार और मननका उपदेश दे सत्यसुकृतमें लगा, स्वकृत सत्यनामको प्राप्त करा, कर सुखी किया करता है और गुप्त रूपसे सर्व कालमें सबके संग रहकर, गुरू रूपसे प्रकट हो, उपदेश देता रहता है । तथापि विशेष रूपसे सम्वत १४५६ वि० के जेठ पूर्निमाको काशीमें प्रकट होकर सत्यका डंका बजा, जीवोंको चेताना आरम्भ किया और अपने उपदेश और कथनको विशेष रूपसे, निज श्रद्धालुओंके हृदयमें दृढीभूत करानेके हेतु, अन्तिम लीला करनेके लिये, सम्वत १५७५ में मगहरको गमन किया था ।

उस समय समस्त भारतवर्षमें आपकाही डंका बज रहाथा, इस हेतु आपके काशी छोडतेही वर्तमान कालके समान रेल तार और डाक आदिका प्रबन्ध न रहते हुए भी, आपके मगहर जानेका समाचार समस्त भारतवर्षमें तत्कालही फैल गया और देश देशान्तरोंसे संत महात्मा सिद्ध साधुओंके झुन्डके झुंड मगहरमें इकट्ठे होने लगे और वहां बहुत बडा भारी मेला लगगया । यद्यपि बिजलीखां नवाब, राजा बीरसिंह बघेल आदि बडे बडे राजा महाराजा तथा बडे बडे धनाढ्य साहुकार लोग, जो आपके श्रद्धालु सेवकथे, वे संत महंतोंकी सेवामें सब प्रकारसे तत्परथे तथापि, मगहरमें पानीका इतना अभाव था कि, बहुत उपाय करनेपरभी पानीकी कमीसे सबको बडा कष्ट होने लगा । उस समय नवाब बिजलीखाँ आदिकी प्रार्थनापर सद्गुरु कबीरकी दया दृष्टिसे आमी नदी प्रकट हुइ, जिससे सबका कष्ट निवारन हुआ और अबतक होता है ।

उसी समय लेखकके पुरुषा श्री दक्ष नाम साहबभी, जो गोरख-पुरमें रहकर परमार्थ प्राप्तिके लिये, योगका साधन कर रहे थे, मगहर गये और सद्गुरु कबीरके दर्शन और उपदेशसे कृतार्थ हो आपको गुरु धारणकर लिया । तबहीसे बराबर आजतक, कबीर पंथकाही धारण, लेखकके वंशमें चला आता है । उसी सिलसिलेमें, गोरखपुरके घासी कटरे, देवरिया, नव तन, मलहपुरवा, हातामठिया, मरवटटोला, आदि स्थान इस समयभी वर्तमान है । इसीसे पाठक समझ सकते हैं कि, कबीर साहबके सिद्धान्त और वाणी वचन, वंश परम्परासे सीने बसीने चले आनेके कारण, कितना, और किसरूपमें लेखकसे सम्बद्ध है । इतना होनेपर भी, लेखकके पुरुषाओंने कोई विशेष पंथ नहीं चलाया, न विशेष अपना कोई अलग वेष बनाया । इसका कारण यही है कि, पंथ चलानेका अधिकारतो केवल धर्मदासजीकोही है । धर्मदासजीके समानही जो सद्गुरुके वचनमें पूर्ण श्रद्धा रखकर कमाई करे वह वचन वंश कहला सकता है किन्तु पंथके अधिकारी तो धर्म-दासजी ही हैं । इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि, आज भारतमें क्या संसार भरमें कबीरके नामसे जितने वचन वाणी प्रचलित हैं सबका सम्बन्ध धर्मदासजीसे जरूर है । सबसे पहले धर्मदासजीनेही सद्गुरुकी वाणीको संग्रहकर उसकी व्याख्या आरम्भ की और उसी क्रममें सैकडों ग्रन्थोंकी रचना होगयी । आपकी आत्मिक शक्ति और गुरु भक्ति तथा गुरु वचनमें दृढताका ही प्रताप है कि, आजतक भी प्रायः जो वाणी वचन बनते हैं सबमें कबीरके साथ धर्मदासजीका नाम किसी न किसी रूपमें अवश्य आता है ।

धर्मदासजीके लिखे भविष्य कथन भी, चाहे वह किसीके लिये क्यों नहो, ऐसा अटल है कि, तिल प्रमाण भी फरक नहीं पडता । और तो और आपने अपने वंशोंके विषयमें भी कबीर मुखसे जितनी भविष्यत वाणी लिखी है, वह भी अक्षर अक्षर सत्य उतरा है और

आगे भी सत्य उतरेगा । इसके प्रमाणके लिये ग्रन्थ " आगम संदेश " कवीराश्रम खरसिया से मंगाकर देखना चाहिये ।

एकतो मेरे पुरुषा स्वतः कवीर साहबके शिष्य हुए थे, दूसरे वह पंथ पंथाइयोंके झगडेसे अलग रहकर सदा सत्यका आश्रय करके, आत्म तत्वके विचारमें मग्न रहा करते थे । इसका परिणाम यह हुआ कि, सद्ग्रंथोंका संग्रह हो गया जो, मेरे पिता श्री १०८ गोस्वामी बख्शी गोपाललालजीके पुस्तकालयसे मुझे प्राप्त हुआ ।

इसके अतिरिक्त सम्वत् १९४६ में जब मेरी आयु केवल १६ वर्षकी थी तबहीं में वंशप्रतापी बेलवतियाके महंत श्री १०८ श्रीमान गोस्वामी श्याम विहारी दासजी साहबकी शरणमें प्राप्त हुआ, तबसे और भी सहायता मिली और छत्तीसगढसे विशेष सम्बन्ध जुटा । फिरतो थोडेही दिनोंके पश्चात् श्री १०८ पं श्रीउग्रनाम साहबका दर्शन रेगनिया स्थानमें हुआ ।

उसके थोडे दिनोंके पश्चातही मुझे सद्गुरुके आदेशसे, सद्गुरुके समान पिताश्रीकी आज्ञा लेकर, देश भ्रमणको निकलना पडा । जिसका संक्षेप वृत्तांत " सत्य कबीरकी साखी " की प्रस्तावनामें दिया है, जिसको देखना हो " श्रीवेंकटेश्वर प्रेस बम्बई " से मंगाकर देख सकता है ।

देश भ्रमणसे लौटनेपर सबसे प्रथम वाणियोंके प्रकाशनका कार्य्य मैंने सम्वत् १९५३ में लखनौसे आरम्भ किया था—उस समय मूल-रमैनीकबीरसंग्रह, ( १०८ अंगकी साखी ) आदि प्रकाशित करके जो निवेदन निकाला था सो यह है ।

निवेदन जो सबसे पहले ग्रन्थ प्रकाशनके पश्चात् निकाला ।

॥ सद्गुरु कबीरसाहबकी दया ।

वारों तन मन धन सबै, पद परखावन हार ।
युग अनन्त जो पचिमरे, बिनगुरु नहि निस्तार ॥

महाशय !

जबसे कलियुगने अपना राज्य पाया, तबसे भारत वर्षसे, सत्य धर्म्म और विचार विद्याका लोप होने लगा और अनेक प्रकारके हिंसा और दम्भ युक्त स्वार्थ साधक मत फैलने लगे, जिससे सत्य-पुरुष, सच्चिदानन्द सद्गुरुकी सेवाको छोड़, बहुतसे हिंसक देवताओंकी कल्पना कर, उनके बहानेसे नित्य प्रति क्रोडों जीवोंकी हिंसा होने लगी, जिससे लोगोंकी बुद्धि तमोगुणी हो, सत्य धर्मके समझनेमें असमर्थ हो गयी ॥ वेद शास्त्रका पढना विचारना जाता रहा, सत्य-मार्गका लोप होने लगा और उसकी यहां तक वृद्धी हुई कि, भारत वर्षके लाखों आदमी अपने पवित्र सनातनधर्मको छोड ( अपने धर्मके प्रभावको न जाननेके कारण ) परमधर्मको स्वीकार करने लगे ॥

परन्तु इस प्रवाहको रोकनेवाला, बादशाह सिकन्दर लोदीके पहिले तक, कोई खडा नहीं हुआ सिकन्दरके समयमें सद्गुरु सत्यकबीर-साहब प्रकट हुए और इतने प्रसिद्ध हुये कि, भारत वर्षका एक बच्चा भी आज कल उनके नामको जानता और उनके पदोंको गाय गाय आनन्द प्राप्त करता है बडे बूढोंका तो कहनाही क्या है। उन्होंने उस समय उन नानाप्रकारके, पाखण्ड हिंसा युक्त धर्मोंमें पडे जीवोंको, सत्य विचार हीन हो दुःख भोगते देख, करुणाकर सबके हितका शोच किया।

संसारी पारख बिना, कैसे पावें ठौर ।
विविधि युक्ति अनमिल सबे, भोगवहिं औरके और ॥

और सत्यका उपदेश देना आरम्भ कर दिया ॥

और सरल देश भाषामें वेद शास्त्रोंके सिद्धांत तथा लोक परलोकमें सुख देनेवाले अनेक ग्रन्थ तथा सहस्त्रशः शब्द पद भजन आदिकी रचनाकर लोगोंको सत्य मार्ग सुझाया और पाखण्डको दूर किया।

जिसका फल यह हुआ कि, सहस्त्रों मनुष्योंने फिर अपने पवित्र धर्मकी तरफ लौट कर पर धर्मको छोड अपने हिन्दू धर्मको ग्रहण किया।

जिसका सबूत यद्यपि उपस्थित है कि, सहस्त्रशः मुसलमान कबीर पंथी, जिनका व्यवहार वर्तमान है, चाल चलन आचार विचार सब हिन्दुओंके समान और अहिंसक, मद्यमांस त्यागी तो ऐसे हैं कि, मद्य मांसाहारियोंके साथ भोजन तक नहीं करते,

और इसी प्रभावके ऊपरसे कबीरपंथकी भी स्थापना हुइ और तबसे सन्तोंने बहुतसे ग्रंथ आदि रचना किया, जिससे हिन्दू धर्मका बहुत बड़ा उपकार हुआ ॥

इन सब उपकार तथा दयाको न विचार, आज कल बहुतसे महाशयोंने, बिना तहकीक किये बिना शोचे विचारे, अनेक कपोल कल्पित बातें गढंत कर, उन ग्रन्थों तथा वचनोंका निरादर तथा निन्दा करना आरम्भ कर दिया है ॥

परन्तु ये लोग ऐसा क्यों करते हैं? इसका कारण क्या है? क्या वे जान कर निन्दा करते हैं? इन प्रश्नोंके उत्तरको यदि हम विचार कर देखें तो केवल यही उत्तर देंगे कि, नहीं! वे जानकर निन्दा नहीं करते, परन्तु सुनी सुनाई बातोंके ऊपर आक्षेप करते हैं, जिनमें प्रायः वही बातें होती हैं कि, जो कोई २ बुद्धिहीन असारग्राही पक्षपाती अपने स्वभावानुसार एक दूसरेकी निन्दामें कहा करते हैं और इसी तरहसे सब धर्मोंके विषयमें कहा जा सकता है. और जिन्होंने सुनी सुनाई बातोंके ऊपर न जाकरके सच्चे दिल से पक्ष छोड़ विचार किया है, वे कभी निन्दा का नाम नहीं लेते जैसा नाभा जी अपने भक्तमाल में लिखते हैं ॥

छप्पय।

भक्ति विमुख धर्म सब अधर्म करि गायो।
योग यज्ञ व्रत दान भजन विनु तुच्छ बतायो॥
हिन्दू तुरुक परमाण रमैनी शब्दै साखी।
पक्षपात नहीं करी सबनके हितकी भाखी॥
आरुढ दशा होय जगतमें सुख देखी नाहि न भनी।
कबीर कानि राखी नहीं वर्ण आश्रम षट दर्शनी॥

अब इसका विचार करना कि, क्या कारण है कि, आज कलके लोग कबीर साहेब के आशयको न समझ कर, निन्दा पर कमर बांधके खड़े होते हैं? इसका कारण सिवाय इसके कि, उन्होंने ग्रन्थ तथा सद्गुरु कबीर साहेबकी वाणीका विचार नहीं किया है, दूसरा कुछ नहीं हो सकता॥

परन्तु मैं उनका भी इसमें दोष नहीं देता क्योंकि, आज कल प्रेस होजानेसे लोगोंको छापा पुस्तकें कि, जो थोड़ेही परिश्रममें प्राप्त होती हैं देखनेका स्वभाव पड गया है, किन्तु आजतक कबीर साहेबके ग्रन्थ छपे नहीं हैं जिस्से सर्व साधारण उन्हे देख, उनके आशयको समझ मिथ्या पक्षको छोड निन्दा विरक्त होवें॥

इस हेतु, ग्रन्थके मिलनेके अभावको दूर करनेके लिये, मैंने अत्यंत परिश्रम से ग्रन्थोंको इकट्ठा किया है और छपवानेको भी आरम्भ कर दिया है, जिनमेंसे कई एक पुस्तकें छपकर तैयार हो गई हैं और सब छापी जारही है और क्रमशः छपती रहेंगी॥

अब सर्व महशयोंसे केवल इतना कहना चाहता हूं कि, यदि आप सच्चे धर्मके खोजी हैं, अपने सरल देशभाषामें तत्त्व ज्ञान (Philosoqhy) जानना चाहते हैं, हिन्दी भाषाके प्रेमी हैं, सर्व साधारणकी सरलदेश-भाषा-( ठेठ हिन्दी ) में हृदयवेधक भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, नीति,

आदिके शब्दोंको चाहते हैं तो, जैसे और पुस्तकों में बहुत कुछ खर्च करते हैं, वैसे इस में भी थोड़ा लगाकर इसे भी देखिये ॥

और दो पैसे के कार्ड द्वारा अपने पता ठिकाने नाम ग्राम जिला प्रांत के नाम ( स्पष्ट साफ, हिन्दी, उर्दू, अंगरेजी, गुजराती, किसी अक्षरोंमें ) नीचे लिखे पतेसे भेज दीजिये कि, जिसके द्वारा जब जब पुस्तक छपे तब तब उसका विज्ञापन ( इश्तहार, जाहिरखबर समाचार ) आपके पास रवाना किया करूं ॥

यदि आप सत्यगुरु कबीर साहबके मतानुयायी हैं तो विशेष कहनेकी क्या आवश्यकता ? आप स्वयमही समझ लीजियेगा, सब धर्मवाले अपने २ गीत गारहे हैं और एक पक्ष तथा सोसाइटीको लेकर रिफारमर बनते हैं परन्तु, यह तो आपका पक्षरहित निर्पक्ष भावसे सर्वके उपकारार्थ कार्य्य है उठिये, जागिये और उन्नति कीजिये, आप सुधरिये, और दुखी जीवोंको जो पाखण्डमें फंसे दुख पारहे हैं, सत्यपथ लखाइये, पारख प्राप्त कराइये, अपने सच्चे दयालपदकी इस परोपकार द्वारा रक्षा कीजिये, अधिक क्या कहूँ। पुस्तकोंका सूचीपत्रभी साथ लगा है, उसमें लिखे पतेसे पुस्तक मंगाइये ॥

---

इसके पश्चात सम्वत १९५७ में जब कि, मैं अहमदाबादमें साबरमतीके किनारे, भीमनाथ पर, श्रीसंतदासजी साहबकी सहायतासे, सत्यपंथका प्रचार कर रहाथा, उस समय कबीरमन्शूरके हिन्दी भाषामें छपनेका समाचार पहुँचा, किसी श्रद्धालुके द्वारा एक फार्म भी देखनेको मिला। जिसे देखकर और मूल उर्दूग्रन्थसे अनेक अंशोंमें विपरीत जानकर मुझे बडा कष्ट हुआ, तब फार्म लाने वालोंसे मैंने अपना विचार प्रकटकर मनो वेदना बाहर की । जिसका समाचार हिन्दी कबीरमन्शूरके आदि प्रकाशक श्रद्धालु कबीरपंथी मकनजी कुबेर पंटर तथा उसके छापनेवाले श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके मालिक परम वैष्णव महान सज्जन धर्म धुरन्धर श्रीसेठ खेमराजजीको भी मिली। इन लोगोंने मुझे

अहमदाबादसे बुलानेका आयोजन किया, किन्तु, उस समय विशेष नियम पालन करते हुए, विशे, अवस्थामें रहनेके कारण, मैं शीघ्र बम्बई नहीं आसका, इसलिये कबीर मन्शूर छपनेका काम कुछ दिनतक बन्द रहा । पश्चात् मेरे नियम अनुष्ठानका समय पूरा हुआ और मैं बम्बई आकर घाटकोपरपर ठहरा, । तब श्रीयुत मकनजी कुबेर पेंटर और श्रीयुत सेठ खेमराजजी क्रमशः मुझसे मिले तथा अनुरोधकर बम्बई लेआये और कबीरमन्शूरकी छपाई आगे चली । जो कुछ पीछे छप चुकाथा, वह एक ऐसे सज्जनद्वारा अनुवाद कराया गया था जिसको धर्मकी गन्धभी नहीं लगी थी । इसलिये आवश्यकता तो इस बातकी थी कि, सब फिरसे शुद्ध करके दुबारा छपाया जाय, किन्तु, इसमें सेठजीको बहुत बडी हानि उठानी पडती थी, इस कारण मकनजीको समझा झाकर विशेष २ फार्म जिनमें बहुतही अशुद्धियाँ थीं छपवाकर शेष वैसेही रखना पडा । जो आजतक वैसेही हैं इस भेदको न जाननेवाले कतिपय महात्माओंने, मेरे ऊपर कटाक्षकर पत्रोंमें लेख भी छपवाये हैं किन्तु, मैंने उन्हे अनजान जानकर उत्तर तक नहीं दिया है । अब मैंने फिरसे कबीरमन्शूरको हाथमें लिया है और मूलसे बराबर मिलाकर, टीका टिप्पणी और प्रमाणोंसहित तय्यार किया है, सद्गुरुकी कृपा होगी तो थोडे दिनोंमें प्रकाशित भी हो जायगा ।

कबीरमन्शूरके पश्चातही " कबीरोपासनापद्धति " मकनजी कुबेर पेन्टरके अनुरोधसे लिखना पडाथा । उस समय श्री १०८ पंथी उग्रनाम साहबकी सेवामें कुदरमाल जानेकी जल्दी थी, क्योंकि इन्दौर कबीरमन्दिरके भूत पूर्व आचार्य सद्गुरु श्रीमहंत शम्भु दासजी साहबने वहां चलनेकी सूचना दीथी और भुसावलमें मिलनेकी बात निश्चित होगयी थी । इस लिये कबीरोपासनाके छापनेमें इतनी जल्दी की गयी कि, केवल आठ दिनमेंही ग्रन्थकी लिखाई छपाई सब होगयी और मैं कुदरमालको रवाना हो गया । पंश्री उग्रनाम साहबका दर्शन

तो दश बारह वर्ष पेश्तर रेंगनिया मठपर हो चुकाथा किन्तु महंत श्री शम्भु दासजी साहबका दर्शन सबसे पहले कुदरमालमेंही हुआ। फिर तो पंथश्रीकी आज्ञा और श्रीयुत महंत साहबकी सम्मतिसे, इस अनुचर द्वारा १९६० के कबीरपंथी संतसमागमका आयोजन हुआ। कबीरपंथमें यह समागम ऐसा था जो न भूतो न भविष्यति।

कुदरमालकी महा संतसमागम से लौटकर श्रीवेंकटेश्वर प्रेसमें कबीर-पंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन आरम्भ हुआ। जिसके परिणाम स्वरूप श्रीवें-कटेश्वर प्रेसकी सूचीमें, कबीरपंथी ग्रन्थोंका विभागही अलग हुआ। इतनेही नहीं कबीर पंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन और उठाव देखकर बना-रस, पटना, दर्भङ्गा, इलाहाबाद, कानपुर, नरसिंपुर, लाहौर, स्याल-कोट, अहमदाबाद, भावनगर, बडोदा सूरत आदि स्थानोंसेभी कबी रपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन आरम्भ होगया, जिसके परिणाम स्वरूप सैकडों कबीरपंथी ग्रन्थ आज बुकसेलरोंकी दूकानोंमें हाथोंहाथ बिकते देखे जाते हैं।

उस समय पहले पहल जब ग्रन्थ प्रकाशित होने लगे, कबीरपंथी समाजमें बडा भारी आन्दोलन मच गया, साधारण कबीरपंथी तो ग्रन्थोंको पाकर आनन्द मग्न होने लगे और स्वार्थी जो ग्रन्थोंको सेवक सतियोंको दिखाना भी पाप समझते थे, बडे घबराये, मुझपर उनको इतना क्रोध हुआ कि, मुझे पहले तो अदालतोंतक घसीटा और वहाँ जब कुछ वश नहीं चला तब, पंथश्री उग्रनाम साहबको समझा बुझाकर, मुझे ग्रन्थोंके छपानेसे रोकनेके हेतु, दामाखेडा बुलवा लिया, और दिखावेके लिये प्रेस भी लिया गया और प्रथम मेरे देख रेखमें रखा गया। जब मैंने ग्रन्थोंके छपानेकी बात चलायी तब बडे बडे प्रपंचों द्वारा ग्रन्थ छपायी की बात तो क्या प्रेससेही सम्बन्ध छोडना पडा-यद्यपि प्रेसमें ग्रन्थ छपानेकेही लोभसे मैंने अपनी गांठकेभी बहुत रुपये प्रेसमें लगादियाथा तथापि महान अन्यायसे सब गबन करलिया गया। बदलेमें दीवान हंस दास द्वारा मेरी झूठी निन्दा और बदना,

मीका खूब प्रचार किया गया । दीवान इस दासकी कारवाई पूर्वके संत महंतोंमेंतो चली नहीं क्योंकि, उन्हें दामाखेडवालोंका सबहाल मालूम था किन्तु, गुजरातके कतिपय लोगोंने उनकी बातोंको सत्य-मानकर द्वेषका बीज अपने अन्तः करणोंमें बोलिया, जिसका अंश आजतकभी दृष्टि गोचर होता है । अस्तु यहभी एक कालकी बाजीही थी नहीं तो साठ बासठ हजारकी लागतका प्रेस पं०श्री दयानाम साहब द्वारा, कुछ मूर्खोंके कहनेसे, नौ सौमें एक विधर्मीको क्यों दे दिया जाता ?

अस्तु काल भगवानकी कृपासे ग्रंथ और बाणी वचनके प्रकाशनमें सद विघ्न होता चला आताहै और सद्गुरु दयालकी दयासे मैं यथा शक्ति प्रयत्नमें लगाहीहूँ । कई वर्षोंके अथाग परिश्रमसे, इस वर्ष कबीरपंथी शब्दावलीका यह ग्रन्थ छपने पायाहै । कबीरमन्शूरमें भी हाथ लगगया है किन्तु, काल निरंजनकी दृष्टि उसकी ओर भी पडी है, अनेक विघ्न आकर उपस्थित हैं देखें क्या परिणाम होता है ?

यद्यपि मेरे पास इस समय चालीस हजारसे भी ऐसी बाणीका संग्रह है जिसमें " कहैं कबीर " की छाप लगी है । इच्छा तो ऐसी होती है कि, सबही छपकर प्रकाशित हो जाय किन्तु, सद्गुरुने मुझे केवल ग्रन्थ और 'बाणियोंके संग्रहकी योग्यता दी है जिनके पास साधन है, वह इस ओर ध्यान नहीं देते, मेरे पास साधन नहीं है तबभी बडीबडी महत्वाकांक्षा लिये बैठाहूँ । यद्यपि इच्छा नुसार कार्य्य नहीं होता तथापि लगे रहनेसे कुछ न कुछ तो होताही है । जिन कबीरपन्थियोंके पास धन है उन्हें इसका संस्कारही नहीं, नहीं तो उन्हें यदि धनही जमा करना है तो उपस्थित धनकी वृद्धिका, यह ग्रन्थोंका प्रकाशन कितना अच्छा मार्ग है । कुछ ग्रन्थोंको छपाकरही लोगोंने लाखों रुपये कमाये हैं यदि कोई कबीरपंथी इसी कामको करता तो ये रुपये उसीके घर तो जाते । किन्तु काल भगवानके

जाल, संसारी मान पान राग भोगमें उन्हें फुरसत ही कब है कि, इस ओर ध्यान देने। काल निरञ्जनने कबीर साहबसे कहाही था कि, ।

विनती एक करौं तुहि ताता। दिढ करि मानो हमरी बाता ॥ कहा तुम्हार जीव नहिं मनिहैं। हमरी ओर होय बादवखानि हैं ॥ दिढ बन्धन मैं रचा बनाई। जामें जीव रहै उरझाई॥ जो ज्ञानी जैहो संसारा। जीव न माने बचन तुम्हारा ॥ पंथ एक तुम आप चलाऊ। जीवन लै सतलोक पठाऊ ॥ द्वादश पंथ करौ मैं साजा। नाम तुम्हार ले करों अवाजा ॥ द्वादश जम संसार पठैहों। नाम तुम्हार ले पंथ चलैहों ॥ यहि विधि जीवनको भरमाऊँ। पुरुष नाम जीवन समझाऊँ॥ द्वादश पंथ जीव जो ऐहैं। सो हमरे मुख आन समै हैं ॥

मुझे तो, ऐसे नाममात्रके कबीरपंथी, जो काल और मायामें फंस कर, केवल सांसारिक स्वार्थके लिये मर रहे हैं, उनसे वेलोग अच्छे जान पडते हैं जो कबीरपंथी न कहलानेपर भी, चाहे व्यापारिक लाभ की ही कामनासे क्यों नहीं, कबीरपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन करके, कबीर धर्मकाप्रचार कर रहे हैं। मैं तो विशेष रूपसे श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके मालिकोंको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने दर्जनों ग्रन्थ प्रकाशित कर, तीस वर्षोंसे लाखों प्रति कबीरपन्थियों तक पहुँचाया है।

इस ग्रन्थके छापनेके लिये यद्यपि मुझे तीन वर्षतक प्रतीक्षापूर्वक बम्बई सेवन करना पडा है, तथापि ज्योंत्यों करके इतना भी छप गया है। आशा तो थी कि, कबीरमन्शूर, कबीरभानुप्रकाश, कबीरकौमुदी, तालीम कबीर कलियुग आदि सहित, संग्रहित चालीस हजार शब्दोंको छपवा देता और श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके स्वामी खुशीसे छापते जिससे उनको व्यापारिक लाभ था किन्तु वर्तमान काल और वस्तु स्थितिको देखते हुए कुछकहा नहीं जा सकता।

कुछ भी हो मैंने आरम्भसेही अपना जीवन इसी कार्य्यके लिये अर्पण कर दिया है, तब " जब तक जीना तबतक सीना " वाली कहावतके अनुसार, प्रयत्नसे न रुकूँगा और एक जगह नहीं दूसरी नहीं तीसरी जहां होगा जमीन आस्मान एक करके ग्रन्थोंको, जहांतक हो सकेगा, छपवा कर ही छोडूँगा. क्योंकि इस समय सद्गुरु की कृपासे कबीरपंथी ग्रंथ छापनेको बडे २ प्रेसवाले तय्यार हैं किन्तु मेरी इच्छा है कि, जबतक श्रीवेंकटेश्वर प्रेसमें मेरे ग्रंथ छपचुके तबतक दूसरेको न दूं । और अंत तक यही कार्य्य करते हुए संसार लालाको समाप्त करनेका दृढ निश्चय कर लिया है । इसी उद्देश्यसे " कबीरधर्मदर्शन-ग्रन्थमाला " छपवानेका आयोजन किया है । यह ग्रन्थ उसी ग्रन्थ-मालाका दूसरा भाग-समझना चाहिये । प्रथम भागमें नौ मणिका और इसमें शेष मणिका रखा है । जिसमें सुमेरस्थानी मूलरमैनी जानना चाहिये, जो पृष्ठ ४८७ से ५०२ तक है । आगे आगे जैसे भार और ग्रन्थ छपते जाएँगे सूचना बाहर पडती जायगी ।

अब मैं उन महानुभावोंको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ जिनसे मुझे मेरे इस काममें विशेष सहायता ग्रन्थोंद्वारा मिली है ।

( १ ) सद्गुरु श्री. १०८ सत्यलोकवासी महन्त श्री. शम्भुदासजी साहबके संशोधित और टिप्पणीवाले शब्द आदि वर्तमान महन्त श्री. लक्ष्मणदासजी द्वारा प्राप्त हुए हैं, इतनेही नहीं आपने सद्गुरुसाहबके कुल ग्रन्थोंके छपवानेका अधिकार भी मुझे देकर सर्व साधारण तथा मेरा बहुत उपकार किया है इसलिये आपको कोटिशः धन्यवाद है ।

( २ ) श्री १०८ महंत श्री तुरंतदासजी साहबने हस्त लिखित ग्रन्थोंद्वारा सहायताकी है इस लिये आप भी विशेष धन्य-वादके पात्र है ।

( ३ ) श्री १०८ महंत श्री सुखलालदासजी साहब खारी वावली-दिल्ली ।

( ४ ) श्रीयुत महंत मंगलदासजी साहब मु० हैदर कुली दिल्ली ।
( ५ ) श्री महंत गुरुसरनदासजी गोंदोंग जि० फतेहपुर ।
( ६ ) श्री महंत अमर दासजी साहब जोधपुर ।
( ७ ) श्रीयुत राम रूपदासजी साहब रोसडा ।
( ८ ) श्रीयुत परमहंस मितुदासजी साहब रोसडा ।
( ९ ) श्री महंत चंचलदासजी साहब मौजी ।
( १० ) श्रीमहंत सुन्दरदासजी साहब गुदारघाट ।
( ११ ) श्रीयुत पण्डित वसंत दासजी साहब विथान गढी ।
( १२ ) श्रीमहन्त बिशुनदासजी साहब नलाबाजार अजमेर ।

इत्यादि अनेक संत महंतोने मेरे इस कार्य्यमें ग्रन्थ और वाणी आदि भेजकर सहायताकी है, सबको अत्यन्त नम्रता पूर्वक बन्दगी सहित धन्यवाद ।

इस संग्रहमें क्या क्या संग्रहित है उसका संक्षेपमें तो सूचीपत्रसे पता लग जायगा और विस्तार ग्रन्थ देखनेसे पता लगेगा । ग्रन्थ बहुत बढ जानेसे बडा सूचीपत्र नहीं छप सका तथापि इतना तो यहां आवश्यक कहना होगा कि, इस ग्रंथमें लगभग सात हजारसेभी अधिक वाणियोंका संग्रह है ।

इस ग्रन्थका नाम कबीरपंथीशब्दावली इसलिये रखा है कि, इसमें कबीर साहबके अतिरिक्त धर्मदासजीसे लेकर अनेक कबीरपंथी महात्माओंकी वाणीभी आयी है.

इस ग्रन्थमें कई चित्रभी दियेगये हैं ।

( १ ) चित्र सद्गुरु कबीरके जिन्दा वेषका है इसी रूपसे आपने धर्मदासजीको चेताया था, क्योंकि, आप मिथ्या सांसारिक जालसे जीवोंको छुडाकर निर्पक्ष सत्यमार्गका उपदेश देनेको प्रकट हुए थे । यह चित्र उस समयका है जिस समय आप मगहरकी लीला करके गुप्त हो उसी शरीरसे, बाँधोगढमें प्रगट होकर, धर्मदासजी और बघेलवंशके, उस समयके

वर्तमान राजा महाराजा रामसिंहको उपदेश देकर कृतार्थ किया था। उसी समय राजारामने आपका यह चित्र उतरवाया था जो अद्यापि उस रीवाँके तोशाखानामें उपस्थित है। यद्यपि उस चित्रमें कफनी, नाना रंगोंके छोटे छोटे कपडोंके टुकड़ोंकी बनी हुई है, किन्तु, फोटोमें नाना रंग न आकर काला रंग आगया है इसलिये यहाँ भी काला देख पडता है।

( २ ) दूसरा चित्र कबीरपंथी वचनवंशी विन्दवंशके बारहवें आचार्य्य श्री १०८ पंथी उग्रनामसाहबका है।

( ३ ) तीसरा चित्र श्री १०८ पंथीदयानाम साहबका है। जिनसे, ग्रन्थोंकी भविष्यत वाणीके अनुसार वचन वंशी विन्द वंशकी समाप्ति होगयी है।

( ४ ) कोदरमालके कबीरपंथी महासभाका है, जो पंथी दयानाम साहबके सत्यलोक वास होनेके पश्चात, सम्वत १९८४ वि० के चैत मासमें हुई थी, उन्हींमेंके कुछ उपस्थित संतमहंतोंकी मण्डलीका फोटो लिया गया था।

( ५ ) श्री १०८ कबीरसाहबके अधिकारी वचन वंशके नाद वंशीय प्रथम आचार्य्य श्रीमहंत श्रीकाशीदासजी साहबका वह चित्र है जो भागलपुरके सेवकोंने उतरवाया था.

अब मैं इस प्रस्तावनाको यहांही समाप्त करते हुए सर्व संतमहंत तथा सत्य मार्गियोंसे प्रार्थना करता हूं कि, इस ग्रन्थकी यह पहली आवृत्ति है और भिन्न स्थानोंसे शब्दादिकोंका संग्रह किया गया है, इससे कई शब्द दुबारा आगये हैं। कई शब्द तो आरंभ एक प्रकारसे होनेपरभी मध्यमें फेरफार होनेसे दुबारा दिये गये हैं; तथा कितनी अशुद्धियाँ भी रहगयी हैं सो सब क्षमा करके आप इसे ग्रहण करेंगे

और जिन जिन सुधारोंकी आवश्यकता हो उसकी सूचना इस परमार्थी अनुचरको देंगे तो, धन्यवाद पूर्वक दूसरी आवृत्तिमें आपके नाम सहित सुधारा करदिया जायगा हाँ—गतवर्ष इसकी, भिन्न २ ग्रन्थोंसे, कापी लिखनेमें—मुंगेर जिलेके मौजे बिहट टोले मकशशपुर निवासी कबीरपंथी सेवक भूमिहार ब्राह्मण बाबू रामखेलावनसिंहने कई महीनोंतक मेरा साथ दिया था, इसलिये वहभी मुझ सहित सर्व पाठकोंके धन्यवाद और दयाभावके पात्र हैं ।

कबीर आश्रम पो० खरसिया
जि० बिलासपुर सी. पी.
हाल
श्रीवेंकटेश्वर धर्मादा बिल्डिंग
"खेतवाडी, बम्बई न० ४"

सर्व संतो और जिज्ञासुओंका
परमार्थी अनुचर
कबीराआचार्य्य आत्मनिष्ट
श्री. युगलानन्द बिहारी.

सत्यनाम ।

# कबीरपंथी शब्दावलीकी साधारण अनुक्रमणिका ।

## द्वितीय खण्ड प्रारम्भ ।

### स्तोत्र दर्शन ।

## तीसरा खण्ड ।



× इस हेडिंगमें चौकाके बदले " चौकी " और "चौका विधानके" बदले चौकी विधान " और " चौकाके विधान पद " के बदले "चौका विधानकी पद " छपगये हैं सो पाठक सुधार लेंगे ।

## चलावा चौका प्रारम्भः ।

| नंबर | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|

## चौथा खण्ड प्रारम्भः ।

शब्दावली—अनुक्रमणिका समाप्त ।



## खण्ड पाँचवा प्रारम्भ ।



## छठा खंड प्रारम्भ ।



इति श्रीकबीरपंथी शब्दावलीकी संक्षिप्त अनुक्रमणिका समाप्तशुभम् ॥

# सत्यनाम ।

## ध्यान देकर पढो ।

कबीर पंथियो !

उठो ! जागो ! और चेतो ! यह समय तुम्हारे पंथके लिये बडा कठिन आया हुआ है । इस समय तुम्हारे पंथकी दशा डावाँडोल हो रही है । तुम्हारे वचनवंश गद्दीके विन्द वंशकी समाप्ति होगयी है. नाद वंशकी गद्दी स्थापित होनेपर भी, धर्म ग्रन्थोंको भली प्रकार नहीं जाननेके कारण, सेवक सती, साधु संत, महंत और गुसाईं सब कल्पनाकी हवाई जहाज़में उडते फिरते हैं । किसीको भी स्थिरता नहीं मिलती है । सेवकोंमें जो माननीय हैं वह अपनीही चलाना चाहते हैं, भेष उनकी दृष्टिमें निर्माल्य जैसे दीखपडती है; भेषोंमें कुनम्प होनेके कारणसे, उनका बल दबता गया है । अपने सत्य सिद्धान्तको दृढतासे पकडकर चलानेके बदले, नाना मति और भिन्न २ विचारके कारण, मनमतके जालमें फँस गये हैं जिसके मनमें जो आता है, उसीको वह सिद्धान्त समझकर, सत्य गुरुमतका अनादर कर रहा है । यह सब क्यों हो रहा है ? केवल सद्गुरु कबीरकी वाणियों और कबीरपंथके ग्रन्थोंपर ध्यान नहीं देनेसे । अब अपना समय व्यर्थ पक्षपातमें पडकर नष्ट मत करो—क्योंकि, सद्गुरु कबीरका वचन है ।

"पछापछीके कारने, सब जग गया भुलान ।
निर्पच्छ होइके हरिभजे, सोई संत सुजान ॥"

इस लिये मिथ्या पक्षपातको छोडकर सत्य गुरु कबीरके शब्दोंके आश्रय अपना कल्याण ढूँढो—क्योंकि.

"गुरु सीढीते ऊतरे, शब्द विहूना होय ।
ताको काल घसीटिहै, राखि सकै नहिं कोय ॥"

इसी, लिये आगम संदेशमें, सद्गुरु कबीरने कहा है
" शब्दहिं गहै सो पंथ चलावे ।
विना शब्द नहिं मारग पावे ॥ "

देखो इस समय कबीरपंथी मात्र कबीर की वाणी वचन और शब्दोंको छोडकर अपना पंथ खो बैठे हैं—क्योंकि,—जब आगम वाणीमें कहा है—

" तेरहें पीढी ज्ञान रजधानी, चूरामरन औतारा हो ।
उनके अंग छाया नहिं होई, देह विदेह अपारा हो ॥
उनके आगे जोग मत चलिहैं, राजनीति उठजाई हो ॥
पांचस्वादकी इच्छा नाहीं, सो माति सब उन आई हो "

देखो इस वाणीमें स्पष्ट लिखा है—तेरहें पीढीके समाप्त होनेपर—ज्ञानका दौरा आयेगा और चूरामनका औतार होगा—उस चूरामनके अंगमें छाया नहीं होगी क्योंकि, उसकी देह विदेह होगी ।

आगम संदेशमें " चूरामन " का भाव यों दर्शाया है—" परगटे वचन चूरामन अंसू । शब्दरूप सब जगत प्रसंसू ॥ शब्दे पुरुष शब्दे गुरुवाई । विना शब्द नहिं जिव मुकताई ॥ जाते जीव मुक्त हो भाई । मुकतामन सोइ नाम कहाई ॥ "

इस समय शब्दकी ओर ध्यान न देनेवाले और अपने अपने मनपरही चलने वाले, प्रायः सेवक सती संत महंतों की मानता होरही है कि, चूरामन कोई देहधारी पुरुष प्रकट होकर पंथ चलायगा । इसी कल्पना और संशयमें डोला खाते हुए अधिकांश लोग कबीर पंथसे बेपंथ जाकर, कालके फन्देमें पडकर, अपना किया कराया सब नष्ट कर रहे हैं । उन्हें इतनी समझ नहीं है कि, वचन चूरामन कोई देह धारी पुरुष नहीं है । वहतो कबीर, सद्गुरु कबीरका ज्ञान विचार और वाणी है । ऊपरके वचनमें स्पष्ट कहा है—" शब्दरूप सब जगत प्रसंसू " प्रत्यक्ष

देखो—कबीरकी वाणीका संसार भरमें कितना आदर है और तो और संसार भरको काफिर कहने वाले मुसलमानभी कबीरके साखी शब्द और वाणी वचन को मुर्शिद बरहक ( सद्गुरु ) की वाणी कहकर मानते और आदर देते हैं । आर्य्य समाजियोंकोहीलेलो, उन्हें, स्वामीदयानन्दकी उटपटां । अर्थहीन लिखी बातोंको भुलाकर, कबीर की वाणी और सिद्धान्तको झखमारके आदर देना पडता है, वर्तमान के आर्य्य समाजियोंके ग्रन्थोंमें तुम्हें प्रायः कबीरकी वाणीके प्रमाण मिलेंगे—

कितने ऐसे कबीरपंथी हैं जो फिरसे पिछले राज्यकी स्थापना करना चाहते हैं । उनको इतनी स्पष्ट बात भी नहीं समझ पडती है कि, जब स्वतः कबीर मुख वचन है कि, तेरहीं पीढीके पश्चात् उसीके अमलमें, राजनीति उठजायगी और ज्ञान राजधानी चलेगी, तब भी वे राज्य स्थापना करनेके लिये—वर्तमान राज्य शासनका आश्रय लेकर अपना मन माना करना चाहते हैं । इसका परिणाम यही है कि, कबीर वचनके अनुसार स्थापना तो ज्ञानकी ही होगी और उस ज्ञानको प्रगट करनेवाले कबीरके वे शब्द, जो मनको चुरा करके सत्य-पथमें लगावेंगे उसी चुगमनका प्रकाश अब विशेष होगा. किन्तु काल निरञ्जनके बहकावटमें पडे मिथ्या मान गुमानको लिये, वे भूले हुए जीव, भ्रमके आश्रय, सन्तमहंत भेष और कबीर धर्मदासके विरुद्ध, अपना राज्य स्थापित करनेमें लगे हैं और राजकचहरियोंमें मारे मारे फिरते हैं । उनको न तो अपनी समझ है, न किसी जानकारका वचन सुनना चाहते हैं कि, यह सब कालकी बाजी है, इससे सत्य धर्मका कोई सरोकार नहीं है । कबीर प्रत्यक्ष रूपसे कहते हैं—

" राजद्वार जावे नहिं कबहीं । कैसो कष्ट आवे पुनि अबहीं ॥ महिमा वंश तबै मिटजाई । राजद्वारे द्रव्य लुटाई ॥ होवे वैर नगरमें-भारी । कलिजुग राज करै सुख छारी ॥ कलिजुग होय मलेच्छ सो राजा । जो बिगरे तो होय अकाजा ॥ "

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण, कबीर कौंसिल और उसके संचालकोंका परस्परका झगडा है।

कहांतक कहाजाय मनमतका पार नहीं है। इस मनमतके वश पडकर लोभ वश कितने साधु संत महंत नामधारी जीवभी, उसी घसीटनमें पडकर अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ नष्ट कर रहे हैं।

इसी लिये हे प्यारे ! सत्य धर्मके खोजी कबीरपंथियो ! मिथ्या अभिमान और मनमतको त्यागकर, कबीर धर्मदासके ग्रन्थ और वाणीका विचार करके, वर्तमानके उलझनोंको सुलझाओ और अपना अमूल्य जीवन सफल करो—

श्री वेंकटेश्वर और लक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेसने आपहीके पंथकी रक्षाके लिये कबीरपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन किया है।
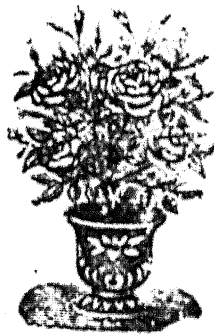
पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

| गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,<br>"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस<br>**कल्याण-बंबई.** | } | खेमराज श्रीकृष्णदास,<br>"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,<br>**खेतवाडी-बंबई ४.** |
|---|---|---|

सत्यनाम

# ज़िन्दा वेषमें सत्यकवीर

सतयुग सतसुकृत सतनामा । त्रेता मुनीन्द्र ज्ञान कर धामा ॥

द्वापर करुणामय सुखदांगी । कलियुग नाम कबीर धरागी ॥
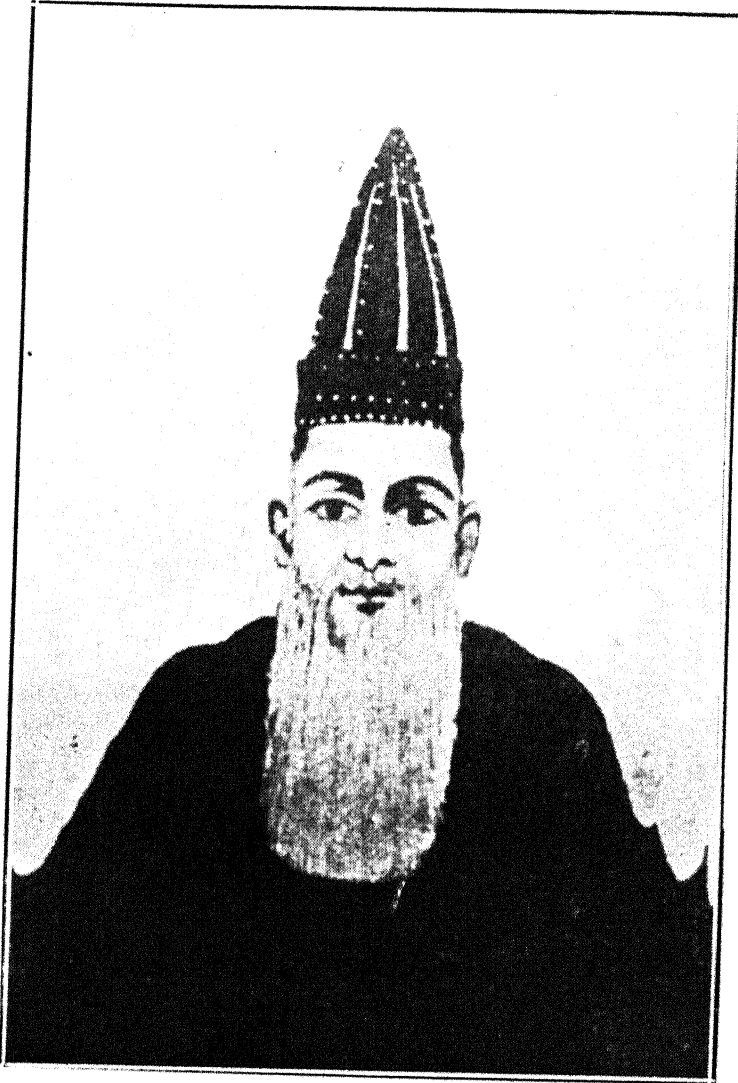
इसी वेषमें सद्गुरुने धर्मदासजीको चेताया था ।

श्री १०८ पं० श्री उग्रनाम साहब
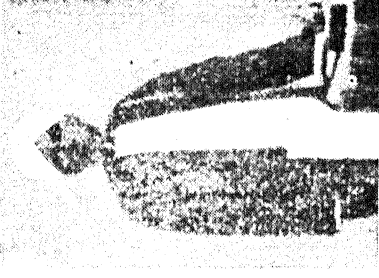
सत्यनाम

कबीरमन्दिर इन्दौरके भूतपूर्व
आचार्य महोपदेशक श्री १०८ महंत शम्भुदासजी
साहब सत्यलोकवासी

सत्यनाम

श्री १०८ पं० श्री दयानामसाहेब
वचनवंशीय गद्दीके बिन्दवंशीयके १३ वें और अन्तिम आचार्य्य, आपके पश्चात अब वचनवंशीय नाद वंशकी गद्दी आरम्भ हुई है।

सत्यनाम
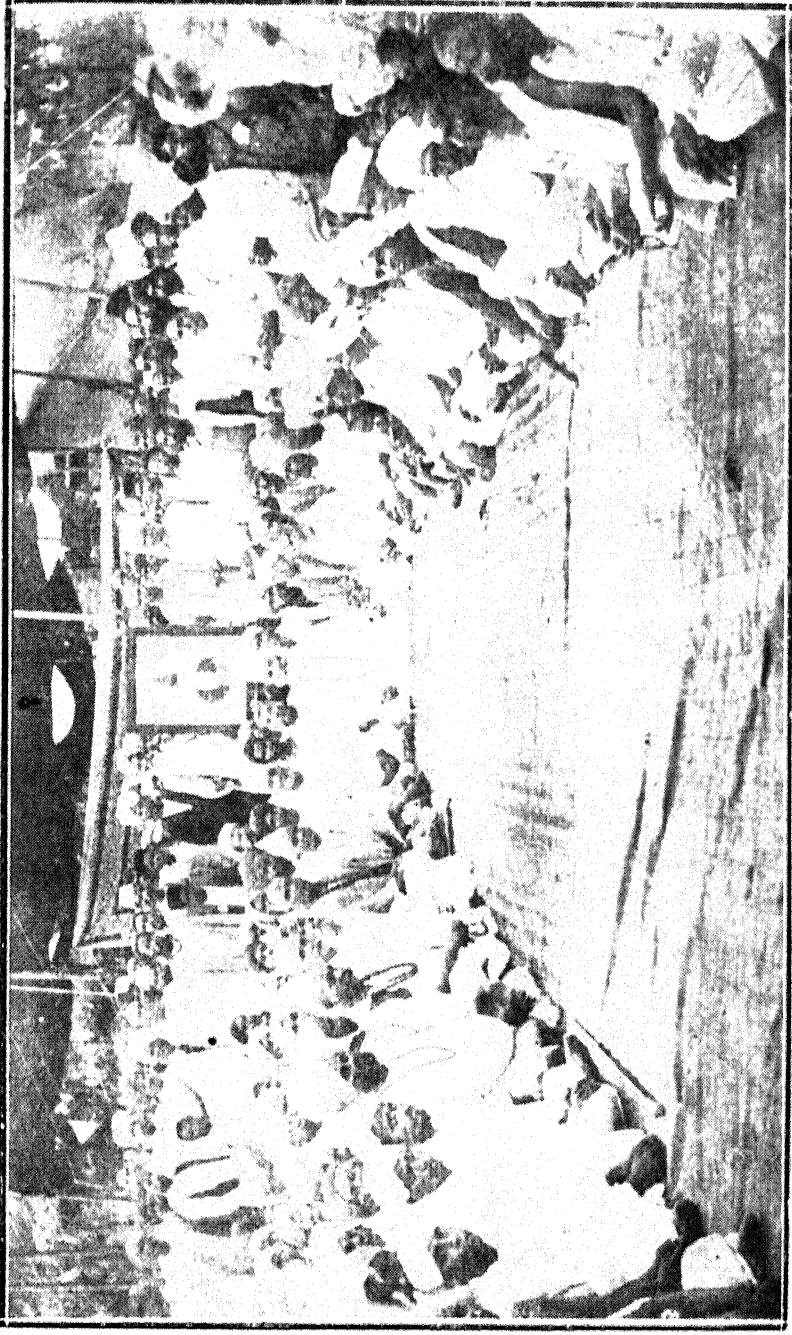
चैत्र वद्य ५ सम्वत् १९८४ वि० की कबीरपंथी महासभा कोंदरमालके कतिपय सन्त महन्तोंका फोटो

मध्यम कबीर साहबके अधिकारी आचार्य्य शिरोमणि श्री १०८ महंत काशीदासजी साहब.
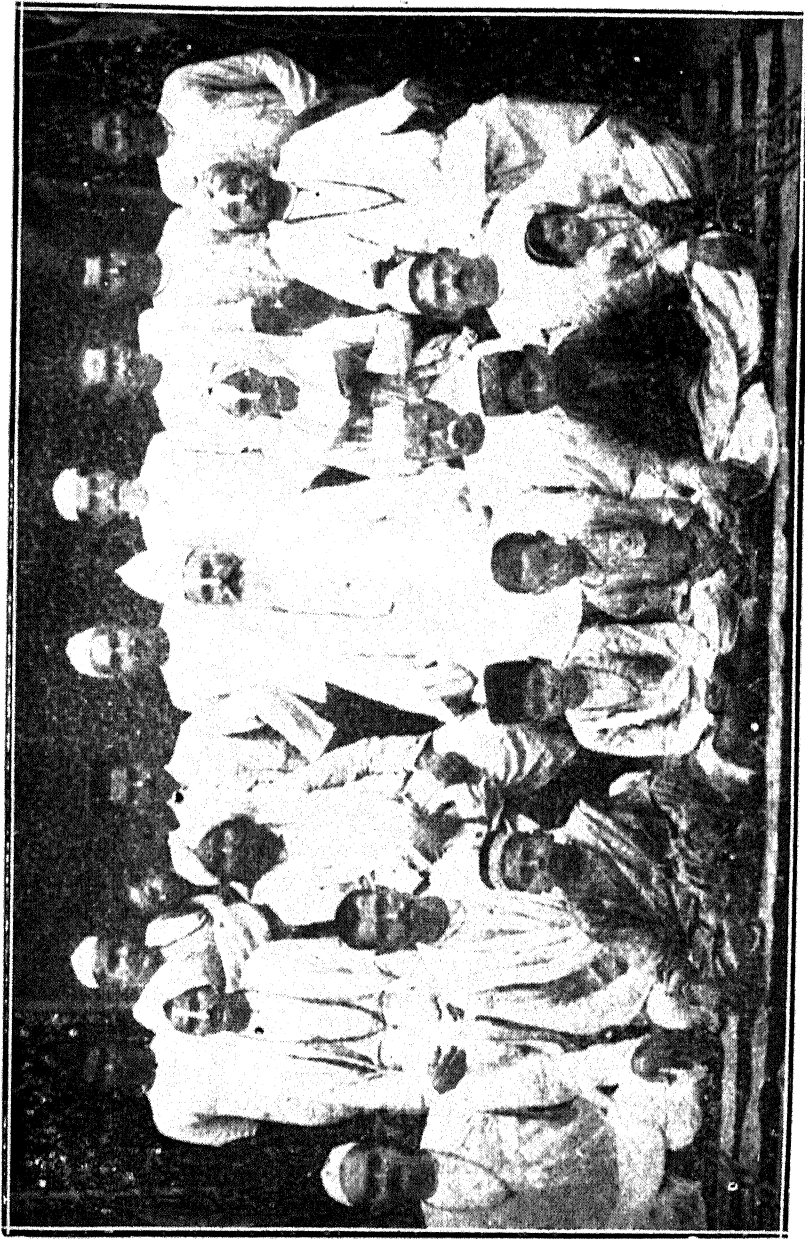
दहिनी ओर–स्वामी श्री० युगलानन्दविहारी तथा भण्डारी सौखीदासजी

बाईं ओर–श्री साधु रामरूपदासजी और शेष सब भागलपुरकी सेवक मंडली

मंगलाचरण।

**यस्योपदेशमाराध्य नरो मोक्षमवाप्नुयात्।**
**तं कबीरमहं वन्दे मनोवाक्कायकर्मभिः॥**

सत्सुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय। कबीर सुरतयोग
संतायन धनी धर्मदासकी दया
सर्व संत महंतोंकी दया—

अथ शब्दावलीकी उत्थानिका—

सद्गुरु कबीरने संसारी जीवोंके चितानेके लिये अनंत शब्दोंका प्रकाश करके, भवसागरसे पार करनेका प्रशस्त मार्ग तय्यार करदिया है. तथापि बलिहारी है कालभगवानकी कि, अपना राज्य बना रखनेके लिये सत्यमें भी असत्यकी मिलौनी कर कुछका कुछ कर दिखाता है.

जहां सद्गुरुका वचन है कि—

**पच्छा पच्छी कारने, सब जग गया भुलान।**
**निर्पच्छ होइके हरिभजे, सोई सन्त सुजान॥**

वहां सद्गुरुका नाम रखकर कालने सत्यशब्दमें इतनी मिलौनी करदी है कि, संसारी जीवोंको निर्पक्ष वाणीकी पहचानही नहीं होती, उलटा वे कालकी वाणीकोही सिद्धान्त वाणी समझकर उन्हींमें भूलकर साम्प्रदायिक गर्तमें गिरपडे हैं और जबतक सद्गुरुके बताये संकेतके अनुसार सत्यशब्दको जाननेका प्रयत्न नहीं किया जायगा तबतक वे भवसागरमें गोता खातेही रहेंगे।

सद्गुरु कालवाणीसे सत्यवाणीको अलग करनेकी कैसी सरल युक्ति बता रहे हैं.

अनबनि बानी चार प्रकार ।
काल संन्धि झांई औ सार ॥

अब इनकी पहचान बतलाते हैं-

कालशब्द ।

अक्षर पूजा सेवा जाप । और महातम जेते थाप ॥
यही कहावत अक्षर काल । जाय गडी उर होयके भाल ॥

सन्धिशब्द ।

ओहं सोहं आतमाराम । माया मंत्रादिक सब काम ॥
यहि सब अक्षर संधिक कहे । जेहिमा निसिबासर जिव रहे ॥

झांईशब्द ।

निर्गुणअलख अकहनिरबान । मनबुधि इन्द्रीय जायनजान ॥
विधिनिषेध जहँ बनतनदोय । कहकबीरपद झांई सोय ॥

— इनमंसे —

भरमिक संधि झांई औ काल । सारशब्द काटै भ्रमजाल ॥

— इस लिये —

परे जीव तेहि जमकी धार । जौलौं पावे शब्द न सार ॥

— इसहेतु —

जीव दुसह दुख देखि दयाल । तब प्रेरी प्रभु परख रिसाल ॥

शब्दकुंजी.

विशेष जाननेके लिये इसी ग्रन्थमें छोरहुए शब्द कुंजी ( अथवा-मूलरमैनी जिसको बहुधा लोग सताइस रमैनी भी कहते हैं- ) को गुरुमुख द्वारा विचारना चाहिये । क्योंकि.

वेद उदधि विनु गुरु लखे, लागत लौन समान ।
बादर गुरुमुख द्वार ह्वै, अमृत सूँ अधिकान ॥

अन्यलेखकोंके प्रमाण से-कबीर साहबने मगहरमें अन्तिम लीला करके भी शरीर नहीं छोडा था. यों तो जब आप अपनेको शब्दरूपही कहते हैं तब आपके शरीर छोडनेकी बात ही क्या है.

क्योंकि,

**पांच तत्त्वसे है नहीं, स्वासा नाहि शरीर।**
**अन्न अहार करता नहीं, ताका नाम कबीर॥**

तथापि अपने हिन्दू मुसलमान शिष्योंकी परीक्षा करनेके लिये, आपने मगहरमें लीला दिखाई थी और शिष्योंको जो उपदेश देना चाहा सो दे चुकनेपर तत्कालही आप उसी शरीरसे मथुरामें प्रकट हुए और वहांसे अमर कंटक आदि स्थानोंमें अपना अमर चिह्न छोडते हुए बांधोगढ पहुँचे और धर्मदासजीको उपदेश दे जगन्नाथकी ओर,चल गये।

इससे यह सिद्ध होता है कि, बाबू साहबने जो ग्रन्थ छपवाया है वह जिस सम्वतका लिखा हुआ है उस समयमें कबीर साहब उसी काशीवाले शरीरसेही वर्तमान थे और कबीर साहबके इतने निकट समय या वर्तमानमें ही ग्रन्थ लिखे जानेके कारण, बाबू साहब कबीर साहबकी वाणीकी भाषाको भी वैसीही समझते हैं जैसी उस ग्रन्थमें लिखी है और इसी दृष्टिसे आपने उसे वैसीही छपवाया है।

किन्तु यह किसीसे छिपी नहीं है कि, कबीर साहब अपना केंद्र काशी ही बनाकर वहाहीं प्रकट हुए और वहांकीही प्रचलित हिन्दी भाषामें आपने वाणीका भी प्रकाश किया था. तथापि मारवाड देशमें जाकर वाणी मारवाडी मिश्रित क्यों हो गयी ? इसका कारण यह हो सकता है--

( १ ) कबीर साहबका उपदेश इतना सर्व प्रिय था कि, आपके वर्तमान रहतेही देश देशान्तरोंके लोग, उपदेश और वाणी, सुनकर

लिखलेते और बडे प्रेमसे रखतेथे और अपने स्वाभाविक उच्चारणके अनुसार उसे गाते और बोलते भी थे जिससे उसी उसी देशके उच्चारणके अनुसार लिखनेमें वाणीका रूपभी वैसाही बनता गया । जैसे आजकल भी गुजरात या महाराष्ट्र प्रान्तमें हिन्दी भाषा या हिन्दी भाषाकी कविताकी दशा है. और गुजराती या मराठीभाषावाले अपने स्वाभाविक उच्चारणके कारण विशेष नामोंको भी अपने उच्चारणके अनुसारही लिखते और बोलते हैं. दृष्टान्तके लिये संयुक्त प्रान्तके "मेरठको लिजिये, आजकल प्रसिद्ध मेरठ केसके कारण वर्तमानपत्रोंमें मेरठका नाम बारम्बार आता है इतना प्रसिद्ध नामहोनेपर भी गुजराती पत्रवाले मेरठको "मीरत" ही लिखते हैं ।

इसी प्रकारसे यदि कबीरसाहबकी वाणी उस समय मारवाड आदि देशोंमें जाकर मारवाडी आदि उच्चारणोंवाली होगयी हो तो कौन आश्चर्यकी बात है ।

मैंने मारवाड, पञ्जाब, सिन्ध, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उडीसा, बङ्गाल, आसाम, भूटान, नेपाल और बिहार आदि प्रान्तोंके भ्रमण कालमें देखा है, हिन्दीमें और शुद्ध हिन्दीभाषामें छपे हुए ग्रन्थोंको जिस जिस प्रान्तके लोग पढते हैं, उस प्रान्तके टोन ( स्वर ) का प्रभाव उन ग्रन्थ और वाणियोंपर ऐसा पडता है कि, सुननेवालोंको वह उसी देशकी भाषामें लिखा जान पडता है ।

गत वर्ष जब मैं वंशधरकी गद्दीके सर्वमेव समस्त आचार्य्य श्री १०८ पं श्रीकाशी दास साहबजीके साथ तिरहुतके कतिपय स्थानोंमें भ्रमणको गया था, तब वहांके भावुक सेवक सती और साधुओंके, प्रेम मग्न भजन कीरतनको देखकर अत्यन्त प्रसन्नता और प्रभावका अनुभव करता था. किन्तु, शुद्ध हिन्दी भाषामें छपे हुए शब्दोंकोभी जब वे गाने लगते थे तब, उनका उच्चारण ठीक तिरहुतियाभाषाके समान सुन पडता था, इतनेही नहीं शब्दोंके क्रियापद आदिको भी वे अपने

प्रांतिक रूपमें बदलकर बोलतेथे कारण मात्र यही है कि, वे थोडे पढे लिखे लोग अपने स्वभाव और आदत तथा प्रेमके वश होकर शुद्धि अशुद्धिका विचार किये विनाही प्रेममें मग्न होकर भजनमें लीन होते और लिखतेभी हैं।

इसीप्रकार मारवाड और पंजाबवाले पानीको पाणी आदि उच्चारणके अभ्यासके कारण शब्दोंको अपने प्रांतिक टोनमें बदल लेते हैं। गुजराती और काठियावाड वालोंका कहनाही क्या, जिस समय वे तम्बूरा और मजीरेकी गगन भेदी झंकारमें मस्त होते हैं-" कहत कबीरा सुनोभाइ साधो " के गानमें ऐसे लीन होजाते हैं कि, जो कुछ वह गाते हैं चाहे वह किसी भाषाका हो सब उन्हें काठियावाडी या गुजरातीही जान पडती है।

इसीप्रकार दक्षिणी मराठी भाषाभाषी जिस समय " कबीरांचे-दोहरे " और पदे " की हांक लगाते हैं, उस समय कबीर उन्हें खास मराठी भाषाभाषीही जानपडते हैं, और कबीरके शब्दोंका उच्चारण ठीक मराठी जैसा जान पडता है, इसी प्रकार महाराष्ट्रके पढे लिखे लोगभी जबकभी अपने ग्रन्थ या भाषण आदिमें कबीरकी साखी आदि कोट करते हैं वहां उसमें इतना मराठीपन आजाता है कि, फिर उसे हिन्दीभाषाभाषी कबीरकी वाणी कहनेसे हिचकते हैं इत्यादि। ( २ ) यदि उपर्युक्त विवेचनके विरुद्ध कोई ऐसा समझता हो कि, कबीर जिस जिस देशमें गये, उस उस देशकी भाषामें ही, उन्होंने वहांके लोगोंको उपदेश दिया, तो यह बात भी उनका महत्त्वही प्रकट करती है-

किन्तु मेरा निश्चय है कि, कबीरसाहबने जो कुछ कहा है वह सब उससमय की प्रचलित हिन्दीमेंही कहा है !

इसी विचारको लेकर मैंने भारतके अनेक प्रान्तोंमें घूमकर सहस्रों कबीरपंथी ग्रन्थोंका संग्रह किया है-जिसमें एकही नामके ग्रन्थकी भिन्न

भिन्न प्रान्तोंमें लिखी अनेक प्रतियाँ मिली हैं. अब जब मैं उनका मिलान करने बैठता हूँ तब वाणी एक होनेपरभी लिखावट और उच्चारणमें बहुत अन्तर जान पडता है और जिस समय उन उस प्रान्तके लोग अपने अपने प्रान्तके लिखे ग्रन्थोंको पढते हैं, उस समय सुननेसे औरही भाव अन्तःकरणमें उदय होता है ।

इस प्रकारके कई दृष्टांन्त इस ग्रन्थके बीच बीचमें या अन्तमें लिखकर पाठकोंका मनोरंजन करूंगा,

लिखते लिखते मैं कहींका कहीं चला गया—इसलिये अब प्रकृत विषयपर आता हूँ ।

शब्दावली ।

यों तो कबीरकी शब्दावली—कबीर साहबना भजन, कबीरांचे पदे और दोहरे आदि नामसे सैकडों पुस्तकें लाखोंकी संख्यामें हरसाल छपती और छोटे २ जंगली देहातों बाजारों और बडे २ शहरोंतक बिकती रहती हैं और हिन्दू मुसलमान ईसाई इत्यादि सभी धर्मके लोगोंकी जबानपर कबीरकी साखी मसले वर्तमानही रहते हैं, किन्तु " शब्दावली " के नामसे बडी पुस्तक एकही छपी है-जिसकी दो आवृत्ति आजतक होचुकी है ।

उस शब्दावलीमें केवल कबीर साहबही नहीं वरन बहुतसे लोगोंकी वाणीका संग्रह है जिसे कबरदहके एक वैरागीने संग्रह किया था और अपने हाथसे लिख लिखकर, वहां जानेवाले संत महंतोंके हाथसे बेचा करताथा. यद्यपि वह उसकी कीमत लोगोंसे २०, २५, रुपया लिया करताथा तथापि पैसेवाले महंत संत लोग जो वहां जाते थे, वह अपने स्वार्थके मारे लेलियाकरते थे. क्योंकि, महंतोंके सबसे अधिक स्वार्थ, चौका आरतीकी रमैनी आदि उसमें दियी हुई होती थी. इसी बातको दृष्टिमें रखकर ग्रन्थ लेनेवालोंको केवल स्वार्थ लोलुप समझकर वह लिखनेवालाभी पहले चौका आरतीकेही पद और रमैनी लिखता

था। उसकी लेखन शैली और ग्रंथका प्रबन्ध देखकर तो जान पड़ता है कि, उसे भी इस ग्रन्थसे सिवाय द्रव्य प्राप्तिके दूसरा कोई सरोकार रहा नहीं था. इसी लिये उसने उस ग्रन्थका क्रमबांधनेका प्रयत्न नहीं किया, बरन उसके उलटा जो उसे जहांसे मिला चाहे वह किसीका शब्द या पद भजन रहा हो " कहै कबीर " करके उसे लिख दिया।

जब तक वंशघरकी गद्दी कवँरदह रही तबतक तो उसका व्यापार चलता रहा किन्तु, वंशघरकी गद्दीके लिये विरोध चला और गद्दीका कारबार कवँरदहसे कोदरमाल चला आया और वंशघरके सन्त महंतोंने उग्रनाम साहबको अपना आचार्य मान लिया, और लोगोंका कवरदह जाना आना छूट गया, तब उस शब्दावली लिखनेवालेका रोजगार मरा और सन्तमहंतोंको शब्दावलीका सहजमें, २०, २५, खर्च करकेभी मिलना बन्द हुआ. तब नये बननेवाले महन्तोंको शब्दावलीकी आवश्यकता पडनेपर न मिलनसे अडचन पडनेलगी, महंतोंके उस अडचनको उग्रनाम साहबने अनुभव किया और शब्दावलीको छपानेकी आवश्यकता समझी, किन्तु उस समय उनकी आर्थिक दशा ऐसी नहीं थी कि, वे इसमें अपनी ओरसे कुछ कर सकते, इसलिये उन्हींके इशारेसे उसी शब्दावलीकी एक कॉपी बम्बई पहुंची और बिना शुद्ध या क्रमबद्धकिये ज्यों की त्यों छापदीगयी इतना भी विचार नहीं किया गया कि, किस विषयके शब्द पहले आने चाहिये और किस विषयके पीछे, इसमें कबीर साहबके शब्द कितने हैं और इतरोंके कितने. इन बातोंके विचार किये विनाही आंख मूंदकर ग्रन्थ छपकर तय्यार होगया, उसपर तुर्रा यह हुआ कि, ग्रन्थके मुख्यपत्र ( टायटल ) पर " महात्मा श्री कबीरजी साहबकृत " " अपूर्व ग्रन्थ " छापागया.

इस बातको देखकर समझदार कबीर पंथियोंको बड़ा कष्ट हुआ क्योंकि, उक्त ग्रन्थमें कितने शब्द ऐसे हैं जो कबीर साहब तो क्या कबीरपन्थियोंके भी नहीं हैं. कितने शब्द ऐसे हैं कि, दूसरोंके होनेपर

और उसमें कर्त्ताका नाम वर्तमान रहनेपरभी अन्तमें कहैं कबीरका छाप लगाकर कबीर साहबको बदनाम किया गया है इत्यादि.

इसके पश्चात् ही श्रीउग्रनाम साहबकी इच्छा और इन्दौरके प्रसिद्ध विद्वान् महोपदेशक सद्गुरु श्रीमहंत शम्भुदासजीके उत्साह और मेरे प्रयत्नसे सम्वत् १९६० वि. का कबीरपंथी महासंत समागम कोदरमालमें हुआ, जिसमें श्रीमहंत शम्भुदासजीकी सम्मतिसे अथाह परिश्रम करके मैंने भारत वर्षका दौरा कर सर्व देशोंके संत महंतोंको एकत्रित किया और वंशगद्दीके झगडेके कारण जो पार्टी बंध गयी थी उसे तुडवाकर, वंशधरके सर्व संतमहंतोंको एकही सूत्रमें बाँधनेके लिये सबमें उग्रनाम साहबकेही पंजेका प्रचार करवाया। इस कार्य्यके करनेमें यद्यपि मुझे अनन्त कष्ट और दुःख उठाना पडा, यहांतक कि, अदालतोंमें भी घसीटा गया तथापि सद्गुरु श्रीमहंत शम्भुदासजीके उत्साहसे, सब अडचनोंको दूर करके, कार्य्य पूरा करकेही विश्राम लिया उस उक्त महा सभामें तीन लाखसे भी अधिक कबीरपंथी इकट्ठे हुए थे।

महासभाके पश्चात् जब पं श्री० उग्रनाम साहबकी गद्दी दामाखेडामें स्थापित हुई, तब उन्हें स्वतंत्रता मिलनेसे निजधर्म और नामकी उन्नति करनेकी भी अभिलाषा उत्पन्न हुई। उन्ही अभिलाषाओंमें " ग्रन्थ छापनेके " लिये प्रेस खोलनेकी भी एक अभिलाषा थी.

दामाखेडेमें प्रेस खुला और अन्यकामोंके साथ शब्दावलीको छापनेकीभी चर्चा आरम्भ हुई, उस समय मैंने अपना मन्तव्य प्रकट करके चाहा कि, शब्दावली इस रूपमें छापाजाय कि, जिसमें दूसरोंको आक्षेप करनेका अवसर न मिले. किंतु उग्रनाम दब्बू स्वभाव और उनके परिवारवालोंका द्वेषके कारण मेरी प्रत्येक बातोंके विरोध करने और प्रेसके मैनेजर दीवान हंसदासके रहनेके कारण, मेरा वश नहीं

चला. ग्रन्थके सम्पादक बने बाबा साहब और छपानेवाले मैनेजर और प्रिंटर दीवान हंसदास।

यहांपर यह जता देना अनुचित न होगा कि, दामाखेडेमें प्रेस खोलनेमें प्रबल और मुख्य कारण मेराही प्रयत्न था किंतु उग्रनाम साहबके परिवारवालोंको द्वेष और प्रायः खुशामदी लोगोंके कारण मुझे उससे अलगही रहना पडा और प्रेसके प्रुफोंको देख देनेके सिवाय मेरा उससे कोई सम्बन्ध नहीं रहा. यहां तक कि, मैंने उसमें जो कुछ छपवाया सो भी मूल्य देकर.

इस प्रकार ग्रन्थ छपना आरम्भ हुआ और लगभग आधे तक छपगया कि, दामाखेडेमें शादी विवाह आमद रफ्त उलट फेरकी तूफान चली और प्रेस बन्द होगया. शादी विवाह होगया बिछडे मिले खूब धमाचौकडी मची और उसीमें मुझे वहांसे दामाखेडा हमेशोके लिये छोडना पडा. पश्चात् उग्रनाम साहबका देहान्त हुआ. राज्य पलटा और फ्रान्स जर्मनीकी लडाई शुरू हुई, देशमें सब प्रकारकी वस्तुएँ महंगी होगयीं, खास तौरसे प्रेसकी वस्तुओंकी कीमत चौगुणी होगयी. उसी समय असली साढे उन्नीस हजारकी लागतका प्रेस जिसकी कीमत लडाईके समय. साठ सत्तर हजारसे कम नहीं थी, तीनचार हजार तक दाम मिलते हुए भी, केवल नौ सौमें एक मुसलमानको, दया नाम साहब और उनके निकट वर्तियों द्वारा दे दिया गया. शब्दावली लगभग आधा छपकर अधूरी रहगयी । कई वर्षोंके पश्चात् एक टेकधारी सज्जनने बम्बईवाली प्रतिके ऊपरसे छपेहुए फार्मोंको साथलेकर उसी बिके हुए प्रेसमें छपाकर बारह रुपयां मूल्यसे प्रसिद्ध किया और मजा यह कि, आपने भी कबीर साहबके ऊपर कृपाकरके उन्हें ग्रन्थकर्ता करके प्रसिद्ध किया। "यजमान जावे नर्कमें या स्वर्गमें पुरोहितको तो हलुए मॉडिसे गर्ज" के अनुसार—कबीरके नामपर धब्बा आता हो या कुछ हमें तो नाम और रुपया चाहिये।

इन्हीं बातोंको देखकर कतिपय स्वधर्मी और इतर सज्जनोंके अनुरोधसे मुझे ग्रन्थ प्रकाशनकी ओर लौटना और जन्म भरके परिश्रम स्वरूप हजारों कबीरपंथी ग्रन्थोंमेंसे जहांतक छप सके उनके छपवानेके प्रयत्नके लिये फिर बम्बई आना पड़ा है।

प्रथमवार बम्बई छोडते समय, हस्त लिखित और छपे ग्रन्थोंकी कई पेटियाँ बम्बईमेंही छोड गया था किन्तु, १०।१२ वर्षतक उनकी खोज खबर न लेनेके कारण वे सब दीमकके गालमें चले गये। उन पेटियोंमें हाथके लिखे कितने ग्रन्थ थे-केवल शब्दावलीकेही भिन्न भिन्न स्थानों और प्रान्तोंकी लिखी हुई १५ २० प्रतियाँ थी. ऐसी दशामें संतोष करके कलेजा मसोसके रहना पडा है।

इतना होनेपर भी शब्दावलीकी २० । २५ प्रति मेरे पास इस समय भी उपस्थित है. जिनमेंसे ५ । ७ प्रतियां तो इन्दौर उज्जैन मारवाड कानपुर आदि स्थानोंसे २ । ३ महीनेके अन्दरही संग्रह किया है. जिन २ लोगोंने अपनी अपनी प्रतियां दीहैं, उन लोगोंनें छपी हुई १ । २ प्रतिके साथ अपनी हस्त लिखित प्रतिभी वापस पानेके इरादेसेही दिये हैं।

इसके अतिरिक्त धर्ममें व्यापारके प्रवेशके कारण एकही कबीरके नाम लेनेवालोंमें निजनिज शाखाओंकी श्रेष्ठता दिखानेके लिये लोभ और तृष्णा द्वारा इतनी स्वार्थ परता और विचारशून्यता आगयी है कि, जिस प्रकार वंशगुरुवालोंने प्रत्येक ग्रन्थोंमें मिलौनी कर, अपनी श्रेष्ठता मानता बढानेके लिये, सबको कालदूत कहना आरंभकर दिया था, उसी प्रकार अपनेको सर्व श्रेष्ठ बतलानेवाली एक शाखाके कुछ अदूरदर्शी व्यक्तियोंने प्रत्येक वाणी--जिनमें धर्मदास साहबका नाम आया है--उसमेंसे धर्मदास शब्दको निकालकर, उसके बदले कुछ और ही रखना आरंभकर दिया है। पुरानी वाणियोंमेंसे धर्मदासजीका नाम उनने निकाला तो निकाला, किन्तु थोडे दिनोंकी बनी गुरुमहिमामेंसेभी अन्तिम साखी जिसमें धर्मदासजीका नाम आता है,

निकालकर छपवाया है । यह गुरु महिमा श्रीमहंत शंभुदासजी कृत है ।

इस प्रकार धर्मदासके नामको लुप्त करनेका प्रयत्न सूर्यपर धूल डालनेके समान है, इससे उनकी शाखाका गौरव नहीं बढता है किन्तु उलटा उनकी निन्दा होती है. भला वह कहांतक धर्मदासका नाम मिटानेका प्रयत्न करेंगे. कबीरके साथही साथ धर्मदासका नाम तो इतना अटल अविनाशी होगया है कि, इन थोडेसे धर्मदास द्रेषियोंके सिवाय सब पंथवाले धर्मदासकी श्रेष्ठताको स्वीकार करते हैं और कबीर धर्मदासके सम्बादवाले ग्रन्थोंको पढकर अपना कल्याण चाहते हैं.

ऐसेही सब बातोंको विचारकर इस "कबीरपंथी शब्दावली" के सम्पादनमें मुझे प्रवृत्त होना पडा है.

इस संग्रहमें कई विभाग करके अलग अलग विषयोंको संक्षेपमें दर्शानेका प्रयत्न किया है। जो वाणी प्रत्यक्षमें दूसरोंकी है । उन्हें अगले विभागोंमें रखा है और जिन वाणियोंमें कबीरकेही नाम आते हैं वे सब इकट्ठा संग्रह किया है. इस वाणी जंगलमेंसे खास कबीरकी वाणीको परखनेकी कुंजीभी इसीमें छाप दी है । तथापि पाठकोंको अधिकार है अपने ज्ञान पहुंच और रुचिके अनुसार लाभ उठा-सकते हैं।

इस ग्रन्थमें कई चित्रभी दिये गये हैं। अपने स्वभाव और सदाके नियमके अनुसार जैसी वाणी मिली है वैसेही इस संग्रहमें रखदिया है जैसे पहले मैंने बहुतसे ग्रन्थ छपवाये हैं । वैसेही शब्दावलीमें भी मैंने अपनी बुद्धी लगाकर विशेष सुधार नहीं किया है। मेरा कामतो जीर्णो-द्धार करके डूबतेको बचाना है, अब आगे विद्वान् लोग उसे जैसा चाहें सुधार करें।

कई वर्षोंसे इस कामसे उदासीन रहने पर फिर मुझे इस काममें प्रवृत्त होनेकी आवश्यकता नहीं थी तथापि यह देखकर कि कबीर-पंथियोंमें जो विद्वान् कहलाते हैं, उनकी दृष्टिमें तो ये ग्रन्थ और वाणी महान् तुच्छही हैं और साधारण पंथायी लोगोंको धर्म व्यापारके कारण परस्पर तू मैं मैं सेही फुरसत नहीं. धनी मानी महन्तोंको अपनी नामवरी और ऐशोआरामसे अवकाश नहीं. सभा सुसाइटी और कौंसिलोंको अपने निरर्थक ध्येयकी दौड धूपसेही फुरसत नहीं.

फिर इन नष्ट प्रायः होनेवाले ग्रन्थ और वाणियोंको जब कोई धनी धोरी नहीं तो मुझसे ही जहां तक बन सके इसमें कुछ कर डालूं. इसी विचारको लेकर मैं इसमें फिर प्रवृत्त हुआ हूं।

यद्यपि उपर्युक्त पंक्तियोंकी बातें कुछ लोगोंको कडुई लगेगी तथापि सत्यके अनुरोधसे कहना पडा है. आशा है इस उत्थानिकाके पाठक मुझे क्षमा करते हुए इसके यथार्थ आशयकी ओर ध्यान देंगे।

अन्तमें मुझे कबीरपन्थके माननेवाले और कबीर साहबके वचनपर श्रद्धा रखनेवाले–सबही लोगोंसे–वे चाहे पंथकी किसी शाखाके अनुयायी हों–कहना है कि, ये सीधी साधी भाषामें लिखे हुए ग्रन्थ और वाणी उपेक्षाके योग्य नहीं हैं. कालके प्रभावसे इनमें धर्मव्यापारके कारण जो मिलौनी हुई है, श्रावणके अन्धोंके समान सदा चैन ही चैन देखनेवालोंकी, अदूरदर्शिताके कारण ग्रन्थोंमें सांप्रदायिकता घुस गयी है, यदि उन पक्षपातमय वाणियोंको इन ग्रन्थोंमेंसे निकालकर बाहर करदियाजाय, तो ये अमूल्य रत्नोंके भण्डार बहुत ही मूल्यवान प्रमाणित होंगे.

यद्यपि "बीजक" सब कबीरपंथियोंका सर्वस्व है तथापि उसमें भी सांप्रदायिकताने अपना अधिकार जमा लिया है. मूलकी ओर तो किसीका ध्यान ही नहीं है, टीकाका ही बीजकका सिद्धांत समझकर, साधारणमें पक्षपातका इतना बडा आडम्बर फैला हुआ

है कि, जो पंथकी, जिस शाखाका माननेवाला है, उसी शाखाके किसी पुरुषकी की हुई टीकाको सर्व श्रेष्ठ कहकर, चाहे वह किसी दूसरी टीकाकी नकलही क्यों न हो, उसीको यह पढ़ेगा. और ठीक उसी प्रकारकी दूसरी टीकाको बुरा बतलायगा इस प्रकारकी बात, श्रद्धेय पूर्णसाहबकी टीका तथा मेहीदास और प्रागदासकी टीकावालोंसे मिलनेसे साफ २ प्रगट हो जाती है । यद्यपि मेहीदासजी और प्रागदासजीकी टीका पूर्ण साहबकी टीकासेही बनायीं गयीं हैं और रद्दीके भाव बिककर पंसारीकी दूकान पर पुडिया बांधी गयी है तथापि जिनके पास वे टीकाएँ हैं वे पूर्ण साहबकी भी भूल निकाल कर अपनी मानी हुई टीकाको सर्व श्रेष्ठ बतलाते हैं ।

इसके अतिरिक्त पाठके उलट फेरने भी खासा साम्प्रदायिकताका तांडव नाच नचवा दिया है । साम्प्रदायिक नशामें चूर सब अपनी अपनी शाखाकेही पाठ को सर्व श्रेष्ठ बतलाकर दूसरोंकी सत्यताकी भी उपेक्षा करते हैं इसका कारण मिथ्या पक्षपात ही है । आज कबीर साहबके उपदेशोंका-आश्रय लेकर दूसरे लोग संसारमें बहुत कुछ कर रहे हैं और उनके कामोंको देखकर कुछ समझ बूझवाले कबीरपंथियोंके मुँहमें पानी भर आता है किंतु ऐसा होनेपर भी उनको अपने घरकी पवित्र वस्तुका ध्यान नहीं है और दूसरोंके जूठनको देखकर ललचा ललचा मरते हैं ।

प्यारे भाइयो ? सद्गुरुके इस वचन पर जरा गौर करो फिर आपको पता लग जायगा, कि, आपके घरमें कैसे २ अमूल्य रत्न भरे पडे हैं—

सद्गुरु कहते हैं—

" सब सँग रसिये सबसँग बसिये, सबका लीजे नाम ।
हांजी हांजी सबकी कीजे, रहिये अपने ठाम ॥ "

अर्थात्—

" वेद आदि विद्या सबै, बोध हेतु हिय धार । "

अथवा—

" सब मत महरम करू, तब देखू निज सैन "

सब कुछ पढ़ो, सब कुछ देखो सब सुनो, सबके साथ प्रीतिके साथ बरतावा करो, किसीके दिलको मत दुखाओ " आत्मवत्सर्वभूतेषु " के न्यायसे, सबकी सहायता करो किंतु " रहिये अपने ठौर " को मत भूलो; यही गुरुकी आज्ञा है, यही अपने आत्माको प्रवंचानेसे बचानेका मार्ग है; इस आदर्शको ही सामने रख कर, अपने मानव जन्मको सफल कर सकते हो, यही आदर्श तुम्हें सब प्रकारकी गुलामीकी परतंत्रतासे छुडाकर मुक्ति और स्वतंत्रता अर्थात् जीवन मुक्तिका मार्ग दिखा सकता है । सद्गुरु कहते हैं—

अपने अपने धर्ममें, सब सुखलह सब काल ।
निज धर्म जिन अपनो गह्यो, सहजे भये निहाल ॥

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—

" स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः "

इस लिये प्यारो ! आपकी विद्या और सब दौड धूपकी सफलता इसीमें है कि, आप वर्तमान कालका ध्यान रखते हुए अपने धर्मके भोलेभाले सांप्रदायिक पक्षमें डूबे हुओंको--सत्य कबीरके सच्चे उपदेशके द्वारा बाहर निकालनेका प्रयत्न कीजिये. क्योंकि, यह सांप्रदादायिक पक्षपात ऐसा बुरा है कि, इसमें पडे हुए बडी कठिनाईसे सीधे रस्ते पर लाये जा सकते हैं.

उत्थानिकाका कलेवर बहुत बडाहो गया है. इसलिये विशेष न लिखकर मैं इसे यहांही समाप्त करता हूँ और आशा करता हूँ कि, सत्य धर्मके अनुयायी महात्मागण इस शब्दावलीको अपनाकर और इसके गुण दोषका विवेचन कर अपना कर्तव्य निबाहेंगे और मुझपर अनुग्रह करेंगे ।

सर्व सज्जनोंका परमार्थी–कृपाकांक्षी–

बम्बई.<br>मिति आषाढवदी<br>१४ सम्वत १९८६. वि<br>ता० ९।७।२९.

श्रीयुगलानन्दविहारी.<br>कबीराश्रमाचार्य–<br>कबीराश्रम ( खरसिया.<br>विलासपुर

सत्तसुकृत आदि अदली अजर अचिंत पुरुष मुनीन्द्र करु-
णामय कबीर सुरतियोगसंतायन धनी धर्मदासकी
दया वंश एकोत्तरकी दया । कबीर साहबके
अधिकारी वर्तमान आचार्य्य शिरोमणि
श्री १०८ श्रीमहंत काशी दासजी साह-
बकी दया सर्व महंत संतनकी दया।

# अथ कबीर पंथमें प्रचलित–
# शब्दावली ।

मंगलाचरण ।

( संग्रह कर्ताका )

सतगुरु चरण सरोज रज; बार बार शिर नाय ।
शब्दावलि संग्रह करूँ; सतगुरु होहिं सहाय ॥ १ ॥

इससे लाभ क्या–

धर्म, पंथ सब जगतके, ईश ब्रह्मलो जोय ।
शब्द प्रताप ते जानिये, सत्गुरुके बल होय ॥ २ ॥

( सत्गुरुका स्वरूप शब्दकी महिमा )

सत्यगुरु सत्य कबीर सो, शब्द रूप जगमान ।
धर्मदास सो शिष्य है, शब्द करे पहिचान ॥ ३ ॥
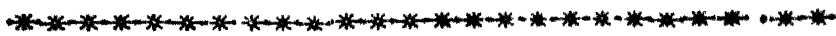
शब्द क्या बतलाता है ?

पापपुण्य अरु धर्म अधर्म, बन्ध मोक्ष लों जोय ।
शब्द प्रकाश ते जानिये, सूझ परत सब कोय ॥ ४ ॥
चार वेद अरु किताब पुनि, शास्त्र हदीस पुरान ।
भुगोल खगोल विज्ञान सब, शब्द प्रमाण ते जान ॥ ५ ॥
बिना शब्द जगमें कहूँ, अहै न होवन हार ।
सत्गुरु वचन प्रमाण है, मनमें लेहु विचार ॥ ६ ॥
शब्दे मारा गिर पड़ा, शब्दे छाडा राज ।
जिन जिन शब्द विवेकिया, तिनका सँवरा काज ॥ ७ ॥

इसलिये–

काज संवारे आपनो, वचन गुरूको मान ।
"माने वचन सो वंश है" सतगुरु शब्द प्रमान ॥ ८ ॥

परन्तु–

शब्द हमारा आदि का, सुनि मत जाहु सरक ।
जो चाहो निज तत्व को, शब्दे लेहु परख ॥ ९ ॥

क्योंकि–

शब्द बिना सुरति आँधरी, कहो कहाँको जाय ।
द्वार न पावे शब्द का, फिर फिर भटका खाय ॥ १० ॥

किन्तु–

शब्द शब्द बहुअन्तरा, सार शब्द मथि लीजे ।
कहैं कबीर जहँ सार शब्द नहीं, धिग जीवन सो जीजे ॥ ११ ॥
सार शब्द पाये बिना, जीवहिं चैन न होय ।
फन्द काल जेहि लखि पड़े, सार शब्द कहि सोय ॥ १२ ॥
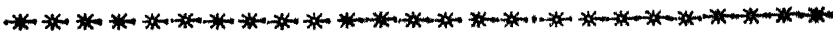
सतगुरु शब्द प्रमान है, कह्यो सो बारम्बार ।
धर्मनिते सतगुरु कहैं, नहिं बिनु शब्द उबार ॥ १३ ॥

सतगुरु वचन ।

( आगम संदेश )

धर्मनि सार भेद अब खोलौं। शब्दस्वरूपी घटघट बोलौं॥
शब्दहिं गहे सो पंथ चलावे। बिना शब्द नहिं मारग पावे॥
प्रगटे वचन चूरामनि अंशू । शब्द रूप सब जगत प्रशंसू॥
शब्दे पुरुष शब्द गुरुराई । विना शब्द नहिं जिवमुकताई॥
जेहिते मुक्त जीव हो भाई । मुकतामनि सो नाम कहाई॥

इसलिये-

शब्द कहै सो कीजिये, गुरुवा बडे लबार ।
अपने अपने स्वार्थको, ठौर ठौर बटमार ॥

तातै धर्मनिकर परचारा । विना शब्द नहिं जीव उबारा॥
शब्द गहे सो पंथ चलावे। बिना शब्द नहिं सत्य लखावे॥
शब्द गहेसो भौ जलपारा। बिना शब्द नहिं जीव उबारा॥
याते शब्द सनेही कीजे । जीवन जन्म सुफल करिलीजे॥

. ताते संग्रह कीन्ह यह, शब्दावलि धरि नाम ।
गुरु संतनको वन्दगी, बारबार परनाम ॥

॥ इति मङ्गलाचरण ॥

---

आगम संदेश जिसको चाहिये, इसपतेसे मंगा सकता है. इसमें पंथका भविष्य पूरापूरा वर्णन है. मिलनेका पत्ता-स्वामी श्रीयुगलानन्द बिहारी, कबीराश्रम पो. खरसिया स्टेशन जि० बिलासपुर. सी. पी. ॥

सत्यसुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरति योग
सन्तायन धनी धर्मदासकी दया
सर्व सन्त महन्तोंकी दया ।

# अथ कबीरपंथी-शब्दावली ।

## प्रथम खण्ड--प्रथम विभागः ।

संझा सुमिरन प्रारम्भः ।

साखी ।

गुरुको कीजे दण्डवत, कोटि कोटि परनाम ।
कीट न जाने भृंगको; वह करले आप समान ॥

संझा गौरी ( समय सूर्यास्त )

॥ गुरुसों लगन कठिन है भाई ॥

लगत लगे बिनु काज न सरिहै, जिय परलेतर जाई ॥
मृगा नाद शब्दका भेदी, शब्द सुनन को जाई ॥
सो शब्द सुनि प्राण दान दे, नेक न तन को डराई ॥
तजि गृहवार सती एक निकसी, सत्त करन को जाई ॥

पावक देख डरे नहिं मनमों, कूदपरे सर माई ॥
पपिहा स्वाति-बुन्द के कारण, पिया पिया रट लाई ॥
प्यासे प्राण जांय क्यों न अबहीं, और नीर नहिं भाई ॥
दोय दल आनि जुरे जब सनमुख, सूरा लेत लड़ाई ॥
टूक टूक ह्वै गिरे धरणि में, खेत छाड़ि नहिं जाई ॥
छाडे अपने तन की आशा, निरभय ह्वै गुण गाई ॥
कहैं कबीर ऐसी लव लावे, सहज मिलें गुरु आई ॥ १ ॥

साखी।

काल खडा शिर ऊपरे, जागु विराने मीत।
जाका घर है गैलमें, सो कस सोव निचिंत ॥

॥ गौरी ॥ २ ॥

॥ सकल तजि नाम सुमिर रे भाई ॥

माटी के सँग माटी मिलिहै, पवन में पवन समाई ॥
जतन जतन कर सुत को पाले, काचा दूध पिलाई ॥
सो बेटा रे काल ह्वै बैठे, बाबा कहत लजाई ॥
जो तिरिया मुख बिरिया खवाती, सोवत अंग लगाई ॥
सो तिरिया मुख मोरके बैठा, टूटिगयी सगम सगाई ॥
जो देहिया पर नीर पखारे, चोवा चँदन लगाई ॥
सो देहिया पर काग उड़त हैं, देखत लोग घिनाई ॥
झूठी काया झूठी माया, झूठी लोग लुगाई ॥
कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, झूठ जगत पतियाई ॥ २ ॥

साखी।

साधु हमारे आतमा, हम साधुनके जीव।
साधुन मध्ये यों रमूँ, ज्यों पय मध्ये घीव ॥

गौरी ॥ ३ ॥

॥ दासपर नाम ध्वजा फहराई ॥

काल जंजाल निकट नहिं आवै, माया देखि डराई ॥
जो कोई दाससे द्रोह विचारे, प्रभु को नाहिं सोहाई ॥
हिरणाकुश की वा गति हो गई, रावण धूर उडाई ॥
दुरयोधन परीच्छित राजा, फिर पाछे पछताई ॥
सुर पण्डित औ नृपति बादशाह, ऊंची पदवी पाई ॥
भक्ति बिना सब तुच्छ बराबर, बांधे यमपुर जाई ॥
का भये वेद पुराण गुन गाये, मत्य दया नहिं आई ॥
अहंकारमें सबहिं भुलाने, अजगर जनम सो पाई ॥
हम तो कान राखी नहिं भाई; ज्यों का त्यों ठहराई ॥
भावे कोई दुख सुख करि माने, भक्ति के पंथ चलाई ॥
योग, यज्ञ, तीरथ, व्रत, संयम, करनी कोटि कराई ॥
नाम बिना सबही है खाली, कहें कबीर समुझाई ॥ ३ ॥

संगीतरत्नमालामें यही पद इस प्रकार है-

ध्वनी गौरी वृन्दावनी ( समय सूर्यास्त )

॥ दास पर नाम ध्वजा फहराई ॥

काल जाल निकट नहिं आवे, माया देखि डराई ॥
जो कोई दाससो द्रोह विचारे, प्रभुको नाहिं सुहाई ॥
हरनाकुशकी वह गति हो गई, रावण धूर उडाई ॥
सुर ब्रह्मा नृप अरु इन्द्रकी, ऊंची पदवी पाई ।
भक्ति बिना सब तुच्छ बराबर, बांधे यमपुर जाई ॥

कहँ भयो वेद पुरान पढ़े से, घट महँ दया न आई।
अहंकारसे भवमें डूबे, अजगर तन धरि भाई॥
हमनहिं कान करी काहूकी, ज्यों को त्यों दरशाई।
चाहे कोइ सुख कोइ दुख मानो, सत्य कहौं गोहराई॥
योग यज्ञ तीरथ व्रत संयम, साधन कोटि कराई।
बिनु गुरु सफल होत नहिं कबहूँ, कहे कबीर समुझाई॥

साखी।

नाम लिया तिन सब लिया, सकल वेदका भेद।
बिना नाम नरके गये, पढि पढि चारों वेद॥

गौरी ४।

॥ बंदे नाम साहेब का ले रे ॥

एक लख पूत सवा लख नाती, संपति थिर ना रहे रे॥
लंकाऐसे कोट बिनशिगये, छिन में ऐसो बाव बहे रे॥
ना कोइ तेरा तू ना किसी का, पैडोई खलक बहे रे॥
नदी नाव संयोग जुरो है, ऐसो मिलना है रे॥
मातु पिता सुत बंधू तिरिया, कोई ना संग चले रे॥
ये सब हैं स्वारथ के संगी, गुरु बिन सुख ना लहे रे॥
छिंनकमाहिं तन विनशि जायगा, फिर कछु करि ना सके रे॥
ताते बेग सम्हार अपनपौ, साहेब कबीर कहे रे॥ ४॥

साखी।

साहब से सब होता है, बन्दे से कछु नाहिं॥
राई सो परवत करे, परवत राई माहिं॥

*गौरी ९ ।

॥ अवधू कुदरत की गति न्यारी ॥

रंक निवाज करे वह राजा, भूपति करे भिखारी ॥
एते लौंग फल नहिं लागे, चंदन फूल न फूला ॥
मच्छ शिकारी रमे जँगल में, सिंह समुद्रहिं झूला ॥
रेंड-रूख भया मलयागिर, चहुँदिशि फूटी बासा ॥
तीन लोक ब्रह्मण्ड खण्डमें, अंधा देख तमासा ॥
पंगुल मेरु सुमेरु उलंघे, त्रिभुवन मुक्ता डोले ॥
गुंगा ज्ञान विज्ञान प्रकासे, अनहद बानी बोले ॥
अकाशहिं बांधि पताल पठावे, शेष स्वर्ग पर राजे ॥
कहें कबीर राम हैं राजा, जो कछु करे सो छाजे ॥ ९ ॥

## आरती प्रारम्भ ।

आरती ॥ १ ॥

जय जय सत्य कबीर ।

सत्यनाम सत सुकृत; सत रत सत कामी ।
विगत क्लेश सत धामी, त्रिभुवनपति स्वामी ॥ टेक ॥
जयति जय कब्बीरम्, नाशक भव भीरम् ।
धार्यो मनुज शरीरम्, शिशु वर सरतीरम् ॥ जय २ ॥
कमल पत्र पर शोभित, शोभाजित कैसे ।
नीलाचल पर राजित, मुक्तामनि जैसे ॥ जय २ ॥

* नोट-और बहुतसी गौरी आगे दिया है सो देखना चाहिये सूचीमें देखनेसे पता मिलेगा ।

परम मनोहर रूपम्, प्रमुदित सुखरासी ।
अति अभिनव अविनाशी, काशी पुर वासी ॥ जय २ ॥
हंस उबारन कारन, प्रगटे तन धारी ।
पारखरूपविहारी, अबिचल अधिकारी ॥ जय २ ॥
साहब कवीर की आरति, अगनित अघहारी ।
धर्मदास बलिहारी, मुद मंगल कारी ॥ जय २ ॥

आरति ॥ २ ॥

जय जय श्रीगुरुदेव ।

पारख रूप कृपालम्, मुदमय त्रैकालम् ।
मानस साधु मरालम्, नाशक भव जालम् ॥ जय २ ॥
कुन्द इन्दु वर सुन्दर, सन्तन हित कारी ।
शान्ताकार शरीरम्, श्वेताम्बर धारी ॥ जय २ ॥
शुभ्र मुकुट चक्रांकित, मस्तक पर सोहे ।
विमल तिलक युत भृकुटी, लखि मुनि मन मोहे ॥ जय २ ॥
हीरा मणि मुक्तादिक, भूषित उर देशम् ।
पद्मासन सिंहासन, स्थित मंगल वेषम् ॥ जय २ ॥
तरुण अरुण कञ्जांघ्रि, त्रिभुवन वश कारी ।
तम अज्ञान प्रहारी, नख द्युति अति भारी ॥ जय २ ॥
सत्य कबीर की आरति, जो कोइ गावे ।
मुक्ति पदारथ पावे, भवमें नहिं आवे ॥ जय २ ॥

आरती ॥ ३ ॥

संझा आरती नाम तुम्हारे । अनहद ध्वनि गुरुज्ञान विचारे ॥

ततकर तेल दयाकर दीपा । ब्रह्मअग्नि मन पवन समीपा ॥
पांचो बाती निरमल बारो । सुरति चँवर ले सनमुख ढारो॥
प्रेमकर पुहुप धूप धर ध्याना।चित चंदन घसि आगे आना॥
अविगतरूप अधर परकासा । आरतिगावं कबिर धर्मदासा

आरती ॥ ४ ॥

संझाआरति करे गुरुसेवा । संपुट खोल मिले गुरुदेवा ॥
तेजपुंजकी ज्योति उजियारा। घंटा झाँझ बजे अधिकारा॥
अनहद शब्द अखंडित होई । अम्रवासमें रहे समोई ॥
सुकृत अंश पुरुप को ध्यावे । सतगुरु चीन्ह चरण चितलावे
मन बच कर्म जो आरति गावे। कहे कबीर सतलोक सिधावे

आरती ॥ ५ ॥

संझाआरति सुकृत कीन्हा। हंस उबारि अपन करलीन्हा ॥
गगनमंडलबिचफुलयकफूला। तर भौ डार उपर भौ मूला
गगनमंडल बिच आरति साजे। सोहं हंसा आन बिराजे॥
तत निहतत में जाय समाना। देखहु दीप अधर अस्थाना
कहें कबीर सुनु साधो भाई। अजर अमर घर रहो समाई६

आरती ॥ ६ ॥

संझाआरति करो बिचारी। कालदूत जम रहे झखमारी॥
खुलगइ सुषमन कूंचीतारा । अनहदशब्द उठे झनकारा ॥
सुरत निरत दोय उलटिसमावे। मकरतार जिहि डोर लगावे
उनमुन शब्द अगम घर होई। अचाह कँवलमें रहे समोई।
[illegible] कमल होय परगासा। आरतिगावें कबिर धर्मदासा

आरती ॥ ७ ॥

संझाआरति सुकृति सँजोई। चरणकमल चित राखु समोई॥
तिरगुन तेल तत्वकी बाती। ज्योति प्रकाश भरे दिनराती॥
शून्य शिखर पर झाझर बाजे। महापुरुष घर राज बिराजे॥
शब्दसरूपी आप बिराजे। दर्शन होत सकल भ्रम भाजे॥
प्रेमप्रीति के सेवा लावे। गुरुगम ह्वो परम पद पावे॥
सुख अनंद ह्वै आरति गावे। कहैं कबीर सतलोक सिधावे ८

संझासाखी ।

'कबीर' संझासुमिरन आरती, भजन भरोसे दास ।
मनसा बाचा कर्मना, जबलग घटमें श्वास ॥ १ ॥
श्वास श्वास में नाम ले, बृथा श्वास जनि खोय ।
ना जानो यहि श्वास को, आवन होय न होय ॥ २ ॥
श्वासा की कर सुमिरनी, कर अजपा को जाप ।
परम तत्त्व को ध्यान धर, सोऽहं आपे आप ॥ ३ ॥
सोऽहं पोपा पवन में, बांधा मेरु सुमेर ।
ब्रह्मगांठ हिरदय धरो, यहि विधि माला फेर ॥ ४ ॥
माला है निज श्वास का, फेरेंगे कोइ दास ।
चौरासी भरमें नहीं, कटे करमकी फांस ॥ ५ ॥
सद्गुरु मोहिं निवाजिये, दीजे अम्मर बोल ।
शीतल शब्द कबीर का, हंसा करें कलोल ॥ ६ ॥
'हंसा' मत डरपो काल से, कर मेरी परतीत ।
अमरलोक पहुँचाइहौं, चलो सो भौजल जीत ॥ ७ ॥

भौजल में बहु काग हैं, कोइ कोइ हंस हमार।
कहें कबीर धर्मदास सो, खेइ उतारो पार ॥ ८ ॥
अविनासी की आरती, गावें सत्य कबीर।
कहें कबीर सुर नर मुनी, कोइ न लागे तीर ॥ ९ ॥
सांझ भये दिन आथवे, चकई दीन्हीं रोय।
चल चकवा तहँ जाइये, रैन दिवस ना होय ॥ १० ॥
रैन की बिछुरी चाकई, आन मिली परभात।
जो जन बिछुरे नाम से, दिवस मिले नहिं रात ॥ ११ ॥
हौं कबीर विचलों नहीं, शब्द मोर समरत्थ।
ताहि लोक पहुँचाइहौं, चढै शब्द के रत्थ ॥ १२ ॥
तर ऊपर धर्मदास हैं, जती सती की रेख।
रहता पुरुष कबीर है, चलता है सब भेष ॥ १३ ॥
भेष बरोबर भेष है, भेद बरोबर नाहिं।
तौल बरोबर घूँघची, मोल बरोबर नाहिं ॥ १४ ॥
निर्विकार निर्भय तुही, और सकल भय माहिं।
सबपर तेरी साहिबी, तुझपर साहेब नाहिं ॥ १५ ॥
भय भञ्जन दुख परिहरन, अम्मर करन शरीर।
आदि युगादी आप हो, अदली अदल कबीर ॥ १६ ॥
बिनवतहों कर जोरि के, सुनु गुरु कृपानिधान।
संतन का सुख दीजिये, दया गरीबी जान ॥ १७ ॥
दया गरीबी बन्दगी, समिता शील सुभाव।
इतने लक्षण साधुके, कहें कबीर विभाव ॥ १८ ॥

बहुत दिननसे जोहता, बाट तुम्हारी राम ।
जिव तरसे तुव मिलनको, मन नाहीं विश्राम ॥ १९ ॥
सो दिन कैसा होगा, गुरु गहोगे बांह ।
अपना कर बैठावगे, चरण कमल की छांह ॥ २० ॥
क्या मुखले विन्ती करूँ, लाज आवत है मोहि ।
हमतो औगुन बहु किये, कैसे भावो तोहि ॥ २१ ॥
सुरति करु मोरि साइयां, हम हैं भव जल माहिं ।
आपेही बहिजायँगे, जो नहिं पकडो बांहि ॥ २२ ॥
मैं अपराधी जनम का, नख सिख भरा विकार ।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो उबार ॥ २३ ॥
औगुन मेरे बापजी, बखशो गरीब निवाज ।
जो हौं पूत कपूत हौं, तोहु पिताको लाज ॥ २४ ॥
साहब तुम जनि वीसरो, लाख लोग लगि जाहिं ।
हम सन तुम्हरे बहुत हैं, तुम सन हमरे नाहिं ॥ २५ ॥
कर जोरे विन्ती करूँ, भवसागर आपार ।
बन्दा ऊपर मिहर करी, आवागमन निवार ॥ २६ ॥
अन्तरजामी एक तू, आतम के आधार ।
जो तू छाडे साथको, कौन उतारे पार ॥ २७ ॥
अबकी जो सांई मिले, सब दुख आंखों रोय ।
चरनों ऊपर शिर धरूँ, कहूँ जो कहना होय ॥ २८ ॥
साहब तुमहिं दयाल हौ, तुम लग मेरी दौर ।
जैसे काग जहाज को, सूझे और न ठौर ॥ २९ ॥

मुझमें अवगुन तुझहि गुन, तुझगुन अबगुन मुज्झ।
जो मैं विसरूँ तुझ्झको, तू नहिं विसरे मुझ्झ ॥ ३० ॥
तेरे विसरे क्यों बने, मैं किस शरने जाँव।
शिवविरंचि मुनि नारदा, तिन हृदय न समाव ॥ ३१ ॥
मैं तो भूल बिगारिया, जनिकर मैला चित्त।
साहब गरुवा चाहिये, नफर बिगारे नित्त ॥ ३२ ॥
औगुन किया तो बहुकिया, करत न मानी हार।
भावैं बन्दा बखशिये, भावें गर्दन मार ॥ ३३ ॥
साईं केरा बहुत गुन, औगुन एको नाहिं।
जो दिल खोजा आपना, सब अबगुन मुझ माहिं ॥ ३४ ॥
मुझमें गुन एको नहीं, जान राय शिर मौर।
तेरे नाम प्रतापसे, पाऊँ आदर ठौर ॥ ३५ ॥
मैं खोटा साईं खरा, मैं गादा मैं गारि।
मैं अपराधी आत्मा, साईं सरन उबारि ॥ ३६ ॥
और पतित तो कूप हैं, मैं हूँ समुद्र समान।
मोहि टेक तोहि नामकी, सुनियो कृपानिधान ॥ ३७ ॥
अवसर बीता अल्प तन, पीव रहा परदेस।
कलंक उतारो रामजी, भानो भरम संदेस ॥ ३८ ॥
साईं मोर सावध अहै, मैंही भया अचेत।
मन बच कर्म न हरि भजा, ताते निरफल खेत ॥ ३९ ॥
मन परतीत न प्रेमरस, ना कोइ तनमें ढंग।
ना जानो या पीवसो, क्योंकर रहसी रंग ॥ ४० ॥

साईं तो जब मिलेंगे, पूछेंगे कुशलात।
आदि अन्तकी सब कहूँ, उरअन्तरकी बात ॥ ४१ ॥
अब सागर तो भारी भया, गहरा अगम अथाह।
तुम दयाल दायाकरो, तब पाऊँ कछुथाह ॥ ४२ ॥
सतगुरु बडे दयाल हैं, संतनके आधार।
भव सागर अथाहसो, खेइ उतारें पार ॥ ४३ ॥

विज्ञानस्तोत्र।

सत्यसत्यके नामसों सत्य सागर भरा, सत्यके नाम तिहुँ लोक छाजा ॥ सन्तजन आरति करें प्रेमतारी भरें, ढोलनिश्शान मिरदंग बाजा ॥ भक्ति सांची किया नाम निश्चैलिया. शून्यकी शिखर ब्रह्माण्ड गाजा ॥ सत्य कबीर सर्वज्ञ साहब मिले; भजो सत्यनामका रंक राजा ॥
कबीर' हम दीन दुनी दरवेशा। हम किया सकल परवेशा॥
हम दुवा सलामत लेखा। हम शब्द सरूपी पेखा ॥
हम रुंड मुंड में फीरा। हम फाका फक्कर फकीरा ॥
हम रमे कौन की नाल। हम चलैं कौन की चाल ॥
हमं सरबङ्गी सहजे रमे, हमरी वार न पार ॥
वार भी हमही पार भी हमही, नाना दरिया तीर ॥
सकल निरंतर हम रमें, हम गहिरे गहर गंभीर ॥
खाली खलक खलक के मांही, यां गुरु कहें कबीर।
सत्यनाम की आरती, निरमल भया शरीर ॥

सत सुकृत लौलीन है, ज्ञान ध्यान लो थीर।
"धर्म्मदास लोके गये, गुरु बहियां मिले कबीर"
धर्म्मदास लोके गये, छाडि सकल संसार ॥
हंसन पार उतारहीं, गुरु धर्म्मदास परिवार ॥
अजावन से जावन भया, जावन से भये मूल ॥
चहुँ दिशि फूटी बासना, रही कली में फूल ॥
जब फूले तब गिरि पडे, चरन कमल की धूर ॥
कली फावरी हो रही साहब हाल हजूर ॥
कबीर मिले धर्मदासको, लिख परवाना दीन्ह ॥
आदि अन्त की बीनती, यही लोक को चीन्ह ॥

"बिना देह साहब निरालम्ब जानी"

अति लौलीन चीन्हन्त ज्ञानी। शब्देसरूपी सुनाकाशवानी ॥ जानेजनावेकहावैन देवा। ऐसातत्वपुजेपुजावेलगावे न सेवा ॥ सदाध्यानधारी अखंडेनिरासा। सदासिंधुपीवे न जावेपियासा ॥ प्रेमधामधीरा उदासी अकेला। लौलीन योगी गुरु ज्ञान मेला ॥ मिलन्ताचलन्तारहन्ताअपारी। ऐसीदृष्टिदेखोअनंतोविचारी ॥ सदा चेत चेतंत चितवंत सूरा। ऐसा ख्याल खेलतं बूझंत पूरा न ज्ञानो न ध्यानो न मान मानों। नहीं चंद्र तारा उगे न भानो ॥ आगे न पीछे न मध्ये न कोई। ज्यों काजला ब्रह्म त्यों तत सोई ॥ डारो न मूलो न वृक्षो न छाया। जीवो न शीवो न कालो न काया॥ दृष्टी न सृष्टी न देवी न देवा। जापो न थापो न पूजा न सेवा॥

नहीं पौन पानीन चंदे न सूरा। अखंडित ब्रह्म सोई सिद्धपूरा। हमनाही तुमनाहीं बंधू न भाई। निराधार आधार रंको न राई॥ गावे न ध्यावै न हेली न हेला। नारी न पुरुषो न खेली न खेला॥ नहीं पेट पृष्टे न पावों न माथा। न जीवो न शीवो न नाथो अनाथा॥ शेषो महेशो गनेशो न ग्वालं। गोपी न ग्वाले न कंसे न कालं॥आसे न पासे न दासे न देवा। आवे न जावे लगावे न सेवा॥ नहीं वार पारे न नियरे हजूरा। ज्योंका ज्यों तत्त गहिरे गंभीरा॥ यंत्रे न मंत्रे न दरदे न धोका। नरके न सरगे न संसे न शोका॥ सेते न पीते न सबजे न लालं। गोरे न सँवरे न वृद्धे न बालं॥ भेदा अभेदा न खेदा न कोई। सदा सुगति सोहंग एकै न दोई॥ जाने जनावे जनावे न शूरा। वारे न पारे न नियरे हजूरा॥ नादे न विंदे न जिंदे न जीवा। निरंतर ब्रह्म एकै शक्तो न शीवा॥ नहीं योगयोगी न भोगी न भुक्ता। सच्चिदानंदसाहब बंधो न मुक्ता॥ खेले खेलावै खेलावे औ खेले। चेते चेतावे चेतावे औ चेते॥

"एके अनेके अनेके सो एके"

चितगुण चित बिलास दास सो अंतर नाहीं। आदि अंत में मध्य गोसाईं अगह गहन में नाहीं॥ गहनीगहिए सो कैसा, सोहं शब्दसमानआदिब्रह्मजैसेका तैसा॥ "कहें कबीर हम खेलैं सहज सुभावा"

अकह अडोल अबोल सोहं समिता। तामो आन

बसा एकरमिता ॥ वा रमता को लखे जो कोई । ता को आवागमन न होई ॥ "ओऽहं सोऽहं मोहं सोई।"

ओहम्म कालक सोहम्म वाला। ओऽहंसोऽहम्म बोले रिसाला ॥ किलक कमत कमोद ककवत, ये चारों गुरु पीर ॥ धर्मदास को शब्द सुनायो, सतगुरु सत्य कबीर ॥ बाजा नाद भया परतीत। सतगुरु आये भौजल जीत॥ बाजबाज साहब का राज। मारा कूटा दगाबाज॥ हाजिरको हजूर गाफिलको दूर हिंदूका गुरु मुसलमानका पीर "सात द्वीप नौ खंड में, मोहं सत्यकबीर"

इति श्रीविज्ञानस्तोत्र समाप्तः ॥

---

## दयासागरस्तुति।

गुरु दयासागर ज्ञान आगर, शब्दरूपी सतगुरं।
तासु चरणसरोज बंदों, सुखदायक सुखसागरं ॥
योगजीत अजीत अम्मर, भापते सत सुकृतं।
दयापाल दयाल स्वामी, ज्ञानदाता इस्थिनं ॥
क्षमाशील संतोष समिता, आनंदरूपी हिरदयं।
सहजभाव विवेक इस्थिर, निरमाया निहसंशयं ॥
निरमोही निरवैर निरभै, अकथ कथिता अविगतं।
उपकार औ उपदेशदाता, मुक्तिमारग सतगुरं ॥
दास भाव की प्रीति बिनती, भक्ति करन करावनं।

चौरासी बन्धन कर्म्म खण्डन, बन्दीछोर कहावनं ॥
त्रिगुण रहिता सत्य बकता, सत्तलोक निवासितं ।
सतपुरुष जहां सत्तसाहब, तहां आप विराजितं ॥
युगन युगन सतपुरुष आज्ञा, जीवन कारण पगुधरं ।
दीन लीन अचीन ह्वैके, जगतमें डोलत फिरं ॥
करुणामय कबीर केवल, सुखदायक सर्व लायकं ।
जम भयंकर मान मरदन, दुखित जीव सहायकं ॥

जीवके उद्धारका मार्ग ।

धर्मदास करजोर बिनवे, दया करो मन बसकरं ।
करूंसेवागुरुभक्तिअबिचल, निसदिनअराधोंसुमिरणं ॥
सद्गुरु की अधिक महिमा, ज्ञान कुण्ड नहाइये ।
भ्रमित मन तब होय स्थिर, बहुरि न भौजल आइये ॥
साधुसन्त की अधिक महिमा, रहनि कुण्ड नहाइये ।
काम क्रोध विकार परिहरि बहुरि न भौजल आइये ॥
दासातनकी अधिक महिमा, सेवाकुण्ड नहाइये ।
प्रेमभक्ति पतिव्रत दृढकरि, बहुरि न भौजल आइये ॥
योगीजन की अधिक महिमा, युक्तिकुण्ड नहाइये ।
चन्द्रसूर मन गगन थिरकरि, बहुरि न भौजल आइये ॥
श्रोता बक्ता की अधिक महिमा, बिचारकुण्ड नहाइये ।
सारशब्द निवेरि लीजे, बहुरि न भौजल आइये ॥
गुरु साधुसन्त समाज मध्ये, भक्ति मुक्ति दृढाइये ।
सुरतिकर सतलोक पहुँचे, बहुरि न भौजल आइये ॥

धर्म्मदास प्रकाश कीन्हो, अकह कुण्ड नहाइये।
सकल कलिविष धोय निर्मल, बहुरि न भौजल आइये॥
साहब कबीर प्रकाश सद्गुरु, भली सुमति दिढाइये।
सार में ततसार दरसे, सोई अकल कहाइये॥
धर्म्मदास पट खोलि देखो, तत्त्व में निहतत्त्व है।
कहैं कबीर निहतत्त्व दरसे, आवागमन निवारिये॥

इति श्रीदयासागरस्तुति समाप्तः।

## चेतावनी।

नमो ! नमो धर्मनि पातक, पूर रहो मद काम।
जिनको लोक बासा दिया, अधम उधारण नाम॥
अनेक बन्धनते बाँधिया; एक बिचारा जीव।
अपने बल छूटे नहीं, तुमहिं छुडावहु पीव॥
मैं अपराधी जनमका, नख शिख भरा विकार।
तुम दाता दुख भञ्जना, मेरी करो उबार॥
अवगुण मेरे बापजी, बकशो गरीब निवाज।
मैं तो पूत कुपूत हों, तुम्हीं पिता को लाज॥
बिनती है निज दास की, सुनिये दीनदयाल।
दास आपनो जानिके, सतगुरु होहु कृपाल॥
'कबीर' जम्मन जाय पुकारिया, धर्मराय दरबार।
हंस मवासी है रहा, लगे न फांस हमार॥
हमरी शंका ना करे, तुम्हरी धरे न धीर।
सतगुरु के बल गाजहीं, कहैं कबीर कबीर॥

कबीर कहंता जानदे, मेरी दसी न जाय।
खेवटिया के नाव पर, चढे घनेरे आय॥
बाजा बाजा रहित का, परा नगर में शोर।
सद्गुरु खसम कबीर है नजर न आवे और॥

सत्यका शब्द।

सत्तका शब्द सुन भाई फकीरी अदल बादशाही॥
साधो बन्दगी दीदार। सहज उतर सायर पार॥
सोहं शब्दसे कर प्रीत। अनभय अखण्ड घरको जीत॥
तन में खबर कर भाई। जा में नाम रुशनाई॥
सुरतिनगरमें बस्ती खूब। बेहद उलट चढ महबूब॥
सूरति नगर में कर सैल। जामें आतमा को महेल॥
अमरी मूलसन्धि मिलाव। जापर रखो बाँयाँ पांव॥
दहिना मध्यमें धरना। आसन अमर यों करना॥
द्वादश पवन भर पीजे। शशिघर उलट चढलीजे॥
तन मन वारना कीजे। उलट निज नामरस पीजे॥
तन मन सहित राखो श्वास। इस बिध करो बेहद बास॥
दोनों नैन के कर बान। भौंरा उलटि कस कमान॥
परबत छके दरिया जान। करले तिरकुटी अस्नान॥
सहज परस पद निर्बान। तेरा मिटे आवाजान॥
जा में गैब का बाजार। सरवर दोइ दीसे पार॥
जा बिच खडीकुदरत झार। शोभा कोटि अगम अपार॥
लागे नौलख तारा फूल। करनी कोटि जरिया मूल॥

ताको देखना मत भूल। रमता राम आप रमूल ॥
माया भरम की कांची। देखु दिल अन्दरकी सांची॥
वरपे नूर बिन मोती। चन्दा सूर की जोती ॥
झलके झिलमिला नारी। ताविच अल्प है क्यारी ॥
मानो प्रेम की झारी। खुलगई अगम किवारी ॥
बेडा भरम का खोया। दीपक नामका जोया ॥
जोगी जुगत से जीवे। प्याला प्रेम का पीवे ॥
मौला पीव को दीजे। तनमनकुरबानकरलीजे ॥
परी है प्रेम की फांसी। मनुवां गगनका वासी ॥
बाजे बिना तन्ती तूर। सहजे ऊगे पच्छिम सूर ॥
भौंरा सुगंध का प्यासा। किया है कमलमें वासा ॥
रमता हंस है राजा। सहजे पलक आवाजा ॥
सुन्दर श्याम घन लाया। बादल गगन में छाया ॥
अमृत बूंद झर लाया। देखि दोइ नैन ललचाया ॥
अजब दीदार को पाया। दरिया सहजमें न्हाया ॥
दरिया उलट उमगे नीर। ताविच चले चौंसठ हीर ॥
हंसा आन बैठे तीर। सहज चुगे मुक्ता हीर ॥
मिला है प्रेम का प्यारा। नहीं है नैन सों न्यारा ॥
जीवनमृत न व्यापेकाला। जो त्रिकुटीमें पलक न टाला॥
पल जब पीव से लागा। धोखा तब दिलों का भागा ॥
चेतावनी चित विलास। जबलग रहे पिंजर श्वास ॥
सोहंशब्द अजपाजाप। साहब कबीरसो आपहिंआप ॥
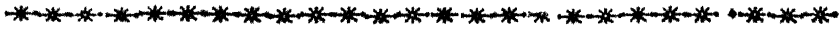
साखी ।

चितावनि चितलागि रहे, यह गति लखै न कोय ।
अगम पन्थ के महल में, अनहद बानी होय ॥
नाम नैन में रमि रहा, जाने बिरला कोय ।
जाको सतगुरु मीलिया, ताको मालुम होय ॥
झण्डा रोपा गैब का, दोय परबत के सन्ध ।
साधु पहिचाने शब्द को, दृष्टि कमल कर बन्ध ॥
झलके जोती झिलमिला, बिन बाती बिन तेल ।
चहुँदिशि सूरज ऊगिया, ऐसा अदभुत खेल ॥
जागृत रूपी रहत है, सतमत गहिर गंभीर ।
अजरनाम बिनसे नहीं, सोऽहं सत्य कबीर ॥

॥ इति चेतावनी ॥

## ज्ञानगुदरी ।

अलखपुरुष जब किया विचारा। लखचौरासी धागा डारा॥
पांच तत्त्व की गुदरी बीनो । तीन गुणनसे ठाढी कीनी ॥
ता में जीव ब्रह्म औ माया । समरथ ऐसा खेल बनाया॥
सीवन पांच पचीसो लागे । काम क्रोध मोह मद पागे ॥
काया गुदरी का बिस्तारा । देखो सन्तो अमर सिंगारा॥
चांद सूर दोइ पेवँद लागे । गुरु प्रताप से सोवत जागे ॥
शब्दकी सुई सुरतिकाडोरा। ज्ञानके टोभन सिरजनजोरा॥
अबगुदरीकी करु हुशियारी। दाग न लागे देखुबिचारी ॥
सुमतकी साबुन सिरजनधोई । कुमत मैलको डारो खोई॥

जिनगुदरीका कियाविचारा । सोजन भेटे मिरजनहारा ॥
धीरजधुनीध्यानधरआसन । सतकीकोपीनसहजसिंगासन
जुगतकमंडलकरगहिलीन्हा । प्रेम पावडी मुरशद चीन्हा॥
सेलीशील बिवेककी माला । दयाकी टोपी तनधर्मशाला ॥
मिहर मतंगा मत वैशाखी । मृगछाला मनहीको राखी ॥
निहचे धोती पवन जनेऊ । अजपा जपे सो जाने भेऊ॥
रहै निरन्तर सतगुरु दाया । साधु सँगतकर सबकछुपाया॥
लौकी लकुटी हिरदया झोरी।क्षमा खड़ाऊँ पहिर बहोरी
मुक्ति मेखला शुकृत सुमिरनी । प्रेम पियाला पीवे मौनी
उदास कूबरी कलह निवारी । ममता कुत्तीको ललकारी॥
जुगतजंजीरबांधजबलीन्हा । अगम अगोचरखिरकीचीन्हा
बिरागत्यागबिज्ञाननिधाना । तत्ततिलकदीन्होनिरबाना
गुरुगम चकमकमनसमतूला । ब्रह्म अगिनपरगटकरमूला॥
संशय शोक सकल भ्रमजारा । पांच पचीसो परगटमारा॥
दिलका दरपन दुबिधा खोई । सो बैरागी पक्का होई ॥
शून्य महल में फेरी देई । अमृतरसकी भिच्छा लेई ॥
दुखसुख मेला जगका भाऊ । तिरबेनीके घाट नहाऊ ॥
तनमनशोधि भयाजबहि ज्ञाना।सो लखिपावै पद निर्बाना
अष्ट कमलदल चक्कर सोधे । जोगी आप आपमें बोधे ॥
ईंगला पिंगलाके घर जाई । सुषमन नीर रहा ठहराई ॥
ओहं सोहं तत्त्व बिचारा । बंकनालमें किया सँभारा ॥
मनको मार गगन चढिजाई । मानसरोवर पैठि नहाई ॥

अनहदनाद नाम का पूजा । ब्रह्म बैराग देव नहिं दूजा ॥
छुटगइ कशमल कर्मजलेखा । यहि नैनन साहबको देखा ॥
अहंकार अभिमान बिडारा । घटका चौकाकर उजियारा ॥
चितकर चंदन मनसा फूला । हितकर संपुट करले मूला ॥
शरधा चँवर प्रीति कर धूपा । नौतम नाम साहबका रूपा ॥
गुदरी पहिरे आप अलेखा । जिन यह प्रगट चलाई भेखा ॥
साहबकबीरबख्शिजबदीन्हा । सुरनरमुनिसबगुदरीलीन्हा ॥
ज्ञानगूदरी पढे प्रभाता । जनम २ के पातक जाता ॥
ज्ञानगूदरी पढे मध्याना । सो लखि पावे पद निर्बाना ॥
संझा सुमिरन जो नर करई । जरामरण भौसागर तरई ॥
कहें कबीरा सुनो धर्म्मदासा । ज्ञान गूदरी करयो प्रगासा ॥

साखी ।

माला टोपी सुमिरनी, सद्गुरु दिया बखशीश ।
पलँ २ गुरु को बंदगी, चरण नवाऊँ शीश ॥
भौ भंजन दुख परिहरन, अम्मर करन शरीर ।
आदियुगादी आप हो, चारो युग कब्बीर ॥
बंदीछोर कहाइया, बलख शहर मंझार ।
छूटे बंद सब भेष के, धन धन कहे संसार ॥

॥ इति श्रीज्ञानगुदरी सम्पूर्णम् ॥

## रतनास्तुति ।

गुरुध्यानसार भजबारबार ।
सब तजबिकार सतनामसार सों कर यारी ॥
जय जय गुरुपीरं सत्यकबीरं, अमरशरीरं अधिकारी ॥

निर्गुण निज मूलं धरि अस्थूलं, काटं शूलं भवभारी ॥
सूरति निज सोहं कलिमलखोहं, जन मनमोहं छबिभारी ॥
अम्मरपुरबासी सब सुखरासी, सदा बिलासी बलिहारी ॥
पीरन के पीरा मति के धीरा, अलख फकीरा ब्रह्मचारी ॥
हंसन हितकारी जग पगुधारी, गरभप्रहारी उपकारी ॥
काशी आये दास कहाये, हंस बचाये प्रणधारी ॥
रामानँदस्वामी अन्तरयामी, हैं बड़नामी संसारी ॥
उनको गुरुकीन्हा मतबुधलीन्हा, उनहुन चीन्हा करतारी ॥
ब्राह्मणसन्यासी कीन्हीहांसी, तब अविनाशी पगुधारी ॥
मगहर स्थाना किया पयाना, दे परवाना जन नारी ॥
तहँ बलबीरा तजे शरीरा, काटन पीरा भव भारी ॥
बिरसिंघदेवराजा सुनबलगाजा, सबदलसाजा रंभारी ॥
उत पीर पठाना है बलवाना, लाय कमाना कर डारी ॥
सनमुख नियराना छूटे बाना, भै घमसाना रण भारी ॥
तब गुरुज्ञानी मनकी जानी, अधरहिं बानी उच्चारी ॥
खोलोपरदा है नहिं मुरदा, जूझ अवस्था करडारी ॥
सुनके यह बानी अचरजमानी, देख निशानी सिरमारी ॥
रोये परवीना हम मतिहीना, तुमहिं न चीन्हा करतारी ॥
मगहर तजि बासा किया प्रकाशा, जहँ धर्मदासा व्रतधारी ॥
तिनको शिष कीन्हा सर्बस दीन्हा, दुख हरलीन्हा यमभारी ॥
सतपन्थ चलाये भ्रम मिटाये, शब्द दिढाये संसारी ॥
रतनाकन तेरो करत निहेरो, हमतन हेरो बलिहारी ॥

अष्टक ।

साहब गुरुज्ञानी समरथध्यानी, अचल स्थानीस्थीरं ॥
अविगतवानी मुक्तिनिशानी, जगमें आनी कव्वीरं ॥
शीशविराजे तिलक अखण्डित, मुख सतसुकृत गम्भीरं ॥
ज्ञान प्रचण्डित पाखँड खण्डित,समता मंडित कव्वीरं ॥
भेप रिसाला श्रवनी माला, प्रेम उजाला किर्पा गहिरं ॥
दीनदयालं जन प्रतिपालं, सदा कृपालं कव्वीरं ॥
संकट टारन कष्ट निवारन, शीश विदारन यम धीरं ॥
हंस उबारन जिव निस्तारन, भर्म विदारन कव्वीरं ॥
सतयुग, त्रेता, द्वापर बीता, रमता तीता पर पीरं ॥
कलयुग कीता सबसों जीता, परम पुनीता कव्वीरं ॥
काशी छोड उडीसा आये, आसा गाडे सिन्ध तीरं ॥
ठाकुर पंडो गर्व बिहंडो, पाखंड खंडो कव्वीरं ॥
पुरुप विदेही अविचल देही, नाम सनेही मन थीरं ॥
जो जन जाने भेंटे तेही, दर्शन दे गुरु कव्वीरं ॥
कवीरं अष्टक टारन कष्टक, भौजल नष्टक करं थीरं ॥
धर्मनिदासं नित अभ्यासं, प्रापत तासं कव्वीरं ॥

स्तुति ।

गुरु दुखित तुम बिन रटत द्वारे, प्रगट दरशन दीजिये ॥
गुरुसामियांसुनु विनतिमोरी,बलिजाउँ विलंब न कीजिये॥
गुरु नैन भरभर रहत हेरो, निमिख नेह न छाडिये ॥
गुरु बांह दीजे बन्दिछोर, सो अबकी बन्द छुड़ाइये ॥

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

बिविध विधि तन भयेउ व्याकुल, बिन देखे अब ना रहों ॥
तपत तनमन उठत ज्वाला, कठिन दुख कैसे सहों ॥
गुन औगुन अपराध छमाकरि, अब न पतित विसारिये ॥
यह विनती धर्मदास जनकी, सतपुरुष अवमानिये ॥

विनय ।

दरस दीजै गुरु परम स्नेही । तुम विनु दुख पावे मोर देही ॥
अन्न न भावे नींद नहिं आवे । बारबार मोहि विरह सतावे ॥
घर आंगनमोहि कछू न सुहावे। वज्र भयो यहविरह नजावे॥
नैनानीर बहे जलधारा । निसिदिन पंथ निहारूँ तुम्हारा ॥
जैसे निजधन जातहिगई । ऐसे तुम विनु कछु न सुहाई ॥
जैसे मनि विनु फानि बेकरारा । ऐसे तुमविनु हाल हमारा ॥
हे कर्ता तुम अपरम्पारा । केहि कारन गुरु मोहिविसारा ॥
जैसे मीन मरै विनु नीरा । ऐसे तुम विनु दुखित शरीरा॥
छन्द ॥ दुखित तुम विनु रटत द्वार,प्रगट दरशन दीजिये॥
विनति सुनु स्वामिया वलि जावैं विलंब न कीजिये ॥
विविधि विधि हम भय हैं व्याकुल, विनदेखे जिव ना रहै॥
तपत तन मन उठत ज्वाला, कठिन दुख अब को सहे ॥
गुनऔगुन अपराध छिमाकरि औगुन कछु न विचारिये॥
पतित पावन राख लाज, अब न पतित विसारिये ॥
वंदीछोर अब वांह दीजे, अब की बन्द छुडाइये ॥
नैन भरि भरि रहूँ निरखत, निमिख नेह न तोरिये ॥

दासधर्मनि करत विन्ती महापुरुष गुरु मानिये ॥
दया कीजे दरस दीजे अपनो कर जानिये ॥

स्तोत्र ( विदेहं स्वरूपं )

नमोशब्दरूपी सो है जक्तकरता । दयापालस्वामी सर्बकष्ट हरता ॥ बिशालं कृपालं धनी अन्तर्यामी । बिदेहं स्वरूपं कवीरं ननामी ॥ अखंडं अकर्म अनिच्छा अदेही । जपैशेषजाको लहैनाहिं तेही ॥ लगी शंभुतारी गहो अर्ध नामी । विदेहं सरूपं कवीरंनमामी ॥ तकोजीवशरनासो भवसिंधुतरना । अवै खान टरना गहो बेग चरना ॥ अभय रूपजाको महापरमधामी । बिदेहं स्वरूपं कवीरंनमामी जहां जिव पुकारे तहांको सिधारे । भये दीन जेते सो तेते उबारे ॥ लखै कौन जाको अनामीसनामी । विदेहंसरूपं कवीरंनमामी ॥ परे भिधभारे सो साहब पुकारे । करी आय रक्षा सु ताको उबारे ॥ अभयमुक्तिदाता मिलेआय स्वामी । विदेहंसरूपंकवीरं नमामी ॥ तुहीसृष्टिकरता तुही आप हरता । तुही सोखसिंधू तुही फेर भरता ॥ तुही सर्व कामी तुही है अकामी । विदेहं सरूपं कवीरं नमामी ॥ तुही बीनबीनानवीना बजावे । तुही आप रीझै तुही आप गावे । भये दीन डोलै मोहे ऐस कामी । विदेहं सरूपं कवीरं नमामी ॥ तुही रामरावन तुही कंसकृष्णा । तुही ब्रह्मरुद्रा तुही देव विष्णा । तुही शेष ब्रह्मा तुही भूमि थामी । विदेहं सरूपं कवीरं नमामी ॥ तुही सर्वजीवनके रक्षकारी । तुही

चारखानी सो बानी सुधारी ॥ तुही आप जीवन् दे सत्य नामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ तुही आप खेलै खेलावै अकेला । तुही आप स्वामी तुही आप चेला ॥ तुही खेत भागे लडे धार सामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ उभय भेषधारी धरे भेष भारी । तुही भोग भोगी तुही ब्रह्म चारी ॥ कहे को कहांलों अपारं अनामी ॥ विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ दई काल पीरा जबै जिव सताये । लिये नाम लाहा जोलाहा हो आये ॥ लखोरे लखोरे कृपासिंधु स्वामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ अबैखान जेते किया हानि तेते । गहो सत्यपंथै उहै संत हेते ॥ बसो देश जाको जहां है अरामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ जपो नाम नीको सदा ये कबीरं । मिले लोक बासा हरे काल पीरं ॥ अभीरं अपीरं सो है तासु नामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ हरे मत्त मंदा करे सो अनंदा ॥ उबारो उबारो महाकाल फंदा ॥ अभय बास जाको सो है अंतर्यामी । बिदेहं सरूपं कबीरंनमामी ॥ कबीर अष्टक जो पढै औ पढावे । महाप्रेमबानी सुनै औ सुनावे ॥ कहै दीनबंदा सो फंदा न आनी ।
बिदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥

स्तोत्र ( जय जय कबीर ) कवित्त ।

जय जय कबीर धीर, हरन सकल काल पीर,

निर्गुण अविनाशी, ब्रह्म शब्दरूप सांई ॥
चर अचर भूत व्याल, व्योम मृत्यु औ पताल,
सुर नर मुनि यक्ष गंधर्व, सकल में समाई ॥
अमरलोक के निवास, पुहुप दीप को सुवास,
शब्द कोट अति हुलास, विविधविध बनाई ॥
जहां हंसन को निवास, षोडश रविको प्रकास,
अमृतफल चुगे सुपास, सर्व क्षुधा जाई ॥
जगमगात हंस अंग, शब्द को भयो प्रसंग,
अकह वृक्ष सांई संग, सुराजन समुदाई ॥
बंदीछोर प्रभु दयाल, भंजन भवसिंधु जाल,
सतगुरु साहब कृपाल, सुमिरत अघ जाई ॥
जहां सद्गुरुको निवास, कोटिन शशिको प्रकास,
छाड लोक हंस पास, भौजल में आई ॥
कठिन काल को संहार, लीन्हो हंसन उबार,
कीन्हो भवसिंधु पार, सकल भ्रम मिटाई ॥
माया मद मोह हरन, काम क्रोध गर्भ दलन,
चिन्तामणि हंस रमन, संतन सुखदाई ॥
जे नर भये भक्तिहीन, सो भये यम के अधीन,
अटके भवसिंध तिन, नहीं पार पाई ॥
जो नर गुरुशरण आय, लीन्हो तिनको बचाय,
कालजाल सों छुडाय, अमर घर पठाई ॥

निरंजन निराकार, ब्रह्मा विष्णु शिव विचार,
आदिशक्ति मायाजार, नहीं पार पाई ॥
निगम वेद कर पुकार, तेहू नहिं पाये पार,
गुरु कबीर शरन अपार, सुमिरत अघ जाई ॥

अथ नाभाजीकृत छप्पय ॥

अनन्त कोट निज भक्त हैं, तामे एक करोर बिचारी। ताहूं में ते चुनलिये, लाखलख नेजा धारी ॥ तामें समरथ एक सहस, सहस में सौ अधिकारी ॥ पचास भक्त प्रसिद्ध, पचीस परम उजागर। द्वादश भक्त प्रधान, षट रस गुन के आगर ॥ चतुर नाम गोविन्द वपु, उभय भक्त तारन तरन। तामें मुख्य कबीर हैं, ता पद रज नाभा शरन ॥१॥ गिरा गंग अनुहार, चाल सनकादिक जेमे। ज्ञान मुनि शुकदेव, ध्यान शिव शंकर तैमे ॥ जनी ज्यों गोरख सती, हरिचन्द बखानो। प्रतिज्ञा प्रल्हाद, सांख्यमें कपिले जानो ॥ हेम जेम शीतल सदा, परकाशी दिवाकर मानो। कबीर सदा गंभीर हैं, निज अविनाशी जानो ॥ कर कलजुग ऊपर कट करी सो संत फौज नींकाचढी।
नाम महानिज मंत्र नामहि सेवा पूजा। जपतप

१ यद्यपि आजकलके छपे हुवे जितने नाभाजीकृत भक्तमाल हैं उनमें "कबीर कानि राखी नहीं वरण आश्रम षट दर्शनां" के सिवाय इस प्रकार वाणी नहीं मिलती है तथापि कबीरपंथियोंके यहां इसी रूपमें बहुत दिनोंसे प्रचलित है, और प्रायः कबीरपंथी इसे नित्य पाठमें गाया करते हैं। इस-लिये यहां दिया गया है 'श्रीयुगलानन्द बिहारी'

तीरथ नाम नाम विनु और न दूजा ॥ नाम प्रीति नाम बैर नाम कहि नामी बोलै ॥ नाम अजामिल साख नाम बन्धनते खोलै ॥ नाम अधिक रघुनाथ ते, रामनिकट हनुमत कह्यो । कवीर कृपाते परमतत्व पदुमनाभ, परिचय लह्यो ॥ ३ ॥ नौ करोर प्रह्लाद अष्टध्रुव लछमन हनुमाना । मोरध्वज हरिचन्द, सातले संतस्याना ॥ रुक्मांगद अम्बरीष पंच, निज पहुंचे दासा । दोय अर्जुन गंगदेव, दोय वृजमंडल वासा ॥ तेतीस कोट तिहुं जुगमें, हरि सेवत निरभय भयो । कलियुग नाम कवीर हैं, अनन्त कोट जिवले निस्तर्‍यो ॥ ४ ॥

छप्पय ( भक्तमालका )

कबीर कानि राखी नहीं, वरन आश्रम षट दर्शनी ॥ भक्ति विमुख जो धर्म सब, अधर्म करि गायो । जोग जग्य व्रतदान, भजन विनु तुच्छ दिखायो ॥ हिंदू तुरुक प्रमान, रमैनी शब्दे साखी । पक्षपात नहिं करी, सबनके हितकी भाखी ॥ आरुढ दशा होय जगतमें, मुख देखी नाहि न भनी । कवीर कानराखी नहीं, वरन आश्रम षट दर्शनी५॥

राखी नहीं जगतकी, भाखी सत्य कवीर ।
देदे शब्द निराटका, तोरे भ्रम जंजीर ॥
बानी अरबो खरबहै, ग्रन्थां कोटि हजार ।
करता पुरुष कवीर है, नाभा किया विचार ॥ ६ ॥

इति छप्पय

नोट—३२ पेजमें, नामाजीकृत छप्पयमें 'अधिकारी' के आगे एक चरण अन्य पात है।

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

( सूचना-यहांतक तो नाभाजीके नामसे है जिसमेंसे केवल एक छप्पय " कबीर कानि राखी नहीं " वाला शुद्धभी है और भक्तमालमें पायाभी जाता है। शेष छन्दो-भंग आदि अशुद्धियोंसे ऐसा पूर्ण है कि, इसे इस रूपमें नाभाजीकी कविता कहना महा अन्याय होगा। यह तो यह इन्ही छप्पयोंके आगे एक दोहा है-

जनक विदेही नानका, ऊधो स्याम शरीर।
वाल्मीक तुलसी भये, शुकदेव भये कबीर ॥

विचार-पाठक ! इन छप्पयोंसे देखिये जिनमें कबीर साहबको किन किनकी ऊपमा दी गयी है। अस्तु उन्हे रहने दीजिये वे तो उपमा मात्र हैं, अंतिम साखी को देखिये-इसमें कबीर साहबको शुकदेवका अवतार बतलया गया है, अब विचारिये कबीर साहबका यह वचन-"अमर लोकसे हम चलि आये, आये जगत मझाँराहो " कहां--यह बात। तिसपरभी ऐसीही बातोंसे भरी पुस्तकको लोगोंने " सद्गुरु कबीर साहब कृत " छापकर पब्लिकको धोकामें डाला है और कबीर साहबके नामपर धब्बा लगाया है। इस विषयमें विशेष किसीको जानना हो तो वह, कबीर चन्द्रोदयमें छपे " निष्कलंकमें कलंक " नामक लेखको पढकर खातरी कर सक्ते हैं ! यहां विशेष लिखनेका अवकाश नहीं

हैं। और मैंने इसमें इन वाणियोंको कबीरपंथियोंको सचेत करनेके लिये रक्खा है॥ ]

॥ स्तोत्र अष्टक ॥

( मंगल रूप अनूपम् पूरण )

मंगल रूप अनूपम पूरण, नाम कबीर सो आप उदारा। मो पर दृष्टिदया करि हेरहु, हौं अति बालक दास तुम्हारा॥ काम अपार महा बल भारत, देखतही मम चित्त डरावे। कीजे कृपा उर अन्तर्यामिसु, संकटसे बहु जीव दुखावे॥ १ ॥ लोभ महा मद क्रोध उपावत, होत अधीर बहू चितमेरो। मोह गया ममता रजनीवत,बार-म्बार रहे नित घेरो॥ एक उपाय यही बचवे अब, होहु दयाल दया करि हेरो। कहा कहौं कछु आप छिपे नहिं, हौ प्रभुनाथ अनाथन केरो॥ २॥ मो कहँ तात तुही पितु मातु सु, और उपाय नहीं कछु मोहीं। जो सुन मातु पिता ढिगआवत, तो वहि मातुजु दृष्टिन जोई। तांपुनि लोटत पोटत अंग में, तब लेत उठाय दया करि ओही। हे गुरु देव कबीरकृपाल त्यों, है इक आश शरनागत तोही ॥३॥ दासको संकट देखि दयानिधि, हो करुणा करि आतुर धायो। इन्दुमती जब टेर कियो प्रभु, जाय तहां वहि पीर मिटायो। बांधत सेत सहाय कियो प्रभु, रामहु केर उपाय बनायो। कौन सु संकट मोहि गरीब को, जो तुमसे नहिं जात छुडायो॥ ४ ॥ जाय पुरी

पुरुषोत्तम के प्रभु, देकर दण्ड समुद्र हटायो। विप्रनको अभिमान महाप्रभु, तोडनको बहुरूप दिखायो। अभय दीन पड्यो चरणों जब, चारिउ जातसो एक मिलायो। दास जहां जहां कोउ टेरत, ताकहँ होहु तुम वेगि सहायो॥५॥ मो कह काहि विसारत समरथ, दीन दयाल कबीर उदारा। आनन्द आप अजीत गुसाईं सु, मोहमया सबते प्रभु पारा॥ साक्षि सरूप अनूपम शोभित, पारखरूप अकार तुम्हारा। मैं अति दीन अधीन दुखी बहु, मेटहु मोर अघोर अंधारा॥ ६ ॥ यह वर मांगहुँ देहु दया करि, अन्तर्यामीसु ज्ञान परकासा। बोध सरूप सदा निरनय गुरु, ममर्मे तुम होहु उजासा॥ वेद कुरान पुरान जु गावहिं, पार न पावहिं होहिं उदासा। जापर मौज करौ तुम साहब, सो पुनि हंस मिले तुम पासा॥ ७ ॥ ये गुरु अष्टक पाठ करे नर, आप सुने अरु ध्यान धरेंगे। होय शरधा अति प्रेम उपावत, मारग चाल सुचाल चलेंगे॥ ते नर पावहिं मुक्ति पदारथ, पाखंड रूप विकार तजेंगे। होंहिं सुखी लहि आनन्दको पद, सो भवसागर पार तरेंगे८

कवित्त-

अजर अखंण्ड रूप सरम परकाशी देखो, सूरमे उजासी देखो अतिहीं सुहायो है। ब्रह्म जगत भरम मेंट, झाईं सन्धि काल नाशे, संशय सब चूर करि धूरमे उड़ायो है॥ वेदहू प्रमाण और वाणीहूके मत जेते, औरहू सिद्धान्त

सो तो सर्वहुँ दिखायो है।सर्वहुको जाने सो तो सर्वहुसे न्यारे रहे, सोई गुरु"रूप निज" पारख लखायो है ॥९॥

साखी—

वारों तनमन धन सबै, पद परखावनहार ।
जुग अनन्त जो पचिमरै, विन गुरु नहिं निस्तार ॥ १॥
बन्दनीय गुरु परखको, बारबार कर जोरि ।
दया करन संशय हरन, मंतरूप प्रभु तोरि ॥ २ ॥
बन्दीछोर दयाल प्रभु, विघ्न विनाशक नाम ।
अशरण शरण बन्दौं चरण, सब विधि मंगलधाम ॥ ३ ॥
साहब दीनदयाल गुरु, तुम पर और न कोय ।
शरण आय जमसो बचे, आवा गमन न होय ॥ ४ ॥
विनय करौं कर जोरिके; सुनु गुरु कृपानिधान ।
सन्तनका सुख दीजिये, दया गरीबीदान ॥ ५ ॥
दया गरीबी बन्दगी, जोगुण होय शरीर ।
अंग व्याधि व्यापे नहीं, सतगुरु मिलहिं कवीर ॥ ६ ॥
कविर मिले धर्मदासको, लिखि परवाना दीन ।
आदि अन्तकी वार्ता, शब्दहिं में कहि लीन्ह ॥ ७ ॥
शब्दे मारे गिरपडे, शब्दे छाडे राज ।
जिन जिन शब्द विवेकिया, तिनका सरिया काज ॥८॥
शब्द विना सुरति आंधरी, कहो कहो कहांको जाय ।
द्वार न पावे शब्दका, फिरि फिरि भटका खाय ॥ ९ ॥

छन्द--

धर्मदास विनय कारि, विहंसि गुरु पद कंज गहे ।
हो प्रभु होहु दयाल, दास चित अतिहिं दहे ॥
आदिनाम सरूप शोभा, प्रगट भाष सुनाइये ।
काल दारुण अतिभयंकर, कीट भृंग बनाइये ॥ १ ॥
आदि नाम निअच्छर, अखिलपति कारनू ।
सो प्रगटे गुरु रूप, सो हंस उबारनू ॥
सतगुरु चरण सरोज, जे जन मन ध्यावहीं ।
जरा मरण दुख नाशि, अचल घर पावहीं ॥ २ ॥

दया गुरुकी ।

## अथ संझापाठ ।

गुरुस्तुति. ( बुरहान पुरी )

दोहा—नमो नमो गुरु देवजु, साधु स्वरूपी देव ।
आदि अंत गुण कालके, जाननहारे भेव ॥ १ ॥
सोरठा—मेटेउ कालको जाल, ताते गुरु तुव नाम यह ।
बन्दीछोर दयाल, अशरण शरण उदार अति ॥२॥

गुरुशतक सार नाम ॥ चौपाई ।

दीनबंधु करुणामयसागर । हंस उधारण तारण आगर ॥
दीनानाथ शरण सुख दाई।अभय तासु पद गुरु समराई ॥
बन्दीछोर बिरद अति तासू । हंसरूप परगट जगजासू॥
अधमउधारणतारणस्वामी।परवरदिगारमालिक अनुगामी
काल जालके मेटनहारे । बिरद लाज राखन पति प्यारे॥

धीरज दया तत्व संयुक्ता । राम भूमिका बासक युक्ता ॥
चिंता रहित अचिंत गोसांई । परमरूप परकाशक सांई ॥
अखिल ब्रह्मांडके जाननहारे । कर्ता नाम प्रगट विस्तारे ॥
निष्कामी माया परचंडा । ताको नासक पूरण ब्रह्मंडा ॥
मंगल रूप गोसांई आपू । जगत विदित पूरण परितापू ॥
साहेब निर्भय पद दातारा । कर्ता पुरुष सबनके पारा ॥
महा मोह दलनाशक स्वामी । हंसन नाह अपार अगामी ॥
आनंद सिंधु अहंतातीता । रामरूपमें परम पुनीता ॥
सत्य यथारथ अतिप्रिय साधू । मन मायाको मेटेउ व्याधू ॥
पूजनीयअनुमानविनासिक।सत्यसुकृतप्रकाशप्रकाशिक ॥
नाम मुनिंद्र सबन सुखदाई । बारम्बार कहों गोहराई ॥
सत्यसिंधुप्रभुदीनदयाला।नाशक अनुमयसहज कृपाला ॥
आपु जीवनिःकर्मनिधाना।शब्दीअजरअकाल समजाना ॥
साधुरूप पूरण परमाना । गरीब निवाज गहहु गुरुज्ञाना ॥
झाईं शब्द परखावनहारे । तारण तरण बिगत सम्भारे ॥
मनअनुमान गुमानविनाशक।मोदप्रत्यक्ष दाननिजदासक
वेदकुरान बुझाय यथारथ।मन कम वचन साधुमें स्वारथ ॥
इतिसतनामगुरूगनिआई । सबवृत्तांतगुरुमुखजोबुझाई ॥
साधुगुरु कबीर गोसांई । बन्दीछोर नाम जपु गाई ॥ ३ ॥

दोहा--

गुरुके अमृत बचन सुनि, शिष्य श्रवण मन देइ ॥
झांईसंधि औ काल गुण, तुरित मिटे नहिं लेइ ॥ ४ ॥

छन्द--

तुम होहु जाहि दयाल सकलोजाल ताकर नासि हो ॥
तुम बिना न मिटि है काल सुकृतपालपरखप्रकाशि हो॥
का करों मैं अस्तुतिआजसतगुरु कियो बहुतउपकार हो॥
तुम बन्दीछोर कबीर साहेब मेटिया भव भार हो ॥
सबकरोंनिछावरनोपरम गुरु तन मन धन सबखेह हो ॥
मम सुरति राखो चरणमें यह नाशमान है देह हो ॥
परख पदको पाय साहेब मेटि गयो सब भास हो ॥
ब्रह्मजगत अनेक बानी रही न काहूकी आस हो ॥ ५ ॥

सोरठा--

शरण ! शरण ! गुरुराय, बहुत सुखी मोको कियो ॥
पूरन बंदत पाय, सब अपराध छिमा करो ॥ ६ ॥

दोहा--

मैं नालायक प्रश्न कियो, तुम समुझायउ मोहि ॥
मोसे बोलत ना बन्यो, छिमा करो प्रभु सोहि ॥ ७ ॥

छन्द--समुझि देखु चित त्यागि, नास्तिसुख जो अनित्य पाग, गुरु चरणन करु संगति, संत साधुकी ॥ हो मिस्कीन, राखु निश्चय याकीन, तूतो जमापद बाकी खर्च काहे अबादकी ॥ मनमनसा दोऊ छोंडि निकारिडारो, मारो हंकारतृष्णाकुबुद्धि कुबादकी ॥ रूप हंस धार, ठहरि कीजिये विचार, यार बफादार दीनानाथ, दीनबंधु गुरु साधुकी ॥ ८ ॥

॥ शब्द अष्टपदी ॥

प्रभुजी तुम बिन कौन छुडावे ॥
महा कठिन यमजाल फांस है तासों कौन बचावे ॥ १ ॥
नाना फाँस फँसाय जीवको, अपनो रूप छिपावे ॥
पंच कोश है परगट ग्रासे, तेहिको कौन लखावे ॥ २ ॥
आपुहि एक अनेक कहावे, त्रिविधि रूप बनावे ॥
सन्निपात होय दुष्ट नष्ट सो, परलय अंत दिखावे ॥ ३ ॥
विषय विकार जगत अरुझावे, जहाँ तहाँ भटकावे ॥
योग ध्यान विगुर्चन भारी, ताहि सुरति अटकावे ॥ ४ ॥
आस नाम नौका बैठावे, भवकी धार बहावे ॥
तत्त्वमसी कहि ताहि डुबावे, अंत कोइ नहिं पावे ॥५॥
चारि मुक्ति जोइन चौरासी, तेहि मिलि हेतु बढावे ॥
नेम धर्म पूजा औ संजम, बहुविधि लागि लगावे ॥ ६ ॥
भेष अलेख करे को पावे, जीवहिं चैन न आवे ॥
चार वेद षट अष्टदशों लों, शून्यहि शून्यसमावे ॥ ७ ॥
काल चक्र बसि उत्पत्ति परलय, जीव दुसह दुख पावे ॥
साहेब दया कीन्ह परखाये, रामरहस गुण गावे ॥८॥९॥

दोहा ।

सुख साहेब सुखरूप जो, हरन कालके पीर ॥
जो जन आवे शरणमें, परखि लगायउ तीर ॥ १० ॥
करुणार्णव कृपाल गुरु, सुखनिधान दुखभूर ॥
बन्दीछोर अशरण शरण, परख प्रकाश निजमूर ॥११॥

जीवनके दुख मेटिया, परखाये सब जाल ॥
ताते गुरु तुव नाम यह, बन्दीछोर दयाल ॥ १२ ॥
अशरण शरण नाम तुव, बरणतहं सब संत ॥
ताते गुरु न विसारिये, परखायो जीव भ्रांत ॥ १३ ॥
जो गुरु बसे बनारसी, शिष्य समुन्दर तीर ॥
बिसराये बिसरे नहीं, जो गुण होय शरीर ॥ १४ ॥
गुरु उपमा क्या दीजिये, पटतर नाहीं कोय ॥
पलक पलक करूँ बंदगी, छिन छिन निरखों सोय ॥१५॥
जो तू चाहे मुझको, छोड सकलकी आस ॥
मुझही ऐसा है रहो, सब सुख तेरे पास ॥ १६ ॥
साहेब दीनदयाल गुरु, सो पर और न कोय ॥
शरण आय यमसे बचे, आवा-गवन न होय ॥ १७ ॥
दयाकरन अवगुण हरण, तारण तरण उदार ॥
अशरण शरण बन्दों चरण, तुम विन नहिं निस्तार॥ १८॥
देखि अधमता आपनी, परवश यमके हाथ ॥
त्रसित गहेऊँ साहेब शरण, भवभय हारि सनाथ ॥१९॥
प्रभु सब लायक पारखी, हौं भर्मिक अज्ञान ॥
लोह कनक पारस करे, साहेब शरण समान ॥ २०॥
बन्दों चरण सब दुख हरण, प्रभु प्रसाद दुख भूरि ॥
दयाकरी दुख सब हरी, संसृति शूल भौ दूरि ॥ २१ ॥
बहे बहाये जात थे, भव सागरके माहिं ॥
दयाकरी परखाय सब, शरणाये गहिं बाहिं ॥ २२ ॥

संतत अभय गुरुकी शरण, सदा परख परकास ॥
शमन सबै भव जाल तम, रामरहस सुखबास ॥ २३ ॥
सर्वोपरि गुरुके चरण, जो हारी भव खेद ॥
परम उदार सागर दया, थाह न पावे वेद ॥ २४ ॥
चारि वेद जग विदित हैं, ब्रह्मा कीन्ह प्रकास ॥
चारि रूपसो जानिये, चारि अवस्था भास ॥ २५ ॥
भास मिटावे जीवको, काटे यमके फंद ॥
साहेब दीनदयाल गुरु, संशय खंडे द्वंद ॥ २६ ॥

छन्द.

साहेब स्वतः प्रकाश पारख, त्रास नहीं यम दंडके ॥
बास शरण बिलास तजि, सब आस पिंड ब्रह्मांडके ॥
गांस फांस मिटाय दास, हुलास ज्ञान अखंडके ॥
नहिं नाश ते इतिहास सुनि, सो आदि अंत प्रचंडके ॥
यम हंत एक अनंत, तेहिके फांस बहु वर्णंतके ॥
बहु जंत गाई हरंत, कूप पतंत बहुते गनंतके ॥
सब दास होई रहंत, दुष्ट परंत चीन्ह न कंतके ॥
आदि अंत जे सुनहि संत, नहिं धावहि सो बेअंतके ॥
जीव हाल कीन्ह बेहाल, काल कराल सुनि अवजालके॥
उरसाल अनेकन्हि भाल, सो बाचाल कवितन गालके ॥
तेहि टाल डाल प्रचंड होहु, निहाल नाल कृपालके ॥
लहु परख माला माल भेटि, भव जाल शरण दयालके॥
यह बुदबुदा जो शरीर, नीर न थीर झुठाहीरके ॥

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

परपंच बहु ततबीर, तेहिके बीर उबरे हीरके ॥
तजु ललनि कीर फकीर,जेहि डर नहिं वजीर अमीरके॥
गुरु पीर हरे भवभीर, अभय गंभीर शरण कबीरके ॥
नारदादि शुकादि ऊै, ब्रह्मादि सब जेहि गावहीं ॥
गाइ धाइ हेराइ, बारम्बार मन पछतावहीं ॥
जस जप जतन छूटन करहीं, भव बूड़े थाह न पावहीं ॥
सोई धार कठिन अंधार, ते गहि पार पारख लावहीं २७

दोहा--

संतत सुख है परखमें, साधन जतन विनास ।
भूलि भटकि मति जाहु जिय, त्रिविध कर्मके फांस ॥

अर्जनामा अष्टक-- ।

हौं सेवक अज्ञान मोपर दया दृष्टि निहारिये ॥
बाल जानि कृपालु मोको सुरतिमे नहिं टारिये ॥
हौं निपट बुद्धि मलीन जगत आधीन में ताते भयो ॥
जो होय तुव पद लीन सोई विपिन मन काहे न रह्यो १
यह जगत जाल कराल मोह विशाल माहि अझो लग्यो॥
यह कनक कामिनि नाल देखि बैराग सब चित्तसे भग्यो॥
नहिं काम हैं धन धाम सब बेकाम सपनासो दिखे ॥
पर चित छाडत नाहिं आसा काह भये बहु पढलिखे॥२॥
अब करत दास पुकार बारम्बार गुरु सुन लीजिये ॥
तुम सकल राग छुडाय दृढ बैराग मोको दीजिये ॥
तुव नाम पतित उधार मोते न पार कोइ दीन है ॥

अब बन्यो है जुग यार। तुव आधार ताते कीन्ह है ॥३॥
बाने की लाज तुम्हारि परख विहारि सुख साहेब धनी ॥
मैं पतित हौं लाचार दास तुम्हार गुरु साहेब गनी ॥
अब दास पूरन कीन्ह बिनती सुनहु दीन उधारणा ॥
मैं परयो हौं जग जंजाल माहीं मोहिं साहेब तारणा ॥४॥

अष्टक--

सुख साहेब सुखरूप सुखघन दुसह दुख निवारणं ॥
पारखके प्रकाश कर्ता दीन जीव तारणं ॥ १ ॥
यह ब्रह्म जगको शोक सकलो धोक धर्म बिडारणं ॥
महा मोह कराल नाशक सकल भव भय हारणं ॥ २ ॥
यह वेद शास्त्र पुराण एक अनेक जालहि खंडनं ॥
झांई संधि औ काल भागिक दया धीरज मंडनं ॥ ३ ॥
एक जीवको अनुमान सब तोफान जग तामें फँसो ॥
सोई गाँस फाँस छुडाय निज पद पाय पारख दृढ ठसो ॥४॥
नहिं कल्पना अनुमान सो परमाण अबको कहि सके ॥
न प्रत्यक्ष पारख छोडिके यह वेद नाहक मरि बके ॥५॥
सुधि लेहु आप कृपाल तब सब जाल जीवन छूटिहै ॥
निज दास होय हुलास तबहीं भास सकलो टूटिहै ॥६॥
मैं चरण सेवक दीन तुम परवीण दाया कीन्ह हो ॥
मैं हीन छीन मलीन प्रभुजी बाँह गहिकी लीन्ह हो ॥७॥
बाँह गहेकी लाज पूरन शरन तुमको आज है ॥
नहिं औरसे कछु काज गुरुपद सकल सुखको साज है ८

अष्टक—भो दयाल जगत पाल कालजाल खंडनं ॥
पाप ताप दहनहार दिव्य ज्ञान मंडनं ॥
भवअपार कर्णधार पाकनाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ १ ॥
सत्त प्रकाश चिदाभास नाम रूप अक्षकं ॥
जगत ब्रह्म आत्म सर्व साक्षी आदि लक्षकं ॥
दया धीर युक्तयोग विशुद्ध नाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ २ ॥
हंसभूप परमरूप भुक्ति मुक्ति दायकं ॥
दक्ष मक्ष रक्ष प्रभु सर्व संत नायकं ॥
परीक्ष अक्ष निर्मलं विशुद्ध नाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ ३ ॥
विरह कलोल ब्रह्म गोल तत्वमसि छेदिकं ॥
वेद विद्यातीत त्वं चतुर स्थान भेदिकं ॥
स्वयंअक्षि साधु पक्षि शुद्धनाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ ४ ॥
परख भान संत ध्यान षड पुष्टी विनाशिकं ॥
आदि अंत मध्य नाना नेति भास भासिकं ॥
कृपासिंधु शील इन्दु विशुद्ध नाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ ५ ॥
विश्व चित्र तासु मित्र तत्पवित्र शासनं ॥
शुचि पवित्र त्वं विचित्र सार शब्द भाषनं ॥

करुणामय कबीर औ विशुद्धनाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ ६ ॥

जोगजीत औ अजीत न्याय नीति कारणं ॥
ऋद्धि सिद्धि निद्धि दाता बिरद हस्त धारणं ॥
सुखाब्धि दीनपालकं विशुद्धनाम अंकजं ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पादपंकजं ॥ ७ ॥

बुद्धि अंध ज्ञान मंद हीन छंद स्वष्टकं ॥
पूरन दास भाषिते सु पाकनाम अष्टकं ॥
त्वं प्रसादसुगमसर्व विशुद्ध नाम अंकजम् ॥
चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं ॥ ८ ॥

अष्टक--

मंगलरूप अनुपमपूरन नाम कबीर सो आप उदारा ॥
मोपर दृष्टि दयाकरि हरेहू हौं अति बालक दास तुम्हारा॥
काम अपार महाबल भारथ देखतके मम चित्त डेरावे॥
कीजे कृपा उरअंतरजामि सुसंकट से बहुजीव दुखावे १॥
लोभ महामद क्रोध उपावत होत अधीर बहूचित मेरो॥
मोह महा ममता रजनीवत बारम्बार रहे नित घेरो ॥
एक उपाय अहै बचवे अब होहु दयाल दयाकरि हेरो॥
काहकहूँ कछु आप छिप्यो कहँ होप्रभु नाथ अनाथनकेरो॥
मोकहतात तुही पितु मातसु और उपाय नहीं कछु मोही
जो सुत मातुपिता ढिग आवत तो वह मातुसो दृष्टिन जोई॥

तो पुनिलोटततपोटत अंगनलेत उठाय दयाकरि गोदी ॥
त्यों गुरुदेवकबीर कृपालसु हौं एक आश शरणगति तोही ३
दासको संकट देखि दयानिधि ह्वै करुणाकर आतुर धायो॥
इन्द्रमती जब टेर कियो प्रभु जाय तहां वह पीर मिटायो॥
बांधत सेतु सहाय कियो प्रभु रामहु केर उपाय बनायो ॥
कौनसोसंकट मोहि गरीबको जो तुमसे नहिंजात छुड़ायो४
जाय पुरी पुरुषोत्तम के प्रभु देकर दंड समुद्र हटायो
विप्रनके अभिमान महाप्रभु तोरनको बहुरूप दिखायो ॥
वे भये दीन परे चरणों तब चारिहुंजाति सो एक मिलायो॥
दास जहांजहां जोकहु टेरत ताकर होहु तुम वेगि सहायो५
मोकहं काहे बिसारत साम्रथ दीनदयाल कबीर उदारा ॥
आनँदरूप अजीन गोसाईं सु मोहमया मनमे प्रभु पारा ॥
साक्षिस्वरूप अनूपम शोभित पारखरूप अकार तुम्हारा॥
हौंअतिदीन अधीनदुखी बहु मेटहु मोर अघार अँधारा६॥
यह बर मांगहु देहु दयाकरि अंतरजामि सुज्ञान प्रकासा ॥
बोध स्वरूप सदा निर्णय गुरु सो मनमें तुम होहु उजासा ॥
वेद पुराण कुराण जो गावहिं पार न पावहिं होंहि उदासा ॥
जापर मौज करो तुम साहेब सो पुनिहंस मिले तुम पासा ७॥
ये गुरु अष्टक पाठ करे नर आप सुने अरु ध्यान धरेंगे ॥
ह्वै सरधा अति प्रेमहुं पावत मारग चाल सुचाल चलेंगे॥
ते नर पावहिं मुक्ति पदारथ पाखँडरूप विकार तजेंगे ॥
होव सुखीलहि आनँदको पद सोभव सागरपार लगेंगे ८।३२
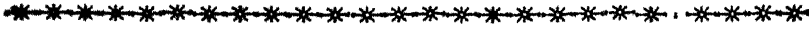
घनाक्षरी--

अजर अखंडरूपि, परम प्रकाशी देखो, सूर्यसे उजासी लेखो अतिहि सोहायो है ॥ ब्रह्म जग भर्म मिटि, झांई संधि काल नाशी, संशय सब चूर करी, धूरसी उड़ायो है ॥ वेदहु प्रमाण और बानीनके मत जेते, औगहु सिद्धांत सोतो, सर्व ले देखायो है ॥ सबहु जाने सोतो, सर्वहुसे न्यारो रहे सोई गुरुरूप निज, पारख लखायो है ॥ २३॥

दोहा—बारों तन मन धन सबै, पद परखावनहार ॥
युग अनंत जो पचि मरे, बिन गुरु नहिं निस्तार ॥२४॥

श्लोक—ध्यातं सतगुरुश्वेतरूपममलं श्वेतांबरं शोभितं ॥
कर्णैः कुण्डल श्वेतशुभ्रमुकुटं हीरामणिर्मंडितं ॥
नाना माल मुक्तादि शोभित गला पद्मासने संस्थितं ॥
दयाब्धि धीर सुप्रसन्न वदनं सतगुरु तन्नमामि ॥ २५ ॥
द्वैपदं द्वै भुजं प्रसन्न वदनं द्वै नेत्रं दयालं ॥
सेली कंठमाल ऊर्ध्व तिलकं श्वेतांबरी मेखला ॥
चक्रांकित शिर टोप रत्न खचितं द्वै पंच तारा धरे ॥
वंदे सतगुरु योगदण्ड सहितं कबीरं करुणामयम् ॥२६॥

दोहा—बंदनीये गुरु परखको, बारबार कर जोर ।
दयाकरण संशय हरण, संतरूप प्रभु तोर ॥ २७ ॥
बंदीछोर कृपालु प्रभु, विघ्न विनाशक नाम ।
बंदे सन्मुखपारखी, शीस भेंट धरु हाथ ॥ २८ ॥

अशरण शरण बंदों चरण, सब विधि मंगल धाम ।
बचन उचारो बंदगी, सत्य प्रेमके साथ ॥ ३९ ॥

( सब सेवक तथा साधु मिलके महंतोंकी बंदगी करनेके पश्चात् सब मिलके महंतोंकी आरती करना )

आरती शब्द ॥ आरती हो गुरु आरती हो ॥
आरती गरीब निवाज, साहेब आरती हो ॥ टेक ॥
ज्ञान अधार विवेककी बाती, सुरती ज्योति जहँ जाग॥१॥
आरती करूँ सतगुरु साहेबकी, जहां सब संत समाज॥२॥
अरसपरसमनबहुआनँदभयो, टूटिगयेसबयमकेजाल॥३॥
साहेब कबीर संतन कृपासे, भयो परखपरकाश ॥ ४ ॥

उपरान्त सब साधु तथा सेवक खडे होकर सतगुरुकी प्रार्थना स्तुति करना । दोहा--

दास जानि निज आपना, विनती सुनिये मोर ॥
बिनवतहौं कर जोरिके, गुरु शरणागत तोर ॥ १ ॥
कामक्रोध मद लोभमें, नित मैं रहों भुलाय ।
दीन दास प्रभु जानिके, लीजे बन्दि छुड़ाय ॥ २ ॥
मम दृष्टि महा मलिन है, खानि बानिके बीच ॥
दया करी गुरु बोधिये, मोहि अधम अति नीच ॥ ३ ॥
काल जाल बहु फेरमें, पर्यो मैं निपट गँवार ॥
शरण आपकी लाज है, साहिब लेहु उबार ॥ ४ ॥
मन बच कर्म प्रभु साधुसे, टूटे ना मम नेह ॥
बन्दीछोर यहि दीजिये, वरदान सदा अछेह ॥ ५ ॥

साहेब के दरबार में, कमी काहुकी नाहिं ॥
बन्दा मौज पावै नहीं, चूक चाकरी मांहि ॥ ६ ॥

गुरु स्तुति । छन्द ।

गुरु दुखित तुम बिनु रटहु द्वारा, प्रगट दरशन दीजिये ॥
गुरुस्वामीयातुवु विनतीमोरी बलिजाउं बिलम्ब नकीजिये॥
गुरु नैन भरी रहत हेरों, निमिष नेह न छाड़िये ॥
गुरु बांह दीजे बन्दिछोरसो, अबकी बंद छुड़ाइये ॥
विविधि विधि तन भयेउ व्याकुल, बिन देखे अब ना रहौं ॥
तपत तनमें उठत ज्वाला, कठिन दुख कैसे सहौं ॥ गुण
अवगुण अपराध छिमा करि, अब न पतित बिसारिये॥
यह विनती धर्मदास जनकी, सत्य पुरुष अब मानिये ॥७

श्लोक—न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः ॥
गुरुज्ञानात्परं नास्ति तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥ ८ ॥

इति बुरहानपुरी संध्यासुमिरन ।

---

इति श्री कबीरधर्माचार्य परमार्थी विश्व भारत पाथिक
स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी निर्मित कबीरपंथी
शब्दावली अन्तर्गत संज्ञा--सुमिरन समाप्त शुभम् ॥
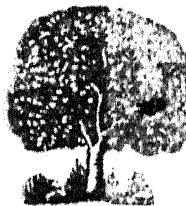
प्रजा पीडा ब्रीडा धन तिमिर क्रीडा महिमहा। हृतं मुद्रा निद्रा शम दम न क्षुद्रा गति महा॥ सतो संगं रंगं बसतव प्रसंगं भसकरा। उमंगं अंगं एक समय अनंगं बसकरा ॥ ४ ॥

नमस्कारं कारं क्रमर क्रम कारं ककक्रुते। बंबं बंदे बंदे भनत भव फन्दे बब बृते ॥ रमं रामं रम्यम् रटत रर कल्याण करनम्। परणम्यं तो पीष्ठे परं परमीष्टे त्रयं वर्णम् ॥ ५ ॥ इति शिखरणी छन्द।

अथ कबीर भानु वियोग सवैया।

सतनाम ब्रतीवर संत सती, दिन अन्त भयो भगवन्त पयाना। युगनैन महासुख दैन दुरे, धरि धीर धरो पद पंकज ध्याना॥ दृढ़ इन्द्रिन दौनते मौन गहो, थिर आसन हो अनुसासत माना। यह संधि सचेत सतो गुणते, सतधार हिये सतरूप समाना ॥ १ ॥

तुमरो जन तू चकई चकवा, गहि शोक वलंभ वियोग भयेते। सजनी रजनी दुर जीव डरै, हरिके हरिके हरिके अथयेते॥ वृषभाल कराल सुखेन फिरे, भय भूरि भई प्रभु दूर गये ते। वन वारिज सन्त यकन्त गहे, सकुचे मिलि हेरि जो घेरि लियेते ॥ २ ॥

सम सम्पति सौच करी रकरी, दम कम्पत भये जब टूट करी है। गुण ज्ञान थने बन बाग बने, फल फूल

भरे तरु तोर धरी है ॥ घन घोर निशा मनि भर्म कियो, शुभ धर्म लिये दुर्बुद्धि भरी है। जग जीवहिं आलस निन्द गही, सबही कहँ लागि मसान मगी है ॥ ३ ॥

कोइ शीलवती युवती जगमें, जिन पीठविचार पिया व्रत पाला। जिहिं धर्म अडोल अदाग सदा, गिरिनिश्चल सो न सुमेरु सो हाला ॥ निजु पीय सो पीय पतिव्रतके, जगमें सब और नपुंसक माला। जिमि पीठ दिखाइ चले जनको, इमि आइ तु दीठ दिखाव दयाला ॥ ४ ॥

पल नैन ढका जब पावत है, तब डंसन हैं यह नागिन कारी। दृग झंपन होय सचेत रहो, सुचि सन्त स्थान समाधि सम्हारी पलके पल गाफिल पावनज्यों, यह डंक तुरन्त तेही पल मारी। शुभकर्म किया सब भ्रष्ट करे, भवसागर माहिं डुबावन हारी ॥ ५ ॥

यदि कज्जल गेह न उज्ज्वलता, बिनु दाग बचे कोई नाम सनेही। जेहि आर कर्तार कृपाल दुरं, तिहि काल निहाल भये कछु तेही ॥ तम त्रासक ध्यान धरो उधरो, सुधरे सुधि बुद्धि दया दृग जेही। गुरु देव बिना निशि नाश नहीं, विश्वास करो एक युक्ति है एही ॥ ६ ॥

यह नींद सही है महा ठगनी, छनमें धन जोबन वृन्द बुहारी। गहि गोड जती नहिं छोड मती, छलि साधुकी सम्पति लूटन हारी। सजि कण्ठको वेष न देखि

परे, इमि आइहै ओढ़िके कामरि कारी । यह है न नहीं कमरी पसरी, गठरी धनकी बांधि सँवारी ॥ ७ ॥

हरि नाम चरित्र पवित्र महा, मुक्तामणि के बन देत दवारी । घन घोर घरे नहिं सूरि परे, धारि वज्र कपाट सुज्ञानकी द्वारी ॥ रिधि सिद्धि जहां लगि लाभ कहै, इन सर्व गहे ठगनी छल कारी । नहिं कूछ रहा इन छूछ कियो, यहि कान भये ऋषिराज भिखारी ॥८॥

मनते भुख भूख अहार गहै, व अहार ते नींद सो कालकी फांसी । यम दण्ड प्रचण्ड यही है यही, करसो सतखण्ड सो ज्ञान की रासी ॥ नहिं शुद्ध स्वरूप लखे हरिके, धरि अन्ध कियो धर्मरायकी दासी । यदि जाल फँसायके काल हते, सब जीव बने भवसागरवासी ॥९॥

नहिं चेत रहा दुख देत महा, हरि हेत कहा दुर्बुद्धि बड़ी है । पिय आगु खड़े नहिं चीन्हि पडे, दृग सन्मुख कन्धकी सन्ध पडी है ॥ तजि राम हरामके काम लगे, चुहडी फुहडी जब आन अडी है । सुमती हरिगै कुमती भरिगै, यम सेल हिये बिच ठेलि गडी है ॥ १० ॥

मन रौन जो भौन ते गौन कियो, तमसी तमसी तमसी तम ठोने । अति प्राण अधार अधार विना, विलपात अधीर धराधर कोने ॥ यहि बैरिन पैरिन संग लिये, पहुँची विरहा विष बेलको पोने । सुख साच विहाय अकाज भयो, नियरानि सुभाग सुभागि निघोने ॥११॥

उह डोलत संग पिछार सखे, ढिल अंग लखी गठरी गहि भाजी। हुशियार हो संत सुजान सुनो, पलही भरमें वह मारत बाजी ॥ गठि कण्ठ लिये फमरी करमें, सिद्ध साधुनके गल डारत पाजी। सत धर्म नसाय खँसाय लियो, तब नेक डुबावनको मज माजी ॥ १२ ॥

जबलों तन प्यार न प्यार पिया, तन आस तजे पिय खास सही है। नहिं मैं तब तू जब मैं नहिं तू, यह एक विवेकको टेक सही है ॥ जहँ राम न दूसर काम तहां, रवि रैन यकत्र न होत कही है। जब प्रीति गही तहिये गहिरी, कुल कानि कहां सुलतान वही है ॥ १३ ॥

जिमि चुम्बक लोहसे मोह करे, जलहीन भई जस मीन दुखारी। अलि अम्बुज प्रीति न बीति कभी, पपिहा लपिहा सुख स्वातिकी बारी। जिमि चन्द चकोर चकोर लखे, सिख दीपक रंग पतंग निहारी। यहि राह न नाहसे नेह लगी, नहिं आशिक है वह फाँसिक यारी ॥ १४ ॥

हगपूरति नींद हराम भई, धनि लेत उसासहि बारहिं बारा। तन पीत भयो कृश गात भयो, तृस बात भयो लघु भोजन धारा ॥ अधरा पट सूख तृषा हियमें, नहिं जो पिय रूप पियूषनिहारा ॥ गुन गान सदा हिय ध्यान धरे, बिरहिनके यह दश चिह्न उचारा ॥ १५ ॥

पथ देव अकाश नहीं जन है, असमान लियो निज

पाग उतारी । पसराय दियो सगरे डुगरे, गुरु खाट निहारत पांवदे डारी ॥ विखराय सबै मणि माणिकको, विरती बलि बैठि यती व्रत धारी । दिन भूषण ध्यान धरे मुनिहा, दुःख दूषन पूपन पेखन टारी ॥ १६ ॥

कहुँ चोर चकोर रु चन्द बधू, विगसात अनन्द उलूक लही है । कहुँ बादुर बीर बहादुर भय, दुख दायक जंतु अनंत मही है ॥ कहुँ जोत खद्योत उदोत भई, मनमें अपने अभिमान गही है । निसि डाट कहे मम तेज लखो, रबिते हमरो कछु घाट नहीं है ॥ १७ ॥

सखि काह करो पिय दूरि गये, हिय पूरि गये विरहानल कैसे । मन भावन जासु विदेश गये, धृक जीवन है तिनको जग तैसे ॥ प्रभु बेगि कृपाकरिके सुधि लो, तुम दीनदयाल कहावत जैसे । पतिया पहुँचाव बसीट मेरी, अरु बांचि गुनावहु पिया ढिग ऐसे ॥ १८ ॥

विनय पत्रिका ।

दनुजा मनुजा महराज महा, सुर संत सती सिरताज कहाओ । जन दीनबन्धु हो सिन्धु दया, हृदय थलको मलको श्रुति गाओ ॥ सब मूल सोई नहिं तूल (तुल्य) कोई, गुणसागर नागर कौन थहाओ । हमरी करनी सुधि ना करनी, दुःख द्वन्द विदार दिदार दिखाओ ॥ १९ ॥

सुरती दूती प्रति ॥

मम पायक शोक सहायक तु, सुरती कुरती पिय

पाहँ पधारो । करजोरिके पा गहियो प्रभु को, कहियो तेहि कोटि प्रणाम हमारो । जब कंत दुरंत संदेशे सुनो, निज प्राण निछावर ताछन कारो । इमिले अर्जी कर दूति चली, वरजी विरहा वर ध्यान को धारो ॥२०॥

पिछली रातका विरह । दोहा--

यहि निश्चय के नखत गण, अपने अपने ढंग ।
भय भ्रम हटै न दुख मिटै, होय न तिमिर विभंग ॥१॥
करुणामय करुणु निरखि, हरखि चितोनन ओर ।
सुखपावै मुख देखि हरि, होय विरह निसि भोर ॥ २ ॥
आवन आवन कहिगये, अजहुँ न आये लाल ।
धावन फिरा न पिउ फिरे, भामिनि हाल विहाल ॥ ३ ॥

सवैया -

दृग मानसरोवर नन्दननिमे, बिनि मीन फिरै कहि कारनते । जबते रतिनाथ विछोह भयो, मनके विरहानल जारनते ॥ प्रभु दीन दयाल दया करिये, विन्ती सुनि लाख हजारनते । करुणाधर धार हिये करुण, पति या पतिपाह सकारनते ॥ १ ॥ उनमाद उचाट भये मनमां, उदवेग न चाट सिंगारनते । नित लेत उसांस है आस लगी, तन छीन भयो मन मारनते ॥ गुण गान प्रलाप कलापनते, तन तापत ताहि विचारन ते । पलना विसरे ललना सुरती, मूरति हरि हीय मैंभारन ते ॥२॥
जग जान जहान उधारन हो, कलि कायर कूर

उधारन ते ॥ गनिका मनिका कह फेरत है, मोहिं सों कपटी भव तारनते ॥ प्रभु नाम जहाज तरी लदके, छनमें जगती जिव भारनते । न मिले पिय नेह कबीर बिना, विधि मीन फिरे यहि कारनते ॥ ३ ॥

सोरठा ।

निशिदिन साले घाव, नींद मोहि आवे नहीं ।
पीय मिलनकी चाव, सो नैहर भावे नहीं ॥ १ ॥

सवैया ।

उर सालत घाव दिना रतिया, धरके छतिया नहिं चैन लई है ॥ सुख भूरिभरा तृण तोरि धरा, भल भोग सबै दुख रोग गई है ॥ पिय आजइ काल कहे परसों, बरसों बरसों नहिं भेंट भई है । मन मोहन मोहन मोह दई, विन दर्द दई दिन सर्द दई है ॥ ४ ॥

जिनके चित चिन्त खचिन्त भयो, उर अन्तर ज्वाल निरन्तर जारी । तन टट्ट रहे मन भट्ट दहें, नित सोचन पोखन खोचन भारी ॥ तिय साधु मती निमती विधिको, झुखे पुखे किमि आस हमारी । यहि औसर चौसर खेलहुँगी, तनहू मनहू धन दावपै धारी ॥ ५ ॥

हरि नेरे अहो किधौं दूर कहूँ, भरि पूर हजूर हो नैनन मेरे । हिय ठाहर हौ किधौं बाहर हौ; धरती अस्मान तुही तुहि टेरे ॥ गलि गोरिनने तरुतोरिनमें जड़ साखन फूलन पातन हेरे । मोहिं समाय लखाय नहीं, कहु कौन उपाय गहौं पद तेरे ॥ ६ ॥

हमहुं किधो भिन्न किधो यक है, तू मुहिमें किधो मैं तुहि मांही। सब पूरन देखत तूहि तुही, किधु एक अहो धो अनेकन आही॥ किधो स्वर्ग वसों अपवर्ग किधो, निसिवासर वास किधो मोहिं पाही॥ पिय आपे आप जो व्याप सही, किहि कारन ते दुविधा दरसाही॥ ७॥

कहुँ गोय रहे विप खोय रहे, नित मो मन मन्दिर माहि विहारी। विनु लालन बाल विहालपरी, वह कौन घरी जो हरी पग धारी॥ सुखको नहीं लेश कलेश भयो कर, काह पिया परदेश पधारी। सपने अपने हरि भेंट भई, मुँह खोल लखे दृग लोल लबारी॥ ८॥

कबहूँ न पिया अपमान किया, किमि कै विधि बाम विछोह करी है। लकुटी करले मोहिं मारकहूँ जनु, कांटकी मारहु फूल छरी है॥ दुर दूर कह्यो दबि दूरि दुरा, जब टेर हरी तब पांय परी हैं। जिहि भांति से राखि रही त्योंहि त्यों, कछु भोग धरी तिहिं पेट भरी है॥ ९॥

कह वीर करो तन पीर परो, किमि धीर धरो नहिं प्रीतम आयो। दिन रात कराहि कराहि उठे, विरहा दव दाहि जो ताहि न पायो॥ हिय हूक परी कह चूक परी, विधना सिधना मम काम पुरायो। सुन हरि भट्ट अब ठाट टट्ट, मति धूसर दूसर वेष बनायो॥ १०॥
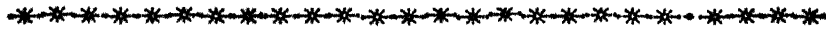
सब भूषण भू छटकाय दियो, सतसङ्ग विभूतिले अङ्गन मेली । शिर टोप दया है कोपीन ह्या, जपमाल कथा सतनामकी सेली । करमण्डल कर्म गहे करमें चलि खोज पिया परिवारहिं पेली । बनि योगिन वेष विरागिनसों, सुख दुःख सबै अपने तन झेली ॥ ११ ॥

हरिद्वार गया नहिं मेल भया, न बनारस मांहि बनारस पीना । मथुरा न अवध न द्वारदरी, दद्री बदरीवन मक्का मदीना । न प्रयाग न पुष्कर थान जिया; भल छान किया सो पिया है कहीना । सब अरसठ भर्मत भर्म भरी, कछु हाथ नरी निज नाथ न चीना ॥ १२ ॥

गिरिनारन पैठि पहारनपै, ऋषिराय अखारन जायके जोही । सुन सान परो चवगान थरो, दुखद्न करो तिहिं जूनमें ओही ॥ केहि पूछों अबै लखि छूछौ सबै, कोय पीय बतावहु बाट बटोही । सब खोज थकी पिय प्रेम छकी टरी, काहू जो नाट मिले अब मोही ॥ १३ ॥

तब पैठि गुहा हरि ध्यान गहा, दम संयम नेम तपोधन भारी ॥ जप योग अचार विचार घने, हठ योग ठने दृढ़ लावहिं तारी ॥ नभ जायके देखत ज्योति जगे, छबि छाई है मोतिनकी लर झारी ॥ तनको कसिकै मनको वसिकै, पट चक्रको बेध चढी है अटारी ॥ १४ ॥

चढ जाइ अटा गढ छाय छटा, नहिं चित्त उठा निजहित्त न हेरो । जब और न दौर रही कतहूँ, मतहू

पतहू गतहू गतगेरो ॥ परि पाप विनय सतभाय करो, शरणागत माँगत हौं प्रभु तेरो । अब आन उपाय उपाय कहा, नहि पायहिं पाय थका इहि मेरो ॥ १५ ॥

हाहरि पान शरीरमें बेधत. मीर मर्मीरहु तीरसो लागे । हे हरि ! चन्द्र समी शर मागत. मानहु आगि लुकारन दागे ॥ हे हरि धन्य सुभाव सुभागिन. सोच रही बिरही नित जागे । हे हरि सो सुखमें किमि सोवत. दुःख दोहागिनि जो पति त्यागे ॥ १६ ॥

हे हरि आजु कन्हाई नहीं ग्रह. ग्रीषम ताप सो लाग-जुन्हाये ॥ हे हरि ई निसि नागिन डंसत, पीव विना जीव कौन बनाये । हे हरि नैन तृषा जल पूरित, सिन्धु स्वरूप बिना न अवाये । हे हरि पातहुको खरका सुनि. जानि परे हमरो हरि आये ॥ १७ ॥

बिलपात बिते दिन रात सबै, ढिलगात अनेक जो आँख झपाई । कोइ स्वप्नमें द्वार पुकार कहै, सुनु बाल लला तब द्वारपै आई ॥ जबआंखि उघारनको करके, करके शुभ अङ्ग सगून लहाई । हरपे दुख दोसर के विरहा, हरिके हरिके सुनि आगम पाई ॥ १८ ॥

अब आवन आवन होय रह्यो जिहि, बार विलम्ब मेरे घर ऐहैं । सुख सम्पति दम्पति देखतके, सुर नायकहू मनमाँह सिहै हैं ॥ हरि छूत विभूत भरी लमरी, कन

धूलहु धूम न दूसर सै हैं। तिहुं लोक पलोक विलोकन सो, धन धान्य न धाम धन दुर पैहैं ॥ १९ ॥

अजहूँ नहिं दूति सँदेश दियो, मनै माहिं अँदेश यही खटको। इतने महँ धावन आइगयो, अब साज सिंगार सबै ठटको ॥ कछुवारमें आनि पहूँच पिया, धनि और नहीं मनमें भटको। सुनिके पिय आगम मोद महा, मग जोह सँताप घटा घटको ॥ २० ॥

कवित्त—

नैन मनि प्रवाह, सरितावलि अगाह, सागर सरूप हरि मिलन ललकमें। ठहरे कौन कौन विधि, पाये विनवार निधि, मिलनि निहाल भई पलकि पलकमें ॥ चरनामृत परचो आनि, मुख घन भरी ज्ञान, गुन छन बुन्दकी छलकमें। प्रीतम प्यारे पग लागि, पड़े भाग-जागि, पदरज सज निज आंखिन अलकमें ॥१॥ इति।

ध्वनि इमन ( समय ८ बजे रात्रि. )

अब दुख दीनानाथ[1] निवारो। तव पद तजि त्रिलोकमें दीसत, मोहि[2] न और सहारो ॥ टे० ॥ थाह रहित अपार[3] भववारिध, अगम अगाध किनारो। मध्य धारमें नैया अटकी[4] खेयके पार उतारो ॥ जहँ २ परति विपति[5] सन्तनको, तहँ२ आप सिधारो[6]। ऐसे कौन ? मोर पातक

१ नाथ करो. २ अवलम्ब. ३ अपार. ४ अड़गई. ५ संकट. ६ पधारे.

हैं, जो तुम पांव पसारो । यह नहिं नई रीति प्रभु जो एक, मोहिं अधम को तारो । युगन २ से अधम उधारन, विदित है नाम तुम्हारो ॥ धर्मदास विनैवैं करजोरी, तुम निज बिरद विचारो । मेरे अवगुन त्यागि दयानिधि, अपनी ओर निहारो ॥ ३२ ॥

देश ताल त्योरा ।

( समय १० बजे रात्रि )

मायामोहनी मनहरन । भोगिया सब पीसडारे योगिया वशकरन ॥ टे० ॥ चञ्चल चाल विशाललोचन, सबल शायक धरन । कामबान विलोकि मारचो, रूप नाना वरन ॥ भृकुटि भङ्ग प्रसङ्ग चहुँदिश, अनल लागी झरन । ज्वाल झाल करालमें, सब जीव लागे जरन ॥ सुर असुर नर नाग किन्नर, त्रसित लागे डरन । मंझ धार झकोर बोरै देत नाहीं तरन ॥ काम क्रोध कठोर तृष्णा, शोक सागर भरन । कहैं कबीर कोइ भागि बाचे, अभय सतगुरु शरण ॥ ३३ ॥

गुरुसम और कौन ? कृपाल । परसपद परसाय मेट्यो, सकल भव भ्रम जाल ॥ टे० ॥ जरत जेहि वश सुर असुर सब, प्रबल माया ज्वाल । वरषि अमृत ज्ञानघन

---

१ पार करो. २ प्रार्थना करते है. ३ कीरती. ४ अपराध. ५ देखो. ६ चूर्ण किया. ७ गति ८ नेत्र. ९ बलवान्. १० बान. ११ प्रकार. १२ प्रहार. १३ प्रभाव. १४ वर्षा होना. १५ भयंकर. १६ राक्षस १७ श्रेष्ठ मनुष्य. १८ एक प्रकारके देवता. १९ बीच. २० हिलोरा देकर. २१ डुबोवे.

प्रभु, शमन कीन्ही झाल ॥ द्रोह मोह अपार तृष्णा, धार अति विकराल । बहुत जीवन पार कीन्ह्यो, मेटि सब जंजाल ॥ दलन दल दारुण दुसह दुख, दीनबन्धु दयाल । चरण रज अज गरुडध्वजहर, तिलक कीन्ह्यो भाल ॥ ध्यान सुन्दर मृदुल मुदमय, अघहरण ततकाल । भवसमुद्र कबीर तारण, गुरु सेतु विशाल ॥ २४ ॥

गौड़मिश्रित देश ।

मोरि मान कही मूरख गँवार । है मनुष जन्म नहिं बारबार ॥ तजु काम क्रोध तृष्णा अपार । भजु निर्विकार सतनामसार ॥ टे० ॥

( १ ) अपारे संसारे कथमपि समासाद्य नृभवम् ।
न धर्मं यः कुर्याद्विषयसुखतृष्णातरलितः ॥
व्रजन् पारावारे प्रवरमपहाय प्रवहणम् ।
स मुख्यो मूर्खाणामुपलमुपलब्धुं प्रयतते ॥ १ ॥

रे ! मूढ तोहिं नहिं तनक लाज । गहे विषय उपल तजि गुरु जहाज ॥ तेहिपर चढि उतरन चहत पार । भजुनिर्वि०

( २ ) आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतं ।

---

१ विष्णु ( १ ) अर्थ-अपार संसारमें किसी प्रकारसे मनुष्यजन्मको पाकर, जो पुरुष धर्म नहीं करता और विषयसुखकी इच्छामें तत्पर है, वह पुरुष जैसे समुद्रके पार ( किनारेपर ) जानेवाले श्रेष्ठ नावको त्याग कर पत्थरको पकड़नेका प्रयत्न करता है सो महा मूर्ख है ॥

( २ ) अर्थ-प्रथम तो मनुषष्यका आयुष्यकाही प्रमाण सौ वर्षका है, सो-

तस्यार्धस्य परस्य चार्धमपरं बालत्ववृद्धत्वयोः ॥
शेषं व्याधिवियोगदुःखसहितं सेवादिभिर्नीयते ।
जीवे वारितरङ्गचञ्चलतरे सौख्यं कुतः प्राणिनाम् ॥२॥

दुखरूप सकल यह है प्रपंच। नहिं तीन काल सुख जानु रञ्च ॥ ताते तजु यह सब लखि असार। भजु-निर्विकार सतनामसार ॥

( ३ ) आदित्यस्य गतागतैरहरहः संक्षीयते जीवितं
व्यापारैर्बहुकार्यभारगुरुभिः कालो न विज्ञायते ।
दृष्ट्वा जन्मजराविपत्तिमरणं त्रासश्च नोत्पद्यते
पीत्वा मोहमयीं प्रमादमदिरां उन्मत्तभूतं जगत् ॥३॥

वरणाश्रमको अभिमान धार। नहिं करत आतमाको विचार ॥ यह मूल अविद्याको विकार। भजु निर्विकार ॥

( ४ ) स्नातं तेन समस्ततीर्थसलिलं दत्तापि सर्वावनि-

—तिसमेंसे आधे पचास वर्ष रात्रिके सोनेमें व्यतीत होते हैं, अब रहे जो बचे पचास वर्ष, तिसके आधे पचीस वर्ष रहे, जिसमेंसे कुछ तो प्रथम बालपनके अज्ञानमें और कुछ पीछे वृद्धावस्थामें बीत जाते हैं, अब बाकी रहे पचीस वर्ष, तिसमें व्याधि, वियोग, दुःख, पराई सेवामें लग जाते हैं. बस! यह व्यवस्था तो यदि सौ वर्षका जीवन हो तिसकी है किन्तु मनुष्यका जीवन तो केवल जलतरङ्गवत् अनियमित है, अब कहिये प्राणियोंको सुख कहां ?।

( ३ ) अर्थ--सूर्यके उदय अस्त होनेसे आयुष्य दिन प्रति दिन घटता जाती है, तथा अनेक बडे २ व्यापार समुदायके कार्यमें लगे रहनेसे, यह भी नहीं ज्ञात होता कि मेरे आयुष्यका कितना काल व्यतीत हो गया है और जन्म, वृद्धत्व, विपत्ति और मरणको भी देखकर नहीं डरता इससे यह निश्चय है कि, संसारमोहरूपी प्रमाद मदिराको पीकर बावला हो रहा है ॥

( ४ ) अर्थ--जिसका मन क्षणमात्र भी आत्मविचारमें स्थिरताको प्राप्त हुआ
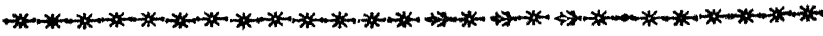
येनाज्ञानाश्च कृतं सहस्रमखिलाः देवाश्च संपूजिताः ॥
संसाराच्च समुद्धृताः स्वपितरस्त्रैलोक्यपूज्योप्यसौ ।
यस्य ब्रह्मविचारणे क्षणमपि स्थैर्यं मनः प्राप्नुयात ४
यह लोकलाज मर्याद फन्द । करि कर्म धर्म सब हो स्वच्छन्द ॥ एक नित्य अनित्यको करुविचार । भजुनिर्वि०

( ५ ) यावत् स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो ।
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ॥
आत्मश्रेयसि तावदेव महतां कार्यः प्रयत्नो महान् ।
संदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमस्तादृशः ॥ ५ ॥
जिमि रङ्ग पतङ्गको नाश मान । त्यों यौवनको मद झूठ जान ॥ नहिं बिगरत लागत तनक वार । भजुनिर्वि०

( ६ ) वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विहगाः शुष्कं सरः सारसाः ।
निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका भ्रष्टं नृपं मंत्रिणः ॥

---

–है, उसने मानों संपूर्ण तीर्थोंमें स्नान कर लिया, समस्त पृथ्वीका दान कर चुका, अनेक यज्ञकर चुका, तथा सर्वदेवताओंका पूजन कर चुका, अपने माता पिताओंको संसारसे उद्धार कर चुका और वही त्रैलोक्यके पूजन योग्य है ॥

( ५ ) अर्थ–जबतक यह शरीर पुष्ट और आरोग्य है, तथा वृद्धावस्था दूर है और इन्द्रियोंकी शक्ति न्यून नहीं हुई, तथा जबतक आयुष्य क्षीण नहीं हुआ तबतक बुद्धिमान् पुरुषको उचित है कि, अपने कल्याणका यत्न अच्छी-तरह कर ले, नहीं तो जब घर जलने लगे तब कूप खोदनेके उद्योगसे क्या होता है ! ॥

( ६ ) अर्थ- वृक्षको फलहीन होनेसे पक्षी त्याग देते हैं, सरोवर सूख जानेसे सारस, निर्द्रव्य पुरुषको वेश्या, भ्रष्ट राजाको मंत्री, फूल झड जानेपर–

पुष्पं पर्युषितं त्यजन्ति मधुपा दग्धं वनान्तं मृगाः ।
सर्वं कार्यवशाज्जनोऽभिरमते कस्यास्ति को वल्लभः ॥

सुत मात पिता तिरिया अनूप । अति होत सुखी लखि मूढ भूप ॥ ये स्वारथके हैं दिना चार । भजु निर्वि० ॥

( ७ ) विदलयति कुबोधं बोधयत्यागमार्थम् ।
सुगतिकुगतिमार्गौ पुण्यपापं व्यनक्ति ॥
अवगमयति कृत्याकृत्यभेदं गुरुर्यो ।
भवजलनिधिपोतस्तं विना नास्ति कश्चित् ॥

सतगुरु कबीर गुणगण गँभीर । दुखहरण हेतु धारयो शरीर । अति धीर वीर मनि गति उदार । भजु निर्विकार सतनाम सार ॥ ७ ॥

सोरठ--, समय १२ बजे रात्रि ·

बनेंडो भलो रिझायोरी । मोरि सुरति सोहागिन नवलं बनी, साँहिब वर पायोरी । टे० ॥ लख चौरासी भटकत २ यह दिन आयोरी । ऐसो अवसर पाय गँमायो, तिन पछितायोरी ॥ ज्ञानको मंडप छाय युक्तिसे, श्रद्धा कलश भरायोरी । सार शब्द अनन्बेधे

---

--भ्रमर और वनको भस्म हो जानेसे मृग त्याग देते हैं, अतएव सब प्राणी अपने २ स्वार्थके कारणसे पास आते हैं, नहीं तो कौन किसका मित्र है ! ॥

( ७ ) अर्थ--जो अज्ञानका नाश करि शास्त्रके अर्थका ज्ञान करता है सद्--असद् मार्ग तथा पुण्य पापको बताता है, करने योग्य कर्म और नहीं करने योग्य कर्मको समझाता है सो गुरु है तिस गुरु बिना संसार सागरसे पार करनेवाली कोई दूसरी नवका नहीं है.

१ दूल्हा. २ वश किया. ३ सुन्दर प्रीति. ४ सधवा. ५ सुन्दर दुलहन. ६ प्रभु.

मोतियन, चौक पुरायोरी ॥ सत्यनामको मौर बँधायो, पँडलो प्रेम लगायोरी । पांचपचीस सहेली हिलमिल, मङ्गल गायोरी ॥ सतगुरुसे हँथलेवो जोड़्यो; भक्तिकी भाँवर खायोरी । सुर तैतीस बराती, ब्रह्मा वेद सुनायोरी॥ भवसागरको फेरो मेट्यो; परनिपाँति घर लायोरी ॥ प्रेमसहित एकचित हो, दुविधा दूरि बहायोरी । सत्यलोकमें अद्भुत मन्दिर, तामें पलंग बिछायोरी । धर्मिनिको सतगुरु कवीर मिलि; तपनबुझायोरी ॥३६॥

ननदी ! जावोरी महलमें, अपनो विरन जगाव ॥ टे०॥ बिरन जगायो ना जगे, करौ मैं कौन ? उपाव । घट अँधियारो हो रह्यो, लागि सकत नहिं दाव ॥ भरमके तालेमें सखी कुँजी सुमति लगाव । कपट किवीरँया खोलिकै, ज्ञानको दियँना जराव । ततको तेल लगायकै, तृष्णा केश गुथाव । भूषण पहिरि विवेकके, निज शृङ्गार बनाव ॥ शीलके रँग रँगवायकै, अँगियँा अङ्ग कसाव । भक्ति चुनरिया ओढ़िकै यहि विध पियको रिझाव ॥ हृदयमहलबिच सुन्दरी, प्रीतिको पलँग बिछाव । श्रद्धा सेज सँवारिकै, प्रियतमको बैठाव ॥ विनय बीजनो हाथलै,

---

१ विवाहके समय जो वस्त्र लाडों ( दुलहन ) को उढाया जाता है २ सखी- ३ पाणि ग्रहण, ४ फेरा, ५ विवाह करके, ६ माईको । ७कूंची, ८किवाड- ९ दीपक, दीवा, १० चोली, ११ पंखा.

सनमुख पियके ढुराव । एकचित होय अभिमान तजि, चरणन शीश नवाव ॥ भलो बन्यो संयोग है, अवसर मती गँवाव । कहै कबीर कमालसे उठि मेरे ढिग आव ॥

बिहाग । ( समय २ बजे रात्रि )

देखो दुरमति यह संसारकी । हरिसो हीरा त्यागि हाथसे, बांधत मोट विकारकी ॥ टे० ॥ कोइ खेती कोइ बनिज करत है, कहूँ हौंस हथियारकी । वह धन्धेमें जन्म गमायो, सुधि बिसारि करतारकी ॥ देवी देव आराधत डोलैं, सुनि २ विप्र लबारकी । निज आतमको चीन्हत नाहीं, फूटी आंखि गँवारकी ॥ चलत कुमारग लाज न आवे, कहँ गयि बुद्धि विचारकी । अपने करमे निज गल फांसी, डारत मायाजारकी ॥ वारम्बार पुकार कहत हों, मोहिं सौं शिरजनहारकी । कहै कबीर यह विनश जायगी, क्षणमें काया क्षारकी ॥ २८ ॥

कालिंगडा । (समय ४ बजे रात्रि)

सन्तकी महिमा अपरम्पार । सन्त और भगवन्तमें अन्तर,तनिक न देखु विचार ॥ टे० ॥ वेद पुराण भागवत गीता, कहत सकल निरधार । सन्तसमान और कोइ नाहीं, अधम उधारनहार ॥ सन्तसमागम सम कोइ तीरथ, और नहीं संसार । मज्जन करत जन्मके

१ पास. निकट. २ प्रपंचकी गठरी. ३ उत्साह. ४ स्मृति. ५ झूंठा. ६ परमात्मा. ७ धूल, मृतका. ८ माहात्म्य. ९ अपार. १० परमात्मा. ११ बीच १२ निश्चय. १३ सतसङ्ग १४ स्नान.

पातक, कटत न लागै वार ॥ काम क्रोध मद मोह द्रोह तजि, गुरुपदके आधार[१] । रहत सदा सन्तोष धारि उर, परखिके सार असार ॥ महामलीन हीन मति पामर, अघ अवगुन आगार[२] । होत प्रवीन नीतियुत तिनके, सुनि उपदेश उदार ॥ जाघर सन्त दया करि जन पर, आवत लेन अहार । ताघर दुख दारिद्र नाश होय, भरत अटल[३]भण्डार ॥ जो नहिं होते सन्त जगत्में, को अस करि उपकार । डूबत आय करत जीवनको, भवसागरके पार ॥ कहि न सकत कवि कोविद[४] कोऊ, सन्तनको व्यवहार । निशि वासर गुण गावत मान्यो, शेष सहस मुखहार ॥ रवि नहिं होत मलीन दुष्टके, लाय उड़ाये छार । कहैं कबीर सन्तकी निन्दा, करै ताहि धिक्कार ॥ २९ ॥

जपु मन सत्य नाम सुखदाई । जो तूं चाहै आय जगनमें अपनी मूढ भलाई ॥ टे० ॥ गर्भवासमें भक्ति कबूल्यो, सो सब सुधि बिसराई । आय पर्यो मायाके फन्दे, मोह जाल अरुझाई । मातपिता सुत भाइ बन्धु तिय, बहिन भुवा भौजाई । अपने २ स्वारथ कारण प्रीति करत सब आई ॥ भवसागरमें भटकत २, यह मानुष तन पाई । खोवे वृथा भक्ति बिन प्रभुकी, धिक ऐसी चतुराई ॥ कहैं कबीर चेतु अबहूँ नहिं, फिरि

१ आश्रय. २ घर. ३ अक्षय कोठार. ४ पण्डित. ५ मेला.

चौरासी जाई । पाय जन्म शूकर कूकरको भोगेगा दुख भाई ॥ ४० ॥

प्रभाती ( समय प्रातःकाल )

( श्री १०८ गुरु सन्त शम्भूदास साहेब विरचित )

जयति जय धर्मधुर धीर कव्वीरगुरु, जयति जय वीर वर ब्रह्मचारी । दहनवनमोह गुणगहन भूपित विभो, भक्त भवशूल निर्मूलकारी ॥ टे० ॥ अच्युतानन्द मुदकन्द स्वच्छन्द दलि, दोषदुखद्वन्द लीलाऽवतारी । कम्बुकर्पूर मदचूर अतिधवलवपु, सकलसुखगेह नरदेहधारी ॥ अमितसौन्दर्य सुखधाम अभिराम अति, कोटिशतकामगर्वापहारी । तरुणकंजारुण हरण, शोभाचरण, दीनविश्राम परमोपकारी ॥ सत्यपदपुष्ट दलि दुष्ट दुर्वासना, सदा संतुष्ट सन्तोषधारी । अमल अनवद्य अव्यक्त अविचल अजित, अनघ अद्वैत अज निर्विकारी ॥ जग-

---

१ धर्मके चलानेवाले. २ धैर्यवान्. ३ श्रेष्ठबलवान् ४ मोहरूपी वनको भस्म करानेवाले. ५ अनन्तगुण. ६ शोभित. ७ प्रभू. ८ भक्तोंका जन्ममरणादिक दुःख ९ नाशकर्ता. १० अखण्डसुख. ११ आनन्दमूल. १२ बन्धनरहित- १३ नाश करके. १४ उत्पात. १५ कौतुकसे प्रगट भये. १६ शंख और कपूर. १७ निरादर करके १८ परमशुभ्ररूप. १९ सम्पूर्ण सुखके स्थान. २० मनुष्यशरीर धारण किये. २१ अपार सुन्दरता. २२ अति रमणीय. २३ अनंत कामदेवके मानको नाश करनेवाले. २४ नवीन लाल कमल. २५ दुःखी जीवोंके आरामका स्थान २६ अत्यंत उपकारी. २७ त्रिकालाबाध्य पदपूर्ण प्राप्त. २८ दुराशा. २९ स्वच्छ. ३० अनिंद्य. ३१ गूढ. ३२ स्थिररूप ३३ नहीं जीतने योग्य. ३४ पापरहित. ३५ एक. ३६ जन्मरहित. ३७ दुःखसुखादि विकाररहित

विख्यात[1] तव चरित सुरसरितसम[2], पतितपावन[3] परम-पापहारी[4] । साधुजन वृन्द[5] अरविन्द[6] दिनकरनिकर[7], उदय जय जयति सर्वोच्चारी[8] ॥ येन चरणामृतं पानकृत्[9] सर्वदा तस्य परिचारिका[10] मुक्तिचारी[11] । सर्वसंत्रास[12] नाशक धर्मदास प्रभो[13], राजराजेन्द्र[14] पारख विहारी ॥ १ ॥

जयति जय कञ्जपर्णज[15] परीक्षक[16] प्रभो, प्रौढगूढार्थ-विद[17] वेदसारम्[18] । भक्तवत्सल[19] दयासिन्धु[20] करुणायतन[21], गजराजेन्द्र लीलाऽवतारम् । पतिततारणतरण[22] दीन अशरण[23] शरण, मोद[24] मङ्गलकरण[25] अतिउदारम्[26] । क्षमा वैराग्य सन्तोष समता दया, आदियुत शील धीरज विचारम् ॥ परम कल्याणमय[27] धाम[28] निर्वाणप्रद[29], रहित अनुमान मायाविकारम्[30] । विगत[31] अज्ञान प्रज्ञान[32] विज्ञान घन, मोह मद मान कानन[33] कुठारम्[34] ॥ लोभवन दहन अतिप्रबलदावानलं[35] कामक्रोधादि कैरवतुषारम्[36][37] । सर्वतो-भद्रवर[38] प्रखर[39] दिनकरनिकर; उदय हरणाय[40] जगदन्ध-

---

१ संसारप्रसिद्ध. २ आपके गङ्गा समानचरित्र. ३ पापियोंको पवित्र करनेवाले. ४ महान् पातक करनेवाले. ५ समुह. ६ कमल. ७ सूर्यपुंज. ८ बोले. ९ पान किया. १० उसकी दासी. ११ सालोक्य सामीप्य सारूप्य और सायुज्य. १२ दुःख. १३ स्वामी. १४ सार्वभौम प्रभु. १५ कमलपत्रसे उत्पन्न. १६ पारखी. १७ पूर्णरहस्यज्ञाता. १८ ज्ञानके सार परमात्मा. १९ भक्तोंकी रक्षा करनेवाले २० दयासागर २१ कृपास्वरूप. २२ पापियोंको पार उतारनेकी नौका. २३ शरणरहित. २४ आनंद. २५ कल्याण. २६ अत्यंत दानी. २७ मङ्गलरूप. २८ आकार. २९ मोक्षदायक. ३० प्रपंच. ३१ अज्ञान रहित. ३२ उत्कृष्टबोध सहित विशेष विज्ञानस्वरूप. ३३ वन, जंगल. ३४ कुल्हाडी. ३५ अत्यन्त बलवान् दावाग्नि. ३६ रात्रिविकाशी कमल. ३७ हिम. ३८ बडा भवन. ३९ तेज. ४० हरण करनेके लिये.

कारम् । यस्यै प्रत्यक्षहित योग जप यजेन मुनि, यत्न कुर्वन्ति नानाप्रकारम् । तस्य विग्रह विदित साधुगुरु- रूपधृतं; अखिल अघओघंह्वत निर्विकारम् ॥ विविध- गुण गणंत श्रुति शारदा शेष, निशिदिवस यदि तदपि नहिं लहत पारम् । नौमि कब्बीरगुरु नौमि कब्बीरगुरु- वदंति धर्मदास इति वारवारम् ॥ २ ॥

जयति गुरुज्ञान रक्षक परीक्षक प्रभो, छद्मचूर्णार्थ पूर्णाऽवतारम् । अखिल पाखण्डगर्वघ्न बीजकतिलक, निर्मित हरण जगदन्धकारम् ॥ टे० ॥ शुद्ध सर्वेश सर्वज्ञ सेवक सुखद, सर्वदा शान्त सन्तोषधारी । नित्य निर्वाण निर्मोह मत्सररहित, निर्भरानन्द स्वच्छन्दचारी ॥ दोष दुर्वासना मान दम्भापहन, धर्म व्रत शीलरत निर्वि- कारी । ब्रह्मगुरु जीवमायोक्ति परस्वमतगति भनित

१ जिसके. २ दर्शके लिये. ३ यज्ञ. ४ उपाय करते हैं. ५ बहुत प्रकारके. ६ उसकी. ७ मूर्ति. ८ प्रसिद्ध. ९ धारण की हुई. १० पापसमूहके नाशक. ११ अनेक प्रकारके गुण. १२ गणना करते. १३ वेद. १४ सरस्वती. १५ रात्रिदिन. १६ तोभी १७ पूर्णताको प्राप्त होना. १८ नमस्कार करता हूं. १९ कहतेहैं . २० इस प्रकारसे २१ सहायक. २२ कपट, भाक. २३ नास्तिकोंका माननाशक. २४ बीजककी टीका. २५ रचा, बनाया २६ निर्विकार सबके प्रभु. २७ संपूर्ण जाननेवाले. २८ आनन्ददायक २९ सदाकाल. ३० सुखी. ३१ आनन्दधारण किये. ३२ अखण्ड. ३३ मोक्षरूप. ३४ अभिमान रहित. ३५ अतिसुखरूप. ३६ स्वेच्छासे विचरनेवाले. ३७ पाखण्डनाशक ३८ नियम. ३९ सदाचारधारी. ४० ब्रह्ममुख गुरुमुख जीवमुख और मायामुख ४१ निज और अन्यका. ४२ ज्ञान. ४३ कहाहुआ निर्णय.

सिद्धान्त मुखचारु[1]चारी ॥ विगत मल[2] आवरण[3] सहित अव्यग्र[4]चित, अमितमायादि[5]तत्त्वात्मज्ञानी । परमपावन[6] प्रवर[7] मोदप्रद[8] यस्य पद, परख प्रत्यक्ष[9] निज राजधानी ॥ जीव निजकर्मवश भ्रमत भवचक्र[10] अति, सहत दुख दुसह[11]दारुण अनेकम् । व्यथा[12] अवलोकि[13] करुणा[14]अयन ज्ञानघन, वदति बाधाशमन[15] यत्न[16]मेकम् ॥ हेतु कैवल्य[17]प्रद साधुगुरु २, श्रद्धया[18] मूढ भजु[19] वारवारम् । निखिल[20] निर्णीतं[21] सिद्धान्तमिति निश्चितं, नीरनिधि निगमनिर्मथितसारम्[22] ॥ आदिमध्यान्त नहिं दुःख त्रैकाल[23] इति वदति वेदान्त[24]विद् ब्रह्मवादी । सकल तंत्रार्थ उद्धृत[25]परीक्षाकृतं, आत्मा[26]नात्म सुख दुख अनादी[27] ॥ जनित अज्ञान[28] त्रैतापदावा[29]ऽनलम्, शमन गुरुबोध[30]वर मेघमाला[31], शोक सन्ताप[32] भवदाप[33] नाशक[34] कवच, विश्ववारीश[35] सेतु[36] विशाला ॥ सामवेदादिगो[37]तीत यं गीयते[38], शम्भु अज

१ सुन्दर चतुर्मुख. २ पाप. ३ अज्ञान. ४ शांतचित्त. ५ अनेक प्रकारके मायादि तत्त्व जड पदार्थ ) और चैतनके ज्ञाता ६ अत्यन्त पवित्र. ७ उत्कृष्ट ८ सुखदायक. ९ दृष्टिगोचर. १० चौरासी. ११ कठिन असह्य. १२ दुःख १३ देखकर. १४ दयाके स्थान. १५ दुःखनाशक. १६ उपाय. १७ मोक्षदायक कारण. १८ विश्वाससे. १९ भजन कर. २० सर्व. २१ निर्णय किया हुआ. २२ शास्त्ररूप समुद्रको मंथनकर सार निकाला हुआ. २३ भूत, भविष्य और वर्तमान. २४ अद्वैतवादी २५ सर्व सिद्धान्तसमत. २६ जड चेतन २७ आदिरहित. २८ अज्ञानसे उत्पन्न, २९ आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक ऐसे तीन प्रकारके दुःखरूप दावाग्नि. ३० गुरुका ज्ञान ३१ बादलोंकी पांति. ३२ दुःख. ३३ जन्म, मरण. ३४ बख्तर. ३५ ससारसागर. ३६ पुल. ३७ अगोचर. ३८ गान करते हैं

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

अमल अद्वय अनूपम् ॥ तज्जगद्विदित सुरवृन्द वन्दित-पदम्, वेष मङ्गल धृतं साधुरूपम् ॥ ३ ॥

---

जय धीर वीर कबीर, भवजल पीर भीर विनाशनम् । सरतीर मनुजशरीर धृत गम्भीर ज्ञान प्रकाशनम् ॥ ॥ टे० ॥ झाँई सन्धि विकार करि, निरवार भार विदारणम् । विविध विधि टकसार, गुरुमुख द्वार सार विचारणम् ॥ मारतण्ड प्रचण्ड तम पाखण्ड खण्डन कारणम् । योगदण्ड अखण्डताप, प्रताप पाप प्रहारणम् ॥ जय कल्पपादप पर्ण सम मृदु चरण हरण भवार्णवम् । प्रद मोद मङ्गल करण अशरण शरण दीन उधारणम् ॥ आनन्दकन्द स्वछन्द दलि, दुख द्वंद फन्द निकन्दनम् । इति अन्तरहित अनन्त सन्त महन्त तन गुण वन्दनम् ॥ धर्मदास जास विलास त्रास, कराल जाल विभञ्जनम् । दलिशाल दीन दयाल कीन्ह, निहाल मुनि मन रञ्जनम् ॥ ४ ॥

१ एक. २ उपमारहित. ३ संसारमें प्रसिद्ध. ४ देवसमूह. ५ वन्दना किये. ६ संसारसागर. ७ दुःख. ८ समूह. ९ सरोवरके किनारे. १० अथाह. ११ प्रतिबिंब. १२ माया १३ निर्णय करके. १४ समूह १५ नष्ट करना. १६ यथाशास्त्र. १७ सिद्धांत. १८ तत्त्व. १९ सूर्य. २० तेजवान्. २१ अन्धकार. २२ तोडना. २३ हेतु. २४ आशा. २५ अपरिमित तेज. २६ प्रभाव. २७ नाशकर्ता. २८ कल्पवृक्ष. २९ पत्र. ३० कोमल. ३१ संसारसागर. ३२ निर्मूल. ३३ खेल. ३४ डर. ३५ भयंकर. ३६ नष्टकर्ता. ३७ दुःखनाशकारि ३८ आनंदित करना.

✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱-✱
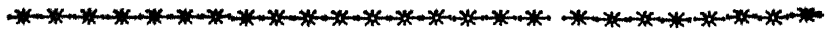
जय उग्रनाम अकाम[1], मङ्गल धाम नित्य निराम-यम्[2]। भव श्रमित[3] शुभविश्राम अति अभिराम पदप्रद निर्भयम् ॥ टे० ॥ मोह माया मान दम्भ मदादि मत्सर दूषणम्[4]। रहित नानारंग[5] परम विराग[6]सहित विभूष-णम्[7] ॥ सानुरोध[8] विरोध हरण, प्रबोधमय कारण परम्। विगत द्वन्द्व स्वच्छन्द, परमानन्दकन्द विनिर्भरम्[9] ॥ काल शेष[10] खगेश[11] भवदुपदेश[12], भो! करुणाकरम्[13]। भव्य-वर[14] वरदेश अखिल, अशेष[15] श्रेय[16] मुदावरम्[17] ॥ भुक्तकञ्ज-दिनेश[18] ज्ञान धनेश[19], क्लेशजगद्भवम् ॥ शमन सकल अहेतु प्रभु, वृषकेतु[20] सेतुभवार्णवम् ॥ शंभु यस्य पदार[21]-विन्द, पराग[22] सञ्चितकर्मजम्[23]। व्याधिप्रबलभूत[24], अति अनुभूत[25] पावन भेषजम्[26] ॥ ८ ॥

---

भजु सुखद परम प्रबोधप्रद[27], प्रत्यूह[28] हरण कृपालके। पारिजातकपर्णनवसम[29], चरण साहिबलालके ॥ टे० ॥ अरुण नख[30] द्युति दिपति[31], दिव्य दिगन्त[32] तमदलमा[33]-

---

१ कामनारहित. २ रोगरहित. ३ थकेहुए. ४ दोष. ५ अनेक प्रकारकी शक्ति. ६ त्याग. ७ विशेषभूषित. ८ हठ करके. ९ अत्यंत. १० सर्प. ११ गरुडपक्षी. १२ आपका उपदेश. १३ कृपालु. १४ श्रेष्ठफल वरदायक प्रभु. १५ संपूर्ण. १६ कल्याण. १७ उत्तम सुखरूप. १८ भक्त कमल सूर्य. १९. कुबेर. २० महादेव. २१ चरणकमल. २२ धूलि. २३ पूर्वकृतकर्मजन्य. २४ अत्यन्त बढाहुआ रोग. २५ अनुभव की हुई २६ पवित्र औषधी. २७ ज्ञानदायक. २८ विघ्न. २९ कल्प वृक्षके नवीन पत्रसमान. ३० कांति. ३१ प्रकाशित. ३२ दिशाओंके अन्तपर्यंत. ३३ अन्धकारसमूहमाला.

लके । जंनित त्रिविध विकार कीन प्रहार भवभ्रम जालके ॥ मृदुंल मंञ्जु पराग पावन, तिलक कृंत निजं-भालके । नशत सकल कुअंकं विधिकंरलिखित कर्म्मं कपालके ॥ प्रगंट मन्त्र प्रत्यक्ष शामक, दंक्ष विष अंहि कालके नहिं । अन्यँ रक्षक पक्षं तजि पदलंक्ष दीनदया-लके ॥ जेहि हेतु शंभु शुकादि निशदिन, ध्यान धरत त्रिकालके । सोइं प्रवरपद परखाय मेटचो, शाल जग-जंजालके ॥ ६ ॥

जय कबीर धीर वीर हरण पीरं । देखि काम क्रोध आदि प्रबल रिपुं डरं ॥ टे० ॥ अति अपार भवविकार धारमें परे । हीनँ दीनँ छीनँ जीव पार बहु करं ॥ जासु वचन ज्ञानभानु लखि विकाँशरं । उदय भोर जानि चोर मानमद टरे ॥ जागे शम दम विराग आदि योगरं । परम धरम जानि जाहि साधु आदरं ॥ दीनबन्धु दया-सिन्धु जासु नाम रे । मोदधाम विगत काम सन्त वदंतरे ॥ धर्मदास जास त्रास काल विकलरं । ऐसो श्रीगुरु प्रताप मंगलाँचरे ॥ ७ ॥

---

१ उत्पन्न हुआ. २ कोमल. ३ सुन्दर. ४ किये. ५ अपने मस्तक. ६ दुःखकी रेखा. ७ ब्रह्मदेवके हाथकी लिखी. ८ मस्तक. ९ प्रसिद्ध. १० योग्य, कुशल. ११ सर्प. १२ दूसरा रक्षा करनेवाला. १३ सहाय. १४ चरण-कमलका ध्यान. १५ दुःख. १६ शत्रु १७ त्यागा हुआ. १८ दरिद्री. १९ दुर्बल. २० प्रकाश. २१ सत्कार किया. २२ कहते है. २३ कल्याणकारं.
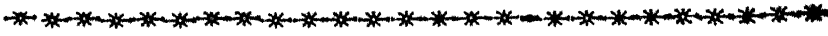
जय जय सतगुरु कवीर, सन्तन सुखकारी ॥ टे० ॥ कमलपत्रपर अनूप, लीला करि धारि रूप, प्रगटे जग हँसभूप, अजर निर्विकारी ॥ मङ्गलमय सिद्धिसदन[1], दिव्य शर्वरीश[2] वदन[3], वारों[4] लखि कोटि मदन, बाल ब्रह्मचारी ॥ शोभित मुद्रा विशाल, शुभ्र[5] सरल[6] तिलक भाल, भूषित उर रत्नमाल, शीश मुकुटधारी ॥ गावत गुणसुर अशेष, नारद शारद[7] गणेश, कमलासन[8] अरु महेश[9], दै दै कर तारी ॥ पारिजात तरुण परण, के समान अरुण चरण, शरण आय धर्म्मदास, तन मन धन वारी ॥ ८ ॥

जय जय साहिब कवीर, काशीपुरवासी ॥ टे० ॥ बूड़त भवसिन्धु धार, भक्तन कीन्हीं पुकार कीजे सत गुरु उबार[10], अखिल स्वप्रकाशी ॥ दुखित जीवलखि दयाल, सर्वेश्वर प्रभु कृपाल, दलन निखिल कालजाल, प्रगटे अविनाशी[11] ॥ कुन्दु इन्दु[12]के समान, विमल वपु[13] प्रकाशमान, मंगलमय सुभगध्यान, तेजपुञ्ज[14]राशी ॥ लीला एक करी नाथ, गनिका[15]को पकरि हाथ, फिरे लिये साथसाथ, कीन्ही जगहाँसी ॥ माया मन धारि टेक, कीन्हीं छल बल अनेक, हारी नहिं चल्यो एक, कम्पित

१ सिद्धिका स्थान. २ चन्द्र. ३ मुख. ४ निछावर करना. ५ श्वेत. ६ सीधा. ७ सरस्वति. ८ ब्रह्मा. ९ महादेव. १० बचाव. ११ नाशरहित. १२ चन्द्रमा. १३ शरीर. १४ प्रकाशका समूह. १५ वेश्या.

है त्रासी ॥ प्रवर पूज्य परम पितृ, दयासिन्धु दीनमित्र, पतितन कीन्हों पवित्र, परखपद प्रकाशी ॥ कुपंथ कुटिल कर्म्म कोई, दम्भदोप मान द्रोह, काम क्रोध लोभ मोह अखिल शत्रुनाशी ॥ जाप जपत नसत पाप, जासु नामके प्रताप, शरण सुखद हरण ताप, अमरपुरनिवासी ॥ गावत गुण धरि विश्राम, नित प्रति वसिष्ठ व्यास, धर्मिनि तजि सकल आस, चरणनकी दासी ॥ ९ ॥

मिथ्या मायाजाल जगत मन, क्यों तू देख भुलाया है? ॥ टे० ॥ सुमन सुहावन सुन्दर फल लखि, सेमर सुवा लुभाया है। मारी चोंच रुई निकरी जब, तब, मनमें पछताया है ॥ धूमसमूह जानि घन चातिक, तृषी विवश हो धाया है। मिटी न प्यास भयो दुख दारुण, नयनहीन अकुलाया है ॥ सुत वनितो इत्यादि सकल निज, स्वारथ प्रीति लगाया है। यह मन मूढ मूढताके वश, मोहजाल उरझाया है ॥ प्रबल अविद्याके प्रताप शठ; फिरि चौरासी आया है। कहैं कबीर चेत नर अजहु, मानुष योनी पाया है ॥ १० ॥

---

१ पिता, २ कुमार्ग, ३ टेढा, ४ कल्पना, ५ सत्यलोकके रहनेवाले, ६ चारित्र, ७ श्रद्धा धारण कारि, ८ सदाकाल, ९ परिचारिका, १० फूल, ११ धुओंका पुंज, १२ बादर, १३ पपीहा, १४ प्यास, १५ दौडा, १६ भयंकर, १७ व्याकुल हुआ, १८ पुत्र, १९ स्त्री, २० मूर्खता, २१ अज्ञान, २२ खानि,

मानुषको तन पाय जन्म क्यों, मूरख वृथा[1] गमाँवै है ॥ टे० ॥ अति अमोल कंचनघटमें[2] शठ[3], हठ[4] करि विष भरवावै है । पाय पियूष[5] पखारन[6] पद हित, मन्द-मती[7] ढरकावै[8] है ॥ ऐरावत[9] गजराजपै मूरख, ईंधन[10]भार लदावै है । बहुश्रमकरि[11] लैहि[12] चिन्तामणि[13] तेहि फेंकिके काग उडावै है ॥ आक रुईके हेत खेत कंचन केहर जोतवावै है । कल्पतरू[14]को काट धतूरा, आँगन माहिं लगावै है ॥ कहें कबीर मूढता कहाँलग कहूँ, कही नहिं जावै है । तजि गुरुज्ञान वारि सुरसरिता[15], मृगजल[16] प्यास बुझावै है ॥ ११ ॥

रागिनी भैरवी समय सूर्योदय ।

अब मोहिं दरशन दीजे कबीर । तुम्हरे दरशसे पाप कटत हैं, निर्मल[17] होत शरीर ॥ टे० ॥ त्रिविधताप भोगत चौरासी, अति जिव भयो अधीर[18] । अब तो कृपासिन्धु दुख मेटो, यमसे कागदचीर ॥ भवसागरमें नैया अटकी, वशपरि विषय समीर[19] । डूबत आय उबारो प्रभुजी, खेय लगावो तीर[20] ॥ कोई ध्यावत गौरी शंकर, कोइ सिया रघुवीर । मेरे तो एक तुमहीं धनी हो, क्यों न हरो यह पीर ॥ धर्मदास विनवे करजोरी,

---

१ निष्फल. २ सुवर्णका घडा. ३ मूर्ख. ४ आग्रह. ५ अमृत. ६ पावधोनेके लिये. ७ मूर्ख. ८ घडेमेंसे बाहर गिरता है. ९ इन्द्रका हाथी. १० जलानेकी लकडीका बोझा. ११ बडे परिश्रमसे. १२ पाया. १३ रत्नविशेष-जो चिंतन मात्रसे सब कुछ दे देता है. १४ कल्पवृक्ष. १५ गंगाजल. १६ मृगतृष्णाका जल. १७ शुद्ध. १८ धैर्यरहित, कायर. १९ वायु. २० किनारे-

प्रभु तुम गुण गंभीर । मैं अति हीन दीन शठ पामर, क्षमा करो तकसीर ॥ १२ ॥

सत गुरु हो ! मोहिं उतारो भवपार । तुमबिन और सुनैको मेरी, आरतनाद पुकार ॥ टे० ॥ गहरी नदिया नाव पुरानी; आय परी मँझ धार । विषय बयार प्रबल चहुँदिशसे, तापर करत प्रहार ॥ तांत मात सुन भाई बन्धु तिय, लोक कुटुम परिवार । अपने अपने स्वारथके हित; राखत सब व्यवहार॥नेम धर्म व्रत यज्ञ दान तप, संयम नेम अचार । इनके फलमें स्वर्ग भोगकरी, फिर जन्मे संसार ॥ कृमी कीट पशु पक्षी आदिक, योनिनमें बहुवार । भ्रमि भ्रमि भटक्यो चौरासी, दुख सहि अगम अपार ॥ धर्मदास विनवे करजोरी हूँ अति निरआधार । शरणागतकी लाज तुम्हे प्रभु, अधम उधारन हार ॥ १३ ॥

गुरुसम और कहो को दानी । अति मतिहीन दीन शठ तारे, विरदैलाज उर आनी ॥ टे० ॥ वाल्मीक नारद अगस्तमुनि, आदि और बहुज्ञानी । गुरुप्रसादमें नीच ऊंचभये, वेदपुराण बखानी ॥ जप तप आदि करें संयेम व्रत; सुनि सुनि नाना बानी । तदपि न मिटै बिना सतगुरुके, चौरासीकी खानी ॥ लोकवेदकी कर्मधारमें

१ अधम. २ अपराध. ३ दुःखित चिलाहट. ४ बांध. ५ वायु. ६ ताडना ७ पिता. ८ हाथ जोड प्रार्थना करते हैं. ९ अवलम्बरहित. १० पापियोंको तारनेवाले. ११ माहात्म्यकी लज्जा. १२ गुरुकी प्रसन्नतासे. १३ साधन.

बहे जात अभिमानी। त्रिविध[1] दुसह दुख देखि दयानिधि, प्रेर्‍यो परख[2] निशानी॥ को कवीर गुरु इव करुणालय[3] वेद वदति इति जानी। तद्विज्ञान हेतु शरणागत, गच्छ[4] सकल भ्रम भानी[5]॥ १४॥

गुरुसम को जगमें हितकारी। कलिमलग्रसित[6] अधम शठ पामर, बहु तारे नर नारी॥ टे०॥ हरिमाया करि त्रिभुवन[7] फैल्यो, भवदुख महाविकारी। रविकरनिकर[8] समान ज्ञानघन, गुरु अज्ञान प्रहारी[9]॥ हरिके कृत जिव जात रसातल[10]; गुरु तेहि लेत उबारी[11]। हरिसे गुण हैं अधिक गुरूके, देखो हृदय विचारी॥ नारदमुख गुरुनिन्दा सुनि हरि, कोप[12] कियो अति भारी। गुरु करुणा[13]निधान एक पलमें, चौराशी भयटारी[14]॥ कहि न जात उपकार अनेकन, श्रुति गावत गुणहारी। हरिविरञ्चि[15] शंकर मुख वरणत, गुरुपदकी अधिकारी[16]॥ झाई सन्धिकालको चहुं दिश, फैल्यो फन्दा[17] भारी। सारशब्दसे सब परखायो, गुरु कवीर बलिहारी॥ १५॥

---

१ तीन प्रकारके. २ परीक्षाके लक्षणकी. योजना की. ३ दयाके भवन. ४ मुण्डक उपनिषद्के खण्ड २ के मंत्र २१ में कहा है कि "तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्, समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्" अर्थात् जिस परमात्माके विशेष ज्ञानके अर्थ पूजनकी सामग्री हाथमें लेकर ज्ञानी और चिन्निष्ठ गुरुकी शरण जावे ५ भ्रान्ति छोडकर. ६ पापमें फँसे. ७ तीनों लोकमें। ८ सूर्यसमूह। ९ नाशकर्ता। १० पाताल ११ बचालेना। १२ क्रोध. १३ दयाल १४ डरमेटना १५ ब्रह्मा, विष्णु और महादेव १६ श्रेष्ठता। १७ जाल.

रागिनी आसावरी. ( समय १० बजे दिन. )

अबधू देखो ! ज्ञान विचारी। यह कौन पुरुषकी है नारी ॥ टे० ॥ कहति न ब्याही ना मैं कुमारी पुत्रजनत मैं हारी। कारी मुड़ीको एक न छोड्यो. तोहूपति वरतारी ॥ पिताकी कही एक नहिं मानी. समुझायो मैं हारी। पारपरोसिन पठवन आई, तहुँ न गई ससुरारी ॥ ससुर हमारा है अति भोरा. सासु हमारी वारी। पीव हमारा झूले पालने, हमहीं झुलावनहारी ॥ मेरो रूप देखि मुनि मोहे. बड़े बड़े तपधारी। मैं वशमें नहिं काहूके आई, रहगये सब झखमारी ॥ कोइ कोइ सन्त निकट मोहिं आवत, दूरहिसे ललकारी। कहैं कबीर जिन झूठी जानी, तिनको है बलिहारी ॥ १६ ॥

सन्तो ! सन्त बिलंग किन कीन्हा। लोकलाज कुलकी मरयादा, सबहि त्यागि जिन दीन्हा ॥ टे० ॥ जाति पाँतिके भर्म भुलाने, सो नर कालअधीना। निजस्वरूप चीन्हो नहिं मूरख, ताते दुबिधा कीन्हा॥ तुलसी ब्राह्मण अति कुलीन जग, सबकोइ कहे प्रवीना। नाभाजी भङ्गीके बालक, तासु प्रसादी लीना ॥ ना मानो तो साक्षि बनाऊँ, और सुनहु मतिहीना। सुपच भक्त रैदासमें अन्तर.प्रभुने कर्यो कवीना ॥ शिवरी कौन कुलीन हती जिन, चाखि चाखि फल बीना ॥ सो प्रसाद पावन हरि मनमें, शंका

१ विरक्त। २ माता। ३ भेजनेको। ४ सासरा। ५ बालक। ६ न्यारा।

तनक करीना ॥ कहैं कबीर (अवधू) सोई उत्तम जो भूले भक्ति घरीना। जिनके भाव भक्ति उरमें नहिं, सो नर नीच मलीना ॥ १७ ॥

सन्तो ! निरञ्जन जाल पसारा। स्वर्ग पताल मर्त्यु मण्डल रचि, तीन लोक विस्तारा ॥ टे० ॥ हरिहरब्रह्माको प्रगटायो, तिन्है दियो शिरभारा। ठांव ठांव तीरथ रचि रोप्यो[2], ठगवेको संसारा ॥ चौराशी बिच जीव फँसावे, कबहु न होय उबारा[3]। जारि बारि[4] भस्मी[5] करि डारे, फिरि देवे औतारा[6] ॥ आवागमन[7] रहे उरझावे, बोरे[8] भवकी धारा। सतगुरु शब्द विना नर चीन्हे, कैसे उतरे पारा। मायाफांस[9] फँसाय जीव सब, आप बनै करतारा। सत्य पुरुषका अमरलोक है, ताको मूंद्यो द्वारा[10] ॥ नेम धर्म आचार यज्ञ तप, ये उरले[11] व्यवहारा। जासे मिलै अखण्ड मोक्ष सुख, सो मारग[12] है न्यारा ॥ कालजालसे बांचा चाहो, गहो[13] शब्द तनसारा (टकसारा)*। कहै कबीर अमर करि राखों, जो निज होय हमारा ॥ १८ ॥

सन्तो ! सतगुरु अलख[14] लखाया। परम प्रकाशक पुंज[15] ज्ञान घन; घट भीतर दरशाया[16] ॥ टे० ॥ मन बुधि बानी जाहि न जानंत, वेद कहत सकुचाया[17]। अगम

---

१ काल ईश्वर. २ बनाके स्थिर किया. ३ निस्तार. ४ जलाकर. ५ राख. ६ जन्म. ७ आना जाना. ८ डुबावे. ९ कपटका जाल. १० दरवाजा. ११ इधरके जगतके. १२ पन्थ. रस्ता. १३ धारण करो. १४ अगोचर. १५ समुह. १६ दिखाया. १७ संकोच किया. * कहीं कहीं ऐसा भी आता है और इससे भी शुद्ध ही भाव निकलता है।

अपार अथाह अगोचर, नेति नेति जेहि गाया ॥ शिव सनकादि आदि ब्रह्माके, वह प्रभु हाथ न आया । व्यास वशिष्ठ विचारत हारे, कोई पार न पाया ॥ तिलमें तेल काष्ठमें अग्नि घृत पयमाँहिं समाया । शब्दमें अर्थ पदारथ पदमें, स्वरमें राग सुनाया ॥ बीजमाँहिं अंकुर तरु शाखा, पत्र फूल फल छाया । त्यों आतममें है परमातम, ब्रह्मजीव अरु माया । कहैं कबीर कृपाल कृपा करि, निज स्वरूप परखाया । जप तप योग यज्ञ व्रत पूजा, सब जञ्जाल छुड़ाया ॥ १९ ॥

सन्तो ! सो निज देश हमारा । जहां जाय फिर हंस न आवे, भवसागर की धारा ॥ २० ॥ सूर्य चन्द्र नहिं तहां प्रकाशत, नहिं नभ मंडल तारा । उदय न अस्त दिवस नहिं रजनी, बिना ज्योति उजियारा ॥ पाँचतत्त्व गुणतीन तहां नहिं, नहिं तहँ सृष्टि पसारा । तहां न मायाकृत प्रपंच यह, लोक कुटुम परिवारा ॥ क्षुधा तृषा नहिं शीत उष्ण तहाँ, सुखदुखको संचारा । आधि न व्याधि उपाधि कछू तहाँ, पाप पुण्य विस्तारा ॥ ऊँच नीच कुलकी मर्यादा, आश्रम वर्ण विचारा । धर्म अधर्म

१ गहरा. २ ऐसा नहीं ऐसा नहीं गान किया. ३ [illegible] ४ दूध. ५ वस्तु, पदका अर्थ. ६ वृक्ष. ७ डाली. ८ [illegible]. ९ [illegible]. १० आकाश. ११ प्रभात. १२ संध्या. १३ दिन. १४ रात्रि. १५ पृथ्वी. जल. अग्नि, वायु, और आकाश. १६ सत्व, रज और तम । १७ भूख । १८ प्रवेश १९ मानसिक दुःख. २० शारीरक रोग. २१ उपद्रव. २२ ब्रह्मचारी गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी. २३ ब्राह्मण. क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ।

तहाँ कछु नाहीं, संयम नियम अचारा ॥ अति अभिराम धाम सर्वोपर, शोभा जासु अपारा । कहें कवीर सुनो भाई साधो, तीनलोकसे न्यारा ॥ २० ॥

सन्तो ! माया तजी न जाई । सदा एकसंग रहत है जैसे, वेल वृक्ष लपटाई ॥ टे० ॥ काम तजै तो क्रोध न छूटै, क्रोध तजै तो लोभा । लोभ तजे उर आशा बाढै, मान बडाई शोभा ॥ गृह त्यागै फिरि मंढी[1] बनावे, उदय अस्त दै फेरी । कुटुम्ब छोड शिष साखा मूड़े, ममता बढे घनेरी ॥ देखनको पैसा नहिं छूवे, कौड़ी मिली न छोडै । गुरुभंडारा हेतु नाम लै, मांगि[2] धन जोड़े ॥ कर्म सँयोग मिलै नहिं जबलों, तबलों महा विरांगी । मिले न कारि सन्तोष रहै मन, तृष्णा पीछे लागी ॥ शिष्य समीप पुजावनके हित, सौ योजन चलि जावे । हमे छोड़ मति औरको मानो, यह उपदेश दृढावे ॥ सोइ त्यागी जो करे न इच्छा, मिले द्वेष नहिं मानै । कहैं कवीर सुनो भाई साधो, माया झूठी जानै ॥ २१ ॥

सन्तो ! समुझेकी मति न्यारी । निज दुख सुख सम सबको जानै, आतम तत्त्व विचारी ॥ टे० ॥ औरनको उपदेश दृढावे[3], आप स्वतः नहिं मानैं । मुख कुछ और हृदय कुछ औरहि, कैसे रामहि जानै ॥ औरसे कहै मोह नहिं कीजे, जो चाहो सुख भाई । माया मोह

१ कुटी । २ त्यागी । ३ निश्चय करावे ।

आप उरझाने, धिक् ऐसी चतुराई ॥ जगप्रपञ्च है अति दुखदाई, कहि औरहीं समुझावे । आप रहत निशदिन प्रपञ्चमें, मिथ्या साधु कहावे ॥ बैरागी बनि पर वैभव लखि, हँसिके नाक सिकोंडे ॥ परी अपावन फूटी कौडी, तेहि देखी नहिं छोडे ॥ निज स्वारथकी कथा सुनावे, बहुविध करि बकवादा । सो जगमें पण्डित कहवावे, है मूरखके दादा ॥ राग द्वेष जबलग घटभीतर, क्या भयो वेष बनाये । खर नहिं होत केशरी कबहूं, सिंहकी खाल उढाये ॥ जो, चेतन तेरे उर अन्तर, सोई सब घट-माहीं । कहें कबीर राम किमि दर्शे, मैं तू छूटत नाहीं॥२२॥

सन्तो ! सहजसमाधि भली है । जबसे कृपा भई सतगुरुकी, कितहुं न वृत्ति चली है ॥ टे० ॥ जहँ २ जाऊं सोइ परिकरमा, जो कुछ करूं सो पूजा । गृह उद्यान एकसम लेखों, भाव मेटि उरदूजा ॥ सोहं हंसः से मनराता, मलिन वासना त्यागी । सोवत जागत ऊठत बैठत, निशदिन तोरी लागी ॥ श्रवण नाशिका मुख निरोधकरि, हठसे स्वास न रोकों । खुले नयन प्रत्यक्ष निरन्तर, परमातम अवलोकों ॥ कहें कबीर

---

१ ऐश्वर्य. २ अपवित्र ३ सिंह. ४ चाम. ५ भीतर. ६ शरीर. ७ चित्तकी एकाग्रता. ८ अंतःकरणका परिणाम, मुद्रनि. ९ परिक्रमा. १० बन, जंगल. ११ भावना. १२ इच्छा. १३. ध्यान. १४ कान. १५ नाक, १६ बंदकर १७ बलकरके सदा. १८ सर्वदा. १९ देखूं.

योगकी[1] रहनी, सुगम प्रगट करि गाई । आसन प्राणायाम धारणाध्यानरहित सुखदाई ॥ २३ ॥

सन्तो ! मोहिं कोई समुझावे । जीव ब्रह्म दोऊ एक कि न्यारे, याको भेद बतावे ॥ टे० ॥ एक कहे बहु शंका होवे, दो कहने सकुचावे । कहुं २ एक कहूं दो वर्णय[2], शास्त्र उभय[3] विधि गावे ॥ ब्रह्म अखण्ड अनादि निरन्तर, इमि श्रुति कहि गोहरावे[4] । जीव सदा उपजै[5] पुनि विनशै[6], सो किमि ब्रह्म कहावे ॥ सर्व शक्तियुत वह अरु यह जिव, अल्प[7]से काम चलावे । वह सर्वज्ञ त्रिकालको दर्शी, यह कछु लखि नहिं पावे ॥ अस वितर्क[8] सतगुरु विन दूजा, को करि कृपा मिटावे । ब्रह्म स्वच्छन्द जीव मायावश, प्रगट कबीर दिखावे ॥ २४ ॥

सन्तो ! जगको को समुझावे । तजि प्रत्यक्ष सतगुरु परमेश्वर, जडको पूजन जावे ॥ टे० ॥ जडपूजाके फल अदृष्ट हैं, कालान्तरसे पावे । दृष्टअदृष्ट उभयफलदायक, सो पूजा नहिं भावे ॥ लै पाषाण[9] मूर्ति करसे गढि, बहुविधि रूप बनावे । विष्णू शंकर सूर्य गणपती, जो कुछ मनमें आवे ॥ दधि[10] घृत पय मधु[11] लै प्रमाणसे, तामें खांड मिलावे । यहि विधिसे करि पञ्चामृत तेहि, मूरतिपर ढरकावे । पुनि लै विमल[12] वारि सुरसरिको,

१ सहज. २ वर्णन करता है. ३ दोनों. ४ पुकारे. ५ उत्पन्न होवे. ६ नाश होवे. ७ थोडा. ८ विविध प्रकारकी तर्कना. ९ पत्थर. १० दही. ११ मध, शहद. १२ पवित्र.

शुद्धस्नान करावै । धोय पोंछि चन्दन लगायकै, पट भूषण पहिरावै ॥ करी प्रतिष्ठा वेदमंत्रमें, नामें प्राण बुलावै । जो वहि मन्त्र सत्य करि मानै, निज पितु क्यों न जिवावै ॥ भोग थार धरि ताके सन्मुख, घण्टा नाद बजावै । भोजन कौन करै बिन चेतन, उलटि आपही खावै ॥ यहि विधि करत करत जड पूजा, आपहु जडवनि जावै । कहँ कबीर ज्ञान सतगुरुका, कैसे हृदय समावै ॥ २८ ॥

ध्वनि पिलू ( समय ३—३॥ बजे दिन )

विवेकी, सन्त बसैं जेहि देश । ऋद्धि सिद्धि नहैं टहल करत हैं, धरि दासी का वेष ॥ टे० ॥ मन्दाकिनी गोदावरि गंगा, सरस्वति बहत हमेश । धन्य सो ग्राम रुचिर अति पावन, अघ न रहत लवलेश ॥ दुख दारिद्र दूर सब भागे, नाश होत भव क्लेश । अर्थ धर्म अरु काम मोक्ष जन, पावत सुनि उपदेस ॥ काम क्रोध मद मोह द्रोह तहँ, कबहुँ न होत प्रवेस । सदा अनन्द बधावा घर २, मँगलाचार विशेष ॥ दुरत दोष अज्ञान अँधेरो, लखि सुचि ज्ञान दिनेश । कहँ कबीर सन्तकी महिमा, कहि न सकत श्रुतिशेष ॥ २७ ॥

यहि तनधनकी कौन बड़ाई । देखत नयन चली जग जाई ॥ टे० ॥ कङ्कर चुनि २ महल बनाया, गहरी

१ वस्त्र, कपड़ा. २ गहना. ३ समृद्धि, ४ आणिमादिक अष्टप्रकारकी. ५ भागीरथी, गंगा ६ नगर. ७ शोभावान. ८ छिन्नि. ९ छिपते है.

नीव खुदाय भराई। तासे तोहि निकारि धरैंगे, जङ्गल बिच परिवारके आई॥ मात पिता सुत नारि कुटुंबके, मोहजाल फन्दे उरझाई। बहु धन्धेमें जन्म गँमायो, प्रभुकी सुधि मूरख विसराई॥ कबहुँ न कियो एकक्षण संगति, साधुसन्तसे प्रीति लगाई। रह्यो अधीन सदा दुरमतिके, अपने मनमें करि चतुराई॥ कहैं कबीर चेतु नर अजहूं, कहों तोहिं बहुविधि समुझाई। गहु गुरु शरण हरण भवसंकट, जासे मिले मुक्ति सुखदाई॥ २८॥

अथ प्रातःसन्ध्या-साखी।

नमोनमो गुरुदेवजू, सत्य स्वरूपी देव।
आदि अन्त गुणकालके, मेटन हारे भेव॥ १॥
नमो नमो तुव चरणको, सतगुरु दीन दयाल।
तुम्हरी कृपा कटाक्षसे, कटें सकल भ्रमजाल॥ २॥
प्रणमों श्रीगुरुदेवको, सोहै सदा दयाल।
काम क्रोध मद लोभको, क्षणमें देवे टाल॥ ३॥
प्रकट वाणी निर्मल करी, बुद्धि निर्मल करिदेउ।
मैं मूरख अज्ञान हूँ, नहिं आवत कछु भेउ॥ ४॥
मैं अधीन बन्दन करूं, सुनियो श्रीगुरुराय।
मारग सिर्जनहारका, दीजै मोहिं बताय॥ ५॥
भवसागर भारी भया, गहरा अगम अथाह।
तुम दयाल दाया करो, तब पाऊँ कछु थाह॥ ६॥

१ अब भी.

ठाढे हौं कर जोरिके, अरज करौं गुरु देव ।
तुमहीं दीन दयालु हौ, बांह गहीके लेव ॥ ७ ॥
नमो नमो गुरु देवजू, प्रणाम करौं अनन्त ।
तव कृपाते पाइहौं, भवसागरको अन्त ॥ ८ ॥
तुम सत्य पुरुष परमात्मा, पूरण विश्वा बीस ।
गुरुसत्य अविचल तुही, काहि नवाऊँशीस ॥ ९ ॥
बन्दौं श्रीगुरुदेवजी, तुमही दीनदयाल ।
मैं अधीन विनती करूं, काटो यह भवजाल ॥ १० ॥
बन्दौं गुरु तव चरणको, मांगू निर्मल बुद्धि ।
कालजालका भय बहु, लीजे मार्ग शुद्धि ॥ ११ ॥
काल फँसायो जालमें, हरी ज्ञान अरु ध्यान ।
बिनु कृपा सद्गुरु तेरी, कैसे पाऊँ ज्ञान ॥ १२ ॥
बहु दुख अब भवमें सह्यो, भटक्यो बहु जग आश ।
तुमही प्रभु दुःख हरन, दीजे ज्ञान विलास ॥ १३ ॥
आदिगुरु अदली तुही, तो विनु नहिं कछु ठौर ।
बहुविधि काल सताइया, सुनो हंस शिरमौर ॥ १४ ॥
आदिपुरुष अविचल तुही, चलाचली संसार ।
अजर नाम प्रभु तुमहि हौ, आधिव्याधि गुण जार ॥१५॥
तुमबिनु कैसे होइ हौं, चिन्ता रहित अचिन्त ।
अमर पदारथ दीजिये, अमर नाम निश्चिन्त ॥ १६ ॥
कालक नगर विनाश है, क्षणमें जाइ नशाय ।
गुरु पुरुष कृपा करो, सार पदारथपाय ॥ १७ ॥

जाते भवबन्धन कटे, दीजो ज्ञान मुनींद्र ।
सत्य सुकृत कृपा करी, काटो कर्मकी बिन्द ॥ १८ ॥
करुणामय करुणा कारि, दीजै सत्य सुकाम ।
बन्दतहौं तव चरण प्रभु, सत्य गुरू सत्तनाम ॥ १९ ॥
तुम दाता हम मांगता, सत्य कवीर दयाल ।
पारख दे व्याधा हरो, मेटो यमको जाल ॥ २० ॥
किसी कामका हूँ नहीं, रहित ज्ञान अरु ध्यान ।
सत्य कवीर तुम कृपा कारि, दीजो पारख ज्ञान ॥ २१ ॥
को हमको जगत यह, रंच न जानों भेव ।
सत्य कवीर दुख परहरू, पावों आतम सेव ॥ २२ ॥
काल संधि झाईं अहै, त्रय विधि कालक जाल ।
भेदवाक्य दीजे बता, सत्य कवीर दयाल ॥ २३ ॥
सत्य कवीरका बालका, पारख बिन कङ्गाल ।
हँसी तुम्हारी होत है, वेगहि लेहु सँभाल ॥ २४ ॥
हंसन नायक सद्गुरु, सत्य लोक जिहि वास ।
जिनके शिशुको जगतमें, काल देत है त्रास ॥ २५ ॥
औगुण पूरति बाल बुधि, तदपि पिता गुणवंत ।
नाम हँसावत पितहिको, सुनु कवीर महमंत ॥ २६ ॥
हंस उधारण सत्यगुरु, अधम उधारण नाम ।
बन्दीछोर कृपाल प्रभु, सत्यलोक तव धाम ॥ २७ ॥
हंस उधारण तारण गुरु, तोर नाम जम माहिं ।
मैं दुखिया भवमें रहौं, बिरद तुम्हार लजाहिं ॥ २८ ॥
कहँ लगि कहुँ अशरण शरण, गुरु निर्भय पद दातार ।

मैं अनाथ तुव शरण हौं, वेगि उतारो पार ॥ २९ ॥
जो तुम नहिं सुधि लेव तो, दूसर कौन सहाय।
काल जालको मेटिके, देव पार लगाय ॥ ३० ॥

प्रभाती स्तुति ( भुजंगप्रयात छन्द )।

कबीरं रविं ज्ञान गो मुक्ति हन्नं । उदं व्योम नाथा सनाथा समस्तं ॥ जनं रंजनं भंजनं भौ विषादं । अनन्तं अनादं स्वसम्वेद वादं ॥ निरीहं निराधार ज्ञानं गंभीरम् । शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं ॥ १ ॥

भयं भाननं काननं कर्म दहनं । दुखं दारिदं दालकं कालगहतं ॥ मुनीशं ऋषीशं अहीशं अभेवं । जगन्नायकं पावकं सेव्य मेवं ॥ बली केल्ह गर्व दल्ली वांह वीरं । शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं ॥ २ ॥

जनं पातकं घातकं सर्व दोषं । प्रहंनं परं पार भौ काल कोषं ॥ नभौ भूजनं पूजनं पादकंजं ॥ कृतांतं कृतं निर्वृतं भर्म भंजं ॥ दुरं चौर सोहं परं पार थीरं । शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं ॥ ३ ॥

स्वसम्वेद वक्ता विरक्ता विहारं । गुणं निर्गुणं सगुणं सर्वसारं ॥ अखंडं अदंडं प्रभुं निर्विकारं । महत्वं गुणं पंचतत्वं तु पारं ॥ तरं तारनं कारनं तार नीरं । शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं ॥ ४ ॥

निराकार अंकार हंकार हन्ता । विषय वासना सासना शंक अन्ता ॥ अछेदं अभेदं अकोहं अमोहं ।

गुणं ज्ञान गेहं अदेहं अद्रोहं ॥ कृपा लोचनं मोचनं मृत्यु पीरं । शरीरं मनो वाक वन्दे कवीरं ॥ ५ ॥

क्षरंपार पुरुषोत्तमं अक्षरादिं । अलेखं अभेदं निरच्छरं अनादिं ॥ गहंतं महाव्याल कालं करालं । दहंतं भवं संभवं दुःखजालं ॥ नलेशं कलेशं न माया समीरं । शरीरं मनो वाक वन्दे कवीरं ॥ ६ ॥

गुणानन्तधामं निकामं अयोनी । अविद्या परं हे क्षमा हेत छोनी ॥ उपायं पुनःपोष पालं कृपालं । दहादौर्महा भैरवी भैरुकालं ॥ धरा धारधै धर्मधी ध्यानधीरं । शरीरं मनो वाक बन्दे कवीरं ॥ ७ ॥

कृती सुकृति सुकृतो चिंत चीते । प्रभा ज्ञान गम्यं पदाम्भोज प्रीते ॥ कवीराष्टकं[1] ये पठंते प्रभातं । भने भूरिभै भर्म कर्म निपातं ॥ लहे लाभ हिरम्बरं रम्य चीरं । शरीरं मनोवाक वन्दे कवीरं ॥ ८ ॥

कवीर भानु उदय—सवैया ।

रवि आगम साख समागमको, घरियाल पुकार लगी जबलोही । सुनि शब्द निशान पिसान भये, सठ सेन सहायक दुर्जन द्रोही ॥ नरनाग सुरासुर सीस नवै, उदयाचल पै रवि मंडल सोही । धन्य धन्य प्रभाकर धाम प्रभा, खलबाम वहे तुम्हरो मुख जोही ॥ १ ॥

---

१ नोट—भुजंगप्रयात छन्द चार यगणका होता है यथा—यचौ मैं प्रभूते यह हाथ जोरी । फिरं आपुनं न कबो बुद्धि मोरी । भुजंग प्रयातोपमा चित्त जाको । जरै ना कदा भूलिके संग ताको । छन्दप्रभाकर ।

कुलकंटक वक्त्र विलाय गये, रथ चक्रलगे रवि चक्रवर्तीके । गुनज्ञान गँभीर हिये सरमे, दरमे परने प्रिय प्राणपतीके ॥ बडभाग सुभाग सुभागिनको, सुख साज समाज है आज सतीके । विरहानप ताप मैनापविने, भ्रम भये चलिगये गलि ज्ञान गतीके ॥ २ ॥

यह रैन भयँकर घोर महा, नव तेज दहा निहँ लोकन स्वामी । अब सूझि परे कछु बूझि परे, सत्त नाम चरित्र पवित्र प्रनामी ॥ दुख दायक चोर चकोर चका, सब भाग अभाग कुमारग गामी । हग दृष्टि खरी गुणज्ञान भरी, जगदीस करी तम पीम नमामी ॥ ३ ॥

सत्य कबीरको सत्य और मन राजाको
झूठ ! दोनोंका युद्ध वर्णन ।

पढि सत्य अगार नगार दियो, निज सत्य व शुद्ध स्वरूप समेते । छवि पुञ्ज महा सुख भुञ्ज भले, घन धर्म रु धीरज ध्यान मचेते ॥ मल सोधन राग विराग जिन्हैं, नहिं क्रोध कषाय जहाँ लगि पेते । सुख दायक है सब लायक है, जन शोक सहायक दर्शन देते ॥ ४ ॥

असि सुठले झूठ उठे तिहिपै, जिनके हियमे सतते दुख भारी । एक ठौर कियो साजि सेन सबे, निज दौर जहाँ लगि ठानत रारी ॥ तिहि संग अनीभल ढंग बनी, तब अग्र चला समुहे ललकारी । दलदम्भ ठटे खल है निपटे, गहि मान मलान जुरे सब छारी ॥५॥

रनशूर महाबल शूर सबै, नहिं नूर कहूँ लखिये तन कारे। सब अस्त्रन वस्त्रन श्याम सजे, चलिये सब सत्यके युद्ध विचारे ॥ अभिमानके कुञ्जर झूठ चढ़ा, निज फौज पराक्रम पुञ्ज सुधारे। अरु सत्यके मारनको सबही, अपनो अपनो बल वीर्य सकारे ॥ ६ ॥

तहँ सत्य अकेल सहाय नहीं, रिपु भै नहिं सो मनमें कछु मानी। इतने मह झूठ निशान बजो, अरु श्याम ध्वजा तहवाँ लहरानी ॥ ध्वज टूटि गयो रिपु फूटि गयो, सत ताक पताक दिशा दृग तानी। तिहि तेज प्रतापहुते बहुते, सब भागि चले विथुनी विहरानी ॥ ७ ॥

कोई शूर सपूत बड़ो तिनमें, जो गुमान गहे पग डारत आगे। विनसे सबही जिन मान गही, नहिं तेज सही मरिगे कछु भागे ॥ दहिगो सब बाहन राहनमें, रहिगो यक झूठ अजौं जिय जागे। जग पेलि बढाय चढाय कियो, सत सन्मुख होकर युद्ध जो मांगे ॥ ८ ॥

जिमि श्याम घटा रन आनि डटा, निज मत्त मतंग चलावत सोई। अति रूप भयावन धावन कै, जग जीव डरावन जालिम जोई ॥ ज्योहि ज्यों सत्त समीप गयो, बलहीन भयो सब शस्त्रन खोई। नियरान गयन्दहि प्राण तबै जरि, छार भयो तब खाक मिलोई ॥ ९ ॥

वैराग विवेक विचार चढे, अरु ज्ञान चढे है निशान बजाई । इन चारिहु युत्थप संग अनी, चतुरंग धनी दम संयम ताई ॥ शुचि साधन मौन अरु दान दया, है अचार तपोधन कौन गनाई । दल साजिके सत्य कबीर चढेः रिपु धीर कहा जो सके समुहाई ॥ १० ॥

दुसरी दिशिते मनराव अनी, नहिं जात गनी अगनी गहि धाई । तहँ काम रु क्रोध है मोह महा, अरु लोभ रहा सरदार लडाई ॥ निरदाय असत्त अशौच लिये, सब आय सहाय भये यक ठाई । चवगान समाज जुरे दल दो, घमसान परे नहिं लोह चलाई ॥ ११ ॥

दिननायक सायक छूटि चले, महि खेसरनी ध्वजनी ध्वज टूटै । नमके दमके द्युति दामिनि ज्योंः दसहू दिशि घेरि लियो खल फूटै ॥ करको सर कोटि दिवाकरको, सब देश विदेशनमें जब टूटै । नहिं सूर कोई भजि दूर गये, रिपुसेन सहाय सबै गहि कूटै ॥ १२ ॥

हरि श्वेत ध्वजा फहरान लगे, घहरान लगे हैं अनाहत ढंका । यम युत्थ अपार खभार परे, जितही नितहीं सब सोच ससंका ॥ बल बीर कबीर के सन्मुख हो, नहिं धीर धरे तिरछा अरु बंका । गण तीर शरीर समाय गये, छनमांह भये सब कालको फंका ॥ १३ ॥

मद मार महामतवार चले, समुदाय बजावत ढोल दमामा । गहि शस्त्र अनेक चमू चमकी, पहिरे गहिरे

रंग जामिन जामा ॥ दुरबुद्धि दगा छल छिद्र पगा तहँ, कपट अखंड सगा सठ तामा। भय भर्म भयावन भूत चले, बहु दूत कपूत रले अघधामा ॥ १४ ॥

क्रमही क्रम ज्यों नियराय चले, सियराय चले अगिले भट भोरे ॥ हरुए हरुए बिचले बिचले, पछिले पछिपलि रहे कुछु थोरे ॥ थिरता पद हानि डटे कितने, अभिमान ते बात सटे बरजोरे। जब पेलि अगार लगार चले, गहि गूर्जसों सुर्ज हडावरि फोरे ॥ १५ ॥

शर शब्द सरासर छूटि चले, यहि ओरते शत्रुके सेनमें छाई। सब घायल भूमि परे छनमें, अरिचंड प्रचंड अनी विचलाई ॥ गहि ज्ञानके गोलन सर्द कियो, महि मर्द गनी महि गर्द मिलाई। रनमें मन राडको हाड गडे, वैराग विवेककी टेक रहाई ॥ १६ ॥

बलवान विराग रु ज्ञान भये, रिपु सैन दिये सबही विचलाई। जय शंख निशान रु घंट बजे, शहनाइ अनाहत केरि सुहाई ॥ चहुँओरते घेरि लियो गलियो, निज बन्धन बाँधि लियो मनराई। गढमें पहरा बिठलाय दियो, अरु नग्र फिरी सतनाम दुहाई ॥ १७ ॥

प्रभु दीन प्रकाश जो उग्रनको, सोइ सूपच छुद्र चमार चंडारो। नहिं तारत बार खला बृखला, अघओघ नसाय कसाय उबारो ॥ सम भाव दुराव नहीं जिनके, यवनादि कहु सुखधाम सिधारो। कर्म नासहि देव सरी सभके, खल पावन सत्त हैं नाम तुमारो ॥ १८ ॥

प्रभु देखि सतोगुन व्यापि गयो, कलिमें धृत है कृतकी वृत बाना। महि भीतरको डर गाड बने, तम घोर न उल्लू सभी डम थाना॥ निजु मैन ममैन समाय तहाँ, तुमरे डरते कलि जाय छिपाना। चकचौंधरिचो-चमगादरके, प्रभुनिन्दक नाहि न काहि ठिकाना॥१९॥

रथ धर्म अरूढ अगार चढे, गहि ज्ञानन गूढ निसा मदहारी। मुख सत तुरङ्ग सुरङ्ग सजे, प्रभु अंश प्रशंस पुरान पुकारी॥ सत नाम सही रथवाहक लों, रथ चक्र जो वेद स्वरसम्म उचारी। गुरुचार मोई गुनचार बने, तप तेज अभै कर दुष्ट संहारी॥ २०॥

कवित्त।

जम ज्वाल जरत जगतपति जाहि जग, जीवन जियावत जुडाव जगजरनी। भाग भल भक्त भगवन्त भजु भोर भोर, भंजन भरम भय भी भय भरनी। वारि-निधि वाहिन वदत बुध वेदवर, वेद वरदानन बखान वर वरनी। कलि कल्मख कुल कंटक कटन कोटि; कीरति कबीर करतारकर करनी॥

कबीर भानुप्रकाश पृष्ठ २४१.

इति कबीर भानु उदय सवैया और कवित्त।

---

मध्याह्न संध्या-साखी।

साहब दीनदयाल गुरु, सो पर और न कोय।
शरण आय यम सो बचे, आवागमन न होय॥ १॥
दया करन अवगुण हरण तारन तरण उदार।
अशरण शरण, वन्दू चरण, तुम विनु नहिं निस्तार॥२॥

देखि अधमता आपनी, परवश यमके हाथ ।
त्रसित गह्यो साहिब शरण, भव भय हारि सनाथ ॥३॥
प्रभु सब लायक पारखी, हौं भर्मिक अज्ञान ।
लोह कनक पारस करे, साहब शरण समान ॥ ४ ॥
वन्दों चरण सब दुखहरन, प्रभु प्रसाद दुख भूरि ।
दया करी सब दुखहरी, संसृत शूल भो दुरि ॥ ५ ॥
बहे बहाये जात थे, भौसागरके माँहि ।
दयाकरी परखाय सब, शरण आय गहि बांह ॥ ६ ॥
संतत अभय गुरुके चरण, सदा परख प्रकाश ।
समन सबे भवजालतम, राम रहस सुख वास ॥ ७ ॥
सर्वोपरि गुरुके चरण, जो हारी भवखेद ।
परम उदार सागर दया, थाह न पावे वेद ॥ ८ ॥
वारों तन मन धन सबे, पद परखावन हार ।
युग अनन्त जो पचिमरे, बिनु गुरु नहिं निस्तार ॥९॥
संधि परखावे जीवकी, काटे यमको फन्द ।
साहब दीन दयाल सो, संशय खंडे द्वन्द्व ॥ १० ॥
द्वन्द्वज सत्य असत्यको, जहाँ नहीं कुछ लेश ।
सो प्रकाशक गुरु परख है, मेटत सकल कलेश ॥ ११ ॥
जाहि दया गुरु परखलहि, मेटे सब भव जाल ।
रक्षक बन्दी छोर सो, साहब दीन दयाल ॥ १२ ॥
भेष अमङ्गल नष्ट गुण जेते त्रयविधि फांस ।
अदल चलाई कालपर, सो त्रिदोषहिं नाश ॥ १३ ॥
अदल चलाई सत्यका, साहब बन्दी छोर ।

पारख छोरे जीवको, यमका हाथ मरोर ॥ १४ ॥
दया दयाल पारखलहि, सुधरे सब भ्रमजाल ।
अदल चले तब सत्यका, शिर धुनि रोवे काल ॥ १५ ॥
प्रथम शब्द सुधारिके, टारे त्रयविधि जाल ।
झायीं मेटत संधिको, ऐसो शरण दयाल ॥ १६ ॥
पारख गुरु सुख वास है, जहां न फन्दा काल ।
सो बिनु जीव विनाश है, चौरासीके जाल ॥ १७ ॥
जो रहम युत पारखी, साहब साँचा सोय ।
तरे तारे भव जालमें, काल देखि रह रोय ॥ १८ ॥
पारख तोडे भ्रम गढ, खीजे काल कराल ।
करि न सके प्रभुता कछू, ऐसो शरण दयाल ॥ १९ ॥
सत्य शरण प्रभु पायते, टूटे मोहक डोर ।
अभय भक्ति पारख सदा, कला न लागे चोर ॥ २० ॥
प्रभुकी शरण सहाय बिन, कैसे होय उबार ।
अधमकाल ग्रासे सबै, अपनो जाल पसार ॥ २१ ॥
परवश जियरा कालके, दुख पावै संसार ।
बिनु पारख भटकत फिरे, थके विचार विचार ॥ २२ ॥
चारि वेद षट अंससो, प्रगट भये जग आय ।
अर्थ विचारत जिव थके, झगरा बहुत मचाय ॥ २३ ॥
घट पट पटकी जानहीं, ते न परें भव फंद ।
गुरु पारख प्रतापसो, सदा रहे आनन्द ॥ २४ ॥
महासागर संसार है, जाके संशय धार ।
सुर नर मुनि सब बहि गये, पारखि उतरे पार ॥ २५ ॥

पारख अचल अखंड है, ताहि परे नहिं और ।
विनु तेहि भटकि जग रहे, जहां नहीं तिथि ठौर ॥२६॥
राम रहस साहब शरण, अभय अशंक उदोत ।
आवागमनकी गम नहीं, भोर सांझ नहिं होत ॥२७॥
नाशक के सब रूप हैं, रहे तेहि मध्य समाय ।
कष्ट विविधि विधि पावते, पारखलीन छुड़ाय ॥ २८ ॥
प्रभु शरणागत परख दृढ, सत्यलोक प्रमाण ।
सन्तत जीव बिलास है, टूटा काल गुमान ॥ २९ ॥
जो जिव परख बिलासमें, लहे सदा सुख चैन ।
तिनके त्रास न कालके, और कहेको बैन ॥ ३० ॥
परख विलासी जीवजे, धनी सोई संसार ।
और सबे निर्धन रहे, यम के हाथ खुवार ॥ ३१ ॥
संतत सुख है परखमें, साधन यतन विनास ।
भूलि भटक मति जाहु जिव, विविध कर्मके फाँस ॥३२॥
धन्य धन्य तारणतरण, जिन परखा संसार ।
तेई बन्दी छोर हैं, तारणतरण उदार ॥ ३३ ॥

अथ माध्याह्न दिनकी स्तुति ।

कबीरभानु प्रकाश पृष्ठ ९२८ ( नराच छन्द )

प्रभुं परे पारायणं समस्त ज्ञानसागरं । विश्वंभरं धराधरं कृपाकरं उजागरं ॥ कलिकलंक नाशनं कबीर नाम नागरं । कृतान्त तीख त्रासनं कृपानिधे नमोस्तुते ॥ १ ॥

कृपा सुवारि नोपकं सुनन्तशालि पालकं। कृपा सुभक्तिपोषकं पराग शापत्रालकं ॥ समस्तशोकशोषकं दरिद्रदोषदालकं। सुकृत्त सर्व सार कृत्त कारकं नमोस्तुते ॥ २ ॥

निजं निरीह निर्गुणं अनन्तलोकनायकं। अनादिदेवपायकं सुभक्तिमुक्तिदायकं ॥ करालकालदालकं नो संकटं सहायकं। निरंजनं नारायणं नरोत्तमं नमोस्तुते ॥ ३

गणेश शेष शारदं गुणानि नित्यगावनं। अजादि देव नारदं सुकृत्त नाम ध्यावनं ॥ शरीरभ नशावनं कबीर जक्तपावनं। सुभक्त चित्तभावनं मोहावनं नमोस्तुते॥ ४॥

चकोर चित्त चांरकं सचारु चन्द शोभितं। मुनिन्द पादपंकजं अलिन्द सन्त लोभितं ॥ विज्ञाननैन जाहितं सुकण्ठ नाम पोहितं। निचिन्त निर्विकल्पकं सकल्पकं नमोस्तुते ॥ ५ ॥

क्रमं वनं सहारणं सुवारणं कुमारकं। त्रिताप्नि प्रीति पालनं सुबुद्धि निद्धिधारकं। दुःख तरु कुठारकं भव भयविदारकं॥ कबीर नाम तारकं विहारकं नमोस्तुते ॥ ६॥

अगोचरं अछेदनं अभेदनं अखण्डनं। सुभक्तचित्त मण्डनं शुभं भवं तरंडनं ॥ यशं भनन्त अण्डनं प्रताप नो प्रचण्डनं। कृतांत दण्ड दण्डनं त्रिहण्डनं नमोस्तुते ॥ ७ ॥

तव नाम ब्रह्मबीजकं शरीरवृक्षमूलकं । द्विचार अष्ट फूलकं अनन्त लोक थूलकं ॥ त्व सत्ति प्रक्तिसागरं द्विलोक वेद कूलकं । हनं शोक शूलकं अनूलकं नमोस्तुते ॥ ८ ॥

स्नेहवारि पूरितं विषै कुजन्तु भूरितं । चरितमुक्ति माणिकं विकारवासदूरितं ॥ पदार्थ अष्ट षष्टकं त्वभक्ति रत्न मूरितं । रमन्त योगिनानि राम नाम तो नमोस्तुते ॥ ९ ॥

मथतं शोकसिन्धु तो मुनीन्द्र नाम मन्दरं । धरा च वेद उद्धरन्त मच्छ कच्छ सुन्दरं । हिरण्य अक्षघालनं अनूपरूप भूधरं । निकाम काम दायकं सहायकं नमोस्तुते ॥ १० ॥

तो नारसिंह वामनं द्विजाति राम पावनं । ब्रजैक बल्लभं नरेशकं सदावनं ॥ बउद्ध निष्कलंक गुणतो गुणनि गाथ गावनं । पदाम्बुजैक भक्त भौर भावनं नमोस्तुते ॥ ११ ॥

त्रयलोक लोक पालकं त्रयदेव देव यक्षकम् ॥ उपायकं च रक्षकं पुनः समस्त भक्षकम् ॥ त्व सर्व मय अक्षकं प्रतापतो प्रत्यक्षकम् । वसन्त वासुदेवकं अभेवकं नमोस्तुते ॥ १२ ॥

त्रयशूल पाणि दीन दानि कत्रशूल नाशनं । त्रय काल पाप त्रै पुरं तो दाहकं हुताशनम् ॥ समाधि तव अखण्डितं प्रचण्ड योग आसनं । शुभं करोति शंकरं भयंकरं नमोस्तुते ॥ १३ ॥

कबीर नाम आदितं सुभक्त चित्त राजितं । विमोह यामिनी गतं प्रकाश ज्ञान भ्राजितं । कलिमलं अपर्वलं उलूक लेखभाजितं । कबीर कारणं वरं कृपाकरं नमोस्तुते ॥ १४ ॥

जलं सुस्वाति नाम तौ सुभक्त चित्त चातकं । ककार ब्रह्म राजसं वकार विष्णु सात्विकं ॥ रकार शम्भु तामसं उपाय पोप घातकं । समस्त दोष पातकं निपातकं नमोस्तुते ॥ १५ ॥

कबीर पाद पंकजं सनेम प्रेम ध्यायकं । गुणानि नाम कीर्तनं सुधाम काम दायकं ॥ विराग त्याग लभ्यते हृदं पदं सहायकं । तरंत तारनं भयं विदारनं नमोस्तुते ॥ १६ ॥

अथ मध्याह्न- सवया ।

कबीर भानुप्रकाश पृष्ठ ५३०.

तन भंग पतंग उतंग भये, नट पार जुवारको खोजन पाई । बरते नव खण्डमें तेज महा, ब्रह्माण्डमें आनि रह्यो ठहराई ॥ पहरी अरु स्वान सुखी सबही, पथिको निर्भय श्रम पन्थ बिहाई । तुमरे परताप सन्ताप गयो, मम दंड प्रणाम तुम्हें रविराई ॥ १ ॥

गिरि कन्दर अन्दर दुष्ट दुरे, रवि तेजप्रवाह सभी तम भंजे । यम काल सकाल बिहाल पडे, नहिं आय कोई धर्मराजके पंजे ॥ दृग दृष्टि प्रचंड ते अंड सुझे, जन रजन पायनके रज अंजे । गुरु नाम चरित्र पवित्र लखे, खल चोर निशान निसाचर गंजे ॥ २ ॥

तम वंश विध्वंस न संशकहूं, दशहूँ दिशि हंस सभा सरसाई। मृत्यु नाथ अनाथ बेहाथ भये, बल वीरज धीरज तेज गवाई॥ रमि राम चले पर धाम सबे, चहुँ ओर फिरी सत नाम दुहाई। भ्रम भंड करे न विहंडकने, यम दंडक दंडन मारि भजाई॥ ३॥

नहिं खोट है ओट उलूक लुके, सुचि सेत सती विर्ता वर गाजे। सब झार कबीर कबीर कहै, छल छिद्रपै भ्रम संशय भाजे॥ तिहुँ काल है सत्य कबीर सुखी, गुण गाव सभी सुखको सज साजे। यह बारह पंथ कला रविको, प्रभु पूरण ब्रह्म हो व्योम विराजे॥ ४॥

हिमजार जुबार खुबार घने, निज शृङ्ग शिलापै किला घर छाई। बड वृद्धि भई खगरे वगरे, फिर स्वर्ग दिशा शिर ऊंच उठाई॥ हरपे नहिं धर्म रखे करखे, दम संयम भक्ति कृपी दुख दाई। जब सूर्ज तेज तपै तिनपै, तेहि बूर्जते धरि धूर्ज मिलाई॥ ५॥

कहु सूर्जमुखी यक पाय खडा, चितवै चित चाहते सील नवावैं। जेहि प्रीति अभंग पतंग पिया, पदनीर जको धरि धीरज ध्यावे॥ भ्रम भंजकहू वन कंज खिले, दिन भूप स्वरूप अनूप दिखावे। गिरि निश्चल आसन ध्यान धरे, करुणा प्रभु लाल अमोलक पावे॥ ६॥

प्रभु तीक्षण तेज तपै महिपै, बन लोल लवारन आगिते पूरी। नव खण्डमें पवन प्रचंड चले, भरिमारन मृठिन

ता हग धूरी । तम ग्रीषम झार अपार तपे, प्रभुनाम जपे जनभक्त अँकूरी । दिननाथ दयाल भये तबहीं, जनको सबही दुख कीनेहु दूरी ॥ ७ ॥

गुण खान पियाको हिया हरषा, करि तोष तिया वर्षा झरि लायो । धरती भई गर्भवती तबही, चहुँ खानिके जिन्सको वंश उपायो ॥ तप कोन महाननलों भलसों, अबतो सबको फल पूरण पायो । बढि वृद्धि भई पुत्र पौत्रनको, बहु रंगमें थावर जंगम जायो ॥ ८ ॥

फुलवागन फूल अनन्त फुले, धनवंत यथा यशवंत सुहाई । जनु सम्पति पाय सती गिरही, श्रद्धा गुन द्विज साधु बुलाई ॥ कहु बेल चमेलिन फैलि रहीं, हरि भक्तनकी जिमि कीरति छाई । फल पूरित शाख नवे किनहू, मन अर्थ लहे जो गहे नमराई ॥ ९ ॥

लहरी तृणशत भरी धरती, तपसिद्ध तपी ऋषि ज्ञान ज्यों पूरे । कहुँ ऊपर घास न फूस रहे, गम्म गुरु विना हिय सून्य ज्यों कूरे ॥ जल कीच है भूरि न धूरि कहूँ, सतसंगतिसो जिमि दुर्जन दूरे । पर त्यागलो पंजन खंजनहू, भ्रम भंजन दरशते ज्ञान ज्यों फूरे ॥ १० ॥

कहुँ भूख सँहारक ऊँख भई, पर हत सहे दुख जो अधिकारा । कहुँ स्वेत कपास विकास कियो । पर छिद्र छुपावनजो तन धारा ॥ कहुँ अन्न रु साग व पात उगे, तरकारि वनस्पति चौदह भारा । सुख साज सभी सब चेर मही, यह केवल भानु प्रताप तुम्हारा ॥ ११ ॥

कक आदिपिता कथि वादि निता, खख सुन्न निरंजन ताहिते हेरा। खखते प्रगट भये खंड सबै, खख ज्योति अखंड दिशों दिशि हेरा॥ बसुदेव बकार विश्वम्भर है, बर बीज चराचर चीजचितेरा। रचनाके भंडारको धारकसो, धर ओष्ठन द्वारके ऊपर डेरा॥ १२॥

भवसागर जालको काल बने, ररकार बडे सरकार कहायो। तिन खोलि केवाडि लियो, बितको तेहि ठाहर ते गहि बाहर आयो॥ तप घोर करे यक पाय खडे, भव बारिध जारिध राज लिखायो। तरनी-कक-है कडिहार-बबा रर-दंड तिहूँ जगको उधरायो॥ १३॥

ररकार धरे शिर बिन्दु जबै, इमि नाद रु बिंद है जिन्द यती सो। सो कृशान रु भान ससांक भये, नहिं पावत पार अपार गतीसो॥ ररविन्दके बीच अकारछपै, कहँ रामको नाम विरंच मतीसो। ररेफ गफेलमें भेद सही, नहीं जात कही वह बात रती सो॥ १४॥

रर पूरण ब्रह्म निरंजन है, वह भाँतिके भाजन भञ्जन कीन्हों। बब बीज विना कछु चीज नहीं, दोउ एक भये रचना चित दीनों॥ कक कायक कर्म क्रिया सबही, फबही तबही जबही मिले तीनों। ककही बबही ररही ररही, सरही सब काम कबीर जो चीन्हो॥ १५॥

कक कंठपै बैठिके चेतनदे, जिव संठ उदार सुधारत बानी। बब अग्र गयो जहँ नग्र नयो, सरहद्द पै लद जमा सब आनी॥ ररवीर बली तब पील चली, कर

क्रोध विरुद्ध हो युद्ध जो ठानी । ककहू नचहू दनही रहिगे, ररको धरको थरको जगजानी ॥ १६ ॥

कक केवल ब्रह्म है देवलमें, ववदीन कपाट सुपाट दुवारी । तहँ जाय जो कोय सो होय अभय, दरमें दरपै परब्रह्म पुजारी ॥ कोई जान नहीं भ्रम भान नहीं, शक खोलकी टोल लगी तहँ तारी ॥ रग गगकरी पट टार धरी, गहि भार भरी भव जार सँवारी ॥ १७ ॥

करुणामय कंत कबीर कहा, कवि कोविद को कुल कर्म कटेंगो । मन मोहन भीत मुनीन्द्र मिली, मद मोह मनोज सु मौज मिलेंगो ॥ सत सुकृत सत्य स्वरूप सदा, सतनाम सँभाल सुधाम सटेंगो । घन घोर घटा घट घाट गिरे, घटि घालत घूमर घेर घटेंगो ॥ १८ ॥

रस पाय सुधा यश गाय बुधा, मम लेखनि पै सुर वृक्षकी शाखा । मुखते यहि अमृत धार स्रवै, न मरे न परे भव जो सब चाखा ॥ न लगै कछु भूख पियूष पिये, न हिये कछु और रही अभिलाषा ॥ सब स्वारथको परमारथको, फल चार पदारथ हाथ न राखा ॥ १९ ॥

युग आदिहु मध्यमें अन्त विषै कलिहू कृतमें अरु द्वापर त्रेता । गुरु देव दयालहि चीन्हत जो, चरनों चित्त लाइके होत सचेता ॥ तिन सार लहा पुनि हार कहा, भवपार गये परिवार समेता । कर कोरिके जोटि प्रणाम तिन्हें, तिहुँ काल जो, जीवनको पुषि लेता ॥ २० ॥
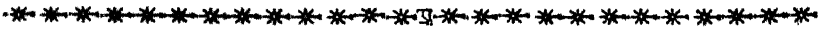
छन्द. मधुकर।

सर्कार बडा। सर्कार बडा। विश्वास करो हो आन खडा॥ वेपार कडा वेपार कडा। जो तौल सबै गहि ज्ञान धडा॥ जो डाल दियो सो डाल महा। कत्ताल समय पत्ताल गहा॥ जय जक्त पिता जगदीश यजो। कब्बीर कब्बीर कब्बीर भजो॥ १॥

साखी।

हरि गुरु पीर कबीर लख, अलख पुरुष रुख जोय।
हजरतको पहिचान जब, बजरत काल न कोय॥ १॥

इति श्रीमध्याह्न स्तुति॥

---

स्तोत्र।

(छोटी एकोत्तरी नित्य पाठकी)

सतगुरु शरणं पंकज चरणं मनवच कर्म सदा गहियं। जग मरण भयं निवारणं अखिलेश्वर अभय कहियं॥ भेषज नाम नित प्रति धामं महा काल दारुण गहियं। दीन-दयालं जन प्रतिपालं भवसागर तारण कहियं॥ १॥

भव भय भञ्जन अन्तक गंजन सन्त चकार मयंकं लहियं। अनहद नादं दहत विषादं सोहं हंसा निश्चलयं॥ अजपा जापं हरत सन्तापं आदि नाम जपिये अमियं। सहज समाधं हरत विषादं दयावन्तं सुकृत चहियं॥२॥

करुणा आदं नाम अनादं मोहित मुनि गोहित वियं। परमानन्दं सच्चिदानंदं सत्यलोक हढरोहनियं॥ दीनन-

बन्धुं करुणासिन्धुं अभयनाम जपिये अभयं । कलि-काल करालं फांसी व्यालं सत्यनाम निश्चय जपियं॥३॥

स्थिरं ज्ञानं बीजक ध्यानं अक्षयनाम निज अक्षरयं। नाम उजागरपति सुख सागर अक्षर राज नायक कहियं ॥ अपरं पारं नाम हैं सारं तासु भजन भौ निस्त-रियं । सुखसागर दाता जागृत त्राता अजर अमर सांचो लहियं ॥ ४ ॥

दुर्गजदानी परम अभिमानी धर्मराय गिर मर्दनियं । कलिकाल करालं फांसी व्यालं तासु भजन भौ निस्त-रियं ॥ अजर अविगत जान विश्रामं कृपा विशपं निःअंशनियं । जय जय स्वामी अंतर्यामी त्राहि त्राहि करुणानिलयं ॥ ५ ॥

सूक्ष्मं स्थूलं सम्बी मूलं अनइच्छा रूप सुजस भनियं । अशोच अशोपी अमृत पियूषी सर्व मयी अविनाशनियं । सुरति सनेही अविचर देही आदि ब्रह्म अचिंत कहियं । स्वतः प्रकाशं अमरनिवासं मोहपदीप सा मंडनियं ॥६॥

योग संतायन मुक्ति परायन जासु नाम अघखण्ड-नियं । सुनु धर्मदासं परम बिलासं सत्त कबीर सुमिरन कहियं ॥ इति ॥

गुरु शतकसागर नाम स्तोत्र ।

छन्द चौकड़ी । गुरुबोधनं—

दीनबन्धु करुणामय सागर । हंस उधारण तारण आगर ॥ दीना नाथ शरण सुखदाई । अभय तासु पद

गुरु समराई । बन्दीछोर बिरद अतिनामू हंस रूप प्रगट जग जासू ॥ अधम उधारण तारण स्वामी । प्रवर दिगार मालिक अनुगामी ॥ काल जालके काटनहारे । विरदलाज राखन पति प्यारे ॥ धीरज क्षमातत्त्व संयुक्ता । राम भूमिका वासक युक्ता ॥ चिन्ता रहित अचिन्त गुसांई । पारख रूप प्रकाशक साईं ॥ अखिल ब्रह्मांडके जाननहारे । कर्ता नाम प्रकट विस्तारे ॥ निःकामी माया परचंडा । ताको नाशक पूरन ब्रह्मण्डा ॥ मंगलरूप गुसाईं आपू । जगत विदित पूरण परतापू ॥ साहब निर्भय पद दातारा । कर्त्ता पुरुष सबनके पारा । महा-मोह दल नाशक स्वामी । हंसन नाह अपार अगामी ॥ आनंद सिंधु अहंतातीता । रामरूपमें परम पुनीता ॥ सत्य यथारथ अतिप्रिय साधू । मन मायाको मेटेउ व्याधू ॥ पूजनीय अनुमान विनाशक । सत्य सुकृत प्रकाश प्रकाशक ॥ नाम मुनीन्द्र सबन सुखदाई । बारम्बार कहौं गोहराई ॥ सत्यसिन्धु प्रभु दीनदयाला । नाशक अनुमय सहज कृपाला ॥ आप जीव निःकर्म निधाना ॥ शब्दी अजर अकाल सम जाना ॥ साधु-रूप पूरन परमाना । गरीब निवाज गहहु गुरु ज्ञाना ॥ साईं शब्द परखावन हारे ॥ तारण तरण विगत संभारे ॥ मन अनुमान गुमान विनाशक । मोद प्रत्यक्ष दान निज दासक ॥ वेद कुरान बुझाय यथारथ । मनकर्म बचन

साधुमें स्वारथ ॥ इति शत नाम गुरु गनि आर्या । सब वृत्तांत गुरु मुख जो बुझायी ॥ साधु गुरु कबीर गुसांई । बन्दीछोर नाम जपु गाई ॥

स्तोत्रं । ( कबीरं कृपालं )

( महंत मरजाद दास विरचित )

नमो आदि ब्रह्मं अरूपं अनामं । भई आप इच्छा रचे सर्वधामं ॥ न जानामि कोई करे कौन ख्यालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥ १ ॥ नहीं वेद ब्रह्मा नहीं विष्णु ईशं । नहीं पंचतत्वं नहीं ते अहीशं ॥ नहीं जोतरूपा न माया करालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥ २ ॥ नहीं देवदेवी न सूर्य प्रकाशं । नहीं चंदतारा नहीं कोइ आसं ॥ नतो स्वर्गभूलोक नाहीं पतालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥ ३ ॥ तहां आप इच्छा महाशब्द गाजं । विदहं स्वरूपं अनूपं बिराजं ॥ भई शब्दते सर्वलोके विशालं । नमोहंनमोहं कबीरंकृपालं ॥ ४ ॥ तहां सच्चिदानंद लोके प्रकाशं । सदा सर्वदा हंस करते विलासं ॥ तहां आपते आप प्रगटे सुकालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥ ५ ॥ भयो तजरूपं सबे विश्व-कांपो । कबीरं कबीरं सबै सृष्टि जापो ॥ सुनी दीनबानी भये हैं दयालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥ ६ ॥ तबै नाथ नररूप अवनी सिधारे । धरे कालके फेल तेते उबारे ॥ महादीन-दासे सु करते निहालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥ ७ ॥ करे-कौनतेरी प्रशंसा सुबानी । थके विष्णुब्रह्मा महेशो भवानी ॥

थके शेष गणनाथ वाणीविशालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥ ८ ॥ न काहू कहूँ नाथ तुव पार पायो । अनादे अगम्मे निगम्मे बतायो । तुही निर्गुणं सर्गुणं रूप-जालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥९॥ तुही कोटकोटान ब्रह्मांड कीन्हो । तुही सर्वको सर्वदा सुःखदीन्हो ॥ बसे सर्वमें सर्वरूपं दयालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥१०॥ जुदे सर्वतेहौ मिले सर्वजीवं । भ्रमैनाथ सर्वं लहे नाहिं सीवं ॥ भई जोग माया ग्रसो चित्तहालं । नमोहं नमोहं कवीरं० ॥ ११ ॥ सबे संतकारं सु तोही बतावैं । यही वेद ब्रह्मादि पटशास्त्र गावैं ॥ जपै नाम तेरो भजे जो त्रिकालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥ १२ ॥ लहे ज्ञान विज्ञान कैवल्यपूरं । महामोहमाया रहे ताहि दूरं ॥ लखी ताहि डरपे महाचित्त कालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं१३॥ तजो विषय विस्मादके दुःखभाई । भजोरे कवीरं सदा सुःखदाई ॥ विनय हों करों कवीरं धन्य पाप भालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥१४॥ चहो मोद जो नित्तचित्ते विचारं । कवीरं कवीरं कवीरं पुकारं ॥ गहो चरण रहो रत तजोभर्मजालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥१५॥ सदा-दासपै तो कृपा जो विचारं । गऊ बच्छ ये तो ह्रदय प्रीत-धारं ॥ तजे स्वामि ऐसो जु हैं निष्टभालं, नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥१६॥ कवीर अष्टक जो सुने औ सुनावे । पढेप्रेम युक्ता सो मुक्ता कहावे ॥ धरे संत प्रीते करे कंठमालं । नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं । बिनै दास मरयादकी चित्त

दीजे ॥१७॥ प्रभू दासको दास तो मोहिं कीजे ॥ सदा दीनके तो हरो दुःख जालं । नमोहं नमोहं कबीरं कृपालं ॥१८॥

कवीर सृष्टिकारणं अस्थूलसूक्ष्मधारणं, कबीरमंतरंजनं दारिद्रदोषभंजनं । कवीर ब्रह्मद्वयं अखंडव्यापतं स्वयं, प्रणम्य पादपंकजं कवीर सद्गुरुं अजं ॥ १ ॥ कवीरसत्तसुकृतंमुनीन्द्रकारुणायनं, कवीरयोगजीतयं अचिंत अज्ञअव्ययं ॥ कवीरज्ञानवर्धनं दयाल पालसज्जनं, प्रणम्य पादपंकजं कवीरसद्गुरु अजं ॥ २ ॥ कवीरसर्वलायकं सभक्तमुक्तिदायकं, कवीर त्वं भजामि हं विदेहपुरुष वं स्वहं । कवीर सत्त निश्चये आद्यंतमध्यहीनये, प्रणम्य पादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥ ३ ॥ कवीरचित्तकोमलं करोति हंसनिर्मलं, कवीर सुंदरं वरं अनाद त्वं अगोचरं । कवीर त्वं निरंतरं वदंति मंतनत्परं, प्रणम्यपाद पंकजं कवीरसद्गुरु अजं ॥ ४ ॥ कवीरतातमातरं स्वदेवमित्रभ्रातरं, कवीरयोगध्यानमेसमूलमंत्रप्रानमे । कवीरनाम सर्वदा जपंति ऋद्धिसिद्धिदा, प्रणम्यपादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥ ५ ॥ कवीरनामभेषजं विध्वंस कर्मरोगजं, कवीरशरनचोत्तमं नृदंदमोदसत्यमं ॥ कवीर त्वं भवागतं प्रबोधजीव आरतं, प्रणम्य पादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥६॥ कवीर यह प्रसीदयं सजातिलोकधीरयं, कवीररूप जाहशंत जन्ममरण नाशयेत् । कवीर अस्तुतिर्नितं पठेह श्रेयशोभितं, प्रणम्य पादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥ ७ ॥
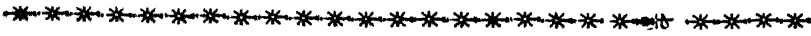
स्तोत्र ।

सानिर्विकारं गुरुरूप धारं, संसारपारं स्वजनप्रियस्त्वं ।
यथा घटाकाश तथा त्वमेकं, शब्दं सरूपं कवीरं नमामि ॥
कवीर नामं पतितं पुनीतं, युगे युगे स्वामि हरंत दुःखं ।
दातार मुक्ति पुरुषं पुराणं, चरणारविंदं सततं नमामि ॥
कवीरब्रह्मा तु विष्णुःशिवस्तु, कवीरत्वं देव देव्या समस्तु ।

नोट—यह स्तोत्र जैसा मिला है वैसाही डालदिया है. संस्कृतके पंडितोंको इसके शुद्धाशुद्धका विचार करना चाहिये. यदि कोई पंडित शुद्धकर भेज देंगे या यह सूचना देंगे कि, सर्वथा अशुद्धही है तो दूसरी आवृत्तिमें रखने न रखनेका विचार किया जायगा.

नत्वा तं पदपंकजं सद्गुरुंप्रनतपालंदयालं । आदिपुरुषं विदेहंसरूपं अमरलोकेसुधीशं ॥ भोभोसत्कवीरयोगजीतं मुनीन्द्रं, करुणामयंसर्वव्यापिकेवलं । शृणुतयां बंदीछोरं दयांकुरु, सत्यं चिदानन्द अखंड नामं । अद्वै अलै शब्द निर्वाणरूपं, निहंगमूलं सतसुकृतस्य ॥ अजाबनंसत्त-सिंधुः कृपालं, निस्तत्त्वनिष्काम अजाभिनाशी । निरक्षरंब्रह्मस्वयंप्रकाशी, ' अघखंडनंत्वंसजीवनंच ' पुरुषोत्तमंबंदीछोरंनमस्ते ॥ नमोस्तुते आदि निरक्षरस्यात्, त्वदक्षरं ब्रह्मक्षरस्य माया । समस्तमूलंच जानाति कोवा, भजामित्वंपाद पुरुषं बिदेही ॥ अंतर्बहिर्मन्यते काय-वाचं, ध्यानस्मृतं पाद मुखारविंदं । जे नत्वगृह्य चरणं-शरण्य, ते सत्यलोके हंसागमख्यात ॥ मायापरे पुर्ष त्वमेक सत्यं, अनाद चैतन्य स्वतंत्र नित्यं । सुखागरं सत्त-

मातापिता बंधु सखो धनाद्यं, कबीर त्वं पारमतं न शेषं ॥
प्रणम्य त्वं पाद भो धर्मदासं, वंकेज सहतेज चतुर्भुजेषु ।
भवाब्धि कैवर्त चतुर्गुरूणां, चित्कोमलं सर्व दुःखं हतंच ॥
चूडामणिनाम सुदर्शनंच, कुलपतेः प्रमोदं नन्कोल्ह नामं ।
अमोलमाचार्य सुरतः सनेही, तद्वंदिनं हक्क सुपाकनामं ॥
तुभ्योनमःप्रगटनामंच धीर्य, किमस्तुनिम्नामि परंपुराणं ।

—लोकं अनूपं, सिंहासनं पुष्प दीप निवासं ॥ असंख्य चंद्रार्कप्रकाश युक्तं, पुरुषैकरोमं नच भाव तुल्यं । षष्ठ-हदसह सूर्य हंस हप्रकाशं. करोमि ध्यानं चरणं नमस्ते ॥ शिक्षात्वयापुर्वबलवान माया. विछोह कुरुवांन पदाम्बु-जस्य । अपारसंसार भो दीनवंधू, जानामि सर्वानि मनं-तरेषु ॥ पुरुषं च एकं सुतह षोडशानां, भवंभिन्ननामं निराकार अद्या । शिवंशक्तिजायंत्रिधिहविष्णुरुद्रो, कियो-चारखानीसुजक्तंसमुद्रो ॥ कूर्म जलारंग विवेकज्ञानं. दया क्षमाशील निःकाम धीर्य । अचिंतमानंद सुभाव प्रेमं, संतोष सहजं निरंजनाद्या ॥ अग्रं च भृङ्गं मथह सुनिर्मोहं, सापंचमे योगजीतं अमीयं । मुक्तामनिनाम वेहदी विहंगं, कबीरत्वं सर्व बीजम् प्रनामं ॥ नमस्तुते आदिपुरुषं बिदेह, त्रैलोक बेदान सर्वोपरित्वं । अनंतब्रह्मांड त्वया-श्रितं च, निर्गुणोगुणस्यात् बिस्तारकारं ॥ नमोस्तुते स्वामि समर्थ रूपं, संतायनं सत्तनामं च ज्ञानि । अग्रं अचिंतं पुरुषं मुनींद्रं, करुणामयं योगजीतं अमीयं (?)

हंसो हितार्थाय वंदेगुरूणां, मे देहि मे देहि चरणं शरण्यं॥
नमो नमो उग्रनामं प्रसिद्धं, दयापाल दृष्टो समग्रं समुद्रो।
यथाभानुउदयत्तमोपुंजदहनं, तथास्तु प्रतापस्य चरणं प्र-
पद्ये ॥ नमोस्तुतेवंशबयालिसंच, चरणामृतंपानमहाप्रसादं।
गुरोःकृपायस्य सदा शुभस्य, शरणागतं मुक्त भवेतहंसा
ऋद्धिंचसिद्धिंचबुद्धिंच दाता, विवर्धनं भक्त त्वमेव त्राता।
येभक्ति कुर्वंन्तित्वत्पादपद्मे, प्रमुच्यतेतस्यदुःखस्यराशिः॥
सर्वाघदहनं च योजीव मुक्तो, इदं च स्तोत्रं नित्यं भणंते।
पुरुषस्य अंशं नमोहंसवंशं, प्रणम्यत्वं दास शीतलंशरण्यं॥
नमःस्तुतिंस्वामि जानामि कोवा, अकथं महत्त्वं परंपुराणं।
सदाकृपाहंसदितार्थं रूपं, मे देहि मे देहि चरणं शरण्यं॥

स्तोत्र ॥

नमामि कलातीतकामादिरहितं, वारिष्ठं बरीयान बिज्ञा-
न सहितं। ररंकाररमस्मी सदाकाल धन्यं, रमेतिकवीरं न
भेदानभिन्नम् ॥ स्वयं शाश्वतं केवलं ज्ञेयरूपं, निजानं-
दमूर्तिं अखंडं सरूपं। सुधाशब्दपुंजं चिदामर्कइंदुम्,
सदोदित्यनुदेश तेजारबिंदं ॥ गुणं निर्गुणं वर्णाश्रमं धर्म-
रहितं, स्थितप्रज्ञगुह्यं समे चित्यसततं। महदादिमेको
गुणातीतनित्यं, षष्ठंचतुष्ठादिशब्दादिव्यक्तम् ॥ पृथ्वी
तेजआकाशतोयं समीरं, निजाकिंचिदंतव्यापककवीरं।
अनामं अनादिं श्रुतियं वदंती, कवीरादिशब्दं गिरा न रव-
दंती ॥ उदयास्ततीतं परापारमीशं, तुरीयादिमेकं स्फुरंतं

अशेषं । दयाआदिदे धर्मसंपन्नज्ञानं: लोभादिरागादितम-
नाशभानं॥ अव्ययवलं निर्गुणं निर्विकारं, अनादिमव्यक्त
गगनोपकारं । पक्षंविपक्षं निजदेशकालं, नमामि कब्बीर
गिरासूत्रमालं ॥ इदं सर्वजगतं महा इंद्रजालं, मृगावार-
पश्यं प्रभो प्रग्निवालं । प्रभु वरदयालं जनानंदकारी,
पुरुषोत्तमोयं द्विजपादवारं ॥ महारौद्र घोरं नरंशान
वंशा, तोयं च बारं च वह्निनींद नीशा। मदो दम दमंतं मतंगं
च दीशा, मृगादी च पश्यं करीशब्दचीशा ॥ महाभयं च
सुलतान सजदापि जाई, कदमखाखकैवल्यखुदेतं खोदाई ।
मुरशिद मिहरबान साहब दिगारभ । गुनहगार बन्दा
तकसीर वारम् ॥ विनय वेश सततं च करुणा निधानं ।
सदा सत्य संगादि ध्येयंच ज्ञानम् ॥ रागस्थादि बन्दीछोरं
नमामि, सदानन्द रूपं कबीरं भजामि ॥ इति ॥

स्तोत्र ॥

भो कबीर हरन पीर धीर बुद्धि धारणं । सत्यनाम
परमधाम सर्वकरण कारणं ॥ हंसभूप परमरूप वेद विद्य
छेदक । न्याय नीत अति अजीत ज्ञानवृद्ध धारणं ॥
संतरक्ष साधुपक्ष भक्तमुक्त तारणं । गुणातीत भयाभीत
सर्वशिष्ट मंडनं ॥ निराधार सताधार परमपार पारणं ।
प्रणत पाल अतिदयाल कालजालटारणं । दयासिंधु
क्षिमाइंदु श्वेतबिंदु शोभितं । शब्दरूप अति अनूप अमी-
रूप सारणं । अकहनाम त्वं अकाममानहीन पालनं ।

पाप ताप दहनकृत्य तिहुं ताप नाशनं ॥ भवातीत जोग-जीत हंसरूप लक्षणं । सत्यरूप गुरुसरूप शरणागत तारणं ॥ प्रगट प्रतक्ष अक्षज्ञान रूप साक्षिनं । सत्यनाम आदिपुर्ष सर्वघट भासनं ॥

सद्गुरु पदरत प्रीत अति, सारं सार बिचार ।
सत्तनाम हंसा गहे, उतरे भौनिध पार ॥

कवीरचालीसा ।

ॐ नमो आदि ब्रह्माय शब्दे सरूपं । नमोजीवजावद्ध-मयविश्वरूपं॥ गहु शरणप्रानी जो सुखसिंधु चहु रे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर कहुरे ॥ १ ॥ का रूप करताय निरताय देखो। वा रूपविस्तार नहिं आन पेखो ॥ रा रूप रमताहि सब मांहिं रहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ २ ॥ का कृष्णरूपं सरूपं अरूपं । वा विष्णु धारी सबे देव भूपं ॥ रा रुद्रमताहि दमताहि गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ३ ॥ कहुरे का कुलकुला जो नहीं आन कोई । वा बेलबेली अकेली न दोई । रा रार मेटो समेटो न बहुरे, कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥४॥ का काहि कैवल्य करताहि आपे । वा बीजविस्तार हरे तीन तापे । रा रोमरोमाहि नर ताहि गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ५ ॥ का काल मरदम् सोहरदम जपोरे । वा बीज जेठरान तप ना तपोरे ॥ रा राह निरबाह गुरूबांह गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ६ ॥ का कहि डरपेजु अस्पे सिरूको । वा बोलबोले सो गहुरे

गुरूको ॥ रा राह एही सो देही न दहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥७॥ का कोउ तेरी सो महिमा पढे है । वा कइय रूपे सरूपे गढे है ॥ रा रमताहि सबमाहि अहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥८॥ जिहि पाय इच्छाय सतलोककीन्हा॥ उपजाय कंजाय तहां बासलीन्हा ॥ बहुभांति सुखधाम तहां रास रहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥९॥ तहां एक अंडाय तेजासुभयेऊ। करि लोकन्यारा सु त्रैलोक दयेऊ॥ तिहि आय जगजीव जम दाह दहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥१०॥ जी त्रास जम फांस करुना उचारे। हे पुरुष हे पुरुष बानी पुकारे ॥ सुनी श्रवण झनकार रुन्कार त्रहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ ११ ॥ नर रूपधर भूप गुरुरूप धाये । जिमि दाढ बाघेसे सुरभी छुडाये ॥ तिम जगत जम जीव गजग्राह गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥१२॥ दै सत्यशब्दे बिदारी बिथाहे। जुगन जुगन जीवकी बरनी कथाहे ॥ कलजुग जिवकाज दुखआप सहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥१३॥ हे ब्रह्म आपे सु लीला करी है, न तत्त्वपांचों न देही धरी है ॥ सुखदुःख न्यारे हैं कहने में अहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर कहुरे॥१४॥शाह सिकंदर सु अंदरमें लेखा । कैसा फकीरा य चहिये तो देखा ॥ कर बांध पग बांध बोरे सु दहु रे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर कहुरे ॥१५॥ टूटे है जंजीर बैठे हैं तीरा। बोला सो शाह यह सांचा फकीरा ॥ फिर बोल बोले कि गजमस्त अहुरे। क-

ब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥१६॥मातंग माते न जाते ढिगे हैं।
लख रूप सिंघें सु चिक्कार भगे हैं॥ देशाह अजमत स्वामी
सु बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर कहुरे ॥१७॥ देखो सबे
काम करता खिजूका। भर तोप गोला सु रोपा बिजूका॥
जिम देह गजतूल गोली न लहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०
॥ १८॥ है दीनबंधू दया देख अंदर। गन जौन जैसी सो
नाचत सु बंदर ॥ तिम आप शाह सिकंदर जो चहुरे।
कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥१९॥ फिर शाह बोला य गोला
न डरपे। तेगे अनेगे चलाया है गरपे॥ जलधार जिम
सार मझि आय बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२०॥
कहाँलो कहों और केतो कहानी। तजी स्वामि ऐसो
भुलानोरे प्रानी ॥ निष्काम निष्क्रोध निरलोभ बहुरे।
कब्बीर कब्बीर कब्बीर ॥२१॥ हाराहै शाह सो दैऽनेक
पीरा। नाहीं फकीरा यह है आप पीरा॥ जाना सो नर-
नाह सरनाह गहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥२२॥ खूने
अनेक जो शाहूने कीन्हा। जानाजी अपने सु चितमें न
दीन्हा॥ जिमतात सुतकेर औगुण न गहुरे। कब्बीर कब्बीर
कब्बीर०॥२३॥ डारे सु सिरपेच ऐंचे जु मूंछे। का लेत!
का लेत! बातें सो पूछे॥ है स्वामि सबकेर सब माहीं
बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥२४॥ फिर एक औरे सुनोरे
गुनोरे। तजि-स्वामि ऐसो न सीसे धुनोरे॥ कहीं है पुरी आप
कासीमें रहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥२५॥ गोपालपंडा

सो अटका बनायो । फूटाहै पटका सु चटका बुझायो ॥ काहू न ताको वो भेद लहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ २६ ॥ बोधे दोई दीन तहां कीन्ह ऐसो । समुझाय दरसाय जिहि जौन जैसो । तजि देह दोहु और हथियार गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२७॥ दोहु ओर कोधा सु जोधा बडे हैं । अपने जु अपने सु प्रनपे अडे हैं ॥ तक ताप नियरान यह बानगहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२८॥ देखो उघारी उहां है वो नाहीं। केहि काज लरते सु मरते वृथाही ॥ तब आय दोउ दीन देखा न अहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२९॥ स्थूल धर फूल अप्रान भारी । हे ब्रह्म ! हे पीर रटना पुकारी ॥ सुनी दीन बानी सु तिहि दर्श बहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥३०॥ पुनि एक ओरे सुना रे सुनाऊं। लखि स्वामि ऐसो सु दिन रैन मांऊं ॥ तत्वाव जीवा प्रण ऐसो गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ ३१ ॥ सूखो हतो एक लकडा पुरानो । हरिआय जिहि चरण चरनोद जानो ॥ गाडो है सो आय अगनाय बहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥३२॥ जुरि आय बहु भेष दृग देख लीजे। पानीसो छानी औ गुरुजान कीजे ॥...:साधू सो है सूर प्रण पूर गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ ३३ ॥ न्यारे सु न्यारे ले चरना पखारे । जिहिभांत जिहिरीन करप्रीत ढारे ॥ हरियान नाही सो उरदाह दुहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ ३४ ॥ तब जानजन प्रीत प्रण पूर आये ।
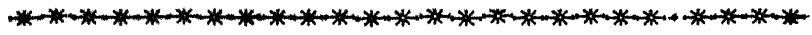
उर दाह लागी सो छिनमें बुझाये ॥ लै चरण चरनोद मनमोद बहुरे । कव्वी कव्वीर कव्वीर० ॥ ३५ ॥ डारो है कर प्रीति परतीति आयी । हरियान निरजीव सरजीव भायी॥दोऊ बन्धु निरद्वंद सरना सु गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ३६ ॥ सो टूट ना आय जी जगत केरे । जर भक्त अंकूर जमराज पेरे ॥ सो आप गुरु रूप निजरूप बहुरे ।कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ३७ ॥ चरना दइ मृत्यु समरत्थ्य केरो । करुनाक्षकी कोर फिर आप हेरो ॥ हरियान सो पान नर ताहि गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ३८ ॥ नर धाय पदकंज मनमंज कीजे । यह चैन वह चैन सुखबास लीजे ॥ दोऊ ओर कर पच्छ सो स्वच्छ गहुरे ।कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥३९॥ कही ताहिसुखलाल सुखलालबरने । मिटि जात जगतात-जन्माद मरने ॥ यह जान मन मान मरना सु गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर कहुरे ॥ ४० ॥

साखी ।

चालिस छंद प्रबंधये, बांचत डरपे काल ।<br>
साधन प्रेम बढावहीं, जम दूतन को साल ॥

इति कवीरचालीसा ।

---

अथ अरजी नामा ।

करतहों पुकार मेरो तुमही हो अधार, सुनु बेगही गोहार साहेब वार काहे लायेहो ॥ बडे बडे संकटमें

संतन सहाय कीन्हो, राखो प्रण जनको निज पैजहू बढायेहो ॥ जनको दुःख दुखित देख संतनको कलाप मेट, दहन दुखदाप सुखसागर देन आयेहो ॥ सेतुबंद बांधवेको रामचन्द्र बिकल भये, लिखे सनग्खा जलपाहन उतरायेहो । द्वापर पगुधारे निस्तारे नृपबधू क्याल, विषम विडारे जमफंद ते छोडायेहो ॥ पांडोंके कुमार बिकल यज्ञके प्रकार, बहे संसेकी धार हारि मीस भुमि लायेहो ॥ वाको यज्ञ सारो बिडारो दुखदारुणते, सकल भेष भूपन मिली जय जय उचरायहो ॥ कलउ तन धारे सब भेपनके काज सारे, प्रथमें पुरुषोत्तम पुरि देवल थपाये हो ॥ सागर हटाय भ्रम भौजल मिटाय, परगटे अनंत रूप चकित द्विज कराय हो ॥ बलख सिधाये छुड़ाये बहु भेपन दिढाइ, सुलतान भक्ति मारग लगाये हो ॥ सिंधु वोहित बचाये दाह पंडन को बुझाये, आये नगर काशी पुरवासी गुण गाये हो ॥ चर्चा भई भारे काजी पंडित पचिहारे, इस्मकूँ फेर शाह सिकन्दर समुझाये हो ॥ शेख तकी बार बार करुनी लेके रह्यो हार, कुदरत कमाल सुत मृतक जिवाये हो ॥ गोरखपुर मगहर बोधे दोऊ दीन परबोधे, बांधो गढ बघेला रानाखाना सचुपाये हो ॥ कौतुक दिखाये नदी आमी बहाये तहां, धाये नर नारी मन वांछित फल पाये हो ॥ जीवनके धनी हो गुनी प्रभुताके लायक,

जैसी जाकी आशा तैसेही ताको पुराये हौ ॥ बट बीज बोवाये खोजि हटाये, संशय मिटाये, जन ज्ञानी समुझाये हौ ॥ हेरि तको अपनी ओर कृपा करों चक्षुकोर, निरखत हौं तुम्हारी ओर काहे न धाये हौ ॥ हौं सपूत और कपूत दोउ लाज पिता औ जननीको, अपनो प्रण पक्ष जानि नाहीं बिलगाये हौ ॥ जाको जन बिकल कल कैसों ता साहब को, दासकी हँसाई ठकुराई हँसी जाय हौ ॥ बंदीछोर नाम तेरो बेग बंदीछोर मेरो, हौं तो अधीन तेरो चेरो कहा अनेरो ठहरायहौ ॥ तुम्हरो बल जान ठान जीवनको दीन्हो पान, सुनि लीजे बिनती मान धर्मनि गोहराये हौ ॥ तब प्रगटे सत्यगुरु कबीर धर्मनि चित्त धारो धीर, तन पुलकी चक्षु नीर धाय पाय लागेहौ ॥ निरखि बदन विकल बोले पग प्रकाश मन मुकुर डोले, हिय उमंग मन मुदित खोले हौ ॥ पग पैकर गयो छूट गुफाद्वार गयो टूट, जमराज घर भयो लूट लखि दुर्जन सब जागे हौ ॥ द्वारपाल कीन्हों शोर सबे धाये चहुँ ओर, करत कलाप हाय रोर पुत्र दुखित शाह भागेहौ ॥ दंपति कहे करजोर पुत्र इन मारा मोर, हमहू कस करब दौर पुत्र बिना अनुरागेहौ ॥ तब बोले सत्यनाम बैन शाह हृदय राखु चैन, तेरो सुत मिले ऐन तजु कुबुद्धि कागेहौ ॥ साजि आरती अनुमान शाहसुतको दीनो पान, तब बालक गोहरान

लोक सोभा अनुरागेहो॥ धर्मनि चित भये अनंद, मिटे सकल काल द्वंद, छोरेउ सतनाम बन्द, चूक बखशाये हो ॥ धर्मनि दासानुदास, सत्तनाम गह्यो विश्वास, सत्य कबीर आये हुलास प्रेम उमंग पागेहो ॥

इति श्री अर्जनामा गुरु धर्मदासजीका ।

---

अथ अर्जनामा ॥ २ ॥

गोस्वामी गरीबदासजीका ।

सतगुरु मिहरबान् कीजे सहाय । जल थल सकल संग मौले मलाय ॥ जलबुंदसे साज कीन्हा निशान । जठरा अग्नि बिच राखे अमान ॥ १ ॥ जठरा अग्नि, बिच राखे सही । अमृत अमि खीर प्याया मही ॥ नापैदसे पैद कीन्हा है पिण्ड । जामे भँवर अर्श कुर्सी है अंड ॥ २ ॥ स्वासा सहस धुनि शरीकत सरार । वह कौल विसरा जो कीन्हे करार ॥ कुर्बान कुर्बान कुर्बान जाँहू । भयकी दरिया बीच पकडी है बाँह ॥ ३ ॥ निश्चल निराकार निर्गुनं अनूप । स्थिर अनाहद सलाहद सरूप ॥ रहता है अर्श पे जो पर्दे अदेख । है बेचगूनं नमूनं अलेख ॥ ४ ॥ खालिक खलक बीच हाजिर हुजूर । बाजे सुहगम विहंगम जो तूर ॥ मौले मुरारी अटारी जलाल । ता बीच साहब सुबहाँ विशाल ॥ ५ ॥ खाने चरवादार बाँदीका जाम । लटका करूँ मेरी लीजो सलाम ॥ मौला साहब मेरी मटो न शंख । मोसे पतित तैं उधारे असंख ॥ ६ ॥

साहिब चिदानंद सतगुरु अलेख । मोसे पतित तैं उधारे अशेख ॥ अगह अगम दीप ऊँचा सुमेर । कैसे चढौं जु फिरंगी है फेर ॥ ७ ॥ तुही है तुही है तुही है सुभान । नापैदसे पैद कीन्हा जहान ॥ तुही है तुही है तुही है अखोज । नापैदसे पैद कीन्हा है लोक ॥ ८ ॥ तुही है तुही है तुही है हकीम । नापैदसे पैद कीन्हा मुकीम ॥ दुनिया दिवानी बिगानी बिकार । समझे न बूझे अनारी गवाँर ॥ ९ ॥ साहब दयावंत अविगत अपार । सोऽहं सोऽहं भँवर गुँजार ॥ दुनिया विलोमान होती हनोज । कीजो बे यारो परम हंस खोज ॥ १० ॥ फना है फना है फना है लगार । माटी मिलेगा जो करता सिगाँर ॥ हस्ती रु घोडे रु जोडा जहान । फना दीन दुनिया जमीं आसमान ॥ ११ ॥ राजा न रैयत रहेगा न कोय । रहेगा चिदानंद उपजा न सोय ॥ भाई भतीजे रु जोरू जमाल । देखैंगे लडके जो होगा हवाल ॥ १२ ॥ दादीरु फूफी बहिन रोवैंगी रूह । जम आनि पकड़ेगा जब दू बदूह ॥ मौसी रु मामा अलामा जहान । शुकदेको पूछो जो विरकत परवान ॥ १३ ॥ हजार बार तोबा जो खैंचे हदीस । कहो कौन मेटेगा जमकी कशीस ॥ काफिर करद बाँधि खाते बकरीद । जमकी तलब कैसे होगी रसीद ॥ १४ ॥ मुरगी रु बकरी ढँढा रु ढोर । खूनी भखैंहैं शरअ के जो चोर ॥ चाकर चरवाहा रु देखैं

खवास । जब आन बीतैंगी जमकी त्रास ॥ १५॥ करि-यो बे यारो कुछ चलनेका सूल । दरगह न पहुँचे नबी ओ रसूल ॥ मुहम्मद नबीकूं न पाया है राह । अर्श पंथ बाँका है अगमो अगाह ॥ १६ ॥ शरेकी शरीअत तजा है न दीन । उलटा अपूठा पग है जमीन ॥ दो जख बिहिश्तका जो देखा है अंत । जा बीच जमराय तोडे है दंत ॥ १७॥ दोजख बिहिश्तको देखा जो उनमा न । जा बिच जमराय काटे जुबान ॥ दोजख बिहिश्त हैं जो बाँकी उजाड । जा बिच जमराय तोडे है जाड ॥ १८॥ करियो बे यारो खजाना खरीद । संग ना चलै देखो दीद बरदीद ॥ संग ना चलेगा मुई रू सुमेर । काफर कुटन करते फेराहि घर ॥ १९ ॥ झूठा करम कूर काफिर कूँ जान । अहरनकी चोरी सुईका जु दान । मूजी मुजावर व पापी प्रेत । सुमका ससुरा न साँईसे हेत ॥ २० ॥ सद्गुरु चिदानन्द अविगत अपार । पाजी खानेजाद तुम्हरे अधार ॥ सतोगुनका सामा जमैयत जमाल । देखे तमाशः सब कुदरत कमाल ॥ २१ ॥ शीलके सरोवरमें नहाना हमेश । प्रेमपद पारसका दीजे उपदेश ॥ बुद्धिका बखतर औ पाखर प्रतीत । सोहं जपमाला भज अविगत अतीत ॥ २२ ॥ बुद्धिकी बन्दूक और दृढकी दे ढाल । चित्तका चक-मक भर दारू दर हाल ॥ पवनका पलीता व गोला गुल-

जार । दोदलकी खिडकीसे उतरोगे पार ॥ २३ ॥ ज्ञानकी गादी समाधी गलतान । दयाकी दुलीचेपे धरमका निशान ॥ द्वादश दल जीतनको तत्तकी तलवार । अर्ध उर्ध तकिय बिच दुर्जनको मार ॥ २४ ॥ नामकी नवकी कर मनकूं मलाह । चित्तका चंपु ले सुरतसे चलाह ॥ अर्शमें आसन सिंहासन समोय । उदित भानु चन्द्र ओ कला संख जोय ॥ २५ ॥ तत्त्वका तिलक करले गायत्री लाप । शून्य सिखर गढमें जप अजपा तु जाप ॥ अरसठका न्हाना त्रिवेणीके तीर । सर्वज्ञ साहब भज कायम कबीर ॥ २६ ॥ मानसरवर दरिया जहाँ चुगते हैं हंस । लगे गैबगोता जहाँ भेटे परमहंस ॥ अछय वृछ अर्श बीच फूला गुलजार । अर्थ धर्म काम मोक्ष पाये दीदार ॥ २७ ॥ पात पात विष्णु बैठे शिव विरंचि शेष । सतगुरु कुर्बान जाऊं ऐसे उपदेश ॥ सद्गुरु चिदानन्द माया न मोह । निर्गुन निरालम्ब जाना है तोह ॥ २८ ॥ कासे कहूं भेव परवरदिगार । जाना हम जाना है अविगत अपार ॥ अर्श बीच बैठा जो मारे गिलोल । देखो वे यारों कुछ नहिं तोल मोल ॥ २९ ॥ पीताम्बर पटमें हैं सूक्ष्म सा रूप । सुरति नाल चलती है छाया अनुरूप । सतगुरु आवाजी निवाजी लिलाट । सुनो अर्ज नामा पढनके जो घाट ॥ ३० ॥ ब्रह्म तेजताली हमाली हुजूर । अग्रपंथ पाया समाया जहूर ॥ सतगुरु शरी-

कत हकीकत जवाब । कहो कौन लेगा शरेमें हिसाब ॥ ३१ ॥ मौले मिहरबान मालिक मुरारि । हीरा हिरम्बर तुही वारपार ॥ सतगुरु दिगम्बर विश्वम्भर दयाल । पलमें निवाजे जो नजरे निहाल ॥ ३२ ॥ अगम ज्ञान लाम्पा खुलासा जो सैल । पपीली न पहुँचे जो लादे हैं बैल ॥ गरीबदास छाना है नीर खीर । कुर्बान कुर्बान कायम कबीर ॥ ३३ ॥

इति अर्जनामा गरीबदासजीकृत ।

अथ अर्ज नामा ॥ ३ ॥

सतगुरु मिहरबान कीजे करम । गाफिल खुदी दूर दिलका भरम ॥ १ ॥ बहुत रोज बीते मैं तेरी शरन । स्याही गई अब सफेदी बरन ॥ २ ॥ मुझे बहुत अंदेशा किया मैं जो फेल । बदी बहुत कीना औ नेकी निमेल ॥ ३ ॥ क्या मैं करूं संगी बुरे सोहबती । किया चाहते ये मुझे बे हुरमती ॥ ४ ॥ आजिज मैं ननहा दुसमन जबर । अर्जी करूं मैं मेरी लीजे खबर ॥ ५ ॥ सतोगुनकी चौकी व अपनी भगत । इतनी नाथ कीजे सो मेरी मदत ॥ ६ ॥ काया कोट माहिं मैं निशिदिन लड़ूँ । दुशमनकी लशकरसे नाहीं डरूं ॥ ७ ॥ नवं मोरचा खूब कायम करूं । देश में जमैयतसे लगाकर रहूँ ॥ ८ ॥ तुम्हारी तवज्जुहसे दुशमन डरे । हटा अपना माने न मुश्किल करे ॥ ९ ॥ निर्भय हरष होय संशय मिटे । सब रोज

दिल बीच रटना रटे ॥ १० ॥ अन्तःकरन प्रेम नैना पगे । जगत कर सब स्वाद फीका लगे ॥ ११ ॥ तुम्हारी विरह अग्निमें निशिदिन जरूँ । चौथी अवस्थाको हासिल करूँ ॥ १२ ॥ मेरी अरज होवे दरगह कबूल । दिलकी मुराद दाद कीजे रसूल ॥ १३ ॥ सदगार सकल सन्त रोशन जमीर । सेवक तलबदार दाया कबीर ॥ १४ ॥

इति अर्जनामा गरीबदासजीका ॥ ३ ॥

---

विनय अष्टपदी ।

प्रभुजी तुम बिनु कौन छुडावे ।

महा कठिन यम जाल फाँस है, तासो कौन बचावे॥१॥
नाना फाँस फँसाय जीवको, आपन रूप छिपावे ।
पंच कोश होय प्रगट ग्रासे, तेहिको कौन लखावे ॥ २ ॥
आपहि एक अनेक कहाई, त्रिविधि रूप बनावे ।
सन्निपात होय दुष्ट नष्ट सो, परलय अंत दिखावे ॥३॥
विषय विकार जगत् अरुझावे, जहाँ तहाँ भटकावे ।
योग ध्यान विगुर्चन भारी, ताहि सुरति अटकावे ॥४॥
आशा नाम नौका बैठावे, भौकी धार वहावे ।
तत्त्वमसि कहि ताहि डुबावे, अन्त कोइ नहि पावे ॥५॥
चारि मुक्ति योनि चौरासी, तेहि मिलि हेतु बढावे ।
नेम धर्म पूजा औ संयम, बहु विधि लाग लगावे ॥ ६ ॥
भेष अलेख करे को पावे, जीवहिं चैन न आवे ।

चारि वेद षट अष्टदशोले, शून्यहिं शून्य समावे ॥ ७ ॥
काल चक्र बसि उत्पति परलय, जीव दुमह दुख पावे ।
साहब दया कीन्ह परखाये, रामरहम गुण गावे ॥ ८ ॥

दशाष्टक स्तोत्र ।

नमामि सर्व संत जिनको मनाऊं । चरणरेणु जिनकी मैं शिरपर चढाऊं ॥ चरण रेणु प्रताप भ्रम नाश जालं । सुसंतन कृपाते मिले गुरु दयालं ॥ १ ॥

गुरु चरण शोभा सकेको वर्ण । तरंऽनन्त जीवा गुरु चर्ण शरणं ॥ गुरु चर्ण रेणु धरो मोर भालं । नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ २ ॥

रविचन्द्रऽनंतं गुरु अंगरूपं । गुरु देव देवं शिरो भूप भूपं ॥ कृतं पार भव सिन्धु यमधार तालं । नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ ३ ॥

तीर्थ सर्व गंगादि गुरु चर्ण माहीं । गुरु कामधेनु कल्पवृक्ष छांहीं ॥ भक्ति ज्ञान वैराग्य फलफूल डालं । नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ ४ ॥

गुरु चर्ण तोयं कटे पाप घोरं । लिये गुरु प्रसाद हटे यम्म जोरं ॥ मिटे ताप भवसिन्धु अमृतं रसालं । नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ ५ ॥

गुरु शम्भु ब्रह्मा गुरु विष्णु रूपं । गुरु आदि ब्रह्मं अनादी अनूपं ॥ गुरुकी कृपा होय व्यापे न कालं । नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ ६ ॥

सत्यलोकवासी गुरु सुखविलासी । सोपरगटे काशी निर्गुण उपासी ॥ नहीं गर्भ जन्म भये चन्द्रतालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ७ ॥

गुरु काशी सिधाये पंडित हराये । भक्ति भाव बोध पथ जगमें चलाये ॥ नरपति पाय लागे खुले अनेक भालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ८ ॥

बादशाह पीर परचा लेन काजे । जडे गुरु जंजीरा सो तीरा विराजे ॥ मृतक सुत जिलाये कमाली कमालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ९ ॥

पुरुषोत्तम पुरीमें जलत पण्डा बुझाये । सुने सिद्ध बन्धासो फन्दा छुडाये ॥ बलख ज्ञान करके चिताये नृपालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १० ॥

थीरकिये आसा सिन्धु नीरं हटाये । गुरु दरस दे ज्ञान संशय मिटाये ॥ वृक्ष बट प्रगट कर दिखाये विशालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ११ ॥

सुरनर मुनि नाग सबही गुरु मनावें । नारद मुनि शुकदेव गुरुहीको ध्यावें ॥ गुरु वोइ मित्र पिता रक्षपालं। नमो गुरु दयालं.कवीरं कृपालं ॥ १२ ॥

गुरु योग योग्यं तपस्यासुवरतं । सो भवं रोग भग्यं गुरु ध्यान धरतं ॥ गुरुकी कृपा होय व्यापे न कालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १३ ॥

गुरु लोक प्रकाशं शसि कोटि भानं । पुरुष रूप

क्रांति कहो को बखानं ॥ गुरु लोक पहुँचे हंस चालं। नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ १४ ॥

गुरु मोरि कर्म बहु हंस कीन्हें। सुनो तोहि जाने तबही शर्णलीन्हें। दीजे मोहि दीदार लेहु सँभालं। नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ १५ ॥

गुरुऽनन्त तारे सकेको बखानी। समाने चिंटी पेट सागरको पानी ॥ निगमनेति भाषे तो मैं कौन वालं। नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ १६ ॥

अहो गुरु मैं हूँ सदा दास तेरे। हृदय वास कीजे गुरु आन मेरे ॥ भक्ति ज्ञान दीजे सुनो प्रणतपालं । नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ १७ ॥

गुरुकी जो महिमा पढे नित्यनेमा। गुरु हैं कबीरं सो ताहिसो प्रेमा ॥ हरे पाप सब कहे शास्त्र मालं। नमो गुरु दयालं कबीरं कृपालं ॥ १८ ॥

स्तोत्रदशक।

नमस्कार बार बार सुन हमार सतगुरं। तिमिर हरण तमसु दलत शरन पाल सुरवरं ॥ प्रकाशवान् तेज भानु भक्त भूप सख्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ १ ॥

अमर लोक अरु अशोक सर्व दुःख नाशतं। तुव

१ लं माला-समूह अर्थात् सब शास्त्र।

निवास सुख विलास, बहु प्रकाश शास्वतं ॥ आदि पुरुष आप हैं, जहाँ अलेख अक्षतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ २ ॥

सर्व गुननिधान कृपासिन्धु नागरं। सो प्रगटे अवनि आय ज्ञान गम्य उजागरं ॥ अनंत रूप ऊपमा सके सो कौन अख्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ३ ॥

सर्वा जीत विद्या रीति सर्व देश जीतियं। तोहि निहार गयो हार गत हंकार वीतियं ॥ काशी वासी पंडित भये निराश झख्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण ०४

पादशाह दगा चाह गयन्द लाय गर्जनं। तुम दयाल हो विशाल सिंहनाद तर्जनं ॥ तोरि जञ्जीर भये तीर रहे सर्व थक्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ५

रंक राव बलख आदि सकल जीव तारनं। तजि अमीर हो फकीर ज्ञान गम्य धारनं ॥ भक्ति पक्ष शुद्ध लक्ष थके जो स्वाद थक्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ६ ॥

पतित बहु परे पाय शरण भक्त वत्सलं। जानि दास मेटि त्रास दीन बास अविचलं ॥ सदा सुख नाहिं दुःख हंस शब्द परसि छक्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ७ ॥

विरद रावरो संभारु हो दयाल दुखहरं। ले उबार विघ्न

टार अघ निवार सुख करं ॥ मेटो त्रास करत काल सब जिव भख्यतं ॥ युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं८

गंग बारि करे पुकार सुन हमार समरतं । त्राहि त्राहि शरण पाहि सखमाया अत्रतं ॥ अगाध महिमा साधु जाने मुनि देव यख्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ९ ॥

सांझ सवार नेम धार गुण तुम्हार उच्चरं । तुम कबीर हरण पीर करण तार भव परं ॥ मैं अज्ञान शरण आयो, राख शर्म सख्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ १० ॥

---

स्तोत्र ।

जय दीन दयाल कृपाल हितं । मद लोभ रु मोह सदा रहितं ॥ अनवद्य अखण्ड अनादि अजं । सुर सन्त कविंद्र मुनिन्द्र भजं ॥ १ ॥

वरियान वरेष्ट सु ब्रह्म वरं । छर अच्छर आतम पार-परं ॥ सत्यनाम कबीर गंभीर धयं । अणिमा महिमा लघिमा सिधयं । २ ॥

शिव सिद्ध सुरेश मुनीश अबं । मिलि माधव संत बंदे जो सबे ॥ गुण ज्ञान निधान विज्ञान अयं । निर्भय निर्मल सुःख ब्रह्म स्वयं ॥ ३ ॥

उद्याचल ऊपर सूर दसा । वचनामृत पोषन चन्द्र जसा ॥ अक्षपाल कृपाल हमेश वरं । हनुमन्त सुधारन काज परं ॥ ४ ॥

सनकादिक ज्ञान जैसे गहिरे। सर्व लोकमें नारद ज्यों बिहरे। सर्व योगिन गोरख धीर यती। सत्य धारणसो हरिचन्द सती ॥ ५ ॥

गिरजापति नित ज्यों ध्यान धरं। अचलं गिरि सिंधु समं समरं ॥ शुकदेव जैसे गुरु ज्ञान गनं। सब दासन पार परं समनं ॥ ६ ॥

वचनं किरनं जन कञ्ज खिले। तव नाम लिये सत्त-लोक मिले। वर्णाश्रम गायन वेद धुनी। सबके पर आप बिराज मुनी ॥ ८ ॥

नव खण्ड विहंडन काल कले। ब्रह्मण्ड इकीस जु आप गले ॥ भय टारन हारसो आप अजै। तेहि कारन आतम राम भजै ॥ ८ ॥

उस कारण आप सदा अजयं। जग काम रु क्रोध सबै तजयं ॥ गज राज प्रचंड मतंग गजा। जहँ केहरि सावक आप सजा ॥ ९ ॥

असुरं मद मत्सर जो गजिहैं। तुव सींह अवाज सुनी भजिहैं ॥ मन लोलुपता बहु दादुर जे। तेहि भक्षक पन्नग हो अँकजे ॥ १० ॥

अब दीन दयाल कबीर गुरू। नित्य दीजिये प्रेम सो प्रीति करूं ॥ गुरु सागर नागर आप असे। परकाशक सो जग सूर जसे ॥ ११ ॥

गत रोग न दोष न मान मदं। अचलं अमलं सुखदं

शुभदं । सिद्ध साधक हार रहे सगरे । पक्ष धुन्ध धरे चकरार गरे ॥ १२ ॥

सुलतान नरेश अडे चरचा । बहुवार अनेक दिये परचा ॥ त्रिय रूप भये हग देखतही । उघरचो हियरा गुरु पेखतही ॥ १३ ॥

नृप साधु गये जग जानत हैं । गुरु ब्रह्म कबीरहि मानत हैं ॥ पवनं नभ तेज पृथ्वी रु जलं । सब खंडित आप सदा अचलं ॥ १४ ॥

शब्दादिक पंच विषय सबही । तेहि व्यापत नाहिं कदी कबही ॥ शरणागत पालक आप सुनो । अदमों पद दायन मान गुनो ॥ १५ ॥

महिमा बहु एक रसाय समं । वरणों कहि बात गुनी बचनं ॥ कविता शुद्ध आप कृपा चरणं । जन आतमराम सो है शरणं ॥ १६ ॥

स्तोत्र सप्तक ।

जै जै भवतारण भर्म निवारण हंस उबारण तव शरणं । शब्द विलासी अकह अविनाशी सत्य प्रकाशी भय हरणं ॥ १ ॥

निर्मल दयालं सार कृपालं आप विशालं अभय करणं । सतचित भावन रूप अजावन आतम पावन तिहि शरणं ॥ २ ॥

यह जिव अविनाशी ब्रह्म विलासी जगत प्रकाशी

आप भये। आपहिं कीन्हा मति नहिं चीन्हा पंचमभिन्न सुरूप लगे ॥ ३ ॥

गुण आकर संगे चित्त मन रंगे चाल विहंगे भूल परे। विन रूप गुसांई अदल चलाई शून्य बसाई न्यार भये ॥४

ते पहुचारी निगम पुकारी गाफिल धारी ख्वार परे। निराधार चह चलना वाके शरना भारजु धरनाभार परे५॥

विनु निज पहिचाने हठ मत ठाने श्वान समाने मुदित फिरे। गुरु दीनो मति धीरा पायो चित थीरा आशा रतधीरा अमर सरे ॥ ६ ॥

जो हंस पद न्यारा है निर्धारा अपरम्पारा आप रहे ॥ सोई दीजे स्वामी निरभय नामी अनुभव गामी सुरतलहे७

स्तोत्र अष्टक।

ओं कबीर हरण पीर धीर बुद्धि धारणं।
सत्य नाम परम धाम सर्व कर्न कारणं॥ १ ॥
हंस रूप परम भूप वेद विद्या सारनं।
ज्ञान नीति अति अजीत ज्ञान बुद्धि धारणं॥ २ ॥
सन्त रक्ष साधु पक्ष भक्ति मुक्ति तारनं।
गुणातीत भयाभीत सर्व सृष्टि पारणं ॥ ३ ॥
निराधार सत्याधार परम पार पारणं।
प्रणतपाल अति दयाल काल जाल टारणं ॥ ४ ॥
दया सिन्धु क्षमा इन्दु श्वेत बिन्दु शोभितं।
शब्द रूप अति अनूप अमितरूप सारणं॥ ५ ॥

अकह नाम त्वं अकाम मान हीन पालनं ।
पाप ताप दहन कृत तिहुँ ताप नाशनं ॥ ६ ॥
भावअतीत योगजीत हंसरूप कारणं ।
सत्यरूप गुरु स्वरूप शरणआगत तारणं ॥ ७ ॥
प्रगट प्रत्यक्ष अक्ष ज्ञानरूप साखिनं ।
सत्यनाम आदि पुरुष सर्वघट भाखिनं ॥ ८ ॥

साखी ।

सद्‌गुरु पर जु प्रीति अति, सारासार विचार ।
सत्यनाम हंसा गहे, उतरे भवनिधि पार ॥

---

स्तोत्र । छन्द शिखरणी ।

विभुं सिन्धुं बुद्धेर्विमलवचमां शान्ति वरदं ।
निजानंदं स्वामिन् भवभयहरं स्वस्तिपददम् ॥
कबीरज्ञानां भू सुखदचरणं भ्रांतिदलनं ।
समीडेऽजं त्वाहं बहुजडमतिस्सर्वसुखदम् ॥ १ ॥
प्रभुं निघ्नं शोकं कठिनजनुपो मोहवहता ।
जनानां मृत्योश्च प्रचुरसुगुणं नष्टकुहकम् ॥
मनोमायादूरं सरल हृदयं भक्तिसुलभं ।
सतां कर्तुं प्रीतिं धृतनरतनुं भूर्ति सदयम् ॥ २ ॥
स्वयं सिन्धुं नित्यं कलहरहितं मानप्रददं ।
प्रभो द्वे कंजाक्षं जलजवदनं वारिजपदम् ॥
कृपासिन्धुं श्रीदं मुनिवरवरं निर्मलबलं ।
सदा शिष्यैरग्रेजंगति बहुभिः सेवित इह ॥ ३ ॥

बुधैर्वन्द्यानिन्द्यं कुजनपुरुषैश्चातिविमुखं ।
गुरुं गर्भातीतं प्रतियुगभवं भक्तिसरसि ॥
महामोहं हर्तृं रविमिव भवे धर्मवपुषां ।
बहुग्रन्थैस्तीव्रैः परिहुतमनस्संशयरिपुम् ॥ ४ ॥
त्रयस्तापं हन्तृं विधुमिव जनानां च सबलं ।
निरीहं गंभीरं सदयपुरुषस्थानपरमम् ॥
शुभासक्त्या युक्तं प्रकटयशसे सत्यसुकृतं ।
महातेजःपुंजं प्रसुलभपदं शुद्धमनसैः ॥ ५ ॥
चिदाकारं शुद्धं सुचिसुचिदुखपारखविभो ।
अजाकाशं शांतं किल भवजयं निर्भयपदम् ॥
महाकायं धीरं कलुषदहनं चारुवचनं ।
मनश्चितायास्तत्तव पदगतानां च सुमते ॥ ६ ॥
परं शुद्धं धीरं स्वचितमहतां पादरजसो ।
मुद्रामेत्यं रम्यां परमपदवीलब्धिकरणम् ॥
मुनीन्द्र त्वं त्रातुं चरण सुगतान् वन्द्यसकलं ।
समर्थः सर्वज्ञो भवजलनिधेर्हीनमनसः ॥ ७ ॥
स्तुतिर्दिव्या साध्वी भवतु महतां चित्तरमणी ।
सदेयं वा प्रीत्यै कलुषदहिनी मोहदमनी ॥
कवीराख्या वाताहतकलिमलानाहिविमला ।
खलूत्कृष्टा रम्या जनहितकरी कण्ठमधुरा ॥ ८ ॥

नाराच छन्द ।

नमामि सर्व लायकं, सुभक्ति मुक्ति दायकं ।
गुरुजी सन्त भायकं, सुशुद्ध ज्ञान नायकं ॥ १ ॥

निःकाम आप सुन्दरं, अकाम नाम मन्दरं ।
विभुं प्रकाश भासिकं, कामादि दुःखनाशिकं ॥ २ ॥
भय प्रवाह वारणं, अपार पार तारणं ।
पुरान वेद गावितं, सो पार नाहिं पावितं ॥ ३ ॥
सुज्ञान सन्त रूपही, परख प्रकाश भूपही ।
मुनीश ईश ईशही, हटाये काल पीसही ॥ ४ ॥
यही हमार वीनती, करिये आप गीनती ।
हुआ बहान जालही, कराल कालकालही ॥ ५ ॥
जन्मादि दुःखत अति, अधीर मोर चित्तही ।
सह्यो न जात मोहिसो, हिये जू पीर होतही ॥ ६ ॥
न कोई मोह जक्त मैं, न आश धन्यत कही ।
सुआश एक आपके, न दूसरी सहाइके ॥ ७ ॥
तूंहि सुजान आपही, मिटाइ देहु तापही ।
प्रभुजी तोहि छाडिके, दुजा न कोइ साथही ॥ ८ ॥
गुरुं कबीर रंजनं, नमामि दुःख भंजनं ।
करो सनाथ मोह आजु, शिशु तुम्हार जानिके ॥९॥

स्तोत्र ।

कृपालं चित्त नंदनं, अज्ञान भेद खंडनं ।
सुश्रेष्ठ धर्म मण्डनं, दुःखीन जीव देखिके ॥ १ ॥
अपार ज्ञान सागरं, प्रशांत चित्त आगरं ।
न राग द्वेष पासही, सुमुक्ति रूप राजही ॥ २ ॥
अनाथसा विचारिके, कृपा जु मोहि कीजियं ।
अज्ञान मोह दाहिके, चरण वास दीजिये ॥ ३ ॥

अनन्त बन्धनों कारि, संयुक्त मोर चित्तही ।
छूटयो न जात मोहिसो, अनेक दुःख देतही ॥ ४ ॥
महा भवाब्धि धारमें, विषै तरङ्ग मध्यमें ।
झकोरि मोरि चित्तको, बूडत हौं ना शुद्धमें ॥ ५ ॥
महान मोह वेगमें, बहत हों जू नाथ मैं ।
स्वशिष्य बाल जानिकै, जू बाँह झालि लीजिये॥६॥
आपै जू ऐसी कीजिये, सो पीर मोरि छीजिये ।
ना आप त्यागि और मैं, शरण चाहि लीजिये ॥७॥
दयाल गुरु आपही, प्रखाय भवतापही ।
करो निहाल पालि, तव दास दीन जनही ॥ ८ ॥

---

स्तोत्र—छन्द तोटक ।

परमं सदयं भवताप हरं, जन पीन महासुख वृन्द ददं।शरणागत पारंपार प्रभुं, गुरुदेवमजं विमलं च भजे १

मुनि केशव वेश गणेशनुतं, सुरराज विराज नरींद्रनुतं । सनकादि फणीन्द्र कवीन्द्रनुतं, गुरुदेवमजं विमलं० ॥२॥

करुणामय रूपमनंत कलं, पदपंकजरेणु विशुद्धं जनं। अघ पुंज हरं मति शुद्ध करं, गुरुदेवमजं विमलं० ३

श्रुति सार विचार इति विभुकं, हरिचन्द्रकला संभा विपुलं । कविवंदितपादसरोजयुगं, गुरुदेवमजं० ॥ ४ ॥

निज रूप मदं फल मोक्ष ददं, सरलं वरदं सुख सिंधु तरं । कलि काल विकार सो मोह दहं, गुरुदेवमजं०॥५॥

यमभीत हरं पर हेत तनुं, कलु माफ हकं रिपु काम दहं। शिव जीव विचार मनो विरतं, गुरुदेव मजं त्रिमलं० ६

मद मोह विभंजन सूरपटं, द्विपदं द्विभुजं नररूप शुद्धं। विदुषाह्लद मोदकरं वचसा, गुरुदेवमजं त्रिमलं० ॥ ७ ॥

सम दृष्टि सुवाद मनो विरतं, भ्रम जालकवाद त्रिनकं मतिं। शुभदं पद सार कबीर वरं, गुरुदेव मजं त्रिमलं ॥८॥

स्तोत्र अष्टक।

विभुं व्यापकं शुद्ध धीरं गंभीरं। सदाशिवरूपं प्रकासी निरीहं ॥ अमोल्यं अडोल्यं अशोच्यं प्रणामि जपेहं भजेहं कबीरं नमामि ॥ १

निर्हीसो निराकार निर्वाण रूपं। चिदाकाशमाकाश साक्षिस्वरूपं ॥ अभेद्यं अछेद्यं धनी अंत्रजामि। जपेऽहं भजेऽहं कबीरं नमामि ॥ २ ॥

त्रिषयपंच कोशादिव्यापे न तेही। मदादिक माहि नहिं शोक जेही ॥ ऐसा सु प्रिये गुरु हे मोहि स्वामी ॥ जपेऽहं भजेहं कबीरं नमामि ॥ ३ ॥

स्वयं सिंधुराशि क्षमाके प्रकाशी। दयानिधिनामी सबे सुख रासी ॥ सोई धर्मदास गोसाईं सुपासी। जपेऽहं भजेऽहं कबीरं नमामि ॥ ४ ॥

त्रि कालदर्शी घटोज्ञान वर्शी। बडानन्दकर्शी मिटा-वर्त तर्शी ॥ अखण्डं निर्द्वन्द्वं अय पद्गामी। जपेऽहं भजेऽहं कबीरं नमामि ॥ ५ ॥

पचंक्लेश इहितं षटो उर्मिदहितं । वेदोक्तं कुवानी परखी सर्व वहितं ॥ यथा सु उतोत्कृष्टहे गुरुनामी । जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ६ ॥

निजानन्द आपे देखी काल कांपे । माया नहीं व्यापे जपे मूनि जापे ॥ सोई शरणोंमें टरुं ठाम ठामी । जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ७ ॥

अजन्मं अमरणं सदा सिन्धुकर्णं । भवाब्धि महाकाल ताहि सुतर्णं ॥ सोई तवदास धरे ध्यान सामी । जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ८ ॥

श्लोक ।

इदं स्तोत्रं पठेन्नित्यं श्रद्धाभावेन संस्थितम् ।
यस्य सर्वफलं भुक्त्वा तस्य मुक्तिर्न संशयः ॥
नमोस्तु ते कब्बीर साधु वृंद नमोस्तु ते ।
गोस्वामी धर्मदासं च वन्दनं मे पुनः पुनः ॥

---

अथ कवीरसाम्राज्यस्तोत्र ।

सत्यकवीराय नमः ।

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ।

नित्यानन्दसदात्मबोलरंसितं चन्द्रावदातप्रभम्
लोकातीतमहोदयं निजजनोद्धारावतारोदयम् ॥
सारासारविवेकपारग इति पारीक्षको यो मत-
स्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥ १ ॥
प्रत्यक्षा प्रमितिर्न चागतिगती, चत्वारि भूतानि च

संधिभावगतं च कार्य्यमपरो देहान्न जीवस्तु हि ॥
चार्वाकैर्विरुतं परीक्षयति यो भावं स्वभावात्पृथक् ।
तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीराय भो ॥ २ ॥
जैनः प्राह जयं न जीवमितरं पुण्यञ्च पापं तथा
द्रव्यं पुद्गलकञ्च कालमितियत्स्वातन्त्र्यता कर्मणि ॥
तद्युक्त्यानुभवैः परीक्षयति यः किं तन्त्रता कर्म्मण-
स्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीराय भो ॥ ३ ॥
गोरक्षप्रमुखा वदन्ति वपुषः श्वासस्य संशोधने-
नात्मानन्दकरोऽत्र भैरवनये सिद्धिः समुज्जृम्भते ॥
तच्चेदं नटवत्परीक्षयति यः कृत्या किमिष्टायुषा
तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीराय भो ॥ ४ ॥
शून्याज्जातमशून्यमेतदमुतः शून्यं भविष्यज्जग-
द्बाह्याभ्यन्तरभेदतः परिणता चिद्रामता भासते ॥ इत्थं
बौद्धरुतं परीक्षयति यः शून्यस्य साक्षी सकस्तस्मै सद्गु०५

योगी प्राह यमादिभिर्बहुविधैः स्याञ्चेतसो निग्रहस्ते-
नात्मा प्रभुतामुपैति मणितो लोहः सुवर्णायते ॥ इत्युक्तं
किमृतं परीक्षयति यो जातः क्वचित्तामियात्तस्मै स०॥६॥

स्वप्नान्धे इव कर्तृभोक्तृकलिते नित्ये अजाजे रते
मृत्युःकुम्भवदेव सा परिणता मुक्तस्तया यः करी॥ इत्युक्तं
क्रियते परीक्षयति यः का भोक्तृकर्त्रोर्भिदा तस्मै स० ॥ ७॥
मीमांसासु मिते श्रुतिर्विधिगतासूयाकृतिः स्यान्मुदे
आत्मज्ञानगुणेश्वरे च परमं देवाश्च मन्त्रात्मकाः ॥

इत्युक्तं प्रकटं परीक्षयति यः कर्त्ता कथञ्चित्क्रिया
स्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीरायभो ॥८॥
आत्मानौ च विभू स्वतन्त्रपरतन्त्राभ्यां भिदा संक्षया-
द्भूम्यादेः परमाणवः कृतनयाः कार्यस्य चारंभकाः ॥
काणादेः कथितं परीक्षयति यः कालश्च किं वा विभो-
स्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरुनमः श्रीमत्कबीरायभो ॥ ९ ॥
प्रामाण्यादिवसुद्वयार्थविदुषोऽमी संजगौ गौतमं दुःख
ध्वंसकृतं दृशादृशमथो ज्ञानोपमर्दादिति ॥ तत्किं
तथ्यमिदं परीक्षयति यो दुःखात्यये किं सुखं तस्मै स० १०
सत्यं ब्रह्म न चान्यदस्ति किमपि ब्रह्मैव चाहं ममा-
ज्ञानाद्भाति ह्यनादितो जगदिदं रज्जौ भुजङ्गाकृति ॥
इत्थं दण्डिमतं परीक्षयति यः खण्डिव्यतण्डात्मकं
तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरुनमः श्रीमत्कबीरायभो ॥ ११ ॥
नानामूर्तिधरः पृथक्पृथगयं पूज्यश्च पौराणिकाः
प्राहुः शंकरशांकरीशिवसुतः सूर्यो हरिर्वा विधिः ॥
इत्याख्यानभरं परीक्षयति यः कोऽसावमूर्तिः पर-
स्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीराय भो ॥१२॥
शाक्तानां भणितं सुखात्मकघनं शक्तिः स्वधर्मात्मिका
तस्या व्यक्तिरिहास्ति कौलकृतयश्चीर्णैः प्रकारैः स्वतः ॥
एतत्कामकृतं परीक्षयति यो लोकस्य वाचाजुषं-
स्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीराय भोः॥१३॥
यच्चोक्तं यवनैर्जगज्जनिकरोऽल्लेयास्ति सोऽल्ला परः

जीवा नित्यनवाः क्रियाफलजुषः कस्मिंश्चिदेवान्तरे ॥
तच्च नेकतय परीक्षयति यः स्वात्मानबोधोदया-
त्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कबीराय भो ॥ १४ ॥
द्वैताद्वैतविभेदकनिराकारप्रकारादिवल्लस्यालभ्यप्रका-
श्यकाशप्रतिभूष्येवापशेषातिगः ॥ यः कश्चिद्ददता
भवेद्धि विरतौ साम्राज्यलक्ष्म्या स्थिरस्तस्मै स० ॥ १५ ॥

एकोऽनेकसुशक्तिरादिपुरुषो जन्मावसानोर्जितं बीजं
विश्वतरोर्विभुर्विहरतां यः पक्षिणां सन्मुदे ॥ भव्यं स्वानु-
भवं फलव्यतिरितं यस्मै समभ्यर्पयत्तस्मै स० ॥ १६ ॥

अमरपुरनिवासी पूरुषो योगदक्षश्चरणकमलमस्या-
भ्यंचतामार्य्यवर्य्यः ॥ य इह गुरुकबीरं तस्य साम्राज्य-
कीर्तिस्तवमखिलकलाढ्यं पूर्णमभ्यस्य पूर्णः ॥ १७ ॥

इति कबीरसाम्राज्यस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

---

गुरुस्तुतिः

ध्यानात्मानं परमात्मानं दानं ध्यानं योगं ज्ञानम् ॥
तीर्थस्नानं इष्टध्यानं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ १ ॥
प्राणा देहं गेहं राज्यं स्वर्गं भोग्यं मोक्षं भक्तिम् ॥
पुत्रं पित्र्यं वित्तकलत्रं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ २ ॥
वानप्रस्थं पतिविधिधर्मं पारमहंस्यं भिक्षोश्चरितम् ॥
साधोः सेवा भूसुरभक्ति न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ ३ ॥
विष्णोर्भक्ति पूजनचरितं वैष्णवसेवा मातरि भक्तिम् ॥
विष्णोः पित्रोः सेवनयोग्यं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ ४ ॥

प्रत्याहारं चेन्द्रियजयतां प्राणायामं न्यासविधानम् ॥
इष्टः पूजा जपतपभक्ति न गुरोऽधिकं न गुरोरधिकम् ५॥
मत्स्यः कूर्मः श्रीवाराहो नरहरिरूपो वामनदेवः ॥
त्रिभुवनसारो महिमापारो न गुरोरधिको न गुरोरधिकः६
श्रीभृगुदेवः श्रीरघुनाथः श्रीयदुनाथो बौद्धसुकल्की ॥
अवतारा दश वेदे प्रोक्ता न गुरोऽधिका न गुरोरधिकाः७
गंगा काशी काञ्ची द्वारा मायाऽयोध्याऽवन्ती मथुरा ॥
यमुना रेवापुष्करतीर्थं न गुरोऽधिकं न गुरोरधिकम्॥८॥
गोकुलगमनं गोपुरमथनं श्रीवृन्दावनमधुपुरटनम् ॥
एतत् सर्वं सुमहत्पुण्यं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ९॥
तुलसीसेवा हरिहरभक्तिर्गङ्गासागरसंगममुक्तिः ॥
किमपरमधिकं रामे भक्तिर्न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् १०
काली दुर्गा भुवना बगला श्रीमातंगी धूमा तारा ।
छिन्ना त्रिपुरा भैरवि कमला न गुरोऽधिका न गुरोरधिकाः॥
एतत् स्तोत्रं पठति च नित्यं मोक्षज्ञानं सोप्यतिधन्यः ॥
ब्रह्माण्डांतर्यद्देवं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ १२ ॥

स्तोत्र सवैया ।

भूतल काल काल मन पेखि, अभय पद ब्रह्म लखावत कोतो । देखि प्रपंच अनेक लुभावन, जो फिरतो मन ठावन टोतो ॥ आप धनी निर्धार कियो, इतने दिन नाहक ऊसर जोतो । को भवसिन्धु उबारत जीवन, जो कलिनाम कबीर न होतो ॥ १ ॥

बूडत जो अघ कुंडनमें, यम फन्दन फूँक समूह बधोतो। कर्म अकर्मनके गजरा शिर, पायतलोधर आन खगोतो ॥ ठावन ठान कुठान सबै तजि, कंचन कांच उठाय लयोतो। को भवसिन्धु उबारत जीवन, जो कलि नाम कबीर न हो तो ॥ २ ॥

जो प्रभु स्वर्ग पताल करे सब, जो प्रभु लोक अखंडित छाये ॥ जो प्रभु खान रचे पग चार, वही प्रभु वेद सुवेद बनाये ॥ सो सर्वज्ञ कहे सुखलाल, रमो सबही नर भेद न पाये। सो प्रभु नाम कबीर कहाये, उबारन जीवनको जग आये ॥ ३ ॥

दै निज नाम लखाय हिये, सत शब्द गहे सत लोक सिधाये। जीवनको अपनो करिके, गुरु ज्ञान अखंडि, तसो दरसाये ॥ हे प्रभु ब्रह्म अपार अगोचर, को बरने गुरुके गुन पाये। सो प्रभु नाम कबीर कहाये, उबारन जीवनको जगआये ॥ ४ ॥

कवित्त--काशी है सुवश नगर प्रभुको निवास जहां, सन्तन शिरताज त्रास देखो दृग मीरको। भारी अघ पुंजे कँपे देखि दयाको सिन्धु, बरने को लोक शोभा गुनके गँभीरको ॥ कहे सुखलाल शुक्ल शोभित प्रकाश जाको, ताहिको निशान शुक्ल अति सुख हीरको। कहे सुने शम्भु गौरा जागे नर नाहिं बौरा, भागे यम जौरा चौरा परसे कबीरको ॥ ५ ॥

सद्गुरु ब्रह्म कबीरको, जप मन बारम्बार ।
बिना तपे तोहि फल मिले, परै न यमकी धार ॥

अथ कबीरपञ्चाशिकाप्रारम्भ ।

( कबीरभानुप्रकाश पृ० २८० )

तोटक छन्द ।

जय सत्य कबीर कृपाल घनं । दल दुष्ट हनं पय पुष्ट जनं । योगजीत अतीत पुनीत प्रभु । बपु धारन कारण तारन भू ॥ १ ॥

सत सुकृत सत्य स्वरूप सदा । जन ध्यावत पावत मुक्तिपदा ॥ मुक्तामनि ते जिव जो जुगता । मृत्यु लोक ससोक न भव जुगता ॥ २ ॥

हम दीन दुखी किमि त्याग चहौं । करुणामय हो करुणामय हो ॥ करुणा तन धारि करी करुणा । करुणामय धौं करुणा वरुणा ॥ ३ ॥

सुर सिद्ध बखानत खान दया । जिव देखि अनाथ सनाथ किया ॥ जेहि ज्वाल जला यम भक्ष करे । बिनु देव दयाल को रक्ष करे ॥ ४ ॥

यम जालिम जीवन जेर कियो । सुधि लेन दयानिधि देर कियो ॥ सुख लेश न केत क्लेश भरे । जगदीस परे जगदीस परे ॥ ५ ॥

जिव काल करालके ज्वाल दहे । तर ऊपर भूपर

धाय गहे ॥ हम जानि दयाल जो काल भजे । गुण ग्राम प्रनाम सो नाम तजे ॥ ६ ॥

घटवाह मलाह सलाह कहो । फिरि कैलकी गैलकी सैल न हो ॥ वह सिंह समान शिकार करे । पिय पीव विना कहँ जीव तरे ॥ ७ ॥

हरि केहरि देहरि पार करो । सरकार बडे बर कार करो ॥ भय भंजन रंजन दासनको । खल डाटन काटन कामनको ॥ ८ ॥

भवसागर झागर काल बली । तहँ जीवकी उक्ति न युक्ति चली ॥ नहिं एक उपाय बनाय बनी । करु काज गरीब निवाजगनी ॥ ९ ॥

प्रभु पेखतही जिव शीतल है । क्षणमें भवसिन्धुको पार लहै ॥ करुणा दृग कोटिन काल हने । खुर सिन्धु कणा गिरि बिन्दु बने ॥ १० ॥

मति धीर कबीर कबीर भजो । हित नाम प्रिया वित वाम तजो ॥ तपखान किरसान शिलादहके । जरते जिव प्रभु मारगते वहके ॥ ११ ॥

तलफै तपतीख सभी तलमें । विनु नायक नेह नहीं पलमें ॥ निज शिष्ट निवाज सुदृष्टि लखो । शिरपै समरत्थ जो हत्थ रखो ॥ १२ ॥

नर बाल बिहाल निहाल मही । दुख द्वन्द्व दवारि न देह वही ॥ मन भौं मद मोचन लोचन है । जन सेवक भक्षक पोचन है ॥ १३ ॥

सब लायक नायक हंसनके । जिव मोषक पोषक अंशनके ॥ सर्वोपर साहब शीवनके । तुम जीवन नाथ हो जीवनके ॥ १४ ॥

प्रभुके भ्रमते जमते बजरे । यहि तप्त शिलापर आनि जरे ॥ तपिया जपिता न पिया परखे । विधि वेदल वेद-नते हरखे ॥ १५ ॥

जिव काज चले शिरताज सभी । महराज मया सुख साज लभी ॥ भव भार हनो करतार धनी । धरम राय न पाय दुखाय दुनी ॥ १६ ॥

करि नेह विदेह जो देह धृतम् । शब्दामृत जीव भये कृतकृत्तम् ॥ मृत नायक सायक तीख हते । पद प्रीति प्रतीति सहीत गते ॥ १७ ॥

परमारथि भारथि नाथ सदा । गहते लहते भव पाथ हदा ॥ जन जाय समाय अमान पदा । शुभ ज्ञान कुरान नसान मदा ॥ १८ ॥

मुनि मानस हंस मुनीन्द्र मता । समता लह पाय पता रमता ॥ तव नाम सुधा वसुधा जो पिया । न क्षुधा युगही युग जीव जिया ॥ १९ ॥

दुखिया हित आय महासुखिया । लखि पीवहि जीव भये सुखिया ॥ कहुँ और न दौर तो पौर परे । शरनी परनी करनी न खरे ॥ २० ॥

पद तीर कवीर शरीर जिते । लहसार भै ब्रह्म

अकार तिते ॥ जग योनि जहान महान महा । गुरु देवको भेव न तेब लहा ॥ २१ ॥

कमलापति क्यों कमलापति हो । पद कीरति कीरति कीरति हो ॥ मृगव्याध समाध अगाध गहे । कलयान सिरान न ध्यान लहे ॥ २२ ॥

गुण गाय फणीगणराय निति । नहिं पावन पार अपार गति ॥ लवलीन प्रवीण नवीन जसे । कलि पंक कलंक निशंक नसे ॥ २३ ॥

विषया बन राय भुलाय परे । दुख दीन विनाकर कौन धरे । कह कौन संदेश अंदेश बडा । मग भूलि गई ठग आनि अडा ॥ २४ ॥

जिन शोककी झोकमें भूलि रहा । करता भरता भ्रम भूलि रहा ॥ तिहुँलोक विलोक लगी अगिनी । यह जामिनि है यमकी भगिनी ॥ २५ ॥

तक सूरको नूर जहूर हुआ । ममता रजनी दुख दूर हुआ ॥ सगरे पमरे झगरे बगरे । पशुज्ञान गहे डगरे डगरे ॥ २६ ॥

बक चाल सभी न मराल मती । बिन एकरती व न एक रती ॥ जब गर्भमें अर्भक अर्ज करे । तिहि गाढते साहब गाढि धरे ॥ २७ ॥

इत औरहि ढालको ख्याल खिला । बुद्धि स्तत परे यहि तत्त शिला ॥ वह औघ अचेत सुषोपति सो । कह पाय पराग बनारसको ॥ २८ ॥

निज धामते राम पयान लिया। जगती भगती पद पाय पिया॥ कितहो झलकी मनसा मलकी। अरु अन्ध अचेतकी भय टलकी॥ २९॥

ठुगदानि कि बानि बिहानि इते। मकरन्दको फन्दको जीव जिते॥ मृत सृंगन बिंग बिहार करे। कर्म रेख विशेष न देखपरे॥ ३०॥

नहिं क्रोधित अन्धकी गन्ध मिले॥ जीव दंडक भंडक भीर हिले॥ गुरु पीर कवीर उजागर है। भव बोहित सो हित सागर है॥ ३१॥

जग बन्दन भर्म निकन्दन है। शरनी शत लोककी सन्दन है॥ सतनाम सनेह सुधाम चढे। कलिमां कलिमां कलिमांह पढे॥ ३२॥

गुण ग्राम निकाम कवीर कवी। यश गावत पावत कोटि छबी॥ धुरधर्मधरा धर धारक हो। भवतारक पंथ प्रचारक हो॥ ३३॥

नर पामर धामर बुद्धि बिना। यम ज्योति पतंगके ढंग बना॥ जग व्याधि रु आधि असाध करे। चरणाम्बुज चूरण चारु हरे॥ ३४॥

भवतारण हेत निकेत कृपा। पयगाम लियो सुखधाम नृपा॥ सुर भूप स्वरूप अनूप छिपा। रवि सोम जो कोटिक रोम दिपा॥ ३५॥

गुरु गुप्त कियो धुरको बरनन। भव भौंर भया बन

तौ शरनन ॥ हमरे उसके पुरवास करौ । निजु दासनको अब दास करो ॥ ३६ ॥

बिन कन्तके भवजल जन्त बने । दुःख द्वन्दक फन्दक फन्द फने ॥ जग नाहकी बाँह निबाह लहै । भ्रम भाँडर में भंडर भीर बहै ॥ ३७ ॥

दनुजात बलात निपात भये । रणधीर वहीर गहीर गये ॥ जिहि जानत जाम सुधार धरे । मुनिके मन मंदिरमें बिहरे ॥ ३८ ॥

मन मत्त मतंग मते यहि गौं । तुहि रावत होय महावत जौं । चित चञ्चर वञ्चर वञ्चक है । सम मञ्च विरञ्च न रञ्चक है ॥ ३९ ॥

यम वंकट संकट जीव महा । दमको गमको रमको न रहा ॥ भव सेत अभै पद देत तुही । कलि कण्टक कोटिन कर्म दही ॥ ४० ॥

चढि सेत पपीलन ढील । तहां लंघदीन पयो निधि पीन महा । न वज्रको हाड न चाड रहो । मन वाक शरीर कबीर कहो ॥ ४१ ॥

गुरु नेह नदी सन दीस जिन्हें । सुख वास न आस है त्रास तिन्हें ॥ तुम दीनन बन्धु न पीननके । नित पास हो दास अधीननके ॥ ४२ ॥

मद मान भला न हिये अर भौ । नर नागर सागर भौ गरभौ ॥ करि पाप कलाप करे दुनिया । विष बीज अभी फलको लुनिया ॥ ४३ ॥

हरिमें हरिमें हमही बरषे । लहरी भव भक्ति हरी
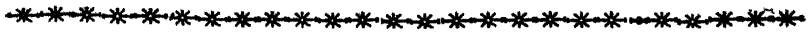
हरषे ॥ दुख दारिद वारिद ज्ञान घनं । निर्भय कारि भय समनं समनं ॥ ४४ ॥

जिव कालके जाल परे बपुरे । सतनाम निकाम सदा जपुरे ॥ गुरु भक्ति निनार किनार गहे । चतुरे लुतरे भवधार बहे ॥ ४५ ॥

भ्रम भूलते भूलते जात भगे । बुध बालन डालन पातलगे ॥ मन वाचक जाचक हौं दरको । तुम छोड अजोड सभी घरको ॥ ४६ ॥

प्रभु नामको दान निदान चहौं । कोइ आस रु बास विकासन हो ॥ तरनी बरनी तव नाम जहाँ । गहिये लहिये विश्राम तहाँ ॥ ४७ ॥

रसना रस रास रसै रस सो । जस तो वस और सबै कस सो ॥ चढ नाम रथा गइ बीत बिथा । रसना रस ना विन कीर्ति कथा ॥ ४८ ॥

पद पंकज प्यार जो छूटि गया । अरु सूत सनेहको टूटि गया ॥ ठग ठाकुर आनिके जूटिगया । जग जीवनकी बुधि दूटिगया ॥ ४९ ॥

रहगीर मते बडी भीर भई । सतपंथ बिहाय कुपंथ लई ॥ गुरु भक्ति विना भव भूलि पडे । शरणागत पाहि कबीर हरे ॥ ५० ॥

दोहा—यह कबीरपंचाशिका, पढि सप्रीति परतीति ।
परम पुरुष पद पावई, काल कष्टको जीति ॥

इति श्रीकबीरभानुप्रकाशांतर्गत श्रीकबीरपंचाशिका स्तुतिः समाप्ता ।

गुरु स्तोत्र ॥

गुरु दीनदयालं जन-प्रतिपालं, मेट विशालं जमजालं संतन रछपालं वचन रसालं, अतिहि कृपालं अतिकालं॥ अति दुस्तर चालं पंथ करालं, अलमस्त इवालं सुख सालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ १ ॥ गुरु ब्रह्मस्वरूपं पुरुष अनूपं, सदा समीपं दिव्य सरूपं। इच्छा जब कीन्हा जग पग दीन्हा, भगत प्रवीना संतनभूपं ॥ वैराग निधाना ज्ञान विज्ञाना, धुन ध्यान अनूपं उर मालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ २ ॥ चारों युग आये संत कहाये, भर्म मिटाये जन केरा। जे जन मन भाये ते अपनाये, सत शब्द दृढाये जल बेरा॥ न पाखंड पूजा देव न दूजा, दिल आतम हेरा लख लालं। जयपरमानंदं पुरुष अखंडं आनंदकंदं जनपालं ॥ ३ ॥ बंकेज बचाये सहतेजी पाये, चतुरभुज गाये मतभारी। धरमन बुद्ध आगर सबगुण सागर, पंथ उजागर कुलतारी ॥ द्वादश शिष्य सारे पंथ पियारे, सत शब्द बिचारे सुन आलं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं आनंदकंदं जनपालं ॥ ४ ॥ गनिका संग लीना ता रंग भीना, करमें कर दीना हंसि डारी। काशी पुर बासी भये उदासी, देख खबासी मति ख्वारी ॥ सब बोल अबोला राव अडोला, पगपर जल डारी बुझि झालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ ५ ॥

पातशाह रिसाना अहमक कुँफराना, बेपीर हराना कर डारी। पग डार जंजीरा बोरे नीरा, गंगा तीरा फंद टारी॥ गयंद झुकाये सिंह दिखाये, बासंद्र-जाली चंद तालं। जय परमानंदं पुरुप अखंडं, आनंद कंदं जनपालं॥ ६॥ सिकंदर पीरा भयो अधीरा, कह गुरु पीरा बल जाऊँ। तेहि नाम तमाली कही कमाली, मन भई खुश्याली सुधमानू॥ कमाल जिवाये मुरदार उठाये, सतशब्द सुनाये हद ख्यालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं॥ ७॥ जग जीवन तारे रतन उबारे, जग पग धारे हितकारी। युग युग चलि आये हंस चेताये, भरम मिटाये गुरु चारी॥ अलमस्त दिवाना सब जग जाना, दे परवाना लिख भालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं॥ ८॥ शिव राम अयाना सब जग जाना, नहीं सयाना लघुबारं। मैं अपत अपावन गुरु पद पावन, अघपुंज जरावन कर छारं॥ बड धीरज दीना निर्भय कीना, जग किंकर मारं कर ढालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनन्दकंदं जनपालं॥ ९॥ ( कवीर महिमासे )

साखी।

गुरु अष्टककूं नित जपै, धरे निरन्तर ध्यान।
भक्ति शरीरहि ऊपजै, ज्ञान विज्ञानसूं जान॥

॥ गुरु अष्टक ॥

सत सुकृतं सीरं सत कबीरं, अमर शरीरं स्थीरं। अजरम चितं रहे निचितं, त्रिगुण अतीतं गुरु पीरं ॥ अवगत अविकारी विषम विडारी, भ्रमतमहारी परकाशी। जय जय अविनाशी प्रेम प्रकाशी, काशीवासी सुखराशी ॥ १ ॥ माया गो पारं तजत असारं, धारत सारं संसारं। करुणा सुखसागर सब गुण आगर, भेष उजागर जगतारं ॥ सत नाम सनेहा पुरुष विदेहा, करुणागेहा दुखनाशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी काशीवासी सुखराशी ॥ २ ॥ उद बुद जग मूलं माया फूलं, सब जग भूलं त्रिय झूलं। संसारं पारं दुख सुख धारं, सदा असारं जग भूलं ॥ सत गुरु सुख सिन्धो दीननबन्धो, माया द्वन्दु तजनाशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी, काशी-वासी सुखराशी ॥ ३ ॥ तन मन गत जीतं बचन अभीतं, माया अतीतं गत क्रोधं। ममता मद लोभं रहित अछोभं, समता शोभं शुध बोधं ॥ गुरु दीन दयाला जन प्रतिपाला, मेट विशाला चतुराशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी, काशीवासी सुखराशी ॥ ४ ॥ अनवद्य अखंडं सब जग मंडं, अतिहि प्रचंडं गुरु धरमं। सब वर्णाश्रमं भूले भ्रमं, पावन मरमं कर सरमं ॥ थक चारू वेदं पाव न भेदं, जोति अछेदं तमनाशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी, काशी-वासी

सुखराशी ॥ ५ चारों जुगआये हंस चेताये, शब्द लखाये सुखदाई। मधुबन पग धारे रतन उबारे, चौका सारे गति पाई ॥ धरमनि मन भाये वचन सुहाये, पंथ चलाये तज फांसी। जय जय अविनाशी प्रेम प्रकाशी, काशी-वासी सुखरासी ॥ ६ ॥ सुलतान चपेरू डार जंजीरुं गंगातीरुं भय पारं। महमंत गयंदा मारत अंघा, गर्जंत सिंघा मद डारं ॥ पग पर जल डारे पण्ड उबारे, अचरज सारे नृप काशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी काशीवासी सुखराशी ॥ ७ ॥ मगहर स्थाना भई घमसाना, विरसिंघ पठाना दल साजी। सत गुरु अलसाना चादर ताना, दोऊ दीन भुलाना मनराजी ॥ घटका दोय भेहा खोलो तेहा, भूल विदेहा सुख राशी। जय जय अविनाशी प्रेम प्रकाशी, काशीवासी सुखराशी ॥ ८ ॥ आत्म सुख धामं लिख शिवरामं, सदा अरामं गुरु पासं। अघपुंज नसावन गुरु पद पावन, परसत जावन सत्य भासं ॥ विनती सुनि लीजै दरसन दीजै, अपना कीजै अघनाशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी, काशीवासी सुखराशी ॥ ९ ॥ ( कवीरमहिमासे )

---

## "कबीर" नाम माहात्म्य।

श्रीपार्वत्युवाच।

कवित्त—अहो महादेव तीन अक्षरको एक नाम, कहे हैं कबीर तासो कहो यह को है जू। देव उपदेव है कि लोक लोकपाल है कि, यतिकि तपी कि सिद्ध साधक लो सोहै जू॥ योगी योगध्यानी है कि व्रत है कि संयम है, यंत्र है कि मंत्र किधों तंत्र मन मोहैजू। किधों धाम क्षेत्र कोई तीरथको नाम हैः कहो कृपाकरि जग योग यज्ञ जो है जू?॥ १॥

श्रीमहादेव उवाच।

कहत ककार जासो केवल सो ब्रह्म जानो, मानो वी-शेष बीज अक्षर जगतको। जेते ब्रह्माण्ड पिण्ड आदि अंत-मध्य तहां सो, रमत रकार झनकार है भगतिको। भावी भूत भवितव्य तीनों अक्षरते न्यारो, नाही सो यही बात प्रमाण वेदमतिको॥ ताहिते कहत है कबीर तीन अंकजोरी, मोरि मोरि औरही कहैंगे ते अगतिको॥ १॥

जलमें कबीर और थलमें कबीर पांच, तत्वमें कबीर तीन गुणमें कबीर है। विद्यमान जानो यों विशेष अव-

शेष नाहीं, रहै कैसे निशि दिन ज्यों दृगन नीर है ॥ स्थावर औ जंगमके जेते जीव जगत मांझ, रह्यो भर-पूर जैसे जडित जंजीर है । ताही ते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि२ औरही लगावे सो अधीर है ॥ २ ॥

कहत ककार सुखसागर दातारपति, ध्यानके साजन गुरुज्ञान बीज बानी है । रटत रकार सो रहित आदि अंत मध्य, कहत चाहत जाकी अकथ कहानी है ॥ गुंगेके सो गुड जोई खाय सोई स्वाद जानै, चुप चाप ह्वैके कछु बात न बखानी है । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि और ही कहैंगे ते अज्ञानी है ॥ ३ ॥

थलचर अस्थावर जंगम जगतमांझ, कवीर सबके कायाको अधीश है । विविध विलास हास ममता जपाय यश, छाजत अकाश छाया दृगकी कशीस है ॥ राजत रकार रति राग अनुराग सदा, जगत विभाग केहु तनक न ईश है । ताहि ते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि और भाषे सो तो मूढ विस्वेबीस है ॥ ४ ॥

कंज जैसो फूल्यो इंगला पिंगलाके मांझ पैठि, अज है पवन सो आकाशं वाही अंक है । विविध प्रकार ज्ञानी गावत ज्ञान वाही, ध्यानी धरे ध्यान भृकुटिके बीच बंक है ॥ वाही रंकार झनकार करे आठो याम, रसना रटेते नाम कटत कलंक है । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि औरही कहे ते यमशंक है ॥ ५ ॥

कहत पियूषरस सागर अधीश वाही, सुखकी लहरि लहरत आठो याम है। वाहि जो विहारी विहरत बंक-नाल बीच, तृष्णा मोह जाल ताको अमि निज नाम है॥ भूआदि लोक पाल-अतल आदि अंक जेते, तेते मांझ रक्षक प्रदक्षक सो धाम है। ताहि ते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि २ और कहै ताने जान्यो नहिं राम है॥ ६॥

करुणाको सुख सागर अगाध राजे गाजे, दिन रात बाजे दुंदुभी अपार है। विविध प्रकार जो विचारे त्रकुटीके मांझ, मनसा विस्तार ताने दीने कर्तार है॥ वाही जो रकार योग रण संग्राम सदा, कामादिक बैरिनको करत प्रहार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि २ और भाषे ताने जान्यो नहि सार है॥ ७॥

कक्का कामनाको देनहारो है जगत मांझ, बब्बा त्यों विहंग सब इन्द्री जीतवार है। रमत रकार चारों वेदनमें धार धार, बार बार कही सही वाही कर्तार है॥ नाद और बिंदक कशिश है जोरि देखो, मोरि देखो घोटिक की घाटी घनसार है। ताही ते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि और ही लगावे सो गँवार है॥ ८॥

ककार कंदर्प जासो वीर्य्य कहत कोऊ, उलटि चढावे जो बढावे यों कपालमें। विविधि विकासके विषधनते
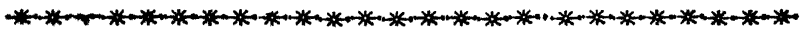
विमुख है, डारे अघधोय खोय लोकलाज हालमें ॥ दया युक्त हैके त्यों निरोगी देह पायके, वही रत्न डर लेके रहे रटत हवालमें । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरी मोरी कहैं सो तो जाय जम जालमें ॥ ९ ॥

हीरा मोती पन्ना और अक्षर निहारो सर्व, वही जो ककार चिंता मणिको अकार है । विविध प्रकार महिमाके जिते जाल, तिन्हे जानत मराल संत वही जो बकार है । रचित रकार सो जटित सब लोक ओक, बाकी कलानि मांझ रटत रकार है । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरी मोरी कहे सूझे नहिं वार पार है ॥ १० ॥

वेद निज अंकनको नाम गुने अंक जेते, तेते और वृक्ष यों ककार कल्प तरु है । विविध विशेष भाव साक्षी है जगत मांहि, अगर रस चोआ माँझ जानियो अतरु है ॥ राजित रकार सब अक्षर रहित जैसे, विद्युत प्रकारके अकाश भास भरु है । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरी मोरी कहै सोतो महानीच नरु है ॥ ११ ॥

घटत घटावत बढावत बढत विधु, क कलासेती त्योंही जगत व्यवहार यो । विवेक संबन्धिनि सुबुद्धि जासो कहैं कवि, रसके लहरिकी समूह सो रकारयो ॥ दशो द्वार घेरे पुनि छहुद्वार हेरे धनी, पैठि बीच टेरे निरेदूर दरबार यो । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, तोरि तिनुका सो जग होय भवमार यों ॥ १२ ॥

कर्म उद्धार जो सो ककार थिर चरमांझ, विधिहुकी मुक्ति सो पंथपार प्रमाणयो । रसनाके मूलमें पियूष सिन्धुराजे गाजे, निशिदिन बाजे विनु तार करता यो ॥ इन्द्री दशो घेरि दशो द्वार एकजोरि कारि, त्रिकुटिके मांझ हेरि गंगाजीको धार यो । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि दे स्वास तब दिसै सिर्जनहार यो॥ १३॥

कलनकी कीर्ति सो कलेश वलि खंडवेको, विपत्ति बिहंडवेको कहत प्रचंड यो । विविध विलास सत्य लोक आस पास मंद, हांसके प्रकाश कोटि भास करै दण्ड यो॥ सोइ रसवंत रस रूपको स्वरूप जानै,तानै जबसो कठिन कगालको दण्ड यो । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरी, और और कहै ताको सुकृत बिहंड यो ॥ १४ ॥

करुणाको सागर उजागर है काया माझ, क्यों न धसि देखो अवरेखो दशो द्वार वो । विविध भावको विशारद है आठो याम, तजि धनधाम जो विचारै वार पार वो ॥ रमत रमावत रहत दिन रैनि ऐसे, जैसे परमान हैं झरोखाके मझार वो । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि और कहै सो तो भूल्यो निज सार वो ॥ १५॥

कमल ते भयो जे प्रकाशी विधि नाम जाको, जगत् विलासी तासु कहत कर्तार वो । विविध प्रकारके विकार दुख नाशवेकूं, कामादिक फांसवेकूं करवत कुहाड वो ॥ तीनो गुण राजत रकार माझ माया बाद,

अति अहलाद रस सागर को सार वो। ताहिते कहत हैं कवीर यह तीन अंक जोरि, मोरि और भाषै सो तो छिति पर भार वो ॥ १६ ॥

कहत ककार कलिमल निस्तार जो पैसो, कामादिक भार छार छार करि डारै जो। दुर्जनके वृक्ष भव कानन विदारवे कूं, ब्रह्महि विचारवेकूं क्षमा उर धारै जो ॥ रसना उचारै सत भाव पण पारे हानि, बांधि विदारै काम क्रोधको मेटि डारै जो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, हंसि मुख मोरि लोक लाज को विडारै जो ॥ १७ ॥

कक्का कैवर्त भवसागर उतारे पार, विविधि प्रकार अघ जारन वकार तो। केशवको केवल जो नाम सो रकार जाने सो, ताहीको बखानै भव होय वार पार तो। दान व्रत तीरथ विधान योग यज्ञ जेते, ते ते कह्यो श्रुति मांझि नामहीको लार तो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरी मोरी और कहै बूडे कारी धार तो ॥ १८ ॥

कहत करार सो कमलको अकार उर, सबही को प्यारो है उजारो ज्ञानी जनको ॥ कहत विचित्र इतिहास किते वेद मांझ; रसकी स्मृति सो सुख दाता तन मनको ॥ ताहि जो न गावे सुख पावे कहो कौन भांति, मुक्तिको धावे नहिं पावे सो एक कनको। ताहि ते

कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मेरे ऐसेही कहे सो तो सांचे पनको ॥ १९ ॥

कुमोद प्रगट ह्वैके सुमिरत विधि जाहि, सोइ ककार निरधार उर धारिये । सुखके समुद्र माझ अचल विहार जाको, चल न चित्त ताको अचंचल निहारिये ॥ रहस्य बताऊं एक राजत अमरलोक, लखिके रकार तन मन धन वारिये । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, कोरि सो अक्षर निछावर करि डारिये ॥ २० ॥

कक्काको कल्याणको निधान खानि जानि लीजे, ववाते विहंगको स्वरूप उर ध्याइये । रहत निरन्तर निर्मल व्याधि खंडनको, विपत्ति विहंडनेको रंकार गाइये ॥ सोई निज साधु जाने निगम अगाध मतो, याहीको लखेते थिरताको पद पाइये । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि और कहे ताको मुख न दिखाइये ॥ २१ ॥

कलिके जे कर्म तिन्हें करत विनाश कवि, छविको कमल फूले हियेमें किलक्यो है। विमल सो निर्मल मन है ऐसे जैसे, मीन वारिधिमें चन्दको बलक्यो है । राग अरु द्वेष सो विशोक है रकार मांझ, लखि सो तेज पुंज हृदयमें झलक्यो है । ताहिते कहत है कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि तोरि तास बंक नालमें खिलक्यो है २२

करुणा समुद्र माझ कहत जहाज जासो, सोई है

ककार चढि क्यों न पार हूजिये। सत्त संधानहीको नाम विस्तार उरधारि, विविधि प्रकार धाय धाय वही धूजिये॥ रचित रकार गुण नामको प्रमाण सब, ह्वै के कोकिला सजग बन मांझ कूजिये। ताहिते कहत है कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि चित डोरि तोरि जग पशु मूजिये॥ २३॥

कहत कंक मणि सब पावन जासों कवि, ताहि वा ककारमें अनेक छवि छहरै। विगरे प्रपंच वाहि उपमा की आंचनि सो, फिर ढरि आवै रूपसागरकी लहरै। रसको समूह समाधान है रकार यह, विहर विहर बक नालहि में थहरै। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि और कहे परे भव माझ भहरै॥ २४॥

वही गुणवान जासो कहत गुणीलै लोग, वही योग भोग जासों कहत ककार है। वही है विजय जग जुरै जेत बारनिमें, वही पार जाय जाको नाम यो वकार है॥ वही रंकार राति द्यौस ध्वनि लागी रहै, जागि रहै ज्योति सोई दीसै वारपार है। ताही ते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरी मोरी कीनो जगकानन कुहार है॥ २५॥

कही निज कर्म तासो कटत विकर्म सब, तब ह्वै अशंक गावै केवल ककारको। विविधि विहार केते रतिके बढायबेको, चाहो उरहार तो विचारो वा वकारको॥

वही सर्व ऊपर विराजै रवि राजै तैसे, निशिदिन बाजे गाजे जान यों रकारको। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, ऐसेही लगावे ते प्रस्थान करे पारको ॥ २६ ॥

कलि मांझ केवल सुनामही बतायो सार, वही जो ककार धाइ धाइ करि गाइये। आठहु प्रकार योग धारण कहत जासो, वही तो वकार श्वास ग्रास गहि लाइये॥ राग अरु द्वेषको बिसारि डार वही सोई, विषय निवार एक रंकार ध्याइये। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, कोरी कोरी कृपा पूरो गुरू मिलि पाइये ॥ २७ ॥

कमल पर वासी हैं विलासी कर्तार जासो, कहत विरंजि एक ककाहीको नाम है। कुटिल कटाक्ष मृदु-मंजुल चितोनि जाकी, विविधि वितानि विहरत आठों याम है॥ लोक परलोक सामर्थ रस भानको सो, रटत रकार सब करे पूरो काम है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि स्वास केते गे परम धाम है ॥ २८ ॥

मुकतिको पंथ वही कहत विनोद वादि, केतेके अमोद रहें ककाहीकी मांहि वसि। भक्तिको मारग ललाम अति सरल जानो, कहे वकार धरो ध्यान दिन मांझ वसि॥ रसनाके मूलमें रकार वसे सुधा जोपै, नेक न पियो रही माते क्यों न बांझ बसि। ताहिते

कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, कोरि भलो भावे तो चाखो एकै झौंझ बसि ॥ २९ ॥

सबते सिरे है ज्यों प्रसन्न पर कर्णिकाजु, कारण ककार सब यज्ञको निस्तार है ॥ कहत बकार सो विचार करो बार बार, जन जगमाहिं जानो मानो सारासार है ॥ राम राम रटबोहै आठो जाम जोई सोइ, निज नाम ध्यान धाम जानिये रकार है ॥ ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरी मोरी भाषैं और नरक निर्धार है ॥३०॥

कक्काही कुमोदिनीको भाव निशि जानि लीजै, बव्वाही विमल मति सूक्ष्म बखानिये । धारना सुलोक शुभ कहत रकार जासो, करि चित्त ध्यान ज्ञान सुरति शर सानिये ॥ कहत: विचारिके उचारि साधु लक्षणा ये, करि उर स्वास ऊंची दृष्टितर तानिये । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि जो लगावे तासो चित दे बखानिये ॥ ३१ ॥

कंटक अटक सो विमुक्त है ककार यह, सांची गति जानो मानो देखेहि सत्याइये । करि विशवास श्वास खैंचिके अकाश धरि, लरि लरि कालसो बकार रस प्याइये ॥ रमे सबहीमें आये देखत न नेक कोऊ, दोऊ डोरि एक करि त्रिकुटी लखाइये । ताहीते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मेरु नाद बिन्दु अरु चन्द सो लगाइये ॥ ३२ ॥

भूरि भूख आदि लोक जेते हैं तल लो, तेई भव-सागर केवर्त यो ककार है। देह जासो कहत विदेह सब सन्त ताहि, ताहि उर लेके करो गेह घनसार है॥ ररकि ररकि रजनिको है समूह शून्य, मान अवसान को कृशानको दरार है। ताहिते कहत है कबीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न करो जोई सोइ तो करार है॥२३॥

कपट पट छेदा कुबुद्धि अरु काम वेधा, कोधको विभेदा खेदा कलिको ककार यो। सहित आचार है विचाररु प्रमारथको, स्वारथको सोदर सहोदर वकार यो॥ राग द्वेष नाशे यमहूको आश पाशे हरे, हरि उर गांसे तन सासे यों रकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि घोरि कोरि कोरी घनसार यो॥ ३४॥

चारहु प्रकारकी मुक्ति जे हैं जगत माझ, तिनमें सारूप जो का रुप वही जानिले। चौसठ कला है जेते विद्याको प्रधान आन, कीरति बढावन वकार उर मानिले॥ वही गुरु ज्ञान जामे रहत विवेक प्रण, कीरति गतिमुक्ति रकार छिति छानिले। ताहि ते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि त्रिकुटीके छिद्र मांहिं शर सांधिले॥३५॥

ज्ञानमें कह्यो है वही ध्यानमें कह्यो है वही, श्रुतिमें वही वही सुमृति ककार मथि। बीजमें कह्यो है वही मंत्रमें कह्यो है वही, यंत्रमें कह्यो है वही तंत्र में ककार

मथि ॥ जीवमें वही है दोऊ हगमें वही है सांचे, नेह वही है धुति देहमें रकार मथि । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंकजोरि, कोरिमें वही तूंण तोरिमें अकार मथि ॥ ३६ ॥

. ज्ञानही की नीति सो ककार करे निशि दिन, विमल सुनिर्मल वकार वाणी वर है । रमत रमणीया सदा चार प्रगट यह, देह देही गेहीमें अदेहहीको घर है ॥ करो न विचार सन्तहीयमें स्मरण ताकी, रह्यो भर पूरन अफर धारा घर है । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि नासिकाके बीचमें रकार है ॥ ३७ ॥

दारिद पछारि तिनुकासे तोरी डारे तिन्हे, करत निहाल जैसे भूधर ककार यो । अतिरस मोद है विनोद सुखसागर सौ, सब गुण आगर सो नागर वकार यो ॥ हंसनमें कह्यो सो परमहंस सामरथ, वही गतिको गरंथ सो अर्थ रकार यो । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मारै सब कुमति विदारै काम अरि यो ॥ ३८ ॥

करे कर कर्म औ विकर्म किते काटे हाल, करत निहाल सोई कका करतार है । अनुभव विवेक जासों ज्ञान विज्ञान कहे, सकल सयानको सयान यो वकार है ॥ रति है संसारके विकार त्यागवेको सब, जागवेको भंवर गुफामें ररंकार है । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो हिये बड़ो निजसार है ॥३९॥

कठिन है कोमल है मदु है मयंक मुख, सुख दुख तोरन ह्वै रह्यो भरपूर है। जगको जनेता व्यवहारको बनेता वही, कवि कहैं केता सो विभेता चकचूर है॥ न्यारो मख मल सो अकूरो अरिदल त्यौंहीं, मारो छल बल प्यारो धरते न दूर है। ताहि ते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मुरि देख तेरे हियेमें जहूर है॥४०॥

मित्र अरु वैर भाव कल्पित कहे हैं दोऊ, करो निरधार कोऊ कक्का जुदों जानिल्यो। ज्ञान औ अज्ञान यों उठाये धरे दोऊ जहाँ, वव्वा ही विज्ञान रूप भक्ति भूप मानिल्यो॥ वही रति ज्ञानको रमावे दिन रैन कहूँ, सोई चित चायसों उठाय हिय आनिल्यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि दृग अंशको सु हंस घट छानिल्यो॥ ४१॥

जिते जग पापके पटल लपटाये अंग, करै क्षण भंग कलि केवल ककार वर। जेते जगमाहिं वेद विद्याके विपाक फल, सोधि सोधि बोधि बतायो है वकार वर॥ रसको अभ्यास जिन करे छिन एक संत, वही निज कन्त जासो कहत रकार वर। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरिके तनु बेलि गाज सामधार वर॥४२॥

चन्दकी कलाते और सूरकी कलाते न्यारों, दामिनी कलाते कृसान ते ककार भिन्न। गुणन तें न्यारो जाको कहत स्वरूप साधु, निगम अगाध दुरराध वकार भिन्न॥

जागृत औ स्वपन सुषुपतिके आगे बढे, तुरीया माहिं चढै ररकि रकार भिन्न। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि दशोंद्वार सो जोरि दे अकार भिन्न॥ ४३॥

कालरूपी व्याल ताके ज्वालका है त्याग तहां, अति बड़भागी जानो कक्काके मझार जू। विविधि ऋचा हैं जेते वेदमें बतावे कवि, तिनके समूह वसे वव्वा निरधार जू॥ आप उर अन्तरमें क्रीडा करे आठो याम, कह्या करै दूजै एक कुंज ररंकार जू। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि गति लाय कटै पापके पहार जू॥ ४४॥

कविनकी बानीमें प्रकाश करै आठो याम, सोई वह चैतन्य पुरुष है ककार थिर। संग्रह सकल गुण युक्त है सुमृत वही, रहै बन्यो सो गुण सन्यो जो वकार थिर॥ नाम लै लै गावत विदाहत सकल अघ, रटि रटि रागनमें रहत रकार थिर। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो हिये वसत अकार थिर॥४५॥

नित्य नइमित्य पराकृत अतिअन्त चारु, प्रलैके समूहमें न विनशै ककार यो। आदि अंतमध्य जेते जीव हैं जगत मांझ, सबहीको मोहे सो है समुझ वकार यो॥ एकही पुरुष रमि रह्यो सब लोकनमें, थिर चर थावर विथावर रकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न देखै तेरे घट झनकार यो॥४६॥

कायाहूको जानै अरु माया हू को जानै वही, मुक्ति हूको जानै अरु भुक्ति को ककार वो। राग अरु द्वेष तें विमुक्त सदा न्यारो रहै, सहै दिन रातिनके वहम वकार वो। अघके जरायबेको दाहक सदा है उर, रतिके रमायवेको राजत रकार वो। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, ोरि क्यों न देखो त्रिकुटीमें सोमधार वो ४७

कमल कह्यो है वही श्रुति और सुमृति मांझ, ध्यान धरिबेको एक ककार निरधार है। सिद्ध जितनी हैं जानी लीजिये जगत मांझ, तिनहूंको आदि बीज दिन दिन वकार है॥ रचना रचन सब जीवन जगत माहि, पूरन प्रताप अघताप सो रकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, रंचक जपते कर्म कटन पहार है ॥४८॥

कलाजितनी हैं जग ब्रह्महि विचारि लीज, कहैं नेति नेति वेदन ककार माँझ। विकला विकाश जेते त्रिविध प्रकाश अब, कहै हुलास तेते वास है विकार मांझ॥ रहित कह्यो मोह शोकते प्रसिद्ध वही, रमक झमक सब देखिये रकार मांझ। याही ते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो सब जगत अकार मांझ॥४९॥

अमल कमल गंध दिन दिन बसत जामें, छिन छिन हंसत विकसत सो ककारमें। गुणके विभाग भाग विविध प्रकाश जेते, तेते सब जानि लीजै अचल वकारमें॥ रसना रटत जाको नाम दिन रैन नीके, जगमगे ज्योति

द्युति होत है रकारमें । याहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखे सदा हाजिर अकारमें ॥५०॥

करुणाके रूप औ समुद्र वही जान सदा, न्हाये गुणगाये दै बहाये अघ वकार सो ॥ वही सांचो नाम सबे भाग औ विभाग माहिं, भरि भरि वहरै विहारे है वकार सो ॥ भक्ति औ मुकुतिमें अत्यन्त रति जान्यों जाकी, दिन दिन सानो आनो भाव ररंकार सो । याहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, तोरि जग रीहि प्रीति जोरिये रकार सो ॥ ५१ ॥

कलिके कलेसन जरायवेको पावक है, संत उर जावक अचल सुहाग कवि । संतत सो विविधिं विलास वनमाली वेहि, वानी अधीश्वर है ईश्वर विचारि विविधि॥ रसनाके बीच बेसे सुधारस बास आछे, वचन विलास हांस अमल प्रकाश रवि । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि ज्ञान पावक हवन कीजे कर्म हवि ५२

सकल ब्रह्मांडको अधार करतार सोई, सोई निराधार है विचार विस्तार कंक । सोई सब कालनको काल महाकाल जानो, सोई यमजाल बिहाल जगमग्यो वंक । स्वर्ग पाताल छितिहूमें दशों दिशा सोई, रह्यो रमि रक्षक प्रतक्षक पुरान रंक । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि देखो हिये माहिं अंकित अनादि अंक ॥ ५३ ॥

कलिके कलेशनको तारत निषेध सोई, जाको नाम कक्का जोइ जग करतार है। रतिके विनोदनको भागी है भँवर सदा, जग वन घन बीच भवन रकार है॥ रतिके जे धर्म जिन्हें पोथिनमें गावें साधु,.अगम अगाध बंधे बंधन रकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, सत्य याहि मानो जग झूँठो व्यवहार है॥ ९४॥

साँचे साँचे सबद किये हैं जामें बीनि बीनि छीन सब किये जग,करम ककारने। सार मार लीनो और कुमार सब धोय डार्यो, यज्ञ कीन्हे भरम पछारी के रकारने। ध्यान धारणा धरत दिन रातिहू समुझि, भ्रम सब डारि खोई जगके रकारने। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि डोरि लावे ताके जावे हम वारने॥ ९५॥

मोहको गवाँवे रोग दोष ले बहावे सब, भाव उपजावेले पचावे काम कासना। विविधि विवेकले त्रिविधि ताप हंत करें, उरधारि वाही जनि लावो कोप वासना॥ कंते लोक पालनकी सभा मांझ राजे वही, वही महि मंडन अखंडन रकासना। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि और कहे ताको मुक्ति आसना॥९६॥

कक्काही सकल जीव संभव विचार लीजे, बन्नाही विसर्ग सब संज्ञाको अधीश है। वही है रकार शब्द रूप सो अभासे सदा, संतत प्रकाशे दृग आनन रु शीश है॥ शब्द अरु सुरति संयोगमें समाय रहे, कुरँभकी वृति गहे लहे

वीसो वीस है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो तेरे हिये जगदीस है ॥ ५७ ॥

ज्ञान औ विज्ञान मख तीरथ वरत दान, सबही अनाथ नाथ जानिये ककार यो। मन बुधि चित्त अहं-कार महाभूत पांचो, सबको मतो है कांचो सांचो हैं वकार यो। शब्द रूप रस औ परस बस है सो नाहिं, अरस चढायबेको दरश रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मुसकाये पाँये गूँगेको अहार यो ॥ ५८ ॥

कक्काही कहत करतार किते भावनिको, वव्वाही विलासे अति सागरके पारको। रमत रकार नायकामें भूप रूप ह्वैके, शोभित सरूप यो कुरूप करतारको। विधि औ निषेध आछो बुरो ये तो माया वाद, विविध विषाद कियो माया और सारको। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि,मोरि उर खोजिले मतो है भवपारको५९

कक्काही कह्यो है कथनीय वारताके माहि, वव्वा व्याधि नाशवेको अति बलवीर है। शब्द औ स्वरूप सदा मुक्तिको है भूप जोई सांई, घट घट माहिं राजे रणधीर है। ब्रह्म शिव विष्णु केते कोटिन तेतीस देव, रहे जोरि जोरि हाथ बड़ी यह भीर है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेकहु दयाके किये हरे पर पीर है६०

और युग माहिं योग यज्ञ व्रत दान जप, कलिमाहिं केवल सो कक्का अर्थ सार है। विद्याहूको ईश योग यज्ञके अधीश केते, भोगको विलासी वही वव्वा व्यवहार है॥ रही आठों सिद्धि वा रकार माझ वसि नीके,नवो निद्धि पीकै जीके भयो भवपार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि,स्वासको मरोरि त्रिकुटीमें निरधारहै ६१

लोक शुभ करन धरण बल बुद्धि वही. उधरन जक्त अघ हरण ककार है।पूरण प्रताप पद पल्लव नलिन वही, करि मन अलिन दलिन यों वकार है। विरहिनि माझ वही विविधि विहारी वन वारी अत्रहारी नर नारी में रकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि. मोरि मन लाय देखो अमृतकी धार है ॥ ६२ ॥

मायाको अधीश वही जो कर्ता कहावत है. जासो कहै कक्कासो भै हक है जहानको। गुप्त औ प्रगट उभै धाम निराधारनके, वसि वसि न्यारो है वकार उर आनको ॥ रमत रकार सातों लोकनमें वार पार, विविध विहार प्रतिहार है निसानको। ताही तें कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, ऊंचे मोरि देख भासे चांदनो सो भानको ॥ ६३ ॥

करम धरम त्यागिवेको यों ककार कही, मोह काटिवेको अघकन्दन विवंद यो। कर्मके विरिछ निवारवेको आठों याम, झुकि२झूमि२घूमि घूमि रन्द यो॥ गुणी गुण धारण विदारण कठिण काल, तन अघ जारन उधार-

नको कन्द यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि नेक मोरि देख हिये पुनोंको सो चन्द यो ॥ ६४ ॥

कर्ता शुभ गाथ धाम जायवेको साथ आये, ग्रन्थ शुभगाथ नाथ सांचो करतारको । विविध विशेष रोग हरण अशेष वहि, श्रुति मुख देखि अनुपेखि लै वकारको ॥ वहि प्रतिपाल है रसाल ब्रह्म कहै जाहि, धरि धरि ध्यान ज्ञानी गावत रकारको । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि उर देखि हिये मांझ निज सारको ॥ ६५ ॥

कामते रहित क्रोध लोभ तैं रहित मद, मोह तैं रहित माया रहित ककार यो। विविधि प्रकारके बिकार खंड खंड करि, डारे अघ देखतही प्रगट वकारयो ॥ निरंजन भौन माहिं चितवत संत जाहि, धरे धाय धाय ध्यान रंचक रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि उर देखो तेरे हिये माझ सार यो ॥ ६६ ॥

जेते अभिलाष जग बासना विलास वाहि, करि कक्का मांहि वास होये जग पार त्यों। मोहसे नृपतिको विदारवेको अस्त्र यह, शस्त्र काम जारिवेको धरिलै वकार त्यों ॥ दूरेते विराज सब जीवनसे आठों याम, करिले प्रकाश गुरु ज्ञानसो;रकार त्यों । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि उर देख नेक कटै जगभार त्यों ६७

कौन जाके तुल्य थिर चरमें विशेष वही, युक्ति अनयुक्तिमें विचारिलै वकार है। जाको विस्तार सब लोकन पसारो पर्‌यो, रचि रचि धर्‌यो भाव भर्‌यो सो वकार है॥ अतिरमणीय सब गुणनको ज्ञाता वही, दाता सो विज्ञानको प्रधान यो रकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो सब जगमें विहार है॥ ६८॥

कलह की खानि कलि कंटक विकंट वही, बंक उर अंक सोई कक्काको विचारि लै। विषमको भाव तामें लेशहू न नेक कहूं, कामना अकामना सो वव्वा उर धारि लै॥ जानत हैं नवो रस भावना सो नीकी भांति, भाव उर धारि कै रकार मन मारिलै। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि २ स्वाँस बंकनालमे संभारि लै॥ ६९॥

कायाहीको पालै निशिदिन दयापाल वही, करुणाको सिंधु अरु बिन्दुसो ककार यह। शील गति मिल्यो सनतोष झिलमिल्यो काम, क्रोध तिल मिल्यो बिल बिल्यो सो वकार यह। अच्छे शुभ करम भरम धर्म काँचे तहाँ, सब गुण साँचे रंग राचे त्यों रकार यह। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि वही देखि तोहूँ कही बार बार यह॥ ७०॥

कंठहिके पंथमें विमान बैठि ऊँचे चढि, दृष्टि गुण मढि बढि कक्काहीके धामको। वही सांचो लोक तामें करै जो विहार सदा, वाके वंकनाल विच्च धर्निधरि बामको॥ करनी करम सब वरुनी उठाय डारी, मारीके कुबुद्धि चित्त लायो नाम रामको। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देख वाहि तजि और कामको॥ ७१॥

तुरिया जो मोद ताको कारण करनहार, दुखको हरण हार जानिले ककार को। वेद भेद करि करि विधि सो बतायो ज्ञान, विविधि विज्ञान ताहि मानिले वकार को॥ शुभको करैया वाहि अशुभ हरैया जान, भावको भरैया लखि लीजियो रकारको। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देखो हिय सिरजनहारको॥ ७२॥

जपि २ आपसों विलास करि लेत नीके, जैसे वह भृंगी कीट करत ककार त्यों। बोध करे जीवको सुबोध सब जग माहिं, वधि २ नामसो निधान वो वकार त्यों॥ निर्मल कहावे धोय मलको बहावे सोई, ध्यानको लहावे उर आवत रकार त्यों। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि,मोरि मोरि देखो उर राजत अकार त्यों॥७३॥

जग सुखदाई भक्ति कारन है आठो याम, मलन विदारन हैं वारन ककार यह॥ विविधि कुसंग कलि

कारन कलेश जेते, तेते अपहरण उधारण वकार यह। निर्मल है भाव जेते रमि २ चावही सो, मुक्तिपर पाव दै दै पायलै रकार यह। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, नेक मोरि देख घट माहिं टनकार यह॥७४॥

कमल कलीके मांझ कमलाको कंत वही, वही भगवंत जग ऊपर ककार है। प्रगट विशेप ज्ञान ध्यानके लगायबेको, हरि उर लाइवेको राजत बकार है॥ वही अनुरक्त औ विरक्त सब जक्त माहि, निगम विहारी जासो कहत रकार हैं॥ ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मूरि क्यों न देखे तेरे हिये झनकार हैं॥७५॥

कल्पहीके अंतमें आनन्द है ककार ही को. तीरथ वरतको विलासी सो वकार हैं। शब्द के स्वरूपमें विराजे अति राजे सोई, मनुष्यमें गाजे ऐसे ब्राजेसो रकार है॥ नीके कै विचारै उर धारै संतजन कोई, सोई श्रुति सार कहै लहै वार पार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देखि पेखि अति सुखसार है॥ ७६॥

जेते लोक लोकपाल व्योमपाल भौमपाल, कक्काही को उरमाहिं सबहीके जानि ले॥ भक्ति प्रतिपालक है बालक न बूढो वह, नर है न नारि ताहि बव्वाही में मानि ले॥ पाप अरु पुण्य दुख सुखको विहंडन है, आनन्दको मंडन रकार उर आनि ले। ताहिते कहत हैं

कवीर तीन अंक जोरि, मोरि स्वास इंगला औ पिंगलामें तानि लै ॥ ७७ ॥

द्वैत मत खंडन अद्वैत भाव मण्डन है, सगुन विहंडता बढावत ककार यह ॥ विभव बढावत कढावै भवसागर तैं, सुमति बढावन वकार है सार यह ॥ चित्त चिदानन्द भवफन्दको निकन्द दुख, दारिद सुछन्द कन्द आनंद रकार यह । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेकमोरि देख कामवनको कुठार यह ॥ ७८ ॥

मन वच कर्मन कषाय मल धोय नीके, जगमाहिं करै नित्य कक्काही सो प्रीतिरे । बाहरिके विविधि विहार जानि फीके सति, लोकको विहार वव्वा अंतरमें जीतिरे ॥ रति मति गति जगमाहिं जे करत नेक, साँची रति अंतर रकार रस रीतिरे । तांहिते कहत हैं कवीर तीनि अंकजोरि, नेक मोरि देख जिनि वृथा दिन वीतिरे७९

कलिके कलेश काटिवेको गाये कक्काहीको, वव्वा है विशेष ज्ञान ध्यान करतार यो ॥ राग अनुराग झूठे जगमाहिं लावे मति, करि साँची रति हिये रटन रकार यो ॥ काहेको झंखत हैं फिरत वापी कूपनको, धायके नहाय घाट गंगाजीकी धार यो ॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि २ देख तेरे हिये झनकार यो ८०॥

जान कवि चातुरी ककारहीको नीकी भांति, कहत संयोग ओ वियोग सो वकार है । धारिवेको धीरज विदा-

रवेको कामादिक, हृदय विचारवेको नीकोसो रकार है ॥ झूठो जग संगकरै ध्यान मांहि भंग यातें, दै दै ज्ञान रंग नीके चित्त निरधार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख सब कटन विकार है ॥८१॥

जिते जगमाहिं किते पापके पूर भरे, करें चूर चूर नेक कक्काके लगाये ते । चित्तकी विपत्ति केती फारि डारी छिन माहिं, धरि धरि ध्यान वाहि बब्बा उर लाये ते ॥ फूलत कमल दल लोचन छिनक माहिं. रटि रटि राग त्यों रकार गुण गायेते। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, होय भव पार पूरो गुरू ढूँढ पायेते ॥ ८२ ॥

जानिवे जो चाहै तोपै जान एक कक्काहीको, भयो जो विशेष चाहै बब्बा उर धारिलै । छुटो चाहै माया ते निहाल ह्वैकै जगमाहिं, करि करि ध्यान त्यों रकार पन पारि लै ॥ जोपै जग माहिं आय युग २ जीवो चाहै, काम क्रोध लोभ मद मोहको विदारिलै। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि२स्वास नादबिन्दुको सँभारि लै८३

केवल आनन्दको समूह सोई कक्का यह, योग औ वियोगको विहारी सो बकार है। जेते जगमाहिं सब रोगनकी जाति पांति, होय खण्ड खण्ड ध्यान धरत रकार है ॥ आसन विचारो पान भोजन विचारो सैन, जाग्रत विचारो जग विविधि विकार है। ताहिते कहत

है कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखे हिये झूठो संसार है ॥ ८४ ॥

काल रूपी व्याल ताने केतिक विनाश डारे, सुरनर-मुनि गंधरवको ककार यो। वही निज मंत्र तंत्र वेदनमें गाय गाय, धाय धाय लागे जासो सोई है वकार यो ॥ वही दिन रात मास पच्छ घटिकाका भाग, वही सूर चन्द्र तारा गणमें प्रकार यो ॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि मोरि क्यों न देखो तेरे हिये ततकार यो॥८५॥

विन पग धावे विना यंत्रही बजावे तार, गिरा बिन गावे सो लहावे करतारको। तीषनाके विविधि पहारन को फोरि डारे, सब्र करि ध्यान भयो निर्मल वकारको ॥ अमरहिं लोक अरु अमर है नाम जाको, अमर विहार वन वाही है रकारको। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरहिये भवसागरके पारको ॥ ८६ ॥

करण कहावे वही कारण कहावे वही, करता कहावे वही जानो जो ककार हैं ॥ सुखके समुद्र माहिं करत विहार वही, निराधार औ आधार सोई तो वकार है ॥ पापना लगत जासूँ जापके करेते नित, अति गति भाव भर्‌यो रहत रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, याहीकूँ निहारि जग झूठो व्यवहार है ॥ ८७ ॥

सांचे सांचे पंथको चलावत है नीकी भांति, झूठे झूठे मारग विदारत ककार यह। अजपा जो जाप ताहि

जपि २ आठो याम, थपि २ भावनासो कामना वकार यो ॥ भक्ति अरु मुक्तिके विलास हाम जानि मानि मानि सो मनहि मनावत रकार यह । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, नेक मुरि देखि हिये मोतिनको हार यह ॥ ८८ ॥

कपट कपाट तन पटल विडारिबेको दारिबेको कक्का काम ध्वज शूर वीर है । वेदनके जेते सातो अंग हैं विविधि भांति, तिनके संवारिबेको वव्वा रणधीर है ॥ मंगल समूह केते आनँद समूह जेते, धरत रकार सोई हरै पर पीर है । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि तोलि खोलि हिये में जंजीर है ॥८९॥

जेते श्रुति सार जेते तत्वके विचार जेते, कहै हैं प्रचार सब कक्काहीमें मानिले । अघको हरणहार वेदको धरणहार, भावको भरणहार वव्वाहीको जानिले । सिद्ध-नको दाता वही बुद्धिको विधाता वही, सब जग जाना है रकार उर आनिले । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि जग रीति प्रीति वाहि सो तू ठानिले ॥९०॥

कायाहीकी सिद्धि सो ककार मांझ जानि लीजे, दयाहूकी सिद्धि सो वकार माहि जानिये । भक्तिको बढ़ोनि ज्ञान ध्यानको बढौनि चित्त, चेतन चढौनि सो रकारहीमें मानिये ॥ दया उर धारि काहू जीव ना बिदारि हरे, हरे पग धारि पूरा गुरु चित्त आनिये ।

ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि स्वांस त्रिकुटीको ताकि तानिये ॥ ९१ ॥

लोक सुखदाई दुखदाई है न आठों याम, संतनको भाई गुण सोई है ककार यो। सदाही प्रसन्न वह जगकी हस्तपीर, नेक न अधीर शूर वीर सो वकार यो॥ भक्त-नकी दाम रचि उर लावे आप हरै, जगहीके पात चित्त चेत निरकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, नेक मुरि देखै सोई होय भव पार यो॥ ९२ ॥

जेते गुण ज्ञान ध्यान दाता है ककार कवि, कहत विज्ञान तासों प्रवर वकार है। परम पवित्र जासूँ कहत है धाम कवि, होत पूरो काम नाम लियेते रकार है॥ गाफिल न होय जग डारे अघ धोय सब, लैलै वाहि नाम केते भये भवपार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देख गाय गाय गुण सार है॥ ९३ ॥

कविके कवित माहिं राजत है नीकी भाँति, गाजत पुराण माहिं कका करतार है॥ देहविन डोले देहवान सो दिखाई देइ, चित हरि लेइ चाय चाय सो वकार है। योगी यती जंगम औ सेवरा कहे हैं जेते, केतक गुरूको रूप जानिलै रकार है॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख तोपै दीखै वार पार है ९४

यज्ञमें वही है सांचे भावमें वही है अति, श्रेष्ठमें वही है जासूं कहत ककार है। चित्र औ विचित्र रमि-

रह्यो यत्र तत्र वही, जासो परम हंस कहै सोई जो वकार है। शोकको हरनहार रोषको हरनहार, दोषको हरनहार जानिले रकार है ॥ ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देख धाय धाय धार धार है ॥ ९५ ॥

सिद्धिनको राजा सब रिद्धिनको राजा नव, निद्धि-नको राजा राजै प्रगट ककार जू ॥ ज्ञान और विज्ञान औ निवेककूँ बढावन है, ध्यानको बढावन है बावन वकार जू ॥ रवि को सो तेज निशिदिन जगमगै जामैं, रगमगै जगमाहिं रंजित रकार जू ॥ ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देखि याहि होय भवपार जू ॥ ९६ ॥

दूरजनि जानो युग कोस है प्रमानो धाम, एक कहै योजन विराज सो ककार यो ॥ एक कहै देश ताको न्यारोही विराजै सदा, एक कहै एक देश विविधि वकार यो ॥ रुनुक झुनुक झनकार रहै आठो याम, सोई निज धाम जासो कहत रकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देखि हिये होतकिलकारयो ९७

वाहीतेज पुंज कंज कंप करे आठो याम, हरे अघ पंक न कलंक है ककार मांझ। त्रिविध वकारको विदा-रिडारै छण माहिं, दिन माहिं रैन माहिं बंकित वकार मांझ ॥ जेते ऋषि मुनी यती योगी हैं जगत मांझ, तिनको परमधाम जानिले रकारमांझ ॥ ताहिते कहत हैं

कबीर तीनि अंक जोरि मोरि मोरि देखि ढकि ढुरि अकार मांझ ॥ ९८ ॥

अति घनघोर सोर घनसो गरजि रहै, चन्द सो दरजि रहै रंजित ककार यो। आधिको विनाशै सब व्याधिको विनाशै काम, क्रोध अघ फाँसै सोई विविधि बकार यो॥ रविकोसो मंडल है तेज पुंज खण्डल है, विद्युत विहंडल है डंडल रकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देख हिये हाजिर अकार यो॥ ९९ ॥

कूरम वही है शेषनागसो वही है धरा, धरसो वही है जासो कहत ककार है। शेष अवशेष वन बीहड नदी हैं जेति, सातहू समुद्र तिनै जानिलै बकार है॥ वही निराधार और अधार सब जीवनको, विविधि विहार करै जगमें रकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, नेक मुरि देखि सोई राजत उिलार है॥ १०० ॥

कवि है जेतेक जग माहि बडे बुद्धिमान, तिनको अधीस ईस जानियो ककार है। धाता जो है पिता माता जो वही है, बुद्धि आता हू यही है जासो कहत वकार है॥ जगको जानेता सब अघको हनेता काम, क्रोधको हरेता जग राजत तकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देखि निशिदिन झनकार है॥ १०१

इति कबीर एकोत्तर शतक।

तीनों जे अंक ते निशंक है सुनाये शिव, आपने त्रियाको निज हित चित्त जानिके। न्यारे २ अंक तेऊ एकके दिखाय दिये, गाये सामवेद मांझ दिनसांझ आनिके॥ गुप्ततें गुपुतसो प्रगटके बनायो रुद्र, गायो युग संत साखी मनमानिके। धन्यो उर देवी जामें विविधि उपासना है, सब शिरमौर राख्यो बीन बीन छानिके॥ २॥

एकोत्तर शत ५ कह्यो साहब कबीर जूको, सुनै तू महातमको नाहीं वार पार है। प्रात उठि पढै जो पै सुने चित लाइ जोई, सोई सांचो साध जो अगाध मनसार है॥ ज्ञानको उजागरो सो जगको पसारो देखै, लोक तिनुका लौं लेखि हियेको विचार है। जायके परमपद फिरि जग आवै नहीं, सही यही बात धार धार निरधार है॥३॥

सो०—चन्द्रचूडनिजमूल, रचिपन्थि कियोकबीरमत।
टीकातेहिसमतूल, अखयराम भाषा करी॥१॥

सम्वत् अठारहसै गियारह मध्य भाषी, कार्तिककी पंचमी सुदीसे रविवार है॥ नगर भरथपुर ब्रजकी करौट आदि, ताहि माहिं बैठार कियो ग्रन्थको प्रकाश है॥ स्वामी दयानन्द जूके बाल हरि दास भये, ताके श्यामदासको भिखारी दास २ है। साहब कबीरकी कृपा ते अखैराम कही, भाव दीप दीपिका समुझ गुरु पास है १

---

इति श्रीब्रह्मयामले पातालखंडे उमामहेश्वरसंवादे सामवेद शाखावर्गने त्रिपदाक्षरनिर्णयं कबीरैकोत्तरशतक कवि अखयरामकृत तथा—कबीराश्रम।वार्ग-स्वामी श्रीयुगलानन्दविहारी द्वारा संशोधित सम्पादित। समाप्त मिदं॥

## विनय रत्नावली प्रारम्भः ।

स्वामी परमानन्दजी विरचित ।

दोहा—सत्य कबीर कृपायतन, तन धरि जिवके काज ।
मो सम वायस मलिन भव, तव पद नलिन जहाज ॥ १॥
भक्ति गरीबी दीजिये, नाथ कीजिये नेह ।
और दौर मन चूर भय, हौस रही यक एह ॥ २ ॥
तुम बिन जिव विलकत फिरे, खिलकत भई विहाल ।
चिलकत प्रभु जग यम भजे, ढिलकत बन्धन माल॥३॥

सवैया ।

जगमें बहुसूर सती जपिया, तपिया सो पिया पद पावत नीके । हमतो सबही विधि हीन महा, शुभ धर्म कहा गुण ज्ञानन फीके ॥ नहीं उपाय सहाय करो यक, आश किये करुणामय जीके । कछु जोर नहीं दृग कोर लखो, दलिहों दुविधा चलिहों गुरुलीके ॥ १ ॥

मोहिमो नहिं हीन मलीन कहूँ, गुरु धर्म न जो शुभ कर्महिं जानी । दम संयम नेम न क्षेम क्रिया, भव भोग प्रिया नहिं योग निशानी ॥ पति राखिलियो पति राखि-लियो, जगमें मम लाज इलाज लहानी । अब किंकर काल दयाल मिले, निज किंकरको महि किंकर मानी ॥२॥

कोइ माँगत मुक्ति है युक्ति कोई, कोई चाहत है युगही

युग जीजै। कोइ देवसे स्वर्गकी ठेव धरे, उधरा धन धान्य धरा धरि लीजै॥ तव दासन आस वही सबही, पदही सदही लदही रति कीजै। जेहि चाह न अन्य है धन्य वही, गुरु भक्ति अनन्य दया कर दीजै॥ ३॥

सुख साज घनो गज वाजि घनो, सब शोक समाज घनो जिवकेरो। धन द्रव्य ले नर्कमें गर्क करे, कुल रूप सुजाति कुटुम्ब बडेरो॥ बर विद्या जहां लगि चातुरता, जिउहिं ज्यों जीवमें होय घनेरो। तवँहिं त्यों भक्तिसे दूर करे, मद पूर कहे विषयावन वेरो॥ ४॥

सुख स्वर्ग लहो अपवर्गलहो, ऋधि सिद्धि समृद्धि जिते जग मांही। जप योग रु युक्ति औ उक्ति सभी, पद इन्द्र उपेन्द्र जहां लगि आही॥ जेहि जीव मदे वर वेद वदे, अभिमान लहे भ्रमकी सब छांही। धन्य धन्य सोई पद लागु जो, गुरु भक्ति समान कहूँ कछु नाहीं॥ ५॥

कर लेकर काह मिले प्रभुसे, कर भेट कहा करदाम न कोई। जहँ झार तपोधनके धनिका, दरवार तुम्हार रहे हग जोई॥ जिमि हंसनमें बकुला अकुला, देहि देखत मैं अपनो मुख जोई। विनती हमरी बुढिया दमरी करुणा कर नाथ कबूलहु सोई॥ ६॥

नहिं सायर हों कुलकायर हों, परि पाय रहो नित नाथ भरोसे। कहुँ मो सम तुच्छ न और कोई, गुन ज्ञान न छूछ बने प्रभु पोसे॥ करजोरि विनय प्रभु मोर सुनो;

जन गखहु पायन पंकज गोसे। यक पूत कपूत प्रसूत प्रभू, जठरा जठरा भरको तजि तोसे ॥ ७ ॥

यमदूत कपूत बडे रिसिहा, खिसिहा बसके कसि लीनेहु दण्डी। घिघियात दया कसिबात जिन्हें, अधिको वधिको विधि कूटत मुण्डी ॥ बल वाहन साहस आतुरता, सब चातुरता तहवाँ भइ भुंडी। कोइ यार नहीं हथियार नहीं, यक देह रही बिनु शस्त्रके लुण्डी ॥ ८ ॥

नहिं लेश दया हृदया तनिको, जब छेदत है यम बांधि गटैया। इतही उत हेरके टेर सबै, कहु मोर नहीं चहुँ ओर उपैया ॥ परिवार सगे न गोहार लगे, तजि भौन भगे दुख कौन घटैया ॥ सुनि आवत बैन पुकारत आय, सहायक राम है बंदि कटैया ॥ ९ ॥

भवपाट महा अतिपीन जहाँ, किमि दीन पपीलहिं पार करीजै। बल भंग मतंग भयो जिहिंमें, गुरु संग-विना तेहि माँह मरीजै ॥ कह मुक्ति कोई जग युक्ति लोई; नहिं नाथ जो साथ तो पाथमें छीजे। भवसेत अभय पद देत तुही, प्रभु आस यही कर दास गहीजे ॥ १० ॥

भव सिन्धु अगाह न थाह कहूँ, मम नाय तरी यक गाथ निहोरे। झर झोर झकोर न ठौर कहूँ, भल भाय-चरी यक नाथ निहोरे ॥ मद मोह तरंग कुरंग रहे, बड भाग भरी यक नाथ निहोरे। महिखेस चले मम केस गहे, कर धाय धरी यक नाथ निहोरे ॥ ११ ॥

जेहि सिन्धुमें पौन प्रचंडचरे, पलमें शतखंड करे तृणतूरी । खगराजहुके बलको दलजो, हमरो तन बाहन पाहन पूरी ॥ हम थूल थरा जहँ झूल नग, दुर्गम्य दुकूल परा अति दूरी । शरणागत हूँ शरणागत हूँ, शरणागत नाथ हरो भय भूरी ॥ १२ ॥

समरत्थने हत्थ गहीर गही, जल रत्थ मेरी गुरु सत्य-तरी है । समवाय वहाय सहाय करी, बल पाय हरी थल धाय धरी है ॥ मम पोत टुटी गुणसो न जुटी, जेहि कोट दरार कगार करी है । बिनु सत्यकवीरको पीर हरे, भव-भौर भयावन भीर परी है ॥ १३ ॥

कलिकाल विहाल कियो जिवको, पिवको पदसो केहि भांति सो पावे । जहँ जाप नहीं जहँ ताप नहीं, जिव पाप महीं दिन रैन गमावे ॥ अति बुद्धि मलीन जो लीन विषय, नहिं शुद्ध सतो छण एकहु आवे । यमफन्द-परे नहिं द्वन्द्वटरै, उबरे जब सत्य कवीर बचावे ॥ १४ ॥

अमरावति नग्र बसो जेहिमें, तेहि दर चार सुधार बनाये । वैराग्य विवेकहुँ ज्ञान गनाय, विचार सो चार गुरू बनि आये ॥ तेहि मध्य सिंहासन आसन तो, जग ज्योति सोहंगम चौर ढुराये । सोइ द्वार ते जाय मो पाय तुम्हे, दुतिये विधिसे पुनि यों कहि गाये ॥ १५ ॥

पद पादुक और पद त्रान तेरो, पद धूल पदामृत चार विचारे । पद पादुक ते मुक भर्म सबै, पदकी पनही धनही जिवतारे ॥ पद धूल हरे तिहुँ शूलनको,

चरणामृत कर्महिं धोय पँवारे । गुरुचारहु जक्त उबार लियो, यम जीतन नाथ प्रताप तुम्हारे ॥ १६ ॥

गुण सिन्धु यथा तुम आगर हौ, तिमि औगुण सागर मो सम नाहीं । दोउ मेल मिले यम जेल ढिले, अस खेल खिले करुणामय बाहीं ॥ कण तुच्छ मिला मन अम्मर जो, तब रेणु हिरम्बर वेणु कहाहीं । विषयादि समीर सरीरन छै, भव तीर लगे नहि आवहिं जाहीं ॥१७॥

दिल देवल देव दया दरिया, थरिया भरिया भरि नैननिहारी । दुख दारिद कम्पत चम्पत भो, सुख संपति संपति सो भरभारी ॥ सुखसाज सघट्ट अघट्ट दई, फिर आवँ न हट्ट या पनसारी । बयपारकरी बयपारकरी, बयपारन संगमें ये बयपारी ॥ १८ ॥

हिरअम्मर चीर कवीर कवी, कविता सविता गुण गावत पायो । न टुटै न फटै न कटै कबहूँ, रुचि राउरकी पहिराउर आयो ॥ जो मुनिन्द्र भरे न सो इन्द्रधरे, भगवान कृपा भग बाँन भगायो । सतनाम निकाम ररो सुधरो । उघरो दृग दिव्य दयाल बतायो ॥ १९ ॥

गज ज्ञान अपानकि पीठ चढे, दल दैत विकार विषय विहराना । गहि वज्र विवेककी टेक हिये, निज नाम निशानको मारुब्याना ॥ सहसक्ष प्रतक्ष स्वरूप लखे,

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

तम भक्ष कृपा भ्रम कूप बिहाना। जन गउर यद्यपि बाउर है, पद पंकज पास कियो निज थाना॥२०॥ इति। कबीर भानु प्रकाशसे॥

कवित्त।

पावन पतित जीवनके हित प्रभु, तूही गुरु पुरुष कहलायो धूँ और है। कहत कबीर धर्म धरत न धीर, करे, अचल शरीर न लगे हिम जोर है॥ पशुपंछी तारत है निगम पुकारत है, आरतको देखिके निहार दृगको रहे। पीरो पयम्बर है धीर जो दिगम्बर है, वेद वाणी हूँ बिरद बन्दीछोर है॥ १॥

तजत न वानी सुर मुनिन बखानी प्रभु, शरणमें आनी जो करत निहोर है। तीन लोक ढूँढ जाये दूसरे कहूँ न पाये, लग सो चरण दुख हरण जो शोर है॥ नहीं शुभ करनी है बहु दुख भरनी है, उस गुरु शरनी है कलिकाल घोर है। अधम उधारनको जगत सुधार-नको, भक्ति मुक्ति धारन कबीर बन्दीछोर है॥ २॥

बूडे बड ज्ञानी सिद्ध साधक जो ध्यानी, विनु नाम सहिदानी जिन्हें आशा न तोर है। बल बीज चूमत है सिद्ध साधु दूसत है, निसिदिन मूसत है अनचिन्ह चोर है॥ जीवकों है ठौर नहीं सुर मुनी दौर नहीं, परमानन्द-पौर नहीं पावन जो दोड है। बन्दीछोर बन्दीछोर एक भजु साहब कबीर टेक सोई बन्दीछोर है॥ ३॥

आगे ॥ ९ ॥ आप कृपाविन डूब मरे भव, जीव अनेक पडे जम त्रासा । ऐसि कृपा जो करो हम ऊपर, पारख बुद्धि सदा जु प्रकाशा ॥ १० ॥ योग रु यज्ञ करे विधि नाना, कायाहु कष्ट करे बहुतेरा । आँखहु मुन्दत कानहु रुंधत, प्रान चढ़ाय गगनहिं घेरा ॥ ११ ॥ नेती धोती कर्म करे बहु, ध्यान धरे पुनि काहू न हेरा । शुद्ध स्वरूपको ज्ञान विना शठ, मेटत नाहिं चोरासी को फेरा ॥ १२॥ मैं अपराध कियो बहुत गुरु, सो अपराध कह्यो न जाई । आप दयाल दयानिधि साहब, मम अपराध क्षमा करो सांई॥ १३॥अन्तर्यामी जु जानत हो सब, कहा कहूँ मुख बारम्बारा । भूल मिटाये परखाई दियो सब, मंथिक झाई जु काल पसारा॥ १४॥जा दिन बन्ध छुडाइ दियो सब,ता दिन नाम पञ्यो बंदीछोरा । तेमेही बन्धन मोर छोडावहु, बारम्बार करूँ जी निहोरा ॥ १५ दासको संकट आयपरे तब, आयके ततक्षण कीन सँभारा । बीजकदास यहीवर मांगत, नित्त, हृदय मांहि रहु ध्यान तुम्हारा ॥ १६ ॥

इन्द्राविजय ।

आपेही आप गोसाईं सुसाहब; होहु दयाल दया करि हेरो । ऐसी कृपा जो करो हम ऊपर, जे विधि होहुँ तुम्हारो हि चेरो ॥ औरहि व्रत मिटायके साहेब, एकही व्रत तुम्हारोहि प्रेरो । शिष्य कहे गुरुदेव सुसाहेब, यहि विधि ध्यान तुम्हारोहि मेरो ॥ १ ॥

भांति अनेक करे यह चित्तसो, कर्मविकर्म करे तेहि काजा । तीरथ व्रत करे बहुते विधि, ताहिके काज लगावत साजा ॥ जो गुरु यज्ञ करे क्रिया तप, करे पुनि ध्यान कहे महराजा । भारि भरोस हिये गुरु आपसो, आप गुसाईं सुहो शिरताजा ॥ २ ॥

नानाहि भांति विचार करौं बहु, एकहुँ चित्त न आवत मेरो । जाल अनेकन हाल विहालसो, काल कराल करे घनघेरो ॥ जीवन मारि कियो पिसमानसो, कोईके चित्त न आवत हेरो । मोकहँ तो इक आश तुम्हारिहि, भाँति अनेक कहों बहुतेरो ॥ ३ ॥

जा दिनसे मोहि आप मिले प्रभु, तादिनसे बहु दुःख निवारा । होय अधीन गह्यो शरणागत, भाजि गयो सब भ्रम पसारा ॥ आप पर्खाइके भास मिटाइके, जीव छुटाये कियो निस्तारा । शिष्य कहे गुरु देवसु साहेब, मोकहँतो एक आप अधारा ॥ ४ ॥

ऐसी कृपा जु करी हम ऊपर, होय अधीन गह्यो जब चरना । जन्म रु मर्ण रहे अब कोनको, ये कहि चित्त तुम्हारोहि शरना ॥ सांझ इक संधिक काल सो ग्रासिक, मीटि गयो सब मनको भरना । शिष्य कहे गुरुदेव सुसाहिब, और उपाय नहीं मुहिं तरना ॥ ५ ॥

करुणानिधि आप बनाइ दियो, सकलो संत विवे-

ककी आथी । मेरे हृदये दुःखसाल अनेकन्ह, आप मिटाइ कियो सुख साथी ॥ भास मिटायके फाँस छुटाइ दियो, प्रभु कालहि तू अब नाथी ॥ ऐसो दयालको छाडि के रे शठ, तू बहुदेय भुले देह भाथी ॥ ६ ॥

जो प्रभु आप सहाय करो नहिं, तो यह जीव रहे भव भीरा । अवगुन बापजि माफ करो अब, मैं कछु शील विचार न धीरा ॥ बाल पुकार करें बहुतें सर, हे सुख सिंधु करो मन थीरा । साहेब संत समाज मिले जब, आय लगूँ गुरु ज्ञानके तीरा ॥ ७ ॥

तुमही सब लायक जानत हो सद, वेद पुरान कुरान अनेका । बुद्धि हीन मलीन पुकारत हों, अबहो प्रभु राखहु वेषको टेका ॥ यद्यपि आप विसारहुगे तब, लोक हँसे नरनारि तरेका । ताहिते शिष्यको भाव धरो अब शिष्य भरोंस करे गुरु देका ॥ ८ ॥

करसे सुत मात ना छांडत है, शिर दुःख हजार परे मन जोखा । जोपै पूत कपूत सही है, जननी न विचार धरे उर धोखा ॥ कबीर गोसांइ मेरे शिरताज, दूजा कहां जाये करों तन पोखा । विपति शर बान हरें अति सय, तुव दास लडे चढि ज्ञान झरोखा ॥ ९ ॥

कवित्त ।

बालक ज्यों बोले बात तोतरी बनाय करी, मातु पितु वाके सुख माने प्रेम सानिके । ज्यों पै सुत भूल्यो

आय जननी पुकारे धाय, मारे सुख वचन कहत सहुं आनिके॥ रोदन करत पूत चलो जात दूर धाय, झांझांही विलाप धारि लोटे बहु ठानके। हाथही अम्बर लेइ पोंछि कर उर देइ, पीर सब छीन करी गोद लेवे जानके॥ १॥

दोहा—तैसे तुम गुरु देव प्रभु, देहु सकल सुख साज।
भवबन्धन जाते मिटे, सो चाहत मैं आज॥ १॥
पारख शुद्ध विचार करी, ताहि मांहि सुखधाम।
ताते कहत हूँ आपसो, मोको राखहु ठाम॥ २॥

सोरठा।

खबर लीजिये मोर, परख रूप किरपाल प्रभु।
तुम तजी अनत न ठौर, अबतो आश तुमार है॥ १॥
तात मात मित्रादि, नहिं कोइ मेरो जगतमें।
तुम सुहिर्द बर आदि, भवनिधि तारो नाथ हम॥ २॥
अवगुन देखहु मोर, नहिं कल्यान जु कल्प सुधि।
दया दृष्टि कर तोर, अवगुन चित न विचारिये॥ ३॥
साहब परम उदार, सुखसागर सुखरूप घन।
ताते करत पुकार, जो गुरु होहु सहाय अब॥ ४॥

कवित्त।

दीनोंके दयाल आप कियो है निहाल मोहिं, करो प्रतिपाल सुख सागर समान हौ। नागर विराजमान आगर कहत सब, जनके दयाल मोहि हियमें सोहात हौ॥ कहत अगम वेद पार नहिं पावत सो, मन भरमात

मेरो आप सुख सार हो । शुद्ध बुद्ध ज्ञानभारी सन्तनके रूपधारी, कहे सहदेव भव पारहुके पार हो ॥

आपही पूरन गुरु साहेब कव्वीरहीसो, तिनको नम्र होय बन्दनी हमारी है । सुखही सरूप रूप ज्ञानही अनूप भूप, परख प्रकाश जहां नसे अन्धकारी है ॥ दरसही पाप टारी झांई संधि काल जारी, निजपद आप देहीं, बडे उपकारी है । दीनको दयाल प्रभु सन्तनके उरमाल, कहे सहदेव गुरु ऐसो सुखधारी है ॥

छन्द त्रोटक दुइपदी ।

गुणबन्द निधान सर्वज्ञ प्रभुं । त्रियताप निवारण धीर विभुं ॥ कर्णधार उबारन जीवधनी । स्वयंपारख शोद्ध्य सुवाक्य मणी ॥ १ ॥ त्रिगुणं रहितं मन भापण हे । नित परख प्रकास सुसासनहे ॥ सुगिरामृतधार प्रवाह सरी । पुट श्रावण पानको प्यास हरी ॥ २ ॥ मुझ दासको देव तुहि प्रभुहो । दीननाथके नाथ रखो शर्णु हो ॥३॥

छन्द भुजंगी ।

गुरुजी कृपालो बडो तु दयालो । करो प्रतिपालो मिटी दुःखसालो ॥ करू बिनती मे शिशु जानि तारो । डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ १ ॥

परम सुजान महागुनखान । शीलके निधान सब सुखस्थान ॥ कोई ना कोई ना कोई ना हमारो । डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ २ ॥

परं विरागी क्षमा उरपागी । मैं तो हूं अभागी तेरो पाव लागी ॥ हूं अनारी अनारी मेरो दुःख टारो । डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ३ ॥

गिराहे तुमारी हरे शूल भारी । मया मोह डारी देही सुख सारी ॥ अनाथा अनाथा हियो हे अधारो । डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ४ ॥

मेरे तुहीं स्वामी तुहीं अन्तर्यामी । नहिं काम कामी प्रभूजी अकामी ॥ दयाला दयाला गुरूजी तुं सारों । डरों दुख देखी भवोंके अपारो ॥ ५ ॥

मेरी बात मानी कहुं सो तुं जानों । तेरो ज्ञान भानो करे अन्ध हानो ॥ डरो अन्ध जारो उजारो उजारो । डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ६ ॥

मेटो भ्रांतिझारी भुमां शोकफारी । ग्रही टेकयारी करी प्रीति भारी ॥ चहुं साथ तेरो मेरेकुं उबारो । डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ७ ॥

अहो देव देव करुं तेरो सेव । अबे गुरुदेव देहु सुख भेव ॥ प्रकाशी प्रकाशी प्रभुजी पुकारों । डरो दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ८ ॥

---

## अथ विनयशब्दावलिप्रारम्भः ।

श्रीपूर्ण साहब कृत.

शब्द १-देखों अति सुन्दर छबिनीकी । मंगलदायक सुख लायक, निरखि सकल छबि लागत फीकी ॥ टे० ॥ कृपाकरत लखि दीन दयाकर. भ्रान्ति मिटाब सकलोजीकी ॥ शरण गये मकलो दुःखमेटत, सुख उपजावत देवत सीकी ॥ निज पद मांहि लेत बैठारी, गांठ छुडावत मै ममतीकी ॥ गुरु समको उदार जगमाहीं, पूरन कीन्ह परख अति नीकी ॥ १ ॥

शब्द २-शरण तुम्हारी आयोजी गुरु ॥ टे० ॥ त्रिगुण मायाके फन्दा परि; युगन २ जहँडायो ॥ चाह न योगध्यानकी अब मोहि, नाम जगीरी पायो ॥ १ ॥ लोक परलोक कछु नहिं चाहों, सगुण निर्गुण नहिं भायो ॥ पूरण ज्ञान ज्ञान विज्ञानको, भयो जब पारख थिति पायो ॥ २ ॥

शब्द ३-हो प्रभु दीन जनन प्रतिपालक ॥ टे० ॥ हौं मति मन्द छन्द विषयनको, महा अज्ञ इन्द्रिनको चालक ॥ औगुन हरन नाम प्रभु तेरो, मैं औगुणी अधम कुल घालक ॥ मैं अति दीन शरण तुव आयो, छमो अपराध जीवनके पालक ॥ ना मोहिं योग भोग मद नाहीं, धन मद नाहिं बाँह बल बालक ॥ पूरन दासके तुमहिं अधारा, और सकल जगमें यम जालक ॥ ३ ॥
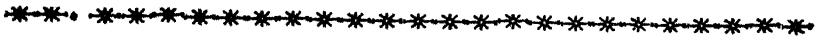
शब्द ४—पतित पावनको सुन्दर ध्याना । निरखंत बदन प्रसन्न सुखदायक, देह आदि बिसरत जग भाना ॥ टे० ॥ चक्रांकित शिर टोप विराजे, ता ऊपर दस्तार बखाना । तिलक लिलाट शुभ अति नीको, तुलसीकी माल गले बिच नाना ॥१॥ ज्ञानको अचला मुक्ति मेखला, अष्ट सिद्ध सेली प्रमाना । दया सिंहासन आइ बैठे, पूरणदास चरण लपटाना ॥ ४ ॥

शब्द ५—कहांलो कहौ गुरुपद प्रताप ॥ टे० ॥ जो मुख होय जीव दश लाखा, तऊ न बरनि सकत प्रभु-जाप । अनेक जन्मको जीव विहाला, तिनको मिटचो महा भ्रम दाप ॥ सङ्कटमें सन्तनको तारा, साधुरूप धरे पुनि आप । बादशाहको कसनी दीन्हे; सिंह रूप धरे पुनि आप ॥ भेषकी टेक राखि करुणामय, पूरण कहा कीन धौ पाप ॥ ५ ॥

शब्द ६—तेरा दिल चाहे उधरे देख मैं देखूंगा तुझे ॥ टे० ॥ तुमतो मुखतार यार स्वतःसिद्ध आपी आप, और को न जानें एक आशरा तेरा है मुझे ॥ १ ॥ चाहे तो चन्द्रमा चकोरनको त्याग करै, पर चकोरनकी आग कहु चन्द्र बिन कैसे बुझे ॥ २ ॥ चाहे तो प्रकाश सकल नेत्रको त्याग करै, पर विनु प्रकाश नेत्रनको जगमें कहु कैसे सूझे ॥ ३ ॥ सतगुरु दयाल तेरो सेवकहूँ बाल, बाल पूंरणको तुमही एक और कोई नहिं दूजे ॥४॥६॥

शब्द ७-तेरी खुशी देख या न देख मैं देखूँ तेरे चरणोंमें ॥ टेक ॥ माय बाप सकल टारे, जाति पांति सकल सब विसारे, सकल आस छाडि गुरु ! आनपडा शरणोंमें ॥ १ ॥ त्यागदई सकल लाज, काहूसे न राख्यो काज, घर घरके भिखारी हूँ नाम सुना करनोंमें ॥ २ ॥ हरदम तेरा अभ्यास और कछु नाहीं भास, सबसो है गयो निराश जो तनही भरनोमें ॥ ३ ॥ नाम तेरा है दयाल पूरण फिरत बिहाल, कबधौं करिहौ निहाल, जावे जबरनोंमें ॥ ४ ॥ ७ ॥

शब्द ८-मेरी प्रीतके निवाहन हारे, लीजे खबरिया, हंस पियारे ॥ टे० ॥ हौं अनाथ कहलावत तेरो, काहे निकारि बाहिर मोहि डारे ॥ १ ॥ जो दूरिआव मोहिको सतगुरु तोहू न छोडो चरण तिहारे ॥ २ ॥ तुम्हारा नाम सुना प्रभु श्रवणन, कि प्रभु पतित अनेक उबारे ॥ ३ ॥ करहु दया निज टेक निबाहो, जो तुम बिरद जगत्में धारे ॥ ४ ॥ जो कहो मोहि न जगतसे काजा, रहन अलिप्त सबनसों न्यारे ॥ ५ ॥ तो उपदेश कीन गहि बाहों, अब हम जाव कौनके द्वारे ॥ ६ ॥ धारी देह जीवन हितलागी, दै परचे अनेक उबारे ॥ ७ ॥ तार भार दीन्ह तोहि पूरण- क्षमा करो अपराध हमारे ॥ ८ ॥ ८ ॥

शब्द ९-धन सतगुरु तुमरी बलिहारी ॥ मैं मति हीन छीन निज कर्मनि, दीन उधारन लीन उबारी ॥ टे० ॥

जिमि अंकुर तपे विनु बारी, ताकी अम्बुज सिद्ध खरारी॥
आनिके वेगहिं लीन जगाई, नहीं तो परते भर्म बिगारी॥
परम दयाल दयाके सागर, महाकष्ट दुख द्वन्द निवारी॥
सदा रहत दासनके संगा, पूरण परखावत भर्म विकारी९॥

शब्द १०—मम बोहित तुम खेवनहारा। जग समुद्र अज्ञान भरचो जल, तृष्णा तरंग करत ललकारा॥ टे०॥ काम क्रोध जलजन्तु अपरबल, बैठा मगर भरि हंकारा॥ १॥ मोह भर्म बिच आनि पराहूँ, सूझिपरे नहीं वारो पारा॥२॥ बूडत नाव उबारो साहब, आदि अन्तके हौ कड़िहारा॥३॥ अशरण शरण विरद सम्भारो, पूरण आयो शरण तुम्हारा॥ ४॥ १०॥

शब्द ११—तुमीरहि दरसको बनाहूँ भिखारी॥ मधुकर इव सब फिरत जगतमें, कबधौ मिलौगे कमल सुखारी॥ टेक॥ काम क्रोध मद लोभ अपरबल, तृष्णा उठत लहरि अति भारी॥ मन रात्यो नाना विषयनमें; इन्द्रिन बाट निपट मोरि पारी॥ चित्त चञ्चल को समुझावे, खाँड छाडि फांकत है छारी॥ गुरु विचार पर छिनहु रहत नहिं, जग अनित्य मां भई मतवारी॥ ई नाना औगुन मोमें रहत है, मांगो दर्शन करि ढिठियारी॥ जेहि हित मुनि जन योग करत हैं, त्यागि राज कुटुंब धन नारी॥ पूरन एक भरोसो आवत हो प्रभु जीवनके हितकारी॥ शरण आयको त्यागत नाहीं, बन्दीछोर बिरद अतिभारी॥ ११॥

शब्द १२–मुझ लाचारके तुम रखवारी ॥ टे० ॥ नहिं मोहि द्रव्य बाहु बल नाहीं. नहिं मोहि विद्या बल अधिकारी ॥ ना मैं सिद्ध न साधनको बल. ना मैं मन्त्री ना व्रतधारी ॥ तपसी हौं ना मैं, हौं दीन परम गुरु, बाँह गहेकी लाज तुम्हारी ॥ बालकके दुलार निरवाहन । तुम बिनु कौन पूरण सुखकारी ॥ १२ ॥

शब्द १३–परचो है कष्ट अति भारी मोको कष्ट अतिभारी ॥ टे० ॥ पाखंडिन पाछो बहु कीन्हो, ताते चोट लगत है कारी ॥ दीन जानि उपहास किय चाहैं, मैं लाचार गरीब बिचारी ॥ ना मुहि सिद्धि न साधनको बल, मुझ कंगालके तुम रखवारी ॥ सगरी लाज तुम्हारी परमगुरु, पूरण तुव पद केर भिखारी ॥ १३ ॥

शब्द १४–तुव चरणाम्बुज विशद प्रयोगे ॥ टे० ॥ मम मन कठिन भवँर अतिदारुन, कारन कौन तन्त्र नहिं लागे ॥ अब यह मांगों तोहिं दयानिधि. कर जोरे प्रेमन बहु पागे ॥ जो रज पावन करत जगतको, सोइ आइ मस्तकपर लागे ॥ और इच्छा होय कबहुँ कछु, निशिदिन रहुँ चरणनके आगे ॥ चरण प्रताप होत ज्ञान गम, बहु जीव जाते होत सुभागे ॥ महिमा तुम चरणनकी साहब, बिनु जाने सब जीव अभागे ॥ ताते काया रहै जब लौं जग, तोलौं रहों मैं चरणन लागे ॥ आखिर

चरण होय तै हौं, जैसे सीप बुन्दसों लागे ॥ साहब कबीर सुखरूप कृपाघन, पूरणदास यही वर मांगे ॥ १४ ॥

शब्द १५—तुम्हरे नामको भरोसो भारी ॥ हो प्रभु सेवकके सुखकारी ॥ टे० ॥ सिद्ध चौरासी बन्दि परे तब, गुरु गुरु करि कीन्ह पुकारी ॥ तुरतहिं जाइ छुडायो तिनको, साह सुलतान कीन्ह सुखारी ॥ एक दिना काशीके माहीं, कुष्ठी साह आयो अतिभारी ॥ पद्मनाभने परचे दीन्हा, नाम प्रतापते कष्ट निवारी ॥ नाम लेत तारे बोहित प्रभु, साह दामोदरकी भयहारी ॥ इन्दुमती जब टेर कियो है, नाम प्रताप उतर्यो विष-कारी ॥ नाम तुम्हारा अटल प्रभु युग युग, जीवन अधम अनेक उबारी ॥ याहीते निश्चय भयो पूरण अब, करि हौ सुखी सब दुःख विडारी ॥ १५ ॥

शब्द १६—कैसे रहों जगमाहीं करुणायतन विनु, कैसे रहौं ॥ टे० ॥ जैसे जल बिनु मीन दुखित होय, तलफि तलफि मरि जाई ॥ कोइ तो आये ब्रह्म बतावे, सूर प्रभाकी झांई ॥ कोइ तो कहै यह आतम स्वयम्, जल तरंगकी नाई ॥ कोइ तो कहत दूजा है कर्त्ता, कोइ तो कहत कछु नाई ॥ कोइ तो कहत यह देहही ब्रह्म है, मेरो मन न पतियाई ॥ कोई योग कोई ध्यान बतावे, कोइ कोइ अलख लखाई ॥ कोइ कहै ज्ञान विचार करो फिर, आप ब्रह्म जग भाई ॥ गुरु कबीर पारखकी राशि,

सब सुखको सुखदाई ॥ ता पदसे कैसे होय न्यारा, आपहि पूर्ण कहाई ॥ १६ ॥

शब्द १७—क्यों न जपो मन लाई, अक्षर दोउ नीको, क्यों न जपो मनलाई ॥ टे० ॥ गुरु गुरु यह महामंत्र है, और मंत्र कछु नाहीं । ब्रह्मा जपत अरु विष्णु जपत हैं, और जपत शिवराई ॥ शास्त्र पुराण यह साख बखानत, गुरुते परे कोइ नाहीं ॥ गुरुते सकल सिद्धि रिद्धि होत है, गुरुते परम पद पाई ॥ गुरुते ज्ञान अरु गम्य होत है, गुरु बिनु कछु न बसाई ॥ गुरु बिनु काहूको काज सरै नहिं, बहुत भये जगमाहीं ॥ राम कृष्ण तिनहूँ गुरु कीन्हा, मूरख चेतत नाहीं ॥ और मंत्र सब कालस्वरूपी, जीवन देत भुलाई ॥ गुरु मन्त्र यह पूरण कृपाधन, जीवनके सुखदाई ॥ १७ ॥

शब्द १८—गुरुते और नहिं कोई; मन देख विचारि ॥ टेक ॥ ज्ञानी मुनी सब ज्ञान बखानैं, रीते गये सब कोई । गुरुके गुण सब गावहिं, हो गज अन्धकी नाई ॥ टोइ टोइ पार नहिं पावे, मन माने मति भाई ॥ कोइ ब्रह्मा कोइ विष्णु कहै गुरु, कोइ कहै शिवजोई ॥ कोइ कहै सतगुरु पार ब्रह्म है, या विधि गेल बिगोई ॥ कोइ तो परमगुरु पुरुष बखाने, ईश कहत कोइ लोई ॥ कोइ कहै गुरु अन्तर्यामी, सबमें भरयो है सोई ॥ कोइ कर्त्ता कोइ माया कहै गुरु, मति बुद्धि सब गइ खोई ॥ पूरण त्रिपद लांघे नाहीं, कैसे गुरु पद होई ॥ १८ ॥

शब्द १९–बक बक सब बौराने, गुरू कोइ न जानें । अंधाधुन्ध मत प्रगट कियो है, सब जीवनको ताने॥टेक॥ घर घर तो सब गुरुआ बनें हैं,कीन्हें बहुत बहुत बन्धाने॥ बन्दीछोर बिनु नहीं उबारा, ये सब जग मलताने॥ बन्दी छुडावन जगमें निकसे, आइपरे बन्दीखाने ॥ जो पूछौ गुरु कासौ कहिये, तौ कहत आनकी आने॥ कोई कहै गुरु सच्चिदानन्द, कोई कहै पुरुष पुराने ॥ कोइ मानुष कोइ देव कहत हैं यहि विधि भरम भुलाने ॥ कोई शब्द कोइ वेद कहत हैं कोई आतम अनुमाने॥ त्रिपद परखाये बिनु पूरन, कैसे परे पहिचाने ॥ १९ ॥

शब्द २०–आप न बूझ कहँ और बुझावे, बिनु पारख नर भटका खावे॥ टे० ॥ ग्रन्थ पुराण बहुत जग बांचे; याते कहँ आवागमन नसावे । रहनी विना सब कहनी कांची, बिनु भोजन कभू भूख न जावे ॥ बेटी बेटा चेली चेला, मोह जाल कहँ जानि बढावे । घर छोडे मठकी करे आशा, पूरण व्याधि कहँ सीस चढावे॥२०॥

शब्द २१–गुरुजी तेरो भजन भरोसो भारी ॥ टे० ॥ शरणागतकी बाँह गहत हौं, भवसे पार उतारी ॥ बडे २ अपराधी तारे, हिंदू तुरुक नर नारी॥ गुण औगुण एको नहिं जानत, हौं पशु मूरख अनारी ॥ जगसे भागि आये तुम शरणा पूरण दीन भिखारी ॥ २१ ॥

शब्द २२-मेरोमन बैरागी आज, बसिये साहब चरन ॥टे०॥ चरण प्रताप महा अघ नाशत, मेटत जनम मरन॥ दुखदारिद्र विनाशक गुरुपद होय रहो अशरन शरन ॥ परख परकाशी सब सुखराशी, जीवन मुक्ति करन। सबहिनके सुखदाई पूरन, सहाइ भवभय रोग हरन २२

शब्द २३-होय रहु साहब शरण, मन छांडि जगतकी आस ॥ टे० ॥ जग आशा औ स्वर्गकी वासा, यही कालकी फाँस ॥ नर नारी औ माल खजाना, छाडु आयुबल गाँस ॥ सुन्दर तन अरु सुन्दर जग यह, सब सपनेको भास ॥ पूरण पारख जौलौं नहिं पावे, तौलौं भरम विलास ॥ २३ ॥

शब्द २४-भजुरे मन सद्गुरु कृपालको नाम ॥टे०॥ नामप्रताप अटलि तिहुँ लोकमें,सबविधि मङ्गल धाम ॥ और नहीं कहुँ जाऊं महा प्रभु, लागि रहौं निशिनाम ॥ नाम रटन जिन जगमें कीना, ते पाये विश्राम ॥ नाम असंग सकल सुखदाता, करि हैं पूरण काम ॥ २४ ॥

शब्द २५-(रागपिस्ता) जायके सनमसे कहियो मेरी बात। वेगि खबरिया लीजै अब जान निकरी जात। जाय सनमसे ॥ टे० ॥ तेरे विरहके मारे मोहिं नींद न आवे। नयनोंने झरि लाई जीव चैन नहिं पावे ॥ एक राहके दरियावमें बूडा है मेरा मन। एक वक्त गश आवता जाता बिसर तन॥ सुरता सहेली जायके तूने कहना

अहवाल । वेगिते दर्श दीजे दासु होत है विहाल ॥ सुख निधान समरत्थ सब सुखको बीज है। तेरी शरणमें आयके पूरण अजीज है ॥ २८ ॥

शब्द २६-प्रभु बिनु दुख नरकको कौन हरे ॥ टे० ॥ जहँ जहँ कष्ट पडत दासनको, तहँ तहँ साहब होत खरे ॥ गर्व करै तो भरी ढरकावे, होत अधीन तो फेरि भरे ॥ भाव भक्तिके सदा समीपी, दम्भ पाखण्डते रहे परे ॥ दीनदयाल बिरह है जाको, ताको पूरण ध्यान धरे ॥२६॥

शब्द २७-सुनिय दयानिधि अरज दासकी । कृपा किये बहु भर्म मिटाये, शंका रही न गरभबासकी ॥ बडे भाग मैं आपन जान्यो, आय पर्यो प्रभु चरण खासकी॥ देह अनित्य कहा अब मानो, नाश होयगी रक्त माँसकी ॥ यहि जगतकी मोह कहाँ बढावई, कहा कथा जड वाम मासकी ॥ रिद्धि सिद्धि और मान बडाई, मनमें इच्छा नहिं तासुकी ॥ अमृत भोजन पाय अघाय, पुनि कस इच्छा होत घासकी ॥ यह संशय मेरे मन आई, मेटहु साहब कठिन फाँसकी ॥ परखविलासी सब सुखराशी, जानत हो सब जीव पासकी ॥ काह छिपा तुमसे कहे पूरन, टेक निबाहो मोर आसकी ॥ २७ ॥

शब्द २८-तुमविनु समरथ कौन रखवारा । जीवनको दुख मेटनहारा ॥ टेक ॥ जब जब कष्ट परत दासनपर, होत विहाल जीव करत पुकारा ॥ धारि देह तुरत

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

तहां प्रगटत, दुख द्वन्द्वज सब दूरि विडारा ॥ कियउ सुखी निज दासन लागि, काहे उपेक्षा कीन्ह हमारा ॥ पूत कपूत लाज जनि ताको, शरणपरे निर्वाह बिचारा ॥ करुणामय कबीर गोसांई, दीनदयाल विरद अति धारा ॥ दीन जानि अब दाया कीजै, आनि गह्यो अब शरण तुम्हारा ॥ जगमें कछु न मोर अधिकाई, साहब शिर सेवकको भारा ॥ पूरण दुखित होय जो समरथ, तौ लाजत सब विरद तुम्हारा ॥ २८ ॥

शब्द २९–याहीते प्रभु नाम दातारा, सेवक आश पूरावनहारा ॥ टेक ॥ हीन दीन अति दीन भयो तब, याचक आयके कीन्ह पुकारा जो नहिं आश पुराओ ताको, तौ लाजत हैं बिरद तुम्हारा ॥ हम ऐसे याचक तुम्हरे घनेरे, मेरे तो एक तुमहि आधारा ॥ तजब प्रान जो याचत तुमसों, तब हम जाब कवनके द्वारा ॥ हंसन नायक सब सुखदायक, सुनिके अरज भली चित धारा ॥ जो नहिं हमरी वांछा पुराओ, तो हसिहैं सकलो संसारा ॥ जाके सेवक होत बिकल अति, ताके साहब कस कल धारा ॥ पूरण याहि अन्देशा मोहीं, जानि बूझिके चहत बिसारा ॥ २९ ॥

शब्द ३०–तुम बिनु अरज करों केहि आगे । स्वर्ग मृत्यु पाताल लोक लौं, असको जो मोहि करत सुभागे ॥ टे० ॥ करुणामय कबीर कृपानिधि, साधु सन्त

गावत सब जागे ॥ कि प्रभु अजर अमर अविनाशी, सुमिरत जाहि सकल दुख भागे ॥ यहिते मोहि भरोसा आवत, औ प्रतीति भई बहु जागे । अबकी बार कस विलम्ब कियो है यह अचरज मनमें अति लागे ॥ तुम सब लायक हो सुख दायक, अचरज करत मोरे मन पागे ॥ चाहो तो अपनो टेक निवाहो, नाहीं तो हम बने हैं नागे ॥ पूरण अचरज करत सुख सांई, तुम कीरति मोको हित लागे ॥ इतनी विनय मानहु मोरी, जो मम सुरति निशाना दागे ॥ ३० ॥

शब्द ३१—कृपादृष्टि कब हेरो गुरुजी कृपादृष्टि कब हेरो ॥ टे० ॥ तुम अस समरथ शिर पर राजत, दुख पावत है चेरो ॥ सब लायक प्रभु हो सुख दायक, मम अपराध घनेरो ॥ क्षमो अपराध दयाके सागर, आय परे शरणों अब तेरो ॥ पूरनकी यह अरज दयानिधि, चरणन देहु बसेरो ॥ ३१ ॥

शब्द ३२—कभी तोभी दरस दिखाओ गुरुजी मोको कभी तोभी ॥ टे० ॥ चातकवत मैं पंथ निहारों स्वाती ह्वैके जुडावो ॥ जिमि चकोर चन्दा तन चितवत, और नहीं चित भावौ ॥ तुम्हरे दरस बिनु अति बिहाल जिय, मिलन न परख परभावो ॥ पूरणके साहब सुख दाता, विनवत हौं गहिपावो ॥ ३२ ॥

शब्द ३३—लीला प्रभु तुम्हारी कही न जाय ॥ टे० ॥

**-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-**

राई सों यर्वत करि डारत, पर्वत राई तुल्य दिखाय ॥ सुर नर मुनि सब खोजत हारे, कृपा मात्रमें सो परखाय॥ जो पद इन्द्रादिक नहिं पावत, सो पद माँहिं दास बैठाय ॥ साहब कबीर जीवन सुखदाता, पूरण निज पदमाँहि रहाय ॥ ३३ ॥

शब्द ३४-मिले हैं दयाल कृतारथ भये हम ॥टे०॥ शब्द लखाये कियो प्रभु मेरे, निजकरते डारी उरमाल ॥ धोखा द्वन्द्व सबै मिटि गयऊ, टूटि गयो सब जमको जाल ॥ स्वर्ग मोक्षकी आशा नाहीं, पारख पाय भये है निहाल ॥ पूरण प्रकाश और नहिं आशा, सर्वत्र दयाल बन्दीछोर कृपाल ॥ ३४ ॥

शब्द ३५- मनहर लीन्हो सत्य कबीर ॥ मन० ॥ टेक ॥ लोग कहत जग भई है बावरी, कोई न बूझत पीर ॥ गावन नाचन कछुओ नहिं भावे, व्याकुल भये हैं शरीर ॥ बहु विचार केतिक समझाऊँ, जियरा धारत न धीर ॥ पूरन सुख प्रभु आप विराजे पञ्चकोशके तीर ३५

शब्द ३६-मन हर लीन्हों दीन दयाल, जीवनके रक्षपाल ॥ टे० ॥ कहौं कहा मोहि कल न परत है अन्तर होत बिहाल ॥ सुख सम्पति मोहि कछुवो न सुहावे; लोग कुटुम्ब यमजाल ॥ तनकी सुधि बुधि सबही बिसरी, जब दीन्हीं उरमाल ॥ पूरण सुख जे पूर रह्यो है, कहा करे भर्म काल ॥ ३६ ॥

शब्द २७—गुनी अगुनी हौं तिहारो प्रभुजी. गुनी० ॥ टे० ॥ पुत्र अजान करतुहै औगुण, तोहु पिताको प्यारो ॥ जो मम औगुण लखहू साहब, तो सब विधि हम हारो ॥ मिहर करहु जो दास जानिके, तो हम जग निस्तारो ॥ बिरदकी लाज राखु प्रभु मोरी, पूरणदीन विचारो ॥ ३७ ॥

शब्द ३८—हमारी लाज तुम्हारे हाथ गुरु नाथके नाथ ॥ ह० टे० ॥ खर्ची खुटगई वर्षा आई, देश बुरो गुजरात ॥ तुम बिन कौन हमारो वाली, जो अब करत सनाथ॥तेरे नामको भरोसा मोको और न कोई संग सँघात। लेहु खबरि कबीर कृपानिधि, पूरण नावत माथ ॥३८॥

शब्द३९—तुम बिन कौन हमारो देश, कठिन कालको वेष॥टे०॥जोरे मिला सो अपनी गरजको,राजा रंक नरेश॥ हमरे तो गुरु तुमहिं अधारा, दीन दयाल वरेश ॥ वेग खबरि लेहु प्रभु आई, दुचित भयो जिय रेश॥ निज-दासन प्रतिपालन करत प्रभु, साहब कबीर दुर्वेश॥३९॥

शब्द ४०—गुरु तेरे दर्शनकी बलिहारी ॥ गुरु० ॥ ॥ टे० ॥ तुम्हरे दरसते कष्ट हरत है, करम मिटत है भारी ॥ सन्त स्वरूपी आप कृपानिधि, खोलत भरम किवारी ॥ जिन्हें दरस सुख दियो दयानिधि, आवा गमन निवारी ॥ सुख स्वरूप कबीर कृपानिधि, पूरण परख बिहारी ॥ ४० ॥

शब्द ४१-तुम बिनु कौन खबरिया मोरि लेवे ॥ टे० ॥ देश बिराना कोइ नहिं आपन, कौन सेवकको सेवे ॥ मेरे तो सतगुरु एक अधारा, जो चाहौ सो देवे ॥ यह जग सबही द्वन्द्व पसारा, कैसे नवरिया खेवे ॥ परख विलास कबीर कृपानिधि, पूरण जानत भेवे ॥ ४१ ॥

राग बिलावल ।

शब्द ४२-तुमही सतगुरु दाता मेरे, मैं अधीन चरननके चेरे ॥ टे० ॥ तुमको माँगे तुमको जाचे, निशि-दिन रहत चरनके नेरे ॥ चरण छांडि अनते नहिं जावे, जैसा भँवर कमलको घेरे ॥ तुमरा ज्ञान ध्यान जप तुमरो, तुम तजि और तन नहिं हेरे ॥ जिमि पतिव्रता पतिव्रत ठाने, आज्ञा जुगवे सांझ सबेरे ॥ हरि हर ब्रह्मा आदिजे देवा, रिद्धि सिद्धि दातार घनेरे ॥ हमको नहीं इन सबते काजा, एक तुम्हारी दयाके प्रेरे ॥ वेगि खबर लेहु करुणामय, काहेको अन्त लेत प्रभु मेरे ॥ तुमही जानक तुमही प्रेरक, तुम कबीर हो सुखके डेरे ॥ ४२ ॥

शब्द ४३-सबके जनैयाको कहा जनैये, जानतही सकलो सुख पैये ॥ टे० ॥ तनकी मनकी सकल लोककी, जाननहारसो कहा छिपैये ॥ निर्मल संगति करहु संतकी, निर्मल होयके निर्मल समुझैये ॥ जो जानत तिहुं लोक रैन दिन, ता साहबको कहा जनैये । जाग्रत सुषोप्ति तुरिया, तुरीयातीत नहिं जहँ पैये ॥ वाच्य लक्ष मनको

चतुराई, जहाँ नहिं तहँ कैसे कि जैये ॥ बिनु पारख कछु जानि परै नहि, उनकी कृपा बिनु परख न पैये ॥ हौं लाचार सकल विधि साहब, विनय करो तो को चित्त लैये ॥ सुख स्वरूप कबीर कृपानिधि, पूरनको मन ना भर्मैये ॥ ४३ ॥

शब्द ४४—वेगि खबरिया प्रभु लीजै दीन दयाला ॥ टे० ॥ आनि परचो परदेशमें देख्यों यमको जाला ॥ इहाँ न कोई आपनो, तुम बिनु रच्छपाला ॥ मोहि तो आधार तेरे नामको, हौ दासन प्रतिपाला ॥ मोहि कछु बिलम्ब न कीजिये, जीव भये हैं बिहाला ॥ हौ गुर्णी औगुर्णी पर, तेरोई कहावत बाला ॥ जो तुम खबरि न लेहु, तो मम कौन हवाला ॥ साहब कबीर सुखके राशी, हौ करुणाके आला ॥ सुनियो अरज निज दासकी, अब करिये निहाला ॥ ४४ ॥

शब्द ४५—अपने हम भोग निज भोग ॥ टे० ॥ जानि बूझि कैसे अन्त लेहौ, यह नहिं तुमको योग ॥ जगमें दास कहाये तुम्हारे, लागयो भवको रोग ॥ अस समरथके शरन आयके, छूटचो नहीं मम सोग ॥ साहब कबीर बिरदके पालक, हँसन लगैंगे लोग ॥ ४५ ॥

शब्द ४६—करुणामय नाम तिहारो। टे० ॥ निठुर भये कछु काज न सरि है, आवत बिरदको हारो ॥ जग हँसिहै तब कहाँ बडाई, ताते वेगि सम्हारो ॥ तुमरी

शरण आयउँ मैं साहब, और न कोइ सहारो ॥ साहब कबीर दया अब कीजे, पूरण आइ पुकारो ॥ ४६ ॥

शब्द ४७—दीननके हौ दयालु दया जनपै करो ॥ शरण आयेकी लाज गई, प्रभु अस जनि करो ॥ दशहूँ द्वार विकार धार नौका बहे, सुरति नाहिं ठहराय, लगन कैसे लगे ॥ पाँच तत्त्व गुण तीन साज सब सांजिया, याते रहे भुलाय, तो फन्दे फँदे ॥ त्रिगुण मायाके फन्द फँदो जिव आइके, गहु साधनको संग गुरुते लौ लायके ॥ मोक्ष मुक्ति जब होय दया दिल आवई । परिपूरण करि देव महासुख पावई ॥ साहब कबीर बन्दीछोर अरज एक भाखिये । हमसे अधम उधार शरण प्रभु राखिये ॥४७॥

आराधना ( गद्यमय )

( स्वामी श्रीयुगलानन्द बिहारी कृत )

हे सत्यपुरुष ! आपकीही सत्तासे सर्व जड चैतन्य स्थित है, सर्वके जीवन आपही हो । आपके अतिरिक्त जो कुछ गुप्त परगट है, नाशमान, असत्य और अनित्यहै, एक आपही सत्य और अविनाशी हो ।

हे सत्यसुकृत ! आपके अतिरिक्त जितनी कीर्ति है सब क्षणिक और मायिक है । सब कीर्ति आपके अतिरिक्त कालने रचे हैं और काल स्वयम् नाश होनेवाला है, इस कारण आपकीही कीर्ति सत्य और नित्य है ।

हे आदि अदली । आपकाही नियम सत्य और सुख-

दायक है, आपकाही नियम सर्वसे पूर्व प्रकाशित होता है, उसीके सहारे सत्य आनन्दकी प्राप्ति होती है ॥

अजर ! आपको जरा नहीं है अर्थात् आप जन्म, मरण और उसके मध्यकी बाल, किशोर, युवा, प्रौढ और वृद्धावस्थासे परे सदा, एक समानही रहनेवाले हैं ।

हे अमर ! आप कालके जालसे छुडाकर अपने हंसोंको अमर करते हो, स्वयम् कालभी आपसे भय करता है ।

हे अचिन्त ! आप शुद्ध आनन्द स्वरूप हो, चिन्ताका आपसे कोई सम्बन्ध नहीं, तथापि हम जैसे दीनोंकी सहायताकी चिन्ता आप सदा ही करते हो ।

हे पुरुष ! आप यद्यपि सर्वत्र एक समान स्थित हो तथापि सच्चे सन्त, सच्चे भक्त, सच्चे हंस और सच्चे पारखियोंके हृदयोंमें आपका विशेष प्रकाश प्रगट होता है ।

हे मुनीन्द्र ! सत्य सुकृत स्वरूपसे आप सदाचारका उपदेश देकर, मुनीन्द्र स्वरूपसे सत्यासत्य सारासारके मननका मार्ग बताते हो, अनेक प्रकारके मनन करने पर भी जब यह जीव कालके जालसे नहीं निकल सकता, तब आप करुणामय स्वरूपसे पारखका मार्ग बतलानेको टकसारकी प्रवृत्ति कराते हो । और जब टकसारद्वारा अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है तब आप साक्षात् सत्य कबीरके स्वरूपसे प्रत्यक्ष पारख बतलाकर कालजालसे छुडा देते हो ।

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

हे बन्दीछोर! आप बारम्बार कहते हो, पुकार २ कर जतलाते हो कि, तुम्हारी शरण विना हमारा ठिकाना कहीं भी नहीं है, जिस समय आपका शरण प्राप्त होता है उसी समय कालसे तिनका टूट जाता है। ऐसी सर्व सुख-दाई शरणको भी पाकर हे अधम उधारण! हम ऐसे अधम हैं कि, आपकी शरण नहीं पकडते। वरन केवल मुखसे बातें बनाकर दम्भसे अपनेको आपका दास कहते कहलाते हैं परन्तु, दासपनका नियम तक नहीं जानते ॥

हे दीनानाथ! आपही सबके सहायक हो हम दीन और अनाथ हैं, जिसको नाथ करके पकडते हैं वे सभी स्वयम् आपके शरणकी अभिलाषा रखते हैं इस कारण हे प्रभु! आपही सत्यनाथ हो, आपको छोड कहां जाऊँ।

हे ज्ञानमय चैतन्य पुरुष! आपकीही अस्तित्वसे सर्व जड चैतन्यभासमान होरहा है, सबकी कुञ्जी आपहीके हाथमें है। कालभी आपके डरसे डरता है। सर्व ब्रह्मांड आपकीही आज्ञा पालन करते हैं। जब आप कालके प्रभु हो तब हमारा आपके अतिरिक्त दूसरा क्या सहारा है।

हे निर्भय! जबतक आपका सत्य पारख मेरे हृद-यमें वास नहीं करता। तबतक हम कालके करतूतोंको जान नहीं सकते। जब तक उसे जानकर हम उससे अलग नहीं होते, जबतक आपकी आज्ञाओंका विरोध करते हैं, तभीतक हमको सर्व प्रकारका भय प्राप्त

होता है, परंतु आप जब दया करोगे तभी सर्व भयसे छुडाकर निर्भय करदोगे ।

हे आनन्दसिन्धु ! जब तक हमारी ज्ञानशक्तिमें आपके पारखका प्रकाश नहीं होता, तबतक हम आपके सत्य-स्वरूपको किस प्रकार जानसकें। जब आप दया करोगे, अपनी सारा सार विचारिणी ज्ञानशक्तिको प्रेरणाकर मुझे अपने शरणमें लोगे, तभी आपकी आज्ञानुसार कालके जालको परखकर आपकी शरणसे निराश नहीं होंगे।

हे सत्यसिन्धु ! ऐसी कृपा करो जिससे कि, सर्व असत्यसे छूट कर आपकोही प्राप्त हो जाऊँ ।

हे प्रेममयी ! अपने कृपाकटाक्ष द्वारा ऐसी दया करो कि, आपके सत्य प्रेममें मग्न हो जाऊँ ।

हे अमृतमयी ! ऐसी दया करो जिसमें आपकी अमृतरूपी आज्ञाओं पर चलनेकी हममें शक्ति हो ।

हे शांतिनिकेतन ! आपकी कृपाके अतिरिक्त हम उस सौभाग्यताको कैसे प्राप्त हो सकेंगे, जो आपके सच्चे दासको प्राप्त होताहै । हम कैसे भी हैं परन्तु अबतो आपके कहलाते हैं, यदि हमको सत्य शान्ति प्रदान न करोगे तो आपकीही विरद लज्जायमान. होगी ।

हे पुण्यमयी ! हे सच्चे भ्राता ! हमको ऐसी सुमति दो जिससे परस्परके विद्वेषको त्यागकर आपकी सेवामें लगजावें ।

हे हंसननायक ! अपने ऐसे हंसोंकी संगति मुझे

प्रदान करो, जिससे आपके अतिरिक्त दूसरेकी वासना हृदयसे उठजावे।

हे सत्य! असत्यसे बचाकर सर्वदा सत्यकी ओर लेजाओ।

अविश्वासके जालसे निकालकर, विश्वास और श्रद्धाको प्राप्त करादो। अप्रेमसे बचाकर प्रेममयी देशमें पहुंचादो, अपवित्रतासे निकालकर पवित्रताको दिखादो। स्वेच्छाचारीपणासे निकालकर, अत्याचारसे छुडाकर तुम्हारी इच्छा और आज्ञाके अधीन करके स्वतंत्र और सदाचारी बनादो।

हे कल्याणमयी! अकल्याणके मार्गसे हटाकर कल्याणकी राह दिखादो।

हे सत्यगुरु! अंधकारमय देशसे उठाकर प्रकाशमय देशमें डालदो।

हे सत्याचार्य! आपके सत्य धर्म, सत्यपंथ और आपके सच्चे संतोंमें ऐसी श्रद्धा दो जिससे अवनतिके भवनसे निकलकर सत्योन्नतिकी सडकपर चढजाऊं।

हमलोगोंको ऐसा उत्साह और ऐसी उत्कंठा दो, जिससे आपकी आज्ञाओंको पूर्ण करने, आपके स्थापित सत्यधर्मको फैलाने, आपके सत्यराजकी महिमा प्रगट कर, अपनी तथा और दुखियोंकी आत्माको कालजालसे बचानेमें समर्थ होवें। शांतिः! शांतिः!! शांतिः!!! ॥

सत्य कबीरोजयति ॥

# निवेदन ।

यह गुरु सहस्रनाम लेखक महाशयोंकी कृपासे अबतक इस अवस्थाको पहुँचगया है, जैसा आपके सन्मुख उपस्थित है । कितने कारणोंसे इसके शुद्ध करानेका अवसर नहीं मिला है । यदि कोई विद्वान महात्मागण इसको शुद्ध करके मेरे पास भेज देंगे, तो धन्य-वादपूर्वक इसकी दूसरी आवृत्ति फिरसे छपायी जायेगी ।

इसके अतिरिक्त कितने लोगोंने मुझसे कहा है कि, यदि गुरुस-हस्रनामकी हिन्दी होजावे और वहभी होवे कवितामें, तो संस्कृत न जाननेवाले जिज्ञासुओंका विशेष उपकार हो । इसलिये श्रीयुत शास्त्री विचारदासजी साहब, पण्डित ब्रह्मलीन दासजी, शास्त्री हंस दासजी तथा महंत लक्ष्मणदासजी गुरु श्रीमान् महंत तुरंतदासजी साहेब मुंगाना आदि विद्वानोंसे मेरा विनय है कि, आपलोगोंमेंसे जो महानुभाव इस गुरुसहस्त्रनामको शुद्धकरके, टीका और इसका हिन्दी कवितावद्ध अनुवाद भेजनेकी कृपा करेंगे तो बडा उपकार करेंगे और मैं बडे आनन्दके साथ उसे छपाकर प्रकाशित करदूँगा ।

भवदीय-

श्रीयुगलानन्द विहारी

कबीराश्रम ( खरसिया ) बिलासपुर सी०

श्रीगुरुवे नमः ।

## अथ श्रीगुरु सहस्रनाम प्रारम्भः ।

न्यास प्रारम्भः ।

ॐ यस्य सद्गुरुदिव्यनामस्तोत्रमन्त्रस्य ॥ शिष्य ऋषिः ॥ मन्त्रछंदः ॥ गुरुदेवता ॥ सोहं बीजं ॥ अहं शक्तिः ॥ गुं अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ रुं तर्जनीभ्यां नमः ॥ वं मध्यमाभ्यां नमः ॥ नं अनामिकाभ्यां नमः ॥ मं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ सं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ गुं हृदयाय नमः ॥ रुं शिरसे स्वाहा ॥ वं शिखायैवषट् ॥ नं कवचायहुं ॥ मं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ सं अस्त्राय फट् । गुरुप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।

---

१ यह मंत्र पढकर दोनों हाथकी तर्जनी अंगुलीसे, दोनों हाथके अंगूठोंको स्पर्श करते हैं । अंगूठेके पास जो अंगुली है उसीका नाम तर्जनी है ।

२ यह मंत्र पढकर दोनों अंगूठोंसे तर्जनी अंगुलियोंका स्पर्श करते हैं ।

३ इस मंत्रको पढता हुआ दोनों मध्यमा अंगुलियोंका स्पर्श करे ।

४ इसको पढकर दोनों अंगूठोंसे अनामिकाको स्पर्श करे ।

५ इसको बोलता हुआ दोनों अंगूठोंसे दो कनिष्ठिकाको स्पर्श करे ।

६ यह मन्त्र पढकर प्रथम दाहिने हाथके नीचे बाया हाथ रक्खे फिर बायें हाथके नीचे दाहिना हाथ रक्खे ।

७ यह मन्त्र पढकर पांचों अंगुलियोंसे हृदयका स्पर्श करते हैं ।

८ यह मन्त्र पढकर पांचों अंगुलियोंसे शिरका स्पर्श करते हैं ।

९ इस मन्त्रको बोलकर पांचों अंगुलियोंसे शिखाका स्पर्श करते हैं ।

१० यह मंत्र पढकर दाहिने हाथसे बायें खवे ( कन्धे ) का और बायें हाथसे दहिने ( खवे ) कन्धेका स्पर्श करते है ।

११ इसके द्वारा दहिने हाथसे दोनों नेत्रोंको छूते हैं ।

१२ यह मंत्र पढकर दहिने हाथकी तर्जनी और मध्यमासे बाये हाथकी हथेलीपर मारते हैं ।

१३ यह पढकर ऐसा संकल्प करे कि सद् गुरुके प्रसन्न होनेके निमित्त मैं यह पाठ करता हूं ।

श्लोक—ध्यान ×।

ध्यायेत् सद्गुरुश्वेतरूपममलं श्वेतांबरं शोभितम्। कर्णौः कुण्डलश्वेतशुभ्रमुकुटम् हीरामणिमंडितम्॥ नानामालमुक्तादि शोभितगलं, पद्मासने संस्थितम्। दयाब्धिधीरं सुप्रसन्न वदनम् सद्गुरुं तन्नमापि॥ १॥ द्वै पदम् द्वै भुजम्, प्रसन्नवदनम् द्वै नेत्रम् दयालम्। सेलीकण्ठ माल उर्ध्वतिलकम् श्वेताम्बरीमेखला॥ चक्रांकस्य विचित्र टोपलसितं तेजो मयी विग्रहं। वंदेसद्गुरु योगदण्ड सहितं कव्वीर करुणामयम्॥२॥ एतानि चतुर्मुखानि, विख्यातानि महास्याः। अज्ञायस्य स्तुतानि साधुभिः शजतुं (किंवा) साधुभिः परिगीतानि वक्ष्यामि जीविते यः॥ ३॥ न अंग अंगन्यासं नकरं करन्यासता। स्वयमश्च गुरुमंत्र स्वयं भूत्वा स्वयंजपः॥ ४॥ सोंमाप सोहं रूपाय सत्यनामाय साक्षिणे। करुणामयकवीराय त्रिपदातीताय नमः॥ ५॥ अमी अमृत नामाय, अजराचिन्तरूपिणे॥ अमरः सत सुकृताय, दयाब्धिगुरुवे नमः॥ ६॥ कृपाल कृपायः सिंधुश्च, कृपायोत कृपाधनं॥ कृपार्णव कृपा वृष्टिः कृपा कर्ता नमोनमः॥ ७॥ दयाल धीर्यवंतश्च, दयासिंधु दयार्णव॥

---

× इसके पश्चात् प्रथम और द्वितीय श्लोकमें लिखे अनुसार सद्गुरुके स्वरूपका मानसिक ध्यान करे और सहस्रनामों द्वारा सद्गुरुकी विभूतिका चिंतन करता हुआ पाठ करे।

उपरोक्त करन्यास अंगन्यास तथा ध्यानकी विधि गुरुसे सीखना चाहिये।

दया कर्ता दयावन्ता, ज्ञानदाता नमो नमः ॥ ८ ॥ अभयन्निर्भयश्चैव, निर्भय पददायकम् । भ्रमहारकनामाय भातारक नमोनमः ॥ ९ ॥ अचल रूपं अचलं चिन्तातीत प्रकाशकम् । दीनानाथं दीनोद्धारं, दीनवत्सल सुन्दरम् ॥ १० ॥ अमृत मृत्यु नाशाय, महा भ्रमनिवारणम । योग जीत अजीताय, ज्ञान वेत्ताय किञ्चन ॥ ११ ॥ निर्मोही मोह नाशाय जगत्याशा विनाशकम् ॥ निर्वैरभ्रमहीनाय, निर्भ्रमाय नमो नमः ॥ १२ ॥ उपदेश कर्ता स्वदेश दाता, उपाधिहीनश्च भय शोक हर्ता ॥ संकष्ट नाशाय सिद्धान्त मूला, स्वयं गुरू सिद्ध अहं नमामि ॥ १३ ॥ हंसाय हंसरूपाय हंस पाल हंस पति ॥ हंसनायक श्वेताय, हंसोद्धारक तारकम् ॥ १४ ॥ जीवोद्धारक शान्ताय, शान्ति रूप अशाश्रिता । शांति कर्ता शांति धर्ता, सर्व शांति नमो नमः ॥ १५ ॥ हंता नाश दयापाल संशय जाल विखण्डनम् ॥ वपुनाशा प्रकाशश्च, वपुर्हर्ता वपुर्हनम् ॥ १६ ॥ परिक्षः परिक्षाश्चैव परिक्षं परीक्षावतम् ॥ परायस्त्वं अपाराय; सर्वातीतनमोनमः ॥ १७ ॥ पाखण्ड खण्डनम्, अजरूप अजामरः ॥ अभ्रनाम जरातीतं, स्वतः सिद्धस्व साक्षिणः ॥ १८ ॥ आदादली आदि रूपं, आदि मूर्ते अनाद्यये ॥ अनादि सिद्ध नामाय, अकांक्ष अचले क्रिये ॥ १९ ॥ निर्णय निर्णयः कर्त्ता, नास्ति सिद्धान्त नाशकः ॥ निराधार निराभासः, निर्विघ्नश्च निरामयः ॥ २० ॥ सुखाय

सुख दाताय, सुखार्णव सुखात्ययम् ॥ नासि सुखमतीताय, आस्ति सुख नमोस्तुते ॥ २१ ॥ अनादिनामश्च अनादि रूपं, आनंद ततिश्च अकंप रूपं ॥ परब्रह्मतीताम प्रकाशतीतमधिष्ठानतीतं हि नमोनमस्ते ॥ २२ ॥ गुणीं पंचगुणातीतं, सर्वातीतं सर्वोत्तमम् । भासप्रपंचातीताय; भासकातीतये नमः ॥ २३ ॥ अखिलज्ञम् ज्ञानतीतं, अंधकारनिवारणम् । साक्षातीतं बोधातीतं बोधकर्ता नमो नमः ॥ २४ ॥ विघ्न विध्वंसनन्नाम सर्व मंगलदायकम् ॥ वृक्ष राक्षक नामश्च, वृदधारीवृदः प्रिये ॥ २५ ॥ शिष्यपालं, भक्तपालं, दीनपालं दिनप्रिये ॥ दीनोद्धारक साधाय वंदिमोचनये नमः ॥ २६ ॥ कालसंधि निवार्न च, महासंधि विध्वंसनम् ॥ भक्तोद्धार जगदोद्धारं असंधीसाधकः प्रिये ॥ २७ ॥ साधूसन्त साधुरूप संतस्थं संतधारना ॥ अविनाशी निर्विनाशं, प्रपंचं हीनम् पुरुषम् ॥ २८ ॥ पुर्षातीतं मुनीन्द्रश्च सारशब्दस्वरूपवाम् ॥ त्रिशब्दातीतस्थिराः स्थिरकर्तास्थिरालयव ॥ २९ ॥ परिणामवस्थातीतं, भौभै दुःखनिवारणम् ॥ योगसन्तयन्ताय, तरन्तारं नमोस्तुते ॥ ३० ॥ भवाब्धि पोतं भवरोगवैद्यं भवार्णवं घोरविनाशनन्दुखः ॥ अशर्पाशार्णाय उदारबुद्धिः, समासमं जीव;समेक दृष्टिः ॥ ३१ ॥ मंगलं मंगलः कर्ता, बेर दाता प्रतापवान् ॥ निष्क्रियः निर्विकारश्च, निर्द्वंद्वाय शिष्यः प्रिये ॥ ३२ ॥ जीवनं सर्व-

जीवानां भूषणं ज्ञान चक्षुषा ॥ मुक्ति दाता भक्तिदाता ज्ञान दाता नमो नमः ॥ ३३ ॥ मुक्तपदं मुक्त नामं, सर्व बंधन मोचनम् ॥ विद्यादाता बुद्धि दाता सर्वज्ञाय नमो नमः ॥ ३४ ॥ परीक्षा प्रेरकन्नाम, समाधाय प्रदानकम् ॥ प्राप्ति कर्ता प्राप्ति रूपं, भक्ति नाथ नमो नमः ॥ ३५ ॥ सगुणं सगुणश्चैव, प्रसन्नं करुणाकरम् ॥ विचारं च प्रमोदारं, सर्वोत्कृष्ट नमो नमः ॥ ३६ ॥ भ्रमसंहारनन्नाम काम संहारनं मसि ॥ क्रोध दमनमक्रोधं, मोह निर्मोह नाशकम् ॥३७॥ निर्लोभसर्व जीताय अजीताय जितेन्द्रियः ॥ सर्व वस्य अवस्यं च सर्वमान्य अमान्ययोः ॥ ३८ ॥ सर्व पूज्यं मंत्र मूलं, ध्यान मूलं स्वरूपकम् ॥ ज्ञान विज्ञान मूलाय, हंस मूलं हंसं प्रिये ॥ ३९ ॥ अयोनिसंभवकृपा कटाक्षं, अवीर्ये अरेत अकाम रूपम् ॥ अपाप अतात अजा अतीत, अविगत्य रूपं अहं नमामि ॥४०॥ अखिलादिखिलं ज्ञाता, अखिलानंदतीतयोः ॥ संत सन्तप्रियो नामं परं स्नेही परावृतिः ॥४१॥ उद्धारं भौहारकं च, निरंजनातीतप्रभु ॥ कर्ममोषनं नामाये, निर्भरः शीतालाश्रयः ॥ ४२ ॥ भृंगीनाम अभेनामं, शीलनाम सुखार्णवम् ॥ पर्मनामाय सुर्तिश्च, विजपाय जपातियो ॥ ४३ ॥ अमलन्निर्मलश्चैव, हंसज्ञ हंस नायकम् ॥ भक्त सहाय कर्ता च सुखदाता सुखः प्रभू ॥४४॥ सत्यवक्ता प्रकाशं च, परमं पारखलीलया । अमोल मंगलनाम, अवि

चलं गुरुवे नमः ॥ ४५ ॥ संतोष शक्त बीरं च, साधू कबीर नामयम् । हंस कबीर नामाय, गुरु कबीर नमोनमः ॥ ४६ ॥ पर्म गुरु पर्म वैद्यं, पर्मलक्ष पदानये ॥ सिद्ध कबीर नामाय, निरालम्ब कल्पद्रुमः ॥ ४७ ॥ निर्विघ्न करुणा रूपं, दिव्यनाम अनामयम् ॥ छायातीतं माया-तीतं, कायातीतं नमोनमः ॥ ४८ ॥ कालमर्दन कीर्ति वर्द्धनं, वृक्ष रक्षकं ज्ञान अक्षकम् । सुखःसागरं ज्ञान आगरं, पर्व दायकं सर्व लायकम् । ॥४९॥ वाच्य वाच-कातीताय, अनिर्वाच अतीतये ॥ छन्दातीतं वेदातीतं शास्त्रातीतं नमोनमः ॥ ५० ॥ नररूपं नरातीतं नरज्ञ नर नामयोः । यक्षराक्षस तीताय गंधर्वातीतये नमः ॥ ५१ ॥ दैत्यातीतं देवातीतं, त्रिकालभासकं प्रभू ॥ त्रिदेवातीतायन्नामः त्रिकालज्ञ नमोनमः ॥५२॥ पंच ब्रह्म अतीताय, पंच मात्रा विवर्जितः ॥ शदमात्रा विनिर्मुक्तं, पंचस्थान अमानयो ॥ ५३ ॥ पंचअहंकारातीतं पंच देह अतीतयो ॥ पंचतत्त्वं अतीताय पंच विषय नाशकम् ॥ ५४ ॥ चतुर्दश करणैरतीतं, षद्भावविनिर्गतम् । षट्ट विचार रहीताय, योगातीतं महद्गुरुम्॥५५॥विराग वैराग्यातीतं योगं वियोग वर्जितम् । भोग्य भोगातीतश्चैव संयोगातीतायनः ॥ ६६ ॥ विवेक विवेकातीतं, विवेकत्व विवेकिनः ॥ अविवेक नाशनश्चैव, विवेकः स्वरूपं प्रभू ॥ ५७ ॥ वैराग्यजाता गुरु भक्ति ताता, सत्यं दया धीर्यं शीलस्य कर्ता ॥ विचार मूलं ज्ञानस्य जनकं

निर्णयस्वरूपं अहं भजामि ॥ ५८ ॥ निर्विन्दं प्रकाश श्चैव स्थिर स्वस्थिति दायकम् ॥ क्षमा मिथ्या त्यागनश्च, निःसन्देह नमोनमः ॥ ५९ ॥ गर्वप्रहारी अद्रोहं, अहंता नाशनं प्रभुः ॥ समदृष्टि सर्वमित्रं भयहरन अभयीवरम् ॥ ६० ॥ अभैराज अभयदाता, सत्यसंग निवासिनम् ॥ अनित्यखंडनन्नाम, सदा नित्यं स्वरूपवान् ॥ ६१ ॥ ससर्विदं विभावाय, सर्वानुग्रह कारणम् । बंधनं नाशनं खण्डं, समौपास विनाशकम् ॥ ६२ ॥ दास रक्षा दासपालं सर्वव्याधि प्रशाम्यतम् ॥ परदुःख भंजनन्नाम, भक्तानामनिरंजम् ॥ ६३ ॥ दुष्टगंजनं नामाय, ज्ञानभंजनं तथैव च ॥भर्मपातं पवित्रं च, सर्वघात निवारणम् ॥ ६४ ॥ पावनः पावनः कर्त्ता, भवाब्धि नौका एव च ॥ कृतांतं भयहरं चैव मृत्यूभयविनाशकम् ॥ ६५ ॥ भूतभय नाशनं चैव, राजभय नाशनं तथा ॥ चौर भयनाशन्नाम, व्याघ्रादिभय विनाशनम् ॥ ॥ ६६ ॥ अलक्षलक्षायमक्षेस्वरूपं, सिद्धांत दाता ऐश्वर्यऽमूलम् ॥ अनादिदीक्षा निरपक्षरूपं, सजीवने जीवन सर्वजीवः ॥ ६७ ॥ महासजातीभानं च, गुरुं दाता तथैव च ॥ सर्वसामर्थ्यवानाय, गुरु वर्य नमो नमः ॥ ६८ ॥ साधुगुरुं सत गुरु अग्र नाम तथैवच ॥ अमल अक्षे नामाय, अभावन अनामय ॥ ६९ ॥ पतितः पव नजाम, दीनोद्धार दिनप्रिये ॥ शरणागत रक्षकाये जरको-

द्धार नमाम्यहम् ॥ ७० ॥ भूभय निवारणन्नाम, भूसिन्धु तारकं तथा ॥ दैत्य विध्वंसनं न्नाम, कल्पना खण्डनं प्रभू ॥७१॥ दया धीरं भय हारं ज्ञानविज्ञान कारकम् ॥ सारं च सर्वसारं च स्वप्रकाश सज्जन प्रिये ॥ ७२ ॥ परक्षवान सयुक्तं सन्ताधारं निराविशम् ॥ अइन्द्रि अगाध नाम- अपार अपरः प्रिये ॥ ७३ ॥ शुकाब्धि स्वरूपाब्धिश्च मुक्त नाम मुक्ता दया ॥ निर्तरूप सुर्तिनाम, अपार औगाह तीतयोः ॥ ७४ ॥ अमाया अकायाश्चैव, छः संधि विवर्जितः । अग्राह्यं ग्राह्यातीतश्च, अविकार प्रबो- धिता ॥ ७५ ॥ प्रबोधकर्ता त्रय ताप हर्ता, हबोदस्या दाता सत्सिद्धि चारी ॥ धैर्यधरं परमोद्धार रूपं, आनंद भेदं अहन्नमामि ॥ ७६ ॥ अचलं विगतन्नाम, अभेदा- गमलक्षणः ॥ अविनाशा परोक्षं च पुराण पुरुषोत्तमम् ॥७७॥ आद्यं कुरुते कृतस्य पर्मसार तथैव च ॥ साधूपति साधुधीशं, सत्य सन्तोषनामयोः ॥ ७८ ॥ साधु स्नेही, संतस्नेही, भक्तस्नेही भक्तप्रिये ॥ पर्मस्नेही सुर्ति स्नेही प्रेम स्नेही च स्वस्थिरम् ॥ ७९ ॥ हिरंपरं हिरंबरा, पुष्प दीप विहारि च ॥ सत्यं लोक पतिनामं इति अक्षयवृक्ष नमो नमः ॥ इति ॥

इति गुरु सहस्रनाम समाप्तमिदं ॥

अथ नामलीला ॥

साहेब अबिचल नाम, दया करि पाइये ॥ टे० ॥
प्रथम बन्दों गुरु चरन, सीस संतनको नाऊँ ।
सतगुरु होयँ दयाल, तो नाम चरित्र सुनाऊँ ॥
सत्त सुकृत हिरदे बसै, कबहुँ ना आवै हारि ।
अविगतिसे परिचै भई, तो आवागवन निवारि ॥ १ ॥
कहा आनकी सेव, जीवको भर्म न भाजै ।
अलख सरूपी आप, तहाँ अनहद धुनि गाजै ॥
यह धुनि सुनि अबिचल रहो. इत उत मन नहिं जाय ।
अमृत केरी बुन्द है, सो अमृत माहिं समाय ॥ २ ॥
प्रथम पुरुष पग धरचो सत्त, सतजुगमें आये ।
परमारथके काज, जीवकी बन्दि छोड़ाये ॥
कागा तें हंसा किया, जाति बरन कुल खोय ।
जमसे तिनुका तोरिके, गंज न सकै कोय ॥ ३ ॥
सतजुग गयो ब्यतीत, सुनो त्रेताकी बानी ।
धरचो मुनिन्द्रको रूप, आप सतसुकृत ज्ञानी ॥
हंसनको परमोधिके, आप रह्यो नीनार ।
नाम प्रतीत बसे जो जिवको, सो जन उतरे पार ॥ ४ ॥
त्रेता गयो ब्यतीत, सुनो द्वापरकी बानी ।
करुनामय को रूप धरचो, सतसुकृत ज्ञानी ॥
चेतनहारा चेतियो, बहुरि न चेता जाय ।
सत्तसुकृत चीन्हे बिना, काल सभनको खाय ॥ ५ ॥

कलिजुग प्रगट कबीर, कालको देखा जोरा।
किये कासी अस्थान, आप भै बन्दीछोरा॥
मुनि पंडित सब बादहीं, कोई न पहुंचे ज्ञान।
निर्गुन लीला धारिके, आप पुरुष निर्वान॥ ६॥
कलिजुग कर्म अपार, जीव कोइ कहा न मानै।
सीखे साखी शब्द, उलटिके बाद बखानै॥
बाद किये पहुँचे नहीं, मन ममताके जोर।
लख चौरासी जिया जोनिमें, भर्मे नरक अघोर॥ ७॥
कठिन कालको रूप, अंत कोइ जान न भाई।
जब आवे मृतु अंध जीव कहँ जाय पराई॥
नाम बिना बाँचै नहीं, केतौ करै उपाय।
तीरथ जाय सकल भ्रमि आवे, जमको त्रास न जाय॥८॥
बहुत ज्ञान बहु गम्य, बहुत मूरतको पूजे।
दीपक बरै अनेक, अंधको आँखि न सूझे।
बहुतक जुग भरमत फिरै, कितहुँ न पावे दाद।
सात द्वीप नौ खंडमें, सत्य नाम बिनु बाद॥ ९॥
सतगुरुका उपदेस, संत कोउ बिरला जानै।
करे तत्वका खोज, बहुरि संकट नहिं आनै॥
ऐसे सुरति लगाइये, जैसे चन्द्र चकोर।
कठिन पडे सुख दुख सहै, प्रीत निभावै ओर॥ १०॥
अविगति अगम अपार, और सब दीसै बाजी।
पढि पढि बेद कितेब, भुले पंडिते औ काजी॥

अगम गम्य जाने नहीं, बीचहिं परे भुलाय।
जैसे ज्वारी जुवा खेलिके, सबरस चले गँवाय॥ ११ ॥
नहिं सागर नहिं सिखर, नहीं तहँ पवन न पानी।
नहिं धरती आकास, नहींकछु और निसानी॥
चन्द्र सूर वा घर नहीं, नहीं दिवस नहिं राति।
जहाँ पुरुष आपे बसै, तहँ कुल कर्म न पाँति॥ १२ ॥
वहाँ नहीं तीरथ ब्रत, नहिं तहँ वेद विचारा।
नहिं देवी नहिं देव, नहीं कछु नेम अचारा॥
जरा मरन वा घर नहीं, नहीं लाभ नहिं हान।
प्रेम मगन हंसा रहे, सो धरें पुरुषको ध्यान॥ १३ ॥
जहाँ पुरुष रहे आप, तहाँ हंसनको बासा।
तहँ नहिं माया मोह, नहीं तहँ तृष्णा आसा॥
हर्ष शोक वा घर नहीं, नहीं कर्म व्यवहार।
हंसा परम अनंद मय, छूटे भ्रम जंजार॥ १४ ॥
चारों जुगके हंस, सत्य सतलोक सिधाये।
भ्रमत फिरे सब काग, दूत बैठे रखवाये॥
मुनि पंडित जोगी जती, धरे कालको ध्यान।
तीन लोकके बाहरे, कोई न पाये जान॥ १५ ॥
भ्रमत फिरे जुग चारि, रूप कीन्हा विस्तारा।
अजहुँ न समुझे अंध, परे जम कालकी धारा॥
बहुत भाँति परमोधिया, कोइ कोइ लीन्हा मान।
आदि अंतके हंस हैं, सो प्रगट भये हैं आन॥ १६ ॥

अनजानेको दूरि, जानेको निकट बिराजै ।
शब्द सनेही संत, सोई सब ऊपर छाजै ॥
मगन होय मनको गहै, हंस रूप आनन्द ।
सुमिरन दीनदयालको, ज्यों उड़गन में चन्द ॥ १७ ॥
बहुत गुरू संसार रहित, घर कोइ न बतावै ।
आपन स्वारथ लागि, सीस पर भार चढावै ॥
सार शब्द चीन्हे नहीं, बीचहिं परे भुलाय ।
सत्त सुकृत चीन्हे बिना, सब जग काल चबाय ॥ १८ ॥
यह लीला निर्वान. भेद कोइ बिरला जानै ।
सब जग भरमे डार, मूल कोइ बिरला मानै ॥
मूल नाम एक पुरुष है, पुहुप द्वीपमें बास ।
सतगुरु मिलैं तो पाइये, पूरन प्रेम बिलास ॥ १९ ॥
नाम सनेही होय, दूत जम निकट न आवै ।
परमतत्त्व पहिचानि, सत्त साहेब गुन गावै ॥
अजर अमर विनसे नहीं, सुखसागरमें बास ।
केवल नाम कबीर है, गावे धनिधर्मदास ॥ २० ॥

॥ धर्मदासजी रचित ॥

## बिनती प्रारम्भः ।

॥ शब्द १ ॥

भक्ति दान गुरु दीजिये, देवनके देवा हो ।
चरन कँवल बिसरौं नहीं, करिहौं पद सेवा हो ॥ १ ॥
तीरथ बरत मैं ना करौं, ना देवल पूजा हो ।

तुमहिं ओर निरखत रहौं, मेरे और न दूजा हो ॥ २ ॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि, हैं वैकुंठ निवासा हो ।
सो मैं ना कछु माँगहूँ , मेरे समरथ दाता हो ॥ ३ ॥
सुख सम्पति परिवार धन, सुन्दर बर नारी हो ।
सुपनेहु इच्छा ना उठै, गुरु आन तुम्हारी हो ॥ ४ ॥
धरमदासकी बीनती, साहेब सुनि लीजे हो ।
दरसन देहु पट खोलिकै, आपन करि लीजै हो ॥ ५ ॥

---

॥ शब्द २ ॥

साहेब साहबी तन हेरो ॥ टेक ॥

चञ्च पंख बिन जटा परखेरू, मम गति समझ सबेरो ।
अब जनि तजो मोहिं यह खण्डा, तुम सत लोक बसेरो ॥ १ ॥
निस बासर मोहिं संसय व्यापै, काम क्रोध मद घेरो ।
यासे नाम लेन नहिं पाऊँ, धिग जीवन जग मेरो ॥ २ ॥
प्रभु पद भिन्न भयो मैं जबसे, देह धरे बहुतेरो ।
त्रिविधि ताप दुख सहे निरंतर, कबहुँन भयो सुखेरो ॥ ३ ॥
ममहित जानि ज्ञान-पति सतगुरु, जुगन जुगन तुम टेरो ।
मैं अचेत प्रीति मोह बस, तुम तजि भयो अनेरो ॥ ४ ॥
मैं हौं जीव तुम्हार दया-निधि, आदि अंतको चेरो ।
अब मोहिं लेहु छुडाइ कालसे, औगुन मेटो मेरो ॥ ५ ॥
बंदीछोर सुनो करुना-मय, करो हिये बिच डेरो ।
धर्मदास पर दाया कीजै, चौरासीसे फेरो ॥ ६ ॥
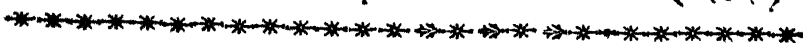
॥ शब्द ३ ॥

साहेब[1] दीनबंधु हितकारी ॥ टेक ॥

कोटिन औगुन बालक करई, मातपिता चितएक न धारी १
तुम गुरु मात पिता जीवनके, मैं अति दीन दुखारी ॥२॥
प्रनत-पाल करुना-निधान प्रभु, हमरी ओर निहारी ॥३॥
जुगन जुगनसे तुम चलि आये जीवनके हितकारी ॥ ४ ॥
सदा भरोसे रहूँ तुम्हारे, तुम प्रतिपाल हमारी ॥ ५ ॥
मोरे तुम हीं सत्त सुकृत हो, अंतर और न धारी ॥ ६ ॥
जानत हौ जनके तन मनकी, अब कस मोहिं बिसारी ॥७॥
को कहि सकै तुम्हारी महिमा, केहि न दियो पद भारी ८
धरमदास पर दाया कीन्ही, सेवक अहौं तुम्हारी ॥ ९ ॥

॥ शब्द ४ ॥

साहेब मेटो चूक हमारी ॥ टेक ॥

बार बार मोहिं दंड भयो है, चूक भई अति भारी ।
अब हम आये निकट तुम्हारे, अब मो तनहिं निहारी १
करुनामय तुम नाम धराये, तुम समरथ अब मेरो ।
ऐसी बिपति भई मोहिं ऊपर, कोइ ना हीत हमारो ॥२॥
तरसत जीव रहे निस बासर, जानि जनहिं तुम दौरो ।
अबकी चूक छिमाकर साहेब, अब सन्मुख ह्वै हेरो ॥३॥
तुम सतगुरू सकल सुख दाता, शब्द पान दे तारो ।
धरमदास बिनवै कर जोरी, करौं बंदगी तेरो ॥ ४ ॥

---

१ हितकारी ।

॥ शब्द ५ ॥

सुरति पर सतगुर धरि दियो बाढ ॥ टेक ॥

घर माँ रहौं रहन नहिं पावौं, घरके लोग मोहिं देहिं निकार १
बाहर जावँ डाइन इक लागै, सुनि पावै जिय डारै मार२
ऐसी बाढ धरो मोरे साहेब, जहँ मारौं तहँ पलै पार ॥३॥
धरमदास पर दाया कीजै, साहेब कबीर दुख मेटनहार४

॥ शब्द ६ ॥

बंदी-छोर बिनती सुनि लीजे ॥ टेक ॥

कपट कुटिल अपराधी द्रोही, ठहराई मन लीज ।
नाम तुम्हारा अधम उधारन, ताकी दिच्छा दीजे ॥ १ ॥
पाप पुन्न नहिं जाँचन कीजे, काटि फंद अब दीजे ।
माँगू अपन सुभाव दयानिधि, सुनि अनुमान न कीजे२॥
बिषे बिनास रहूँ निसु बासर, यह तन छिन छिन छीजे ।
साठ जन्मको हौं अपराधी, अबकी छिमा प्रभु कीजे॥३॥
सतगुरु नाम मुनींद्र कहाये, साहेब कबीर सुनि लीजे ।
धरमदास बिनवै कर जोरी, काटि चौरासी दीजे ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

कब तुम मिलिहौ कंथ कबीर ।

धर्मदास पर दाया कीजै, हंस लगावो तीर ॥ १ ॥
भक्ति अचल औ दृढ बैरागा, पूरन ज्ञान गँभीर ।
जती सती संतोषी तुमहीं, सबके दाता धीर ॥ २ ॥
तुम प्रताप परवाह न केहुकी, सागर सलिता नीर ।
एक बुंद दयाल मोहिं दीजे, जाय जीवकी पीर ॥ ३ ॥

महा कठोर कठिन मन मेरो, हरो ताहिकी भीर ।
कामी क्रोधी झूठा लंपट, धार्‍यो अधम शरीर ॥ ४॥
सुक्ख करन और दुक्ख हरन तुम, ऐसे मतके थीर ।
ज्ञानमंडन, भर्मखंडन, दया सिंधु कवीर ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साहेब बूडत नाव अब मोरी ॥ टेक ॥
काम क्रोधकी लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी ।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ॥ १ ॥
कपटकी भँवर परतु है बहुतै, वामें बेडा अटकारी ।
काल फाँस लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥ २ ॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फंद जिव तारी ।
कहैं कवीर सुनो हो धर्मनि, सतगुरु सरन उबारी ॥३॥

॥ शब्द ९ ॥

बिन दरसन भइ बावरी, गुरु द्यो दीदार ॥ टेक ॥
ठाढि जोहौं तोरी बाट मैं, साहेब चलि आवो ।
इतनी दया हम पर करो, निज छबि दरसावो ॥ १ ॥
कोठरी रतन जडाव की, हीरा लागे किंवार ।
ताला कुंजी प्रेम की, गुरु खोलि दिखावो ॥ २ ॥
बंदा भूला बंदगी, तुम बकसनहार ।
धर्मदास अरजी सुनो, भव पार करावो ॥ ३ ॥

॥ शब्द १० ॥

दीनानाथ दयाल, भक्त की पच्छ क
सरन आयेकी लाज, साहेब जनकी करौ ॥ १ ॥

नौ दरवाजे बिकार, धार नौका बंगे ।
मरी सुरत नहीं ठहराय, लगत कैसे लग्गे ॥ २ ॥
पाँच तत्त गुन तीनका, आदर साजिया ।
जम राखै बिलमाय, तो फन्द न फंदिया ॥ ३ ॥
तिर्गुन फाँसका फँदा, माया मद जालमें ।
भवसागरके बीच, महा जंजालमें ॥ ४ ॥
भक्ति मुक्ति देव दान, दया जन पर धरो ।
नौका पार लगाय, दास अपनो करो ॥ ५ ॥
साहेब कवीर बन्दीछोर, अरज यक मानिये ।
धर्मनि पतित उबारि, सरनमें आनिये ॥ ६ ॥

॥ शब्द १? ॥

चरन छाडि प्रभु जावँ कहाँ, मोरे और न कोई ।
जगमें आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥ १ ॥
मात पिता हित बन्धु तुम, कासे दुख रोई ।
सब कछु तुम्हरे हाथ हैं, तुम्हरे मुख जोही ॥ २ ॥
गुन तो मोरे है नहीं, औगुन बहुते होई ।
ओट लई तुम नामकी, राखो पत सोई ॥ ३ ॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई ।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिं कोई ॥ ४ ॥
मैं गरजी अरजी करौं, मरजी जस होई ।
अरज बिपति लिखौं आपनी, राखौं नहिं गोई ॥ ५ ॥

---

( १ ) बगदै, बेठिकाने बहै ।

धरमदास सत साहेबी, घट घटहिं समोई ।
साहेब कवीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥ ६ ॥

॥ शब्द १२ ॥

साईं मैं असल गुलाम तिहारा ॥ टेक ॥

काया नगर बन्यो अति सुन्दर, मोहको लग्यो बजारा ।
कुमति कलोलकरै दसहों दिसि, लोभको ठुक्यो नगारा १
मोह समुन्दर भरे अपरबल, भँवर भँवैं[1] अति भारा ।
काम क्रोधकी लहर उठतु है, केहि बिधि होय निवारा ॥२॥
पाँचके ऊपर पचिस महतिया, इन परपंच पसारा ।
मन अदली जहँ अदल चलावे, कहा करै जीव बिचारा ३
ना मोरि नाव नहिं खेवटिया, डर लागै मोहिं भारी ।
चौदह लोकमें कोई नहिं दीसै, तुम गुरु पार उतारी ॥४॥
धरमदास की यही बीनती, उरझेको निर्वारो ।
साहेब कवीर मिले गुरु समरथ, हमसे अधम उबारो ॥५॥

॥ शब्द १३ ॥

मैं तो तोरे भजन भरोसे अबिनासी ॥ टेक ॥

तीरथ बरत कछू नहिं करहूँ, बेद पढौं नहिं कासी ॥ १ ॥
जंत्र मंत्र टोटका नहिं जानौं, निसु दिन फिरत उदासी ॥ २ ॥
यहि घट भीतर बधिक बसत है, दिये लोभ की टाटी ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवे कर जोरी, सतगुरु चरनन दासी ॥ ४ ॥

---

( १ ) घूमैं ।

॥ शब्द ॥ १४ ॥

साहेब बंदी-छोर हमारे ॥ टेक ॥

ठाढे बैठे चलत निहारे, जागत साँझ सबारे ।
करुनासिंधु दयाके आगर, नैननके उजियारे ॥ १ ॥
बोलत बचन मीठ बहु लागै, पूरन पुरुष पियारे ।
उनकी रहनि गहनि जब पैहौ, होइ रहु सबसे न्यारे ॥ २ ॥
है बहु ज्ञान ध्यान बहुतेरा, खोलो गगन किवारे ।
दया स्वरूप बसै सिंधूमें, हीरा लाल निकारे ॥ ३ ॥
साहेब कबीर सदाके सतगुरु, हंसनके रखवारे ।
धरमदास पर दाया कीन्हा, आया सरन तुम्हारे ॥ ४ ॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब मोरी ओर निहारो ।

परजा पुत्र अहौं मैं साहेब, बहुत बात मैं टारो ॥ १ ॥
हौं मैं कोटि जनमको पापी, मन बच करम असारो ।
एको कर्म छुटे ना कबहूँ, बहु विधि बात बिगारो ॥ २ ॥
हौं अपराधी बहुत जुगनको, नइया मोर उबारो ।
बंदीछोर सकल सुखदाता, करुनामय करत पुकारों ॥ ३ ॥
सीस चढाइ पापको मोटरी, आयो तुम्हरे द्वारो ।
को अस हमरे भाव उतारे, तुमहीं हेतु[1] हमारो ॥ ४ ॥
धरमदास यह बिनती बिनवे, सतगुरु मो को तारो ।
साहेब कबीर हंसके राजा, अमर लोक लैधारो ॥ ५ ॥

---

१ हितकारी ।

॥ शब्द १६ ॥

साहेब मोरी बहियाँ सम्हारि गही ॥ टेक ॥

गहिरी नदिया नाव झाँझरी, बोझा अधिक भई ।
मोह लोभकी लहर उठत है, नदिया झकोर बही ॥ १ ॥
तुमहिं बिगारो तुमहिं सँवारो, तुमहिं भँडार भरी ।
जब चाहो तब पार लगावो, नहिं तो जात वही ॥ २ ॥
कुमति काटिके सुमति बढावो, बल बुधि ज्ञान दई ।
मैं पापी बहु बेरी चूकूँ, तुम मेरी चूक सही ॥ ३ ॥
धरमदास सरन सतगुरु के, अब धुनि लाग रही ।
अमर लोकमें डेरा परिगै, समरथ नाम सही ॥ ४ ॥

॥ शब्द १७ ॥

साहेब कौन कमी घर तेरो ॥ टेक ॥

भूखे अन्न पियासे पानी, कपडासे तन घेरो ।
जो कछु न्यामत सबै महल में, खरच खजाना ढेरो ॥१॥
खाकसे पाक कियो पल माहीं, हे समरथ बल तेरो ।
भवसे काढि कियो तरनी[1] पर, खेइ लगावो सवेरो ॥२॥
रहे न घाम छाँह दुनियामें, रहे न जमको चेरो ।
रावसे रंक रंकसे राजा, छिनमें होवत हेरो ॥ ३ ॥
मानो सत्त झूठ जनि जानो, सत्त बचन है सूरो ।
धर्मदास चरनन पर बिनवे, तुम गति सब भरपूरो ॥४॥

१ नाव ।

॥ शब्द १८ ॥

साहेब खेइ लगावो पारा ॥ टेक ॥
असी कोसमें झील अरु झाँकर, असी कोस अंधियारा ।
असी कोस बैतरनी नदिया, जहँवाँ हंस उतारा ॥ १ ॥
बड़े बड़े सिकारी जोधा, आगेहीं पग डारा ।
खाल खैंचि जम भुसा भरावे, ऐंचि लेहि जस आरा ॥२॥
लेखा माँगै जम फुरमावै, तीन लोक लै डारा ।
उपजत बिनसत जनम बीतिगै, चौरासीकी धारा ॥ ३ ॥
गगन मँदिलमें सतगुरु बोलै, सुनि लै शब्द सम्हारा ।
धरमदास चरनन पर बिनवे, अब की अरज हमारा ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

अब मोहिं दरसन देहु कबीर ॥ टेक ॥
तुम्हरे दरससे पाप कटत है, निरमल होत सरीर ॥ १ ॥
अमृत भोजन हंसा पावै, शब्द धुननकी खीर ॥ २ ॥
जहँ देखो जहँ पाट पटंबर, ओढन अंबर चीर ॥ ३ ॥
धरमदासकी अरज गोसाँई, हंस लगावो तीर ॥ ४ ॥

॥ शब्द २० ॥

साहेब मोहिं दरसन दीजे हो । करुना निधि मेहर करीजे हो ।
पपिहाके चित स्वाति बसे, भावे नहिं जल दूजा हो ।
जैसे काग जहाज चढे, वा को और न सूझा हो ॥ १ ॥
बार बार बिनती करूँ, मेरी अरज सुनीजे हो ।
भवसागरसे काढिके, अपना करि लीजे हो ॥ २ ॥

सत्त लोक से सुरत करी, तब जगमें आये हो।
जमसे जीव छोडाइके, धर्मनि मन भाये हो ॥ ३ ॥

॥ शब्द २१ ॥

मोर मन लागा साहेबसे, बन्दीछोर कबीरा ॥ टेक ॥
सतगुरु सरनै मैं गई, सब दुख हरि लीन्हा।
करम भरम सब मेटिके, निरमल करि दीन्हा ॥ १ ॥
तीन लोकके बीचमें, जम कातर चीन्हा।
तासे मोहिं छुड़ाइके, आपन करि लीन्हा ॥ २ ॥
सतगुरु शब्द सुनाइके, पारस करि दीन्हा।
कागा बरन मिटाइके, हंसा करि लीन्हा ॥ ३ ॥
काम क्रोध सब त्यागिके, बन हंस गँभीरा।
शब्द हमारा मानि ले, गुरु कहत कबीरा ॥ ४ ॥
धरमदासकी बीनती, संतन महँ हेरा।
जाति बरन कुल त्यागिके, सत लोक बसेरा ॥ ५ ॥

॥ शब्द २२ ॥

साहेब कौन देस मोहिं डारा ॥ टेक ॥
वह तो देस अमर हंसनको, यहि जग काल पसारा ॥ १ ॥
देवहु शब्द अजर हंसनको, बहुरि न है अवतारा ॥ २ ॥
निरगुन सरगुन दुंद पसारा, पारि गइ कालकी धारा ॥ ३ ॥
जहाँ देस है सत्त पुरुषका, अजर अमी आहारा ॥ ४ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, अबकी अरज हमारा ॥ ५ ॥

॥ शब्द २३ ॥

साहेब लेइ चलो देस अपना ॥ टेक ॥
जमकी त्रास सही नहिं जाई, केहि विधिधरौं मैं ध्याना ॥ १ ॥

माया मोह भरमकी मोटरी, यह सब काल कलपना ॥२॥
माया मोह भरम सब काटो, दीजै पद निरबाना ॥ ३ ॥
अमर लोक वह देस सुहेला, हंसा कीन्ह पयाना ॥ ४ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, आवागवन नसाना ॥ ५ ॥

॥ शब्द २४ ॥

तुम सतगुरु हम सेवक तुम्हरे ॥ टेक ॥

जो कोइ मारै औ गरियावै, दाद फिरियाद करब तुमहींसे ॥१॥ सोवत जागतके रछपाला, तुमहीं छाँड़ि भजौं नहिं औरै ॥२॥ तुम धरनीधर शब्द अनाहद, अमृत भाव करो प्रभु सगरे ॥ ३ ॥ तुम्हरी बिनय कहाँ लगि बरनों, धमरदास पद गहे हैं तुम्हरे ॥ ४ ॥

॥ शब्द २५ ॥

जमुनियाँकी डारि सोरी तोड़ देव हो ॥ टेक ॥

एक जमुनियाँके चौदह डारि, सार शब्द लेके मोड़ देव हो ॥ १ ॥ काया कंचन अजब पियाला, नाम बूटी रस घोर देव हो ॥ २ ॥ सुरत सुहागिन गजब पियासी, अमृत रसमें बोर देव हो ॥ ३ ॥ सतगुरु हमरे ज्ञान जौहरी, रतन पदारथ जोरि देव हो ॥ ४ ॥ धरमदासकी अरज गुसाँई, जीवनकी बंदीछोर देव हो ॥ ५ ॥

॥ शब्द २६ ॥

मिरहबान है साहेब मेरा । दिलभर दरसत पाऊँ तेरा ॥ १ ॥ तुम दाता मैं सका भिखारी । देव दीदार जाऊँ

बलिहारी ॥ २ ॥ करूँ बंदगी खिजमत दीजै । बकसो चूक दया बहु कीजै ॥ ३ ॥ सेवक तें बिगरै सौ बारा । सतगुरु साहेब लेइ उबारा ॥ ४ ॥ औगुन सेवक साहेब जानै । साहेब मनमें ना गिलानै ॥ ५ ॥ धर्मदास लइ तुम्हारि पनाह । अगले पछिले बकसु गुनाह ॥ ६ ॥

## स्तोत्र उर्दूभाषा ।

( स्वामी परमानन्दजी विरचित कबीर मन्शूरमे ॥ )

किया सब जानपर रहमत जहाँदार । तू पुरुष सत शब्द मतके अमाँदार ॥ पडे हम भूल भवसागरमें आकर । न जाना भेद सत्पुरुष निराकार ॥ कहीं तीरथ कहीं मूरत पुजाया । कहीं खूनकत्लका जारी हुआ कार ॥ कहीं हनुमानो भैरव भूत पूजा । कहीं शिवलिङ्ग ओ चण्डी गर्मबाजार ॥ कहीं खञ्जर कहीं छूरी चलाया । कहीं मुजेबह[1] पै छूटीं खून पिचकार ॥ कहीं गरदन मरोड़ी झटका पटका । कहीं आतिशमें जलतें बलते जाँदार ॥ कहीं है चक्र भैरवका तमाशा । कहीं बकरे पै घूँसोंकी पड़ीमार ॥ कहीं रोजः कहीं मैं भङ्ग बूजः । कहीं गलकट बरहमन बैठे खूँखार ॥ कहीं मुर्गा है बिस्मिल हाथ कस्साब । कहीं चीखें सुअर कालीके दरबार ॥ कहीं है ढोल बजता ओ नकारः । कहीं मजमः है मर्दोजन जनाकार ॥ कहीं अश्वमेध गोमेध हो अजामेध । कहीं अहरमन बरहमन मर्दुमाजार ॥ कहीं मुल्ला व काजी ले

---

१ जबह करनेकी जगह—कसाइखाना ।

छुरा हाथ । कहीं गरदन कुशीको तेज तलवार ॥ कहीं रहमत कहीं जहमत दिखाया । पडे सब जीव धोखे धंधेके गार॥ भरमका धर्म आलममें चलाया । कहीं नेक और कहीं है वद् ब किरदार ॥ हरी हर हर हरी हर कोई बोले । कोई कहता अहंब्रह्म सबका सग्दार॥ कहांतक सो बयाँ कीजे सरापा । निरञ्जन खेलका नहिं वार औ पार॥ यह तीनों देव देवी सबके दाता । इन्हींके मदांजन फरमानबरदार॥ फँसे वेद और शरअमें जीव सारे । नहीं महरम न ढूंढे कोई शब्द सार॥ दोलोक और वेद सूलीके सते हैं । लटकते उसके ऊपर जीव जम द्वारा ॥ कि ज्यों सावनके घासोंसे छिपेराह । पुरुष सत्पंथ यों रोके हैं मक्कार ॥ हमें रख लीजिये खुद जा पनहमें । तु बंदीछोड़ सब जीवनको आधार ॥ बजुज सतगुर हमारे कौनदे दाद । तुही है बरतरीं सब सिद्ध सालार ॥ तुही सत्पुरुष खुद धर देह आया । शरण अपनीमें रखिये हमको इसबार ॥ किया तदबीर सदहा योग जप हम । न छुटकारा हुआ अज दस्ते जब्बार ॥ सिवा साया कदम तेरे न जाये । नहीं चारा कोई सूझेहै नाचार ॥ तुही बन्दः नेवाजः बन्दःपरवर । सिवा तेरे न रह कोई है जिनहार ॥ जियारत आपसे, यह संगे सोजा । हुआ हम सबके खातिर मिस्ल गुलजार ॥ बचालीजे बचालीजे बचाले । हम आजिज कालके फँदे गिरफ्तार ॥ कि सुन सतगुरुका

कलमः आब हैवाँ । हुएहैं जिन्दः हम सब जीव मुर्दार ॥ हुई शादी कदम कादिरके देखे । बहर रुख होरही रह-मत नमूदार ॥ कि जर्रः खाक पाए परतव अफगन । हुए जाहिर व बाहर इल्म आसार ॥ न तुझसा और कोई हर दो जहां में । तु आदम की मुसीबतमें मददगार ॥ हुआ बद हाल मुतगैय्यर हमारा । खबर लेनेको आये आप करतार ॥ हुए हम भूलके मुजरिम तुम्हारे । गुनह बख्शो गुनह बखशिन्दः गफ्तार ॥ सुबुक कीजे हमें इस बोझस अब । हमारे सिर गुनाहोंका है अँबार ॥ हमारे परदः को ढक मेह्र करके । तेराही नाम है मशहूर सत्तार ॥ हम आजिज खाक हैं पा पाक तेरे । गुरूकी मेह्र पावें अस्ल इसरार ॥

## ऋषीश्वरोंका वचन

### रामानन्दजीवचन ( रामानन्दगोष्ठीसे )

कर्ता तुम ही साधु हो, सत कवीर हो देव ।
तनमन तुमको अरपिहों, कुलदिक्षा मोहिं देव ॥

### धर्मदास वचन ।

बाजा बाजे रहितका, परा नगरमें शोर ।
सद्गुरु खसम कवीर है, नजर न आवे और ॥

### गोरखनाथ वचन ॥

नौनाथ चौरासीसिद्ध, इनका अनहद ज्ञान ।
अविचल घर कव्वीरका, यह गति बिरला जान ॥

झोरी झण्डा कूबरी, सेली टोपी साथ ।
दया भइ जब कबीरकी, चढायी गोरखनाथ ॥

नाभाजी वचन ।

वानी अरब व खरब हैं, ग्रंथाँ कोट हजार ।
कर्ता पुरुष कबीर है, नाभे किया विचार ॥

नानकशाह वचन राग महलापहला ।×

यक अर्ज गुफतम पेश तू दर गोश कुन करतार ।
हक्का कबीर करीम तू ऐब परवरदिगार ॥
दुनियाँ मुकाम फानी तहकीक दिलदानी ।
मन सर मूए इजराईल गिरफ्त दिल हेच न दानी ॥
जन पिसर बेगादर कस नेस्त दस्तम गीर ।
आखिर बयफ्तम कस नदारम चूँशब्द तकबीर ॥
शबोरोज गशतम दरहवा करदेम बदी खयाल ।
गाहे न नेकी कार करदम ई चुनीं अहवाल ॥
बदबख्त हमचू बखील गाफिल बेनजर बेबाक ।
नानक बगोयद जी तोरा तिरा चाकरा पाखाक ॥

मलूकदासजी वचन शब्द ।

जपोरे भाई साहब नाम कबीर ।
एक समय गुरु बंसी बजाई, कालिन्दीके तीर ।
सुरनर मुनि सब छकितभये हैं, अरु यमुनाजी कोनीर ॥
काशी तजि गुरु मगहर आये, दोउ दीनको पीर ।
कोई गाडे कोई अग्नि जलावे, नेक न धरते धीर ॥

× नोट इसका अर्थ परिशिष्टमें देखो ॥

चार दागसे सद्गुरु न्यारा, अजरो अमर शरीर।
जगन्नाथको मन्दिर थाप्यो, हटाके सायर नीर॥
आसा रोप समुद्र हटाये, ऐसे गुरु गम्भीर।
दास मलूक सलूक कहत है, कहो जो खसम कबीर॥

दादूराम वचन साचके अङ्गकी साखियाँ।

जै जै शरण कबीरके, तरगय अनन्त अपार।
दादूगुण कीना कहै, कहत न आवे पार॥ १॥
कबीर कर्ता आप है, दूजा नाहीं कोय।
दादू पूरन जगतको, भक्ति दृढावन सोय॥ २॥
ठीका पूरन होय जब, सबकोइ तजै शरीर।
दादूकाल गँजे नहीं, जपै जो नाम कबीर॥ ३॥
आदमकी आयू घुटै, तब जम घेरैं आय।
सुमिरन किये कबीरका, दादू लियो बचाय॥ ४॥
मेट दिया अपराध सब, आय मिले छनमाँह।
दादूको सँग लेचले, कबीर चरणकी छाँह॥ ५॥
सेव देव निज चरणकी, दादू अपना जान।
भृङ्गी सत्यकबीरके, कीन्हा आप समान॥ ६॥
दादू अधम अनेक हैं, भगत दानपत हीन।
साहब कबीर सहजमें, ताहि अपन करलीन॥ ७॥
दादू अन्तरगत सदा, छिन छिन सुमिरन ध्यान।
वारूँ नाम कबीर पर, पल पल मेरा प्रान॥ ८॥
सुन सुन साखि कबीरकी, मग्न भया मन मोर।
दादू थाके खोजके, जैसे चन्द्र चकोर॥ ९॥

सुन सुन साखि कबीरकी, काल नवावे माथ ।
धन्य धन्य तिनलोकमें, दादू जोडे हाथ ॥ १० ॥
केहरि नाम कबीरका, विषम काल गजराज ।
दादू भजन प्रतापते, भाजे सुनत अवाज ॥ ११ ॥
पल हिं नाम कबीरका, दादू मन चित लाय ।
हस्तीके असवारको, श्वान काल नहिं खाय ॥ १२ ॥
सुमिरत नाम कबीरका, कटै कालकी पीर ।
दादू दिन दिन ऊपजे, परमानंद सुख सीर ॥ १३ ॥
दादू नाम कबीरका, जो कोइ लेय ओट ।
तिनको कबहुं न लागई, काल वज्रकी चोट ॥ १४ ॥
और सन्त सब कूप हैं, केते सरिता नीर ।
दादू अगम अपार है, दरिया सत्यकबीर ॥ १५ ॥
हिन्दू अपनी हद चलें, मुसलमान हद माहि ।
दादू चाल कबीरकी, दोउ दीनमें नाहि ॥ १६ ॥
हिन्दूके सद्गुरु सही, मुसलमानके पीर ।
दादू दोनों दीनमें, अदली नाम कबीर ॥ १७ ॥
अबही तेरी सब मिटै, जन्म मरनकी पीर ।
सास उसासा सुमिरले, दादू नाम कबीर ॥ १८
कोई रीझा सगुनमें, कोइ निर्गुन ठहराय ।
दादू गति कबीरकी, मोते कही न जाय ॥ १९ ॥
भवजल तारन जीवको, खेवट आय कबीर ।

अनन्त कोट सुख भावसे, दादू उतरे तीर ॥ २० ॥
मुखसे ज्ञान कबीरका, कोई कह समुझाय ।
दादू वाको चरणरज, लइहों शीश चढाय ॥ २१ ॥
नाम कबीर जो नर जपै, मैं बलिहारी ताहि ।
तन मन वारूं तासु पर, दादू प्रान लगाय ॥ २२ ॥
सुमिरत नाम कबीरका, जिह्वा मोर सुखाय ।
विरह अग्नि तनमें तपै, दादू कौन बुझाय ॥ २३ ॥
दादू नाम कबीरका, सुनिके काँपै काल ।
नाम भरोसे नर चले, बङ्क न होवे बाल ॥ २४ ॥
जिन मोको निज नाम दई, सद्गुरु सोइ हमार ।
दादू दूसर कौन है, कबीर सिरनहार ॥ २५ ॥
कबीर साहब कह गये, ढोल बजाय बजाय ।
दादू दुनियाँ बावरी, ताके सङ्ग न जाय ॥ २६ ॥
दादू बैठि जहाज पर, गये समुद्दरतीर ।
जलमें मच्छी जो रहैं, कहैं कबीर कबीर ॥ २७ ॥
स्वाती शब्द कबीरका, सुरति जो सीप विचार ।
दादू तन मन जोडके, लेत बूँद अनुसार ॥ २८ ॥
स्वाती शब्द कबीरका, चात्रक मन बहु आस ।
दादू और पिवे नहीं, स्वाति बूँदकी प्यास ॥ २९ ॥
स्वाती शब्द कबीरका, सो हम पिया अघाय ।
मनकी प्यासा सब मिटी, दादू रहे समाय ॥ ३० ॥
जैसे मिरगा नाद सुन, तन मन भूले प्रान ।

दादू भूले देह गुन, सुनि कबीरको ज्ञान ॥ ३१ ॥
केवल नैन कबीरका, उज्ज्वल रूप अनूप ।
दादू अन्तर निर्मला, देखे सहज सरूप ॥ ३२ ॥
शोभा देखि कबीरकी, नैन रहे ललचाय ।
कहा कहूँ छबि रूपकी, दादू कही न जाय ॥ ३३ ॥
एकै रोम कबीरका, कोटिभानु छबि छाय ।
दादू कौतुक चन्द ते, शीतलता अधिकाय ॥ ३४ ॥
बन्दौं चरण कबीरके, कोटि बार पल माँहि ।
दादू हवस मनमें रही, कोटिक रसना नाँहि ॥ ३५ ॥
कोटि कर्म पलमें कटैं, नाम कबीर जो लेइ ।
दादू सच्चे होत है, सुफल मनोरथ देइ ॥ ३६ ॥
परमारथके कारनै, आप स्वारथी नांहि ।
कबीर आये भगति लै, दादू भवजल मांहि ॥ ३७ ॥
भगति करे संसारमें, युग युग नाम धराय ।
दादू तारन जीवको, काशी प्रगटै आय ॥ ३८ ॥
बहुत जीव अटके रहे, बिन सद्गुरु भव मांहि ।
दादू नाम कबीर बिन, छूटे एको नांहि ॥ ३९ ॥
सद्गुरु बहियाँ जीवको, मंझधार भवसिन्ध ।
दादू नाम कबीरका, छोड आवे भवफंद ॥ ४० ॥
साचा शब्द कबीरका, मीठा लागै मोय ।
दादू सन्ता परम सुख, कीता आनंद होय ॥ ४१ ॥
साचा शब्द कबीरका, सब सुखदाई सोय ।

दादू गुरु परतापते, किता भरोसा होय ॥ ४२ ॥
साचा शब्द कवीरका, सन्त सुनो चित लाय।
दादू भ्रम सब मिटगया, कर्मकाल नहिं खाय ॥ ४३ ॥
साचा शब्द कवीरका, सबको होय सहाय।
रोग दुःख त्रिताप सब, दादू दूर पराय ॥ ४४ ॥
साचा शब्द कवीरका, तोल मोलमें नाँहिं।
दादू दूसर ना मिलै, जो खोजे घट माँहिं ॥ ४५ ॥
साचा शब्द कवीरका, युग युग अटल अभूल।
दादू पावै पारखू, परम पुरुष निजमूल ॥ ४६ ॥

गरीबदासजीकी साखियाँ।

नमो नमो सत्पुरुषको, नमस्कार गुरु कीन।
सुरनर मुनि जन साधुवा, सन्तों सर्वश दीन ॥ १ ॥
पुर पट्टन सतलोक है, अदली सद्गुरु सार।
भगति हेत सो ऊतरे, पाया हम दीदार ॥ २ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुन्न बिदेशी आप।
रोम रोम परकाश है, दीना अजपा जाप ॥ ३ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुरत सिंधुके सैन।
उर अन्तर परकाशिया, अजब सुनाये बैन ॥ ४ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुरत सिंधुके नाल।
गौन किया सतलोकसे, अनल पंखकी चाल ॥ ५ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला; सुरत सिंधुके तीर।
सब संतन शिरताज है, सद्गुरु अटल कवीर ॥ ६ ॥

ऐसा सद्गुरु हम मिला, बे परवाह अबंध ।
परम हंस पूरन पुरुष, रोम रोम रविचंद ॥ ७ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, है जिन्दा जगदीश ।
सुन्न विदेशी मिल गया, छत्र मुकुट है शीश ॥ ८ ॥
जिन्दा जोगी जगत गुरु, मालिक मुरशिद पीव ।
कालकरम लागै नहीं, संका नाहीं शीव ॥ ९ ॥
जिन्दा जोगी जगत गुरु, मालिक मुरशिद पीर ।
दुहूँ गरीब झगरा पडा, पाया नहीं शरीर ॥ १० ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, तेज पुंजको अङ्ग ।
झिलमिल नूर जहूर है, रूप रेख नहिं रङ्ग ॥ ११ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, खोले वज्रकपाट ।
अगम भूमिकी गम करे, उतरे औघट घाट ॥ १२ ॥
सद्गुरु मार्‍यो बान कसि, गहवर गाँसी खींच ।
करम भरम सबही लिये, ज्ञानीको बुधि ईंच ॥ १३ ॥
सद्गुरु आय दया करि, ऐसे दीन दयाल ।
बन्दीछोर विरद किया, जठरअग्नि प्रतिपाल ॥ १४ ॥
यम जोरा जासे डरे, धरमराय धर धीर ।
ऐसा सद्गुरु एक है, अदली अदल कबीर ॥ १५ ॥
यम जोरा जासे डरे, मिटे करमको रेख ।
अदली अदल कबीर हैं; कुलका सद्गुरु एक ॥ १६ ॥
ऐसा सद्गुरु हम मिला, भवसागरके बीच ।
खेवट सबको खेवता, क्या उत्तम क्या नीच ॥ १७ ॥

मायाको रस पीयके, डूब गये दो दीन।
ऐसा सद्गुरु हम मिला, ज्ञान योग परवीन ॥ १८ ॥
साहबसे सद्गुरु भये, सद्गुरुसे भय साध।
ये तीनों एक अङ्ग हैं, गति कुछ अगम अगाध १९
अंधे गूँगे गुरु घने, लोभी लँगडे लाख।
साहबसे परिचय नहीं, काहि बनावैं साख ॥ २० ॥
ऐसा सद्गुरु सेविये, शब्द समाना होय।
भौसागरमें डूबते, पार लँघावें सोय ॥ २१ ॥
सद्गुरु पूरण ब्रह्म है, सद्गुरु आप अलेख।
सद्गुरु रमता राम है, यामें मीन न मेख ॥ २२ ॥
बङ्कनालके अन्तरे, तिरवेणीके तीर।
जहँ मुहिं सद्गुरु लेगया, बन्दीछोड कबीर ॥ २३ ॥
शून्यमण्डल अनुराग है, शून्यमण्डल रह थीर।
दास गरीब उधारिया, बँदीछोड कबीर ॥ २४ ॥
या सुखते सुख संख गुण, ब्रह्म शब्दके माँहि।
सद्गुरु मिले कबीरसे, सत्यलोकले जाँहि ॥ २५ ॥
जैसे बादल गगनमें, चलते हैं बिन पाँय।
ऐसे पुरुष कबीर हैं, शून्यमें रहे समाय ॥ २६ ॥
गगनमण्डलसे ऊतरे, साहब पुरुष कबीर।
चोला धरा खवासका, तोडे यम जञ्जीर ॥ २७ ॥
आदौ आदि कबीर है, चौदह भुवन विशाल।
हीरे मोती बहुत हैं, कबीर लालनके लाल ॥ २८ ॥
ऐसा निमल ज्ञान है, निर्मल करे शरीर।

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

और ज्ञान मण्डल सबै, चक्रै ज्ञान कबीर ॥ २९ ॥

चौपाई।

दास गरीब कबीर को चेरा। सत्य लोक अमरपुर डेरा ॥
अमृत पान अमिय रस चोखा। पीवें हंसा नाहीं धोखा ॥

गोसाईं गरीब दासजीकी ब्रह्मवेदी।

नमो नमो सत पुरुषको, नमस्कार गुरु कीन्ह।
सुरनर मुनिजन साधवा, संतो सर्वस दीन्ह ॥
अनंत कोट ब्रह्माण्डमें, बन्दीछोर कहाय।
सोतो पुरुष कबीर हैं, जननी जनी न माय ॥

ब्रह्म वेदी।

गैबी ख्याल विशाल सतगुरु, अचल दिगम्बर थीर है।
भक्त हेत काया धीर आये, अविचल सत्य कबीर है॥१॥
नानक दादू अगम अगाधू, तरे जहाज खेवट सही।
सुख सागरके हंस आये, भक्त हिरम्बर उर गही ॥ २ ॥
कोटि भान परकाश पूरन, रूम रूमकी लार है।
अचल अभंगी है सत्संगी, अविगतका दीदार है ॥ ३ ॥
धन सतगुरु उपदेश देवा, चौरासी भ्रम मेटई।
तेज पुंज तन देह धरिके, इस विधि हमकूं भेटई ॥ ४ ॥
सबद निवास अकास वानी, यह सतगुरुका रूप है।
चन्द सूर नहिं पवन पानी, ना जहँ छाया धूप है ॥ ५ ॥
रहिता रमिता राम साहब, अविचल अलह अलेख है।
भूले पंथ विटम्बवादी, कुलका खाविंद एक है ॥ ६ ॥
रोम रोममें जाप जपिले, अष्टकमल दल मेल है।

सुरत निरतके कमल बैठो, जहां दीपक बिन तैलहै ॥७॥
हर दम खोज हनोज हाजिर, तिरबेनीके तीर है ।
दास गरीब तबीन सतगुरु, बन्दीछोर कबीर है ॥ ८ ॥

गरीबदासजीकी पारखअङ्गकी कुछ साखियाँ ।

कशीपुरको कस्द किया, उतरे अधर अधार ।
मोमिनका मुजरा हुआ, जंगलमें दीदार ॥ १ ॥
कोटि किरन शशि भानु सुधि, आसन अधर विमान ॥
परसत पूरण ब्रह्मको, शीतल पिण्ड औ प्रान ॥ २ ॥
गोदलिया मुख चूमके, हेम रूप झलकन्त ।
जगर मगर काया करे, दमके पद्म अनन्त ॥ ३ ॥
काशी उमडी गुल भया, मोमिनका घर घेर ।
कोई कहै ब्रह्मा विष्णु है, कोई कहै इन्द्र कुबेर ॥ ४ ॥
कोई कहै वरुण धरमराय है, कोइ कोइ कहता ईश ।
सोलह कला सुभान गति, कोई कहे जगदीश ॥ ५ ॥
भगति मुक्ति ले ऊतरे, मेटन तीनों ताप ।
मोमिन घर डेरा लिया, कहे कबीरा बाप ॥ ६ ॥
दूध न पीवे नहिं अन्न भखे, तहिं पलने झूलन्त ।
अधर आसन है ध्यानमें कमल खिला फूलन्त ॥ ७ ॥
कोई कहै छल, ईश्वर नहीं, कोई किन्नर कहलाय ।
कोई कहे गुण ईशका, ज्यों ज्यों मारे साय ॥ ८ ॥
काशीमें अचरज भया, गयी जगतकी निन्द ।
ऐसे दुल्हा ऊतरे, ज्यों कन्या बरबिन्द ॥ ९ ॥

खल्क मुल्क देखन गया, राजा परजा रीति ।
जम्बुद्वीप जहानमें, उतरे शब्द अतीति ॥ १० ॥
दुनी कहे यह देव है, देव कहे यह ईश ।
ईश कहे परब्रह्म है, पूरन विस्वेबीस ॥ ११ ॥
काजी गये कुरान ले, धर लडकेको नाँउ ।
अच्छर अच्छरमें फुरे, धन्य कबीर बल जाउँ ॥ १२ ॥
सकल कुरान कबीर है, हरफ लिखे जो लेख ।
काशीके काजी कहें, गयी दीनकी टेक ॥ १३ ॥
शिव उतरे शिवपुरीसे, अविगत वदन विनोद ।
महके कमल खुशी भया, लिया ईशको गोद ॥ १४ ॥
नजर नजरसे मिल गयी, किया दरश परनाम ।
धन्य मोमिन धन्य पूरना, धन्य काशीनिष्काम ॥ १५ ॥
सात बार चर्चा करे, बोले बालक बैन ।
शिव सो कर मस्तक धऱ्यो, ला मोमिन यक धेनु ॥१६॥
अनव्यावरको दुहतही, दूध दिया ततकाल ।
पियो बालक ब्रह्म गति, वहाँ शिव भये दयाल ॥१७॥
षष्ट मासके जब भये, नित दुनिया वर देहि ।
चरण चले तत पुरीमें, यहि शिक्षा निति लेहि ॥ १८ ॥

रामानन्द स्वामी और कबीर साहबकी वार्ता-
लापका वृत्तान्त ।

भक्ति द्राविड देशथी, यहाँ नहीं यक रञ्च ।
ऊत भूतको ध्यावना पाखण्ड और परपञ्च ॥ १९ ॥

रामानंद अनन्द भये, काशी नगर मँझार।
देश द्राविड छाडिके, आये पुरी विचार॥ २०॥
योग युक्ति प्राणायाम करि, जीता सकल शरीर।
तिरवेणीके घाटमें, अटक रहे बलबीर॥ २१॥
तीरथ वरत इकादशी, गंगोदक अस्नान।
पूजा विधि विधानसो, सर्व कलासों गान॥ २२॥
करे मानसी सेव नित, आत्मतत्वको ध्यान।
षट पूजा आदि भेद गति, धूप औ दीप विधान॥ २३॥
चौदह सौ चेले किये, काशीनगर मँझार।
चार सम्प्रदा चलत हैं, औरो बावन द्वार॥ २४॥
पांच बरसके जब भये, काशी माहिं कबीर।
दास गरीब अजीब कला, ज्ञान ध्यान गुण थीर॥ २५॥
गुल काशीपुरिमें भया, अटपट बैन विहंग।
दास गरीब गुणी थके, सुनि जोलहा परसंग॥ २६॥
रामानन्द अधिकार है, सुनि जोलहा जगदीश।
दास गरीब विलंबना, ताहि नवावत शीश॥ २७॥
रामानन्दको गुरु कहै, तनसे नहीं मिलाय।
दास गरीब दरस भये, पैयन लगी जो लाय॥ २८॥
पन्थ चलत ठोकर लगे; राम नाम कहि दीन।
दास गरीब कसर नहीं, सीख लिये परवीन॥ २९॥
आडा परदा देहके, रामानन्द बुझन्त।
दास गरीब उलंग छबि, अधर डाक कूदन्त॥ ३०॥

कौन जाति कुल पन्थ है, कौन तुम्हारा नाउँ ।
दास गरीब अधीन गति, बोलतही बलि जाउँ ॥ ३१ ॥
जाति हमारी जगद्गुरु, परमेश्वर पद पन्थ ।
दास गरीब लिखत परे, नाम निरञ्जन कन्थ ॥ ३२ ॥
रे बालक दुर्बुद्धि सुनु, घट मठ तन आकार ।
दास गरीब दर दर लगे, बोले सिरजनहार ॥ ३३ ॥
तू मोमिनके पालुवा, जुलहेके घर बास ।
दास गरीब अज्ञान गति, एता दृढ विश्वास ॥ ३४ ॥
मान बडाई छाडिके, बोलौ बालक बैन ।
दास गरीब अधम सुखी, इतना तुम घर फैन ॥ ३५ ॥
कलियुग क्षेतरपाल है, क्या भैरो कोई भूत ।
दास गरीब विटंबना, गया जगत सब ऊत ॥ ३६ ॥
मनी मग्ज माया तजो, तजिये मान गुमान ।
दास गरीब सो बात कहि, नहिं पावेगो जान ॥ ३७ ॥
हे बालक बुधि तोरि गति, कौडी साखन भाँड ।
दास गरीबहि हदेसकरि, नहिं लेवेंगे डाँड ॥ ३८ ॥
शाह सिकन्दरके बधे, पग ऊपर तर शीश ।
दास गरीब अगाधि गति, तोर कहा जगदीश ॥ ३९ ॥
कान काट बूचा करे, नली भरत रे नीच ।
दास गरीब जहानमें, तुम सर जोग मीच ॥ ४० ॥
मरत मरत सब जग मुवा, लखै न इस्थिर ठौर ।
दास गरीब जहानमें, तुमसा नीच न और ॥ ४१ ॥

नादबिन्दकी देहमें, येता गर्व न कीन ।
दास गरीब पलक फना, जैसे बुद बुद लीन ॥ ४२ ॥
तिर कतलोंसे बोलते, रामानन्द सुजान ।
दास गरीब कुजाति है, आखिर नीच निदान ॥ ४३ ॥
नीच मीचसे ना डरे, काल कुल्हाड अशीश ।
दास गरीब अदत्त है, तैं जो कहा जगदीश ॥ ४४ ॥
जडिहों हाथ हथकडी, गले तौक जञ्जीर ।
दास गरीब परख बिना, यह वाणी गुणगीर ॥ ४५ ॥
परख निरख नहिं तोहिको, नीच कुलीन कुजात ।
दास गरीब अकल विना, तू जो कह यह बात ॥ ४६ ॥
हे बालक नीची कला, तुमही बोलो ऊँच ।
दास गरीब पलक धरि, खबर नहीं हम कूँच ॥ ४७ ॥
महँके वरन खलास करि, सुन स्वामी परवीन ।
दास गरीब मनी मरी, मैं आजिज आधीन ॥ ४८ ॥
मैं अविगत गतिसे परे; चारवेदसे दूंर ।
दास गरीब दशो दिशा, सकल सिंधु भरपूर ॥ ४९ ॥
सकल सिंधु भरपूर हूँ, खालिक हमरो नाउँ ।
दास गरीब अजात हूँ, तेजि कहा बलि जाउँ ॥ ५० ॥
जात पाँत मेरे नहीं, नहिं बस्ती नहिं गाउँ ।
दास गरीब अनन्य गति, नहीं हमारे नाउँ ॥ ५१ ॥
नाद बिन्द मेरे नहीं, नहीं गोद नहिं गात ।
दास गरीब शबद सजग, नहीं किसीका साथ ॥ ५२ ॥

सब सङ्गी बिछुरू नहीं, आदि अन्त बहु जाँहि ।
दास गरीब सकल बसौं, बाहर भीतर माँहि ॥ ५३ ॥
हे स्वामी मैं सृष्टिमें, सृष्टि हमारे तीर ।
दास गरीब अधर बसूँ, अविगत पुरुष कबीर ॥ ५४ ॥
अनन्त कोटि सलिता बड़ो, अनंत कोटि घर ऊँच ।
दास गरीब सदा रहूँ, नहीं हमारे कूँच ॥ ५५ ॥
पुहमी धरनी अकाशमें, मैं व्यापक सब ठौर ।
दास गरीब न दूसरा, हम समतूल नहिं और ॥ ५६ ॥
मैं माया मैं कालहूँ, मैं हंसा मैं बंस ।
दास गरीब दयाल हम, हमहीं करें विध्वंस ॥ ५७ ॥
ममता माया हम रची, काल जाल सब जीव ।
दास गरीब प्राण पद, हम दासातन पीव ॥ ५८ ॥
हम दासनके दास हैं, कर्ता पुरुष करीम ।
दास गरीब अवधूत हम, हम ब्रह्मचारी सीम ॥ ५९ ॥
हम मौला सब मुल्कमें, मुल्क हमारे माहिं ।
दास गरीब दलाल हम, हम दूसर कछु नाहिं ॥ ६० ॥
हम मोती मुक्ताहल, हम दरिया दरवेश ।
दास गरीब हम नित रहें, हम तंजि जात हमेश ॥ ६१ ॥
हमहीं लाल गुलाल हैं, हम पारस पद सार ।
दास गरीब अदालतँग, हम राजा संसार ॥ ६२ ॥
हम पानी हम पवन हैं, हमहीं धरणि अकाश ।
दास गरीब तत्वपंजमें, हमहीं शब्द निवास ॥ ६३ ॥

सुन स्वामी सत भाषहूँ, झूठ न हमरो रञ्च ।
दास गरीब हम रूप बिन, और सकल परपञ्च ॥ ६४ ॥
हम रोवत हैं सृष्टिको, जो रोवति है मोंहि ।
दास गरीब वियोगको, और न बूझै कोइ ॥ ६५ ॥
मैं बूझूँ मैंही कहूँ मैंही किया वियोग ।
गरीब दास गलतान हम, शब्द हमारा योग ॥ ६६ ॥
चारो रुकुनमें हम फिरें, नहिं आवें नहिं जावँ ।
गरीब दास गुरु भेदसे, लखे हमारा ठावँ ॥ ६७ ॥
रजगुण सतगुण तमगुण, रजबीरज हम कीन्ह ।
गरीबदास हम सकलमें, हम दुनियाँ हम दीन ॥ ६८ ॥
लगी महम गनीम पर, काल कटक कटकन्त ।
गरीबदास निर्भय करूँ, जो कोइ नाम जपन्त ॥ ६९ ॥
मैं बालक मैं वृद्ध हूँ, मैंही जवान जमान ।
गरीबदास निज ब्रह्म हूँ, हमहीं चारों खान ॥ ७० ॥
गगन सुन्य गुप्ता रहूँ, हम परगट परवाह ।
गरीबदास घट घट बसूँ, विकट हमारी राह ॥ ७१ ॥
आवत जात न दीसहूँ, रहता सकल समीप ।
गरीबदास जल तरङ्ग ज्यों, हमहीं सायर सीप ॥ ७२ ॥
गोता लाऊँ स्वर्गमें, फिर पैठूँ पाताल ।
गरीबदास ढूँढत फिरूँ, हीरे माणिक लाल ॥ ७३ ॥
इस दरिया कङ्कर बहुत, लाल कहीं कहिं ठाउँ ।
गरीबदास माणिक चुगूँ, हम मरजीवा नाउँ ॥ ७४ ॥

बोले रामानन्दजी, हम घर बड़ा सुकाल ।
गरीबदास पूजा करें, मुकुट फई जद माल ॥ ७५ ॥
सेवा करो सम्हालके, सुन स्वामी सुरज्ञान ।
गरीबदास सिरधर मुकुट, माला अटकी जान ॥ ७६ ॥
स्वामी घुण्डी खोलके, फिर माला गल डार ।
गरीबदास इस भजनको, जानत है करतार ॥ ७७ ॥
ड्योढी परदा दूरकर, लीना कण्ठ लगाय ।
गरीबदास गुजरी बहुत, बदनन बदन मिलाय ॥ ७८ ॥
मनकी पूजा तुम लखी, मुकुट माल परवेश ।
गरीबदास किनको लखे, कौन वरन क्या भेष ॥ ७९ ॥
यह तो तुम शिक्षा दयी, मान लिये मन मोर ।
गरीबदास कोमल पुरुष, हमरो बदन कठोर ॥ ८० ॥
हे स्वामी तुम स्वर्गकी छाडो आशा रीत ।
गरीबदास तुम कारणे, उतरे शब्द अतीत ॥ ८१ ॥
सुन बच्चा मैं स्वर्गकी, कैसे छाडूँ रीत ।
गरीबदास गुदडी लगी, जन्म जात है बीत ॥ ८२ ॥
चार मुक्ति वैकुण्ठमें, जिनकी मोरे चाह ।
गरीबदास घर अगमके, कैसे पाऊँ थाह ॥ ८३ ॥
हेम रूप जहाँ धरणि है, रत्न जडे बहु सोभ ।
गरीबदास वैकुण्ठको, तन मन हमरो लोभ ॥ ८४ ॥
शंख चक्र गदा पद्म है, मोहन मदन मुरारि ।
गरीबदास मुरली बजै, स्वर्ग लोक दरबार ॥ ८५ ॥

दूधोंकी नदियाँ बगैं, श्वेत वृक्ष शोभान ।
गरीबदास मन्दिर मुकुत, स्वर्गपुरी अस्थान ॥ ८६ ॥
रतन जडाऊ मनुष सब, गण गंधर्व सब देव ।
गरीबदास उस धामकी, कैसे छाडूँ सेव ॥ ८७ ॥
चारवेद गावें उसे, सुरनर मुनी मिलाप ।
गरीबदास ध्रुव पुर जस, मिटिगये तीनों ताप ॥ ८८ ॥
नारद ब्रह्मा यश रटें, गावें शेष गणेश ।
गरीबदास वैकुण्ठसे, और परेको देश ॥ ८९ ॥
सुनु स्वामी निज मूल गति, कहि समझाऊँ तोय ।
गरीबदास भगवानको, राखा जगत समोय ॥ ९० ॥
तीनलोकके जीव सब, विषय बासना भाय ।
गरीब दास हमको जपैं, तिसको धाम दिखाय ॥ ९१ ॥
कृष्ण विष्णु भगवानके, जहाँ गये हैं जीव ।
गरीब दास त्रिलोकमें, काल कर्म्म सर शीव ॥ ९२ ॥
सुनु स्वामी तो सों कहूँ, अगम द्वीपकी सैल ।
गरीब दास डूबे परे, पुस्तक लादे बैल ॥ ९३ ॥
कहु स्वामी कहँ रहोगे, चौदह भुवन बिहण्ड ।
गरीब दास बीजक कहाँ, चलत प्राण औ पिण्ड ॥ ९४ ॥
बोलत रामानन्दजी, सुन कवीर करतार ।
गरीब दास सब रूपमें, तुमहीं बोलनहार ॥ ९५ ॥
तुम साहब तुम सन्त हो, तुम सद्गुरु हम हंस ।
गरीबदास तुम रूप बिनु, और न दूजो बंस ॥ ९६ ॥

मैं भक्ता मुक्ता भया, किया कर्म्म कुल नाश।
गरीब दास अविगत मिले, मेटी मनकी प्यास ॥ ९७ ॥
दोनहु ठौरमें एक तू, भया एकसे दोय।
गरीबदास हम कारने, उतरे मगहर जोय ॥ ९८ ॥
बोले रामानन्दजी, सुन कबीर सुजान।
गरीबदास मुक्त भयो, उधरे पिंड औ प्रान ॥ ९९ ॥
गुष्टी रामानन्दसे, काशी नगर मँझार।
गरीबदास जिंद पीरकी, हम पाये दीदार ॥ १०० ॥

कबीरउक्ति धर्मदासप्रति।
( गो. गरीबदास वचन। )

हम साहब सतपुरुष है, यह सबरूप हमार।
जिन्द कहे धर्मदाससे, सत्य शब्द वनसार ॥ १०१ ॥
सकल सृष्टिमें रमि रहा, हूँ सब जान अजात।
गरीबदास जिन्दा कहे, मेरे दिवस न रात ॥ १०२ ॥
बोले जिन्द कबीरजी, सुनु वानी धर्मदास।
हम खालिक हम खलक हैं, सकल हमार प्रकास ॥ १०३ ॥
गरुडबोध बेदी रची, रामकृष्ण हैरान।
लंकापर धाये जबे, तबका करूँ बखान ॥ १०४ ॥
दुर्वासा मुनि इन्द्रको, हुआ ज्ञान सम्वाद।
दत तत्त्वमें मिलगये, जा घर वेद न वाद ॥ १०५ ॥
सिख बन्दी सतगुरु सही, चक्रवे ज्ञान अमान।
शीस कटा मन्सूरका, फेर दिया जिवदान ॥ १०६ ॥
नामाको सतगुरु मिले, देवल नेका फेर।
पिंडातो इतही रहा, शब्द कहा हम टेर ॥ १०७ ॥

रवी रसायन पीवते, झूले घरे अनन्त ।
चलत वार पाये नहीं, धन सतगुरु भगवन्त ॥ १०८ ॥
ऐसी संगति जो मिले, भक्ति गही प्रह्लाद ।
नारदसे सतगुरु मिले, सूझी अगम अगाध ॥ १०९ ॥
चार मुक्ति वैकुंठ बट, सतपुरी सैलान ।
आगे धाम कवीरका, हंसन पावें जान ॥ ११० ॥
काया कासी मन मगहर, दोउके मध्य कवीर ।
काशी तज मगहर गये, पाया नहीं शरीर ॥ १११ ॥
काया काशी मन मगहर, दोउके बीज मुकाम ।
जहाँ जुलहदी घर किया, आदि अंत विसराम ॥ ११२ ॥
नौलख नानक नादमें, दसलख गोरख तीर ।
लाख दत्त संगत सदा, चरनो चरच कवीर ॥ ११३ ॥
नौ लख नानक नादमें, दस लख गोरख पास ।
अनंत संत पदमें मिले, कोटि तैरे रैदास ॥ ११४ ॥
रामानन्दसे लक्ष गुरु, तारे शिषके भाय ।
चेलाकी गिन्ती नहीं, पदमें रहे समाय ॥ ११५ ॥
खोजी खालकमें मिले, ज्ञानीके उपदेश ।
सतगुरु पीर कवीर है, सब काहू परवेश ॥ ११६ ॥
मीरा बाई पद मिली, सतगुरु पीर कवीर ।
देह छतां लौलीन हुइ, पाया नहीं शरीर ॥ ११७ ॥

उमीद न कुछ आदम और जिन्नो मलिक है।
हे जाँ अमाँ बख्श तुही फितनः फलक है॥
जुज तेरे न महरम कोई इनसानके धरमसे।
सब इलमों अमल बरकत सतगुरु की कदमसे॥४॥
तू रहबर हो जिसकी करे रहनुमाई।
फिलफौर सोई खुदमें लिया देख खुदाई॥
हरजा तू है तुही है तुही अर्ज समावी।
सदहा खाते गोता न इसरार सो पाई॥
है फज्ल तेरा आजिजकी दीदः नम से।
सब इल्म व अमल बर्कत सतगुरुकी कदमसे॥५॥

गजल प्रारम्भः।

बुल बुलाँ मुजदए बहार आया। इसके साथही पयाम यार आया॥ आह ब नालेके दिन गये हैं गुजर। दिल परागन्दा बरकरार आया॥ खुल्द और जन्नते जिनाँ क्या जान। दिन बशाशतका बेशुमार आया॥ शोर बख्तीके दिन गये हैं गुजर। नेकबख्तीका रोजगार आया॥ मिहर मुरशद कबीर जिस पर हो। उसको है भेद वार पार आया॥ फिर न कोई दवा दविश आजिज। हाथमें अपने जब शिकार आया॥ १॥

नखले मुहब्बतका समर मुझको दिखा ऐ बागवां।
तेरे बागमें उलफते शिजर मुझको दिखा ऐ बागवाँ॥
शफकत किया जो निहाल पर ताजा किया तो पालकर।
भूला करम क्यों टालकर मुझको बता ऐ बागवां॥
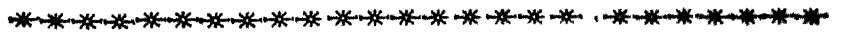
सब खारो खसको खींचकर पाला है तूने सींचकर।
बैठा क्यों आंखे मींचकर मुझको बता ऐ बागवां॥
खुद बागमें शामिल किया और पालकर कामिल किया।
फिर काटना क्यों दिल दिया मुझको बता ऐ बागवां॥
आजिज पडा आजिज पडा ऊँधा हुआ पानी घडा।
तुझ बिन भरे फिर कौन आ मुझको बता ऐ बागवां॥७॥
बागवाँ बाग कुहनमें तेरे अशजार किते।
कोई है समर बख्श हैं पुर खार किते॥
तुही खालिक तुही मालिक सभी तहरीक तेरी।
तू शाहन्शाह जहाँ फौजके सरदार किते॥
सभी महकूम तेरे हाकिमे आला है तूही।
तुही सरकार बडा छोटे हैं सरकार किते॥
है हयात अबदी उनको जिसे तू बख्श अमाँ।
जिन्दाहै कोई कोई और हैं मुरदान किते॥
आलमोंका तु खुदावन्द फिक्र सबकी तुझे।
सबका दिलवर है तुही और हैं दिलदार किते॥
नाम लेते हैं बहुत लोग तेरी दुनियामें।
हंस है कोई कोई और बूतेमार किते॥
आसमाँ और जमीं काँपते कबीर कहे।
आशिकको खबर गो कि खबरदार किते॥
पेशकश हाथ सर अपना ले गली यारमें आ।
बेकीमतके वस्ल खरीदार किते॥

जिस्को तू अमल बख्श है अलमस्त सोई ।
बे नशः के छूटे हैं सरशार किते ॥
सबका है खुदा तुही खुदावन्दा नेक ।
बे बहा तू है समर बख्श समर बार किते ॥
आजिजको चखा लज्जते उल्फत ऐ गुल ।
गोबुलबुलो सद जानिबे हरचार किते ॥ ३ ॥
बुलबुलो खिजां गया अब आया है दिन बहार ।
गा गीत चहचहे सदा कर लै लोनेहार ॥
गुल्शनमें जाके मग्ज मुअत्तर कर अपनेको ।
क्या क्या है हुस्न खूब खिले गुल हैं पुर कत्तार ॥
कह जाग बूम शूम से अब दूर भागजा ।
खूबोंकी खूबियां तेरी आखोंम लगते खार ॥
वह वक्त क्या मुबारक व सायत सईद है ।
खुद वक्त बख्श आशिको माशूक दर किनार ॥
साहब कबीर होवे मिह्रबां जिस ऊपर ।
बे मिहनत सो आजिज हो दरिया पार ॥ ४ ॥
तुम साहब रहमान हो अगली मिहर मत छोडिये ।
दया धरमके खान हो अगली मिहर मत छोडिये ॥
हम तो हैं दायम पुर खता इल्मो अमल कीजे अता ।
दुनियां व दीन सुल्तान हो अगली मिहर मत छोडिये॥
हम इल्मो अक्लमें हेच हैं जम कालके दर पेच हैं ।
तुम जल्लेआलीशानहो अगली मिहर मत छोडिये ॥

जान बख्श मुर्दा लाशका पर्दः ढकें कल्लाशका ।
तुम आलमीं खाकान हो अगली मिहर मत छोडिये ॥
नाचार आजिज जिऊ हम सामाँ नहीं कोई बहम ।
तुम साहबे सामान हो अगली मिहर मत छोडिये ॥५॥
दुशमन दिले शहजोर है छलबल भरा सो चोर है ।
निस दिन भरोसा तोर है सद शुक्र बन्दीछोरका ॥
जब गिरियः और जारी हुई जम जातना भारी हुई ।
तब आपकी यारी हुई सदा शुक्र बन्दीछोरका ॥
दारा सिकन्दर कुट गये सूफी कलन्दर लुट गये ।
कोई हंस तुझसे जुटगये सद शुक्र बन्दीछोरका ॥
दरियाय दिलकी लहरमें सब बहगये इस बहरमें ।
पहुँचे कोई तेरे शहरमें सद शुक्र बन्दीछोरका ॥
जिस्क यह तीनों भौन है उस्से बचे कह कवनहै ।
तूही सकल दुख दवन है सद शुक्र बन्दीछोरका ॥
जग जीवको मारा झुला जाहिद व आबिद सब भुला ।
अब मुक्तिका द्वारा खुला सद शुक्र बन्दीछोरका ॥
अगला न रिश्ताः तोडिये अपने कदमसे जोडिये ।
आजिजका हाथ न छोडिये सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ ६॥
सामा न सरे देखिये इस अहद हमारे ।
सब फितनः भरे देखिये इस अहद हमारे ॥
कोई न सुने पन्द न पहचान न देखे ।
अन्धे भरे देखिये इस अहद हमारे ॥
इल्म न अमल सब है अबस बादफरोशी ।
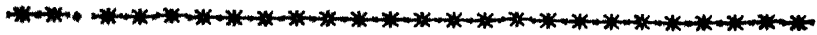
गोया घिरे देखिये इस अहद हमारे ॥
है कौन गुरु और कहां धर्म खुदा है ।
कोई न डरे देखिदे इस अहद हमारे ॥
नेकीसे भगे सारे है बेपार बदीका ।
जम सबको घेरे देखिये इस अहद हमारे ॥
इस अहदके आदमके अमल पर जो नजर कर ।
कोई न तरे देखिये इस अदद हमारे ।
आई जो खिजा बाद गुलिस्तां में सब गुल ।
पजमुर्दा पडे देखिये इस अहद हमारे ॥
जब आकर अब्र तेरी बारिशे बाराँ ।
सूखे लहर देखिये इस अहद हमारे ।
आजिजको बशारत हैं यह सतगुरुके शब्दसाख ।
सब खुश्क हरे देखिये इस अहद हमारे ॥ ७ ॥

मुखम्मस ।

जुज मिहर तुम्हारी कहीं आराम न होवे । इस दार फना नेक सरन्जाम न होवे ॥ तदबीर व तकदीरसे कुछ काम न होवे । जिस जायमें इकता वह गुलन्दाम न होवे ॥
दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे ॥ १ ॥

जब किशवरे हस्तीसे चलें हन्स अदमको । किस शान व शौकतसे लिये शब्द अलमको ॥ तब ब्रह्म बिचारा फिर जा चूम कदमको । बाजारमें आकरके जो पहचान सनमको ॥ फिर आशिके सौदा यह कभी खाम न होवे ॥
दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे ॥ २ ॥

बहदत है तुझे और नहीं कोई है सानी। सब ओर भ्रम लअवत इस देर दुखानी॥ गह खुश्क गहे सब्ज गहे सुबक गिरानी। बे बर्ग समर बाम चले बाद खिजानी॥
पुर खार वह गुलशन जहाँ गुलफाम न होवे॥
दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥३॥

गलतान सदहा बिसमिले नखर्चीरमें देखे। मुरगाँ ब कफ्स जेरके जंजीरमें देखे॥ जर्ब व जखम व कारी इस तीरमें देखे। तासीर अजब जालिमें रहगीरमें देखे॥
वह राह था मुझको जहाँ दाम न होवे॥
दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥४॥

ऐ मेरे खिजर हाथ पकड आन हमारा। जुज तेरे करम फजल नहीं हमको सहारा॥ है तेरी पनह आजिजे मिसकीं विचारा। दिन गुजर गया यों है न कुछ काम सिधारा॥ रुख अपना दिखा जल्दतर शाम न होवे॥
दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥५॥

अब्र नसियां करम तेरे असर है कि नहीं।
सदफे बहर तेरे कोई गोहर है कि नहीं॥
बागबां बाग में उल्फत का शजर है कि नहीं।
कोई नखले मुहब्बतमें समर है कि नहीं॥
मन मिसकी की तरफ तेरी नजर है कि नहीं॥१॥
ढूंढे मुल्क आदम और जिन्नो परी।
तुझ बिन नहीं चैन सद आफत भरी॥

शबे फ़ुरकत न कटी हाय कटी उम्र मेरी ।
बस्लकी रात की हयहात न तू बातकरी ॥
इस शबे हिजका आखिर को तो सेह है कि नहीं ॥ २ ॥
गौवास जो सद गोतः लगातेही मुआ ।
मुहरा हाथ लगा और न कुछ काम हुआ ॥
जब बहर करम लुत्फ तेरा मौजमें आया ।
बैठेही साहिल पर न सो नअम इनआम दिया ॥
दिल दरियामें तेरे कोई लहर है कि नहीं ॥ ३ ॥
ऐबख्त बख्खाव होवे बेदार कभी ।
मुझगहगारको हो यार की दीदार कभी ॥
ऐ परदःनशीं राज कर अफशार कभी ।
निगह नेक होवे सोई गिरफ्तार कभी ॥
इस बन्देपर अगली सी मिहर है कि नहीं ॥ ४ ॥
दरपेश सफर मुझको वफाकेश जता ।
शाफी मेरे हामी मेरे कर इल्म अता ॥
मुजारिम हूं तेरा गरक गुनहगार खता ।
ऐ चश्मए फैज व रहमत मुझको बता ॥
आजिज़का तेरी राहमें गुजर है कि नहीं ॥ ५ ॥

---

तरकीबबन्द ।

जबान मेरी बयान नुत्क असरदे । बदीद जाहिर व बातिन बसर दे ॥ न भूलूं एक पल तुझ रह तेरी याद । शबो रोज हर शामो सहरदे ॥ जो नेमत दो जहां सो सब खदफ है । खदफ कर दिल सदफ नाम गोहरदे ॥

न सर्दी दिन बदिन गर्मी तरक्की । मुहब्बत मुर्शिदे अब्दुल देहदे ॥ खुदीको भूलकर बाखुद हूं सरमस्त । शराबे इश्कका अपने खुमरदे ॥ न जाहिर जिलवः दिखलाता परीरू । उठाता इश्क आतश बोल परदे ॥ रुख खुर छिप रहा है अब कन्दर । खुश आँ वकतेके बुरकः दौरे दिहरदे ॥ न मुझसा और नालायक व नादार । तु सब लायक है खाली पूर करदे ॥ हमारे बद अमल पर मत नजर कर । सरन और नाम अपनेका अजरदे ॥ बहुत दिनका सगे दर हूँ मैं तेरा । न दुर दुर कर न दुर कर पेट भरदे ॥ न जाऊँ दर बदर इक दरे उम्मीद । बचाले जान और जिवदान बरदे ॥ मिहरकी बहर तू बेहद न पायान । मिहर कीजे मिहर कीजे अपनी लह-रदे ॥ सगे दरको फिरा हरगिज न दर दर । मिहर कीजे मिहर कीजे मिहरकर ॥ १ ॥

तुही कुनसे किया कूनों मकाँको । तुही बरपा किया सब जिस्म व जाँको ॥ तुही सतपुर्ष ज्ञानी नाम तेरा । तुही बतला दिया नामे निशाँको ॥ किया तुहीने मल्कुल मौत पैदा । तुही भेजा है मुरशिद मिहबांको ॥ कहरके वास्ते कर काल जब्बार । मिहर कर फिर किया अमनो अमाँको ॥ बनज्मे इस जहाँ निरगुन बनाना । किया पैदा हरी हर वेदख्वाँको ॥ किय मकबूल और मकरुह व मरदूद । तुही खूबी दिया जन्नत जनाँको ॥ तेरे सब

नाम हों आराम बख्शें । वले सब वस्फ सतनाम सुबहाँको ॥ तेरे औसाफ लायक न मलायक । है क्या इमकान इन्साँकी जबाँको ॥ न जाना भेद कुछ हम्दे सरायां । बयाँ किस तौर कीजे लाबयाँको ॥ तुही बेमिस्ल साहब सबका सरदार । तुही बख्शे अदू और दोस्ताँको ॥ अलख तूही है कोई लख न पाया । न जाने भेद तुझ राजे निहाँको॥तुही सब कुछ किया है सबमें मौजूद । तुही देता है हरकस हर जमाँको ॥ बहर खानो बहर शानो बहरशै । तुही था और तुही होगा तुही है ॥ २ ॥

हजारों पीर पैगाँबर बनाये । जुदा सब मजहबो मिल्लत चलाये॥नहीं वह नूर सद मामूर तारे । मिहर तुझ रुख मिहर दैजूर जाये ॥ नहीं लमअ सौसद शमअ शविस्तां । कि बरकत तेरी दिन मशअल जलाये ॥ शरीअत शाखकर सारी मुखालिफ । नजाते राह इन्साँकों बताये ॥ नबी पीराँ फकीराँ कैल फरजन्द । सभी औतार धर अल्लह जताये ॥ सभोंमें बरतरीं हैं राम और कृष्ण । निरंजन राय खुद धर देह आये ॥ जिते मजहब हैं इस आलममें जारी । न राहे रुस्तगारी कोई दिखाये॥नहीं मजहब सो सारे कालके जाल । किया मंसूख इक दूजा चलाये ॥ किया मुरगानें जेरक दर कफस बन्द । जो दानांकी तरपा दिलको झुकाये ॥ फँसे उसदाममें आराम जानाँ । जपे सब राम नहि सतनाम पाये ॥ पडीं सब गाय दरकाबू कसाई । जिधर जावें उधर छूरी उठाये ॥ किया

तब रहम तू मुर्शिद हकीकी । जो साहब था सो सत सुकृत कहाये ॥ करे सब जीवके दुख द्वन्द तू दूर । तेरा है नाम बन्दी छोर मशहूर ॥ ३ ॥

तेरे मस्तोंकी मस्तीको न जाना । हुआ मदहोश बे खुद और दीवाना ॥ अनलहक भी न पहुँचे अपने हकको । हुआथा यह अनलहकका बहाना ॥ कोई नागा कोई भागा बियाबाँ । कोई अन्दर जमीके जा छिपाना ॥ कोई गावे बजावे तान तोडे । नक्ल भांडोंकी सबने अक्ल ठाना ॥ हुए बेगानः सब अपने अमलसे । न पहचाने कोई अपना यगाना ॥ तेरे प्यालेसे इक कतरा जो पीया । लिया सो जान मुर्दोंका जिलाना ॥ नहीं भगवा तिलक कन्ठी न माला । निराला भेष धर तुझमें समाना ॥ हुआ जब अस्लसे वह वस्ल अपने । हुआ तब कतरये दरिया जमाना ॥ तेरी बेमिस्ल सागर मुश्कबूसे । रहे क्या अक्ल आदमके ठिगाना ॥ मुअत्तर मग्ज-उसबूसे हुआ जब । तो दानाईको खो बैठे हैं दाना ॥ हुए बेखुद खुदीको खोय बैठे । अब तक तीर पहुँचा बर निशाना ॥ किते पर पा किये परवाज बाला । जमींपर फिर फिर उनको है आना ॥ ४ ॥

पिला पुर प्याला कर ऐ मेरे साकी । रहेगा नाम बन्दी छोर बाकी ॥ यह चक्की चल रही गरदून गरदाँ । जो खायो पीसकर सब नेक मर्दां ॥ चले जाते हैं पीरोपीर दामाँ । हकीकत क्या यहाँ फरऊन धामाँ ॥ चर्ख चक्की है और सब

जीव दाना। मियांनें मेख मुर्शिद मिहरबानाँ॥ मियामे मेख मुर्शिदके कदमां लग अलग बच जायगा मतहो हिरासाँ॥ जिधर जावे उधर घर पीस डाले। जमीन और आसमां घर बन बियाबाँ॥ पिसे ब्रह्मा हरी हर कृष्ण राघो। पिसे नौनाथ और जाहिद बुजुरुगाँ॥बचे कोई न कर सदहा जो तदबीर। बचौपानी बनाया मेश गुरगां॥ किया कब्जेमें सबके जिस्म व जाँको। पड़ा पीछे कवी यह नफ्स शैतां॥ यह सब खिलकत खोरिश जमकी राजीनः। मलायक क्या परी और जिन्नोंइन्साँ॥ यह बैठा अक्कपर सबके दिल भूत। जिधर चाहे उधर करदे परीशाँ॥ जिधर यह भाग जावे आदमीजाद। चमकती सैफ हर जानिब नुमायां॥ वले दन्दान जेरीं कालके सब। यह मुश्किल तुझ सिवा होवे न आसाँ॥ वहां कैल मकाँ आजिज मुकीमाँ। तुही गफ्फूर और तुही रहीमाँ॥ ९॥

---

॥ तरजीआ बन्द॥

ऐके दर परदये शुक्र गुफ्तार। जल्द वह जलवः कीजिये इजहार॥ मुझे वह जाम भर पिला साक़ी। मस्त हूँ तेरे इश्कमें सरशार॥ हर तरफ लौलियान लह्लामा। इख्तलात इनका है अजाबुन्नार॥ जाहिदोंके जहदमें मिलादें खाक। आबिदोंके न दिलमें सब्रो करार॥ ओट तेरी बचाव चोट उनके। मै हूँ इन्तहा व दुश्मनाने बकन्नार॥ मंजिले दूर तोशए राह नहीं। मैं पियादा व वह

हमरहान सवार ॥ दस्तगीरी कर ऐ खुजिस्तः हकीर । दूईका परदःअज मियान बरदार ॥ मैं फकीर और मेरा गनीम गनी । न मुक़ाबिल हों मुफलिसो जरबार ॥

कोई बाकी रहे न सबमें शोर ।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥ १ ॥

जिस्की जुल्फोंको देखकर लाला ! दाग हसरतसे दिल हुआ काला ॥ सद गुलिस्ताँ निसार खाक कदम। बुलबुलें जिस लिये करें नाला ॥ दीद बरदीद है न दीद बदीद । माह पर आन कर पड़ा हाला ॥ तु ही खालिक हुआ तुही मखलूक। तुही पैदा किया तुही पाला ॥ जब उठा पांच तीनका झंडा । सारे नामो निशाँ मिटा डाला ॥ तुही जाहिर है और तुही बातिन । तुही जेरीन और तुही बाला ॥ कदम खाक तेरेकी बरकात। दुश्मने सद ब जेर पामाला ॥ सिर्फ तेरी मिहरसे यह जग जीव । बे गुमाँ लामकान ऊपर चाला ॥

कोई बाकी रहे न सरमें शोर ।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥ २ ॥

वे अदद आलमीन् परवर है । औलिया अम्बियाय सरवर है ॥ बन्दः मुजरिमका जुर्म करदे मुआफ । तू रहीमो करीम बरतर है ॥ जंग मैदानमेंहूँ पड़ा घायल न सनान सैफ ढाल बकतर है ॥ मन मजह का तू है जर्राह । दिले दिलगीरका तू दिलबरहै ॥ मने मिसकीन से अपना रुख मत फेर । मुझ ले जाय तेराहि दर है ॥

अब किधर जाऊं छोड दामन को । तेरी साये कदम मेरा घर है ॥ कर जफा या वफा तुझे सब जेब । मुझे मनजूर जो तेरी सिर है ॥ हैं हुमायूँ नसीब सो जिनके । मूनिसे महे मुदाम दरबर है ॥

कोई बाकी रहे न सरमे शोर ।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥ ३ ॥

देख उस रंग रूप रोगनको । तब लिया जान बाजीगर फनको ॥ अरर अफशाने दीदः हों ताजः । देख जब अपने रश्क गुल्शन को ॥ गममें गिरियां खबर न उरियानी । प्यार तिनको न रहे इस तनको ॥ दिल चपल चुलबुला हुआ साकिन । मार कर मुर्दा कर दिया मनको ॥ खसो खाशाकसे जब हुआ पाक । पार आबैठे मार आसनको ॥ तुझसा कादर व मुझसा बे मकदूर । संग पारस मिला जो आहनको ॥ यह गलत मसलए आह और कहो । जिनको पहनाव खास जौशनको ॥ जख्म सब भर ब इक नजर न हजर । पारचा पाट टाट सोजनको ॥

कोई बाकी रहे न सरमें शोर ।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥ ४ ॥

दे बसा आन गैबका घेरा । जल्द कर मेरे कूचेमें फेरा ॥ जाल खंजर न छोड बिस्मिलको । ऐ दिलाराम काम कर मेरा ॥ कारपरदाज तू गरीब निवाज । खानये दिल मेरे करो देरा ॥ रूय खुरशैदकी झलक झिलमिल । नूर

हों पूर दूर अंधेरा ॥ भागजा जहां पडें ब पा जंजीर। सब जवानिब है कालका घेरा ॥ ख्वाब गफलत्से कर कर दिया बेदार। बेहद्द अहसान बन्दःपर तेरा ॥ बिन तेरे कौन कब जग जीव। तूही साहब है और सब चितेरा ॥ हाथ धर कर जिसे उठाया तू। बेगुमाँ उस्का पारहो बेरा ॥

कोई बाकी रहे न सरमें शोर।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥ ५ ॥

बख्श तू दयाल मुझको किब्लेगाह। रोजो शब तूही तू है शाम पगाह ॥ कीजे मुहरम व दीजे अकल हिलाल। रख मेरा जामः पाक जेर निगाह ॥ होत गाफिल न तुझसे लमह कोई। बख्शदे मुझको मेरे शाहन्शाह ॥ यह दगाबाज दिल ये मुरदार। रख पनह खुद जे हीलये रोबाह ॥ ऐ मेरे जान ऐं मेरे जानाँ। मुन्तजिर जलवः तेरे दीदः बराह ॥ रूबरू तेरे हूँ मैं किस ढबसे। हूं पशेमाँ फेलनामा स्याह ॥ कोई बाकी रहा नही चारा। लैक दम सर्द तोबः नालः व आह ॥ रू रहाई रही न राह गुरेज। बन्दः नाचारः को है तेरी पनाह ॥

कोई बाकी रहें न सरमें शोर।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥ ६ ॥

इस जहाँ का न काम बाकी है। एक तेरा सत्य नाम बाकी है ॥ कुल फानी जो दीदः मनजरमें। सार शब्द पयाम बाकी है॥हक तेरेसे अदा न कोई ऐ हक। हक तेरा लाकलाम बाकी है ॥ सब चले जायँगे रहे
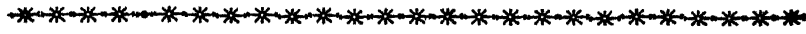
न कोई। इक तेराही कयाम बाकी है॥ देता है तू जो खास खासोंको। शरबते नोश जाम बाकी है॥ परदेसे पैरुवाँ का रहबर है। जलसए खासो आम बाकी है॥ तेरी हमदो सना रहै कायम। जब तलक सुबह व शाम बाकी है॥ होचुका जोर दूरका आजिज। अब तेरा यह तमाम बाकी है॥

कोई बाकी रहे न सरमें शोर।
कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर॥ ७॥

तरजिआ बन्द॥ २॥

न तुझ बिन कोइ सीधी राह पाया। भटकते मरगया घरको न आया॥ जो कुफरस्तानमें खुद खुद फँसाया। रहे पुरखार दौराँ ने दिखाया॥ पकड जमराजने उसको भुलाया। पडे मुरगाँ सब सय्यादके फंद॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द। खुदावन्दा खुदावन्दा खुदा-वन्द॥१॥ कभी तुझ बिन न जिवका कुफ्रटूटे। यह फिर फिर जाय कर उसहीसे जूटे॥ यह दानाईकी दौलत सारि लूटे। तमीज और अक्कु दानिश उसकी छूटे॥ हुआ सरमस्त इसमें फिर न फूटे। मिलाया बागबाँने उससे पैवन्द॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द। खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द॥ २॥ पकड कर हाथ अपनी रह दिखादे। सफीना सीनः पर नामा लिखादे॥ न भूलूं फिर सबक मुझको सिखादे। किताबें अक्कुकी ताकों रखादे॥ रहे बाकी न कोई सब उठादे। खयाले खाम अज दिल चन्द

दर चन्द ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द । खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द ॥३॥ बबजमें खुद परिस्तां कौन जावे वहां की ला खबर हमको सुनावे ॥ गया जो फिर कभी कोई न आवे । जो आवे सो खबर पिछली भुलावे ॥ न भूले तौ कभी इकता कहावे । मिहर तेरीसे पावें जीव आनन्द ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द । खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द ॥ ४ ॥ इस आसी बन्दःको अपने करमसे । बचाले पाँच और तीनों भरमसे ॥ गिरह दिल खोल कर महरम मरमसे । के रखलीजे पनह अपनी शरमसे ॥ अरज करता है आजिज दीदः नमसे । कदम बरकत तेरी हो फाल फरखुन्द ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द । खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द ॥५॥२१॥

छन्द ।

अब सन्त सुरति सम्हाल देखो कन्त निज पहचानिये ।
अगम अबिचल अलख लखि निहअन्त वाको जानिये ॥
लखि वार पार है सोई साहब ज्ञान आँख जो तानिये ।
देख दो तीर कबीर जहाँ तहाँ दूसरो नहिं मानिये ॥ १ ॥
अविगत अलेख भौ लेख नहिं सो एक बन्दी छोर है ।
नर देह वाते नेह काजे भयो अब निसि भोर है ॥
जो नाम ररत काल डरत है हरत सो जम जोर है ।
बड भाग अटल सुहाग उनको जिहि भरोसा तोर है ॥२॥
लोमस भुशुंडके झुंड ऋषिमुनि जासु गुन वर्णन करें ।
सनकादि नारद धनुक गुप्त सेवत चित्त चरणन धरे ॥

ऋषभ आदि योगेश्वर जनक नृप सत पद चरनन परे।
बहु सिद्ध सो ऋषि गरुड गोरख आय तुम शरणन तरे॥३॥
कोटिन पयम्बर पीर गये भव तीर नाम कबीरते।
केहि कहत बनत अगनित ऋषि भये अमर सत शरीरते॥
धरमदासको प्रभु खास निजकर बिलग नीरो छीरते।
सत्तनाम मिल निज धाम दीनो काम एक पद थीरते॥४॥
विष बेलि फल संसार है यह झार विष जेहि तेहि भरा।
बिष अण्ड पिण्ड समस्त है विष वारिमय भव सागरा॥
बिलगाय विषते कौन ऐसो भवन तीनमें नागरा।
करि कोटि यतन न ज्ञान रतन है मिटे किमि यह झागरा ५॥
जहाँ काम क्रोध और लोभ मोहते सकल पूरण पावई।
सब रोम रोममें विष भरा है अमृत नाहिं समावई॥
जग विषम आग है लागि तुम बिनु ताहि कौन बुझावई।
जीव कठिन काल कराल बशते बन्दीछोर छुडावई॥६॥
स्तुति करैं और आरति सब हंस मिलि सत लोकमें।
सतपुरुष आय बचाय खुद जीव जरत यमकी झोकमें॥
न पाय कोइ उपाय साहब धाय धर जीव शोकमें।
अरुझा सबहिं सरुझा न कोई जीव लोक वेद अथोकमें॥७
सत्तलोक हंस विलोक आनन्द बजत अनहद तूर है।
प्रभु आरति अरु स्तुति करत सब सहज और अंकूर है॥
इच्छा सोहं अचिन्त अक्षर शिरधरे पद धूर है।
यक रोम जासु प्रकाश ऐसो कोटि चन्दा सूर है॥ ८॥

यह तीन लोक सशोक देखिये आय आनन्द कन्द है ।
दशदिशि पसर यम जाल है सब जीव फन्द तेहि फन्द है।
गुरु वैद्य साँचा वेदवाचा हर लियो दुख द्वन्द है ।
भव भीर हरण कबीर दासन दास परमानन्द है ९ ॥

कवित्त ।

पावन पतित जीव दीननके हितु प्रभु, तूही गुरु पुरुष कहायो धूं और है। कहत कबीर धर्म धरत न धीर, करे अचल शरीर न लगत हीम जोर है ॥ पशु पंछी तारत है निगम पुकारत है, आरतको देखिके निहार रिग कोर है ॥ पीरो पयम्बर हैं धीर जो दिगम्बर हैं, वेद वेद बानीहू विरद बन्दीछोर है ॥ १ ॥ तजत न बानी सुर मुनिन बखानी प्रभु, शरणमें आनी जो करत निहोर है । तीन लोक ढूँढ जाये दूखरे कहूँ न पाये, लगसो चरण दुख हरण जो शोर है ॥ नहीं शुभ करनी है बहु दुख भरनी है, उस गुरु शरणी है कलि काल घोर है । अधम उधारनको जगत सुधारनको, भक्ति मुक्ति धारण कबीर बंदी छोर है॥२॥बूडे बड ज्ञानी सिद्ध साधक जो ध्यानी, बिन नाम सहिदानी जिन्हे आशा न तोर है । बलबीज चूसत है सिद्ध साधु दूषत है, निशि दिन मूसत है अन चीन्ह चोर हैं ॥ जीवको है ठौर नहीं सुरमुनि दौर नहीं, परमानन्द पौर नहीं पाव न जो दौड है । बन्दी छोर बन्दी छोर बन्दी छोर एक भजु, साहब कबीर टेक सोई बन्दी छोर है ॥ ३ ॥

## सद्गुरुकी महिमा।

गुरुको कीजै दण्डवत, कोटि कोटि प्रणाम।
कीट न जानै भृंगको, वह (गुरु) करले आपसमान ॥१॥
जगत जनायो जिहिं सकल, सो गुरु प्रगटे आय।
जिन गुरु आँखिन देखिया, सो गुरु दिया लखाय ॥ २ ॥
भली भई जो गुरु मिला, नातर होती हानि।
दीपक ज्योति पतंग ज्यों, पडत्यो पूरा जानि ॥ ३ ॥
भली भई जो गुरु मिला, जासो पाया ज्ञान।
घटहिं माहि चबूतरा, घटही माहिं दिवान ॥ ४ ॥
कबीर गुरु गरुआ मिला, रुल गया आटै लौन।
जाति पांति कुल मिट गया, नाम धरेगा कौन ॥ ५ ॥
ज्ञान प्रकाशी गुरु मिला, सो जन बिसरि ना जाय।
जब गोविन्द कृपा करी, तब गुरु मिलिया आय ॥ ६ ॥
गुरु गोविन्द कर जानिये, रहिये शब्द समाय।
मिलै तो दण्डवत बन्दगी, पल २ ध्यान लगाय ॥ ७ ॥
गुरु गोविन्द तो एक हैं, दूजा सब आकार।
आपा मेटै हरि भजै, तब पावै करतार ॥ ८ ॥
गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागौं पाय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय ॥ ९ ॥
बलिहारी गुरु आपने, घड़ि घड़ि सौ सौ बार।
मानुषसे देवता किया, करत न लागी बार ॥ १० ॥
बूड़ा था पर ऊबरा, गुरुकी लहरि चमक।
बेरा देखा झांझरा, उतरि भया फरक ॥ ११ ॥

पहिले दाता शिष्य भये, तन मन अरप्यो शीश ।
पाछे दाता गुरु भये, नाम दियो बखशीश ॥ १२ ॥
राम नामके पटतरे, देवे को कछु नाहिं ।
क्या लै गुरु सँतोषिये, हवस रही मनमाहिं ॥ १३ ॥
निज मन तो नीचा किया, चरण कमलकी ठौर ।
कहैं कवीर गुरु देव बिन, नजर न आवे और ॥ १४ ॥
मन दिया तिन सब दिया, मनके लार शरीर ।
अब देवेको कछु नहीं, यों कथि कहे कवीर ॥ १५ ॥
तन मन दिया तो भल किया शिरका जासी भार ।
कबहूँ कहै कि मैं दिया, घनी सहैगा मार ॥ १६ ॥
गुरु सिकलीगर कीजिये, मनहिं मस्कला देइ ।
मनका मैल छुडाइके, चित दर्पण करि लेइ ॥ १७ ॥
गुरु धोबी शिष कापडा, साबुन सिरजन हार ।
सुरति शिला पर धोइये, निकसै ज्योति अपार ॥ १८ ॥
गुरु कुलाल शिष्य कुम्भ हैं, गढ गढ काढै खोट ।
अन्तर हाथ सहार दै, बाहर बाहे चोट ॥ १९ ॥
ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति विश्वास ।
गुरु सेवा ते पाइये, सतगुरु चरण निवास ॥ २० ॥
गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अन्ध ।
यहां दुखी संसारमें, आगे यमके बन्ध ॥ २१ ॥
गुरुको मानुष जानते, चरणामृत सो पानि ।
ते नर नरके जायँगे, जन्म जन्म ह्वै श्वानि ॥ २२ ॥

कविरा ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर ॥ २३ ॥
गुरु हैं बडे गोविन्द ते, मनमें देखु विचार।
हरि सुमरै सो वार है, गुरु सुमरै सो पार ॥ २४ ॥
गुरु सीढी ते ऊतरै, शब्द बिहूना होय।
ताको काल घसीटि हैं, राखि सकै नहिं कोय ॥ २५ ॥
अहम अग्नि दिशि दिन जरै, गुरु सो चाहै मान।
ताको यम नेवता दियो, होहु हमार मेहमान ॥ २६ ॥
गुरु[1] पारस गुरु परस है, चन्दन बास सुबास।
सतगुरु पारस जीवको, दीना मुक्ति निवास ॥ २७ ॥
गुरु सो भेद जो लीजिये, शीश दीजिये दान।
बहुतक भोंदू बहि गये, राखि जीव अभिमान ॥ २८ ॥
गुरु समान दाता नहीं, जाचक शिष्य समान।
तीन लोककी सम्पदा, सो गुरु दीना दान ॥ २९ ॥
गुरू बतावै साधुको, साधु कहै गुरु पूज।
अरस परसके खेलमें, भई अगमकी सूज ॥ ३० ॥
यम गरजे बल बाघके, कहै कबीर पुकार।
गुरू कृपा ना होत जो, तौ यम खाता फार ॥ ३१ ॥
अवर्ण वरण अमूर्ति जो, कहौ ताहि किन पेख।
गुरू दयाते पावई, सुरति निरति करि देख ॥ ३२ ॥

---

१ पारसमें अरु गुरूमें, बडो अंतरो जान।
वह लोहा कंचन करै, यह करे आपु समान।

यह धन जो गुरुकी अहै, भाग बडे जिन पाय।
कह कबीर टोटा नहीं, जब परे तबहि लखाय ॥ ३३ ॥
कह कबीर दरगाह सो, जेहि उतरी है भार।
सोइ करै गुरुआइया, झकि २ मरे गँवार ॥ ३४ ॥
पंडित पढि गुनि पचि मुये, गुरू बिन मिलै न ज्ञान।
ज्ञान बिना नहि मुक्ति है, सत्य शब्द प्रमान ॥ ३५ ॥
मूल ध्यान गुरु रूप है, मूल पूजा गुरु पाव।
मूलनाम गुरु बचन है, सत्य मूल सत भाव ॥ ३६ ॥
नाम सजीवन देत गुरु, करिके दाया जाहि।
गुरु गोविंद बताव जिहि, मिलत गोविंद ताहि ॥३७॥
गुरू गुरू में भेद है, गुरू गुरू में भाव।
गुरू सदा सो बन्दिये, शब्द बतावे दाव ॥ ३८ ॥
कहै कबीर तजि भ्रमको, नान्हा कारिके पीव।
तजि अहं गुरु चरण गहू, यमसो बांचे जीव ॥ ३९ ॥
कनफुक्का गुरु देहका, बेहदका गुरु और।
बेहदका गुरु जब मिलै, लहै ठिकाना ठौर ॥४०॥
तीन लोक नौ खण्डमें, गुरु ते बडा न कोय।
करता करै न कारि सकै, गुरू करै सो होय ॥ ४१ ॥

गुरु शिष्य पारखका अंग ॥

गुरु मिला ना शिष्य मिला, दोऊ खेलैं दाव।
दोऊ बूडै बापुरे, चढि पाथरके नाव ॥ ४२ ॥
जाका गुरु है आंधरा, चेला निपट निरन्ध।
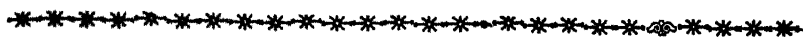
अन्धे अन्धा ठेलिया, दोऊ कूप परन्ध ॥ ४३ ॥
काका गुरु है आंधरा, चेला खरा निरंध।
अन्धेको अन्धा मिला, परे कालके बन्ध ॥ ४४ ॥
जानंता पूछी नहीं, पूछि किया नहिं गौन।
अन्धेको अंधा मिला, राह बतावे कौन ॥ ४५ ॥
माई मूडौ तेहि गुरुकी, जाते भ्रम ना जाय।
आप बूडा मझधारमें, चेला दिया बहाय ॥ ४६ ॥
पूरा कबीर गुरु बिना, पूरा शिष्य न होय।
गुरु लोभी शिष्य लालची, दूनी दाझन होय ॥ ४७ ॥
पूरा सतगुर ना मिला, रहा अधूरा सीख (शिष्य)।
स्वांग यतीका पहिरके, घर घर मांगै भीख ॥ ४८ ॥
पूरा सहजे गुण करै, गुण नहिं आवै छेह।
सायर पोषै सर भरै, डांड न मांगै मेह ॥ ४९ ॥
गुरू किया है देहका, सतगुरु चीन्हा नाहिं।
भवसागरके जालमें, फिरि फिरि गोता खाँहि ॥ ५० ॥
गुरुवाते भय ना मिटै, भ्रान्ति न जिवका जाय।
गुरु तो ऐसा चाहिये, देवे ब्रह्म बताय ॥ ५१ ॥
कबीर जानंता बूझा नहीं, पैंडा दिया बताय।
चलते चलते तहँ गया, जहां निरंजन राय ॥ ५२ ॥
बंधेको बंधा मिलै, छुटै कौन उपाय।
कर सेवा निर्बंधकी, पलमें लेत छुडाय ॥ ५३ ॥

---

१ आप बूडा चहुवेदमें, चेले दिया बहाय।

गुरु सिकलीगर कीजिये, मनहि मसकला देइ।
मनके मैल छुडाइके, चित्त दर्पण करिलेइ ॥ ५४ ॥
झूठे गुरुके पक्षको, तजत न कीजै बार।
राह न पावै शब्दका, भटकै द्वारहिं द्वार ॥ ५५ ॥
जाका गुरु गेही अहै, चेला गेही होय।
कीच कीचके धोवते, दाग न छूटै कोय ॥ ५६ ॥
गुरू नाम है ज्ञानका, शिष्य सीख ले सोइ।
ज्ञान मर्याद जानै बिना, गुरू शिष्य ना कोइ ॥ ५७ ॥
सिख तो ऐसा चाहिये, गुरुको सब कछु देइ।
गुरु तो ऐसा चाहिये, शिखसे कछू न लेइ ॥ ५८ ॥
गुरु पूरा शिष्य सूरा, बाग मोर रन पैठ।
सत सुकृतको चीन्हके, एक तख्त चढि बैठ ॥ ५९ ॥

॥ सतगुरुका अंग ॥

सतगुरु समान को सगा, साधु समान को दात।
हरि समान को हीतु है, हरिजन समको जात ॥ ६० ॥
सतगुरुको महिमा अनंत, अनंत किया उपकार।
लोचन अनन्त उघारिया, अनन्त दिखावन हार ॥ ६१ ॥
सब जग भर्मा यों फिरै, ज्यों रामाका रोज।
सतगुरु सो सुधि भयी, पाया हरिका खोज ॥ ६२ ॥
थापन पाई थिति भई, सतगुरु दीना धीर।
हीरा कबीर बनीजिया, मान सरोवर तीर ॥ ६३ ॥
थिति पाय मन थिर भया, सतगुरु कीन्ह सहाय।
और कथा मन ना रुचै, हिरदय रमिता राय ॥ ६४ ॥

चैतन चौकी बैठि करि, सतगुरु दीनी धीर।
निर्भय ह्वै निःशंक भजु, केवल कहैं कवीर ॥ ६५ ॥
बहे बहाये जात थे, लोक वेदके साथ।
पैडामें सतगुरु मिले, दीपक दीन्हा हाथ ॥ ६६ ॥
दीपक दीन्हा तेल भरी, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहिना, बहुरि न आवै हट्ट ॥ ६७ ॥
चौपड माडी चौहटे, सारी किया शरीर।
सतगुरु दाव बताइया, खेलैं दास कवीर ॥ ६८ ॥
सतगुरु हमसूं रीझिके, एक कहा परसंग।
बरषा बादल प्रेमका, भीजि गया सब अंग ॥ ६९ ॥
सतगुरुके उपदेशका, सुनिया एक बिचार।
जो सतगुरु मिलता नहीं, जाता यमके द्वार ॥ ७० ॥
यमद्वारे पर दूत सब, करते खींचा तानि।
तिनते कबहुं न छूटता, फिरता चारों खानि ॥ ७१ ॥
चारों खानिमें भ्रमता, कबहुं न लहता पार।
सो तो फेरा मिटिगया, सतगुरुका उपकार ॥ ७२ ॥
सतगुरुके सिद्के किया; दिल अपना कै सांच।
कलियुग मोसे लडि पडा, मोहकिम मेरा बांच ॥ ७३ ॥
सतगुरु सांचा सूरमा, शब्द जो बाहा एक।
लागतही भय मिटि गया, पडा कलेजे छेक ॥ ७४ ॥
सतगुरु शब्दकाबाण ले, बाहन लागा तीर।
एक जो बाहा प्रेम सूं, भीतर विधा शरीर ॥ ७५ ॥

सतगुरु बाहा बाण भरी, धरकर सूधी मूठ ।
अंग उघाडे लागिया, गया धुवासूँ फूठ ॥ ७६ ॥
सतगुरु मारा बाण भरि, डोला नहीं शरीर ।
कहु चुम्बक का करि सकै, सुख लागे वहि तीर ॥७७॥
लागी गांसी सुख भया, मरै न जीवै कोय ।
कह कविरसो अमर भये, जीवत मृतक होय ॥ ७८ ॥
हंसि बोलै ना उन मुनी, चंचल मेला मार ।
कह कवीर अंतर विधौ, सतगुरुका हथियार ॥ ७९ ॥
गूंगा हूआ बावरा, बहिरा हूआ कान ।
पांयनसे पंगुला हुआ, सतगुरु मारा बान ॥ ८० ॥
सतगुरु मेरा शूरमा; भेदा सकल शरीर ।
बाण दुवासूं फूटिया, जीवै दास कवीर ॥ ८१ ॥
सतगुरु सांचा शूरमा, नख शिख मारा पूर ।
बाहर घाव न दीसई, भीतर चकना चूर ॥ ८२ ॥
सतगुरु मारा बाण भरि, टूटि गया सब जेब ।
कहुं आदा कहुं आपदा, तसबीः कहूं कितेब ॥ ८३ ॥
सतगुरु मारा बाण भरि, शब्द सुरंगी बान ।
मेरा मारा फिर जिवै, हाथ न धरूं कमान ॥ ८४ ॥
सतगुरु मारा बाण भरि; निरखि निरखि निज ठौर ।
राम अलखमें रमि रहा; चित्त न आवै और ॥ ८५ ॥
सतगुरु मारा प्रेमसूं, रही कटारी टूट ।
जैसी अनी न सालई; तैसी सालै मूट ॥ ८६ ॥

मान बडाई ऊरमी, यह जगका व्यवहार।
दास गरीबी वन्दगी, सतगुरुका उपकार ॥ ८७ ॥
दिलहीमें दीदार है, बाद वहै संसार।
सतगुरु शब्दका मसकला, मुझै दिखावनहार ॥ ८८ ॥
दीसै सो सब विनशिहैं; नाम धरे सो जाय।
कहै कवीर सोइ सत्य है; सतगुरु दिया बताय ॥ ८९ ॥
कुदरत पाई खवर सों, सतगुर दिया बताय।
भवँर बिलम्बे कमलसे, अब कैसे उडिजाय ॥ ९० ॥
राम नाम छाडूं नहीं, सतगुरु सीख दिया।
अविनाशीको परसिके, आतम अमर भया ॥ ९१ ॥
चौसठ दीवा जोयके, चौदह चन्दा मांहि।
तेहि घर कैसा चांदना, जेहि घर सतगुरु नाहिं ॥ ९२ ॥
चित चोखा मन मसकला, बुधि उत्तम मति धीर।
सो धोखा ना विरचई, सतगुर मिलै कवीर ॥ ९३ ॥
कोटिक चन्दा ऊगवे, सूरज कोटि हजार।
सतगुरु मेला बाहिरे, दीसत घोर अँधार ॥ ९४ ॥
सतगुरु मोहिं निवाजिया, दीना अम्मर बोल।
शीतल छाया सुगम फल, हंसा करै कलोल ॥ ९५ ॥
सतगुरु सत्य कबीर है, संकट परा हजीर।
हाथ जोड़ विनती करूं, भवसागरके तीर ॥ ९६ ॥
चित्त चोखा दिल निर्मला, दयावन्त गंभीर।

१ कवीर सोइ तत्व गहो, सतगुरु दियो चेताय।

सो धोखा विच क्यों रहै, सतगुरु मिलै कबीर ॥ ९७ ॥
ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति विश्वास ।
सतगुरु मिलि एकै भया, रही न दूजी आस ॥ ९८ ॥
सतगुरु पारसके शिला, देखो सोच बिचार ।
आई पडोसिन लै चली, दियो दिया सँवार ॥ ९९ ॥
जीव अधम अति कुटिल है, कहूं नहीं पतिआय ।
ताका औगुन मेटिके, सतगुरु होत सहाय ॥ १०० ॥
सतगुरु बडा सराफ है, परखै खरा अरु खोट ।
भवसागर ते निकारिकै, राखै अपनी ओट ॥ १०१ ॥
सतगुरु शब्द जहाज है, कोइ कोइ पावै भेद ।
बुन्द समुद्र एकै भया, किसका करूं निषेद ॥ १०२ ॥
सतगुरु महल बनाइया, ज्ञान गिलावा दीन ।
दूर दिखावन कारने, शब्द झरोखा कीन ॥ १०३ ॥
सतगुरु शब्द उलंघिके, जो कोई शिष जाय ।
जहां जाय तहं काल है, कहैं कबीर समझाय ॥ १०४ ॥
सतगुरु बड़े जहाज है, जो कोइ बैठे आय ।
पार उतारें और को, आपनो पारस लाय ॥ १०५ ॥
विन सतगुरु बांचे नहीं, फिर बूडे भव मांहि ।
भव सागर के त्रासमें, सतगुरु पकडे बांहि ॥ १०६ ॥
सतगुरु मिला तो क्या भया, जो मन पाडी भोल ।
पास कपड ढाके नहीं, क्या करे वपुरी चोल ॥ १०७ ॥
सब जग मुआ विषधर धरे, कहै कबीर विचार ।
जो सतगुरुको पाइया, सो जन उतरे पार ॥ १०८ ॥

बिनु सतगुरु उपदेश, सुर नर मुनि नहिं निस्तरे।
ब्रह्मा विष्णु महेश, और सकल जिव को गने ॥१०९॥
कोटिन पढि गुनि पचि मुआ, योग यज्ञ तप लाय।
विनु सतगुरु पावे नहीं, कोटिन करै उपाय ॥ ११० ॥
करहु छोड कुल लाज, जो सतगुरु उपदेश है।
होय तबै जिव काज, निश्चय के प्रतीति कर ॥१११॥
अक्षर आदि जगतमें, जाकर सब विस्तार।
सतगुरु दया सो पाइये, सतनाम निज सार ॥ ११२ ॥
सतगुरु खोजो सन्त, जीव काज जो चाहहू।
मेटो भवको अन्त, आवा गवन निवारहू ॥ ११३ ॥
विनवै दोउ कर जोर, सतगुरु बन्दी छोर है।
पावै नामकी डोर, जरा मरण भव काल मिटै ॥११४॥
सत नाम निज सोय, जो सतगुरु दाया करै।
और झूठ सब होय, काहेको भरमत फिरै ॥ ११५ ॥
सतगुरु शरन न आवई, फिरि २ होय अकाज।
जीव खोय सब जायँगे, काल तिहूँ पुर राज ॥ ११६ ॥
जो सतनाम समाय, सतगुरुकी परतीति करि।
यमको अमल मिटाय, हंस जाय सतलोक कहँ ॥११७॥
तत्व दर्शी जोइ होय, सो सतसार विचारई।
पावै तत्व बिलोय, सतगुरुका चेला सोई ॥ ११८ ॥
जग भौसागर माहिं, कहो कैसे बूडत तरे।
गहै नाम सतगुरु काहि, जो जल थल रक्षाकरे ॥११९॥

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

निज मत सतगुरु पास, जेहि पाय सब सुधि मिलै ।
जगते रहे उदास, ता कहँ क्यों नहिं खोजिये ॥ १२० ॥
यह सतगुरु उपदेश है, जो मानै परतीति ।
कर्म भर्म सब त्यागिके, चलै सो भव जल जीति १२१॥
सतगुरु तो सत भाव है, जो अस भेद बताय ।
धन्य शिष धन्य भाग तेहि, जो ऐसी सुधि पाय ॥१२२॥

अथ गुरुमुख लक्षण ।

गुरु मुख गुरु चितवत रहे, जैसे मणी भुवंग ।
कहें कवीर बिसरे नहीं, यह गुरु मुखको अंग ॥ १२३ ॥
गुरुमुख गुरु चितवत रहे, जैसे शाह दिवान ।

१ जगतमे दो भांतिके पुरुष होते हैं एक गुरु मुख, दूसरा मन मुख ॥ गुरु मुख वह है-जो अपने मनको सतगुरु सतपुरुषोंके आज्ञा रीति भांति चाल व्यवहारसे चलावे अर्थात् उनकी आज्ञा और रीति यद्यपि प्रत्यक्षमें दुखदाई भी हो परंतु उसके अंतफलको सुखदायक समझके जैसे हो सके वैसे मनको उनके अनुसार रक्खे ॥ इसमें कुछ सन्देह नहीं कि, सत्पुरुषोंके रीति उपदेश पर चलनेमें मन प्रथम कष्टको प्राप्त हो स्वेच्छाचारी बनना चाहेगा, परन्तु बलकरके मनको स्वतंत्रासे रोक उसी तरफ लगावे फिरतो थोडेही अभ्याससे मन चंचलताको छोड उसीमें प्रवृत्त होकर पूर्ण गुरुमुखताको धारण करेगा ॥

गुरु मुख विना विचार नहिं करई ।
जो कछु करै तासे नहिं टरई ॥
मन मत दो प्रकार धरम, है गृही अरु साध ।
दोहुनको लाजिम है, गुरु मुख होहु अबाद ॥

परन्तु गुरु किसे कहते हैं, यह भी सुनो कि जो शिष्यके शंकाओंको निवृत्त कर उसको उत्तम मार्ग पर लगाताहो तथा भयानक रोचक झूठे बखेडोंमें फसाय केवल कानफूंक पूजा सालीनासे काम न रखता हो ॥
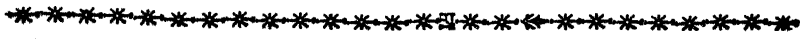
और कबीर नहिं देखता, है, वाहीको ध्यान ॥ १२४ ॥
गुरुमुख गुरु आज्ञासे, छोडि देइ सब काम।
कहै कबीर गुरुदेवको, तुरत करै परणाम ॥ १२५ ॥
उलटे सुलटे बचनको, शिष्य न मानै दुःख।
कहैं कबीर संसारमें, सो कहिय गुरुमुख ॥ १२६ ॥

अथ मनमुखका[1] लक्षण।

सेवक मुखहि कहावे, सेवामें दृढ नाहि।
कहै कबीर सो सेवका; लख चौरासी मांहि ॥ १२७ ॥
फल कारण सेवा करे, निसदिन जांचे राम।
कहै कबीर सेवक नहीं, चाहै चौगुन दाम ॥ १२८ ॥
सेवक स्वामी एक मत, जो मतिसे मति मिलजाय।
चतुराई रीझे नहीं, रीझे मनके भाय ॥ १२९ ॥
सतगुरु शब्द उलंघिके, जो कोइ शिष जाय।

---

१ मनमुख उसे कहते है कि, जो सतगुरु और महात्मा सत्पुरुषोंकी बात कान न धर केवल मनके कहनेपर चलता है और सतुगुरुकी कृपासे विवेक उसे उन कर्मोंसे रोकता है तौ भी उस पर ध्यान न देकर मन्द कर्मोंमें प्रवृत्त होही जाता है। मन्द भोगोंमें प्रवृत्त रहनेवालोंको यदि वे भोग पहले कुछ कालतक अमृतके समान जान पडते हैं परन्तु पीछेसे वही अमृत विषरूप हो बिकराल दुःखरूपी राक्षसके स्वरूपको धारण कर पूर्ण नर्कका अनुभव कराते हैं और मन मुख पुरुष इन दुःखोंको देखता या अनुभव करता हुआ भी अपने मनके वश हुआ बारम्बार विषयासक्तिको प्राप्त होता हैं मनमुख पुरुषको कुछ लज्जा, भय आदिक भी नहीं होते, कभी त्यागी, कभी गृही, कभी चोर, कभी साधु, कभी यति, कभी व्यभिचारी अनेक स्वांगोंको धारण करता और अपनेको बडा बुद्धिमान्, न्यायी, धीर, साधु आदि विशेषणोंसे सम्पन्न जान अहंकारमें डबा रहकर दूसरोंकी निन्दा असूया कियाकरता है.

जहाँ जाय तहँ काल है, कहैं कबीर समझाय ॥१२०॥
गुरु सो करे कपट चतुराई। सो हंसा भव भरमे आई।
जो जन गुरुकी निन्दा करई। शूकर स्वान गर्भमें परई १२१

अथ निगुराका लक्षण।

नर निगुराके तीन गुण, भोपा भरडा भांड।
गत राडाकी सेजमें, कहाँ पलापै राँड ॥ १२२ ॥
गुरु बिन माला फेरता, गुरु बिनु करता दान।
गुरु बिन सब निष्फल गया, बूझो वेद पुराण ॥ १२३॥
जो निगुरा सुमरन करै, दिनमें सौ सौ बार।
नगर नायका सत करै, जरै कौनकी लार ॥ १२४ ॥
गर्भ योगीश्वर गुरु बिना, लागा हरिके सेव।
कहै कबीर बैकुण्ठसे, फेर दिया शुकदेव ॥ १२५ ॥
जनक बिदेही गुरु किया, लागा हरिके सेव।
कहै कबीर बैकुण्ठमें, उलटि मिला शुकदेव ॥ १२६ ॥
पूराको पूरा मिलै, पूरा पडै सो दाव।
निगुरा तो उम्भर चलै; जब तब चलै कुदाव ॥ १२७॥
जो कामिनि परदे रहै, सुनै न गुरु मुख बात।
होय जगतमें कूकरी, फिरै उंघारे गात ॥ १२८ ॥

अथ विनती ( प्रार्थना )

विनवत हौं करजोरिके, सुनियो कृपा निधान।
साधु सँगति सुख दीजियो, दया गरीबी दान ॥१२९॥
अबकी जो सतगुरु मिलै, सब दुख आँसू रोय।

चरणों ऊपर सर धरूं, कहूं जो कहना होय ॥ १४० ॥
सुरति कर मोर साँइयाँ, हम हैं भवजल मांहि ।
आपेही बहि जायँगे, जो नहिं पकडो बाँहि ॥१४१॥
क्या मुख लै विनती करूँ, लाज आवत है मोहिं ।
तुम देखत औगुन किये, कैसे भाऊँ तोहिं ॥१४२॥
सतगुरु तोहि बिसारिके, किसके शरणे जाँय ।
शिव विरंचि मुनि नारदा, हृदय नाहिं समाय ॥१४३॥
मैं अपराधी जनमका, नखशिख भरा विकार ।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो उबार ॥१४४॥
अवगुण मेरे बापजी, बखशो गरीब निवाज ।
जो हौं पूत कपूत हौं, तऊ पिताको लाज ॥ १४५ ॥
अवगुण किये तो बहु किये, करत न मानी हार ।
भावे बंदा बख्शिये, भावे गर्दन मार ॥ १४६ ॥
कबिरा भूल बिगाडियाँ, करि २ मैला चित्त ।
साहेब गरुआ चाहिये, नफर बिगाडे नित्त ॥१४७॥
साईं तेरे बहुत गुण, अवगुण कोई नाहिं ।
जो दिल खोजूं आपना, सब अवगुण मोहि माहिं ॥१४८॥
साहेब तुम जनि बीसरो, लाख लोग लगि जांहि ।
हमसे तुमरे बहुत हैं, तुम सम हमरे नांहि ॥१४९॥
अवसर बीता अल्प तन, पीव रहा परदेश ।
कलंक उतारो रामजी, भानो भरम सँदेश ॥१५०॥
कर जोडे बिनती करूं, भवसागर आपार ।

बन्दा ऊपर मिहर करी, आवा गमन निवार ॥१५१॥
अन्तर्यामी एक तू, आतमके आधार।
जो तुम छोडो साथको, कौन उतारे पार ॥ १५२॥
भव सागर भारा महा, गहिरा अगम अगाह।
तुम दयाल दाया करो, तब पाऊँ कछु थाह ॥१५३॥
साहेब तुम्ही दयाल हौ, तुम लग मेरी दौर।
जैसे काग जहाजको, सूझै और न ठौर ॥ १५४ ॥
साईं तेरा कुछ नहीं, मेरा होय अकाज।
बिरद तुम्हारे लाजकी, शरण परेकी लाज ॥ १५५ ॥
मेरा मन जो तोहि से, यों जो तेरा होय।
अहिरण ताता लोह ज्यों, संधि लखै नहिं कोय ॥१५६॥
मेरा मन जो तुझसे, तेरा मन कहिं और।
कह कवीर कैसे निभै, एक चित्त दुइ ठौर ॥ १५७ ॥
मुझ अवगुण तुझ गुण घणा, तुझ गुण अवगुण मुझ्झ।
जो मैं बिसरूं तुझ्झको, तू नहिं बिसरो तुझ्झ ॥१५८॥
तुझ बिसाग सरै नहीं, किस के शरणें जांहि।
शिव विरंचि मुनि नारदा, सो न हिरदय समाहि॥१५९॥
मैं अपराधी जनमका, नख शिख भरा विकार।
दया करो तुम राम जी, तो मैं उतरूँ पार ॥ १६० ॥
साईं मेरा सावधान है, मैही भया अचेत।
मन बच कर्म न हरि भजा, ताते निष्फल हेत ॥ १६१ ॥
मन प्रतीति ना प्रेम रस, ना कोइ तनमें ढंग।

ना जानूँ उस पीवसे, क्योंकर रहसी रंग ॥ १६२ ॥
जिनको साईं रँग दिया, कबहुँ न होय कुरंग ।
दिन दिन बाणीं आगरी, चढै सवाया रंग ॥ १६३ ॥
साईं जो मुझको मिलैं, पूछैंगे कुशलात ।
आदि अन्त की सब कहूं, उर अन्तर की बात ॥ १६४॥
कविरा तू तो गारुआ, हलकी अपनी चाल ।
रंग कुरंगी रंगिया, किया और लगवार ॥ १६५ ॥

अथ स्मरणका लक्षण और माहात्म्य ।

सुमिरण मारग सहजका, सतगुरु दिया बताय ।
साँस उस्वाँस संभालता, यक दिन मिलसी आय ॥१६६॥
माला स्वाँस उस्वाँस को, फेरैं कोइ निजदास ।
चौरासी भरमें नहीं, कटे कर्म की फांस ॥ १६७ ॥
मन माला तन मेखला, भव की करी बभूत ।
राम मिला सब देखता, सो योगी अवधूत ॥ १६८ ॥
अजपा सुमिरण घट विषै, दीना सिरजन हार ।
रण रोही संग्राम में, रहगई मारा मार ॥ १६९ ॥
बाहर क्या दिखलाइये, अन्तर जपिये राम ।
कैसा मोहिला खल्क सूं, सरै धनी को काम ॥ १७० ॥
सतगुरु का सारा नहीं, शब्द न लागा अंग ।
कोरा रहिगौ सीदड़ा, सदा तेलके संग ॥ १७१ ॥
कविरा माला काठकी, बहुत जतनका फेरु ।
माला फेरो स्वाँसकी, जामें गाँठ न मेरु ॥ १७२ ॥
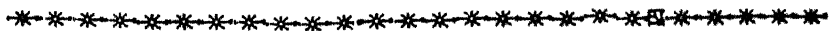
स्वासा सुमिरण होत है, ताहि न लागै बार ।
पल पल बन्दगी साधना, देखो दृष्टि पसार ॥ १७३ ॥
ओठ कण्ठ हालै नहीं, जिह्वा नहीं उचार ।
गुप्त वस्तुको जो लखै, सोई हंस हमार ॥ १७४ ॥
शून्य मंडलमें घर किया, बाजा शब्द रसाल ।
रोम रोम दीपक भया, प्रकटे दीन दयाल ॥ १७५ ॥
तूतू करता तू भया, मुझमें रही न हूं ।
बारी तेरे नामकी, जित देखूं तित तूं ॥ १७६ ॥
तूतू करता तू मिला, तुझमें रहा समाय ।
तुझही माहीं मिलि रहा, अब मन अन्त न जाय १७७॥
पाँच सखी पिव पिव करे, छट्ठा सुमरे मन्न ।
आई सुरति कबीरकी, पाया नाम रतन्न ॥ १७८ ॥
चिंता तो यक नामकी, और न चितवै दास ।
जो कुछ चितवै नाम विनु, सोई कालकी फांस ॥१७९॥
पहिले बुरा कमायके, बांधा विषको पोट ।
कोटि करम क्षणमें कटे, आया हरिकी ओट ॥ १८० ॥
कोटि कर्म फल पलकमें, रंचक आवै नाम ।
अनेक युग जो पुण्य करै, नहीं नाम बिन ठाम ॥१८१॥
कबीर हरिके नाम से, कोटि विघ्न टरि जाय ।
राई समान वसंदरा, केता काठ जलाय ॥ १८२ ॥
होय नाम जो एक रती, पाप जु रती हजार ।
अर्द्ध नाम घट संचरै, जारि करै सब छार ॥ १८३ ॥

सत्य नामको खोजिले, जाते अग्नि बुझाय।
बिना नाम बाँचे नहीं, धरमराय धरि खाय॥ १८४॥
गुण गाया गुण ना कटै, रटै न राम बियोग।
अहि निशि हरि ध्यावै नहीं, क्यों पावै दुर्लभ योग॥१८५
कबिरा कठिनाई खरी, लेता हरिको नाम।
सूली ऊपर सेज है, गिरे तो नाहीं ठाम॥ १८६॥
कबिरा रामहि ध्याइले, मन करि प्रेम प्रतीति।
हरि सागर जनि बीसरे, छीलर देखु अनीति॥ १८७॥
कबिरा राम रिझायले, मनहीमें गुण गाय।
फूटा नग ज्यों जोडि मन, सन्धे सन्धि मिलाय॥१८८॥
चित्त आग जो चमकिया, चहुँ दिशि लागी बाय।
हरि सुमिरण हाथे घडा, वेगी लेहु बुझाय॥ १८९॥
साच विना सुमिरण नहीं, भेद विन भक्ति न सोय।
पारसमें परदा रहा, लोह किमि कंचन होय॥ १९०॥
नाम विसारे देहकूं, जीव दशा सब जाय।
जबही छोडे नामको, तबही लागे धाय॥ १९१॥
कबिरा सुमिरण सार है, और सकल जंजाल।
आदि अंत मध सोधिया, दूजा देखा काल॥ १९२॥
कंचन केवक हरि भजन, दूजा काँच कथीर।
झूठा आल जंजाल तजि, पकडो साँच कबीर॥ १९३॥
माला मोसे लड़ि पड़ा; क्या फेरत हौ मोहि।
मनका माला फेरिले; हरि मिलावे तोहि॥ १९४॥

जिन जाना निज नामको, अमर भयो सो बंस॥२०५॥
आदि नाम निज मूल है, और मंत्र सब डार ।
कहै कबीर निज नाम बिन, बूडि मुआ संसार ॥२०६॥
आदि मानको खोजहू, जो है मुकतिक मूल ।
ये जियरा जप लीजियो, भर्म मता मतभूल ॥२०७॥
कह कवीर निज नाम बिन, मिथ्या जन्म गवांय ।
निर्भय मुक्ति निः अक्षरा, गुरु विन कबहुँ न पाय ॥ २०८ ॥
पूंजी मेरी नाम है, जाते सदा निहाल ।
कविरा गरजै पुरुष बल, चोरी करै न काल ॥ २०९ ॥
जाके दिल अनुराग है, पावेगा नर सोय ।
विन अनुराग न पाइये, बूड़ि मरै सब कोय ॥ २१० ॥
कविरा हमारे नाम बल, सात द्वीप नौखण्ड ।
जम डरपे सब भय करै, गाजि रहै ब्रह्मण्ड ॥ २११ ॥
काल फिरे शिर ऊपरे, काल नजर नहि आय ।
कह कवीर गुरु शब्द गहू, यमसे जीव बचाय ॥ २१२ ॥
काल फिरै शर सॉधिके, हाथे गहे कमान ।
कह कवीर गहि नाम निज, छाडु मान अभिमान ॥२१३॥
आदि नाम निज पुरुषकी, सुनतहि तजु अभिमान ।
कह कवीर सुनुसंत हो, तजो नरककी खान ॥ २१४ ॥
कोटि नाम संसारमें, ताते मुक्ति न होय ।
आदि नाम गुरु जाप जो, बूझ बिरला कोय ॥२१५॥
सोइ नाम संसार में, उदित अमोल अपार ।

ता बिन पार न पावई, बूडि मुये संसार ॥ २१६ ॥
जस देखि फनपति मंत्र, राखै फनहिं सिकोरि ।
तैसे बीरा नामते, काल रहै मुख मोरि ॥ २१७ ॥
जो जन होवे जौहरी, सो धन ले बिलगाय ।
सोहं सोहं जपि मुये, मिथ्या जन्म गँवाय ॥ २१८ ॥
साखी पद संसारमें, कनन सुननको कीन्ह ।
चिट्ठी आई मूलते, सो धन लैहै चीन्ह ॥ २१९ ॥
सबको नाम सुनावहू जो आवे तुव पास ।
शब्द हमारो सत्य है, दिढ राखो विश्वास ॥ २२० ॥
होय विवेकी शब्दका, जाय मिलै परिवार ।
नाम गहै सो पहुँचिहैं, मानहु कहा हमार ॥ २२१ ॥
आदि नाम पारस अहै, मनहै मेला लोह ।
परसतही कंचन भया, छूटा बंधन मोह ॥ २२२ ॥
सुरति समावे नाम से, जगसे रहै उदास ।
कहै कबीर गुरु चरणमें, दृढ राखै बिश्वास ॥ २२३ ॥
यहि विधि करै किसानिया, पोता तलब न होय ।
भक्त मिलै कोइ बीरला, दाम देत नहिं सोय ॥ २२४ ॥
मालिक हमारा नाम है, दरगाही परमान ।
शील संतोष आराम भौ, छाडि सकल अभिमान २२५
यहि अवसर नहिं पाइहो, धरो नाव कडिहार ।
भवसागर तरिजाव तब, पलक न लागै बार ॥ २२६ ॥
आदि नाम बीरा अहै, जीव सकल ले बूझि ।

अमरावे सतलोक लै, यम नहि पावै सूझि ॥ २२७ ॥
या धन सोई पाइहै, ज्ञान दृष्टि जेहि होय।
ज्ञान बिना नहिं पावई, कोटि करै जो कोय ॥२२८॥
ज्ञान दीप प्रकाश करि, भीतर भवन जराय।
बैठे सुमरे पुरुषको, सहज समाधि लगाय ॥ २२९ ॥
अछय बृक्षकी डोर गहि, सो सतनाम समाय।
सत्य शब्द प्रमाण है, सत्यलोक कहँ जाय ॥ २३० ॥
एक नामको जानिके, मेटै कर्मक अंक।
तबही सो सचु पाइहै, जब जिव होय निशङ्क ॥२३१॥
कोइ न यम सो बाचिया, नाम बिना धरिखाय।
जे जन बिरही नामके, ताको देखि डराय ॥ २३२ ॥
कर्म करै देही धरै, औ फिरि फिरि पछताय।
बिना नाम बांचे नहीं, जिव यमरा लै जाय ॥ २३३ ॥
नाम गहै धन धाम तजि, नर नारी जो कोइ।
अविचल महिमा में बसै, अविचल आपै होइ ॥ २३४ ॥

सोरठा।

सतगुरु का उपदेश, सत्य नाम निज सार है।
यहि निज मुक्ति संदेश, सुनो संत सत भावसे ॥२३५॥
तरे जो नाम समाय, बिन थिति सब जग बूढिया।
उबरे एक उपाय, सतगुरुके उपदेश गहि ॥ २३६ ॥
क्यों छूटे जमजाल, बहु बन्धन जिव बांधिया।
काटै दीनदयाल, कर्म फन्द एक नामसो ॥ २३७ ॥

मिटै कर्मको अंक, जब सतनाम ध्यावही।
होय जीव निःशंक, सत्य बचन सतगुरु कहे ॥ २३८॥
छोड़हु यमके फ़न्द, जेहि फन्दें जग फंदिया।
कटे तो होय आनन्द, नाम खडग सतगुरु दिये ॥२३९॥
तजै काक की देह, हंस दशाकी सुरति पर।
मुक्ति संदेशा एह, सतनाम प्रमाण अस ॥ २४० ॥
सतनाम विश्वास, कर्म भर्म सब पारि हरे।
सतगुरु पुरवे आस, जो निराश आशा करै ॥ २४१॥

---

गजल प्रार्थना।

गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे।
आवा गवनके दुखसे छुड़ा दो मुझे ॥
जन्म मरण गर्भ वासके, सहि दुख बारम्बार।
व्याकुल हो आयो शरण, मोहिं करो भव पार ॥
सतनाम कृपा कर सुना दो मुझे।
गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ १ ॥
खान पान सुख भोगमें, मैं अरूझा अज्ञान।
चञ्चल मन अस्थिर नहीं, केहि विधि हो कल्यान ॥
कोई योगकी युक्ति बता दो मुझे।
गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ २ ॥
काम क्रोध मद दंभ छल, झूट कपट व्यभिचार।
इनसे मोहिं बचाइये, दीजे काज सुधार ॥
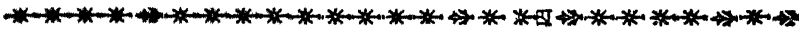
शुभ ज्ञान की नीति सिखा दो मुझे।
गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ ३ ॥

साधु संतसे प्रीति हो विषय विकार हो नाश।
सत्य ज्ञान हिरदे बसे, होय परख प्रकाश ॥
साधन चारों परि पूर्ण करा दो मुझे।
गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ ४ ॥

भगवानदास बिनती करे, प्रेम नयन बहे नीर।
तुम समान को जगतमें, करुणासिन्धु कबीर ॥
यही आस विश्वास दिखादो मुझे।
गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ ५ ॥

---

सद्गुरुस्तुतिः।

सर्वमंगलमांगल्यं सर्वविघ्नविनाशनम्।
अधमोद्धारणं देवं सद्गुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥
यं सर्वेश्वरदेवं हि स्तुवन्ति सततं सुराः।
ध्यायन्ति मुनयश्चापि तं गुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥
शश्वज्जन्मजरामयाधिनिधनैर्दुःखैः सदा पीडितान्
दृष्ट्वा प्राणभृतः कुशेशयदले स्वैरं च धृत्वा वपुः।
शास्त्राब्धिं प्रविगाह्य बीजकसुधाज्ञानं च तेभ्यो ददौ
तं वन्दे शिरसा प्रणम्य चरणौ वीरं कवीरं गुरुम् ॥ ३ ॥
नित्यानन्दस्वरूपो यो मायातीतो महोदयः।
सच्छास्त्रविषयः साक्षात्कवीरं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥ ४ ॥

नमः श्रीधर्मदासाद्यमहामुन्यन्तसत्तमान् ।
द्विचत्वारिंशदाचार्य्यान् भूतभव्यभविष्यतः ॥ ५ ॥

अकलितमहिमानं पूर्णकामं कृपालुं ।
धृतमनुजशरीरं भक्तसन्तारणाय ॥
सुरमुनिगणवन्द्यं दिव्यदेहाभिरामं ।
हृदयतिमिरभानुं सत्कवीरं स्मरामः ॥ ६ ॥

अर्थ—अगणितमहिमावाले, पूर्णकाम, दयायुक्त, भक्तलोगोंके उद्धार करनेके लिये मनुष्यशरीर धारण करनेवाले, देवता और मुनिगणोंसे वंदनीय, दिव्यदेह करके मनोहर, हृदयान्धकारको नाश करनेकेलिये सूर्य ऐसे सत्कबीरको हम लोग स्मरण करते हैं ॥

इति श्रीकबीराश्रमाचार्य परमार्थी वैद्य भारतपथिक स्वामी श्रीयुगलानन्दविहारीनिर्मित कबीरपंथी शब्दावली अन्तर्गत स्तोत्रदर्शन द्वितीय खण्ड समाप्त ॥

सत्यनाम ।

सत्यसुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय कवीर सुरति योग
सन्तायन धनी धर्मदास की दया
सर्व सन्त महन्तोंकी दया ।

# कवीरपंथी-शब्दावली ।

## तीसरा खण्ड--अध्यात्म साधन ।

### गुरुपूजा प्रकरण ।

वन्दौं सत्य कवीरके, युगल चरण शिरनाय ।
धर्मदास वन्दन करूं, सुकृतको बलपाय ॥ १ ॥
शब्दावलिको खण्ड यह, तीसर जान सुजान ।
गुरु पूजा चौका विधि, सबही करों बखान ॥ २ ॥

उछाह मङ्गल ( पधरावनी ) के शब्द ॥

मंगल ।

आज मेरे साहब आये मिहमान ।
तन मन जिव करूं कुरबान ॥ टेक ॥

प्रेमको पलंगा बिछाऊँ आय । चरण पखारि चर्णामृत पाय ॥ १ ॥ भाव सहित भोजन करूं सारा ।
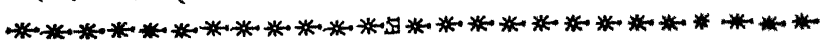
तुरतहिं करूं लगै न बारा ॥ २ ॥ कहा करूं कुछ सर भर नाय । तीनलोक पासंगमें जाय ॥ ३ ॥ ज्ञानकी पटरी सुरतकी डोर । आज मोरे सतगुरु झुले हिंडोर ॥ ४ ॥ धरमदास आमिन समुझाय । भगति करो तुम सुरत लगाय ॥ ५ ॥

मंगल ( पधरावनी ) ॥

आज मोरे सतगुरु आय मिहमान ।
तन मन जिव करूं कुरबान ॥ टेक ॥

सतगुरु आय मै फूली न सामाँव । देखि दीदार मगन ह्वै जाँव ॥ १ ॥ प्रेमको पलंगा देउं बिछाय । चरण परछालि चरणामृत पाय ॥ २ ॥ भाव सहित भोजन करूं सार । तुरत करो कछु लगै न बार ॥ ३ ॥ चौका चन्दन तुरति बनाय । सतगुरु जहाँ बैठेआय॥४॥ धर्मदास या मन समुझाय । भक्ति करो तुम सुरति लगाय ॥ ५ ॥ कह कबीर सुनो धर्मदास । केवल नाम गहो विश्वास ॥ ६ ॥

मंगल उछाह ॥

मोरे जिवरे सुख परम अनन्द ।
आज साहब मोड आवेंगे ॥ टेक ॥

सखी काहि आँगन लिपायऊ । काहिको सखी चौक पुरायऊ ? ॥ १ ॥ सखी आंगन चन्दन लिपायऊँ । गजमोतियनको सखि चौक पुरायऊँ ॥ २ ॥

सखि काहेको डारो बैठनो। काहेको चरनामृत लेउ?॥३॥
तन मन डारूं बैठना। चरननको चरनामृत लेउ ॥४॥
सखि आँगन बोऊँ इलायची। मोरे फलसे सुख अम्मर बेले॥५॥ सखि ऊंची पाल समुद्रकी। तले बहे जमुना नीर॥६॥ सखि ऊँचे चढि देखहूँ। मोर साहबको रथ केतिक दूर ॥७॥ सखि सब वृन्दावन ढूंढिया। मोहिं मिलिया त्रिकुटिके तीर ॥८॥ सखि भक्ति हेतुके कारने। मोपै दया करी बन्दीछोर कबीर॥९॥

मङ्गल उछाह ॥

आज घडी हो मोरे आनंदकी। सतगुरु आये मोरे धाम टे०
आइया गुरुदेव सजनी, भयो, हरष अपार हो।
सकल सुन्दरि साज आरति, होत मंगल चार हो ॥ १॥
दियो दरस परभाव सतगुरु, सुना सखी अमोल हो।
अछै छाया सघन घनकी, करत हंस किलोलहो ॥ २॥
दया करी नाह निरगुन, अपनी कर लीन हो।
भक्ति मुक्ति सनेह सजनी, लीन प्रीतम चीन्ह हो ॥ ३॥
भयी है कलिविष दूर तनकी, गयी है तपन नसाय हो।
अटल पंथ कबीर दीनो, धर्मदास लखाय हो ॥ ४॥

मङ्गल उछाह ॥

भल आय सतगुरु मैं बलि जावँ।
आतम अन्ध जगाइया ॥ टेक ॥ १॥

भूले आतमको भरम मिटाय । लख चौरासीको बन्द छुटाय ॥ २ ॥ आतम तब उतरन पाय । कोटि कर्म फन्द काटो आय ॥ ३ ॥ पूरन चन्दा सतगुरु परग आय । नौलख तारा गये छिपाय ॥ ४ ॥ पूरे गुरुकी पूरन कला । और कला न दीसे भला ॥ ५ ॥ और कला त्रिगुनकी ओष । सतगुरु कला परम संतोष ॥ ६ ॥ यहि कला मन राखो थीर । जनम जनमको मेटो पीर ॥ ७ ॥ दस मास जननी भरि बोझ । भक्ति विना भये बनके रोझ ॥८॥ कहै कबीर जग जीत ले साल । सतगुरु सुमिरो दीन दयाल ॥ ९ ॥

मंगल उछाह ॥

धन सतगुरु जिन दियो उपदेश ।
भव बूडन गहि राख्यो केश ॥ टेक ॥ १ ॥

साकटसे गुरु वैष्णव कीया॥सत्य नाम सुमिरनको दीया ॥२॥ जाति वरन कुल भरम मिटाय । साधु मिले तब साधु कहाय ॥ ३ ॥ पारस परसे कंचन होय । वाको कहै न कोय ॥ ४ ॥ पारसके गुन देखो आय । कंचन महंगे मोल विकाय॥५। स्वाति बुन्द के दलीमें परे । रूप रंग कछु औरहिं धरे ॥६॥ नाम कपूर बासना होय । केदली वाको कहै न कोय ॥ ७॥ निसिदिन सुमरो एकै नाम । जा सुमरेते दिढ होय करम ॥ ८ ॥ कहैं कविर यह सांचो खेल । फूल तिलि मिलि भयो फुलेल ॥ ९ ॥

मंगल उछाह।

आजके दिवस को मैं वारने जाऊं।
वारने जाऊँ बलि हारने जाऊँ ॥ टेक ॥

सतगुरु साहब आय मोरे पाहुन। घर आँगना मोहि लगे सोहावना॥ साधु संत मिलि लागे मंगल गावन॥१॥
होय मगन गुरु चरनन पर छालूँ। चरन परछालुँ गुरु के वदन निहालूँ॥ तन मन धन सतगुरु पर वारूं॥२॥
जा दिन आय साधु धन दिन सोई। होत आनन्द परम सुख होई॥ सतगुरु मिलि मोरि दुरमत खोई ॥ ३ ॥
सुरति लगी सतनामकी आसा। कहैं कबिर दासनके दासा॥ साधु संत मिलि काटौ जम फांसा ॥ ४ ॥*

मंगल उछाह ॥ धुन ॥
राग सारंग ( समय मध्याह्न काल )

भाग जाके संत पाहुने आवें।
द्वारे कथा कीरतन करहि, हिलमिल मंगल गावें ॥टे०॥
काम क्रोध मदमान कल्पना, दुर्मति दूर बहावें॥
राग द्वेष परनिन्दा तजिके, सत उपदेश दिखावें ॥ १ ॥
प्रथम लाभ चरनोदक लैकरि, जो कोई सीस चढावे॥
कोटिन तीरथको फल सहजहिं, सो घर बैठे पावे ॥२॥
खीर खाण्ड पकवान मिठाई, लखि नहिं हेत बढावें॥

---

* इस प्रकार सतगुरुकी पधरावनी आरतीसहित करना चाहिये। पश्चात् चरण पखार चरणामृत लेना चाहिये॥

रूखा सूखा शाक पत्र अति, हितसे भोग लगावें ॥ ३ ॥
महाप्रसाद देवनको दुर्लभ, सन्त सदा मोद पावें ॥
दुष्ट सदा दुर्मतिके घेरो, मिथ्या जन्म गवाँवें ॥ ४ ॥
गुरु प्रतापसे पूरवके सुकृत, कर्म उदय हो जावें ॥
कहैं कवीर साधु मूरत धरि, साहब दरश दिखावें॥५॥

---

अथ छत्तीस गढी कामचलाऊ चौकी विधानकी पद ॥

## शब्द व्यंजनभोग ।

सत्तनामको भोग लागे, शब्द अनाहद घंटा बाजेहो॥
प्रेम सुरतसे करो रसोई। अमृत भोजन पारस होई॥
कंचन झारी अविगत थार। सत्यसुकृत जहां करें जेवनार॥
जेंवहि साहब संत सब संगा।गावहिं दास जो परम अनंदा॥
पाय प्रसाद जल अचवन कीन्हा। महाप्रसाद दासको दीन्हा॥ जाते काल भयो आधीना। जबसे हंस भये परवीना॥ कहैं कवीर पूरन भये भाग। जब सतगुरु मस्तक दिये हाथ॥

॥ धुन ॥

सतके भोग दयाके व्यंजन तुमको-मालुम होय।
महा पुरुष मानिये निज सोय॥
इंगला पिंगला चौका पोते, छिमा मंत्र निज डार।
बलकी फूंक अकलकी आंगी, चाहके चूल्ह सँवार॥
दिलदायाकी दाल बनाये, लक्षके नोन मिलाय।

मनसा हींग डार व्यंजनमें, चहुं दिस बास उडाय ॥
भाव भक्ति घृत निर्मल नीरा, दिल गडुवा जल डार ।
सतसुकृत जहां भोजन पावें, घर मानिक उजियार ।
आसन मूल बैठ दृढ अविचल, सुखमन बाव डोलाय ॥
सुर्त निर्त दोय पाट सँवारे, संत परोसें आय ।
सकल संत मिल आरती उतारें, गावें मंगल चार ।
कहें कबीर जिन सतगुरु सेवा, सो सतलोक सुधार ॥

शब्द गारी ।

देहु न देहु प्रभुजन अपनेको, समर्थके गुनगाऊं केहांजूं ॥ गगनमंडल मोरे सजन बसत हैं, उनहूंको नेवत बुलाऊं केहांजू ॥ काम क्रोध मद लोभ पांवडे, भीतर भवन बिछाऊं केहांजू ॥ नैननके जल चरन पखारों, चित चौकी बैठाऊं केहांजू ॥ करनीके पातर कथनीके दोना, साखीके सींक लगाऊं केहांजू ॥भावको भात औ दार दयाको, शब्दके बरा बनाऊं केहांजू ॥ मनसा मांडे सरस बनाऊं, प्रेमके घृत चुवाऊं केहांजू ॥ सतके दूध करनीके खोवा, शक्कर सुमत मिलाऊं केहांजू ॥ यह सुख पाय जेवें सजन हमारे, स्वासाके बाव ढुलाऊं केहांजू ॥ सीसा सार भरे जल अमृत, सो अचवन करवाऊं केहांजू ॥ पांचपचीस पकर नौ नारी, सजनको गारी गवाऊं केहांजू ॥ तत्व तमोलिन सुघर सुम-

तिले, सजनको बिरियां खवाऊं केहांजू ॥ एकईस खंड महलके भीतर, निरभय पलंग बिछाऊं केहांजू ॥ शील संतो खवास हमारे, सजनके चरन दबाऊं केहांजू ॥ धर्मदास कहे साहब मोरे, मुक्ति मनोरथ पाऊं केहांजू ॥

शब्द अचवन ।

सेवक लिये प्रेम जलझारी, खरचा ब्रह्म ज्ञान।
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥
भाव भक्तिसों बीरा लीजे संतन जीवन प्रान. महाप्रभु।
अमी उगार दासको दीजे जिनको परम कल्यान ॥
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ।
हृदयकमलबिच पलंग बिछाऊं पौढें पुरुषपुरान. महा०॥
चरनकमलकी सेवा करिहों दासातन परमान ।
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥
सुरतके बिजना डोलाऊं मैं ठाढी।
एक टक लागों ध्यान. महा० ॥
धर्मदास पर दाया कीजे पूरन पद निर्बान।
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥

शब्द बिजना ।-

मेरे सतगुरु आये द्वारको रसको बिजना ।
काहेके बैठक देउं सुरत रसको बिजना ॥
चंदन पिढिया गुरु बैठका रसको बिजना ।
नीरन चरन पखारों सुरत रसको बिजना ॥

भात रिंधों रस दूधमें रसको बिजना ।
धोय मूंगके दार सुरत रसको बिजना ॥
काहेके थार परोसों हो रसको बिजना ।
काह कटोरन दूध सुरत रसको बिजना ॥
सोनेके थार परोसों हो रसके बिजना ।
रूपे कटोरियन दूध सुरत रसको बिजना ॥
जेंईलेव सतगुरु पाहुना रसको बिजना ।
मुखभर देहु अशीस सुरत रसको बिजना ॥
पाथरको का पूजनो रसको बिजना ।
मुख बोले ना खाय सुरत रसको बिजना ॥
सांचे पूजहु साधुको रसको बिजना ।
मुख बोले ओ खाय सुरत रसको बिजना ॥
खाय पाय सुख सेजमें रसको बिजना ।
करले शब्द शृंगार सुरत रसको बिजना ॥
पानन बिरियां खवाऊं हो रसको बिजना ।
दोउ कर चरन दबाय सुरत रसको बिजना ॥
बिजना बिजना सब कोई कहे रसको बिजना ।
बिजना लखे न कोय सुरत रसको बिजना ॥
कहें कबीर धर्मदाससों रसको बिजना ।
रहत अमरपुर छाय सुरत रसको बिजना ॥

भोगकी आरती ।

सुमरन भजन आरती पूजा, सनमुख करले सेव ।

सिर पर राखिये हो, सोई परम गुरुदेव ॥
अजपा जाप जपो बिन जिह्वा, मूलमंत्र आराधि ।
अस्थिर ध्यान अमरदृढ अविचल, लागी सहजसमाधि ॥
मानसरोवर मंजन करले, त्रिबेनीको घाट ।
अनहद धुन सुन पांचों मोहे, खुलगये ज्ञानकपाट ॥
बिन नदिया बिन नावरी, गुरु अधर उतारे पार ।
शब्द सिंढी ऊपर ले राखो, घरही है निज द्वार ॥
चांद सूर निसि वासर नाहीं, नाहिंन विद्या बेद ।
साहब कवीर भये जहां गुरुमुख, बिरले पावहि भेद ॥

चौकाकी रमैनी ।

प्रथमहि मंदिर चौक पुराये । उत्तम आसन श्वेत बिछाये ॥
हंसा पग आसन पर दीन्हा । सत्तकवीर कही कह लीन्हा ॥
नाम प्रताप हंस पर छाजे । हंसहि भार रती नहिं लागे ॥
भारउतारआप सिर लीन्हा । हंस छुडाय कालसों लीन्हा ॥
साधसंतमिलबैठे आई । बहु बिध भक्ति करे चितलाई ॥
पानसुपारीनारियरकेरा । लौंग लायची किशमिस मेवा ॥
सवासेर आनो मिष्टाँना । सत सवासा उत्तम पाना ॥
सात हाथ बस्तर परवाना । सो सतगुरुके आगे आना ॥
इतना होय और नहीं भाई । जासों काल दगा मिटजाई ॥
धन्यसंतजिनआरतिसाजा । दुखदारिद्र वाके घरसे भागा ॥
कहें कबीर सुनो धर्मदासा । ओहं सोहं शब्द प्रगासा ॥

साखी—चौका चन्दन कीजिये, मलयागिरको नाम।
चारो कमल सुधारहू, मध्य ताहिको धाम ॥ १ ॥
उग्र ज्ञानका कहों संदेशा। धर्मदास मानो उपदेशा ॥
धर्मदास मानो चितलाई। रहो ठीका पर उचट न जाई ॥
अजर लोकमें आरती कीन्हा। सो आरती हम तुमको दीन्हा
जा घर आरती नाहिंन साजी। ता घर धर्मरायके बाजी॥
जा घर आरती करो बनाई। निरभै हंस लोकको जाई ॥
कोटिन ज्ञान कथे नर लोई। बिन आरती बांचे नहिं कोई ॥
अजर जोत आरती परकाशा। दूत भूत जम मानै त्रासा॥
कहें कवीर सुनो धर्मदासा। हंसा पावे लोक नित्रासा ॥
सा०—कलस आरती दल शिला, नरियर पान मिष्टान।
पुंगी फल पुष्प लौंग लायची, शब्द भजन धुन ध्यान २
धर्मदास तुम पंथ उजागर। अरपो दल परसो सुखसागर ॥
चंदन चौका रचो बनाई। सत सुकृत जहां बैठे आई ॥
सतबारीके फूल मँगावा। सो सतगुरुको आन चढावा ॥
धर्मदास उठ बिनती कीन्हा। होसत गुरु हम तुमको चीन्हा
जो तुम कहो मानलेउं सोई। तुम गुरु छोड और नहिं कोई ॥
कहें कवीर सुनों धर्मदासा। बीरा नाम करो परकाशा ॥
सा०—लौंग इलायची नारियर, आरती धरो लेसाय ॥
कहें कवीर धर्मदास सों, काल दगा मिटजाय ॥ ३ ॥
धर्मदास तुम बीरा लेहू। जंबूद्वीपके जीवन देहू ॥
मैं का जानो पंथके आदी। जंबूद्वीप बसे बकबादी ॥

पढे बेद औ करें अचारा । वे नहिं माने शब्द तुम्हारा ॥
जो नहिं माने शब्द हमारा । सो चलि जैहै जमके द्वारा ॥
जो कोइ माने शब्द हमारा । सो चल अइहैं लोक मंझारा ॥
अंतर कपट करे मन माहीं । ताको लोक पहुंच नहिं जाहीं ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा । बीरा नाम करो परकाशा ॥
सा०–अंसरेख सुर सीखको, गुरु स्वांसा घर एक ।
तामो नरियर मोरहु, टूटे विघ्न अनेक ॥ ४ ॥

---

चौकाके पद ।

भक्ति सतगुरु आनी संतो, कोई बूझे पंडित ज्ञानी संतो ॥
पाहन फोर गंग एक निकसी, चहुं दिस पानी पानी ।
वा पानी दोय पर्वत बूडे, दरिया लहर समानी ॥
उड माखी तरवर पर बैठी, बोले अमृत बानी ।
वा माखीके मक्खा नाहीं, गर्भ रहा बिन पानी ॥
राई बरोबर बस्तु हमारा, अर्ध राई अस्थूला ।
लहर लहर वह घट बिच होवे, सोई पुरुष निज मूला ॥
नारी एक सकल जग जायो, ताते रहत अकेला ।
कहैं कबीर यह पदको बूझे, सो सतगुरुका चेला ॥ १ ॥
गुनका भेद न्यारा न्यारा, कोई जानेगा जाननहारा ॥
सोई सुन्दर जाके पियको, बरत है अज्ञाकारी होई ॥
ओर सकल सब श्वान कूकरी, सुंदर बदन ना होई ॥
सोई गजराज राजकुल मंडन, जाके मस्तक मोती ॥
और सकल सब भार लदनुवां, महिषासुरके गोती ॥

सोई भुजंग जाके मस्तक मनि, मनि उजियारे खेले ॥
और सकल सावनके केंचुवा, जगत पांउतर डोले ॥
सोई पर्वत सुमेर उजागर, अष्टौ धात निवासा ॥
और सकल पाखान बरोबर, टांकी अगिन प्रकाशा ॥
कहें कवीर सोई जन गुरुवा, नाम भजन अधिकारी ॥
और सकल साहबका बाना, देखो तत्व बिचारी ॥

साखी–जो रचना है लोकके, सो चौका बिस्तार।
की बैठे निज बिंदसुत, की पूरा कंडिहार ॥ २ ॥

चीन्होरे नरलोई सतगुरु।
जासों मिटे तेरो जनम जोयनी, आवागमन ना होई ॥
गुरु जगतमें बहुत कहावे, मंत्र देत हैं काना ॥
उपजे बिनसे भौसागरमें, भेद मरम नहिं जाना ॥
बेद पुरान भागवत गीता, सब मिल रही डिठाई ॥
धन सोई जीव सुफल सोई प्रानी, निज पूरे गुरुपाई ॥
चोर औ साहु जगतमें ब्यापे, जो लखपावै कोई ॥
सांचे मिलै तबै सुख उपजे, तनके तपन बुझाई ॥
सांचे एक जगतमें सतगुरु, भौतारन कंडिहारा ॥
कहें कवीर सब जगकें गुरुवा, मर मर ले औतारा ॥

साखी–द्वादश दल जहां रचिके, करहु प्रेम परकाश।
मध्यक्षत्र बिस्तारहू, अंक नाम विश्वास ॥ ३ ॥

गगनमंडलका बासा संतो, जहां देखो अजब तमासा संतो ॥
गढ मेरो गगन सुरत मेरो चौका, चेतन चँवर ढुरावै ॥

इंगला पिंगला सुषुमन नारी, अनहद बेन बजावै ॥
अष्ट कमल दल पंखुरी बिराजे, उलटा ध्यान लगावे ॥
पांचपचीस एक घर लावो, तब धुनकी सुध पावैं ॥
त्रिकुटी घाट अस्नान जो करले, रबि शशि सुषमन होई ॥
हंसा केल करत राजन संग, एक महलमें दोई ॥
विन बादल जहां बिजुली चमके, बिना सीपके मोती ॥
कहैं कबीर सुनो भाईसाधू, निरखहु निरमल ज्योती ॥
साखी-जापर बसे निह अक्षर, ताहि पवनके नाम ।
शब्द सुधारस खान है, हम तुम ताही धाम ॥ ४

अब हम अविगतसे चलिआये।काहू भेदभरन नहिं पाये॥
ना हम जनमें गरभ बसेरा, बालक होय खिलाये ॥
काशी शहर जलहि बिच डेरा, तहां जुलाहा पाये ॥
हते बिदेह देहधर आये, काया कबीर कहाये ॥
बंस हेत हंसनके कारन, रामानंद समुझाये ॥
ना मोरे गगन धाम कछु नाहीं, दीसत अगम अपारा ॥
शब्द स्वरूपी नाम साहबका, सोई नाम हमारा ॥
ना हमरे घर मात पिता है, नाही हमरे दासी ॥
जात जोलाहा नाम धराये, जगत कराये हांसी ॥
ना मोरे हाड चाम ना लोहू, हौं सतनाम उपासी ॥
तारन तरन अभय पद दाता, कहैं कबीर अविनासी ५

होत अनद अनंद भजनमें ।
बरषत शब्द अमीकी बादर, भींजत हैं कोई संत ॥
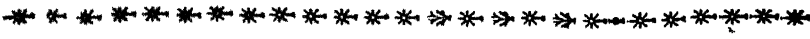
अग्रबास जहँ तत्त्वकी नदियां, मानो अठारा गंग।
कर अस्नान मगन है बैठे, बढत शब्दके रंग ॥
पियत सुधारस लेत नामरस, चुवत अग्रके बुंद।
रोम रोम सब अमृत भीजे, पारस परसत अंग ॥
श्वासा सार रचे मोरे साहब, जहां न माया मोहंग।
कहैं कबीर सुनो भाई साधू, जपो सोहंग सोहंग ॥
साखी-रामनरायन जगत गुरू, करें बोध संसार।
वचन प्रतापसे ऊबरे, भौजलमें कडिहार ॥ ६ ॥

दर्शन देहु कबीर, अब मोहिं।
अघतम पुंज दहन रविभासत, निरमल होत शरीर ॥
श्वेत कमल पुरयनपर चौका, कर्मके कागद चीर।
सुमरन करके दल तहां धरिया, सीतल जलहल नीर ॥
हंस बोलाय पुरुष जब लीन्हा, दीन्हो अंमर चीर।
अमृत भोजन हंसा पावे, शब्द दूधके खीर ॥
सेज्या पुष्प श्वेत सिंघासन, माथे छत्र मनि हीर।
कहैं कबीर सुनो भाई साधू, सुमरण करो अस्थीर ॥
साखी-चार गुरु संसारमें, धर्मदास बड़ अंस।
मुक्तराज तुमको दिये, अटल बयालिस वंश ॥७॥

पदडोरी।

शब्द सिंघासन पाटमें, तुम हंसा बैठो आये हो ॥
कौन नाम मुक्तामनी, कौन नाम वे अंस।
कौन नाम वे पुरुष हैं, कौन नाम वे हंस ॥

अजर नाम मुक्तामनि, उग्रनाम वे अंस।
ज्ञानी नाम वे पुरुष है, सुर्त नाम वे हंस॥
मूलद्वीप निज द्वीप है, और सुनो हम पांह।
बैठे हंस उबारही, सोहंगमके बांह॥
जंबूद्वीपके हंसा भाई, पांजी बैठे आय।
कहें कबीर धर्मदास सो, तुम लावहु बांह चढ़ाय॥
साखी-हंसा छूटे बाज जों, कोट सिंघका जोर।
सुमरन दीनदयालका, पहुंचगया निज ठौर॥१॥
नाम सनेह न छांडिये, भावे तनमनधन जरजाय हो॥
पानीसे पैदा किया, नख सिख सीस बनाय।
वह साहबको बिसारिया, तेरो गाढो होत सहाय॥
महल चुने खाई खने, ऊंचे ऊंचे धाम।
जब जम बैठे कंठमें तेरो, कोई न आवे काम॥
मात पिता सुत बंधुवा, और दुलारी नार।
यह सब हिलमिल बीछुरे, तेरी शोभा है दिन चार॥
जैसे लागी औरसे, दिन दिन दूनी प्रीत।
नाम कबीर न छांडिये, भावे हार होयके जीत॥
साखी-उनमुनि चढी अकाशमें, गई गगनमें छूट।
हंस चलासो जात हैं, काल रहा सिरकूट॥ २॥
अबकी बेर उबारिये मेरी अर्जी दीनदयाल हो॥
आई थी वही देशसे, भई परदेशी नार।
वह मारगमें भूलिया, बिसर गई निज नाह॥
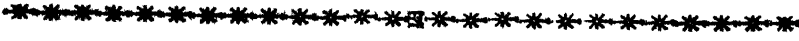
जुगन जुगन भरमत फिरे, जमके हाथ बिकाय।
करजोरे बिनती करों, मोहि मिलके बिछुर मतजाव ॥
बिषम नदी बिकराल है, वाहित करिया धार।
मोह मगरके घाटमें, खाये सुर नर झार ॥
शब्द जहाज कबीरका, सतगुरु खेवनहार।
कोइ २ हंस उबारहीं, पलमें लेहिं गोहार ॥

साखी-चली जु पुतली नोनकी, थाह सिन्धुकी लैन।
आपन गल पानी भई, उलट कहे को बैन ॥ ३ ॥

कौन मिलावे जोगिया, जोगिया बिन रहो न जाय हो ॥
हों हरनीं पिय पारथी, मारा शब्दका बान।
जाहि लगे सो जानिया, और दरद नहिं आन ॥
पिय कारन पियरी भई, लोग कहे तन रोग।
जप तप लंघनमें, करों, पिया मिलनके योग ॥
हूं तो प्यासी पीव की, रटों सदा पिव पीव।
पिया मिले तो जीविहों, नातो ( सहजे ) त्यागों जीव ॥
कहें कबीर सुन जोगिनी, तनही में मनही समाय।
पिछली प्रीतके कारने, ( जोगी ) बहुरि मिलेंगे आय ॥

साखी-अस बीरा प्रताप बल, प्रबल काल ते होय।
जेह सतगुरु बहियां मिले, हंस न जाय बिगोय ॥ ४ ॥

हंसा दुरमत छोड़दे तूं तो, निर्मल होय घर आवहो ॥
दूधहि से दधि होत है, दधि मथ माखन होय।
माखनसे घृत होत है; बहुर न छांछ समोय ॥
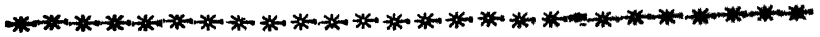
ऊंखहिसे गुड़ होत है, गुडसे खांड होइजाय ।
सतगुरु मिल मिसरी भये, बहुरि न ऊंख समाय ॥
खांड जो बगरी रेतमें, गजमुख चुनी न जाय ।
जात बरण कुल खोय के, चीटी होय चुन खाय ॥
दाग जो लागा नीलका, नौ मन साबुन धोय ।
कोट यतन परमोधिये, कागा हंस न होय ॥
कहें कबीर सुन केशवा, तेरी गत अगम अपार ।
बाप बिनोरा हो रहे, पूत भये चौतार ॥
साखी—बीरा पद जिन जानहू, पुरुष नाम निजमूल ।
जा दिन हंसा तन तजै मेटैं संशय शूल ॥ ९ ॥
शब्दसनेही हंसा तुम, जगतज होहु न्यारा हो ॥
सतशब्द निज डोर है, तुम हंसा गहो बनाय ।
सतबीरा निज नाम है, (तुम) चाखतही घरजाव ॥
बिना बीज को जामि हैं, बिन अंकुरको झाड़ ।
बिन डोडी फल लागिया, कोइ साधू करे बिचार ॥
अजर केर अंकुरा भये । अजर केर लागी डार ।
अजर फूल फल लागिया, ( कोइ ) साधू करे अहार ॥
मोहि अजर कर जानहू, अमर देऊं बताय ।
जेहि भांड़े निज सांचहै (हम) तामो रहें समाय ॥
कहें कबीर धर्मदास सो, बेग जाहु संसार ।
सोहंगमके बांह से, (तुम) हंस उतारो पार ॥
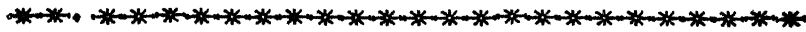
साखी—उत्तर घाटी उतरे, पांजी बैठे जाय ।
तहवां सुर्त समावे, पुरुष के परसे पाय ॥ ६ ॥

चौपड ।

चल सखी चौपड़ खेलिये, तनमनसे बाजी लायहो ॥
चौपड़ खेलों सुन्नमें, खेलों दिन औ रात ।
चल हंसा घर आपने, जहां तेरी उतपात ॥
चौपड़ खेलों पीवसे, बाजी लगावों जीव ।
जो हारों तो पीव की, जो जीतों तो पीव ।
चार गली घर एकहै, चार बरन एक सार ॥
पासा ढारा प्रेमका, जीत चली सोई नार ।
चौपडिया के खेलमें, जुग नाहने को दाव ।
नरद अकेली हो रही, छिन पल खावे घाव ॥
चौरासी घर भस्मके, पौ में अटकी आय ।
अबकी पौं जो ना परे, तो फिर चौरासी जाय ॥
पगरासे बाजी लगी, परे अठारा दाव ।
सार गँवाई हांथसे, सिर पर लागे घाव ॥
जात बरन कुल मेटिके, पाये भक्ति अटूट ।
कहें कबीर धर्मदाससों, कोई न पकडे खूट ॥
साखी—मैं कबीर विचलों नहीं, शब्द मोर समरत्थ ।
जाको लोक पठाइया, चढे शब्द के रथ ॥ ७ ॥

ज्ञान रतनकी आंखिया, तुम देखो जमके जालहो ॥
जमके फंदा काटो हंसा, जग तज होहु न्यार ।

सतगुरु दरशन देयँगे, तुम उतरो भौजल पार ॥
जो तुम हंसा निर्गुन चाहो, सर्गुन करो बिचार ।
निर्गुन सर्गुन छोडिके, ( तुम ) दोउ तज होहु न्यार ।
अष्ट कमल दल ऊपरे, भँवर गुफाके घाट ।
सहस पंखुरीको कमल है, पश्चिम दिशाके बाट ॥
नौ खंड हेत बिसारो हंसा, शब्द सुरत चित धार ।
कहें कबीर धर्मदाससों तुम उतरो भौजल पार ॥

साखी—नाद संघाती कबीर हो, बिंदहि देहुन भार
जुग जुग हंस हिरम्मर, नाद उबारन हार ॥ ८ ॥

चौकाकी आरती ।

मंगलरूप आरती साजे, अभय निशान ज्ञान धुन गाजे ॥ टे० ॥ अक्षै वृक्षकी अमर छाया । प्रेम प्रताप अमृत फल पाया ॥ निसि बासर जहां सूर न चंदा । परम पुरुष जहां करत अनंदा ॥ तन मन धन जिन अर्पन कीन्हा । पुरुष पुरुष परमातम चीन्हा ॥ जरा मरनकी संसै मेटो । सुरत संतायेन सतगुरु भेंटो ॥ कहें कबीर, हिरंमर होई । निरख नाम निज चीन्हे सोई ॥

मंगल ।

बनजारिन बिनती करें सुन साजना ।
( साधो ) नरियर लीन्हो हाथ संत सुन साजना ॥
बिना बीजको वृक्ष है सुन साजना ।
( साधो ) बिन धरती अंकूर संत सुन साजना ॥

जाको मूल पताल है संत सुन साजना ।
(साधो) नरियर सीस अकाश संत सुन साजना ॥
बिना भेद जनि मोरहु सुन साजना ।
(साधो) जीव इकोतर हानि संत सुन साजना ॥
गुरुके शब्दले मोरहु सुन साजना ।
(साधो) खुले जमको कपाट संत सुन साजना ॥
सखियाँ पाँच सहेलरी सुन साजना ।
(साधो) नौ नारी बिस्तार संत सुन साजना ॥
कहैं कबीर बघेलसे सुन साजना ।
रानी इंद्रमती सर्दार संत सुन साजना ॥

नारियलका शब्द ॥

मोरहु नरियर मोरहु हो, आपन अंस बचाय ।
बिना शब्द जिन मोरहू, जिव परले तरजाय ॥
तीन अंश नरियर महँ, तामों एक हमार ।
आपन अंस बचायके, जमके अंस निनार ॥
जमको अमल मिटावहू, पवन बतीस बिलोय ।
नीर नेह निरवारहू, चलो महा तम खोय ॥
धरती रेख सुधारहू, पौरुष पवन अमान ।
बिना भेद जिन मोरहू, जीव एकोतर हान ॥
सोई पवन निज गहि रहो, नरियर बास समोय ।
तो नौ तत्व सुधारहू, काल निकट नहिं होय ॥
धरती गुन गहि प्रगटहू, करो शब्द परकाश ।
साहब कबीर कर दीहल, दृढ मानो धर्मदास ॥
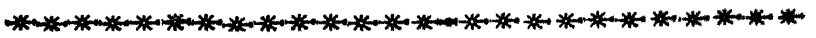
भोगका शब्द ।

सत पुरुषको भोग लागे, सिंगी शब्द अनाहद बाजेहो॥ कदली पत्र साजो पनवारा । सीतल शब्द जोत उजियारा॥ नरियर मोरि खुरौरी कीन्हो। आद नाम अंतर घट चीन्हो ॥ सुघर मिठाई मधुर मिठाई । प्रीत भावसे संत मंगाई ॥ लौंग लायची किसमिस मेवा । सुघर मधुर रस दाख घनेवा ॥ सुखसागरको निर्मल नीरा । जापर सतगुरु तृप्त शरीरा ॥ सतपुरुषको अर्पन कीन्हा ॥ शंख शब्द धुन बाजे बीना ॥ सो पनवार दासको दीन्हा। जाते काल भयो आधीना ॥ पान पसाद जीव जो पावे। अंकुरी सतलोक सिधावे ॥ ऐसा भेद करो परकाश। सत्य शब्द मानो बिश्वास ॥ कहैं कबीर सुनो धर्मदास। बीरानाम करो परकाश ॥

शब्द तिनुकाका ।

जमनियाके डार साहब तोड़ दीजे हो ॥

एक जमनियाकी चौदह डार, सार शब्द ले तोड दीजेहो ॥ सुरत हमारे अजब पियासे, प्रेम अमीरस घोर दीजेहो ॥ गुरु हमारे ज्ञान जौहरी, हीरा पदारथ अमोल दीजे हो ॥ यह संसार बिषैरस माते, भरम किंवरिया खोल दीजे हो ॥ धर्मदासकी अरज गोसांई, जीवनको बंध छोर दीजे हो ॥
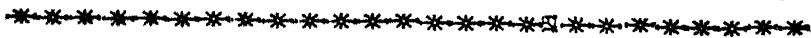
शब्द कंठीका।

पायो निजनाम गलेको हरवा ॥

सतगुरु पटवा अजब लहरवा। छोटी मोटी डोलिया चार कहंरवा ॥ प्रेम प्रीतकी पहिर चुनरिया। निहुर नचो साहब दरबरवा ॥ सतगुरु कूंची दई महलमें। जब चाहो तब खोल केंवरवा ॥ एही मेरो ब्याह यही मेरो गवना। कहें कबीर बहुर नहिं अवना ॥ १ ॥

शब्द नामका।

गुरु पईयां लागों नाम लखाय दीजो हो ॥

जुगन जुगनके सोये मनुवा। दे सत शब्द जगाय लीजेहो ॥ घट अँधियार कछू नहि सूझे। ज्ञानकी दृष्टि खुलाय दीजेहो ॥ बिषकी लहर उठे घट भीतर। अमृत बुंद चुवाय दीजेहो ॥ गहरी नदिया नाव पुरानी। खेयके पार लगाय दीजेहो ॥ धर्मदासकी अरज गोसांईं। जीवन बंध छोडाय दीजे हो ॥ २ ॥

शब्द दीहल प्रारम्भः।

आमिन बिनती बिनवई, सुनहू हो बंदीछोर।
भौसागर मोहिं तारहू, इतना मोर निहोर ॥
भौसागर अहै भयावना, सूझे वार न पार।
झंझर नाव पुरातमा, खेव उतारो पार ॥
कोट कर्म छूटे नहीं, या जिव कीट समान।
भृंगी होय गुरु तारहू, अधम उधारन मान ॥
आसन आदि पुरुषको, धर्मदासको दीन्ह।

चार अंश चौका महि, तामो लीहो चीन्ह ॥
कहें कबीर सुन आमिनी, रहो हमारी आस ।
जीवन पार उतारिहौं, होइ चूरामन दास ॥ १ ॥

दीहल कालज्ञान ।

पांच घरी बायें चले, सोई दहिने होय ।
दस स्वासा सुखमन चले, ताहि बिचारो लोय ॥
आठ पहर जबही चले, पिंगला माहीं स्वांस ।
तीन बरस काया रहे, ता पीछे होय नास ॥
आठ दिना जबहीं चले, स्वासा रविकी ओर ।
दोय बरस काया रहे, प्रान जाय तन छोर ॥
सोरह दिन जबहीं चले, भान दाहिने होय ।
बरस दिना काया रहै, पीछे रहै न कोय ॥
बीस रैन औ बीस दिन, चले दाहिनो स्वास ।
षष्ट मास काया रहे, ता पीछे होय नास ॥
एक मास औ एक दिन, रविके पहरा होय ।
स्वास सरोधा सत्य है, नर जीवे दिन दोय ॥
नहिं चंदा नहिं सूर है, नहीं सुषुमना बास ।
मुख सेती स्वासा चले, पहरमें होय बिनास ॥
कहें कबीर बिचारके, गहो शब्द टकसार ।
सत्यलोक हंसा चले, आवा गमन निवार ॥ २ ॥
निज अनंद घर महलमें, करो सदा सुखबास ।
सो घर चीन्हो संतो, काटो जम के फांस ॥
निज उत्तम घर आपनो, सो तुम चीन्हत नाहिं ।

बिन चीन्हे कहां जैहो, यह बड़ अचरज आहि ॥
अजहूं कहो जो मानहू, उलखो बचन हमार।
दुबधा दुरमत छोड़के, चीन्हों वस्तु सम्हार ॥
पांचतत्व निज मूल है, करता इनहीं मांहिं।
नख सिख तन निज ढारिया, सो कहुं अन्ते नाहिं ॥
अनत होय तो को गढे, यह तन सुंदर रूप।
सकल साज एक बुंदमें, ऐसा ख्याल अनूप ॥
अगिन पवन जल पृथवी, इनमें साहब जीव।
पुहुप मध्य ज्यों बास है, दूध मध्य ज्यों घीव ॥
घरमें जल जलमें घर, बोलनहार संजोग।
सांचे सांचे ढारिया, सांचेमें सुख भोग ॥
तब जो हता सो अब है, फेर फार कछु नाहिं।
बिन स्वरूपको साहब, सो कतहूँ नहिं आहिं ॥
निर्गुण नाथ निरंजना, जिनके पिंड न प्रान।
सो बर बरो सबन मिलि, कामिन रूप जहान ॥
गुरुमुख भई सभाई, सुमरन लागो नेह।
तत्व को तेल चढाय के, भूल गई गुन देह ॥
ज्ञान को मंडप छाइले, ध्यानको भराई ठांव।
बिन अक्षरको मंगल, बिन रसना गुण गाँव ॥
दूलह देव निरंजन, दृष्ट मुष्टसे चीन्ह।
पृथी अकाशके बाहिरे, या बिधि भांवर दीन्ह ॥
भाँवर भई अनंद भये, अजहूं मिलना नाहिं।

तन छूटे गुन टूटे, तब वे गहि हैं बांहिं ॥
ऐसी आशा अवधि बद, गये गुन राह बताय ।
नाम अधार सो रहिगई, दुलहिन अतिसुख पाय ॥
अवध पूजे जब आय के, दुलहिन जोवे बाट ।
तन छूटे वे ना मिले, कौन सहे अपघाट ॥
गोहराये आवे नहीं, बिन देखे की प्रीत ।
आप अपुन चीन्हे बिना, नहिं आवे परतीत ॥
आशा भई निराशा, को आवे को जाय ।
भौजल नदिया भयावना, फिर फिर गोता खाय ॥
अगम अगाह अथाह है, थाह न पावे कोय ॥
सतगुरु थाह थहावे, जीवन मुक्ता होय ॥
जा कारन जग नाचिया, नाना भेष बनाय ।
सो ना मिलौ ना मिलि हैं, नाहक गोता खाय ॥
बिन परचे जिन भूलियो, कहें कबीर बिचार ।
जिनको परचे अब भई, तिनके अटल दीदार ॥ २ ॥
सुखसागर सुख बिलसहू, छांडो दुखकी आस ।
अपन जिवन धन चीन्हहू, सब सुख तुम्हरे पास ॥
जुगल रूप जग भीतरे, कांता कामिनि नेह ।
अष्टधातको जुगल तन, एक प्रान दोय देह ॥
तन सूरत मन मूरत, साहब बोलन हार ।
नर नारी सुख बिलसो, करता सिरजन हार ॥
यह छबि आय सकल बिधी, दुखका मूल बिसार ।

एक बुन्द ते सिरजिया, एकहि है करतार ॥
आपुहि तखत बनावै, पानी पवन संयोग ।
अष्ट धातके महलमें, क्रीडा करे सुख भोग ॥
आपुहि राजा परजा, आपुहि रंक फकीर ।
आप सर्व गुन आगरे, आपुहि गुन गंभीर ॥
आपहि जती सती है, आपुहि है दयापाल ।
आपुहि जोगी जंगम, आप कियो बिस्तार ॥
आपुहि गावै बजावे, आपुहि तोरे ताल ।
आपुहि लखे अपन पौ, आप अपुनमें काल ॥
आपुहि करे करावै, लेय और को नांव ।
आपुहि खलक ऊजरे, आप बसावे गांव ॥
जुग असंखलो शंकर, धरे सुन्नमें ध्यान ।
उनहू न लखो अपुनपो, तू नर क्यों बौरान ॥
ब्रह्मा विष्णु थकित भये, खोजत पार न पाय ।
औरन्हकी मति केतिक, नाहक गोता खाय ॥
शिव सनकादिक नारद, शारद शेष सुरेश ।
अस्तुति करत थकित भये, उनहूं न कहा संदेश ॥
एकै जपे निरंजन, निर्गुन औ निरंकार ।
पांच तत्वके बाहिरे, उनके भये अकार ॥
अलख अपार परम गुरु, अरु मूरत वे पिंड ।
औगह अगह अबीज है, जोत सरूप अखंड ॥
सुध बुध वा पहुँचे नहीं, महा कठिन ऊ पंथ ।

सुमरन साखकी खबर नहीं, कथकथ मरे ग्रंथ ॥
हाथ माथ पग पिंड बिन, केतिक बडो वह कोड ।
किसबिध चेरी आगरी, किसबिध खसम निगोड ॥
कथकथ मुनिजन उडगये, जस भँवें अकाशे गिद्ध ।
चारा वाके भुई धरो, कहा उडे भये सिद्ध ॥
नौ नाथ चौरासी सिद्ध, कोट अनंतन दास ।
उनहूं न लखो अपुनपो, बरमत फिरत उदास ॥
कस्तूरी है कुरंगरंग, चले पवनके बास ।
मृगमध्य नाभी बसे, मृगढूंढे बन घास ॥
कहें कवीर अब कहतहूं, डार भर्मकी मोट ।
अपनो भलो जो चाहऊ, परखलेउ खर खोट ॥ ४ ॥
सुन्न सरोवर भीतरे, तीरथ एक अनूप ।
तेज पुंज जहां झलकई, प्रगटे जोत स्वरूप ॥
कदल कँमलदल अंतरे, रजनी बासर नाहिं ।
अनहद घंटा बाजई, पांच सुन्नके माहिं ॥
कंचन कूट औटाइले, भिन कवहूं नहिं होय ।
परमल बास पलासकी, काष्ट कहे नहिं कोय ॥
काष्ठ माहिं पावक बसे, ज्यों तिल मद्धे तेल ।
जुक्ति बिना नहिं नीकसे, ऐसा अद्भुत खेल ॥
परम पुरुष संग दुलहिनि, खेलै आतम सार ।
एक वरण एक अंक है, एक रूप अनुहार ॥
साहब कवीरके दीहल, सुनियो संत सुजान ।
समुझत सुख उपजे, नातो दुक्ख निदान ॥ ५ ॥

सुकृत फूल गुलाबके, सबघट रहो समाय।
कहु कैसेके पाइये, गुरु बिन लखो न जाय॥
तीन त्रिकुटीके ऊपरे, फुलै सोहंगम फूल।
जहां न धर्मकी आसना, बिन अझर निजमूल॥
चार जोजनके ऊपरे, पुरुष बिदेही पूर।
जगरमगर वह नग्र है, बाजत अनहद तूर॥
अपने ठीका हम खडे, सतगुरु दिया बताय।
खिरकी खोल दिखाइया, राह गगनकी जाय॥
कहें कबीर धर्मदास सों, प्रगट दीहल बताय।
सो हंसा भल पावई, नहिं आवे नहिं जाय॥ ६॥
अचरज देखो कामिनी, कहतेको पतियाय।
अधर साहब हम देखिया, सतगुरु डंडिया फँदाय॥
चंद सूर जहँवां नहीं, जहां न धरनि अकास।
तीन पुरुष मोरे प्रीतम, केहि बिध करों निवास॥
गुरु दरशनके कारने, सरवस देउँ लुटाय।
एक पलकके बीछुरे, अब मोहिं कछु न सोहाय॥
गुरु दरसन हम पायल, छूटल कुल परिवार।
अब जैहों पुर आपने, परख परख टकसार॥
कहें कबीर धर्मदाससों, हिरदे करो बिचार।
अरस परस करो कामिनि, निर्गुण नाह तुम्हार॥ ७॥
दरिया पार हिंडोरना, दीन्हो कंथ बताय।
कोई एक नार सुलक्षनी, हरदम झूलै जाय॥

अरध उरध दोय खंभ हैं, सुखमन लागी डोर ।
जेठी सुर्त सम्हारले, रचल गगन मन मोर ॥
द्वादश केर हिंडोरना, झूलै पांचों नार ।
मेघ घटा घन गरजई, पिय बिन जग अंधियार ॥
अव्वल घरी मोरे जोबन, समुझ न आई मोह ।
मैं सकुची दोय नैनमें, पियसों परी बिछोह ॥
चंद लहर मोरे अंचला, सूर लहर मोरे पीठ ।
मनरे पवन गहि आसन, करले साहब सो डीठ ॥
कंथ हमारे निरगुन, हम अवगुनियां नार ।
एक पलक सुख सेजमें, बात न पुछे हमार ॥
पोहप दीप बसे बालमा, उहांते आयेल संदेस ।
छाडो छाडो जमपुरी, बिहँसि चलो वहि देस ॥
स्वेत बरण एक सुंदरी, शोभा अगम अपार ।
कहें कवीर सुन धर्मनी, आवो लोक हमार ॥ ८
गुरुके वचन मोरे प्रीतम, हरदम खबर जो लेय ।
जो चित अंते जाइहै, हंसि पिया तजि न देय ॥
पार बसे मोरे प्रीतम, दुरबल भई मोर देह ।
पांच भइया संग दारुन, तिनसो छूटल सनेह ॥
जाके आँगन नदिया बहे, सो कस कुवा नहाय ।
जा घर नार सुलच्छनी, सो कस परघर जाय ॥
गृह अंगना नहिं भावई, सुख संपत न सुहाय ।

निर्गुण नाह मोरे आवई, सेज गई कुम्हिलाय ॥
जो साहब बर पाइहों, नइहर धरो उठाय।
सेज बैठ सुख बिलसही, गुरुमुख मंगल गाय ॥
कहें कबीर मैं थाकल, छूटल यह संसार।
चरन कमल चित राखहू, पूरण नाम अधार ॥ ९ ॥
अरे! अरे! बालसंघातिनि, सखी सुनो तुम आय।
हम जो भई परदेसिन, गुरुमुख मंगल गाय ॥
पिया हमारे तीन जने, दुलहिन पांच पचीस।
इन प्रपंच हम भूलिया, जन्म गयो सब खीस ॥
सबे कहावे पीवकी, चहुं दिस पिउ पिउ सोय।
ना जानों या झुंडमें, कौन सोहागिन होय।
है कोई प्रेम पियारी, जस इतनो करलेव।
जुगन जुगनके बीछुरे, पिया मिलन करदेव ॥
सतगुरु लगन लिखाइया, हमे दिहल वा देश।
जा घर उगे न आथवे, पवन नहीं परवेश ॥
गई धिया नहिं बहुरे, सुन ससुरेकी बात।
अन्न पानी नहिं भावई, सीतल भयी सब गात ॥
साहब कबीर कहि दीहल, सुनियो हो धर्मदास।
निर्गुन केर सुलच्छनी, निर्गुण कियो निवास ॥ १० ॥
आरती साजहु दुलहिन, आवहिं कंथ सबेर।
निर्गुण मंगल गावहू, अब जिन लावहु बेर ॥
तन रुइया कर बातियां, मन तिलको कर तेल।

मिलरहु सखी री तू मिलरहू, अपने पिया सुख जान ॥
नइहर आपन कोई नहीं, जासों करो पहिचान ॥
मोरे जीवको भावतो, छायरह्यो वही देस।
मैं विरहिन निशदिन फिरों, कर जोगिनको भेस ॥
तात मात कोइ संग नहीं, संग नहीं सगभाय।
काम न काहू कुटुम्ब सों, चली निसान बजाय ॥
चंद सूरकी पालकी, तेहि चढ बैठी नार।
सुखमन संग सहेलरी, दुलहिन उतरी पार ॥
कमल जो फुले अकासमें, अलि गुंजे चहुंओर।
पियाको ले बैठी तहां, ढुरे सोहंगम चौंर ॥
सोहंगम मूरत मोरे, हिरदे रही समाय।
कहें कबीर धर्मदाससे, सो लीजो दरसाय ॥ १३ ॥

दीहल आगम ज्ञान।

पांच सखी संग दुलहिन, सासुर झगरा होय।
ससुर चोर घर मूसही, कासों कहों दुख रोय ॥
वासर चंदा ऊगही, निसकर ऊगे सूर।
गंग जमुन दोय सम बहे, हंस गवंन बड़ दूर ॥
गंग जमुनके अंतरे, परबत धोल सुजान।
चितवत नजर न आवई, जमको अमल अमान।
ध्रुव मंडल नहिं दरसई, नेत्र गुंज अनुसार।
चित गहि चेतो संतहो, मास परे जमधार ॥
स्वासा सुर नहीं बंदई, केहर बंदन लेय।
आठें पाखके भीतरे, हंस पयाना देय ॥

कायापुर पाटन परचे, याका यही सुभाव ।
चितगहि चेतो कडिहारहो, औ घट लगे न नाव ॥
जैमुन लगन संभारहू, सुमिरन निर्गुन सार ।
पान छत्रपति साजहू, हंस उतारो पार ॥
पच्छिम लहर जुगावहू, पूरब चंदा तान ।
निर्गुन शब्द उचारहू, कबहुँ न होय जिव हान ॥
चंद उदय सुर आथवे, कूच नगारा होय ।
साहब कबीर कर दीहल, देखो शब्द बिलोय ॥ १४ ॥
जुगत जान जुग बांधहू, चार पवन परवान ।
हंस हंस चलो बिहँसत, जम जीतो मैदान ॥
काल कठिन दुर्गदानी, हंसनके घटवार ।
तुरतहिं पार उतारई, जिन गहिले टकसार ॥
चौथे पवन जुग बंधना, पवन बहत्तर डोर ।
हंस हंस चल सत्तपुर, उतरो घाट करोर ॥
दान न मांगें जगातिया, ना रोके घटवार ।
जंबूद्वीप देव लेखा, परख परख टकसार ॥
भौजल नदिया भयावना, सूझे वार न पार ।
अमित पवन वासा रहे, जिनरे गहल टकसार ॥
बिन हंस हंस न पहुंचई, बीचहिं परे भुलाय ।
काल कठिन भरमावई, कामिन परे उरझाय ॥
हंस हंस मिल लेचले, जहां पुरुष रहिवास ।
साहब कबीर कहि दीहल, निर्गुन अधर निवास ॥१५॥

सहतेजी चित चेतहू, सुमिरो नाम अधार।
हंसन पार उतारहू, परख २ टकसार॥
भौसागर बड दारुन, विषके लहर फिराय।
बिन सतगुरु नहिं बांचिहो, सबै काल धरखाय॥
मोरहु नरियर मोरहू, आपन अंस विचार।
काल कठिन दुर्गदानिया, काह करे झखमार॥
सहतेजी चित चेतहू, काल कठिन बल जोर।
लगन साध परमोधहू, पला न पकडै चोर॥
निर्गुन नाम निअक्षर, सुमिरत कर्म कटाय।
साहब कबीर कहि दीहल, सहतेजी समुझाय॥ १६॥
चार कमल चित चेतहू, जहां जीवको बास।
जुग जुग पान सुधारहू, मेटो जमको त्रास॥
कमल तत्त्व चित चेतहू, जिव ना नसे तेह मांह।
लगन सनेह बिचारहू, देउ हंसको बांह॥
जाहि कमल बस जीयरा, ताहि लगन देव पान।
प्रीतम जैमुन जगपती, हंस होय निरवान॥
या बिधि भेद बिचारहू, निरखो तत्व निसान।
तब छुटिहै भौसागरा, जिव कहं पहुंचे यान॥
कमल तत्व नहिं दरसई, जिव धोखे पर जाय।
परमोदिक भये दारुन, राखो काल झुलाय॥
राये बंकेज बिचारहू, जीवन करहु सुधार।
साहब कबीर कहि दीहल, परख परख टकसार॥ १७॥

राज बरन जुग बांधहू, भांवर सती सनेह ।
येही गमन करो दुलहिन, बहुर धरो जिन देह ॥
चंपा पहुम चमेलिया, लाये करेउ बनाय ।
तिलक लिलार सम्हारहू, जमकी दसी छुड़ाय ॥
हंस हंस जुग बांधहू, चौदह पवन लखाय ।
शब्द चित्त गहु दुलहिन, कोटिन कर्म कटाय ॥
जाहि पवन पर शशि बसे, चित गहि रहे चकोर ।
और दिसा चितवे नहीं, ऐसी सुरत वहि ओर ॥
शिव शक्ती जल अर्पई, गुरुके बचन प्रमान ।
जन्म सो अम्मर दुलहिन, जम जीतो मैदान ॥
सीस मटुकिया गहिलहु, मुक्ती देहि सुधार ।
साहब कबीर कहि दीहल, परख परख टकसार ॥ १८ ॥
गुजबरन जुग बांधहू, लगनहिं लगन बिचार ।
निरखके पान सुधारहू, कब हुं न होवे हार ॥
दीप दीप जम बैठल, पलक न लावे भोर ।
अमी बीज जिन बोयल, भये कालके चोर ॥
जम पाटन जे जीतले, तिनपर माँगे लेख ।
गुरुजी लगन सुधारहू, दिखलो जमहिं बिसेख ॥
अमी बीज जिन बोयल, भये कालके चोर ।
सुर नर मुनि सब खायल, काल कठिन बल जोर ॥
शेष सहस मुख बिनवई, ब्रह्मा जमकी ओर ।
साहब कबीर कहि दीहल, लेख देखहु सोर ॥ १९ ॥

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

मनहि आनंद दुलहिन, बिहंसत बोली बात ।
भौसागर बड़ संकट, चौदह लगी जगात ॥
प्रभुजी लगन बिचारले, देखले जमहि बिसेख ।
जिन जम पाटन परसिले, तिनपर मांगे लेख ॥
दीपन दीप जगातियां, पलक न लावे भोर ।
अमी बीज जिन बोयल, भये कालके चोर ॥
सुर नर मुनि सब अटके, काल कठिन बलजोर ।
शेष सहस मुख बिनवहीं, ब्रह्मा जाके चोर ॥
साहब कबीर कहि दीहल, लेखा देव चुकाय ।
जमको मस्तक तोरके, अभे निसान बजाय ॥ २० ॥
बासर लगन बिचारहू, कटे कर्मकी डोर ।
सुखसागर पहुंचावहू, जमसों तिनुका टोर ॥
राज बरन होती कामनी, तासम होते कान्ह ।
कर्म काट दे भांवर, जमकर मरदोमान ॥
चंद लगन चित चेतहू, उतरो भौजल पार ।
निरख परख गुरु परसिहो, परख परख टकसार ॥
धरती रथ चढो कामनी, कटे कर्मके फंद ।
हंस हंस जुग बांधहू, अब जिव करहु अनंद ॥
सहतेजी शरनागती, कोटन कर्मकटाय ।
साहब कबीर कहि दीहल, अभै निसान बजाय ॥ २१ ॥
पान छत्रपत कर धरो, अनभो संधि बिचार ।
बिषम त्रिक्ष जमकी दसी, रेख गुंज निरवार ॥

जुगकी रेख सम्हारहू, पान अखंडित सार।
जाते हंस न बीगरे, चंद लगन बिस्तार॥
चार तत्व घटमें धरो, पांचें लेहु समोय।
जेहि अक्षरते जिव भयो, ताते हंसा होय॥
वहि अक्षरते सब भयो, लोक दीप अस्थूल।
ताको चीन्हो संतो, वहि अक्षर निजमूल॥
चार कमल घट भीतरे, परखो संत सुजान।
जामें बासा जीवको, तहां सुधारो पान॥
आन कमलमें जिव बसे, अंते पान प्रकास।
अधर पान जम लेतहै, जीव परे जम फाँस॥
चारों मोहर सुधारहू, अंक छत्रकी छाँह।
लक्षन लगन बिचारिके, देहु हंसको बांह॥
सतगुरु संधि सम्हारहू, सब बिधि पूरन होय।
सुरत निरत गहि धर्मनी, देखो शब्द विलोय॥
पान छत्रपति साजहू, जुगकी रेख सुधार।
कहें कबीर धर्मदाससो, हंस उतारो पार॥ २२॥
सुमिरहु कामिन सुमिरहू सुमिरहु आपन नाह।
अधर साहब हम देखिया, जहवां धूप न छाँह॥
बिनही घटा घन गरजई, बिन जल तिरथ नहाय।
देखतही सुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाय॥
बिन पानीकी जीवन, बिन दीपक उजियार।
ऐसो निर्गुण देखले, परखं शब्द टकसार॥

साहब कबीर कहि दीहल, अग्र सोहंगम फूल ।
अब मोरे जन्म सुफल भये, पाये मुक्तिको मूल ॥ २३ ॥
कौन हंसको खेल है, कौन मुक्तिको दाव ? ।
कौन अमृतको कूप है, कौन वज्रको घाव ? ॥
सुरत हंसको खेल है, भक्ति मुक्तिको दाव ।
छिमा अमृतको कूप है, शब्द वज्रको घाव ॥
बन बन ढूंढत का फिरे, अंदर फूली बेल ।
तोहीमें तेरो धनी, ज्यों तिल मद्धे तेल ॥
जब चाहे तब देखिले, अष्ट कमल के कोट ।
सतगुरु मिले तो पाइये, साहब तृणके ओट ॥
कहें कबीर यह तत्व है, सब तत्वनको सार ।
जुगन जुगन चल आयेऊं, बोलनहार अपार ॥ २४ ॥
सतगुरु कहे चेतावनी, कौन अमीको अंक ? ।
जासो हंसा बांचई, जम सो रहे निशंक ? ॥
कौन शब्दकी लेखनी, कौन वरनको पान ? ।
कौन नाम अगुवा भये, कौन बचन परवान ? ॥
कौन नामको बीज है, कौन नाम की डोर ? ।
कौन शब्दकी बैठक, निरखो बस्तु अंजोर ॥
धर्मदासकी बीनती, सतगुरु देव लखाय ।
कौन दीप पर हंस है, बहुर न आवे जाय ॥ २५ ॥
सुनियो सुर्त चेतावनी, अत्र अमीको अंक ।
जासो हंसा बांचई, जम सो रहे निशंक ॥
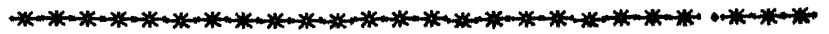
अमी शब्दकी लेखनी, सत्त बरनको पान ।
निहअक्षर निज बीज है, पुरुष बचन परमान ॥
सुकृत नाम अगुवा भये, सत्तनामकी डोर ।
मूल शब्द पर बैठिके, निरखो वस्तु अंजोर ॥
साहब कबीर कहि दीहल, सुन सुकृत चितलाय ।
पुहुप दीप पर हंस है, बहुर न आवे जाय ॥ २६ ॥
अगम चरित चेतावनी, अधर अनूपम धाम ।
अजर अमर है सोई, सो वह निर्गुन नाम ॥
कौने घर होय सुमिरन, कौने घर होय ध्यान ? ।
कौने घर होय देखहू, कौने घर अस्थान ? ॥
सहज सुरत घर सुमिरण, त्रिकुटी संगम ध्यान ।
अजपा घर होय देखहू, हिरदै कमल अस्थान ॥
कौन जुगत गढ साजहू, कौन जुगत गढ लेहु ? ॥
कौन जुगत गढ तोरहू, कौन शब्द मन देहु ? ॥
मूल बांध गढ साजहू, आपा मेट गढ लेहु ।
गुरुके शब्द गढ तोरहू, सत्त शब्द मन देहु ॥
सहजे सहजे देखिये, सहजे सुरत समाय ।
कहवे की कछु ना रही, देखे मन पतियाय ॥
साहब कबीर कहि दीहल, रहन गहन समुझाय ।
बूझे संत बिचारिके, गुरुमुख मंगल गाय ॥ २७ ॥
पांच तत्वके भीतरे, गुप्त वस्तु अस्थान ।
बिरले मरम कोइ पावई, सतगुरु बचन प्रमान ॥

दिल अंदर दीदार है, बाद भर्मे संसार ।
सतगुरु शब्द के मसकला, मांज दिखावन हार ॥
महल लेत कोई सूरमा, बाजे अनहद तूर ।
बिना पिंडका पुरुष है, झिलमिल दरसे नूर ॥
सहज समाधी लगि रही, मनका छूटा मैल ।
अनहद बाजा बाजते, सहजे पहुंचा गैल ॥
बिना पांव को पन्थ है, बिन बस्ती को देश ।
बिना पिंडको पुरुष है, कहैं कबीर संदेश ॥ २८ ॥

पारब्रह्म जासों कहो, ताहि निरंजन नाम ।
तहवांसे मन ऊपजो, तीन लोक लिये ग्राम ॥
पारब्रह्म के अगुवा, मन राजा सरदार ।
जो चाहे सोई करो, कोइ न पावे पार ॥
चौरासी उपजावई, आशा बीज जमाय ।
दसो जन्म राजा भये, ममता अमल चलाय ॥
तीन लोकके भीतरे, सब जिव भये किसान ।
चौदह काल जगातिया, मारग रोक समान ॥
तीन लोक के बाहिरे, जहँ सम्रथ को देश ।
चेतो हंसा चित धरो, छाड सकल भर्म भेश ॥
पारब्रह्म की महिमा, सुनो संत चितलाय ।
साहब कबीर के दीहल, परख परख टकसार ॥ २९ ॥

# अथ आरतिदर्शन प्रारम्भः ।

ज्ञान आरती अमृत बानी ।
पूरन ब्रह्म लेहु पहिचानी ।

त्रिदेवा मिलि ज्योति बखानी । निरंकारकी अकथ कहानी ॥ यहि आशा सबही मिलि ठानी । भरमि भरमि मुये नर प्रानी ॥ दृष्टि विना दुनिया बौरानी । साहेब छाडि यम हाथ विकानी । कहहि कबीर कोइ संत सुजाना । जिन जिन शब्द हमारा माना ॥ १ ॥

कैसे मैं आरति करो तुम्हारी ॥
महामलिन साहब देह हमारी ॥

मैलेसे उपज्यो संसारा । हौं छुतिया गुन गाऊँ तुम्हारा ॥ झरना झरे दशो दिशि द्वारे । कैसे मैं आवों निकट तुम्हारे ॥ जब तुम देहु अग्रकी देही । तब हम होइब नाम सनेही । मलयागिरिमें बसे भुजंगा । विष अमृत गो एके संगा ॥ तिनुका तोरि देहु प्रवाना । तब हम पाएब पद निरबाना । धनी धर्मदास कविर बलगाजे । गुरु प्रताप आरती साजे ॥ २ ॥

अखण्ड आरती खण्ड न होई ।
कालहिं मारी रसातल खोई ॥

खण्डित पिंड इकइस ब्रह्मण्डा । खंडित नदी अठारह गण्डा ॥ खंडित रघुपति खंडित रावन । खंडित कृष्ण वीर बलि बावन ॥ खंडित धरती पवन अकासा । खंडित चांद सूरज कैलासा॥ खंडित जहँलगि सकल पसारा । खण्ड अखण्ड कबीर पुकारा ॥ ३ ॥

मंगल रूप आरती साजे ।
अभय निशान ज्ञान धुनि बाजे ।

निसि बासर जहँ सूरज न चन्दा । परम पुरुष जहां करे अनन्दा ॥ अछै वृक्ष जाकी अम्मर छाया । प्रेम प्रकास अमृत फल पाया ॥ जरा मरनकी संशय मेटो॥ सुरति संतापन सतगुरु भेंटो॥ तन मन धन जिन्ह अरपन कीन्हा । परम पुरुष परमातम चीन्हा । कहै कबीर हिरम्बर होय। निरख नाम निज चीन्हे सोय॥४॥

आरती सत कबीर तुम्हारी ।
दया करो जाऊँ बलि हारी ॥

पहिली आरति पुहुमी आये। काशी प्रगटे दास कहाये॥ दूसर आरति देवल थपायो। आसा रोपि समुद्र हटायो॥ तीसर आरति चरण जलढारे। हरिके पंडा जरते उबारे॥ चौथी आरति तुरतहि धाये। तोर जंजीर तीर ले आये॥ पांचे आरति बलख सिधाये। चौरासी सिधके बन्ध छुडाये॥ छठईं आरति अविगती धारे। मुरदासो जिन्दा करडारे ॥ सतयें आरति पीर कहाये । मगहर आमी नदी बहाये ॥ आठें आरति मंडल सिधाये। जन ज्ञानीको

संशय मिटाये ॥ कहँ लगि कहौं वरनि नहिं जाय। धर्म-
दास आरती सच पाय ॥ ५ ॥

आरती कीजे बन्दीछोर समरत्थकी।
चरन शरन सतनाम पुरुषकी ॥

आरती कर पुहमी पग धारे। सतयुगमें सतनाम पुकारे॥ आरति कर मुख मंगल गाये। त्रेता नाम मुनींद्र धराये ॥ कर आरति जग पंथ चलाये। द्वापरमें करुनामय कहलाये॥ आरति युग २ बांधे आशा। कलयुग केवल नाम प्रकाशा ॥ चारों युग धरे प्रगट शरीरा। आरति गावें बंदीछोर कवीरा ॥ ६ ॥

आरती करहिं धनि धर्मदासा।
पांच तत्त्व मुख भेद प्रकाशा ॥

प्रथमहि वायु तेज है पानी। रहत अकास निरंतर जानी॥ गगन वायु गरजे असमाना। निज घर नित्य ध्वजा फहराना॥ कोट ब्रह्मा जहाँ कथे पुराना। कोट रुद्र जहाँ धरहीं ध्याना॥ कोट विष्णु बिनवे कर जोरी। औरहु देव तेतीस करोरी॥ शेष सहसमुख निशि दिन गावे। स्तुति करे पार नहिं पावे॥ जो गुरु मिले तो भेद बतावे। पांच तत्त्व मुख भेद लखावे॥ कहै कवीर-हंसा पतियाय। धर्मदास आरती सचुपाय ॥ ७॥

ऐसी आरती देउँ लखाई।
निरखत अधर ज्योति फैलाई॥

गहु निरच्छर गहु निज डोरी । धरमरायसो तिनुका तोरी ॥ जुग बांधो निरखो टकसारा । जासें उतरो भव-जल पारा ॥ कोट जनमको कर्म कटाये । चौदह काल जीत घर आये ॥ हीरा कोटि होय परकाशा । विना सुगंध पुहुपकी बासा ॥ चन्द्र लगन गहि करो प्रकाशा । चौदह यम तब माने त्रासा॥धरती धर्मनि उदित अकाशा । जापर सूरज करे प्रकाशा ॥ कहै कबीर सुनो धर्मदासा । जम जालिम माने त्रासा ॥ ८ ॥

आरति नाम निरन्तर भावे ।
तेतीसो मिलि मंगल गावे ॥

चितकर थार ज्योति जिव गाजे । शब्द अनाहद झालर बाजे ॥ घटहीमें यंत्र बजावइ बाजा । सतगुरु मिले भय सब भाजा ॥ बिन करताल पखावज बाजे । श्वेत सिंघासन छत्र विराजे ॥ कर सनमान जीव भये आगे । ( साहेब ) कबीर गुरुके चरननलागे ॥ ९ ॥

आरति सतनामकी कीजे ।
जीवन जनम सुफल कर लीजे ॥

अभ्रकी थाल अनूपम बाती । ज्योति प्रकाश बरे दिन राती ॥ मुरली ध्वनि अनूपम बाजे । शब्द अनाहद धुन तहाँ गाजे ॥ त्रिकुटी संमग झलके हीरा । चरन कमल चित राखु शरीरा ॥ सत सुकृत आरति चित दीजे । तन मन धनहिं निछावरि कीजे ॥ १० ॥

जाघर आरति दास करत हैं ।

जनम जनमको पाप हरत हैं ॥

कदलीदल पुहुपके द्वारा । सत सुकृत जा घर पग धारा ॥ परिमल अग्र गुलाल सुवासा । जा घर हंस करे सुखवासा ॥ अनहद ताल पखावज बाजे । सप्त सिंघासन छत्र विराजे ॥ नाम एकोतर सुमिरे जबहीं । सतगुरु बैठ सिंहासन तबही ॥ तत्वमता नरियर प्रवाना । सतगुरु कृपा होय निर्वाना ॥ नरियर मोरत बास उडाई ॥ पल एक साहेब-विलमें आई ॥ सतगुरु दया प्रगट जब होई । पाय प्रसाद महाफल सोई ॥ महा प्रसाद तत्त्व विधि पावे । कहैं कबीर सतलोक सिधावे ॥ ११ ॥

मंगलरूप आरति होई ।

शब्दसुरति चितराखु समोई ।

दीप अमोल अगम उजियारा । संत पुरुष कीन्हो विस्तारा ॥ हंस हिरम्बर शब्द समाई । वृक्ष गुरुम्बर बैठक पाई ॥ शीतल नीर सुरति भरलावे । हंस सोहंगम चौंर ढुरावै । मणि माणिक हंसनकी पांती । शब्द स्वरूपसुरतिकीकांती ॥ हंस सुजन जन आज्ञाकारी । हंसन काज देह निज धारी ॥ मन बच कर्म जो आरति साजे । कहै कबीर सतलोक विराजे ॥ १२ ॥

आरति सतगुरु साहेब कबीर बंदी छोरकी । करत किलोल हंस पति आगर आनंद विमल विनोदकी ॥

त्रिगुन तेल पंच मुख बाती मानिक ज्योति अपार । हीरन धार संजोय सकल विधि पूरन नाम अधार ॥ संगति सकल सुकृत भये ठाढे कहत संदेश अपार । जाकी सुरति भई तन व्याकुल अति आतुर दीदार ॥ बाजत ताल मृदंग झालरी वीना शब्द रसाल । धुधुक धुधुक जहां तुरही बाजे गरजत शब्द विशाल ॥ पूरण पुरुष सिंघासनराजे बहु शोभा इस्थीर । धर्मदास आरति कर जोरे गावहिं साहब कबीर ॥ १३ ॥

आरति निज नाम तुम्हारी ।
अविगति अगम अलेख मुरारी ॥ १ ॥

पहली आरति पियाजीको पाये । रोम रोममें अलख लखाये ॥ २ ॥ दूसरी आरति दुतिया नहीं कोई । जहाँ देखो तहाँ हरिहरि होई ॥ ३ ॥ तिसरी आरती त्रिगुण नाई । चौथे पदमें रहे समाई ॥ ४ ॥ चौथी आरति चहुँ दिशि भरपूर । गगन मंडल बाजे अनहद तूर ॥ ५ ॥ पंचयें आरति पूरन प्यार । कहहिं कबीर सो सबसो न्यार ॥ १४ ॥

संझा आरति सुमिरण सोई ।
सुमिरण करत महाफल होई ॥ १ ॥

पहिली आरती प्रेम प्रकाशा । कर्म भर्म सब कीन्ह विनाशा ॥ २ ॥ दूसरी आरति दिलहीमें देवा । योग युक्तिसे करले सेवा ॥ ३ ॥ तीसरि आरति त्रिभुवन सूझै । गुरुगमज्ञान अगोचर बूझै ॥ ४ ॥ चौथी

आरति चहुँयुगपूजा । गुरु सम देव और नहीं दूजा ॥९॥ पचयें आरति पद निरवाना । कहहीं कबीर (हंसा) लोक-समाना ॥ १९ ॥

आरती परम पुरुष निजदेवा ।
अनन्त कोटि जहां लावहिं सेवा ॥ १ ॥

ओंकार घंटाधुनि बाजे सतगुण विष्णु आरती साजे ॥ २ ॥ शेष महीकर कीन्हों भारा । सूर असं-ख्वन ज्योति अपारा ॥ ३ ॥ शिव सनकादिक मुनि ऋषि सारै । उस्तुति ब्रह्मा बेद उचारै ॥ ४ ॥ ध्रुव प्रहलाद चँवर लियेढारे । धूप दीप गणपति बिस्तारे ॥५॥ वरुण इन्द्र पुहुपनकी माला । नाना रूप अनंत विशाला ॥ ६ ॥ व्यास वशिष्ठ कपिल सत धारी । विविधिविधान सब साज सवाँरी ॥ ७ ॥ शुकदेव नारद वेनु बजावैं । साहेब कबीर आरति गावैं ॥ १६ ॥

ऐसी आरति घुरै निसाना ।
सुनहु चितदै सन्त सुजाना ॥ १ ॥

जिह्वा वचन झूठ मति भाखो । सत्य शब्दमें चित दे राखो ॥ २ ॥ परधन त्यागो और पर नारी ॥ शब्द अनाहद लेहु विचारी ॥ ३ ॥ काम क्रोध छाडो यह क्षण । हंस दशा धरि होहु सुलक्षण ॥ ४ ॥ तनमनसे परचे करु भाई ॥ बिन परचे यम हाथ बिकाई ॥ ५ ॥ छाडहु दूर दुरकेर बसेरा । उल्टा मिलै सो हंस हैं मेरा ॥ ६ ॥ पक्ष वेष तजो चतुराई । सतसुकृत तब

होहि सहाई ॥ ७ ॥ आशा तृष्णा तजहु विकारा। सो ज्ञानी कहिये तत सारा ॥ ८ ॥ संत विवेकी शीतल अंगा। अगर वास जस चन्दन संगा ॥ ९ ॥ प्रेम प्रकाश भक्ति लौलीना। निर्मल हीरा न कबहुँ मलीना ॥ १० ॥ निर्मल सो जेहि संशय नाहीं। आपा मध्ये आप समाहीं ॥ ११ ॥ कहहिं कबीर संतन सुखदाई। अजर अमर इस्थिर घर पाई ॥ १२ ॥ १७ ॥

ऐसी आरती गुरुहिं लखाइयी।
निरखत शब्द सुरति ठहरायी ॥ १ ॥

ऐसी आरति आतम पोर। आगे पला न पकडे चोर॥२॥ गहो शब्द निहच्छर डोडी। धरमरायसे तिनकातोडी॥३॥ तन धरती चित लग्यो अकासा। विना पुहुप सुगंध निवासा ॥ ४ ॥ उलटि अगोचर अमीरस चाखे। दरिया पार सुरति लै राखे॥५॥ अनन्त जनमकी उरझ मिटावे। चौदह काल जीति घर आवे ॥ ६ ॥ कहहिं कबीर भाग नर तेरा। सतगुरु किये अमर पुर डेरा ॥ ७ ॥ १८ ॥

कैसे मैं आरति करौं तुम्हारी।
महा मलिन साहब देह हमारी ॥ १ ॥

छूतहिंसे उपजे संसारा। मैं छुतिआ गुनगाउँ तुम्हारा॥२॥ झरना झरे दशो दिशि द्वारा। कैसे मैं आऊँ साहब निकट तुम्हारा ॥ ३ ॥ जो प्रभु देउ अग्रकी देही। तब हम पायब ( साहेब ) नाम स्नेही॥४॥ मलयागिरिपर

बसे भुवंगा। विष अमृत रहु एकै संगा ॥ ५ ॥ तिनुका तोडि दियो प्रवाना। तब पाये (साहेब) पद निर्वाना॥६॥ धनि धर्मदास कविर बल गाजे। गुरू प्रताप आरती साजे ॥ ७ ॥ २ ॥ १९ ॥

आरती सतगुरु करौं तुम्हारी।
कलह कल्पना हरहु हमारी ॥ १ ॥

पहिले पुरुष पीछे भौ नारी। तेहि पाछे तिहुँ लोक सँवारी ॥ २ ॥ जो नारी सो अंग छुवावे । सो चौरासीमें भर्मावे ॥ ३ ॥ जो नारी सो न्यारा रहैं । ज्ञान ध्यान योग सब दहैं ॥ ४ ॥ साहेब कबीर कहे समुझाई । आपन आपनि निवेरहु भाई ॥ ५ ॥ २० ॥

सिरपर राखिय सोई परमगुरुदेवा।
सुमिरन भजन आरति पूजा, सन्मुख करले सेवा ॥ १ ॥ भव नदिया बिन नावरी, गुरु अधर उतारे पार। बनसे भी ऊपर ले राखे, घटहीमें निज सार ॥२॥ मान सरोवर मंजन करिले, त्रिबेनीके घाट। अनहद धुनि सुनि पांचो मोहे, खुलिगै ज्ञान कपाट ॥३॥ अजपा जाप जपे बिनु जिभ्या, मूल मंत्र अवराधि। स्थिर ध्यान दृढ आसन, लागे सहज समाधि ॥४॥ चांद सूर निसि वासर नहीं, नहिं तहां विद्यावेद। साहेब कबीर मिले सुखसागर, विरलापावे भेद ॥ ५ ॥ २१ ॥
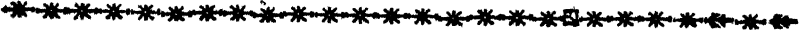
आरति कीजे आतम पूजा ।
प्राण पुरुष सो अवर न दूजा ॥ १ ॥
ज्ञान प्रकाश दीप उजियारा । घट घट देखो प्रान पियारा ॥ २ ॥ भाव भक्ति कर और न भेवा । दया स्वरूपी करिले सेवा ॥ ३ ॥ सत संगति मिलि शब्द विराजे । धोखा द्वंद भर्म सब भाजे ॥ ४ ॥ काया नगर थिर होय भाई । आनन्द रूप सकल सुखदाई॥५॥ शून्य ध्यान सबके मनमाना । तुम बैठो आतम-अस्थाना ॥ ६ ॥ शब्द सुरति ले हृदय बसाओ । कपट क्रोधको दूर बहाओ ॥ ७ ॥ कहहि कबीर जिन रहनि सम्हारी । सदा आनंद रहते नर नारी ॥ ८ ॥ २२ ॥

सत स्वरूपकी आरति कीज ।
साहब चीह्नि चरण चित दीजे ॥ १ ॥
चिन्हों चिन्हों मन चित लाई । बिन चिन्हे कह जाओ भाई ॥ २ ॥ जिन्ह चिह्न तिन निर्मल अंगा ॥ विन चिह्नै ते भये पतंगा ॥ ३ ॥ जब लग साहेब सो नहिं भेंटा । तबलग भाव भक्ति सब हेठा ॥ ४ ॥ शून्य सेज आरति करई । बिबा कन्त का पूरी परई ॥ ५ ॥ भूषण पहिरो रूपकी रासी । फूलन सेज महलमें प्यासी ॥ ६ ॥ आरति लिये कन्तको जागे । पति बिनु प्रेम कहो केहि लागे ॥ ७ ॥ केतिक पंडित मुनिजन योगी । केतिक नागे भक्त वियोगी ॥ ८ ॥ झूने झूने बहुत

जमाती । विन दुलहेकी कवन वराती ॥ ९ ॥ खोजो गगन शून्य ब्रह्मंडा । सात द्वीप पृथ्वी नव खंडा ॥१०॥ ग्रह माया तजि भये दिवाना । आप अपन पौ मर्म न जाना ॥ ११ ॥ जिनिके दूसर असरा नाहीं । आपामध्ये आपहिं आहीं ॥ १२ ॥ चेत चेत संशय कर दूरी । घटही माहिं संजीवन मूरी ॥१३॥ साँचे सतगुरुकी बलिहारी । जिन यह कुंजी कुलफ उघारी ॥ १४ ॥ नख सिखते पूरण भरपूरी । ते साहब को कहिये दूरी ॥१५॥ निरखि निरखि अमृतरस पीजे । तन मन शीश सब अर्पण कीजे ॥ १६ ॥ दिलदरियामें है हिरामनी । काया कवीर बोलता धनी ॥ १७ ॥ लौकी बाती पवनसे बारी । दीपक ज्ञान-शब्द उजियारी ॥ १८ ॥ कहहिं कवीर यह ख्याल हमारी । बिनु समुझन हम सबते न्यारी ॥ १९ ॥ २३ ॥

आरति कीजै अन्न ब्रह्मकी ।
सकल कला सुख प्रान पतिकी ॥ १ ॥

धनि धनि अन्न धनि धनि पानी । अन्नकी भक्ति नारायण ठानी ॥२॥ अन्न भयो गिरधरही ध्यान । अन्नमें बसे सबहिके प्रान ॥ ३ ॥ अन्न अहेरी पुरवे जाला । अन्नहिं जिआवे अन्नहिं काला ॥ ४ ॥ अन्नहिं गाया अन्नहिं गावे । अन्न बिना मुख बात न आवे ॥ ५ ॥ अन्न भक्ति ले कीजे कामा । ( कहत कवीर ) तबहीं रीझे आतमरामा ॥ ६ ॥ २४ ॥
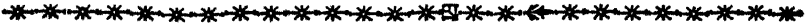
आरती अन्न देव तुम्हारी ।
जाते काया पले हमारी ॥ १ ॥

जलकी उत्पति यह संसारी । भोजन करे सकल नर नारी ॥ २ ॥ ब्रह्मा बिष्णु और महादेवा । यह सब करे अन्नकी सेवा ॥३॥ राजा प्रजा और मठधारी । ये सब आशा जिये तुम्हारी ॥ ४ ॥ पीर औलिया अजमत धारी । सुर नर मुनि सब अन्न अहारी ॥५॥ अन्न बनावे अन्न भुलावे । अन्न बिना मुख बात न आवे ॥६॥ अन्न अहारी पूर्व जियाला । अन्न जिआवे अन्नही काला ॥७॥ जहां जहां लागी अन्नकी ढेरी । सुर नर मुनि सब बैठे घेरी ॥ ८ ॥ दयाकी दीप भावकी बाती । सब अन्नको आरति साती ॥९॥ अन्न आरति आतम पूजा । कहहिं कबीर देव नहिं दूजा ॥ १० ॥ २९ ॥

साखी—अन्न नाम निज मूल है, सोई हमारा कीन्ह ॥
एक अन्नको बीछुरे, कोइ न काहू चीन्ह ॥ १ ॥

आरती दर्शन समाप्त ॥

सत्यनाम ।
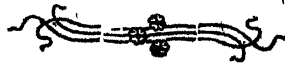
# आवश्यक विज्ञप्ति ।

## ( चौका विधानके दूसरे भागके विषयमें )

अबतक जो चौका विधानकी रमैनी आदिक आयी हैं वह छत्तीसगढवालोंके क्रमसे; यथार्थमें यह विधान पूरा नहीं है, क्योंकि, छत्तीसगढी गुरुवाई करनेवालोंने, चौका आदि धार्मिक सब कार्य्योंको अपने जीवन निर्वाहका मार्ग बना रक्खा है, इस प्रकार धर्मके जितने नियम हैं व्यापारके रूपमें प्रवर्तित होगये हैं । यही कारण है कि, चौका करनेको सभी तय्यार रहते हैं, किन्तु चौका क्या वस्तु है ? इससे क्या लाभ है ? इसके करने कराने वालोंको चौकेसे क्या बोध होना चाहिये ? नारियल और पानकी प्रधानता कबीर पंथमें क्यों है ? इत्यादि धर्मके एक भेदकी भी खबर उनको नहीं है । चौका करनेवाले लोग तो समझते हैं चलो मेरा काम होगया, चौका करनेसे कुछ न कुछ तो मिलही गया और चौका करानेवाले चौकाके महातमको सुनकर समझते हैं, चौका करा लेनेसेही मेरा सब पातक दूर हो जायगा—इससे जैसे तैसे करके घरमें जोत बरवा देनाही वह अपना महान कार्य्य समझते हैं, इसीसे देने लेनेमें वह भी अपनी शक्तिभर कोरे कसर करनेमें नहीं चूकते । इसका परिणाम—

गुरु लोभी शिष लालची, दोनों खेलें दाव ।
दोऊ बूडे बापुरे, चढि पाथरकी नाव ॥

के—अनुसार गुरु अलग शिष्यकी निन्दा करता है कि, इसने कुछ दिया नहीं ? शिष्य अलग कहता है कि, महंत बडा लोभी है, इसने बडा हैरान किया । यह नित्यकी बातें हैं यह नित्य देखनेमें

आती हैं और जो लोग धर्मको धर्मके रूपसे देखते हैं, वह धर्मके नियमोंको पूर्ण रूपसे पालन करनेका प्रयत्न करते हैं ।

इन्हीं सब बातोंको विचारकर, मैंने इसके आगे चौका विधानके पूरे पूरे रमैनी पद आदि देदिया है, जिसमें पूरा विधान चाहने वालोंको पछताना न पडे, और इस शब्दावलीकोभी दूसरी शब्दावलियोंके समान अधूरी न समझलें ।

इसके आगे जो चौका विधानके पद आदि लिखे जाते हैं वे रोसडा—के मुहल्ला लक्ष्मीपुर बगीचाके कबीरमन्दिर के चौका विधानका है । यों तो भारतवर्षही क्या पृथ्वीके प्रत्येक भागोंमें कबीरपंथियोंका स्थान है और बडे बडे धनी मानी महंतोंके बडे २ स्थान वर्तमान हैं किन्तु, मेरी जानमें इस समय रोसडाके लक्ष्मीपुर बगीचेका स्थान कबीरपंथके आदर्श स्थानोंमें सर्वश्रेष्ठ पद भोग रहाहै । पूर्व विहार आदिमें भी सब स्थानके बडे महंत सन्त लोग उस स्थानकी प्रतिष्ठा करते हैं ।

वहाँके प्रधान महंत साहब श्री १०८ श्री महंत काशीदासजी साहब ब्राह्मणोंकी सर्वोच्च कान्यकुब्ज शाखामें जन्म लेकर भी, इतने निरभिमान और जात पातके भ्रमसे रहित हैं कि, कोई भी मनुष्य उनके दर्शन कर और उनसे मिलकर, लेशमात्र भी भेद भाव अनुभव नहीं करता । इसका यह आशय नहीं है कि, आप मर्यादाका उलंघन कर कूडापंथी चलाते हैं, और हिन्दू जातिकी मर्यादाको त्यागकर सबको एकमें मिलाते हैं और सबका खान पान एक कर देते हैं, नहीं! कदापि नहीं, किन्तु आपके—मर्यादापालनेमें बडे दृढ होनेपर भी, आपके शीलस्वभाव दया वृत्ति और सच्चे प्रेमके कारणही जो आपके समक्ष आता है, वह आपकी आज्ञा और आचार विचा-

रको ग्रहण करना अपने श्रेयका कारण समझता है । आपके स्थानसे निकले हुए सैकड़ों स्थान हैं, जिनमें सर्व जाति और वरणके महंत संत अपने अपने धर्म तथा व्यवहारकी मर्यादामें रहकर, देशकाल वस्तुका विचार रखते हुए, अपना और संसारका कल्याण कर रहे हैं । कहांतक कहूँ ! ! आपके इन्ही सब गुणोंपर मोहित होकर, सलोनीके मेलेमें पं० श्रीदयानाम साहबके न आनेपर, सर्व सन्त महंतोंने आपहीको सभाका सभापति चुनकर सभाके कार्य्यको निर्विघ्न समाप्त किया था । जिसपर उस सभामें जानेवाले सर्व सन्त महंत सेवक सतियोंके साथ पं. श्री दयानाम साहब आप पर भी बहुत नाराज होगये थे । किन्तु ऐसा होनेपरभी, आपके धर्म भाव, सौजन्यता, कार्य्यकुशलता, दृढता आदि गुणोंके कारण आपकी इच्छा न रहते हुए भी, पं. श्री दयानाम साहबनेही बडे आग्रहसे आपको बुलाकर, अपने प्रधान दीवानका पद देदिया था । अब जब कि, पं. श्री दयानाम साहब सत्यलोक सिधारगये हैं, तब कोदरमालके कबीर पंथी महासभामें, जहां एक लाखसे भी अधिक सन्त महंत सेवक सती इकट्ठे हुए थे, सर्वकी सम्मतिसे आपही वंश गद्दीके अधिकारी चुने गये है । आपको इस बडाईकी इच्छा न रहनेपर भी, सर्व वेषोंका कहना मानकर अनेक कठिनाइयों और अडचनोंसे पूर्ण इस पदको आपने स्वीकारकर लिया ।

इस प्रकार आचार्य्य स्थानीय पद पाकरभी आप इतने निर्मान और निर्मोह हैं कि, इस पद तककी भी ममता आपको नहीं है, केवल धर्म समझकरही आप अपना कर्तव्य करते चले जाते हैं ।

इस पदपर आनेके कितने पहलेही, निवृत्तिमें सत्संग और विचार परायण रहने और आगेके लिये स्थानको सुरक्षित रखनेके हेतु, कुछ जायदाद सहित स्थानको आपने कबीर साहबके नामसे (समर्पण)

करके, रजिष्ट्री करा दी है और स्थानपर पश्चात्के लिये ट्रस्ट्री ( पंच ) नियत कर दिया है तथा व्यवहारके भारसे अवकाशके लिये, अपने समक्षही महंत श्रीअवधदासजीको अपना उत्तरा धिकारी बना दिया है।

श्रीमहंत अवधदासजी साहब भी, योग्य गुरुके योग्य शिष्यके समान, अपने पदका कर्तव्य पूर्णरूपसे निवाह रहे हैं. आपको सहायक भी वैसेही योग्य मिले हैं।

स्थानके समुचित प्रबन्धमें जिन लोगोंके हाथ हैं और जिनकी सज्जनता और सुप्रबन्धसे स्थान अपनी मर्यादाकी रक्षा करके आदर्श-स्थान बना हुआ है उनमेंसे—

( १ ) पहले श्रीमान् मैनेजर साहब श्री सर्यूदासजी साहब हैं। आप बहुत दिनोंसे स्थानके मैनेजर रहे हैं और इस समय वृद्ध होकर एक प्रकारसे अवकाश ग्रहण करनेपर भी, आवश्यकता होनेपर सब कामोंको देखते और उनका प्रबन्ध करते हैं । आप पूर्ण अनुभवी वैद्यराज्य हैं, आपके पास रससे लेकर साधारण काष्ठादि तककी अनेक औषधियाँ सदा तय्यार रहती हैं, स्थानकी मूर्तियोंके तो आप प्राण दाताके समानही हैं, बाहरके भी अनेक दुखियोंके दुख दूर करनेमें आप सदा तत्पर रहते हैं ।

( २ ) दूसरे खजांची नत्थूदासजी साहब हैं । आपका काम स्थानकी कुल नकदी जिन्सी आमदनीका सुप्रबन्ध करना, जमीनदारी सम्बन्धी मामला मुकद्दमाकी खबरगीरी करना, खेती बाडी आदिका प्रबन्ध करना इत्यादि हैं, आपकी प्रमाणिकता इतनी बढी हुई है कि, सब ओरसे सब लोग द्रव्यादि लाकर आपको देते हैं, परन्तु आपके हिसाब देनेको सदा तय्यार रहनेपर भी, कोई हिसाब नहीं पूछता

क्योंकि, आपके व्यवहारने सबको निश्चय दिला दिया है कि, इन्होंने अपनेको पूर्ण रूपसे कबीर साहबके अर्पण कर दिया है, शील और सदाचारकी आप मूर्ति हैं। साथही स्थानकी मर्यादा रक्षाके लिये आपमें स्वाभिमान और आत्मप्रतिष्ठाकी कमी नहीं है इत्यादि।

( ३ ) तीसरे श्रीयुत परमहंस मित्तूदासजी साहब अधिकारी हैं। आपने सर्व प्रकारके मान अभिमानके त्याग पूर्वक, भेदभाव रहित सर्वप्रकारके जीवोंकी सेवा करना अपना आदर्श बना रक्खा है। आपकी इस वृत्तिकाही प्रभाव है कि, सब मतके लोग आपसे प्रसन्न रहते हैं, ऐसा होते हुए भी आप सत्यका त्यागकर किसीकी झूठी खुशामद कभी नहीं करते। दुखियोंकी, तन मन धनसे, सेवा करना आपका स्वभावही है।

( ४ ) चौथे श्रीगोपीदासजी अधिकारी हैं, जिन्होने स्थानकी खेती बाडी काश्तकारीकी देखरेख सब अपने जिम्में ले रखा है।

( ५ ) पांचवे भंडारी सौखी दासजी हैं, जिन्हें सदा सर्वदा दुखी जीवोंके लिये, अपने सुखका त्याग करना कोई कठिन बात नहीं दीख पडती आप बडे श्रीमहंत साहबके खास भंडारी और शिष्य हैं। इसी प्रकार भंडारी नेमूदासजी भंडारी जगादासजी कोठारी रामअधीन दासजी, रामधनीदासजी, झड़ी दासजी, अनूपदासजी इत्यादि सर्व संत दया और प्रेमकी मूर्ति, द्वेष और ममतासे रहित, सदा परोपकार-रत रहनेवाले, स्थानकी मर्यादा बना रखनेमें सचेत रहते हैं।

श्रीयुत महंत चंचल दासजी, गोविन्ददासजी, भौजनदासजी, खाकीजी इत्यादि सङ्गीत द्वारा स्थानकी शोभारूप हैं।

श्रीयुत गंगादासजीको सद्गुरुकी वाणीसे इतना प्रेम है कि, आप सदावाणीकीही खोजमें लगे रहते है, आपहीके वाणी प्रेमकी प्रत्यक्ष

मूर्ति गंगाशब्दावली है, जिसमेंसे लक्ष्मीपुर ( रोसडा ) के कवीरमन्दि-रके चौकाविधानकी रमैनी पद आदि लिये गये हैं ॥

इसके अतिरिक्त स्थानमें रहनेपर उससे सम्बन्ध रखनेवाले जितने व्यक्ति हैं सबमें सज्जनता कूट कूटकर भरी है, सब सदा सर्वदा अपने ऊपर कष्ट उठाकर भी दूसरोंको सुख देनेमें तय्यार रहते हैं और तो विद्यार्थी रामजी जो स्थानमेंही रहता और स्थानकी सेवा टहल करता हुआ, विद्या अध्ययन कररहा है, साधुओंकी संगतिमें रहता हुआ ऐसे सरल स्वभावका होगया है कि, कभी किसीकी अवज्ञा करना जानताही नहीं, जिसने जहां जिस कामके लिये पुकारा रामजी वहीं रामजीके समान हाजिर मिलेगा। अन्तमें--

श्रीरामरूपदासजीको लीजिये; आप बडे महंत साहब या यों कहिये कि, वंशगद्दीके आचार्य्य स्थानापन्न धार्मिक कर्म्मोंके सम्पादन करनेवाले कवीर साहबके अधिकारी श्री १०८ युक्त पंश्री महंत काशी-दासजी साहबके परम प्रिय शिष्य और प्राइवेट सेक्रेट्री हैं । आप हरफन मौला हैं, आप जिस प्रकार अपने टकसार और धार्मिक ज्ञान ध्यानमें कुशल हैं, उसी प्रकार व्यवहारमें पूरे हैं, आप कवि लेखक, मुंशी, कचहरीके कार्य्यमें कुशल, जमीन्दारी, दुकानदारी आदिके कामोंमें चतुर, अधिक क्या कहूँ जिस कामका प्रसंग आपके सम्मुख आजावे आप सबमें अग्रसर रहनेवालोंमें हैं, साथही आप इतने दयालु और मिलन सार हैं कि, सदा सर्वदा भेदभाव रहित सबकी सहायता करनेको तय्यार रहते हैं । जिस कामको हाथमें लेते हैं उसमें पूरे तौरसे जुट जाते हैं। श्रीयुत गंगादासजीके संग्रह किये हुए शब्दोंका सम्पादन कर आपहीने उसे प्रकाशित करवाया है । कवीरचन्द्रोदय मासिकपत्रके तो आप एक प्राण स्वरूपही हैं ।

श्रीमान् संतदासजो साहब उर्फ बाबा साहेब स्थानके सरदारोंमें , आप सर्व गुण पूर्ण, परम विरक्त, सत्यधर्म परायण संत हैं, आप

सर्वदा, भ्रमण करके जीवोंको चेताते और सत्यधर्मका प्रचार करते रहते हैं। पूर्ण विरक्त होनेपरभी आप व्यवहारकी कुशलतासेभी वंचित नहीं हैं, स्थानके किसीभी व्यवहारिक कार्यमें आवश्यकता होनेपर, आप उसको सुचारुरूपसे पूर्ण करते हैं, आपकी दर्शनीय मूर्ति और आनन्दी स्वभावके कारण सबही आपसे प्रसन्न रहते हैं। आप शान्ति रसकी मूर्ति होते हुए भी, हास्यरसमें ऐसे दक्ष हैं कि आपकी एकही बातमें शोकातुर मनुष्योंको भी हँसी आजाती है। आप जिस प्रकार सुन्दर अक्षर लिखनेमें निपुण हैं वैसेही पाकशास्त्रमें पूर्ण प्रवीण हैं।

इसी प्रकार पण्डित वसंत दासजी वैराग्य गम्भीरता और विचारकी मूर्ति हैं। एक स्थानधारी साधुओंमें सौजन्यता, प्रेम, दया, व्यवहार, कुशलता आदि जितने गुण होने चाहियें सब आपमें वर्तमान हैं।

श्रीसाधु ज्ञानचन्द दासजी भी स्थानके वैसे विरक्त साधुओंमेंसे एक हैं, जो सदा भ्रमण कर सेवक सतियोंको उपदेश देकर सजग करते और कालके जालसे बचाते रहते हैं।

इसके अतिरिक्त सैकडों मूर्ति इस स्थानके इस समय सत्य कवीरके उपदेशका प्रचार कर सत्यधर्मकी वृद्धिमें लगे हुए हैं।

इसी प्रकार रोसडा स्थानकी प्रत्येक बातें आदर्श रूप हैं। इस समय तो यह स्थान मेरे अनुभवसे अपने धार्मिक टकसारमें अपनी ऊपमा आपही है। इसका कारण और कुछ नहीं, केवल "यथा राजा तथा प्रजा" के अटल नियमकाही फल है।

श्री १०८ महंत साहबके सदाचार और दया क्षमा आदि गुणों सहित धर्म प्रेमही इनका एक मात्र कारण है।

उसी आदर्श स्थानमें जिस प्रकार चौकाकी रमैनी आदि काममें लायी जाती हैं, वही क्रम शब्दावलीके इस विभागमें दिया है ।

यद्यपि इस प्रकार अलग लिखनेसे कितने शब्द पद और रमैनीयोंके दुबारा आनेसे पुनरुक्ति अवश्य हुई है तथापि जानकरही मैंने ऐसा रखा है क्योंकि, ऐसे किये विना इस शब्दावली लेनेवालोंको सुभीता नहीं होता. कारण यह है कि, इसके पढनेवाले सबके सब ऐसे विद्वान तो हैं नहीं कि, प्रयत्न करके इधर उधरसे ढूँढ ढाँढकर शब्द पदादिको याद करेंगे; वरन बहुतसे ऐसे पढनेवाले भी हैं जो सर्व सामग्री इकट्ठा न रहनेसे ग्रन्थसेही श्रद्धाहीन हो विरक्त हो जायेंगे । इसी लिये इच्छा न रहते हुए भी ऐसा करना पडा है ।

अन्तमें इतना निवेदन कर इस सूचनाको समाप्त करता हूँ कि, रोसडाके इस किंचित गुणवर्णनको सुनकर किसीको घबराने या ईर्षाग्निमें जलकर यह मेरा लिखा मिथ्या प्रलाप समझनेकी आवश्यकता नहीं है. क्योंकि, यह सब मेरे स्वतः अनुभवकी बात है । सम्वत १९८६ वि. में अषाढसे कार्तिक तक बराबर वहां निवास करके मैंने स्वतः अनुभव किया है। और तो और रोसडा स्थानमें पारसाल जब भादों पूनोंपर वार्षिक चौका आरती और संगठन सभा हुई उस समय छत्तीस गढके एक मात्र कबीरपंथी विद्वान बाबू दुलारे सिंह दार्शनिक बी. ए. मालगुजार बंसूला जि० विलापुर जो–इस समय वंशगद्दी कबीरकौंसिलके रेजिडण्ट वायस प्रेसिडेन्ट हैं; वहां जाकर और महंत साहबके गुणोंको देखकर इतने मोहित हुए कि, वंशगद्दीके लिये आपका चुना जाना परम सौभाग्य समझने लगे । इन्हीं सब कारणोंसे मैं कहता हूँ, यदि कौंसिलवाले आपको यथार्थ रूपसे पहचानेंगे और
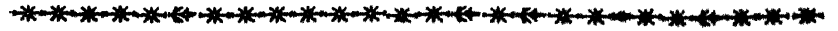
आपसे लाभ लेना चाहेंगे, तो कौंसिलके सुचारुरूपसे चलनेमें कोई बाधा नहीं होगा. क्योंकि, वर्तमानमें ऐसा योग्य आचार्य्य मिलना दुस्तर है।

इस समय जबके वंशधरके आचार्य्यके विन्दवंशका लोप होगया है तब कबीर वचनानुसार नाद वंशही प्रधान है, इस लिये मेरा विचार है कि, वर्तमानके जितने स्थान हैं, सबकी एक डायरेक्ट्री इसी प्रकार बनाकर प्रकाशित कराऊँ, जिसमें सत्यधर्मके जिज्ञासुओंको अपनी आत्म उन्नतिके लिये सत्संग करनेमें सुभीता हो। सद्गुरु कबीर तथा संत महंतोंकी दया होगी तो, यह कार्यभी अवश्य पूरा होगा॥

| बम्बई.<br>२८-७-२९<br>श्रावण वदि ७<br>सम्वत् १९८८ वि. | भवदीय<br>सबका परमार्थी मित्र कबीरा-<br>श्माचार्य्य<br>**श्रीयुगलानन्द बिहारी.** |
|---|---|

सत्यनाम ।

# अथ अध्यात्म साधन गुरु पूजा प्रकरण ।

## दूसरा भाग ॥

### पूर्व विहार विशेषकर रोसडा कवीरमन्दिरमें प्रचलित चौका विधान प्रारम्भः ।

रमैनी ॥ १ ॥

साखी—चौका चन्दन कीजिये, मल्यगिरिके नाम ।
चारो कमल सुधारिये, मध्य ताहिको धाम ॥ १ ॥

प्रथमहि मन्दिर चौका पुराये । उत्तम आसन श्वेत बिछाये ॥ हंसा पगु आसनपर दीन्हा । सत्य कबीर कही कहि लीन्हा ॥ नाम प्रताप हंसपर छाजे । हंसहिं भार रती नहिं लाजे ॥ भार उतारि आप शिर लीन्हा । हंस छोड़ाय कालसे दीन्हा ॥ साधु सन्त मिलि बैठे आयी । बहुबिधि भक्ति करें चितलायी ॥ पानसुपारी नारियर मेवा । लवंग इलायची किसमिस मेवा ॥ सवा सेर आनो मिष्टाना । और सवा सौ उत्तम पाना ॥ सात हाथ बसतर परमाना । सो सतगुरुके आगे आना ॥ इतना होय और नहिं भाई । जासे काल दगा मिटि जाई ॥ धन्य सन्त जिन आरति साजा । दुःख दरिद्र वा घरसे भाजा ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा । सोहम् ओहम् शब्द परकासा * ॥ २ ॥

---

* पुरानी प्रतियोंमें यह पद यों है—कहै कबीर सुनो भाई साधो । सोहं सोहं शब्द अराधो ॥
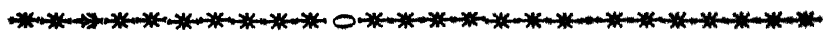
रमैनी ॥ २ ॥

साखी—चौका चार सुधारहू, चार कमल असथान ।
चारो पवन उरेहिके, देखो तत्व अमान ॥ ३ ॥

अगर चन्दन घसि चौका दीन्हा । आदि नामका सुमिरण कीन्हा ॥ जब धनी मन चितवन कीन्हा । चौका श्वेत हंस करि लीन्हा ॥ धर्मदास चौका अनुसारा । चौका बैठें पुरुष पियारा ॥ साधु सन्त मिलि बैठें आई । सुरत निरतसे शब्द लौलाई ॥ श्वेत सिंघासन अगम अपारा । सोहं हंसो बहुत पियारा ॥ कहहिं कबीर शब्द जो ध्यावे । शब्दहिं मांहि सो दर्शन पावे ॥ २ ॥

रमैनी ॥ ३ ॥

साखी—यही चाल है हंसकी, नरियर धोती पान ।
यहि बिधि भेद विचारई, हंस होई निर्वान ॥ ३ ॥

उत्तम झारी अमृत जल भरिया । लवँग इलायची कपूर अनुसरिया ॥ मन वच पान बरौना भाखा । तापर पांच सुखरिचा राखा ॥ त्रिगुण खरिचा दीन्ह बताई । दूत भूत सब चले पराई ॥ तब दल तत्व पान जो लीन्हा । तापर अंक अगर को दीन्हा ॥ अगर वास है लोक मँझारा । तीन हंसले करइ अहारा ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा । हंसा पावहिं लोक निवासा ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर धर्मनिनागर । अरपो दल पाओ सुखसागर ॥ ३ ॥
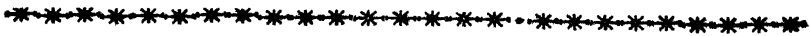
रमैनी ॥ ४ ॥

साखी—प्रथमे चौका कीजिये, चार खूंट अनुमान ।
दीप चौरासि सुधार हु, लोकरंभ सहिदान ॥ ४ ॥

आदिनाम चित चेतहु भाई । आरति साजहु ज्योति बराई ॥ पाट पटम्बर अम्बर छाया । जहवाँ हंस करे गवनाया ॥ श्वेत सिंहासन अगम अपारा । सत सुकृत तहवाँ पगु धारा ॥ भागा तिमर भया परकासा । आदि ज्योति किन्हा रहिवासा ॥ हंस रूपका भेद बताऊँ । कहो तो आपन अंश दिखाऊँ ॥ श्वेतहिं रूप शब्द है भाई । अग्र वासमें रहे समाई ॥ कहहिं कबिर निज भेद हमारा । सत्य शब्द गहि उतरो पारा ॥ ४ ॥

रमैनी ॥ ५ ॥

साखी—ऊपर पांखुरि द्वीपकी, भीतर चौका चार ।
द्वादश दल निर्वाण है, देखो सुरति विचार ॥ ५ ॥

केदली दल उत्तम विस्तारा । अति सुन्दर साजो पनवारा ॥ सुघर मिठाई उत्तम पाना । नरियर अंत लेहु पहिचाना ॥ सात पांच नरियरमें नाहीं । ता जीवका गहो जिन वाहीं ॥ सात पांच नारियरमें रेखा । सम्पुट गुप्त प्रगट होय देखा ॥ सवा सेर आनो मिष्टाना । सेतु सवा सौ उत्तम पाना ॥ सात हाथ बस्तर परमाना । सो सतगुरुके आगे आना ॥ इतना होय और नहिं भाई । जासे काल दगा मिटि जाई ॥ लक्ष जीव नित करे

अहारा । तासे थाप्यो यह व्यवहारा ॥ और भेद सब राखो गोई । मति सुनिके जिव बिचले सोई ॥ सतगुरु शरण जीव जो आवे । ताको काल सदाशिर नावे ॥ कहै कबीर सुनु धर्मनि नागर । बीरा नामसे हंस उजागर ॥५॥

रमैनी ॥ ६ ॥

सा०—कलश आरति दल शिला, नारियर पान मिष्टान ।
पुङ्गी फल फुल श्वेत अरु, शब्द भजन धुन ध्यान ६

उग्र ज्ञानका कहौं सन्देशा । धर्मदास मानो उपदेशा ॥ धर्मदास मानो चित लाई । रहो ठिकानि उचट नहिं जाई ॥ अजर लोकमें आरति कीन्हा । सो आरति हम तुमको दीन्हा ॥ जाघर आरति नाहिं न साजी । ता घर धर्म रायकी बाजी ॥ जा घर आरतिकरे बनाई । निर्भय हंस लोकको जाई ॥ कोटिक ज्ञान कथे नर लोई । बिनु आरति बाँचे नहिं कोई ॥ अजर ज्योति आरती प्रकाशा । दूत भूत यम माने त्रासा ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा । हंसा पावे लोक निवासा ॥ ६ ॥

रमैनी ॥ ७ ॥

सा०—लौंग इलायचि नारियर, आरति धरो लेसाय ।
कहैं कबीर धर्मदाससे, काल दगा मिटिजाय ॥७॥

धर्मदास तुम पंथ उजागर । अर्पोदल परसो सुख सागर ॥ चन्दन चौका रचो बनाई । सत सुकृत जहां बैठें आई ॥ सेत बारिसे फूल मँगावा । सो सतगुरुको आनि
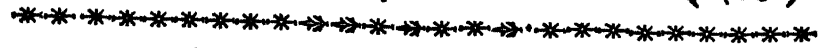
चढावा ॥ धर्मदास उठि विनती कीन्हा । हो सतगुरु हम तुमको चीन्हा ॥ जो तुम कहो मानि लेउँ सोई । तुम गुरु छोडि और नहिं कोई ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा । बीरा नाम करो प्रकासा ॥ ७ ॥

रमैनी ॥ ८ ॥

साखी—अंश रेख स्वर शिष्यको, गुरु श्वासा घर एक ।
तामें नरियर मोरहू, टूटे विघन अनेक ॥ ८ ॥

धर्मदास तुम बीरा लेहू । जम्बू द्वीप जीवन कहँ देहू ॥ मैं का जानों पंथके आदी । जम्बूद्वीप बसे बकवादी ॥ पढै वेद औ करे अचारा । वे नहीं माने शब्द तुम्हारा ॥ जो नहिं माने शब्द हमारा । सो चलि जैहैं यमके द्वारा ॥ जो कोइ माने शब्द हमारा । सो चलि हैं लोक मँझारा ॥ अन्तर कपट करे मन माहीं । सो तो लोक पहुंच नहिं जाहीं ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा । बीरा नाम करो प्रकासा ॥ ८ ॥

इति चौकाकी रमैनी ॥

शब्द नारियर ।

साखी—कलश आरति दल शिला, चारो अंक सुधार ।
रेखा लिखि कर पान धर, तहां कपूर प्रजार ॥ १ ॥

बनि जारिन विनती करे, संत सुनु साजना । नरियर लीन्हों हाथ, संत सुनु साजना ॥ विना बीजके वृक्ष है, सुनु साजना । विनु धरती अंकूर संत सुनु साजना ॥ जाके मूल
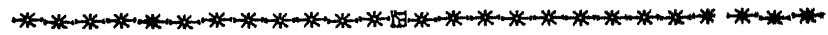
पताल है; सुनु साजना। नारियर शीश अकाश, संत सुनु साजना॥ बिना भेद जनि मोरहु, सुनु साजना। जीव एकोत्तर हानि, संत सुनु साजना॥ गुरुके शब्दलै मोरहू, सुनु साजना। यम शिर मर्दहु मान, संत सुनु साजना॥ सखियाँ पांच सहेलरी, सुनु साजना। नौनारी विस्तार, संत सुनु साजना॥ कहहिं कबीर बघेलसे, सुनु साजना। इन्द्रमती शिर ताज संत, सुनु साजना।

आरती चौकाकी १।

साखी—पुहुप दीपमें बैठिके; सुख सागरमें पान।
अंबु दीपमें बैठिके मूल करी पहिचान॥ २॥

आदिनामचित चेतो भाई। आरति साजो जोत बराई॥
पाट पटम्बर अम्बर छाया। तहवाँ हंसकरे गवनाया॥
सेत सिघाँसन अगम अपारा। सतसुकृत तहवाँ पगु धारा॥
भाजा तिमिर भया परगासा। दूतभूत जम आगम नासा॥
बाहँ पकरि जिव सौंपो भाई। सत सुकृतकी फिरी दुहाई॥
सुरत निरत है सतगुरु पासा। जरामरनकी छूटी आसा॥
तीन सुरतिले करो विचारा। सोहं सोहं हंस उबारा॥
अहिनिसि सुमिरे जो कोई। सुख सागर पहुँचे जन सोई॥
हंस रूपका भेद बताऊँ। कहो तो आपन अंस दिखाऊँ॥
सुरति हँस सत्य है भाई। अगर बासमें रहे समाई॥
कहैं कबीर सुनो भाइ साधो। पद परचे आरति आराधो॥

साखी—आरति चौका कर धरो, जीव उधारन काज।
कहैं कबीर धर्मदाससों, जुग जुग अविचल राज॥
अगर विदेही पायकरि, जगते रहे निनार।
सुख सागरमें घर करे, सत्य नाम आधार॥४॥

आरती चौकाकी ॥ २ ॥

मृत लोक जम थान सवाँरा।
तब सत सुकृत जुगति विचारा॥

सावधान बान यक कीन्हा। ताते काल भयो आधीना॥ ले नरियर जब तिलक बनाया। काल शीघ्र शरनागत आया नरियर लीना हाथ उठाई। दूत भूत जम गये पराई॥ कालहिं मारि जगत यसलीन्हा। नरियरमोरि खुरहरि कीन्हा कहैं कबीर सुन हंसपति राई। धर्मदास आरति सचु पाई॥
साखी—नामी मिलि नामी भया, रही न दूजी आस।
सुख सागरमें घर किया, सत्यनाम विस्वास॥

चौकाकी आरती ॥ ३ ॥

साखी—सत्य पुरुषकी आरती, जा घर होय प्रकास।
कहैं कबिर सुनु धर्मनि, निर्मल होय सु दास॥१॥
जाघर आरती दास करतु हैं, जन्म जन्मके पाप हरतु हैं ॥ टेक ॥ केदली दल पुष्पनकी माला। सतसुकृत जाघर पगु घाला॥ परिमल अगर गुलाल सुवासा। जा घर हंस करे सुख वासा॥ १ ॥ अनहद ताल पखावज बाजे। श्वेत सिंहासन छत्र विराजे॥ नाम एकोत्तर सुमिरे
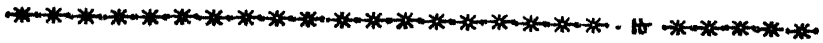
शब्द तिनुकाका ॥ १ ॥

जमुनियाकी डार साहेब तोड दीजे हो ॥ एक जमु-नियाकी चौदह डार । सार शब्दसे मोड दीजे हो ॥ १॥ सुरति हमारी अजब पियासी, प्रेम अमीरस घोरि दीजे हो ॥ २ ॥ गुरु हमारे ज्ञान जौहरी, हीरा पदारथ मोल दीजे हो ॥ ३ ॥ यह संसार विषय रस माते । भर्म केवरिया खोल दीजे हो ॥४॥ धर्मदासको अरज गोसांई । जीवन बन्ध छोड़ दीजे हो ॥ ५ ॥

शब्द तिनकाका ॥ २ ॥

जमुनियाकी डार मोरि तोरदे, तोरदे सतगुरु तोरदे ॥ टेक ॥ काया कंचन अजब प्याला, नाम बूटी रस घोरदे । घोरदे सतगुरु घोरदे, जमुनियाकी डार साहब तोरदे ॥ १ ॥ सुरति सुहागिन अजब पियासी, अमृत रसमें बोरदे । बोरदे सतगुरु बोरदे, जमुनियाकी डार साहब तोरदे ॥ २ ॥ तू है सतगुरु ज्ञान जौहरी, रतन पदारथ खोल दे । खोल दे सतगुरु खोलदे, जमु-नियाकी डार साहब तोरदे ॥ ३ ॥ धरम दासकी अरज गुसाईं, जीवनको बन्धन छोर दे । छोर दे साहब छोरदे, जमुनियाकी डार साहब तोर दे ॥ ४ ॥

साखी—धन्य भाग उस दासको, सतगुरु दिये सुसाज ।
माथ नमावे काल तिहीं, पायो नाम जहाज ॥ १ ॥

शब्द नाम लखावन ।

गुरु पैंया लागु नाम लखाय दीजे हो ॥ युगन युगनके

सोवल मनुआ, दै सत शब्द जगाय लीजे हो ॥ १ ॥ घट अंधियार बस्तु नहिं सूझे, ज्ञानकी दृष्टि बताय दीजे हो ॥ २ ॥ बिषकी लहरि उठे घट भीतर । अमृत घोरि पिलाय दीजे हो ॥ ३ ॥ गहिरि नदिया नाव पुरानी, खेइके पार लगाय दीजे हो ॥ ४ ॥ धर्म दासको अरज गोसाँई, जीवन बन्ध छोड़ाय दीजे हो ॥ ५ ॥

शब्द कण्ठी ।

साखी–कण्ठी जाके कण्ठ में, ताही नमे यमराज ।
मारग छोडे दिखतही, सकलो ताहि समाज॥१॥

पायो निज नाम गले को हरिया ॥ टेक ॥ सतगुरु पटवा अजब निह हिया । छोटी मोटि डोलियामें चारि कहरिया ॥ १ ॥ प्रेम प्रीती की पहिरि चुन्दरिया । निहुरि नाचो साहेब दरबारिया ॥ २ ॥ सतगुरु कूंजी दई महलकी । जब चाहो तब खोलों केवरिया ॥ ३ ॥ यही मोरे ब्याह यही मोरे गवना । कहहि कवीर बहुरि नहीं अवना ॥ ४ ॥

शब्द उपदेश ।

साखी–सतगुरु के उपदेश हैं, अतिशय सुखकी खानि ।
वेद मंत्र सम जानिके, लेहु हृदयमें मानि ॥ १ ॥

धन सतगुरु जिन दियो उपदेश ॥ भव बूंडत गहि राख्यो केस ॥ टेक ॥ साकटसे गुरु वैष्णव कीन्ह । सत्यनामका सुमिरण दीन्ह ॥ १ ॥ जाति बरण कुल

कर्म नशाय। साधु मिले तब साधु कहाय ॥ २ ॥जब लगि ममिता मरी न होय। तब लगि काज एको नहिं सोय ॥ ३ ॥ जब ममिता मेरी मिटिजाय। तब प्रभु काज सुधारे धाय ॥ ४ ॥ जब लगि सिंह रहे बनमाहिं। तब लगि यहो बन फूले नाहि ॥ ५ ॥ उलटा स्यार सिंहको खाय। तब फूले सकलो वनराय ॥६ ॥ स्वाती बुन्द केदली परे। रूप वरण कछु और धरे॥७॥ नाम कपूर वासना होय। केदली वाको कहै न कोय ॥ ८ ॥ पारस परसे कंचन होय। लोहा वाको कहे न कोय ॥ ९ ॥ पारसके गुण देखहु जाय। कंचन महँगे मोल बिकाय ॥ १० ॥ निशि दिन सुमिरो एके नाम। जिहि सुमिरे सिध होवे काम ॥ ११ ॥ साहेब कबिरके पक्का खेल। तील फूल मिलि भये फुलेल ॥ १२ ॥

साखी–तेल तील ते ऊपजे, जन्म जातिके तेल।
संगति भई जब फूलकी, नाम धराय फुलेल॥१॥

शब्द अर्जी।

बहियाँ पकडो समुझिके, अर्ज सुनो गुरु मोर।
पकडो तो छोडो नहीं, तब बलहारी तोर ॥२॥

समुझि गहो मेरि बाहीं परम गुरु समुझि गहो मेरि बाहीं ॥ टेक ॥ जो बालक ढुनमुनवा खेले, सो बालक हम नाहीं। हम तो चाहें सतके सौदा, पथल पुजनको नाहीं ॥१॥ चौदह सो चौरासी चेला, सो चेला हम नाहीं। जियत

ठिकाना सबहि बतावे मुए ठिकाना नाहीं॥२॥ जो तुमरे घर उद्यम नाहीं, भीख मांगि किन खाहीं। मूल सजीवन जानत नाहीं, मति प्रबोधो काही ॥ ३ ॥ नाव तेरी करुअरिया नाहीं, लहरि उठे बिकरारा। गुरु सहित चेला सब बूडे, कौन उतारे पारा ॥ ४ ॥ सूखल लकडीमें घून लगतु है, लोहेमें लगु काई। बिनु प्रतीत गुरुका कीजे, काल घसीटे जाई ॥ ५ ॥ अमृत कुण्ड सदाकी चौकी, बेली बेला राखे। नेउल देखिके विषहर कम्पे, चपल अमी रस चाखे ॥ ६ ॥ माया आय चौकमें बैठी, नवल विवाहन आहीं। देय कपाट महलमेंपौढे, अब कछु संशय नाहीं ॥ ७ ॥ समुझ न होय तो समुझो गुरुजी, नां तरु होत बिगारा। कहैं कवीर सुनो गुरु रामानन्द, अब सिख लेहु हमारा ॥ ८ ॥

साखी–गुरु हमारा शब्द है, सदा रहतु है संग।
रामानन्दको युं किया, जगत जनावन ढङ्ग ॥

पान परवानाका शब्द ॥

पान छत्रपति कर धरो, अनुभव सन्धि विचार।
विषम त्रिच्छ जमकी दशी, रेखंमुंज निरुचार ॥ १ ॥
जुगकी रेख सम्हारहु, पान अखण्डित सार।
ताते हंस न वीगरे, चन्द्र लगन विस्तार ॥ २ ॥
चार तत्व घटमें धरो, पांचो लेहु समोय।
जेहि अक्षरते जिवभया, जाते हंसा होय ॥ ३ ॥
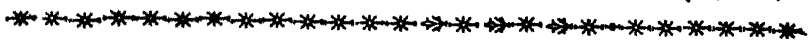
वहि अक्षरते सब भयो, लोकदीपऽस्थूल।
ताको चीन्हो सन्तो, विन अक्षर निजमूल ॥ ४ ॥
चार कमल घर भीतरे, परखो संत सुजान।
जामें वासा जीवको, तहां सुधारो पान ॥ ५ ॥
आन कमलमें जिव बसे, अन्ते पान प्रकाश।
अधर पान जमलेत है, जीव परे जम फांस ॥ ६ ॥
चारो मुहर सुधारहू, अंक छत्रकी छाँह।
लच्छन लगन विचारके, देहु हंसको बाँह ॥ ७ ॥
सतजुग संधि सम्हारहू, सब विधि पूरन होय।
सुरति निरति गहि धर्मनि, देखो शब्द विलोय ॥ ८ ॥
पान छत्र पति साजहु, जुगकी रेख सुधार।
कहैं कवीर धर्मदास सो, हंस उतारो पार ॥ ९

॥ इति आनन्दी चौकाविधान समाप्त ॥

## ॥ अथ चलावा चौका ॥

साखी—हंस उबारण कारने, सतगुरु जगमें आय।
काशीमें परगट भये, नाम कवीर कहाय ॥ १ ॥

मंगल।

सतगुरु हंस उबारण जगमें आइयां। प्रगट भये निज काशीमें दास कहाइयां ॥ १ ॥ रामानन्द गुरु कीन सो शिष्य कहाइयां। बुधि बल दीक्षा लीन बहुरि समुझाइयां ॥ २ ॥ ब्राह्मण औ सन्यासी हांसी कीन्हियां। तजि काशी गये मगहर काहु न चिन्हियां ॥ ३ ॥ बिजुलीखां

पैठान तो कबुर खोदाइयां । बिरसिंह राय बघेल, साजि दल आइयां ॥४॥ लिखि कमलापति रानि, सो पतिया पठाइयां । मूर्दा न होहिं कबीर, सो बुझि बिचराइयां ॥ ५ ॥ पर्दा उघारिके देखेउ, कछु नहिं पाइयां । पान फूल लिये हाथ, बहुत पछिताइयां ॥ ६ ॥ मगहर झगडा निवेरि, दोउ दल राखियां । गढबाँधो धर्मदास, आपन कर थापियां ॥ ७ ॥ अटल बयालिस वंश, राज लिखि दिन्हियां । जस हम तस तुम वंश, दया बहु किन्हियां ॥ ८ ॥ हद बाँधा दरियाव, उड़ीसा जाइके । लक्ष्मी सहित जगन्नाथ, मिले प्रभु धाइके ॥ ९ ॥ उहँवाँ सतगुरु जायके; अदल चलाइयां । महा प्रसाद पवायके भ्रम मेटाइयां॥ १० ॥ आगम कहों पुकारि, सुनो धर्मनिनागरा । बहुत हंस लिये साथ उतरो भव सागरा ॥११॥

साखी–चार गुरु संसारमें, धर्मदास बड अंश ।
मुक्त राज तुमको दियो, अटल बयालिस वंश ॥ २॥

## ॥ अथ दीहल प्रारम्भः ॥

साखी–आमिनिकी बिनती यही, सुनिये बन्दी छोर ।
भवसागरसे तारहू, पुनि पुनि करौं निहोर ॥१॥

दीहल । ( १ )

आमिनि विनती बिनवई; सुनहु हो बंदी छोर ।
भवसागरसे मोहि तारहु, इतना मोर निहोर ॥ १ ॥
भवसागर भयावन सूझे, वार न पार । झांझरि नाव

पुरातम, खेइ उतारहु पार ॥ २ ॥ कोटि कर्म छूटे नहीं, यह जिव कीट समान । भृङ्गी होय गुरु तारहू, अधम उधारण नाम ॥ ३ ॥ आसन आहीं पुरुषके, धर्म दास को दीन्ह । चार अंश चौका महँ, तामें लेहू चीन्ह॥४॥ कहहिं कबीर सुनु आमिनि, रहो हमारी आस । जीवन पार उतारि हौं होइ चुरामणि दास ॥ ५ ॥

दीहल ( २ )

साखी—मानहु शब्द हमार यह, सतगुरु सुमिरण सार ।
नतु पाछे पछिताइहो, जब पडि हैं जम मार ॥ २ ॥
फेरु पछितायव हे कामिनि, मानहु शब्द हमार॥टेक॥
चन्दन जानि विरछा रोपल, सेहू भेल सेमर परास ।
फुलवा देखि धीरज बांधल, फल देखि भयल निरास ॥१॥
बिनारे सोनाके कैसन आभरण, बिन मोती कैसन गरहार ।
बिनारे मय्याके कैसन नैहर, विनु स्वामी कैसन सिंगार२
कायारे कंचन गढ टूटल, छूटल कुल परिवार ।
दशो दुआरिया जमुआ रोकल, कौने बिधि होयब पार॥३॥
साहेब कबीर कहि दीहल, शब्द परखु टकसार ।
बहुरि न यहि जगमें आयब, फिर न मनुष अवतार ॥४॥

दीहल ( ३ )

साखी—कामिनि अचरज देखहु, जहं नहिं धरनि अकाश ।
चान्द सूर जहवाँ नहीं, सत्य शब्द परकाश ॥३॥
अचरज देखहु कामिनि, कहौं तो को पति आय ।
अधर साहेब हम देखलौं, सतगुरु डोलिया फनाय॥१॥

चान्द सुरज है वहां नहीं, वहां नहिं धरनि अकाश ।
तौने पुरुष मोरे प्रियतम, केहि बिधि करौं निवास ॥२॥
गुरु दरशनके कारने, सरवस दिऔं लुटाय ।
एक पलकके बीछुडे, अब मोहि कछु न सोहाय ॥ ३ ॥
गुरु दरशन हम पायलौं, छूटल कुल परिवार ।
अब जैहों पुर आपने, परखु टकसार ॥ ४ ॥
साहिब कबीर कहे दीहल, हृदय करहु विचार ।
अरस परस करु कामिनि, निर्गुण नाह तुम्हार ॥ ५ ॥

दीहल ( ४ )

सा०—सुमिरहु कामिनि नाह निज, जहँवाँ धूप न छांहि ।
देखत अतिसुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाहि ॥४॥

सुमिरहु कामिनि सुमिरहु, सुमिरहु आपन नाह ।
अधर साहिब हम देखिया, जहँवाँ धूप न छाँह ॥ १ ॥
बिनारे घटा घन गरजई, बिनु जल तिरथ नहाय ।
देखतहीं सुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाय ॥ २ ॥
बिन पानीके जीवन, बिनु दीपक उजियार ।
ऐसो निर्गुण देखिके, परखु शब्द टकसार ॥ ३ ॥
साहेब कबीर कहें दीहल, अग्र सोहंगम फूल ।
अब मोरे जन्म सुफल भये, पाये मुक्तिके मूल ॥ ४ ॥

दीहल ( ५ )

साखी—मानहु गुरुके बचन पिय, हरदम खबरजु लेय ।
जो चित अन्ते जाइ हैं, तौ गुरु ताजन देय ॥५॥

गुरुके वचन मोरे प्रियतम, हरदम खबर जुलेय। जो चित अन्ते जाइ हैं, हँसि पिय ताजन देय ॥ १ ॥ पार बसे मोर प्रियतम, दुर्बल भइ मोरि देह। पांच भैया संग दारुण, तिनसे छुटल सनेह ॥ २ ॥ जिनके आंगन नदिया वहे, सो कस कुआंमे नहाय। जाघर नारि सुलक्षणा, सो कस पर घर जाय ॥ ३ ॥ गृहि आंगन नहिं भावई, सुख संपत नाहि सुहाय। निर्गुन नाह न आवई, सेज गयल कुम्हिलाय ॥ ४ ॥ जो साहेब वर पाइहों, नैहर धरे उठाय ॥ सेज बैठे सुख विलसहिं, गुरुमुख मङ्गल गाय॥५॥ साहेब कबीर कहि दीहल, छूटल कुल परिवार। चरण कमल चित राखहू, पूरण नाम अधार ॥ ६ ॥

दीहल ( ६ )

सा०—नैहर आपन कोइ नहिं, जासे करूँ पहिचान।
प्रेमसहित सखिमिलि लेहु, निजपियसुखप्रदजान ६

मिलि रहु सखिरी तु मिलि रहु, अपने पिया सुख जान। नैहर आपन कोइ नहीं, जासे करौं पहिचान ॥ १ ॥ मोरे जीवके भावतु, छाय रहो वहि देश। मैं विरहिनि निश दिन फिरौं, धरि योगिनिकी भेस॥२॥ तात मात कोइ संग नहिं, संग नहीं सग भाय। काम न काहु कुटुम्बसे, चली निसान बजाय ॥ ३॥ चाँद सूरजकी पालकी, तोह चढि बैठी नार। सुखमनि संग सहेलरी, दुलहिनि उतरी पार ॥ ४ ॥ कमल जो फुले अकाशमें,
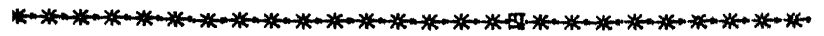
अलि गुंजे चहुँ और। पियाको लै बैठी तहां, ढुरे सोहं-गम चौर ॥५॥ सोहंगम मूरत मोर, हिरदय रही समाय। कहहिं कवीर धर्मदाससे, सो लीजे दरसाय ॥ ६ ॥

दीहल ( ७ )

साखी–पांच सखीके संगमें, सासुर झगडा होय।
भैंसुर घर मूसे सदा, काहि कहों दुःख रोय ॥ ७ ॥

पांच सखी संग दुलहिनि, सासुर झगडा होय। भैंसुर चोर घर मूसई, काहि कहों दुःख रोय ॥ टेक ॥ वासर चन्दा ऊगई, निशिमें ऊगैं सूर। गङ्गा जमुना दोउ संग बहे, हंस गमन बडि दूर ॥ १ ॥ गंगा जमुनाके अन्तरे, पर्वत धवल सुजान। चितवत नजर न आवई, जमके अमल अमान ॥ २ ॥ ध्रुव मडण्ल नहीं दरशई; नेत्र गुंज अनुसार। चित गहि चेतहु सन्त हो, मास पडे जम धार ॥ ३ ॥ श्वासा सूर न बन्द हो, केहरि फन्द न लेय। आठ पखहिंके भीतरे, हंस पयाना देय ॥ ४ ॥ कायापुर पाटन परिचय, कायाको एहि सुभाव। चित चेतो कडिहार हो, अवघट लगे न नाव ॥ ५ ॥ मैमुनि लगन सम्हारहु, सुमिरहु निर्गुण सार। पान छत्र पत साजहू, हंस उतारो पार ॥ ६ ॥ पच्छिम लहरि गोगावहु, पूरव चन्दा तान। निर्गुण शब्द उचारहू, कबहुँ न होय जिव हान ॥ चन्द उदय सुर आवे कूच नगारा होय। साहेबकवीर कहि दीहल, देखहु शब्द बिलोय॥
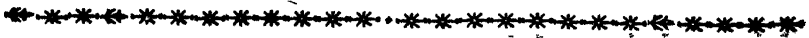
दीहल ( ८ )

साखी–आरति साजहु दुलहिनी, आवहिं कन्त सबेर ।
निर्गुन मङ्गल गावहू, अब जनि लावहु बेर ॥८॥

दीहल ( ९ )

साखी–यहि बिधि श्वास बिचार है, सुनहु सन्त मतिधीर ।
साधन करिके जानि हो, रहे कि जाय शरीर९ ❋

शब्द नारियर ॥ १ ॥

साखी–मोरहु नारियर मोरहू, आपन अंश बचाय ।
बिना शब्द जो मोरहू, चिव परलय तर जाय ॥

मोरहु नारियर मोरहु, आपन अंश बचाय । बिना शब्द जनि मोरहु, जिव परलय तर जाय ॥ टेक ॥ तीन अंश नरियर महँ, तामें एक हमार । आपन अंश बचाय के, यमके अंश निनार ॥ १ ॥ जमके अमल मिटावहू, बत्तिस पवन विलोय । नीर नेह निर्वारहु, चलहु महा तम खोय ॥ २ ॥ धरती रेख सुधारहू पुरुष पवन अनुमान । बिना भेद जनि मोरहु, जीव एको तर हान ॥ ३ ॥ सोहंको निज गहि रहू, नारियर बास समोय । तीनौ तत्व सुधारहू, काल निकट नहिं होय॥४॥ धरती गुण गहि प्रगटहू, करौ शब्द परकास । साहिब कबीर कहि दीहल, दिढ मानहु धर्मदास ॥ ५ ॥

---

❋ नोट–इसके आगेके दीहल सब पहिले पृष्ठ २४२ से आरम्भ होकर बहुत आगये है सो देख लेना चाहिये और भी पांचवें छठे खण्डमें आनेवाले हैं वहांसे देख लेना.

आरती ॥ १ ॥

साखी-आरति सत्य कबीरकी, जा घर होय प्रकाश।
दुःख दरिद्र आपे भगे, पूरे मनकी आश ॥ १ ॥

मङ्गल रूप आरति साजे। अभय निशान ज्ञान धुनि बाजे ॥ टेक ॥ अछै वृक्ष जाकी अम्बर छाया। प्रेम प्रताप अमृत फल पाया ॥ १ ॥ निशि वासर जहां सूर्य न चन्दा। परम पुरुष जहँ करहिं अनन्दा ॥ २ ॥ तन मन धन जिन अर्पण कीन्हा। परम पुरुष परमातम चिन्हा ॥ ३ ॥ जरामरणके संशय मेटे। सुरत सन्तायन सतगुरु भेंटे ॥ ४ ॥ कहहिं कबीर हिरम्बर होई। निरखि नाम निज सुमिरे सोई हो ॥ ५ ॥ १ ॥

---

## अथ डोरी पद प्रारम्भः।

चलाना चौकाका पद डोरी ॥ १ ॥

साखी-अबकी बार उबारिये, अर्जी दीन दयाल।
जगमें कोई है नहीं, तुमरे सारिस कृपाल ॥ १ ॥

अबकी बार उबारिये, मेरी अर्जी दीन दयाल ॥ टेक ॥ आई थीं ओहि देशसे, भई परदेशी नारि। वह मारगमें भूलियां, बिसरि गई निज बारि ॥ १ ॥ युगन युगन भ्रमत फिरी, जमके हाथ बिकाय। कर जोरे बिनती करूँ, मोहि मिलि बिछुड़ि जनि जाय ॥ २ ॥

विषम नदी बिकराल है, बहुत कटरिया धार । मोह मगरके घाटमें, खाये सुर नर झार ॥ ३ ॥ शब्द जहाज कबीरके सदगुरु खेवन हार । जो कोई हंसा आवई, पलमें लेहिं उबार ॥ ४ ॥

साखी—चली पूतली लवणकी, थाह सिन्धुको लैन ।
आपे गलि पानी भई, उलटि कहेको बैन ॥ २॥

पद डोरी ॥ २ ॥

उनमुनि चढी अकाशमें, गई गगनमें छूट ।
हंस चला घर आपने, काल रहा शिर कूट ॥३॥

नाम सनेह न छाड़िये, भावे तन मन धन बर जाय ॥ टेक ॥ पानीसे पैदा किया, नख शिख अंग बनाय । उस साहिबको बिसारिया, (तेरो) गाढमें होय सहाय ॥१॥ महल चुने खाई खने, ऊंचे ऊंचे धाम । जब यम बैठे कण्ठमें, कोई न आवे काम ॥ २ ॥ मातु पिता सुत बान्धवा, और दुलारी नारि । यह सब हिलि मिलि बीछुडे, शोभा है दिन चारि ॥ ३ ॥ जैसे लागी ओरसे, दिन दिन दूनी प्रीत । नाम कबीर न छाडिये, (भावे) हार होय की जीत ॥ ४ ॥

पद डोरी ॥ ३ ॥

साखी—हंसा छूटे बाज ज्यों, कोटि सिन्धुके जोर ।
सुमिरत दीन दयालके, पहुंचि गया निज ठौर ॥४॥

शब्द सिंहासन पाटमें, (तुम) हंसा बैठो आय ॥टेक॥ कौन नाम मुक्तामणि, कौग नाम वो अंस। कौन नाम वह पुरुष है, कौन नाम वो हंस ॥ १ ॥ अजर नाम मुक्तामणि, ऊग्र नाम वो अंस। ज्ञानी नाम वह पुरुष है सुरत नाम वह हंस ॥ २ ॥ मूल द्वीप निज द्वीप है, और सुनो हम पाहिं। बैठे हंस उबारहीं, सोहंगमकी बाँह ॥ ३ ॥ जम्बु द्वीपके हंसा भाई, पांजी बैठो आय। कहहिं कबीर धर्मदाससे लावहु बांह चढाय ॥ ४ ॥
साखी-अस बीरा प्रताप बल, प्रबल काल छय होय।
जिहिं सतगुरु बहियां मिले, हंस न जाय विगोय ॥५॥

पद डोरी ॥ ४ ॥

हंसा दुर्मति छाड़िदे, तू तो निर्मल होय घर आव ॥ टेक ॥ दूधहिसे दधि होतु है, दधि मथि माखन होय। माखनसे घृत होत है, बहुरि न छांछ समोय ॥ १ ॥ ऊखहिंसे गुड़ होत है, गुड़से खांड़ हो जाय। सतगुरु मिलि मिश्री भई, बहुरि न ऊख समाय ॥ २ ॥ चीनी छिटकी रेतमें, गज मुख चुनी न जाय। जात बरण कुल खोयके, चींटी होय चुनि खाय ॥ ३ ॥ दाग जु लागी नीलकी, नौ मन साबुन धोय। कोटि यतन प्रबोधिये, कागा हंस न होय ॥ ४ ॥ कहहिं कबिर सुनु केसवा, तेरी गती अपार। बाप बिनौला होय रहे, पूत भये चौतार ॥ ५ ॥
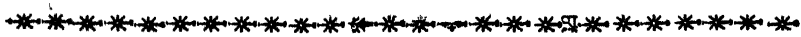
पद डोरी ॥ ५ ॥

साखी—उत्तर घाटी उतरे, पांजी बैठे जाय ।
तहँवाँ सुरति लगायके, पुरुषहिं परसे पांय ॥६॥

शब्द सनेही हंसा, तुम जग तजि होय रहु न्यार ॥ टेक ॥ सत्य निज डोर है, तुम हंसा गहो बनाय । सत बीरा निज नाम है, चाखतही घर जाय ॥ १ ॥ बिना बीजके जामई, बिनु अंकुरके झार । बिनु डण्डी फल लागिया, साधू करहिं बिचार ॥ २ ॥ अजरहिके अंकूर भये, अजरहिकी लागी डार । अजर फूल फल लागिया, साधू करहिं अहार ॥ ३ ॥ मोहि अजर करि जानहू, अम्मर देउ बताय । जिहिं भाण्डे निज सांच है, तामें रहो समाय ॥ ४ ॥ कहहिं कबीर धर्मदाससे, बेगि जाहु संसार । सोहंगमकी बांहसे, हंस उतारहु पार ॥ ५ ॥

पद डोरी ॥ ६ ॥

साखी—बीरा बद जिन जानहू, पुरुष नाम निज मूल ।
जा दिन हंसा तन तजे, मेटे संशय शूल ॥ ७ ॥

कौन मिलावे योगिया, योगिया बिनु रहल न जाय ॥ टेक ॥ हौं हरिनी पिया पारधी, मारा शब्दके बान । जाहि लगे सोइ जानिया, और दरद नहिं आन ॥ १ ॥ पिया कारण पियरी भई, लोग कहें तन रोग । जप तप लंघन मैं करौं, पिया मिलनके योग ॥ २ ॥ हौं तो पियासी पीवकी, रटौं सदा पिव पीव । पिया मिले तो

जीवऊँ, (न तु) सहजे त्यागौं जीव ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनु योगिनी, तनीमें मनहि समाय । पिछली प्रीतिके कारणे, योगी मिलेंगे आय ॥ ४ ॥

पद डोरी ॥ ७ ॥

साखी—साथी नाद कबीर हौ, बिन्दहिं देहु न भार ।
युग युग हंसा हिरम्बर, नाद उबारन हार ॥ ८ ॥

ज्ञान रतनकी आँखिया, देखहु यमको जाल ॥ टेक ॥ यमके फन्दा काटहु हंसा, जग तजि होहु न्यार । सतगुरु दर्शन देइँगे, उतरो भवजल पार ॥ १ ॥ जो तुम हंसा चाहो निर्गुण, सर्गुण करहु विचार । निर्गुण सर्गुण छोड़िके, तुम दोउ तजि होय रहु निनार ॥ २ ॥ अष्ट कमल दल ऊपरे, भमर गुफाके घाट । सहस्र पांखुरिका कमल है, पछिम दिशाके बाट ॥ ३ ॥ नौ खण्ड हेतु विसारहु हंसा, शब्द सुरति चित धार । कह कविर धर्मदाससे, उतरो भवजल पार ॥ ४ ॥

पद डोरी ॥ ८ ॥

साखी—चलुसखि चौपर खेलिये, तन धन बाजी लाय ।
सतगुरुके ढिग खेलते, दुर्मति जाय नशाय ॥९॥

चलु सखि चौपर खेलिये, तन धनसे बाजी लाय ॥ टेक ॥ चौपर खेले शुन्य में, खेले दिन औ रात । चल हंसा घर आपनो, जहँ तेरी उत्पात[1] ॥ १ ॥ चौपर खेलौं

---

1 उत्पत्ति ।

पीवसे, बाजी लगावौं जीव । जो हारौं तो पीवकी, जीतौं तो मोर पीव ॥२॥ चार गली घर एक है, चार वरण इक सार । पासा डारौं प्रेमका, जीति चलै सोइ नार ॥ ३ ॥ चौपरियाके खेलमें, युगन युगनके दाव । नरद¹ अकेली होय रही, छिन पल खावे घाव ॥ ४ ॥ चौरासी घर भरमिके,, पौ में अटकी आय । अबकी पौ जो ना पड़े, फिर चौरासी जाय ॥ ५ ॥ पगरासे बाजी लगी, पड़े अठारह दाव । सार गँवाई हाथसे, शिर ऊपर लग घाव ॥ ६ ॥ जाति वरण कुल मेटिके, पाई भक्ति अटूट । कह कबिर धर्मदाससे, कोइ न पकड़े खूँट हो ॥ ७ ॥

॥ इति चलावा चौकाकापद समाप्त ॥

---

## शब्द व्यञ्जन भोग ॥ १ ॥

मेरे सतगुरु आये द्वार हो रसके व्यंजना । सखि, काहेकी बैठक देउँ, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ १ ॥ चंदन पिढिया गुरुकी बैठका, रसके व्यञ्जना । सखि नीरन चरन पखारु, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ २ ॥ भात राँधों रस दूधमें, रसके व्यूंजना । सखि धोय मूँगकी दाल, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ३ ॥ काहे के थार परोसौं, हो रसके व्यञ्जना । सखि, काहेके कटोरेमें दूध, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ४ ॥ सोनेके थार परोसौं, हो रसके व्यञ्जना ।

---

१ गोटी चौपडकी ।

सखि, रूपे कटोरेमें दूध, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ५ ॥ जिमि लेहु सतगुरु पाहुना, रसके व्यञ्जना । सखि, मुख भरि देहु आशीष, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ६ ॥ पाथरको क्या पूजनों, रसके व्यंजना । सखि, मुख बोले नहिं खाय, सुरतके व्यंजना ॥ ७ ॥ सांचे पूजहु साधुको, रसके व्यंजना । सखि, मुख बोले अरु खाय, सुरत रसके व्यंजना ॥ ८ ॥ खाय पियाय सुख सेज में, रसके व्यंजना । सखि, करिले शब्द सिंगार, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ९ ॥ पानन बिरिया खवाऊँ, हो रसके व्यंजना । सखि, दोय कर चरण दबाऊँ, सुरत रसके व्यंजना ॥ १० ॥ व्यंजना २ सब कोई कहे, रसके व्यंजना । सखि व्यंजना लखे नहिं कोइ, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ११ ॥ कहहिं कबिर धर्म दाससे रसके व्यञ्जना । सखि, रहत अमर पुर छाय, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ १२ ॥

व्यञ्जन भोग ॥ २ ॥

सतके भोग दयाके व्यञ्जन, तुमको मालुम होय । महा पुरुष मानिये निज सोय ॥ टेक ॥ इंगला पिंगला चौका पोते, क्षमा मंत्र जल ढार ॥ महा० ॥ १ ॥ बलकी फूक अकिलकी आग, चाहकी चुल्हा सम्हार ॥ महा० ॥ २ ॥ तिल दयाकी दाल बनी है, लक्षके लवण मिलाय ॥ महा० ॥ ३ ॥ मनसा हींग डारु व्यञ्जनमें, चहुँ दिशि

बास उडाय ॥ महा० ॥ ४ ॥ भाव भक्ति घृत निर्मल नीरा, ले गडुआ जल ढार ॥ महा० ॥ ५ ॥ आसन मूल बैठ दृढ अविचल, सुषमन बांह पसार ॥ महा० ॥ ६ ॥ सुरत निरत दोय पाक सवाँरे, सन्त परोसहिं थार ॥ महा० ॥ ७ ॥ सतसुकृत जहां भोजन पावें, घर माणिक उजियार ॥ महा० ॥ ८ ॥ सकल सन्त मिलि आरति उतारें, गावहिं मङ्गल चार ॥ महा० ॥ ९ ॥ कह कबीर जो सतगुरु सेवे, सो सतलोक सिधार ॥ महा० ॥ १० ॥

व्यञ्जन भोग ॥ ३ ॥

सत्यपुरुषको भोग लागे, शब्द अनाहद घण्टा बाजे ॥ सतपु० ॥ प्रेम सुरतिसे कियो है रसोई । अमृत भोजन पारस होई ॥ १ ॥ कंचन झारी सुकृत थार । जेवन बैठहिं सिर्जन हार ॥ सत पु० ॥ २ ॥ जेवहिं धनी सन्त सब संगा । गावहीं दास सुख प्रेम उमंगा ॥ ३ ॥ पाय प्रसाद जल अचवन कीन्हा । महा प्रसाद दासको दीन्हा ॥ ४ ॥ तबसे काल भयो है आधीना, जबसे हंस भयो प्रवीना ॥ ५ ॥ कहहिं कबीर पूरण भौभाग, जब सत गुरु मस्तक दियो जाग ॥ ६ ॥

शब्द अचवन ॥ १ ॥

सेवक लिये प्रेम जल झारी, खरिचा ब्रह्मज्ञान ॥ सो लेय अचवन कीजे, गुरु कृपा निधान ॥ टेक ॥ भाव भक्तिसे बीरा लीजे, सन्तन जीवन प्राण ॥ महा० ॥ अमी उतारि

दासको दीजे, जनको परम कल्याण ॥ सो अचमन०
॥ १ ॥ हृदय विच पलगा बिछावों, पौढौ पुरुष पुराण
॥ महा० ॥ चरण कमलकी सेवा करौं, दासातन प्रमाण
॥ सो अचमन० ॥ २ ॥ सुरतिके बेनिया डोलाऊँमैं ठाढी,
एक टक लागे ध्यान । महा० ॥ धर्म दासपर दाया कीजे, पूरण
पद निर्वान ॥ सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥ ३ ॥

शब्द धुन ॥ १ ॥ राग सारंग-( समय मध्याह्न काल )

भाग जाके सन्त पाहुने आवें। द्वारे कथा कीरतन-करहीं, हिलमिल मंगल गावें ॥ टे० ॥ काम क्रोध मदमान कल्पना, दुर्मति दूर बहावें ॥ राग द्वेष परनिन्दा तजिके, सत उपदेश लिखावें ॥ १ ॥ प्रथम लाभ चरणोदक लैकरि, जो कोइ शीशचढावें ॥ कोटिन तीरथको कर सहजहिं, सो घर बैठेपावें ॥२॥ खीर खांड पकवान मिठाई, लखि नहिं हेत बढावें ॥ रूखा सूखा शाकपत्र अति, हितसे भोग लगावें ॥ ३ ॥ महा प्रसाद देवनको दुर्लभ, सन्त सदा सो पावें ॥ दुष्ट सदा दुर्मतिके घेरे, मिथ्या जन्म गवांवें ॥ ४ ॥ गुरु प्रतापसे पूर्वकी सुकृत, कर्म उदय हो आवें ॥ कहैं कवीर साधु मूरति धरि, साहिब दरश दिखावें ॥ ५ ॥

॥ शब्द धुन ॥ २ ॥

भाग जाको सन्त पाहुने आवें ॥ द्वारहिं होत कथा

अरु कीरतन, हिलिमिलि मंगल गावें ॥ भाग० ॥ १ ॥ प्रथमहि लाभ शीत चरणामृत, महा प्रसादको पावें ॥ भाग० ॥ जेहि कारण योगि जप तप करहीं, सो फल साधु जिमावें ॥ भाग० ॥ २ ॥ खीर खांड घृत अमृत भोजन, सन्त सदा यहि पावें ॥ भाग० ॥ दुष्ट सदा दुर्मतिके घेरे, मिथ्या जन्म गवाँवें ॥ भाग० ॥ ३ ॥ शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सतगुरु यही लखावें । भाग० ॥ कहहिं कबीर सन्तनकी महिमा, साधुमें साहेब पावें ॥ भाग० ॥ ४ ॥

शब्द धुन ॥ ३ ॥

सोहं हंसा सकल समाना । कायाके गुण आनहिं आना ॥ सोहं० ॥ टेक ॥ माटी एक सकल संसारा । आन आन बासन गढे कुम्हारा ॥ सोहं० ॥१॥ सरिता सिन्धु औ कूप तलाई । एकै नीर सकल रहु छाई ॥ सोहं० ॥ २ ॥ पांच बरणकी दुहिये गाय । श्वेत दूध देखि मन पतियाय ॥ सोहं० ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर संशय करु दूरी । सब घट ब्रह्म रहा भरपूरी ॥ ४ ॥

शब्द धुन ॥ ४ ॥

बोलो साधु सतनाम साहिब कबीर बन्दि छोर कबीर ॥ टेक ॥ अकह नाम अभिअन्तर सारो । सुकृतनाम

बन्दि छोर तुम्हारो ॥ १ ॥ सुकृत अचिंत नाम पतित उधारण । धनि धर्म दास साहेब हंस उवारण ॥ २ ॥ आय सन्तको कीजे मिजमानी । उनके मुख कछु सुनिये बानी ॥ ३ ॥ जो तुम सहो जगतकी हांसी । बन्द छोडाय काटहि यम फांसी ॥ ४ ॥ साधु सन्त मिलि सुमिरों मोही । आपन करि प्रतिपालों तोही ॥ ५ ॥ तीरथ जाउँ नहिं पूजौं देवा । सब पर श्रेष्ठ सतगुरु पद सेवा ॥ ६ ॥ कहहिं कवीर समुझ नर बौरे । नष्ट जाहु जनि मोर निहोरे ॥ ७ ॥

## ॥ शब्द गारी प्रारम्भः ॥

### शब्द गारी ॥ १ ॥

जो तू भक्ति करनको चहतु है । निन्दासे नहिं डरिहो जी ॥ टेक ॥ पांच छडी कोई शिरपर मारे । सहत बने तो सहिहो जी ॥ १ ॥ मूरख आगे ज्ञान न कथिहो । मौनी होके रहिहो जी ॥ २ ॥ पर तिरियासे नेह न करिहो । देखत दुरिसे डरिहो जी ॥ ३ ॥ यह संसार विषयके कांटा । निरखि परखि पग धरिहो जी ॥ ४ ॥ साहिब कवीरजीकी निर्गुण गारी । महरम होके बुझिहो जी ॥ ५ ॥

### गारी ॥ २ ॥

देहु न देहु प्रभु जन अपनेको, सामरथके गुण गावहु जी हो ॥ टेक ॥ गगन मण्डल मोरे सजन वसतु है, उनहुंको नीति बोलावहु जी ॥ १ ॥ काम क्रोध

मद लोभ पाँवरे, भीतर भवन बिछावहु जी ॥ २ ॥ नयनके जलसे चरण पखारहु, चितके चौक बैठावहु जी ॥ ३ ॥ करनीके पातर कथनीके दोना, साखके सीक लगावहु जी ॥ ४ ॥ भावके भात अरु दाल दयाकी, शब्दके बरा बनावहु जी ॥ ५ ॥ मनसा मारिके सरस बनावहु, प्रेमके घृत चुआवहु जी ॥ ६ ॥ सतके दूध रु करनीकी खोआ, शक्कर सुमति मिलावहु जी ॥ ७ ॥ यह सुख पाव जिमि सजन हमारो, श्वासकी बेनिया डोलावहु जी ॥ ८ ॥ शीश भार भरे जल अमृत, सजनको अचवन करावहु जी ॥ ९ ॥ पांच पचीस पकडि नौ नारी, सजनको गारी गवावहु जी ॥ १० ॥ तत्व तमोधिनि सुधर सुमति ले, सजनको बिरिया खवावहु जी ॥ ११ ॥ एकइस खण्ड महलके भीतर, निर्भय पलंग बिछावहु जी ॥ १२ ॥ धर्मदास कहँ साहेब आये, मुक्ति पदारथ पावहुजी ॥ १३ ॥

गौरी ॥ ३ ॥

सेवकके सतगुरु पाहुन आये । काले करउँ मिजमानीजी ॥ १ ॥ चरण धोय चरणामृत लेऊँ, तनकी तपन बुझावउँजी ॥ २ ॥ चित चौक सन्तोष बैठिका, प्रेमके पातरि लावउँजी ॥ ३ ॥ निरतिके गडुआ जल भरि लावउँ, परसहुँ सुरति सयानीजी ॥ ४ ॥ अकिलके

आम रु नेहके नेमुआ, अदरख आदर मिलावउँजी । ५॥ शीलके सेम रु भावके भण्टा, बनि है करार करैलाहुजी६ धोयके डारो विचारके जलसे, कर्मनकी कडु आईजी॥७॥ हियकी हलदी नामकै नीमक, तत्वके तेलमें बघारहुजी ॥८॥ मनके मूंग मनसा मुँगौरा, प्रीतिके पापड लावहु जी ॥ ९ ॥ दिलकी दाल अरु हेतुके बरा, सुरतिके घृतमें छनावहुजी ॥ १० ॥ दयाके दही ले कढी बनावहु, तेहिमें बरा भिजावहुजी ॥ ११ ॥ दुबिधाकी लकडी बुद्धिसे चीरहु, ज्ञानकी अगिन जरावहुजी ॥ १२ ॥ महिमा पुरी मनोरथ चटनी, युक्ति जिलेबी लावहुजी॥ १३॥ एत जेवनार बने घट भीतर, सतगुरु नेवति बुलावहुजी ॥ १४ ॥ साधु सन्त मिलि जेवन बैठे, छुटे प्रेम रस गारी जी ॥ १५ ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा, शोभा लेहु अधिकारीजी ॥ १६ ॥

गारी ॥ ४ ॥

हौं मैं सत्यनामसे राजी । जासे जीती सारी बाजी॥१॥
मैं रतन अमोलक पाया । ताते कौडी हाथ न लाया॥२॥
मैं पहिरौं मुक्ता मोती । ताते छाडी कांचकी ज्योती ॥३॥
जहाँ ब्रह्मा विष्णु महेशा । हम छोडे तिनके देशा ॥४॥
जहाँ कोटि भानु प्रकाशा । तहां का दीपककी आशा ॥५॥
सन्तो कहहिं कबीर विचारी।मोहि साधु संगत लगीप्यारी ६
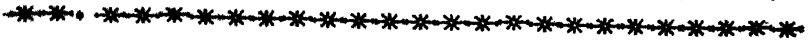
गारी ॥ ५ ॥

जाको चरणामृत लीजे । तिहिं गारी काहेको दीजे ॥ १ ॥
जासे मुक्ति पदारथ पय्ये । ताको ह्रदय माहिं समय्ये ॥२॥
जाको लोभ मोह भर्मावे । ताको हीरा हाथ न आवे ॥३॥
जो काम क्रोध मद माता । सो बांधे जमपुर जाता ॥४॥
संसार जाल है भारी । मेरे सन्तनकी मति न्यारी ॥५॥
सन्तो कहहिं कबीर बिचारी । मोहि साधु संगत लागे प्यारी

गारी ॥ ६ ॥

जोरा जोर जनावे, या माया पर पनचनिया ॥
दोय रूप बनावे, इक कनक इक कामिनिया ॥ टे० ॥
इक जावे इक रहावे, इक संशय यह मारनिया ॥
ताको काटिये कैसा, संत जन लेउ बिचारनिया ॥ १ ॥
चलि सतगुरु सरना, करिय जाय पुकारनिया ॥
हम माया फांसे, जन्म जन्म जम डांडनिया ॥ २ ॥
हम बहु दुख पाये, सतगुरु लेहु उबारनिया ॥
भइ अधरते वानी, विगसित कमल परकाशनिया ॥३॥
समरथ सुनि आये, विरह दुख द्वन्द निवारनिया ॥
हम हाहो दुख पावें, सतगुर ऊपर वारनिया ॥ ४ ॥
देहु अत्र बधाई, काम क्रोध दल मारनिया ॥
पद देइ मवासी, कर देउ निस्तारनिया ॥ ५ ॥
कालहु शिर नाई, जे लूटे तिरदेवनिया ॥
गावें साहब कबीर, अवनहिं आऊँ संसारनिया ॥ ६ ॥

घरके नाहिन अपने । कबहुँ ना भेंटी सपने ॥
परपंची तीनों देवा । उनहू लह्यो न भेवा ॥
पाचन मिलि परपंच कीन्हा । सतसुकृत उनहूनहिं चीन्हा
ब्राह्मन छत्री बानी । तिनहूकी करी न कानी ॥
तुम रुंड मुंडबासी । तु करवा चौथ उपासी ॥
करवा चौथ अहोई । सब रांडनकी मति खोई ॥
कहैं कबीर ब्रह्मबानी । तै मुंहि सुनी औ जानी ॥

गारी ॥ १२ ॥

तुम पहिरो सुमति सिंगार, भजनकी चूनरिया ॥
तेरे ढिग ढिग विधि बिचार, पची सो घूँघरिया ॥
तेरे पायल गहर गंभीर, सदा सुख जेहडिया ॥
तेरेहि बडे हार हमेल, दयाकी टोलनिया ॥
तेरे त्रिकुटी तिलक संजोय, जगत मन मोहनिया ॥
दूध बेचन निकसी हो, सुमति भरि गवालनिया ।
आडे होय रहिघ हो, सतगुरु गैलनिया ॥
नहि नहि साहब हो, नहि भइ बोहनिया ॥
चलु गगन में हो, जहाँ तेरि बोहनिया ॥
जब गई गगनमें हो, गगनमें मगन भय्यनिया ॥
मैं बहुरि न आऊँ हो, भइयाकीसों वा गलिया ॥
ऐसे कहैं कबीर साहबहो, अटल भई गोवालनिया ॥

गारी ॥ १३ ॥

सुन समधिन चतुर सुजान, कहूँ इक बात भली ॥

तुतो अजहूँ चेत सम्हारि, सपेदी बगर गयी ॥
तेरि खाल गई कुम्हलाय, ममता अजहुँ न मुयी ॥
चल गगन महलमें हो, निरगुन सेज बिछी ॥
तेरि पायलकी झंकार, शहरमें रोर परी ॥
तेरे दो मारगके बीच, डगर इक ज्ञानगली ॥
तेरो हटकनहार कौन, निसा सो आवचली ॥
तोसो कबीर कहैं समझाय; भजनकर घडी घडी ॥

गारी ॥ १४ ॥

सुनु समधिन संसै गारि । तोसे बहुत विधि कहौं पुकारि ॥ एतोपीर पैगम्बर जोगी । तै तो छलि बलि किये वियोगी ॥ एतो पारासरसे जोगी । तै तो नाही काहूको छोडी॥एतो शृंगी रिषि ब्रह्मचारी । ते तो उनहूकी करी खुवारी ॥ ऐसे कहैं कबीर तू दारी । मेरे साधासो बहुत विधि हारी ॥

गारी ॥ १५ ॥

तुम समझो कुमति देवरानी । तेरि कीरति जगत बखानी ॥
तेरे काम क्रोध दोउभाई । हिरनाकुस मारि बहाई ॥
जोगी शिवशंकर ध्यानी । तेरि गति मति उनहू न जानी ॥
तुम रावनके घर आई । तुम सीता हरन कराई ॥
तुम पंडवनके घर आई । उन पासे खेल हराई ॥

तुम कौरवनके घर आई। सब कुनबा नास कराई ॥
तोसो कहैं कवीर समझाई। नकटी तोहि लाज न आई ॥

गारी ॥ १६ ॥

धनि आय सम्हांरो हो, घरकी खबर भई ॥
आय धाय गहो गुरुके चरन, दया करि लइ अपनी ॥
गुरुतत्व लखायो हो, खडी भयी ज्ञान गली ॥
जब तत सम्हारी हो, कि सन्मुख पीवसो भयी ॥
संतोष सिला परहो, कि पटकी पांच जनी ॥
सब मारे पिसनिया हो, कि सिलकी सांग हनी ॥
धसि आय महलमें हो, कि गगनमें मगन भई ॥
साधु तुम जिन जानो गारि, कि मुक्तिकी राह कही ॥
तो सो कहैं कविर समझाय, कि याही मत आवचली ॥

गारी ॥ १७ ॥

सुनु समधिन चतुर, अइलों मैं तोरे आंगना ॥ तेरे अंगना समधिन तीनू छन्दना तै तो कहा रची जिवनार, पाहुन आये संतजना ॥ ٥० ॥ समधी हमारे बालो भोलो, समधिन छैलचिकनिया ॥ या समधिन सुरमुनि मोहे, कि तीन लोककी रनिया ॥ १ ॥ इक ऊठे इक बैठे समधिन, इक आवे इक जाय ॥ लख चौरासी ख्याल तुम्हारो, फिर फिर गोता खाय ॥ २॥ कोइ ध्यावे तीरथ बरतको, कोइ पूजे पाषान ॥ ऐसा ख्याल तुम्हारा समधिन, समधी देखि ललचान ॥ ३ ॥

कहैं कबीर सुनो हो समधी,मानो वचन हमार ॥ अबकी बार रहनिमें रहिहो, उतरो भवजलपार ॥ ४ ॥

गारी ॥ १८ ॥

जो तू पियाकी पियारिनी, पिया अपनेको सिंगारकरो॥
जाकी सुमतिकी कंगही, कर्म केस निरुवार करो ॥
जाके तत्वको तेल, प्रेम डोरिसे चोटि गुहो ॥
जाके अलखकी कजरा, बिरहकी बेंदी लिलार भरो ॥
जाकी नेह नथुनिया, शीलकी लटकल लटक रहे ॥
जाकी बोध चुनरिया, ज्ञानका लहँगा घूम रहे ॥
जाकी अकिलकी अंगिया,सुरति निरति द्वै बन्द लगे ॥
जाकी चितकी चुडिया, कसनीके कंगना दमक रहे ॥
जाके शीलका सोंटा, मायसे हरदम हमेलपरे ॥
जाके जुगतकी जेहर, शब्दकी बिछवा बाज रहे ॥
इतना धन पहिर धनी, रूठे पियाको मनाव सही ॥
पिय हमसे बोलो, साहब कबीर दया करी ॥

गारी ॥ १९ ॥

अब चित चेतले तू, काहे भूले मूरख गवाँर ॥
मय्या तो तेरी कुवँर देई, लागे उनके मनुष हजार ॥
चकर मकरकी चाची तेरी, उनहूँका यही हवाल ॥
हरफ निरफकी फूफूतिहारी, उनहूके दश लगवार ॥
अनबुधिया तेरि बहिन बजिन्द, फांदि जाय डंडवार ॥

सत्यनाम ।

श्री १०८ युतसद्गुरु श्रीमहन्त शम्भुदासजी साहब
इन्दौरी संशोधित शब्दादि यहाँसे आरम्भ होता है ॥

* ठुमरी खंमाच ॥ १ ॥

सखीरी मेरे मनमें बस्यो है सतनाम ।
लोग कहैं यह भयी है बावरी, मोहि मिल्यो सुखधाम॥टे०॥
जबसे दृष्टिपरी सतगुरुकी, मूरति ललित ललाम ।
तबसे जानि परयो मोहि झूठो, यहि जगको परिनाम॥१॥
मैं आयी संतनकी शरने, होय सबसे बदनाम ।
कोइ निन्दो चाहे कोइ वन्दो, मोहि न काहुसे काम॥२॥

---

+ सूचना. जो छोटा चौका करते हैं जहां दो चार नारियल मोरना और थोडे आदमियोंको प्रसाद देना होता है वहां तो जल्दी फुरसत हो जाती है, वहां पीछे लिखे हुए विधानके शब्दोंसे ही काम चल जाता है, अधिककी आवश्यकता नहीं होती किन्तु, जहां सैकडों नारियल मोरना, बहुतोंको कंठी आदि देना और बहुतोंको प्रसाद बाँटना पडता है, वहां गानेवालोंको भी बहुत देरतक गाना बजाना पडता है, इस लिये इसके आगे नाना राग रागनियोंके संकेतयुत पदादि दिये जाते हैं जिसमें गानेवालोंको सुभीता और सुननेवालोंको आनन्द होवे ।

भवदीय—

श्रीयुगलानन्द विहारी.

मेरे प्राण नाथ मोहि अस प्रिय, ज्यों लोभीको दाम।
जो उनके उपदेश मनोहर, सो मोहि ऋग यजु साम॥३॥
जिन अपनो पिय नहि पहिचान्यो,सो तिय निपट निकाम॥
सोइ धन्य सुरति जाकी है, पियमें आठो जाम ॥ ४ ॥
काहू को पति है अतिज्ञाता, काहूको नृप अभिराम।
धर्मिनि तो ऐसो पिय पायो, जाके है सकल गुलाम॥५॥

ठुमरी ॥ २ ॥

गाफिला क्यों विसऱ्यो धनी।
तेरी सुन्दर काया बनी ॥ टे० ॥

गर्भ वासमें भक्ति कबूल्यो, विनती करके घनी ॥
भूल्यो आय गोदमें लीन्यों, जब तो को जननी ॥ १ ॥
बालपना सब खेलि गँवायो, तब कुछ नाहि गनी।
तरुण भयो मदमें मत्त होय, मोह्यो लखि तरुनी ॥ २ ॥
वृद्ध भयो तन काँपन लाग्यो, कैसी आँनि ठनी।
तीनौपन ऐसेहि गवायो, आयुष सब अपनी ॥
कहैं कबीर चेतु नर अजहूं, बाकी है इतनी।
अब मूरख अवसर मति खोवे, यह अनमोल मनी ॥३॥

ठुमरी जिला।

सखि सोइ सुन्दरी पियकी पियारी। जाकी सुरति एक पल स्वपनेहु, होत न पियसे न्यारी ॥ टे० ॥धोय गुमान मैल सब तनसे, ओढि शीलकी सारी। सत्यवृ-

१ आय उपस्थित हुई. २ स्त्री.

त्तका पहिरि घाघरा, चाल चलै मतवारी । प्रेमकी अँगिया भक्ति चुडिया, समताके कँगना री । बेंदी विनय विमल श्रद्धाको, उरमें हार हजारी ॥ आगमको कूंकू मस्तकपर, ज्ञानको अञ्जन सारी । यहि विधिसे निज पियको रिझावे[1], अटल सिंगार सिंगारी ॥ अपनो परम धर्म पतिसेवा, जानै हृदय विचारी । तीरथकी इच्छा जो होवे, पीवे चरण पखोंरी[2] ॥ और पुरुषको पति करि जाने, सो नारी कुलटारी[3] । सत्य पुरुषको जो तिय सेवे, सोई पतिवँरता[4] री ॥ क्यों भूली तू देखि जगतसुख, विषयभोग दिन चारी । हो तजि सब प्रपंच गुरुशरणे, मानिके मेरो कहारी ॥ कहैं धर्मिनि सोई चतुर विचक्षण, सोई कुलवन्ती नारी । जो निजपरमातम पिय पायो, ताकी मैं बलिहारी ॥ १ ॥

सखि मैं धन्य ! सोहागिनि नारी । मेरो पति पूरण परमातम, अजर अमर अविकारी ॥ टे० ॥ औरनके पति एकदिन बिछुरत, तजि निज सुन्दरी प्यारी । मेरे प्राणनाथ मोहिं एकक्षण, करत न उरसे न्यारी । जाको खोज करत निशिवासर, बडे २ तप धारी । चकित होत वरणत श्रुति गुण जेहि, नेति २ कहि हारी ॥ संयम नियम शृंगार है मेरो, श्रद्धा सहित सँवारी । पहिरौं विविध विवेकके भूषण, ज्ञानको अञ्जन सारी ॥ सत्य नाम

---

१ प्रसन्न करे २ धोयके. ३ अव्यभिचारिणी. ४ पतिव्रता.

कूंकूका टीका, मस्तकपर सुखकारी । गुरुके वचन कानमें मोती, तिनकी बहु शोभा री ॥ इन्द्रमती सतगुरुके चरणन, तन मन धन सब वारी । प्रियतम पाय कबीर कृपानिधि, रहत सदा मतवारी ॥ २ ॥

दादरा ।

कब करिहौ मोपे दयाकी नजरिया । तुम्हरे दरश बिन निशिदिन तलफों, जिमि तलफत बिन जलके मछरिया ॥ टे० ॥ मंगलमूरति परम मनोहर, श्वेत वसन जस चमकै उजेरियां[1] ॥ शीश मुकुट उरमाल भालबिच, तिलक रुचिर लखि मुनि मन हरिया ॥ दरशहेतु गृहकाज छोडि सब, कबकी मैं ठाढी २ देखों डगरियां[2] ॥ धर्मिनिको राखों चरणनमे, करिहों सदा तुम्हरी परचरिया[3]१॥

कब मिलिहो त्रिभुवनपति स्वामी ॥ करुणासिन्धु कबीर कृपानिधि, विमल जलजपर्णरज[4] सुखधामी ॥ ॥ टे० ॥ परम स्वच्छन्द अनन्द ज्ञानघन, द्वन्द्वरहित मति गति अभिरामी ॥ अशरणशरण भक्तभवभञ्जन, सेवक सुखद सन्त अनुगामी ॥ वरणत विशद विशेष वेद यश, कसन[5] सुनहु मम अन्तर्यामी ॥ धर्मदास कर जोरि वदत इति वारवार तव चरण नमामी ॥ २ ॥

का वरणों छबि आज तुम्हारी । सन्तसमाज विराजमान जिमि, सुरगन बिच सुरपति[6] अधिकारी ॥ टे० ॥

---

१ चंद्रमाका प्रकाश. २ मार्ग, रस्ता. ३ सेवा. ४ कमलपत्रपर, प्रगट-हुये. ५ क्यों नहीं. ६ इन्द्र.

दिपत दिनेश समान तेज वपु, मङ्गलवेष परम सुखकारी। सुन्दर वदन[1] मदन लखि लाजत, हुलसत मन मुसक्यान निहारी ॥ भ्रकुटी कुटिल कपोल मनोहर, चोरत चित चख[2] चितवन न्यारी । नाशा[3] रुचिर कपोल मनोहर चारु चिबुक[4] अति लागत प्यारी ॥ भाल तिलक उर-माल मुकुट मणि, जडित तडित सम मस्तकधारी । विमल वसन[5] तन लसत हसत जिमि, देखि मन्द द्युति चन्द उजारी ॥ अशरण शरण हरण भव संकट, तारण तरण नाथ बलिहारी । धर्मदास सब करत निछावर, तन मन धन चरणन पर वारी ॥ ३ ॥

कोइ समुझै ब्रह्मज्ञानी, मेरे सद्गुरुकी बानी ॥ टे० ॥ क्या समुझैं वे वेदके वक्ता, विद्याके अभिमानी ॥ यदपि दिखत कछु अर्थ असंगत, तदपि प्रबोधकी खानी ॥ लोक वेदसे है वह न्यारी, त्रिगुण रहित निरवानी ॥ साधुसन्त सब शीश चढावें महामंत्र समजानी ॥ धर्मि-निके तो परम शिरोमणि, पायभई पटरानी ॥ ४ ॥

दुनिया अजब[6] दिवानी, मोरी कही एक न मानी ॥ टे० तजि प्रत्यक्ष सतगुरु परमेश्वर, इत उत फिरत भुलानी ॥ तीरथ मूरति पूजत डोले, कङ्कर पत्थर पानी ॥ विषय वासनाके फन्दे परि, मोहजाल उरँझानी[7] ॥

१ मुख. २ नेत्र. ३ नाशिका, नाक. ४ टुड्डी, डाढी. ५ वस्त्र. ६ अनोखी, अद्भुत. ७ फँसी हुई

सुखको दुख दुखको सुख माने, हित अनहित नहिं जानी ॥ औरनको मूरख ठहरावत आप बनत है सयानी[1]॥ साँच कहौं तौ मारन धावै, झूठको पतियानी[2] ॥ कहैं कबीर कहांलग बरणों, अद्भुत खेल बखानी ॥ ५ ॥

ध्वनि खम्माच.

ध्याइये गुरुपद सुखदायक ॥ टे० ॥ विघनहरण मुद-करण सुमंगल, ऋद्धिसिद्धि वरदेश[3] विनायक[4] ॥ नामलेत सब पाप प्रनाशत, बहु जन्मनकृत[5] मनवचकायक[6]। करुणासिन्धु कृपाल दयानिधि, शरणागतवत्सल सब लायक ॥ तारण तरण भक्तभवभञ्जन, अधम उधारण सन्त सहायक ॥ धर्मदास इति वदत विनय करि, सत्य कबीर मोरे पितु मायक ॥ १ ॥

नाथ एक आश है मोहिं तुम्हारी । सुत कुपूत[7]हू पर राखत है, ममता[8] पितुमहतारी[9] ॥ टे० ॥ मो समको कृतघ्न[10] खल पामर[11], क्रूर[12] कुटिल[13] कुविचारी । भोग्यो श्वान समान जगत् सुख; लोक लाज भय टारी ॥ रह्यो अधीन सदा मायाके, प्रभुको नाम विसारी । सुर दुरलभ तन पाय गवाँयो, विषय विवश झखमारी ॥ भूलि सकल कर्तव्य आपनो, सोयो पाँव पसारी । स्वपनेहु सुकृत कियो नहिं

१ चतुर. २ भरोसा किया. ३ आशिर्वादके प्रभु. ४ श्रेष्ठ. ५ अनेक जन्मोंके किये हुये. ६ मन वाणी और शरीरसे. ७ कुपात्र. ८ प्रीति. ९ पिता-माता. १० किये उपकारको न माननेवाला. ११ नीच. १२ क्रोधी. १३ कपटी.

कबहूँ, धर्म अधर्म विचारी ॥ और न कुछ विश्वास मोहिं प्रभु, कहै धर्मदास पुकारी, ॥ पै मैं पतित पतितपावन तुम, यह भरोस यक भारी ॥ २ ॥

मेरे निरधनके धन सतनाम । जेहि प्रताप कोई राव[1] रंकसे, मोहिं नहीं कुछ काम ॥ टे० ॥ कामधेनु चिन्तामणि पारस, कल्पवृक्ष अभिराम । ऋद्धि सिद्धि सब ताके सन्मुख, दीखत तुच्छ निकाम ॥ अक्षर चारि अखिल फलदायक, अतुलित ललित ललाम । महामन्त्र यहि जानि सन्तजन, जपत हैं आठो याम[2] । नासत सकल अरिष्ट[3] दाहिने, होत विधाता वाम । उठि प्रभात जो करत है चिन्तन, क्षणधरि मन विश्राम ॥ दृढश्रद्धा धर्मदास धारि उर, तजि रहीम अरु राम । गुरु कबीरके शरणे आयो, तब पायो सुखधाम ॥ ३ ॥

भूपाली.

आवो सखी मिलि मङ्गल गावो मोरे अँगन माँरी ॥ टे० ॥ आज सुन्यो सतगुरु आवत हैं, आली मोरे भवनमाँ[4] ॥ सखीरी मो० ॥ शब्द सुनत प्रभुके आवनको, रस बरष्यो काननमाँ ॥ सखीरी मो० ॥ फरकत नयन शकुन शुभ होवें, अति अनन्द होय मनमाँ ॥ सखीरी- मो० ॥ बोलत मोर पपीहा चहुँदिश कोयल कुहुकत बनमाँ ॥ सखी० ॥ बारबार मेरो हिय हुलसत[5] है, पुलक[6]

---

१ राजा और दीनसे २ प्रहर. ३ कष्ट ४ घरमें ५ आनन्दित होता है, उत्साहित होता है ६ रोमाञ्च होना.

उठत सब तनमाँ ॥ सखीरी मो० ॥ गुरु आवत धर्मिनि उठि धाई, जाय परी चरणनमाँ ॥ सखीरी मो ॥० १ ॥

कौसिया काफी।

आज मोरे सतगुरुको गृह लाऊँ ॥ टे० ॥ चरण धोय चरणामृत लै करि, सिंहासन बैठाऊँ ॥ चन्दनसे चौका लिपवाऊँ, मोतियन चौक पुराऊँ ॥ नरियर पान सुपारी केला, फल अनेक मँगवाऊँ ॥ श्वेत मिठाई विविध भांतिकी, थारनमाहिं भराऊँ ॥ कञ्चनकलश कपूरकी वाती, आरति साजि धराऊँ ॥ अमृतझारी प्रेमसहितलै, प्रभुजीको भोग लगाऊँ ॥ तन मन धन निछावरि करिके, आनन्द मंगल गाऊँ॥धर्मदास विनवें कर जोरी, भक्तिदान गुरु पाऊँ ॥१॥

आज मोरे घर साहिब आये, दरशन करी दोउ नयन जुंडाये[1] ॥टे० ॥ विगत क्लेश अखिलेश दयानिधि, मंगल वेष विशेष बनाये। तिलक भाल उर माल मनोहर, शीश मुकुट मणिमय[2] छबिछाये[3] ॥ चन्दनसे चौका लिपवायो, गजमोतियनकी चौका पुराये। बाजत ताल[4] मृदंग झाँझ डफ, साधुसन्त मिलि मङ्गल गाये ॥ दुख-दारिद्र दूरि सब भागे, काम क्रोध मद मोह दुराये[5]। भयो आनन्द भुवनमें चहुँदिश, चरण कमल रजशीश चढाये ॥ कञ्चनथार सँवारि आरती, धर्मिनि करत है हिय हुलसाये। करुणासिन्धु कवीर कृपानिधि, सत्यनाम निज-मंत्र सुनाये ॥ २ ॥

---

१ शीतल हुए. २ रत्नजडित. ३ शोभाको प्राप्त. ४ मंजीरा. ५ छिपगये.

माड.

दीनबन्धु दीनानाथ, म्हारी बीनती सुनौ ॥ टे० । म्हारे तो शत्रु घणाजी, भक्ति करन नहिं देत । काम क्रोध मद लोभ ये म्हारी, सुमतीको हरि लेत ॥ तृष्णा परबल डाकिनी जी, लागी म्हारे लार । कदेई तो धापे नहीं, इण खायो सब संसार ॥ शब्द स्पर्श रु रूप रस जी, गन्ध विषय ये पाँच । आप आपने खींचके, काई म्हाने नचावे नाच ॥ मन मरकट[2] नहिं होत वश, कीन्हे कोटि उपाय । ज्यों २ गहि परमोधिये[3] काई, त्यो २ भाग्यो जाय ॥ भवसागरके चक्रमे, आय पड्यो मँझधार । करुणाभवन कवीरजी, काई म्हाने करो प्रभुपार ॥ १ ॥

जहरीली योवन माती, यासे दूर भागिये ॥ टेक ॥ इन्द्र डस्यो ब्रह्मा डस्यो काई, नारद डशिया व्यास । बात करत शिवको डशी काई, क्षण एक बैठत पास ॥ कंसवंशको नाश करिजी, डस्यो रावणहि जाय । दश मस्तक कटवायके काँई, लङ्क दई लुटवाय ॥ पाराशरि शृंगी ऋषि जी, विश्वामित्र वशिष्ठ । और अनेकन मुनिन डशि काँई, कियो योगसे भ्रष्ट ॥ मोटा २ गारडी इनसे मानी हार । कच्छ देशमें जायके काँई, लागी गोरख लार ॥ माया काली नागिनी जी, डशिया सब संसार । बाँच्या कोई २ सन्तजन जी, कहै कवीर विचार ॥ २ ॥

---

१ कदापि कबी भी. २ बन्दर. ३ उपदेशदेना. ४ दंश मारना, काटना. ५ मंत्रशास्त्री,

ऐसो सुन्दर मुखडा पाके, मूरख प्रभुको क्यों न भजै ? ॥ टे० ॥ जिन जगमें सब सुख दियोजी, तिय सुत वित धन धाम। ताको नाम विसारियो कांई, ऐसो निमकहराम ॥ अबही तो भूल्यो फिरे कांई, ज्यों मदान्ध गजराज । एकदिन काल गिरासैई[1]जी, ज्यों तीतरको बाज ॥ अठावठासे लाय कर जी, सञ्चै[2]य धन दोउ हाथ । अन्तसमय नहिं जायगी थोर, फूटी कौडी साथ ॥ धन्धेमें निशिदिन फिरैजी, आठो जाँ[3]म गँवार । बणजाराका बैल ज्यूं कांई, गयो जमारो हार ॥ करसे दियो न दान कुछ, मुखसे लियो न नाम॥ खोय गमायो जन्म सब कांई, तीनो पन बेकाम ॥ विद्या पढि भूलो फिरे कांई, मनमें कारि अभिमान । सन्तांके उपदेसने तूं, तनक धर्‍यो नहिं कान ॥ मिथ्या जगपरपंच सब तूं, मतिना देखि भुलाय। कहैं कबीर गुरु शरण गहु कांई, ऐसो नरतन पाय ॥ ३ ॥

म्हारा साहिब म्हाने पाईजी, गुरुज्ञान भाँगडली ॥ ॥ टे० ॥ सुरति शिलापर घोटिके कांई, सतगुरु ज्ञान निधान। अमृतसार निचोडियो जी, मति साफीसे छान॥ हस्तकमल मस्तक धर्‍यो, भक्तिके रङ्ग लगाय । अनुभव प्यालो प्रेमको कांई, म्हाने दीन्हों पाय ॥ चढी खुमा[4]री

१ भक्षण करेगा. २ जमा करता है. ३ याम–प्रहर. ४ नशा.

आंखमें जी, रही निरन्तर छाय । सुख ब्रह्मा इन्द्रादिको कांई, तृणवत तुच्छ दिखाय ॥ दिव्यदृष्टि उरमें भईजी, लख्यो आतमाराम सन्ताँकी शरणो लियो म्हारे, जगसे रह्यो न काम ॥ पियत भाँग धर्मदासकी जी, मिटी सकल भवपीर । अटल बयालिस वंशको कांई, दीनों राज कबीर ॥ ४ ॥

गरबा ।

देखो २ ! जगत् यह स्वपना है । ये तो इन्द्रजाल-कीसी रचना है ॥ टे० ॥ सुत दारा गृह परिवार सभी है मिथ्या सदा नहिं सत्य कभी, हाँहाँ अन्त कोई नहिं अपना है ॥ तूं जो बाल वृद्ध अरु ज्वान भयो, सब माया कृत परपञ्च थयो, भ्रममात्र ये तेरी कल्पना है ॥ द्विज शूद्र गृहस्थ वनस्थ भयो, वर्णाश्रमको अभिमान गह्यो, त्रयतापसे यह सब तपना है ॥ गन्धर्वनगर जैसे दृष्टि परै, मृगतृष्णाको नीर न प्यास हरै, रज्जुसर्पसे जैसे डरपना है ॥ गुरुदेव कबीर कृपा जो करैं, स्वपनेसे जगायके दुःखहरै, निज आतमरूप परखना है ॥ १ ॥

वृथा खोवे क्यों नरतन पायकेरे । मोहमायाके फन्दमें भुलायकेरे ! ॥ टे० ॥ तरुनपना धन पायके, मति हो मूढ उतङ्ग । क्षणमें यह उडि जायगा, ज्यों

१ धोखा. २ बाजीगरका बनाया शहर. ३ मिथ्याजल. ४ रस्सीका सांप. ५ विना प्रयोजन. ६ गर्ववाला. ।

पतंङ्गको रङ्ग ॥ बिजली किसी चमक चमकायकेरे ? ॥ सदा न फूलै केतकी, सदा न भ्रमर लुभात । चार दिनाकी चाँदनी फेर अँधेरी रात । पछतावेगा अवसर गँवायकेरे ?॥ दो दिनका मिहमान तूं, आय बस्यो यहि धाम । आखिर तेरा होगया, यहाँसे कूर्च मुकाम । रहेगा फिर कहां तूं जायकेरे ! ॥ स्वारथके साथी सभी लोक कुटुम परिवार । अन्तसमय नहिं जायगा, कोई तेरे लार । घरसे डारैंगे बाहर उठायकेरे ! ॥ कहैं कबीर समुझायके, सुन मूरख नादान । सीधे मारग जगत्में, चल तूं तजि अभिमान । साधु सन्तोंसे शीश नवायकेरे ॥२॥

ठुमरी ध्वनि काफी.

पास खडा तेरे नजर न आवे, महबूब पियारा वे ॥ टे० ॥ घट २ व्यापक सबकी जानै, रहै सबनसे न्यारा वे । ढूंढ २ कोइ खोज न पायो, सब जग हारा वे ॥ स्मर्ण ध्यान योग संयमव्रत, नेम अचारा वे । जाके हेत करत सुर नर मुनि, विविध प्रकारा वे ॥ वेद पुराण भागवत गीता, बहोत विचारा वे । सबी अपार अगम्य अगोचर, अलख पुकारा वे । छोडिकै जिन अज्ञान कल्पना कुमति निर्वारा वे । मिला कबीर तिन्हे दिल अन्दर,, सिरजन हारा वे ॥ १ ॥

१ एक प्रकारकी रङ्गकी लकडी २ उजाली. ३ पाहुना. ४ प्रयाण, जाना. ५ साथ. ६ प्रिय. ७ पूर्ण. ८ निवारन किया, भगाया, नाश किया.

तुम कौन हो मियाँ कहाँके ? ॥ टे० ॥ कहाँसे आये, कहाँ जावोगे ?, किसे हाल अपना सुनावोगे ?, किसने भेजा, कौन काम है नई नगरिया झाँके[1] ॥ आते तुमने रोय दिया है, क्या लाये सो खोय दिया है ? । कौन जिकर[2] किस फिकर[3]में, आँखे खोले होके ढाँके[4] ? ॥ वतन्[5] तुम्हारा कौन ठाम है ?, बडा सहर या कोई गाँम है ?, पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, नैरित वायु इशाँके[6] ॥ आये हो जो इस नगरीमें, दया धरम कुछ राखो जीमें, अब ऐसी मत कीजो जिसमें, यहाँके हो न वहाँके ॥ हिंदू हो या मुसलमान हो ?, दाँना[7] या बिलकुल नर्दान[8] हो ?, कहै कबीर कहो कुछ हमसे, तिरछे होके बाँके ॥२॥

ऐसी प्रबल यह चपल[9], नारि सब जग वश कीनोरे ॥ टे० ॥ ब्रह्मचारी योगी संन्यासी, ऋषि मुनि तपसी वनवासी, दंडी[10] मुंडी[11] सिद्ध उदासी, कहु वचन न दीनोरे ॥ गण गन्धर्व[12] असुर सुर किन्नर[13], दैत्य[14] पिशाच प्रेत विद्याधर[15], इनको क्या ? पर विधि हरि शङ्कर छलि लिये तीनोरे ! ॥ अब औरनकी कौन चलाई, जो बैठे हैं स्वांग बनाई, त्याग बताके करें ठगाई । धिग यह जीनोरे ! ॥ बचा चहो तो मनको बाँधो[16], सत्य नाम

---

१ देखा. २ स्मरण. ३ चिन्ता. ४ बन्द किये. ५ जन्म स्थान. ६ ईशान कोण. ७ बुद्धिमान. ८ मूर्ख. ९ चञ्चल. १० दण्डधारी. ११ वैरागी, १२ गान करने-वाले देव. १३ एक प्रकारके देव. १४ राक्षस. १५ देवविशेष. १६ रोको.

उरमें आराधो, कहैं कवीर सुनो भाई साधो, गुरु पद चीन्होरे ! ॥ ३ ॥

ठुमरी ध्वनि जँगला.

सुन्दर तन पाय न करु अभिमान । त्यागि सकल अनरीति[1] प्रीतियुत, धरु सतगुरुको ध्यान ॥ टे० ॥ दुख सुख सब जीवनको जगमें, व्यापत एक समान । दया धर्म कुछ राखि हृदयमें, दे भूखेको दान ॥ कर्म भोग भोगनको आया, दो दिनका मिहमान[2] । सदा न रहै साहिबी तेरी, क्षणभंगुर[3] कहि जान ॥ जन्म पाय नर सुकृत[4] करिले, जो चाहै कल्यान । गहु सतपन्थ ग्रन्थ गुरु संमत[5], कहैं जो सन्त सुजान ॥ बारम्बार कवीर कहत हैं, सुनि ले मूढ अयान[6] । जो मानै तौ मान नहीं यह, गोय यह मैदान ॥ १ ॥

करो न कोई यह मनकी परतीत[7] । थाह बताय डुबावत भवमें, बनि हितकारी मीत[8] ॥ टे० ॥ गनै न उदय अस्त निशि वासर, छाहँ धूप जल शीत । भटकत फिरै निरन्तर चहुँदिश, ऐसो महा पलीत[9] ॥ स्वर्ग पताल जाय एक पलमें, कपिसम[10] अति निरभीत[11] । गण गन्धर्व असुर सुर किन्नर, सबको लीनो जीत ॥ ऋषी मुनी योगी वनवासी, तपसी सिद्ध अतीत । छल्यो सकल

---

१ अन्याय. २ पाहुना. ३ नाशमान. ४ पुण्य. ५ मान्य. ६ मूर्ख. ७ विश्वास ८ मित्र. ९ अधम. १० बन्दर. ११ निरभय.

ज्ञानी विज्ञानी, बहुविध कारि अनरीत ॥ सुनै न एक सीख काहूकी, गावै अपनीहि गीत । कहैं कवीर डरे यह तिनसे, जिनकी गुरुसे प्रीत ॥ २ ॥

जगतमें तो सम कौन अनारी[1] । चहत बुझावन[2] काम अग्निको, विषय भोग घृत डारी॥टे० ॥ रह्यो सदा झूंठे झगरनमें, शठ प्रभुनाम विसारी । खायो पियो अघाय पेटभरी, सोयो पांव पसारी ॥ तृष्णाके वश भटकत डोल्यो, निशिवासर झख मारी । छल परपंच कपट फैलावत, उमर गँवाई सारी ॥ कबहुँ न सुमति आनि उर तनकहु, देख्यो आँखि उघारी । अन्त समय यमदूत आयके, का गति करहिं हमारी ॥ अजहूं मानु सीख सन्तनकी, भाव भक्ति उरधारी । गहु गुरु शरण तरण भवसागर, कहैं कवीर पुकारी ॥ ३ ॥

समय यह नीको बीत्यो जात । पल २ क्षण २ घरी पहर होय, दिवस सांझ परभात ॥ टे० ॥ फूटे घट जिमि वारि[3] आयु तिमि, क्षीण होत दिनरात । तापर जरा वाघिनीके सम, आवत है अकुलात ॥ विविध प्रकार रोग शत्रुगण, मारि २ कै लात। करत प्रहार[4] वज्र जिमि तनपर, यहि नाना उतपात ॥ मुखमें दांत रहे नहिं एकहु, शिथिल[5] होय सब गात । देखि न परै नयनसे मारग, तृष्णा तहूं न बुढात ॥ कहैं कवीर सुनौ भाई

---

१ मूर्ख. २ शीतल करना. ३ जल. ४ मारना, वार करना. ५ ढीला.

साधो, एक हमारी बात । मन वच सत्यनाम आराधो, जो चाहो कुशलात[1] ॥ ४ ॥

कृपानिधि अब तौ मोहि तन[2] हेरो । तुम बिन कौन और है जगमें, नाथ सहायक मेरो ॥ टे० ॥ भटकत फिरत दुष्ट मन इत उत, जैसे अल्लबछेरो[3] । उर सन्तोष करब नहिं पावत, एक पल आय बसेरो[4] ॥ कुमति प्रबल होय लरति सुमतिसे, कारि घट मांहि अँधेरो । राखा चहत मोह अपने वश, प्रभु यह न्यावनिवेरो ॥ युगन २ तन धारि अनेकन, कूकर शूकर केरो । भवसागरकी प्रबल धारमें, पायो दुख बहुतेरो ॥ धर्मदास विनवे कर जोरी, चरण कमलको चेरो । अभय दान गुरु देहु दयाकारि, मेटि चौरासी फेरो ॥ ५ ॥

शरण तोरी आयो गरीबनिवाज[5] । कलिमल हरण करण मुदमङ्गल, भवनिधितरण जहाज ॥ टे० ॥ विश्व आय अवतार लियो तुम, अधम उधारन कांज[6] । मो सम कौन जगतमें दूसर, पतितनको शिरताजं[7] ॥ कुबुधि अधीन रहों निशिवासर, खोरि[8] विषयकी खाज । कबहुं न सुनी सीख सन्तनकी बैठिके साधु समाज ॥ किये अनेक अधर्म कर्म मैं, महाकुगतिको सांज[9] । अति मलीन मति हीन दीनकी, अब तुमको है लाज ॥

---

१ कल्याण. २ मेरी तरफ देखो. ३ जिसको लगाम नहीं चढाई गई ऐसा घोडेका बच्चा ४ निवास. ५ दीनोद्धारण. ६ अर्थ. ७ मुकुट. ८ खुजाके. ९ साहित्य.

करुणासिन्धु कबीर कृपा करि. कर पकऱ्यो गुरुराज।
होय कृतार्थ धर्मदास कहत हैं, धन्य पुण्य मम आज॥८॥
 धन्य नर गुरुमहिमा जो जाने। सो अति नीच त्रिलोक्य पूज्य है, अस कथि कहत सयाने॥ टे०॥ वेद पुराण सन्त गुरुके गुण, हरिसे अधिक बखाने। नाम लेत अघ पुञ्ज नाश होय, तीनो ताप सिराने॥ हरि-माया वश जीव भ्रमत हैं, मोहपाश उरझाने। गुरुकी कृपा छूटि बन्धनसे, पहुँचैं मुक्ति ठिकाने॥ जानि मनुष्य मूढ जो गुरुको, सेवत चरण विराने। ते नर महा अधम हैं पामर, केवल कलिमलसाने॥ भवसागरमें भटकत २ अजहूँ न पावैं पिराने। धर्मदास विश्वास हीन जन, जमके हाथ बिकाने॥ ६॥

गजल, ताल दादरा.

 मोहि अति अजान जानिकै, मोपै कृपा करो। जग-जाल अति कराल शाल, मेरो प्रभु हरो॥ टे०॥ वह इन्द्रमतीकी पुकार, सुनि उदार हो। कीन्ही सहाय जायकै, तक्षक बहोत डरो॥ जब सेतु बांधनेको, पुकारा था रामने। तब धाय आये कौनसो, संकट तुम्हे परो॥ पुनि जाय जगन्नाथमें, तुम योगदण्डसे। सागर हटाया आपने, अति कोपसे भरो॥ साहिब कबीर मेरी पीरके,

१ शीतल हुए. २ स्थान. ३ अन्येक. ४ पापसे भरे. ५ एक प्रकारका सर्प. ६ आसा.

बखत कहां ? । सोये हौ आप जायके, कुछ मनमें अब धरो ॥ १ ॥

गजल ध्वनि ईमन.

विषयोंसे मनको तृप्त, कराना नहीं अच्छा । जलती अगिनको, घीसे बुझाना नहीं अच्छा ॥ टे० ॥ सुख भोग ये जगतके, सबी हैंगे नाशमान । तृष्णाको बढा, जीको फँसाना नहीं अच्छा ॥ ये स्वप्नका तमाशा, है झूठमूठका । रंगरंगके खेल, देख लुभाना नहीं अच्छा ॥ धन धाम पुत्र कलत्र, रूप जो पाया । हरगिज गरूर, इनका है लाना नहीं अच्छा ॥ पल २ अमोल जाती है, कहते हैं ये कबीर । मानुष शरीर मुफ्त गँवाना नहीं अच्छा ॥ १ ॥

प्रबल ये सैन मायाने, चलाई है कृपासिन्धू । बचाले कालसे, तेरी दुहाई है कृपासिन्धू ॥ टे० ॥ गर्भमें कौल था मेरा, न भूलूं ध्यान मैं तेरा । वो बातें उसने छल बलसे, भुलाई हैं कृपासिन्धू ॥ हमेशा लोभसे रहता है, मनमैला बना वेशक । दिखानेको ये ऊपरकी सफाई है कृपासिन्धू ॥ पड़ा अज्ञानके वशमें, तड़फता हूं मैं मुर्ततसे । तेरेही हाथमें मेरी, रिहाई है कृपासिन्धू ॥ त्रिविध कर्मोंसे जो पैदा, जन्म अरु मरण बीमारी । वो तेरीही

१ मोहित होना. २ स्त्री. ३ कदापि. ४ अभिमान. ५ व्यर्थ. ६ कटाक्ष. ७ वचन ८ यथार्थ. ९ स्वच्छता. १० व्याकुल होना. ११ बहुत कालसे. १२ मोक्ष.

कृपा इसकी, दवाई है कृपासिन्धू ॥ अजब ढँगकी यह दुनिया जो, दुरंगी देख पडती है । सो सब तेरीही कुदर्-रतने, बनाई है कृपासिन्धू ॥ नहीं है दोष कुछ तेरा, हुआ जो होरहा होगा । ये सुखदुख सबको कर्मोंकी, कमाई है कृपासिन्धू ॥ विना भक्तीसे जो कवीर, तारे हैं कई पापी । इसीसे जगत्में तेरी, बडाई है कृपासिन्धू ॥ २ ॥

गजल ध्वनि अँगला.

वो जो गर्भमें दुख था जबर, तुझे याद हो कि, न याद हो । आया था तब तूँ कौलकर, तुझे याद हो कि, न याद हो ॥ टे० ॥ मलमूत्रसे तौ शरीर सब, लिपटा-हुआ दुरगन्धमें । जठराग्निसे जलनेका डर, तुझे याद हो कि न याद हो ॥ उलटा टँगा अति कष्टसे, नीचा किये शिर पैरमें । रोताथा हरदम आंख भर, तुझे याद हो कि न याद हो ॥ इस दुःखसे काढौ मुझे, हरगिज न भूलूँगा मैं तुझे । कहता था होहोके बेखबर, तुझे याद हो कि न याद हो ॥ नवमास रक्षा की प्रभू, फिर गर्भसे बाहेर किया । बलहीन बालक बेखबर, तुझे याद हो कि न याद हो ॥ फिर दूधसे पालन किया हो, ज्वान मायामें फँसा । फिरने लगा तूं इधर उधर, तुझे याद हो कि न याद हो ॥ कपडे अभूषण पहनकर, चलनेमें देखै छाँहको ।

१ अद्भुत प्रकारकी. २ द्वन्द्वसहित. ३ माया. ४ फल प्राप्ति. ५ कठिन. ६ स्मरण. ७ अधैर्य. ८ अज्ञान.

मोहित हुवा लखि नारिपर, तुझे याद हो कि न याद हो ॥ रहकर जवानी कुछ दिनो, आते बुढापा देख कर । कँपने लगा शिर सरबसर[1], तुझे याद हो कि न याद हो ॥ अबभी तो मूरख चेत तूँ, तीनों ये पन योंही गये। कबीर कहते हैं अगर[2], तुझे याद हो कि न याद हो ॥ १ ॥

गजल ध्वनि जिला.

तजि सकल तदबीर[3], एक कवीरको ध्याया करो । होके दीन अधीन सन्तोंके, निकट[4] आया करो ॥ टे० ॥ फूल फल परसाद, थोडा बहुत श्रद्धाके सहित । बन-सके जो कुछ सो, उनकी भेंटको लाया करो ॥ धरके सन्मुख उनके, अपने हाथ दोनों जोडकर । अदबसे[5] अभिमान तजि, चरणोंमें शिर नाया करो ॥ सुनिके उपदेशोंको उनके, मननकर फिर बारबार । निदिध्या-सन करके उसको, काममें लाया करो ॥ दमबदम[6] कर याद वह, धर्मदास उठते बैठते, सत्य साहिब, सत्य साहिब, कहके गुन गाया करो ॥ १ ॥

गजल ध्वनि खम्माच.

भरा सतसंगका दरिया[7], नहालो जिसका जीचाहै[8] । जिगरसे[9] दाग[10] पाकका, छुडालो जिसका जी चाहै ॥ टे० ॥ न ऐसा और है तीरथ, जगतमें दूसरा कोई ।

---

१ साक्षात्. २ यदि. ३ प्रयत्न. ४ पास. ५ नम्रतासे. ६ निरन्तर. ७ समुद्र. ८ इच्छा हो. ९ अन्तःकरणसे, दिलसे. १० संस्कार
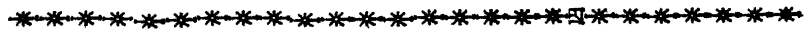
गया हरद्वार जाके, आजमालो[1] जिसका जी चाहै ॥ ऋषी मुनियोंने भी गाई, बहोत कुछ इसकी जो महिमा। लिखी वह पोथियोंमें है, पढालो जिसका जी चाहे ॥ नहीं इसमें जरा तैअज्जुब[2], जो फल सन्तोंने फरमाया[3]। कागसे हंस अपनेको, बनालो जिसका जी चाहै ॥ हजारों रत्न बेशमंत[4], भरे आलासे[5] आला हैं। जरा इसमें लगा गोता[6], उठाले जिसका जी चाहै ॥ मुकत होना चहो दुखसे, तौ तुम धर्मदास सतगुरुके। शरण आ कालसे तिनका, तुडालो जिसका जी चाहै ॥ १ ॥

हे नाथ! इस जगतमें, सिवा कौन तुम्हारे?। माता पिता स्वामी सखा, बंधू है हमारे ॥ टे० ॥ ऐसा दयाल और, नहीं दूसरा धनी। करि कष्ट नष्ट जीवके, दुखद्वन्द निवारे॥जब २ तुम्हारा नाम लै, भक्तोंने पुकारा। तब २ सहाय करनेको, आपी तौ सिधारे ॥ चारों युगोंमें धारि रूप, तुम प्रगट भये। पापी अनेक तारकै, भवपार उतारे ॥ महिमा अनन्त आपकी, कोई न कहसके। यह जानि भेद वेद, नेति २ उचारे ॥ अब बेगि मोहिं दीजे, दर्शन कृपानिधे। होय अति अधीन दीन, धर्मदास पुकारे ॥ २ ॥

विनती मेरी पै ध्यान, जो है तुम्हारा नहीं। आश्रित क्या दास आपका, मै बिचारा[7] नहीं ॥ टे० ॥ मैं तो

---

१ परीक्षा कर लो. २ आश्चर्य. ३ कथन किया. ४ अमूल्य. ५ श्रेष्ठ. ६ डुबकी. ७ दीन.

अनाथ मेरे, कौन दूसरा धनी । एक छोड तुम्हे और मुझे सहारा[१] नहीं ॥ मेरी तौ दौड़[२] फक्त[३], तुम्हींतक कृपानिधे । तीनौं भुवनमें और, कहीं गुजारा[४] नहीं ॥ कई एक दफे जो आफतें, भक्तोंपै आपडीं[५] । तो आपने क्या उनके, दुखको निवारा नहीं ? ॥ क्या मुझसरीके[६] पातकी, तुमने कभी कोई । भवसिन्धु डूबतैंसे, पार उतारा नहीं ? ॥ माना की मैंने पाप, मेरे है प्रबल संही[७] । पर कम् भी तुम्हारी, दयाको इशारा[८] नहीं ॥ दरशन जो अबतलक, न दिये आपने कवीर । क्या लैके धर्मदास, नाम पुकारा नहीं ? ॥ ३ ॥

गजल ध्वनि पीलू.

जगत् जिसका ये कुल[९], बनाया हुआ है । वही सब घटोंमें, समया हुआ है ॥ टे० ॥ नहीं दूसरा कोई, है उससे न्यारा । वो अपनेमें, आपी भुलाया हुआ है । हरएक[१०] शै जो हैगी, वो रङ्गोबरङ्गी[११] । ये जलवा[१२] उसीका दिखाया हुआ है ॥ उसीकी अकलमें[१३], ये आती है बातें । शरण सद्गुरुकी, जो आया हुआ है । है ताकत[१४] उसीमेहीं, मूँखोलनेकी[१५] । जो कुछ भेद सन्तोंसे, पाया हुवा है।

---

१ आश्रय. २ प्रयत्न. ३ केवल. ४ निर्वाह. ५ प्राप्त हुई. ६ मेरे समान. ७ सत्य. ८ कटाक्ष ९ यह संपूर्ण. १० प्रत्येक पदार्थ. ११ नाना प्रकारके. १२ जोति, प्रकाश. १३ बुद्धिमें. १४ शक्ति. १५ कहनेकी.

धरमदास अपनी, उसीकी फिक्रमें । करोड़ोंकी दौलत लुटाया हुआ है ॥ १ ॥

गजल ध्वनि कहरवा.

कृपा करनेको भक्तोंपर, प्रभू सतलोकसे आये । कमलदलपर प्रगट, काशीमें हो कबीर कहवाये ॥ टे० ॥ बनाके वेष साधूका, लगे फिरने घरोघरमें । कहैं हमसे करो चर्चा, ये सुन विद्वान घबराये[२] ॥ चली नहिं और कुछ युक्ति, तौ सब पण्डित लगे कहने । बतावो ये हमैं पहले कि, दीक्षा किससे तुम लाये ॥ न हरगिज[३] ज्ञान दुनियाँमें, कभी परमान होता है । विना कोई गुरुके पास, जाकर काँन फुंकुँवाये[४] ॥ ये सुन कौतुक[५] किया ऐसा, धर्यो लघु[६] रूप बालकका, जाय गङ्गा किनारे घाट, पर सोये थे शिर नाँये[७] ॥ नहानेके समय जातेमें, रामानन्द स्वामीकी । खडाऊँ आलगी शिरमें, तौ दैया[८] ! कहके चिल्लाये[९] ॥ दयालू सन्त थे स्वामी, उठाके गोदमें बोले । भजो श्रीराम मत रोवो, मिटै दुख हरिका गुण गाये ॥ करी ऐसी कई लीला, कहाँतक कहसके कोई । मुक्ति धर्मदास है जगमें, उन्हींकी शरणमें जाये ॥ १ ॥

लीला अनेक देखके, सतगुरु कबीरकी । भई अक्ल परेशान है सुलतान मीरकी ॥ टे० ॥ सल्तनत[१०] बादशाही

---

१ विचारमें. २ चकित हुए. ३ कभी. ४ मंत्र सुने. ५ चरित्र. ६ छोटा. ७ मस्तक नीचा किये. ८ माँ. ९ रोये. १० राज्य.

थी उस वखत अजीब[1]। सब हो रहे थे हिन्दू, हरहालसे[2] गरीब ॥ धर्मों करमसे रहना, था किसके तब नसीब[3]। यह बात सम्वत पन्द्रा, सौके कि है करीब ॥ फैली जगत्में चरचा, थी धर्मवीरकी। भई अक्क० ॥ होलीके दिनों वेश्याको, लेके अपने साथ। फिरते फिरे काशीमें, डाले गलेमें हाथ ॥ रीवाँ नरेश[4] था वहीं, हाजिर बघेल[5]नाथ। आते कवीर देख, झुकाया न उसने माथ[6] ॥ चरणोंपै लगे ढारने, लै धार नीरकी। भई अक्क ० ॥ बोला बघेल वीरसिंह, देखिये कला। चरणोंमें वारि डारिके, करते हो क्या भला ? ॥ कहने लगे जगदीशमें, पण्डा जो लै चला। अँटका उठाके हाथसे, छूटा तो पग जला ॥ पानीसे जलत उसके, बुझाई सरीरकी । भई अक्क० ॥ राजाने भेजा कासिद[9] फौरन[10] बुलायके । ला खबर[11] खास जलदी जगदीश जायकै ॥ कहते कवीर सच हैं, कि बातें बनायकै। झूंठी हमारे सामने, दुर्गुण छिपायकै ॥ ठहरावो हाल ठीक[13] २, बेनजीर[14]की। भई अक्क० ॥ उस वख्त[15] सिकन्दर कहीं, काशीमें था आया। संग अपने शेखतकी पीर[16]कोभी था लाया ॥ लोंगोंने जाके सारा[17], हाल उसको सुनाया । सुनतेही सिकन्दरसे, कहके

---

१ अद्भुत. २ सर्व प्रकार. ३ प्रारब्धमे. ४ राजा. ५ क्षत्रीजातिविशेष. ६ मस्तक. ७ चरित्र. ८ जल. ९ दूत. १० जलदी. ११ समाचार. १२ यथार्थ. १३ सत्य. १४ अपूर्व. १५ समय. १६ गुरु. १७ संपूर्ण.
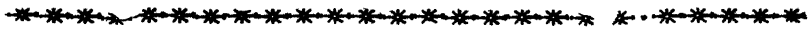
उनको बुलाया ॥ देखो हुजूर करामात[1], इस फकीरकी[2] । भई अक्ल० ॥ आतेहि सिकन्दरको, रहम[3] न जरा आई । गरदनमें तौंक हतकडी, हाथोंमें डलाई ॥ बेडी भराके पांवमें, मुश्कें भी कसाई । फिकवा दिया गङ्गामें, गठड़ीमें बँधाई ॥ पर थी उन्हें परवाह[4] कब ?, लोहे जँजीरकी । भई० अक्ल० ॥ बुलवाके कातिलोंको[5], टुकडे करा बदनके[6] । मँगवाके देग[7] उगमें, भरवाके कनके[8] कनके ॥ चढवाके आगपै वहीं हाजिर खडा था तनके[9] । सब करलिये इरादे, पूरे जो कुछ थे मनके ॥ सतगुरु खड़े खडे तखत[10], नजर आये वजीरकी । भई अक्ल० ॥ आयाँ[11] वजीर पास, बादशाहके धायके । कहनें लगा करते हो क्या आतिश[12] जलायके ॥ बैठे कवीर तो है, वहाँ तख्त जायके । शरमाके सिकन्दर है, गिरा चरण जायके ॥ गति धन्य धर्मदास है, अति गुणगँभीरकी । भई अक्ल० ॥ ८४ ॥

लावनी ध्वनि गारी.

चलो सखी दरशनको सरतीर ।
प्रगट भये सतगुरु सत्य कवीर ॥ टे० ॥
समय अरुणोदयके[13] परभात । विमल है जल बिच

---

१ सिद्धि. २ साधु. ३ दया. ४ चिन्ता. ५ चांडाल. ६ शरीर. ७ हंडा. ८ बारीक टुकडा, ९ दृढ होकर. १० सिंहासन. ११ मंत्री. १२ अग्नि. १३ सूर्योदय.

पुरइनके पात, अवतरे बालरूप मृदुगात। देखि सुन्दरता काम लजात ॥

परम मनोहर रूप अति, शोभा वरणि न जाय।
उपमा काह त्रिलोकमें, जो कोई देवे लाय ॥
मनो रवि उदय भयो तम चीर। प्रगट भये० ॥

जुलाहा गमन लिये घर जाय, सरोवरके तट पहुंच्योआय, देखि बालक तिय गई लोभाय, धायके लीन्ह्यो गोद उठाय ॥

देखत बालक गोदमें, जुलहा कह्यो सरोष।
धरु जहँ ते लाई तहां, लोग लगावें दोष ॥
तबे तिय बोली उर धरि धीर। प्रगट भये० ॥

देखि यह बालक मोहि मुसकात। मनो कुछ कहन चहतहै बात ॥ पिया मोहि ताते अधिक सोहात। लै चलो घर सब तजि उतपात ॥

सुनत बात यह नारिकी, काढि लई तलवार।
धरि चलु बालकको यहीं, नहिं तो डारूं मार ॥
कह्यो यहि विधि जब त्रास दिखाय। नाय शिर रहगई तिय सकुचाय ॥ हाय अब करूं मै कौन उपाय ?। जायके दूबपे दियो सोवाय ॥

सजल[2] नयन अति विकल तन, कहि न सके कुछ बात।
धरणि परी जिमि माछली[3], विन जलके अकुलात ॥
भई तब नभसे[4] गिरा[5] गँभीर। प्रगट भये० ॥

१ बखेडा. २ अश्रु भरे हुए. ३ मच्छी. ४ आकाश. ५ वाणी.

तोहि तारण कारण सर्वेश । धन्यो निज बालरूप यहि देश[1] ॥ धामलै जागके सुनु उपदेश । मिटे सब जन्म मरण भवक्लेश ॥

सुनि अकाशवाणी बिमल, चकित भयो चितमाहिं ।
तियहि[2] कह्यो लै चलु घरे, अब मैं बरजौं[3] नाहिं ॥
बहन लगी मुदमय मलय समीर । प्रगट भये० ॥
प्रभू जुलहाके घर आये । सन्त सब दरशनको धाये ॥ सुमन[4] सुर नभसे वरषाये । विरद यश बन्दीजन गाये ॥

दीनबन्धु करुणा भवन, समन सकल दुखद्वन्द ।
पन्थ चलायो जगत्में करि गुरु रामानन्द ॥
मेटि धर्मदासकी भवनिधि पीर । प्रगट भये ० ॥

लावनी रंगत लंगडी.

करुणा भवन कवीर, समन भवपीर वीर विग्रह[5] धारी । अति उपकारी, कमल दल प्रगटे निज इच्छाचारी । टे० ॥ कुन्द इन्दु अनुरूप[6], देखि वपु[7] अति अनूप मनमथ[8] लाजे । करत पराजय, कौमुदी[9] दिव्य वसन भूषण साजे ॥ दिपंति[10] अमित मणि जड़ित, तड़ित[11] आभाजित[12] शीश मुकुट राजे । तिलक मनोहर, भाल सुचि सुमन माल उरमें भ्राजे ॥

---

१ स्थान. २ स्त्रीको. ३ मना करता हूं. ४ पुष्प. ५ शरीर. ६ सदृश. ७ शरीर. ८ कामदेव. ९ चन्द्रमाका प्रकाश. १० प्रकाशित. ११ विद्युत. १२ प्रकाशको जीतनेवाला.
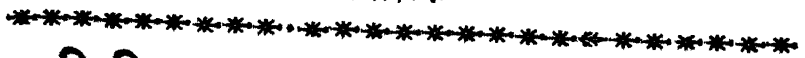
निरविकार अकार निरमल, नित्यमुक्त निरामयम् ।
निजानन्दानन्दकन्द, स्वच्छन्दमद्भुतमद्वयम् ॥
निरनिमित्य परार्थकारी, निरममत्व मुदालयम् ।
निरविवाह विषाद निरगत, निष्प्रपञ्चस निरभयम् ॥
भ्रान्ति ध्वान्त ध्वंसक प्रभान, निरभ्रान्ति विमल
विद्या धारी । अति उपकारी, कमल० ॥

मुद मङ्गल मय वेष, सुखद सर्वेश सर्वविद विज्ञानी ।
निरअभिमानी, विगत मल द्वेष क्लेश हत निरबानी ॥
ध्यावत सन्त महन्त, अन्त नहिं पावत है ज्ञानी । परम
सयानी, भारती चकित होत वरणत वानी ॥ यस्य
विविध चरित्र, चारु विचित्र सुरसरि निरमलम् ॥ वकनि
मंजि मराल, काकः पिकं भवन्ति निर्गलम् ॥ सिद्ध
मुनि योगिन्द्र, यति सुरवृन्द वन्द्य पदुत्पलम् । शेष वदत
अशेष मुख, गुण शक्यते न कथेत्यलम् ॥

योगदण्ड धारी अखण्ड पाखंड प्रचण्ड खण्डन कारी ।
अति उपकारी, कमल० ॥

सेवक सुखद कृपाल, काल कलि व्याल खगेश्वरं अति
अभिराम । धाम सुधामय, साम गावत निशिवासर जेहि
गुण ग्राम ॥ नाम जाप जपि विमल होत जन, मनन-

---

१ अभिमानरहित. २ अन्धकार. ३ मोक्षरूप. ४ सरस्वति. ५ स्नान
कारि. ६ हंस. ७ कोयल. ८ सत्य. ९ पूर्ण. १० गरुड. ११ सामदेव.

शील मुनिवत निष्काम। वामदेव[1]सम, प्रसन्न सेवत भवन्ति प्रभु पूरणकाम ॥
धर्मधुरीण प्रवीण गति, मति अपार विशारद[2]म्।
अज्ञान हरण प्रधान, निगदित[3] ज्ञान भव निधि पारदम्।
वेद बोधित कर्म वर्म[4], विचार सार असारदम्। आपत्तिहर सम्पत्ति सुख, प्रतिपत्ति[5] प्रचुर[6] प्रकारदम् ॥ वरदायक वरदेश विनायक, विश्वविदित वर ब्रह्मचारी।
अति उपकारी, कमल० ॥
अति अनल्प तरुकल्प, सत्य संकल्प अखिल अन्तरयामी। अपर[7] त्रिविष्टप[8] परात्पर प्रवर परमतर[9]सुखधामी।
अविनाशी अव्यक्त, अजर अज अमर चराचरके स्वामी ॥
अधम उधारण, तरण तारण कारण निज अनुगामी[10] ॥
यं[11] विधिर्वरुणेन्द्र इन्द्र, सुराः स्तुवन्ति[12] निरन्तरम्।
चिद्घनं दिव्यं ह्यमूर्तिं, पुरुषेति परात्परम्।
निराकार निरीह निरगुण, किञ्चिदस्ति न तत्परम्।
कञ्ज पर्ण समुद्भवं[13], पारद[14] भवाब्ध्यति दुस्तरम्[15] ॥
धर्मदास दासानुदास, भवदीय[16] दास आज्ञाकारी
अति उपकारी, कमल दल प्रगटे निजइच्छा० ॥

लावनी रंगत मोहिनी।

आनन्दकन्द अखिलेश्वर, अन्तरयामी। अघ ओघ

---

१ महादेव. २ विद्वान्. ३ कहा हुवा. ४ कवच, ५ प्राप्ति ६ बहोत. ७ इधर. ८ स्वर्ग. ९ अतीव १० सेवक. ११ जिसको. १२ स्तुति करते हैं. १३ उत्पन्न. १४ पार करनेवाले. १५ अपार. १६ आपका.

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

हरण तव, चरण कबीर नमामी ॥ टे० ॥ भव भ्रमित श्र-मित लखि, जीव दुखित अति भारी । करुणानिधि दीन, दयाल परम उपकारी ॥ सब काम क्रोध मद, मोह द्रोह रिपु मारी । काशीमें कमल पत्र, पर स्वेच्छाचारी ॥ धरि बालरूप प्रगटे, त्रिभुवनपति स्वामी । अघ ओघ० ॥ जग श्रेष्ठाचार प्रचार, करनको भाई । गंगातटपै कियो रामानँद गुरु जाई ॥ तजि पक्षपात विज्ञान, विविध विधि गाई । सद्ग्रन्थ अनेकन, रचे करी प्रभुताई ॥ निजपंथ चलायो, वीतराग[1] निष्कामी । अघ ओघ० ॥ जिस समय सिकन्दर, काशीजीमें आया । बावन परि[2]-चय सतगुरुने जाय दिखाया॥ यह कौतुक लखिके शेखतकी घबराया। जीता करवावो, मुरदेको फरमाया ॥ कीन्ह्यो कमाल[3] जिन्दा[4], तबहीं सतनामी । अघ ओघ० ॥ ऐसी अनेक लीला, प्रभुने बहु कीनी । नहिं जानें मूरख जिनकी बुद्धि मलीनी[5] ॥ बांधोगढमें धर्म दासको दीक्षा दीनी । कहँलग गुण वरणे इन्द्र मती मति हीनी ॥ सत रूप सत्यसंकल्प, सत्य सुख धामी । अघ ओघ० ॥

झूंठे झगडेमें पडि, क्यों जन्म गमावे । यह मनुष देह फिर, बारबार नहिं पावै ॥ टे० ॥ मति मूरख इतनी वेसरमाई[6] धारे । हित अनहित अपनो, तूं नहिं जरा

---

१ वैराग्यवान्. २ सिद्धि. ३ नामविशेष, अद्भुतता. ४ जीता. ५ दूषित मैली. ६ निर्लज्जता.

विचारे ॥ यह वृथा डुबोवे, आई नाव किनारे। विषयोंके वशपरि जीती बाजी हारे ॥ अब कहांतलक, तुझको कोई समुझावे ॥ यह मनुष० ॥ वे भूली बातें तुझे, सकल दुखदाई। जो गर्भवासमें, तूने यातना पाई ॥ अब चढो आय तेरे तनपर तरुणाई। मर्ग चलत निहारे सुन्दर नारि पराई ॥ करके गुमान लै तान, रागिनी गावे। यह मनुष० ॥ छल कपट त्यागि भजु, सत्य नाम सुखदाई। जिससे कुछ होवे, तेरी मूढ भलाई ॥ सुख संपति माया, दो दिनकी है भाई। बन सके सो कर ले, परमारथ जग आई ॥ जब काल अचानक, आय तुझे लै जावे। यह मनुष० ॥ सत संगति कर सन्तोंकी, शरणमें जाके। वे कहें सो सुन उपदेश, तूं ध्यान लगाके ॥ है तेरा यही कर्तव्य, जगतमें आके। कहते कबीर गुरु है, तुझको समझाके ॥ करि चतुराई मति, बातें बहुत बनावे। यह मनुष देह फिर बार बार नहिं पावै ॥

मलार–समय वर्षा ऋतु.

उमड़ि घुमड़ि चहुँ दिशिसे आय, कर्मनके बादर बरषे ॥ टे० ॥ सञ्चित अरु प्रारब्ध विविध विध, और करत जो करसे। सो सब भोग हेतु शरीर धारि, जीव जगत्में सरसे ॥ विषयके सुख सब चमकि दुरंत पुनि,

---

१ दुःख. २ मार्ग. ३ दूसरेकी. ४ एकाएकी. ५ काम. ६ पूर्व. कृतकर्म जो एकत्रित हैं. ७ फलोन्मुख कर्म. ८ प्रवृत्त हुए. ९ छिपती है.

द्युति दामिनिसे दरशे। ताको मूढ प्राप्ति इच्छा करि, देखि २ के तरसे[1] ॥ त्रिविध ताप नाना अनर्थयुत, नाश करनको जरसे[2]। अर्थ धर्म अरु काम मोक्षकी, करत याचना[3] हरसे ॥ कोई लै वैराग त्यागि सब, निकरि चले निज घरसे। जप तप व्रत संयम आराधत, जन्ममरणके डरसे ॥ गुरु कबीर सब कर्म नाशकरि, निजमति परख प्रवरसे। निश्चय करि सिद्धान्त लखायो, न्यारा क्षर[4] अक्षर[5]से ॥

आज घन[6] ज्ञान घटा घिरि आई। शीतल बहत समीर[7], सुगन्धित मन्द २ सरसाई ॥ टे० ॥ सुमति दामिनीकी द्युति दमकत, तम अज्ञान नशाई। बरषत विविध विचार सारपद, अखँड धार घर्राई[8] ॥ सकल विकार रहित अस पावस[9], की ऋतु लहि सुखदाई। धर्म विटप[10] वन कुञ्ज[11], सुकृत तृणपुञ्ज उठे हरियाई ॥ लखि मयूर मुनि मनन[12]शील धुनि, प्रमुदित कूकमचाई[13] । दादुर[14] दीन अधीन हीनजन, बोले अति हरषाई[15] ॥ चहुँ दिशि धर्मदास चित चात्रिक[16], चितवत[17] आस लगाई। स्वातिबुन्द सतगुरु बानी विन, नहिं मम प्यास बुझाई ॥

---

१ अभिलाष करता है. २ समूह. ३ माँगना, ४ नाशमान. ५ अविनाशी. ६ बादर. ७ वायु. ८ गर्जना करि. ९ वर्षा. १० वृक्ष. ११ लताच्छादित-स्थान. १२ विचार मान. १३ चिल्लाकर. १४ मेंडक. १५ आनन्दहो. १६ पपीहा. १७ देखता है.

पूर्वी । ( समय वर्षाऋतु. )

पीले प्याला हो मतवाला[1] प्याला प्रेम अमी[2] रसकारे ॥ टे॰ ॥ पाप पुण्य भुगतनेको[3] आया, कौन तेरा और तूं किसकारे ? । जहलँग स्वास[4] नाम ले प्रभुका धन यौवन स्वपना निशिकारे ॥ बालापन सब खेलि गवाँये । तरुण भयो नारी वशकारे । वृद्ध भयो तन कांपन लागे, फिर न जाय कतहूं सरकारे[5] ॥ नाभिकमलमें है कस्तूरी, वनवन मृग डोलै भटकारे । बिन सतगुरु इतना दुख पायो, कैसे भर्म मिटै पशुकारे ॥ जन्म मरणसे बचना चाहो, तौ छोडो कामिनी चसकारे[6] । कहैं कबीर सुनौ भाई साधो, नखसिख[7] रूप भरा विषकारे ॥ १ ॥

करन मतेसो[8] करै करतारे । और सबनको झूंठ मतारे ॥टे॰॥ कबहुँक शैल[9] शैलपर सागर, कबहुँक शोषे[10] सब सरितारे । कबहुँक नृपको करत है भिक्षुक, कबहुं रंक शिरक्षत्र धरतारे ॥ पूतना कौन सुकृत करि आई गुन अवगुन तजि करि प्रभुतारे[11] । ताहि मारि वैकुण्ठ पठायो, बलिराजामें कौन खतारे[12] ॥ एक पुत्रको नृप पचिहारे, जाके हती सहस्र वनितारे[13] ॥ साठ पुत्र नारदको दीन्यो, माया त्यागि विरति[14] रहतारे ॥ पञ्चभर्ता[15]

---

१ सांसारिक ज्ञान शून्य, उन्मत्त. २ अमृत. ३ भोगकरनेको ४ प्राण. ५ उठा बैठा. ६ अभ्यास. ७ नखसे चोटी पर्यन्त. ८ इरादा. ९ पर्वत. १० सोखे. ११ ऐश्वर्य. १२ अपराध. १३ स्त्री. १४ उपाराम. १५ द्रौपदी.

रीको व्रत राख्यो, दोष लगायो पतिवरतारे । कहैं कवीर कर्ताकी गति को, दूजा जगमें लखि सकतारे ॥ २ ॥

वसन्त ( समय, वसन्तऋतु )

वन्दों सतगुरु साहिब कृपाल । जासे छूटे भवद्वन्द्व[1] जाल ॥टे०॥ धरि ध्यान हृदय ध्यावे महेश । पदपङ्कज सेवैं अज सुरेश[2] ॥ नारद सारद अरु श्रुति[3] अशेष, मुख सहस करत गुणगान शेष ॥ अभिमान नाग[4] मृगपति[5] प्रचण्ड । त्रयताप अनल पावस अखण्ड ॥ सुरतरु[6] विशाल फल प्रद यथेष्ट[7], भवरोग हरण वर भिषग्[8] श्रेष्ठ ॥ अनुरोध[9]-रहित गति मति उदार । कश्मल[10] अरण्य तीक्ष्ण[11] कुठार ॥ अद्वैत अखिल पति सप्रमेय[12] रागादि व्याल[13]गण वैनतेय[14] ॥ वैरबन्ध विगत मल अति स्वच्छन्द । अनवद्य अनघ आनन्दकन्द ॥ धर्मदास और तजि सकल आस, राखत कवीरको दृढ[15] विश्वास ॥ ३ ॥

ऋतुराज आज आयो वसन्त । सतगुरु यश जग प्रगट्यो अनन्त ॥ टे० ॥ चहुँ दिशि अनुशासन[16] मय समीर । लगि बहन हरण भवजाल पीर ॥ तेहि परसि[17] बुद्धि कलिका[18] अनूप । भई विकशि[19] मुमुक्षु प्रसून[20]रूप ॥

---

१ जन्म मरणादि सुख दुःख. २ इन्द्र. ३ वेद. ४ हस्ती. ५ सिंह. ६ कल्पवृक्ष. ७ इच्छानुसार. ८ वैद्य. ९ निर्बन्ध. १० पाप ११ पैनी, धारदार. १२ प्रमाणसहित. १३ सर्प. १४ गरुड. १५ निश्चय. १६ उपदेशरूप १७ स्पर्शकरि. १८ कलि. १९ फूलिके. २० फूल.

श्रद्धा रसालतरु[1] धर्म मौंर। झौरनेपर[2] झूलत भक्त भौर॥ पतिझार[3] भयो कर्मनको सर्व। बहु जन्म २ कृत धारी गर्व[4]॥ अति प्रीतिसहित सत मत विधान[5]। करि कोकिल[6] साधू करत गान॥ करुणानिधान मुख चन्द्र ओर। चितवत सज्जन जन चित चकोर[7]॥ सतसंगति उपवन[8]में विचार। पल्लवित[9] भयो सिद्धांत सार॥ लखि शान्त होय उर जेहि प्रताप। धर्मदास नाश होय त्रिविध ताप॥ ४॥

मोरे सतगुरु खेलैं नित वसन्त। मिलि सन्त विशा[10]-रद मति महन्त॥ टे०॥ अनुराग भक्तिको घोरि रंग। छिरकें एकपर एक करि उमंग[11]॥ उर झोरीमें समता गुलाल। भरि वचन मूठि मारें कृपाल॥ नहिं सुर दुर[12]-लभ तन बारबार। ताते भजिले सतनाम सार॥ ना तो भवसागरकी धार जाय। तन कीट कृमी योनिनमें पाय॥ दुख भूख प्यास तप शीत द्वन्द। अति कठिन क्लेशके परहिं फन्द॥ औघटमें करि हो कहँ उपाव। जहँ नाहिं खेवैया[13] और नाव॥ मनही मन संकट घूटिघूंटि[14]। सहि रहिजैहो शिर कूटिकूटि[15]॥ तेहि कारण चेतहु अबहिं वीर[16]। समुझाय कहैं तुमको कबीर॥ ५॥

---

१ आम्रके वृक्ष. २ गुच्छोंपर. ३ पत्र गिरना. ४ अभिमान. ५ वर्णन. ६ कोयल. ७ पक्षी विशेष. ८ बाग. ९ कोपल फूटे. १० पंडित. ११ उत्साह. १२ दुष्प्राप्य. १३ पार करनेवाला. १४ पीपीकर. १५ पटक २. १६ भाई.

सतसङ्गतिकी महिमा अनन्त। सुनि साधुसन्त खेलैं बसन्त ॥ टे० ॥ गावें नारद वीणा बजाय। शङ्कर ताण्डव नृत करत आय ॥ शुकदेव व्यास सनकादि सङ्ग। लियो भाव भक्तिको घोरि रङ्ग ॥ गुरु ज्ञान गुलाल चढावें शीश। प्रल्हाद सुदामा अम्बरीष। बलभद्र बिभीषण विदुर सूत। अति प्रबल वीर हनुमन्त दूत ॥ नामा पीपा अरु अजामील। रंका वङ्का पुनि अग्र कील ॥ जैदेव सैन नाईको ठाट। रैदास भक्त अरु धना जाट ॥ गुरु रामानंदसे लै अबीर, सब संतनपर डारैं कबीर ॥ ६ ॥

होरी।

ऐसे नाम उजाकर, होरी खेलन जग आये ॥ टे० ॥ कमल पत्रपर प्रगट भये हैं,नीरू निज गृह लाये। होय शिष्य रामानन्द गुरुके, निरगुण पंथ चलाये ॥ कथि निरणय निरबान अभय पद, साखी शब्द बनाये। जड पूजाको खण्डन करिकै, आतमज्ञान दृढाये ॥ सत्य यथार्थ वचन सतगुरुके, सुनि पण्डित खिसिआये। षट्ट दरशन चरचाको आये, पार कोई नहिं पाये। काशीमें हाँसी करवाई, गणिका सङ्ग लगाये। निजचरणन जल ढारि दयानिधि, पण्डा जरत बचाये ॥ शाह सिकन्दर कसनी लीना,जरत अग्निमें डराये। लै यमुनामें पकरि डुबायो, निज समीप गुरुपाये। मस्ता हाथी आनि

१ संज्ञाविशेष. २ निकट. पास

झुकायो, सिंहरूप दरशाये । हाथी आय पर्‌यो चरणनमें, सत्य कबीर कहाये ॥ ७ ॥

हमारे को ! खेलै ऐसी होरी । जामे आवागमन[1] लगी डोरी[2] ॥ टे० ॥ श्रवण सुन्यो नयनन नहिं देख्यो पिय २ लागी लोरी[3] । पन्थ निहारत जन्म सिरान्यो, प्रगट मिल्यो नहिं चोरी ॥ जा कारण सब गृह तजि निकरे, लोकलाज कुछ तोरी[4] । तासे भेटै भई नहि अबलों, तनमें विरह[6] बढोरी ॥ कोई मस्तक जटा बढाये, काहूको मूंड़ मुड़ोरी । षट दरशन मिलि स्वांग बनायो, रचि जग मांहि ठगोरी[9] ॥ अङ्ग भभूति गले मृगछाला, कोई लिये गूदरी झोरी । कोई कमण्डल दण्ड ग्रहण करि, कपड़ा भगवा रँगोरी ॥ जगन्नाथ बद्री रामेश्वर, देश देशान्तर दोरी । अरसठ तीर्थ पृथिव परिकरमा, पुष्करमें लटबोरी ॥ वेद पुराण भागवत गीता, आठो जाम रटोरी ॥ कहै कबीर विना सतगुरुके, भर्म मिटै नहिं [10]भोरी ॥ ८ ॥

मोपे रङ्ग न डारो, मैं तो दिननकी थोरी ॥ टे० ॥ पिय देखनको घरसे मै निकरी, सास ननदकी चोरी । सखि अपने सँग पकरि लै आई, करि मोसे बरजोरी[11] ॥ फागको नाम सुनत डर लागत, कांपत तन सगरोरी[12] ।

---

१ आनाजाना. २ तार. ३ ध्यान. ४ तोडकर ५ प्राप्ति. ६ मिलनेकी अभिलाषा. ७ मस्तक. ८ घुटाहुवा. ९ ठगाई. १० भोली. ११ बलपूर्वक. १२ संपूर्ण.

तनक छुवत छाती धरकत है बँहियां जनि पकरोरी ॥
चोवा चन्दन अविर अरगजा, केसरि घोरि धरोरी।
अबके फागमें खेलि न जानो, परके[1] मैं खेलूँगी होरी ॥
ऐसी कहि रंगमे नहिं भीजी, कोटि उपाव करोरी।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, तृष्णा रहगई कोरी[2] ॥९॥

काया नगरकी पौरी[3], मन खेलत होरी ॥ टे० ॥ या नगरीमें चेतन राजा, प्रेमकी चार्चेर[4] जोरी। वनिता वृत्ति लिये अपने सँग, हिलमिल फाग रचोरी ॥ सुरतिकी वीना बाजन लागी, निरतिको डफ ठनकोरी। उठत तरङ्ग छतीस रागिनी, अनहतकी[5] घनघोरी[6] ॥ ज्ञान गुलाल लियो भरि झोरी, क्षमाकी केशर घोरी। पांच-पचीस सखी संग आई, तिनको रँगमें बोरी[7] ॥ घूँघट खोलि खेलु सन्मुख होय, अपने पिय सँग गोरी। कहैं कबीर फेरि[8] नहिं पइहो, ऐसो दांव[9] बहोरी[10] ॥ १० ॥

काहूको मारैगी, दृग अञ्जन नयन सँवार ॥ टे० ॥ भौंह कमान तानि तनकहु जो, तिरछी देत निहार। विरहबान लागत जहरीले, होत करेजे पार चन्द्रवदनि[11] मृगलोचनि[12] माया, करि सोरह शृङ्गार। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीनों, देव बनाये जार[13] ॥ नरसे नारी कियो

१ अगले वर्ष. २ शुष्क. ३ द्वारपर. ४ होली खेलनेवालोंका झुंड ५ योगनाद. ६ ध्वनि खूबजोरकी. ७ डुबाई. ८ पुनः ९ अवसर. १० पुनः फिरसे ११ चंद्रमुखी. १२ मृगनयनी. १३ उपपति.

नारदको, आप बनी भरतार[1] । साठ पुत्र तिनके उपजाये, करिके कपट अपार ॥ विश्वामित्र पराशर आदिक, वायू करत अहार[2] । शृंगी ऋषिसे और अनेकन, तपसी छले हजार ॥ जीव उबारन हम जग आये, हमरेहु लागी लोर[3] । कहैं कबीर सुनो भाई साधो, यासे रहो हुसियार[4] ॥ ११ ॥

होरीके खिलारीने, कैसी ? मजा करडारी ॥ टे० ॥ भारी भरमकी सारी फारी, वरवश पकर हमारी । त्रिगुण तनीं अँगियाकी तोरी, शब्द कुम्कुमा मारी ॥ ज्ञान गुलाल पर्यो नयननमें, मिटिगइ सब अँधियारी । एकहि भाव विलास[6] करत हैं, कौन पुरषको नारी ? ॥ नित्यानित्य देत है गारी, लोकलाज सब टारी । मोहकी वेसरि[7] कुमतिके कंगना, मानकी वेंदी उतारी ॥ पूरण लखि मन भूलिगयो है, ऐसी न देखी धमारी[8] । साहिब कबीर परख रँग रँगिया, परखिके कीनी न्यारी ॥ १२ ॥

सतगुरु प्रियतम पाऊं, हरषि हिय होरी खेलाऊँ ॥ टे० ॥ प्रवृति पन्थमें जात सखिनको, दै २ सयन बुलाऊँ । हिलमिल धाय जाय कृपालको, लै अपने गृह आऊँ ॥ चरण गहि फाग मचाऊँ । सतगुरु० ॥ प्रेमप्रीतिकी करि पिचकारी, भक्तिको रंग बनाऊँ । अनहत नाद झांझ डफ

१पति. २भोजन. ३अनन्त. ४पीछे. ५सावधान. ६केलि. ७नथ. ८होरी.

वीना, ढोल मृदंग बजाऊँ। लोभको नाच नचाऊँ ॥ सतगुरु० ॥ त्रिविधि कर्मकी धूरि उडाऊँ रथ दिनेश ठहराऊं ॥ जलप्रवाह स्थिर करि सरितनको, विधिको वेद भुलाऊँ ॥ ध्यान शंकरको डिगाऊँ। सतगुरु०॥ तन अरपों मन वारों चरणपर, सब धन धाम लुटाऊँ। साहिब कबीरसे फगुवा मैं लेऊँ, तो धर्मदास कहाऊँ ॥ मुक्तिको पन्थ चलाऊं सतगुरु० ॥ १२ ॥

मैं तो जात हती निज बाँट[१] २, मोहि सतगुरु होरी खेलाई ॥ टे०॥ कृपाकी केसर घोरि बोरि तन, चूनरि रंगमें भिगाई। शब्द कुम्कुमा मारि हजारन, ज्ञानगुलाल उड़ाई ॥ जाय नभ ऊपर छाई। मोहिं सतगुरु० ॥ आय विवेक अबीर पर्‌यो, मेरे नयनन अति सुखदाई। विविध प्रकार उपाव कियो, नहि निकस्यो रह्यो समाई ॥ कछू मोसे बन नहिं आई ॥ मोहि सतगुरु० ॥ त्यागि दियो धन धाम काम सब, बास एकान्त सोहाई। मिल्यो अचानक आय प्राणपति, कर गहि कण्ठ लगाई ॥ भूल गई सब चतुराई। मोहिं सतगुरु० ॥ सगरो शृंगार बिगार दियो मेरो, भरमकी गाँठ छुडाई। लाजकी बात न जात कही कछु, निजउपदेश दृढाई ॥ दियो एक मन्त्र सुनाई। मोहि सतगुरु० ॥ अस्ति[३] भाँति[४] प्रियं[५] रूप है तोरो, सब

---

१ रज. २ मार्ग ३ सत. ४ चित. ५ आनन्द.

तेरो प्रभुताई। गाय कबीर अबीर उड़ायो, धर्मिनि अति सुख पाई ॥बजी तिहुँलोक बधाई॥ मोहिसतगुरु०॥१४॥

आज मैंने देखो अनोखो[1] खिलारी। मोसे करि झकं-झोरी[2] होरी खेले वरजोरी, मोरी सगरी[3] भिजोय दीनी सारी ॥ टे० ॥ लोक वेद मग जात अचानक, रोकत गैल हमारी। करगहि कँगन मोहके तोरत, अरु मारत पिचकारी ॥ देत गुरुगँमकी[4] गारी। मैंने देखो० ॥ न्याय मीमाँसा सांख्य पतञ्जल, वैशेषिकहू विचारी। प्रक्रिया-सहित वेदान्त व्यासकृत, षट दर्शन निर्धारी[5] ॥ परख वाकी सबसे है न्यारी[6] ॥ मैंने देखो० ॥ शिव सनकादि और ब्रह्मादिक, गौतम शुक ब्रह्मचारी। गोरखदत्त वशिष्ठ श्रेष्ठ जग, ये महान आचारी ॥ बुद्धि इन सबकी हारी। मैंने देखो० ॥ निज पदके रँग बोरि दियो मोहि भ्रांति भेद सब टारी। तापर ज्ञान गुलाल सुरँङ्गी[7], मारि कुम्कु-मन डारी ॥ भरमकी अँगिया फारी। मैंने देखो० ॥ धर्मिनि गुरुके चरण कमलपर, तन मन धन सबवारी। बजन लगी तिहुँ लोक बधाई, मँगन लगी फगुवारी ॥ भक्ति मोहि दीजे तुम्हारी। मैंने देखो० ॥१५॥

आज निज घटबिच फाग मचैहों। तजि मोह मान करुणा निधानके, ध्यान चरणमें लगैहों ॥टे०॥ यक स्वर

---

१- अद्भुत. २ छीना झपटी. ३ सपूर्ण. ४ गुरुका ज्ञान. ५ व्यवस्था. ६ भिन्न. जुदी. ७ सुन्दर रङ्गकी.

साधि तँबूरा तनको, स्वासके तार मिलैहों। मोद मृदंग मँजीरा मनसा, विनयको बीन बजैहों ॥ भजन सत नामको गैहों ॥ आज निज० ॥ भक्ति उमंग रंग केसरको लै प्रभुपै ढरकैहों। प्रेम सनेह गुलाल अरगजा, उनहींके शीश चढैहों ॥ सुरतिकी मुरति बनैहों ॥ आज निज० ॥ सार विचार शृंगार साजिमति[1], सन्मुख आनि नचैहों। विविध प्रकार रिझाय[2] नाथको, फगुवा लै कारिहों ॥ अखँड सुखपाय अघैहों ॥ आज निज० ॥ कीच उलीच नीच कर्मनको, निगुरनपर वर्षैहों। पातिक जारि राख करि कारिखै[3], विमुखके मुखपै लगैहों ॥ तबैं धर्मदास कहै हों ॥ आज निज घटबिच फाग मचैहों ॥ १६ ॥

जड़ चेतनकी उरझी गाँठ, ये तो सुरझत नहिं सुरझाई ॥ टे० ॥ अमल अचल अव्यय अविनाशी, जेहि श्रुति गुण बहु गाई। सो मायावश बँध्यो आपही, शुक[4] मरकटकी नाईं ॥ भ्रमत चौरासी जाई। येतो सुरझ० ॥ तीरथ व्रत आचार विविध विधि, जपतप आदि उपाई। ज्यों २ करत यत्न छूटनको, त्यों २ होय दृढताई[5] ॥ परत फन्दा अधिकाई[6] ॥ येतो सुर० ॥ यद्यपि मृषा[7] तदपि छूटत नहिं, मोहजनित तम[8] पाई। देखि न परत ज्ञान दीपक बिन छूटि सकै किमि भाई ॥ अनिरवंचनी-

१ बुद्धि. २ प्रसन्नकारि. ३ काजल. ४ तोता. ५ कठिनता. ६ विशेष. ७ मिथ्या. ८ अज्ञानजन्य अन्धकार. ९ सत असतसे विलक्षण.

प्रभुताई । येलो सुरझ॰ ॥ सतगुरु कृपा ग्रन्थि छूटनकी, युक्ति कबीर बताई । आतम अनुभव[1]के प्रकाश करि, सहज मुक्ति होय जाई ॥ मिटत संभ्रम[2] समुदाई[3] ॥

होरी अनोखी ये भाई । सुनो साधो चित लाई ॥टे०॥ उर्तसे[4] अखिल वेद श्रुति बनिता; बहु प्रकारकी आई । कोइ भोरी कोइ बाल किशोरी[5], कोई जहरकी बुझाई ॥ भरी सब गुण चतुराई । होरी अनो[7] ॥ इतसे[6] गुरु मुख शब्द यथारथ, परस्वरूप सुखदाई । सरल मनोहर शान्त मोदप्रद, शील सहित तहँ जाई ॥ परस्पर फाग मचाई । होरी अनो० ॥ कर्मविधायक[8] नवप्रमदा[9] यक, लै गुलाल कर धाई । ताकी पकरि बाँह सब चूनरि, निज रंगमांहि भिजाई ॥ तबै रहगई खिसियाँई[10] । होरी अनो० ॥ दूजी अवसर जानि ठानि निज, मनमें अति दृढताई । आगू चली अबीर उड़ावन, रपटि गिरी अकुलाई ॥ मानो कोई मूठ[11] चलाई ॥ होरी अनो० ॥ तीजी ईश मनाय[12] विविध विधि, ले पिचकारी धाई । नहिं वश चल्यो फिरी पाछे पुनि, देखि रही सकुचाई[13] । हाथ मींजत पछिताई । होरी अनो० ॥ योगयुक्ति आगर[14] चौथी पुनि, अनहत ढोल

---

१ साक्षात्. २ भय, ३ समूह. ४ उधरसे. ५ तरुण. ६ इधरसे. ७ सीधा ८ विधानकर्ता. ९ नवीन स्त्री. १० लज्जित हो ११ मंत्रमारा. १२ ईश्वरका स्मरण कर. १३ सकुचित हो १४ कुशल.
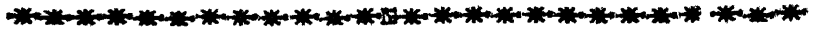
बजाई । गावत ऐसो अनोखो खिलारी, देख्यो सुन्यो नहीं माई ॥ करों यासे कौन उपाई । होरी अनोखी ०॥ प्रकृति पुरुष विवेक निपुन, मृग नयनी नयन नचाई । बोली पकरि लेहुँ मै याको, पै पकरन नहिं पाई ॥ सिथिलता तनपर छाई । होरी अनोखी० ॥ ठानि एक अद्वैतवाद कहि, फगुवा लेहो चुकाई । साहिब कबीर कृपाल दयानिधि, जड चेतन समुझाई ॥ दियो पारस परखाई । होरी अनोखी० ॥ ८ ॥

इति शब्दावली तीसरे खण्डका तीसरा विभाग ॥

सत्यनाम ।

# शब्दावली तीसरे खण्डका चौथा भाग ।

## "चौका आरती माहात्म्य" की प्रारम्भिक विज्ञप्ति ॥

कवीरपंथमें चौकाआरती एक ऐसा अनुष्ठान है जिसमें धर्मके सर्व अंगोंका समावेश होजाता है । यद्यपि वर्तमानकालमें, प्रायः रोजगारी कडिहारोंने इसे, अपने रोजगारका एक साधन बना रक्खा है, तथापि इसके भेदके समझनेवालोंका अभीतक अभाव नहीं हुआ है, किन्तु अधिकारीकी कमीसे उन्हें इसके भेदको प्रकट करनेका अवसरही नहीं मिलता । और इसके भेदके न जनानेवाले अज्ञानता वश, प्रायः इसकी निन्दा उठाया करते हैं । और रोजगारी कडिहारोंकी कृपासे सेवक सतियोंकी भी बुद्धि ऐसी कुंठित हो रही है कि, उन्हें इसके भेदको जाननेकी जिज्ञासाही नहीं उठती । क्योंकि, जिनमें उनकी श्रद्धा है वे या तो व्यापारी हैं अथवा सीधे साधे संत । व्यापारी, पहले तो आपही इसके महान आशयको नहीं समझते और जो कोई थोडा वहुत ग्रन्थ पोथियोंसे समझताभी है, तो वह अपने रोजगारमें विघ्न पडनेके डरसे सेवक सतियोंको बतलाना नहीं चाहता और जो सीधे हैं वे कुलहेडीकी रस्सी घसीटते चलेजारहे हैं, उनको जब स्वतःही खबर नहीं हैं, तब दूसरोंको क्या बतलायंगे । और मेरे जैसे लोग जो खुल्लमखुल्ला भेद बतानेको तय्यार हैं, अधिकारी जिज्ञासुओंके अभावसे इस साखीका स्मरण करकरके निराशा अनुभव रते हैं-

# अथ चौका आरती माहात्म्य प्रारम्भः ।

सत्यनाम स्वकृत विभू, अदली आदि अचिन्त ।
अजर पुरुष मुनीन्द्र प्रभू, मायापार अनन्त ॥ १ ॥
करुणामय कवीर कही, ज्ञानी पुरुष सुजान ।
योगजीत सतगुरु सही, मेटे काल गुमान ॥ २ ॥
सुरति शब्दको योग जो, परगट कीन जहान ।
योग सँतायन नामते, कहते ताहि सुजान ॥ ३ ॥
जाकर शिष धर्मदासजू, पूरण सुकृत रूप ।
पायी दया कवीरकी, भये सो आप अनूप ॥ ४ ॥
सत सुकृत प्रतापते, भये जगत आदर्श ।
नाम देइ भव काटई, मिटे काल उतकर्श ॥ ५ ॥
कह कवीर धर्मदाससे, बचन मोर समरथ्थ ।
ताहि गहै सो बंश है, चढे मुक्ति के रथ्थ ॥ ६ ॥
वंश व्यालिस जगतमें, माने बचन हमार ।
आप तरे जग तारई, देवे शब्द अहार ॥ ७ ॥
शब्द अहार जो छाडई, अखज काल ढिग जाय ।
गुरु सीढि ते ऊतरे, काल निरञ्जन खाय ॥ ८ ॥
दुखित जीव जग जानिके, प्रगट भये गुरु देव ।
चौका विधि प्रगट करी, तत्व लखाये भेव ॥ ९ ॥
सत्यलोकको यान[1] है, आत्म ज्ञानको मूल ।
काल जालते काढिके, हरे सकल भव शूल ॥ १० ॥

---

१ विमान.

ता महिमा निज मुख कही, सत्य गुरु सत्य कबीर।
पूछी सो धर्मदासने, जीव लगावन तीर ॥ ११ ॥

इति मंगला चरण ।

अथ चौका आरती-

माहात्म्य ( अनुरागसागरसे ) धर्मदास वचन ॥

धर्मदास पद गहि अनुरागा। हो प्रभु मोहि कीन सुभागा॥ हे प्रभु नहिं रसना प्रभुताई। अमित रसन गुण बरनि न जाई ॥ १ ॥ महिमा अमित अहै तुव स्वामी । केहि विधि बरनों अन्तर्यामी ॥ मैं सब विधि अयोग्य अविचारी । मुझ अधमहिं तुम लीन उबारी ॥ २ ॥ अब चौका भेद कहो मुहि स्वामी । काहि कहहु तिनका सुख धामी ॥ जो तुम कहौ करों मैं सोई । तामहँ फेर न परि हैं कोई ॥ ३ ॥

कबीर वचन ।

गेही भक्ति आरति आने । प्रति पाख आरती ठाने ॥ प्रति पाख आरति नहिं होई । ताहि भवन रह काल समोई ॥ ४ ॥ पाख दिवस नहिं होवे साजू । प्रति पूनो-कर आरति काजू ॥ पूनो पान लेइ धर्मदासा । पावे सिष होय सुख बासा ॥ ५ ॥ चन्द्र कला षोडस पुर आवे । ताहि समय परवाना पावे ॥ यथाशक्ति सेवा सहिदाना । हंसा पहुँचे लोक ठिकाना ॥ ६ ॥

धर्मदास वचन,

धर्मनि विनय करी कर जोरी । होहु प्रभु अब दयाल बहोरी ॥ आरति चौका किहि विधि होई । काकासाज लगे प्रभु सोई ॥ ७ ॥

कबीर वचन ।

आरति साज धर्मनि सुनो, तुमसे कहौं बखान ।
विधि विधान ते जो करे, पावे मुक्ति ठिकान ॥ १ ॥

धर्मदास सुनु आरति साजा । जाते भाग चले जमराजा ।
सात हाथ को वस्तर लाओ । स्वेत चँदेवा वस्त्र तनाओ॥१॥
घर आँगन सब शुद्ध कराओ । चौका करि चन्दन छिड़-
काओ । तापर आँटाको चौक पुराओ । सवा सेर तन्दुल
ले आओ ॥ २ ॥ स्वेत सिंघासन तहां बिछायी । नाना
सुगन्ध धरु तहँ लायी ॥ स्वेते मिठाई स्वेते पाना।
पूंगी फल स्वेतहिं परमाना ॥ ३ ॥ लौंग इलायची कपूर
सँवारो । मेवा अष्ट केरा पनवारो ॥ जिब पीछे नरियर
ले आओ । यह सब साज सु आनि धराओ ॥ ४ ॥ संत
साधु को बैठक दीजो । यथा शक्ति सन्मान सुकीजो ॥
करि आरति सतगुरु लौलाओ । भावभक्ति बहु प्रीति
बढाओ ॥ ५ ॥ चरण धोइ चरणामृत लीजो । शरधा
सहित सुपूजन कीजो ॥ बिनु शरधा नहिं आरति कीजे।
अनशरधा तहँ काल भनीजे ॥ ६ ॥ अनशरधा अगु-
वानी जहँवाँ । काल बसे नहिं सतगुरु तहँवाँ ॥ शरधा
प्रेम बसे जेहि ठाऊँ । सोई जानो सतगुरु गाऊँ ॥ ७ ॥

कहै कबीर धर्मनि सुनो, शरधाको व्यवहार ।
बिनु शरधा नहिं पाइये, सत्त लोक निज द्वार ॥२॥

शरधा ते सतगुरु सन्माने । यथाशक्ति द्रव्य लेइ आने ।

नाना वासन वस्त्र विधाना। सोना रूपा बहुविधि नाना ॥ १ ॥ कपट छोडि शक्ति निज देखे। परमार्थ स्वार्थ बहु-विधि पेखे ॥ गुरु पूजा संतन सनमाना। पहिलि विधि आरति कर जाना ॥ २ ॥ नारि पुरुष सबहीं इकठाई। ले नरियर सब सन्मुख आई ॥ सह मरजाद सु सीस चढावे। सतगुरु ध्यान मगन है जावे ॥ ३ ॥ सतगुरु आज्ञा देइ चढाई। इक टक दृष्टि गुरु पहँ लाई ॥ मोरत नरियर बास उडावे। जमका पला तुरत छुट जावे ॥ ४ ॥ साँचा सतगुरु साँचा चेला। साँचहिं साँच भया इक मेला ॥ घटका परिचय सतगुरु देवे। देही देह परख करलेवे ॥ ५ ॥ दूजा मेटि एक लौ लावे। देखत काल तुरत मरिजावे ॥ काल दयाल को जाने भेवा। जो सतगुरु सोई निज देवा ॥ ६ ॥ पूजा दूजा काल पसारा। बिना एक नहिं होय उबारा ॥ चौका आरति भेद बतावे। छाडि अनेक एक लौ लावे ॥ ७ ॥

कह कबीर धर्मनि सुनो, यह चौका बिस्तार।
गुरु कृपासे छूटई, ततछन काल पसार ॥ ३ ॥

पान प्रसाद गुरु ते पाई। सह परिवार भक्ति चित लाई ॥ आरति ज्योति घरे घर फेरे। कंटक काल सबहिं खदेरे ॥ १ ॥ पुनि सतगुरु सह संतन बैठारे। नाना भाँति करे जेव-नारे ॥ महाप्रसाद पुनि संतन लीजे। युग बन्ध मिलि कै सेवा कीजे ॥ २ ॥ बिनु सेवा नहिं जीव उबारा।

तातै तन मन संतन वारा ॥ तनसे सेब करै बहु भांती। मनसे त्यागे भेद विजाती ॥ ३ ॥ गुरू संत सब इक सम जाने। माने वचन कवीर परमाने ॥ कहै कवीर हम साधु सरूपा। हमहीं गुरु हंसन कर भूपा ॥ ४ ॥ मो में गुरुमें अरु संतन भाई। रंचक भेद न जाने कोई ॥ भेद करै सो भवमें डूबे। जमकर मार पडे सो खावे ॥ ५ ॥ साधु सोई जो सीधा चाले। है निर्पच्छ सत्य प्रतिपाले ॥ संत सोई जो सत मत जाने। काल दिशा को नाहिं परमाने ॥ ६ ॥ गुरु सोई जो सत परखावे। असत छुडाई लोक पठावे ॥ सो संत गुरु भेद नहि भाई। साधु स्वरूप हमहीं निरमाई ॥ ७ ॥

धर्मदास तुम पूछिया, चौका बिधि विस्तार।
सो मैं तुमसे भाषिया, अब का करहु विचार ॥ ४ ॥

सुनत बचन धर्मनि निज बोले। अस संशय मम हिय महँ डोले ॥ कलऊ जीव रंक बहुहोई। इतना साज न साजै सोई ॥ १ ॥ ताकरनिरणयकहियेस्वामी। किहिंविधित-रैजीवअनुगामी ॥ सकलो जीव तुम्हारे देवा। कैसे कहीं करै सब सेवा ॥ २ ॥ धर्मनि सुनौ रंक परभाऊ। छठैं मास आरति लौ लाऊ ॥ छठै मास नहिं आरति भेवा। वरष माँहिं गुरु चौका सेवा ॥ ३ ॥ सम्वत माहिं चूक जो जायी। तबै संत साकट ठहरायी ॥ सम्बत माहिं आरती करई। ताकर जीव धोख नहिं परई ॥ ४ ॥ नाम

कबीर जपे लौलाई । तुमरो नाम कहे गोहराई ॥ तुमरी चाल चले धर्मदासू । संतहिं सेवे भक्ति पिपासू ॥ ५ ॥ व्रत अखंडित गुरु पद गहई । गुरु पद प्रीति होई निस्तरई ॥ ऐसी धारन रंक परभाऊ । गुरु प्रतापसे लोक सिधाऊ ॥ ६ ॥ समरथ राखि करे जो चोरी । काल निरंजन तहँ डारे डोरी ॥ क्रूर कपटकी राह चलावे । सतका मारग सो नहिं पावे ॥ ७ ॥

यथा शक्ति सबही करे, छोडि कपट व्यवहार ।
शक्ति राखि चोरी करे, बूडे काली धार ॥ ५ ॥

सुनहु धर्मनि जगत व्यवहारा । सत्यनाम सो विरक्ति अपारा ॥ देखि बडाई भगतिहिं लागे । माया मोह हियेमें पागे ॥ गुरु सेवा ते जीव चुरावे । समधि सोर महँ दरब लुटावे ॥ देखि साधु दुआर निज भाई । नहिं समझे निज भाग्य बडाई ॥ २ ॥ आय परेकी सेवा करई । भाव भक्ति नहीं मन धरई ॥ विवाह सराधमें लाख लुटावे । संत देइ मनही पछतावे ॥ ३ ॥ बहु विधि नाना विषय कमावे । देत दान हिये दुख पावे ॥ ऐसी विधि संसार भुलाना । सो नहिं समझे निज कल्याना ॥४॥ ताते तुमको कहत हम भाई । योग देख करहु चित लाई ॥ बिनु-साधननहिजीव उबारा । बिनु अधिकार न साधन सारा ॥ जहँ अधिकार तहाँ सब होवे । भाव भक्तिसो ज्ञान सँजोवे ॥ ५ ॥ बिनु अधिकार न कोई माने । गजमुकता

घोंघा करि जाने ॥ जहँ अधिकार तहाँ उपदेशा । थोड़हु करे बहुत परवेशा ॥ ६ ॥ चौकाआरति सब कर लेखा । जस अधिकारी तसहिं विवेखा ॥ चौका आरति समझे कोई । संशय मिटे काल मिट सोई ॥ ७ ॥

संशय काल शरीरमें, विषम काल है दूर ।
सतगुरुकी संधी मिलै, जारि करै सब धूर ॥ ६ ॥

संशय मिटै योगके धारे । धारि शब्द सब योग सँवारे ॥ जैसे मन संसारहीं राता । काल बान जस बना विधाता ॥ १ ॥ ऐसे गुरु शब्दहिं मनराते । गुरु वाणी छोरे काल कलाते ॥ बंदीछोर गुरू कर नाऊँ । शब्दहि भेद मैं तोहि बताऊँ ॥२॥ विना योग न मिटै जिव फेरा । सतगुरु शब्द कहे जिव टेरा ॥ गुरुके शब्द सुरति जब जूटे । तबहीं काल ठगौरी छूटे ॥ ३ ॥ संशय मिटै योगके धारे । धर्मनि तुम मन करौ विचारे ॥ शब्द सुरति योग यह जानो । गुरुके शब्द सुरत ठहरानो ॥४॥ गुरू शब्द निश्चय जब होई । छूटे काल जाल निज सोई ॥ संशयको खण्डन यह योगा । ता सम आहि न दूसर भोगा ॥५॥ जीवन काज जाहिते होई । सोई जतन करो सब कोई ॥ सब जिव होंहि न एक समाना । कर्महि योग अधिकार पिछाना ॥६॥ जस अधिकार जाहि कर होई । तैसे मानै शब्द बिलोई ॥ चौका आरति सबहिं बतावे । अपन पराइत भेद लखावे ॥ ७ ॥
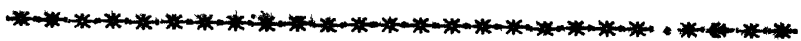
चौका आरति जो लखे, ज्ञानी मूढ प्रवीन ॥
सतगुरु भेद बताबई, पावे अम्मर चीन ॥ ७ ॥

चौका आरति भेद बतावे । जेहि समझे तेहि लोक पठावे ॥ जैसी रचना लोक विचारा । घटके भीतर सबहिं सँवारा ॥१॥ घटका भेद गुरू पहिचाने । चौका आरति सबहिं विधाने ॥ चौका आरति जो कोइ बूझे । काल दयाल सब तेहि सूझे ॥२॥ ज्ञान कर्म औ योग विचारा । चौका महँ सबही विस्तारा ॥ सत्य लोक औ काल पसारा । सबहीं भेद किया निरुआरा ॥ ३ ॥ भक्ति उपासननिजकरराखा । जेहि समझे फल मुक्तिचाखा ॥ अगम अलख सब गुरु समझावे । सुरति निरति ते दर्शन पावे ॥ ४ ॥ शब्दपरतीत देख सत लोका । गुरुकीदया मिटै सब धोखा॥एकै सुरति निरति जोधारे । गुरु परता-पसो लोक सिधारे ॥५॥ यहि निहतत्व मता जो धारे । सुरति निरति सोदीप निहारे ॥घटमें चौकाकर उजियारा । पल पल निरखे सतगुरु द्वारा ॥ ६ ॥ जाते सहज योग नहिं होई । सो तो आरति साजे लोई ॥ संतभेष जो कोइ काछे । ताको देहु योग मति आछे ॥ ७ ॥

गेही लीने आरती, संत सोई सो योग ।
इंडा पिंगला साधिके, सुख मन राधे भोग ॥ ८ ॥

ज्ञानसागरका प्रमाण ॥

जैसे गेहीके मन नेहा । तैसे साधे जो सनेहा ॥ आसन

दृढ पर नारि न जावे ॥ ग्रेही रहै न भेष बनावै ॥ १ ॥ देखी देखा भेष बनावै । राधे जोग तो शोभा पावै ॥ भेषै धरे सूरता चाही । कादर भेषकी हाँसी आही ॥ २ ॥ जाते मन सूरमा नहिं होई। ताते गिरही थाप्यो सोई ॥ गिरहीमें- छल मता अपारा। तातें सत्य भक्ति चित धारा ॥ ३ ॥ सेवा संत करे जो कोई । आरति भक्ति महाफल होई ॥ धन्य संत जो आरति साजा ।कालजँजाल गृहतें भाजा ॥ ४ ॥ आरति समान भक्ति नहीं दूजा । सब ते भली संतकी पूजा ॥ चरणामृत संतनको लेई । सुरति निरति चरणन चित देई ॥ ५ ॥ विना योग नहिं होय उबारा । कै नेवर कै दीपक बारा ॥ तातैं सहज योग मैं भाखा । शिरनी पान महातम राखा ॥ ६ ॥ आरति तो नानाविधि साजै । पान मिष्टान भक्त भय भाजै ॥ जो कछु आहि जोगकर भाऊ। सब भाखी आरति परभाऊ ॥७॥

संत आरती जोग मत, करहिं गगनमें बास ॥
ग्रेही जोग न जानहीं, कर आरति परकास ॥९॥

वह देही यह ग्रेही व्यवहारा। काया संयम दै अनुसारा॥ निसिदिन सुरति रु निरति बिचारा। तातैं मंदिर सेत सवाँरा ॥ १ ॥ पाचौं तत्त्व तीन गुन साधे।ताते मन बिच आरति राधे॥ इंगला पिंगला सुष्मनि वासा । मनः वचकर्म आरति प्रकाशा ॥ २ ॥ बांधै मूल नामको साधै । दुबिधा मिटै

एक अवराधे ॥ एके घर कर प्रकृति पचीसा। सोई पुरुष आरतिमें दीसा ॥ ३ ॥ उघरे संपुट गुरुकी दाया । नरिअरको देखे परभाया ॥ तत्त मूल नरिअरमो जाना । ज्ञानवंत भजि हो निर्बाना ॥ ४ ॥ अनहद बाजे त्रिकुटी ताला । तातें भक्ति जो होय रिसाला ॥ बिन करताल पखावज बाजे । अंनहद धुन निसदिन तहँ गाजे ॥ ५ ॥ अष्टदल कमल फूल जो फूला । तातें सुमिरन किय समतूला ॥ सुन अति जोग छतीसौं रागा । तातें भांति भांति पद जागा ॥ ६ ॥ जोग करतमें देह बिसारे । यहि संसारमें काज सम्हारे ॥ योग समाधि छूटत नहिं देखा । आरति मेटै कर्म विशेषा ॥ ७ ॥

उलट पवन जब आवे, त्रिकुटी भेंट सु होय ॥
गुरुकी दया परगट हो, संपुट उघरे सोय ॥ १० ॥

प्रतिदिन जो समाधि मन लावे ॥ तातें सदा आरति गावे ॥ जोग हीन तत्व नहिं लहई । तातें पान बढौना चहई ॥ १ ॥ देखो मन बहु रंग अपारा । तातें पहुप सेज बिस्तारा ॥ देह समाधि गंध बहु होई । साधे अग्र प्रबल है सोई ॥ २ ॥ चौका सेत हंस भल छाजे । सेत सिंहासन छत्र बिराजे ॥ मन औ पवन आहिं दुइ धारा। तातें पवन अनिल घृत जारा ॥ ३ ॥ जोग जुगत बिन संग न होई । पाले पवन पाहन है सोई ॥ गगन बाव

योग अमीरस चाखा । तातें महा प्रसाद जो भाषा ॥
धन्य अंकूर जीव है सोई । परिचय योग करै तन जोई ॥४॥
गरजै जो जायी । दीप शिखर द्वारै ठहरायी ॥ ५ ॥ लावै
योग न होय आरती करई । सोई जीव भवसागर तरई ॥
मूल नाम और सब शाखा । पुहुप जोग महातम राखा॥६॥
जोगी दृष्टि भाव बहु करई । घट दृष्टिमें सुमिरन अनुसरई॥
मूल नाम मुक्ति फल योगा । सो नरिअर मिष्टानक भोगा७॥

परचै में मन बांधे, करे जोग मन बास ॥
संतन आरति जोग मन, दीपक करे प्रकास ॥ ११ ॥

देह विसार जोग फल चाखा । मन बच कर्म नरिअर सत भाखा ॥ उज्जल मंदिर सेत सम्हारा । सेतहि रूप साज्यो पनवारा ॥ १ ॥ मुक्ति पदारथ अबेधा हीरा । तेहि पाये कोई गहिर गंभीरा ॥ चंदन काष्ठ सिंहासन चाही । सुमिरण नाम इकोतर आही ॥ २ ॥ उत्तम पान बडौना चाही । टूटा भाँगा नाहि निवाही ॥ नरियर चहिये निरमल भाई । महा मुक्ति फल होय सदाई ॥ ३ ॥ और कछू बात संपुट आही । काचा जीव सुनि बिचले ताही ॥ ताते सहज बतायो भाऊ । परिचय जीवहिं परम सुभाऊ ॥४॥
अथवा जो इतना नहिं होई । सहज आरती थापो सोई ॥
सवा सेर आनो मिष्टाना । तत्त सवासौ आनौ पाना ॥५॥
प्रति पूनौं जो आरति करई । सोई जीव भवसागर तरई ॥

धर्मदास बचन ।

हे प्रभु पूनोंका अधिकारा । दया करौ दुख भंजन हारा॥६॥
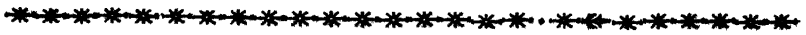
साहिब कबीर वचन।

तुम कहँ दीन्ह यही दिन पाना। तासौं पूनौं आरति ठाना॥
अथवा सबई अर्थ नहिंजाना। दोई आरति थाप प्रमाना॥
योग आरती फल बडा, सत्त बचन परकास॥
दुविधा निश्चय मेटई, सत्तलोक होय बास॥१२॥

गुरुका कर्तव्य॥

सत्तभाव देखहु मति धीरा। लगन साधि देऊ निज बीरा॥ १॥ बिना लगन करो मत शिक्षा। जोती खेती आदि भल दिक्षा॥ उस्सर बीज डारजो कोई। निरफल खेत किसानी होई॥ २॥ उस्सर बीजका ऐसा भाऊ। बोया बीज सो वृथा जाऊ॥ काँचे जिवकहँ वस्तु न दीजे। परिचय जीव तात गहि लीजे॥३॥ ता कहँ कैसी करइ जमराजा। देह धरे तो गुरु कहँ लाजा। बिना लगन मगन भयौ जानी। ऐसो अहै शिष्य सहिदानी॥ ४॥ पूरा जब शिष्य जो होई। गुरु देव भेद बतावे सोई॥ अथवा जो गुरु अंतर राखे। गुरु में धोख संतमें भाखे॥५॥ लीक करी औ पंथ बतावे। शोभा अधिक गुरू सो पावे॥ जस बाना तस होवे करनी। ता गुरुके सम और न बरनी॥ ६॥ सदा लीन नाम जो भाखे। पांच आत्मा अनुरुचि राखे॥ पांचमें करे पच्चीसों नारी। जे बस किये योग अधिकारी॥ ७॥

जो ऐसी बनि आवे, औरो बनिहै सार॥
तातैं ग्रेही थापिया, कढिहारी संसार॥ १३॥

मरत तजो जस कांचारि साँपा । तातें सबको मेटब दापा ॥ करो शिष्य जो यहि विधि कोई । पुरइनि पान रहै जनु सोई ॥ १ ॥

गुरुवाके लक्षण ।

आप स्वारथी भेष बनावे । मनकी दशा ताहि चित लावे ॥ तृष्णा युक्त करै गुरुवाई । जमसों बाँचे कौन उपाई ॥ २ ॥ निश्चय मानो शब्द हमारा । पर द्रोही कैसा कडिहारा ॥ आप अबूझ औरन समझावे । साखि रमैनी झगरो लावे ॥ ३ ॥ सेवा साधु नहीं बनि आवे । तृष्णा कारण भेष बनावे ॥ अहै न सीहँ स्वान सियारा । परचें बिना कैसे कडिहारा ॥ ४ ॥ पर नारी औ मन्थन कर्मा । यह तो भेद काल को मर्मा ॥

गुरुवाको सिखावन ।

मारइ मनसा होइ सो होई । नातर नारि करे पुनि लोई ॥ ५ ॥ गिरही माहिं मुक्ति कर भेवा । गुरुकी भक्ति साधुकी सेवा ॥ जोपे सहज भाव कडिहारा । शिष्य कियेका का अधिकारा ॥६॥ साँचा हो गुरु भगती साधे । साधु संतसो प्रीति अराधे ॥ साधु संत संग रहनी आवे । विन रहनी नहिं जीव तरावे ॥ ७ ॥

साधुसंतकी अधिक महिमा, रहनि कुण्ड नहाइये ।
कामक्रोध विकार परिहरि, बहुरि न भवजल आइये ॥ १४ ॥

ऐही साधु मुक्त फल बासा । सो सब बचन कहौ

परकासा ॥ नाम गहै राखे सत करमा। गहि सुकृत छोडे सब भरमा ॥१॥ मद अरु मांस सदाको त्यांगे। जीवदया सब विधि अनुरागे ॥ पाछल चूकको एक उपाऊ। साधु सेवा अरु सवै सतभाऊ ॥ २ ॥ करे आरती मन बिच करमा। पर घर तजे जान निजभरमा ॥ गिरही माहिं जो रहें उदासा। निश्चय सत्तलोकमें बासा ॥ ३॥ नाम पाइ जो अवज्ञा करई। भाव विहीन जग अनुसरई ॥ जो कोइ चूके साधुन सेवा। ताकर फल भाखों कछु भेवा ॥ ४ ॥ जाई सो लोक नाम परतापा। तजे देह जिमि कांचरि साँपा ॥ देख जाई हंसनकी पांती। ता मध्ये अस बैठ अजाती ॥ ५ ॥ जाते चूक परे सिवकाई। ताते शोभा हीन लजाई ॥ जोकोई याकी करे उछेदा। ताते मै समझाऊँ भेदा ॥६॥ग्रही तरे सो कौन विशेखा। गुरु को अचरज यौ बड़ देखा॥ गुरू नहीं कोई थहि भवसागर। सतगुरु आप अजरमनि आगर ॥ ७ ॥

ऐसी महिमा प्रकटहै, जैसे सिंधुका नीर।
सरिता सब कड़िहार भये, सतगुरु सिंधु कबीर ॥१५॥

जपत आहिं जो नाम हमारा। तातें नाम धरा कड़िहारा॥ ले कडिहार जिवनका भारा। तेहि न सूझ किमि उतरे पारा ॥ १ ॥ सरिता माँहि बारि जो होई। जीव जन्तु सुख पावे सोई ॥ सरिता लहै पुण्य परमारथ। सत कडिहारी परस्वारथ ॥२॥ अथव नीर अथाह न होई।

सहज जोग भाखौं पुनि सोई॥ नदीमें सोइ सदा जो वारी। ऐसी उत्पति आहि हमारी ॥३॥ प्यास जाय नदीके पासा। बिन पानी सो जाय पियासा॥ प्यासा पानी नदी न पावै। जहँ पानी तहँ तृषा बुझावै ॥ ४ ॥ इक जिव ग्रेही आप उबारा। बारि नदी नहिं तस कडिहारा॥ बांधे अस्त्र करे शुरमाई। तिनके त्रास दुर्जन डरपाई ॥ ५ ॥ काछे रहै शूर का साजा। आय समय कादर होइ भाजा॥ तेहि विश्वास रहै नहिं कोई। स्वारथ पिंड परै जन सोई ॥६॥ ता कहँ होइ पुन्य परमारथ। नाम गहै जन्मैं होय स्वारथ॥ कड़िहार सोइ जो शूरा होई। भाखों ताहि आप सम सोई ॥ ७ ॥

कड़िहारी औ गृही को, कोई ना जाने अंत॥
बिन परचै विसमाद है, हरषत परचै संत॥ १६ ॥

गिरहीका धार्मिक नियम संयम ॥

भाषों संयम संतके भाऊ। अस गेही जो करै उपाऊ॥ प्रात नेम जो करै अस्नाना। हो प्रफुल्लित कमल बिगसाना ॥ १ ॥ मद रु मांस कहँ त्यागै दोऊ। मिथ्या जीव घात पुनि सोऊ॥ सत आसन परनिन्दा त्यागी। भली बुरी सैं रहत बिरागी ॥ २ ॥ जाइ तहाँ पर जहँ हितकारी। उचट न परै लह अन्तरभारी॥ क्षुधावंत हित कारी होई। अति प्रिय जान समोवहि सोई ॥ ३ ॥ यहि सम दूसर व्रत नहिं जाना। ते जन पूनौं आरत ठाना॥

कहौं जान दासातन जोई। भागी जीव पावहिं निज सोई ॥४॥ शिष्य होय जो तन मन वारै। गुरु आज्ञा कबहूँ नहिं हारै॥ गुरु दै शब्द मुक्ति जेहि होई। तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥ ५ ॥ गुरू समान जानु नहिं आना। साधू गुरू एक सम जाना ॥ गुरुमत पावे गुरुसम होई। भेद भाव तहाँ नहीं कोई ॥ ६ ॥ सत सतलोक गुरू मत जानो। भेद भाव कछुऔ मति आनो ॥ तहां न नारि पुरुष कर भाऊ। हंसहिं हंस एक सदभाऊ ॥७॥

साखी-तन मन गुरु को दीजिये, मुक्ति पदारथ जान।
गुरुकी सेवा मुक्ति फल, यह गेही सहिदान ॥१७॥

चौका आरतीपठन फल।

चौका आरति माहात्म्य यह, पढे सुनै जो कोय।
मोक्ष मुक्ति फल पावई, युगल लोक सुख होय ॥ १ ॥
चौका आरति माहात्म्य, संछेप कियो बखान।
एकहि दिनमें लिखनभौ, क्षमियो संतसुजान ॥ २ ॥
अभिलाषा तो बड अहै, करुं विस्तार महान।
नहिं अवसर नहिं स्थान है, सूच्छम कियो बयान ॥३॥
धर्म कबीर दर्शन विषय, लिखिहौं कछु विस्तार।
स्पष्ट वर्णन ग्रन्थ विषै, निरखि मिलै सुखसार ॥ ४ ॥
युगलानन्द है दास निज, संत साधु गुरु केर।
विद्वद्वरसे विनति अस, क्षमा करो निजहेर ॥ ५ ॥

इति कबीराश्रमाचार्य्य स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी द्वारा संगृहित संयोजित सम्पादित चौका आरती महात्म्य सम्पूर्ण शुभम्.

## कबीरपंथके धार्मिक सामान्य एकादश नियम.

१–अनादि, अनूप, अजर, अमर, अभय, सच्चिदानंदस्वरूप, निर्मल, निर्विकार, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् जो महानप्रभु परमात्मा है, उसके अतिरिक्त और किसी देवी देवताकी उपासना न करनी चाहिये.

२–आचार्य्य, गुरु, महात्मा संत ये तीनों उस परमात्मा की साकार मूर्ति हैं, इन्हीं की तन, मन, धनसे सेवा सत्कार द्वारा, उस निराकार महाप्रभु की उपासना करनी योग्य है.

३–गुरु के वचन और अपने धर्मग्रन्थोंमें अटल और पूर्ण श्रद्धा रखकर उनकी शिक्षाके अनुसार चलना चाहिये.

४–संपूर्ण संसारके प्राणीमात्रको निज आत्मा जानकर दयाभावसे, सदा हृदयमें सबका हित चिन्तन करना चाहिये.

५–निर्भयतापूर्वक अन्तःकरणमें सदा शुभ संकल्प और सदाचारका सेवनकरना चाहिये; जिससे शरीर, मन और आत्मा पवित्र होकर बलिष्ठ होजाय.

६–मांस[१] मंदिरा[२], व्यभिचार[३], चोरी[४], हिंसा[५], द्यूत[६], (जुवा) मिथ्या[७] और पिशनता[८] (चुगली) इन अष्ट महा दोषोंको सर्वथा त्यागना चाहिये.

७–परीक्षापूर्वक सत्यकी धारणा और असत्यके परित्याग करनेमें कदापि विलम्ब न करना चाहिये.

८–विनयभावसे अत्यंत प्रेम पूर्वक मनुष्यमात्रको सत्यमार्गमें चलनेका सदा उपदेश देना चाहिये.

९-नित्यप्रति नियमपूर्वक स्वाध्याय द्वारा विद्या वृद्धि करनेमें कदापि आलस्य न करना चाहिये.

१०-तिलक कंठी सहित अपना वेष सभ्य और पवित्र रखना चाहिये,

११-स्वधर्म्म तथा अपने आत्माके विपरीत कभी कोई काम न करना चाहिये.

---

## तीसरे खण्डके विषयमें सूचना-

इस ग्रन्थके प्रथम खण्डमें संज्ञासुमिरनका विषय आया है, उसके दो विभाग हुए हैं-१सर्व साधारण कबीर पन्थियोंका संज्ञासुमिरण, २ बुरहानपुरी संज्ञासुमिरन ॥

दूसरे खण्डमें-जहांतक मिला है स्तोत्रोंका संग्रह है।

तीसरे खण्डमें-चौका आरती विधान चार विभागमें दिया है। १ विभागमें छत्तीस गढी चौका आरती का विधान, २ में सर्वदेशी चौकाविधान रोसडा कबीर मन्दिरके पाठसे दिया है, ३ रे चौकामें गानेके विशेष राग रागनियोंसे संयुक्त हैं, ४ में आरती चौका माहात्म्य है ॥

इस खण्डमें दूसरा विभाग छपनेसे रह गयाहै उसे पाठक गण पृष्ठ ४२२ से दूसरे खण्डका तीसरा विभाग आरंभ समझलें।

इसके आगे शब्दकुंजी मूल रमैनीसे चौथा खण्ड प्रारंभ.

भवदीय-श्री युगलानन्द बिहारी.

# मूल रमैनी अर्थात् शब्दकुंजी प्रारम्भ ।

( अक्षर खण्डकी रमैनी । )

प्रथम शब्द हैं शुन्याकार । परा अव्यक्त[1] सो कहै विचार ॥
अंतःकरण उदय जब होय । पश्यंति[2] अर्धमात्रा सोय ॥
स्वर[3]सो कंठ मध्यमा[4] जान । चौतिस अक्षर मुख अस्थान ॥
अनवनि[6] वानी तेहिके मांहि । बिन जाने नर भटका खाहिं ॥
बानी अक्षर स्वर समुदाय[7] । अर्ध[8] पश्यंति जात नशाय ॥
शुन्याकार सो प्रथमा रहै । अक्षर ब्रह्म सनातन कहै ॥
निवृति[9] प्रवृति[10] है शब्दाकार । प्रणव[11] जाने इहे बिचार ॥
साखी–अँकुलाहट[12]के शब्दजो, भई चार सो भेष ।

बहु बानी बहु रूपकै, पृथक पृथक सब देश॥१॥

२०–अनवनिबानीचारप्रकार । काल संधि झांई औ सार ॥
हेतु शब्द बूझिये जोय । जानिय यथारथ[13] द्वारा सोय ॥
भ्रमिक[14] झांइं संधिक औकाल । सार शब्द काटे भ्रमजाल ॥
द्वारा[15] चार अर्थ परमान । पदारथ[16] व्यंगारथ[17] पहिचान ॥
भावारथ[18] ध्वन्यारथ[19] चार । द्वारा शब्द कोइ लखे विचार ॥
परा[20] पराइति मुखसो जान । मोरे सोरहकला निदान ॥

---

१ इसका स्थान नाभी ॥ २ इसका स्थान हृदय ॥ ३ सोलह स्वर अ आ इत्यादि. ४ इसका स्थान कण्ठ. ५ व्यंजन. ६ नाना प्रकारकी. ७ एकट्ठी. ८ पश्यन्ति होय फिर परा अवस्थाको प्राप्त होता है. ९ लय. १० उत्तपत्ति. ११ ओंकार. १२ उविआहठ. १३ सच्चा. १४ भरमाने. १५ मार्ग, रस्ता. १६ पद, अर्थ, शब्दका जो अर्थ, शब्दार्थ. १७ व्यंग, अर्थ, व्यंग भावसे जो कहा जावे. १८ मतलब, आशयवाला जो अर्थ. १९ ध्वनिमात्र. २० परा और अपरा दो विद्या कोई शब्द परा विद्याको वर्णन करता है कोई अपराको
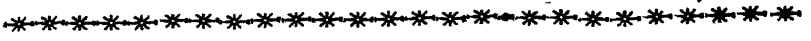
बिन जानें सोरहकला, शब्दी शब्द कौआयें[२१] ।
शब्द सुधारपहिचानिये, कौनकहा बौआय ॥ २ ॥
अक्षर वेद पुराण बखान । धरम करम तीरथ अनुमान ॥
अक्षर पूजा सेवा जाप । और महातम जेते थाप ॥
यही कहावत अक्षर काल । जाए गडी उर होयके भाल[२२] ॥
ओहं सोहं आतमराम । माया मंत्रादिक सब काम ॥
ये सब अक्षर संधिक है । जेहिमाँ निशिवासर जिव रहै ॥
निरगुणअलखअकहनिर्वाण । मनबुधि इन्द्रियजायनजान॥
विधि निषेध जहं बैंनत[२३] न दोय । कहैंकबीरपदझांईसोय॥
प्रथमें झांई झाँकते, पैठ संधिक काल ।
पुनिझांईकी झांईरही, गुरुविन सकेको टाल ॥ ३ ॥
प्रथमही संभवें[२४]शब्दअमान । शब्दी[२५]शब्दकियोअनुमान ॥
मान महातम मान भुलान । मानत मानत बावन ठान ॥
फेरा फिरत भयो भ्रमजाल । देहादिक जग भये विशाल ॥
देह भई ते देहिक होय । जगत भई ते कर्ता कोय ॥
कर्ता कारण[२६] कर्महि लाग । घर घर लोगकियो अनुराग ॥
[२७]छौ दरशन वर्णश्रमचाँर[२८] । नौ[२९] छौ भए पाखंड बिकार ॥

२१ भटकता है. २२ तीर. २३ जगत्को निषेधकर और ब्रह्मका प्रतिपादन करना यह है ब्री जिसका. २४ होता भया. २५ शब्दका मालिक शब्द कहने वाला. २६ हेतु. २७ योगी जंगम १ सेवडा ४ सन्यासी. ५ दर्वेश । ६ छठा कहिये ब्राह्मण छः घर छः है उपदेश. २८ ब्राह्मण १ क्षत्री २ वैश्य ३ शूद्र ४ वर्ण और ब्रह्मचर्य्य १ गृहस्थ २ बानप्रस्थ ३ संन्यास ४ आश्रम. २९-( ९६ ) छयानवे पाखण्ड.

कोई [31]त्यागी [32]अनुरागी कोय । विधि निषेधमा बँधियादोय ॥
कल्पेउग्रंथपुराण अनेक । भरमि रहे सब बिना विवेक ॥

भरमि रहा सब शब्दमें, शबदी शब्द न जान ।
गुरुकृपा निजपरखवल, परखो धोखा ज्ञान ॥४॥

धोखाप्रथमपरखियेभाई । नामजातिकुलकर्मबड़ाई ॥
क्षि[33]ति जल [34]पावक [35]मरुतअकाश । तामह पंच[36]विषयपरकाश ॥
तत्व पांचमें श्वासासार । प्राण अपान समान [37]उदार ॥
औरब्यान बावन संचार । निजनिज [38]थैल निज कारज-
कार ॥ इंगला पिंगलाऔ सुखमनी । इकइस सहस्र छौसत
सोगनी ॥ नि[39]गम [40]अगम सो सदा बवावे । श्वासासार
सरोदा गावे ॥

धोखा [41]अंधेरी पायके, या विधिभया शरीर ॥
कल्पेउ करता एक पुनि, बढीकर्मकी पीर[42] ॥५॥

योगजपतपध्यानअलेख । तीरथफिरतधरेबहुभेख ॥
योगी जंगम सिद्धउदास । घरको त्यागि फिरे बनबास ॥
[43]कन्द [44]मूल [45]फलकरत अहार । कोइकोइ जटाधरे शिरभार ॥

---

३१ विरक्त. ३२ गृहस्थ. ३३ पृथ्वी. ३४ अग्नि. ३५ वायु. ३६ शब्द आकाशका विषय, स्पर्श वायुका, रूप अग्निका, रस जलका, गन्ध पृथ्वीका ३७ उदान. ३८ स्थान. ३९ वेद. ४० शास्त्र. ४१ अविद्या अज्ञानता. ४२ दुख. ४३ जो पृथ्वीके नीचे है जैसे आलू शकरद केसउर फर इत्यादि. ४४ जो मूलसे होता है अर्थात् काठ फोड कर जो निकलता है जैसे कटहल, गूलर इत्यादि. ४५ जो. फूलसे पैदा होता है जैसे आम, ( केरी ) अमरूद ( आमफल ) इत्यादि.

मनमलीन मुखलाये धूर। आगे पीछे अग्नि औ सूँर[४६]॥
नग्नहोय नर [४७]खोरि न फिरे। पीतरपाथरमें शिरधरे॥
कालशब्दके शोरते, [४८]होरपरी संसार।
देखा देखी भागिया, कोई न करे विचार॥ ६॥

जब[४९]पुंनि आयखसी यह [५०]बाँनि।तब पुनि चित्तमा कियो अनु-
मानि॥ महीं ब्रह्म कर्त्ताजगकेर। परेसोजालजगतकेफेर॥
[५१]पाँच तीन गुण जग उपजाया। सोमायामैं ब्रह्मनिकाया॥
उपजे खपे जग विस्तारा। है साक्षी सब जाननिहारा॥
मोकहँ जानिसकेनहिंकोय। जोपैविधिहरिशंकर होय॥
अस सन्धिककीपरी विकार। बिनुगुरूकृपा न होयउबार॥
मगन ब्रह्म संधिकके ज्ञान। असजानि अब भया भ्रमहान॥
[५२]संधीशब्दहैभ्रममा, भूलिरहा [५३]कितलोग।
परखेउधोखाभे[५४]वैंनहिं, अंतहोतबड़ [५५]सोग॥ ७॥

जो कोइ संधिकधोखाजान। सो पुनि उलटि कियो अनु
मान।मनबुद्धिइन्द्रियजायनजान।निर[५६]बंचनीसोसदाअमान।
[५७]अकल [५८]अनीह [५९]अबाध [६०]अभेद। नेति नेति के गावे वेद॥
सोहं[६१]वृत्ति अखण्डित रहै। एक दोय अब को तहँ कहै॥
जानि परी तब [६२]नित्याकार। झांईसो भ्रम महा बेकार॥

---

४६ सूर्य. ४७ गलीगली ४८ शोर हल्ला. ४९ फिर. ५० शब्द. ५१ पांच-तत्व॥ ५२ देखो रमैनी ३। १० इत्यादि. ५३ कहां. ५४ भेद. ५५ शोक दुख,. ५६ कहनेमें जो नहीं आवे. ५७ कला अंश रहित. ५८ इच्छा रहित. ५९ बाद रहित. ६० भेद रहित. ६१ लगन ख्याल, सुरत. ६२ सत्य रूप.
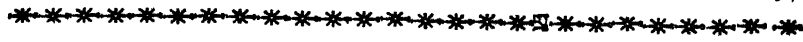
संभव शब्द अमान जो, झाईं प्रथम बिकार।
परखेउ धोखा भेव निज, गुरुकी दया उवार ॥ ८ ॥
पहिले एक शब्द समुदाय। बावन रूपधरे छितराय ॥
इच्छा नारि धरे तेहि भेश। ताते ब्रह्मा विष्णु महेश ॥
चारिउ उरपुर बावन जागे। पंच अठारह कंठहिं लागे ॥
तालू पंच शून्य सो आय। दश रसनाके पूतकहाय ॥
पांज अधर अधरहीमा रहै। शुन्ने कंठ समोधे वहै ॥
ओठ कंठ ले प्रगटे ठौर। बोलन लागे औरके और ॥
एक शब्द समुदाय जो, जामे चार प्रकार।
कालशब्द[1] संधिशब्द[2], झाँईं[3] औ पुनी सार[4] ॥ ९ ॥
पाँचै[63] तीनि नाछा आ चार। और अँठारह[68] करे पुकार
कर्म धर्म तीरथके भाव। ई सब काल शब्दके दाव ॥
सोहं आत्मा ब्रह्म लखाव। तत्व मसी मृत्युंजयभाव ॥
पंचकोश नँवकोश बखान। सत्यझूठमें करे अनुमान ॥
ईश्वरसाक्षी जाननिहार। ये सब संधिक कहै विचार ॥

---

६३ पांच तत्व ६४ तीनगुण. ६५ नौ व्याकरण. ६६ छः शास्त्र. ६७ चार वेद ऋगवेद १ यजुर्वेद २ सामवेद ३ अथर्ववेद. ६८ अठारह पुराण. १ मारकण्डेय पुराण २ मत्स्य पुराण. ३ भागवत. ४ भविष्य पुराण ५ ब्रह्मा वैवर्तक. ६ ब्रह्माण्ड पुराण. ७ ब्रह्मपुराण. ८ विष्णुपुराण. १० वाराहपुराण. ११ वायुपुराण १२ अग्निपुराण १३ नारद पुराण. १४ पद्म पुराण १५ कूर्मपुराण. १६ स्कन्द पुराण. १७ लिंग पुराण १८ गरुड पुराण. ६९ नाम वायु ७० अन्नमय प्राणमय, मनोमय, ज्ञानमय, विज्ञानमय ( आनंदमय ) ७१ उपरोक्त ५ और शब्दमय. १ प्रकाशमय. २ आकाशमय. ३ आनंदमय. ४ देखो बीजकके ५० वीं साखीकी टीका पृष्ठ ३६१ और कबीर मंशूर बडा पृष्ठ ६९६.

कारज कारण जहां न होय। मिथ्याको मिथ्या कहि सोय ॥
बैनं चैन नहिं मौन रहाय । ई सब झांई दीन भुलाय ॥
कोई काहूका कहा न मान।जो जेहि भावे तहं अँरुझान ॥
परे जीव तेहि यमकी धार । जौंलौ पावे शब्द न सार ॥
जीव दुँसह दुख देखि दयाल। तब प्रेरी प्रभु परख रिसाल॥

परखाये प्रभु एक को, जामें चार प्रकार ।
काल संधि झांई लखी, लखी शब्द मत सार ॥१० ॥

प्रथमे एक शब्द आरूढ।तेहि तकि कर्म करे बहु मूढ॥
ब्रह्म भरमहोयसब (जग)में पैठा । निरमलहोयफिरेबहुऐंठा॥
भर मसनातन गावे पांचँ। अटकि रहे नर भवकी खाँच॥
आगे पीछे दहिने बांये । भरम रहाहै चहुं दिशि छाये ॥
उठी भर्म नर फिरै उदास। घरको त्यागि कियो वनवास॥
भरम बढी शिर केश बढावे । तके गगन कोइ बांह उठावे॥
दे तारी कर नाशा गहै । भरमिक गुरू बतावे लहै ॥
भरम बढो अरु घूमन लागे। विनु गुरु पारख कहु को जागे

कहैं कबीर पुकारके, गहहु शरण तजिमान ॥
परखावे गुरभरमको, वानि खानि सहिदान ॥ ११ ॥

भरमजीव परमातम माया । भरमदेह औ भरम निँकाया
अनहदनाद औज्योति प्रकास। आदिअंतलौभरमहिं भास
इतउत करे भरम निँरमान।भरम मान औभरम अमान॥

---

७२ वाणी. ७३ फंस गया. ७४ कठिन. ७५ शब्द. ७६ पांचतत्व
७७ कीचड़ पंक कांदो. ७८ निराकार. ७९ स्थित.

कोहं जगत कहांसे भया । ई सब भरम अती निरमया ॥
[80]प्रलय चारि भ्रम पुण्य औ पाप । मन्त्र जाप पूजा भ्रम थाप ॥
❋बाट बाट सब भर्म है, माया रचीबनाय !
भेद बिना भरमें सकल, गुरु बिन कहां लखाय १२
बाप पूत दोऊ भरम, [81]आँधकोश नव पांच ।
बिन गुरु भरम न छूटे, कैसे आवे सांच ॥ १३ ॥
[82]कलमा [83]बांग [84]निमाज गुजारै । भरम भई अल्लाह पुकारै ॥
अजब भरम एक भई तमासा । [85]लॉ मुकाम [86]बेचून निबासा ॥
[87]बेनमू नवह सबके पारा । [88]आखिर ताको करे [89]दिदारा ॥
रगडे नाक [90]मसजिद अचेत । निंदे [91]बुतपरस्त तेहि हेत ॥
[92]बावन [93]तीसबरन निरमान । हिन्दू [94]तुरक दोऊ भरमान ॥
भरमि रहे सब भरममहं, हिन्दू तुरुक बखान ।
कहहिं कबीर पुकारकै, बिन गुरु को पहिचान ॥ १४ ॥

---

❋ बापपूत दोउ भरम है, मायारची बनाय ।
भेद बिना भरमें सकल, गुरु बिन कहाँ लखाय ॥

८० नित्य प्रलय १ नैमित्तिक प्रलय २ महाप्रलय ३ आत्यंतिक प्रलय ४ । ८१ अधामार्त्री. मुसलमानोंका गुरु मन्त्र लाएलाइलिल्लाह मुहम्मर्दुर. सूलिल्लाह. " ८३ अजान जो निमाज पढनेके थोडेही पहले निमाजके समय सूचना करनेको कलमा श० पुकारते हैं. ८४ जो खुदाके प्रार्थना पांच समय दिन और रात्री पढते हैं पश्चिम मुह होकर. ८५ स्थान रहित. ८६ निराकार. ८७ अद्वितीय. ८८ क्यामतके दिन, सृष्टिके अंतमें जब खुदा सबका न्याय करेगा. ८९ दर्शन. ९० मुसलमानोंके नेमाज पढनेकी जगह प्रतिमापूजक. ( जातिकर्म गुन नाग्र बडाई ) बापपूत दोउ भरम है, मायारची बनाय. भेद बिनाभरमें सकल, गुरु ( बिनकहाँलखाय ) ९२ संस्कृतवर्णमालाके ५२ अक्षर. ९३ मुसलमानीवर्णमालाके ३० अक्षर. ९४ मुसलमान.

भरमत भरमत सबै भरमाने । रामसनेही विरलेजाने ॥
तिरदेवा सब खोजत हारे । सुरनर मुनि नहि पावत पारे ॥
थकितभयातबकहावेअन्ता । विर[95]हिनिनारिरहीबिनु[96]कन्ता
कोटिनतरककरेंमनमाहीं । दिलकीदुबिधाकतहूँनजाहीं ॥
कोई नखशिखजटाबढावे । भरमिभरमिसबजहँतहँधावें ॥
बाट न सूझे भई अँधेरी । होय रही बानीकी चेरी ॥
नानापन्थ बरनि नहिं जाई । ❀ जातिवरण कुलनामबड़ाई ॥
रैन दिवसवे ठाँढे[97] रहहीं । वृक्ष पहार काहे नहिं तरहीं ॥

खसम[98] न चीन्हे बावरी, पर पुरुष लौलीन ।
कहंहि कवीर पुकारके, परी न बानी चीन ॥ १५ ॥

कनरस[99]की मतवाली नारी । कुटनी[100]से खोजे लंगवारी[101] ॥
कुटनीआंखिनकाँजर[102]दियऊ । लागिबताँवन[103]ऊपरपियऊ ॥
काजर लेके हूवे गई अंधी । समुझ न परी बातकी संधी[104] ॥
बाजे कुटनी माटे मटकी[105] । ई सब छिनरौता महँ अटकी ॥
विरहिनि होयके देह सुखावे । कोई शिरमहै केश वढावै ॥
मानि मानि सब कीन्ह सिंगारा । बिनपियपरसैसबेअंगारा ॥

अटकी नारि छिनारि सब, हरदम कुटनी द्वार ।
खसम न चीन्हे बावरी, घर घर फिरत खुवार ॥ १६ ॥

नवदरवाजाभरम विलास । भरमहि वावन बहेवतास ॥

---

❀ जातिकर्म गुन नाम बडाई ॥

९५ विगोगिन. ९६ पिया मालिक. ९७ खडे. ९८ मालिक यति ९९ कान कारस बाणी. १०० गुरुआ लोग. १०१ आशना, जार. १०२ झूंठा उपदेश १०३ बताने लगी, उपदेश देनेलगी. १०४ मिलावट. १०५ इशारा.
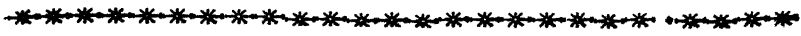
कनउजबाँवन[106]भूतसमान। कहं लगिगनो सो प्रथम उडान॥
माया ब्रह्म जीव अनुमान। मानतही मालिक बौरान॥
अकबक भूत बके परचंड। व्यापि रहा सकलो ब्रह्मंड॥
ई भर्म भूतकी अकथकहानी। गोत्यो[107]जीवजंहा नहिंपानी॥
तनकतनकपरदौरे बौरा। जहां जाये तहँ पावे न ठौरा॥

योगी रोगी भगत बावरा, ज्ञानी फिरे निखट्टू।
संसारीको चैन[109] नहीं है, ज्यों सरायका टट्टू॥१७॥

इतउत[110] दौरे सब संसार। छुटे न भरम किया उपचार॥
जरे जीवको बहुरि जरावै। काटे ऊपर लोन लगावै॥
योगी ऐसी हाल बनाई। उलटी बत्ती[111] नाक चलाई॥
कोइ विभूति मृगछाला डारे। अगम पन्थकी राह निहारे॥
काहूको जल मांझ सुतावे। कहंरतहीं सब रैन गवावे॥
भगती नारी कीन शृंगार। बिनप्रिया परचै सबै अंगार॥
एक गर्व ज्ञान अनुमान। नारि पुरुषका भेद न जान॥
संसारी कहूँ कल नहिं पावे। कँहरत[112] जगमें जीव गवाँवे॥
चारि दिशामें मंत्री[113] झारे। लिये पलीता मुलना हारे॥
जरै न भूतबड़ो वरियाँरा[114]। काजी पण्डित ❀ पढिपढि हारा।
इन दोनों पर एकै भूत। झारेंगे क्या माँकी चूत॥

---

❀ पचिपचि हारा

१०६ अक्षर १०७ डुबाया. १०८ उदास. १०९ सुख. ११० यहां वहां. १११ नेती धोती बाहर कराता है. ११२ हाय २ करते २. ११३ पंडित लोग. ११४ मजबूत बलीबलवान.

भूतनउतरे भूतसों, सन्तो करो विचार ।
कहैं कबीर पुकारिके, बिनु गुरु नहिं निस्तार॥ १८॥
परम प्रकाश भाँस[११५] जो, होत [११६]प्रोढ विशेष ।
तद प्रकाश संभव भई, महा काश सो शेष ॥ १९ ॥
झांई संभव बुद्धि ले, करी कल्पना अनेक ।
सोपरकाशक जानिये, ईश्वरसाक्षी एक ॥ २० ॥
विषम भई संकल्प जब, तदाकारसो रूप ।
महा अंधेरी कालसो, परे अविद्या कूप ॥ २१ ॥
महातत्व त्रीगुंण[११७]पांच तत्व, सँमँष्टि[११८] व्यष्टि परमान ।
दोय प्रकार होय प्रगटे, [११९]खंड अँखंड[१२०]सोजान ॥२२॥
सदाअस्ति[१२१]भासेनिजभास । सोईकहियेपरमप्रकाश ॥
परमप्रकाशले झांई होय । महदअकाश होयबरते सोय ।
बरते वर्तमान परचंड । भाँसक[१२२] तुरियातीत अखंड ॥
कालसंधि होये उश्वास । आगे पीछे अनवनि भास ॥
विविध भावना कल्पित रूप । परकाशी सो साक्षि अनूप॥
❀ शून्य[१] अज्ञान सुषुति होय । अकुलाहट ते नादै सोय॥
नाद वेद अकर्षण जान । तेजनीर प्रगटे तेहि आन ॥
पानी पवन गांठि परिजाय । देही देह धरे जग आय ॥
सो कौवार शब्द परचंड । बहु व्यवहार खण्ड ब्रह्मण्ड॥

---

❀ शून्य ज्ञान सुषुप्ती होय । अकुलाहटसे नादी सोय ॥

११५ अभ्यास. ११६ दृढ. ११७समूह जैसे बन. ११८ एक जैसे एक वृक्ष. ११९ अंस. १२० पूर्ण. १२१ सत्य. १२२ अभ्यासका करानेवाला.

जतन भये निज अर्थको. जेहि छूटे दुखभूरि[123] ॥
धूर परी जब आंखमें, सूझे किमि निजमूरि ॥ २३ ॥
पांजीपरखज बैफारिआवे । तुरतहिसबैविकारनशावे ॥
शब्द सुधारिके रहे अकरम । स्वाती भक्तिकेखोटे भरम ॥
काल जाल जो लखि नहिं आवे।तौलौ निज पद नहीं पावे॥
झांई संधि कालपहिचान । सारशब्द बिनु गुरु नहिं जान ॥
परखे रूप अवस्था जाय । आन विचार न ताहि समाय ॥
झींई[124] शब्दले परखे जोय । संशय वाके रहे न कोय ॥
धन्य धन्य तारण तरण, जिन परखा संसार ॥
वंदीछोर कबीरसों, परगट गुरू विचार ॥ २४ ॥
शब्द संधि ले ज्ञानी मूढ । देह करम जगत आरूढ ॥
नींद[125] संधिलै सपना होय । झांई शून्य सुषोपति सोय ॥
ज्ञानप्रकाशक साक्षी संधि । तुरियातीत अभास अबंधि ॥
झांई ले वरते वर्तमान । सो जो तहां परे पहिचान ॥
काल अस्थितिकेभासनशाय । परखप्रकाशलक्षबिलगाय ॥
बिलगे लक्ष अपनपो[126] जान । आपु अपन पौ भेदन आन ॥
आप अपनपौ भेदबिनु, उलटिपलटि अरुझाय ॥
गुरु बिनमिटे न दुगदुगी, अनवनि यतन नशाय ॥२५॥
निजप्रकाशझांईजोजान । महासंधिमाकाशबखान ॥
सोई[127] पांजी ले बुद्धिविशेष । प्रकाशकतुरियातीतअरुशेष॥

---

१२३ ढेर, समूह. १२४ वेदांत. १२५ अंतःका जो शब्द
१२६ दाव, अपना स्वरूप. १२७ खाता—वही.

विविध भावना बुद्धि [128]अनुरूप । विद्यामाया सोईस्वरूप ॥
सो संकल्प बसे जिव आप ॥[129]फुरी अविद्या बहु संताप ॥ त्री
गुण पांच तत्व विस्तार । तीन लोक तेहिके मंझार ॥
[130]अदबुदकलाबरनिनहिंजाइ । उपजे [131]खपेतेहिमाहिसमाइ ॥
निज झांई जो जानी जाय । सोच मोह संदेह नशाय ॥
अनजानेको एही रीति । नाना भांति करे परतीति ॥
सकल जगतजालअरुज्ञान बिरला और कियो अनुमान ॥
कर्ता ब्रह्म भजे दुःख जाय । कोई आपै आप कहाय ॥
पूरण सम्भव दूसर नाहिं । बंधन मोक्ष न एको आहिं ॥
फल आश्रित स्वर्गहिके भोग । कर्म सुकर्म लहै संयोग ॥
करमहीन [132]बाना भगवान । [133]सूतै [134]कुसूत लियो पहिचान ॥
भांतिन भांतिन पहिरे चीर । युग २ नाचे दास [135]कबीर ॥
भासे जीवरूप सो एक । तेही भास के रूपअनेक ॥
कोई [136]मगन रूप लौलीन । कोइ [137]अरूप ईश्वरमन दीन ॥
कोई कर्म[138]रूप है सोय । शब्द [139]निरूपनकरे पुनिकोय ॥ [140]समय
रूप कोई भगवान । कर्त्ता न्यारा [141]कोई अनुमान ॥ कोई
कहै [142]ईश्वर ज्योतिहिंजान । आतमको कोई [143]स्वतः बखान ॥
कोई कहै[144]सबपुनीसबतेन्यार । आपै राम विश्व विस्तार ॥

---

१२८ अनुसार मुताबिक १२९ स्फुर्ण हुआ. १३० नाना रंगका आश्चर्यमय. १३१ नाश होता है. १३२ वेष. १३३ भला. १३४ बुरा. १३५ भक्त लोग. १३६ सगुण उपासक. १३७ निर्गुण उपासक. १३८ पूर्व मीमांसक. १३९ व्याकरणी. १४० वैशेषिक. ( काल वादी. ) १४१ तर्कवादी नैय्याइक. १४२ योगी ( पातांजल ) १४३ सांख्यवादी १४४ वेदांती.

शब्द भौव[145] कोई अनुमान । अद्वै रूप भई[146] पहिचान ॥
दुगदुग[147] रही को बोलै बात । बोलतही सब तत्व नशात ॥
बोल अबोल[148] लखे पुनि कोय । भास जीव नहिं परखैसोय ॥
निज अध्यास[149] झांई अहै, सोसंधिक भौमास ॥
प्रथम अनुहारा कल्पना, सदा करे परकास ॥ २६ ॥
लख चौराशी योनि जेते । देही बुद्धि जानिये तेते ॥
जहं जेहि भास सोई २ रूप । निश्चै किया परा भवकूप ॥
नाना भांति विषय रस लीन । अरुझि२जिव मिथ्यादीन ॥
दांवा[150] विषय[151] जरे सब लोय । बांचाचहै गहै पुनि सोय ॥
दृढ विश्वास भरोसा[152] राम । कबहुं तो वे आवैं काम ॥
विषय[153] विकार मांझ संग्राम । राम खटोला किया अराम ॥
घायल बिना तीर तरवार । सोइ अभरण[154] रीझेभरतार ॥
कामिनी पहिर पियासों रांची[155] । कहैकबिर भवबूडत[156]बांची ॥
भव बूडतबेडा[157]भगवान । चढे धाये लागीलौज्ञान ॥
थाह न पावे कहे अथाह । डोलत करत तराहि तराह ॥
सूझ परे नहिं वार न पार । कहे अपार रहैमंझधार[158] ॥
मांझधारमें किया विवेक । कहांकेदूजा कहांके एक ॥
बेरा आपु आपु भवधार । आपै उतरन चाहे पार ॥
बिन जाने जाने है और । आपै राम रमै सब ठौर ॥

---

१४५ बोलता. १४६ हुई. १४७ शंका. १४८ विज्ञानी. १४९ कल्पना.
१५० उसके बुद्धि का जो विषय. १५१ अग्नि. १५२ आशा १५३ क्षोभ, ऐब.
१५४ गहना. १५५ लगी. १५६ गुरू. १५७ नाव किश्ती. १५८ बीच धारमें.

वार पार ना जाने जोर । कहै कबीर पार है ठौर ॥२६॥
अक्षर खानी अक्षर वाणी । अक्षरते अक्षर उतपानी ॥
अक्षर करता आदि प्रकास । ताते अक्षर जगत विलास ॥
अक्षर ब्रह्मा विष्णु महेश । अक्षर रज सत तम उपदेश ॥
छितिजलपावकमरुतअकाश । येसब अक्षरमोपरकाश ॥
दशऔतारसोअक्षरमाया । अक्षरनिर्गुण ब्रह्मनिकाया ॥
अक्षर काल संधि अरु झांई । अक्षर [१५९]दहिने अक्षर [१६०]बांई ॥
अक्षर आगे करे पुकार । अँटके नर नहिं उतरे पार ॥
गुरुकृपा निज[१६१] उदय[१६२]विचार । जानिपरी तब गुरुमतसार॥

ओसको जहँ लेश नहीं, बूड़े सकल जहान ।
गुरु कृपा निज परख बल, तब ताको पहिचान॥२७॥

रमैनी-अक्षरकायाअक्षरमाया । अक्षरसतगुरुभेदबताया॥
अक्षर यन्त्र मन्त्र अरु पूजा। अक्षर ध्यान धरावत दूजा॥
अक्षर पढि२जगत भुलान। अक्षर बिनु नहिं पावे ज्ञान ॥
बिन अक्षर नहिं पावे [१६३]गती। अक्षर बिन नहिं पावे [१६४]रती ॥
अक्षर भयउ अनेक उपाय। अक्षर सुनि२शून्य समाय ॥
अक्षरसे भव आवै जाय। अक्षर काल सबनको खाय ॥
अक्षर सबका भाषे लेखा। अक्षर उत्पति प्रलय विशेखा ॥
अक्षरकी पावै सहि[१६५]दानी। कहै कबीर भव उतरे प्रानी ॥

परखावे गुरुकृपा करि, अक्षरकी सहिदानि ॥
निज बल उदय विचारते, तब होवे भ्रम हानि ॥२८॥

---

१५९ दक्षिण पंथ १६० वाममार्ग. १६१ अपना. १६२ प्रकाश.
१६३ मुक्ति. १६४ प्रवृत्ति. १६५ चिह्न, पारख, पहिचान,.

बावनके बहु बने तरङ्ग। ताते भासत नाना रङ्ग॥
उपजे औ पालै अनुसरे। बावन अक्षर आखिर करे॥
राम कृष्ण दोउ लहर अपार। जेहिपद गहि नर उतरे पार॥
महादेव लोमश नहिं बांचे। अक्षर त्रास सबै मुनि नाचे॥
ब्रह्मा विष्णु नाचै अधिकाइ। जाको धर्म जगत सब गाइ॥
नांचै गण गंधर्व मुनि देवा। नाचै सनकादिक बहु भेवा॥
अक्षर त्रास[११६] सबनको होइ। साधक सिद्ध बचे नहिं कोइ॥
अक्षर त्रास लखे नहिं कोइ। आदि भूल बंछे सब लोइ॥
अक्षर सागर अक्षर नाव। करणधार अक्षर समुदाव॥
अक्षर सबका भेद बखान। बिन अक्षर नहिं अक्षर जान॥
अक्षर आसते फंदा परे। अक्षर लखे ते फन्दा टरे॥
गुरु शिष अक्षर लखे लखावे। पराशी फन्दा मुक्तावे॥
विनु गुरु अक्षर कौन छोडावे। अक्षर जालते कौन बचावे॥
संचित[११७] क्रिया उदय जब होय। मानुष जन्म पावे तब सोय॥
गुरुपारख बल उदय विचार। परख लेहु जगत गुरुमुख सार॥
अस्ति हंस प्रकाश अपार। गुरुमुख सुख निज अति दातार

साखी०—अक्षर है तिहु भ्रमका, विनु अक्षर नहिं जान॥
गुरु कृपा निज बुद्धिबल, तब होवे पहिचान॥ २९॥
जेहँवांसे[११८] सब प्रगटे, सो हम समझत नाहिं॥
यह अज्ञान है मानुषा, सो गुरु ब्रह्म कहि ताहिं॥ ३०॥

---

११६ भय, ११७ जन्मांतरोंमें संचित किया हुआ कर्म, ११८ जहांसे.

ब्रह्मा विचारे ब्रह्मको, पारख गुरु प्रसाद[१६९] ।
रहित[१७०] रहे पद परखिके, जिवसो होय अवाद[१७१] ॥ ३१ ॥

इति मूल रमैनी—शब्दकुंजी समाप्त ॥

---

वाणी जेती जगतमें, सबमें ताला दीन ।
बिनु सतगुरु कृपा कोई, पावे नाहीं चीन ॥ १ ॥
सतगुरु कबीर कृपा करी, चाबी दीन्ह रसाल ।
वाणी कुलुफ याते खुले, पावे भेद विसाल ॥ २ ॥
वाणी विविधि जगतमें, काल जाल प्रचंड ।
सत्य भेद किमि पावई, भूले जीव पखंड ॥ ३ ॥
याते सतगुरु कृपा करी, जीव उबारन हेतु ।
मूल रमैनी प्रगटकरी, दीन्हा भवको सेतु ॥ ४ ॥
कठिन शब्द जेते रहे, टिप्पणी करि बनाय ।
बाकी अब कछु होय जो, दीजो संत जनाय ॥ ५ ॥
गुरुथल होतां[१७२] जानिये, शिवहर[१७३] जन्म स्थान ।
युगलानन्द मम नाम है, जानो संत सुजान ॥ ६ ॥

---

१६९ दया, कृपा. १७० अलग. १७१ वाद रहित. १७२ जिला सारन डा० घ० कुचाहकोटके इलाकेमें और हथुआसे पांच कोस उत्तर पर हैं. १७३ बिहार प्रान्तके मुजफ्फरपुर जिलेमें राजस्थान हैं.

इति मूलरमैनी प्रसिद्ध अक्षरखण्डकी रमैनी स्वामी श्रीयुगलानन्द बिहारीद्वारा संशोधिता समाप्ता ।

आदि वाणीका शब्द ।

"बलिहारी अपने साहबकी जिन यह जुगुति बनायी। उनकी शोभाकेहि विधि कहिये मोसों कही न जायी ॥ बिना ज्योतिकी जहँ उजियारी सो दरशे वह दीपा। निरते हंस करै कौतूहल वोही पुरुष समीपा ॥ झलकै पदुम नाना विधि वानी माथे छत्र विराजै । कोटिन भानु चन्द्रतारागण एक फुचरियन छाजै ॥ कर गहि बिहँसि जबै मुखबोलै तब हंसा सुखपावै । वंश अंश जिन बूझ बिचारी सो जीवनमुकतावै । चौदहलोक वेदका मण्डल तहँ लग काल दोहाई। लोक वेद जिन फंदा काटी ते वहि लोक सिधाई ॥ सात[1]शिकारी चौदह[2] पारथ भिन्नभिन्न निरतावै । चारि[3]अंश जिनसमुझि बिचारी सो जीवन मुकतावै ॥ चौदह लोक बसे यम चौदह तहँलग काल पसारा । ताके आगे ज्योतिनिरंजन बैठे सुन्नमझारा ॥ सोरह[4]खंड अक्षर भगवाना जिन यह सृष्टिउपाई । अक्षर कला सृष्टिसे उपजी उनही माहँ समाई ॥ सत्रह[5] संख्यपर अधरदीप जहँ शब्दातीत बिराजै । निरतै सखी बहूविधि शोभा अनहद बाजा बाजै ॥ ताके ऊपर परमधाम है मरम न कोई पाया । जो हम कही नहीं कोउ मानै ना कोइ दूसर आया॥ वेदन साखी सब जिउ अरुझे परम-

---

१ सात सुरति । २ चौदह यम । ३ चारवद । ४ सोरह कला जीवकी । ५ सत्रहतत्व सूक्ष्म शरीरके ।

धाम ठहराया। फिरि फिरि भटकै आप चतुर है वह घर काहु न पाया॥ जो कोइ होइ सत्यका किनका सोहमका पतिआई। औरन मिलै कोटि कर थाकै बहुरि कालघर जाई॥ सोरहसंख्यके आगे समरथ जिन जग मोहिं पठवाया। कहै कबीर आदिकी बाणी वेद भेद नहिं पाया"

कड़िहार भेदका शब्द।

"दशौ दिशा कर मेटौ धोखा। सो कड़िहार बैठही चोखा। दशौ दिशा कर लेखा जानै। सो कड़िहार आरती ठानै॥ दश इंद्रीके पारिख पावै। सो कड़िहार आरती गावै। जो नहिं जानै एतिक साजै। चौका युक्ति करै कयहि काजै॥ इस कारण करहिं गुरु आई। बिगरै ज्ञान जो पंथ पराई। पद साखी अरु ग्रंथ दृढावै। बिन परख न उत्तम घर पावै॥ शब्द साखी सिखि पारस करहीं। होय भूत पुनि नरकहिं परहीं॥ बिना भेद कड़हार कहावै। आगिल जन्म श्वानको पावै॥ पद साखी नहिं करहि विचारा। भूंकि भूंकि जस मरै सियारा॥ पद साखी है भेद हमारा। जो बूझै सो उतरहिं पारा॥ जबलग पूरा गुरू न पावै। तब लग भवजल फिरि फिरि आवै॥ पूरा गुरु जो होय लखावै। शब्द निरख परगट दिखलावै॥ एक बार जिय परचौ पावै। भव जल तरै बार नहिं लावै॥"

इति श्री शब्दावली खण्ड तीसरा। शुभम भवति।

सत्यनाम ।

# शब्दावली चौथाखंड ।

सत्यकबीरकी आगम वाणी ।

अमर लोकसे हम चलि आये, आये जगत मंझारा हो ।
सही छाप परवाना लाये, समरथके कड़िहारा हो ॥ १ ॥
जीव दुखित देखा भवसागर, ता कारण पगु धारा हो ।
बंश ब्यालिस थाना रोपा, जम्बूदीप मंझारा हो ॥ २ ॥
दस मुकामकी भक्ति दिढाई, चौका पान विस्तारा हो ।
बारह पन्थ चलेंगे आगे, घर घर बोध पसारा हो ॥ ३ ॥
गुरु शिष्य तौ लग नहिं उबरे, फिर फिर गर्भ मँझाराहो ।
बचन वंसके वीरा पावे, तब होवे निस्तारा हो ॥ ४ ॥
तेरहें पीढी ज्ञान रजधानी, चूरामन औतारा हो ।
उनके अंग छाया नहिं होई, देहविदेह अपारा हो ॥५॥
उनके आगे जोग मत चलिहै, राजनीति मिट जाई हो ।
पांच स्वादकी इच्छा नाहीं, सो गति सब महँ आई हो॥६॥
द्वादश पंथ मिलेंगे आई, छोड कपट चतुराई हो ।
जंबूद्वीप करैं कडिहारी, हंस लेहिं मुकताई हो ॥ ७ ॥
पांच हजार पांच सौ बीते, सत्त चाल ठहराई हो ।

जैनी जीव दया प्रति पारे । रसना राम नाम नहि उच्चारे ॥
किरतम सो कहै यह करतारा । राम रहा उनहूते न्यारा ६
यती अपने यतको धावे । काम जीतिकै बडा कहावे ॥
हमतो अपना तनमन जारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥७
जंगम फिरै लिंग लरकाई । निसि वासर शिवहींको ध्याई ॥
शिवशिव करत गये जमद्वारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ८
मौनी हो मौन गहि रहई । रसना बचन कहै नहि कहई ॥
लहर क्रोध घट भीतर धारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ९
तपसी हो तनकूं दहई । गृह छाडि बन भीतर रहई ॥
देह अज्ञान लगावे छारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥१०
जिन्दाहोयजिन्दगीजानै । सतकाशब्दहिरदयनहिं आनै ॥
होय प्रात तब करै पुकारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥११
शेख साहिब नहि पहिचाना । भरिभरिमूठी भांग चबाना ॥
धै कुतका करे दम कारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥१२
भक्त होयकर मढी बंधावे । नर नारी सो नेह लगावै ॥
पाछे करै माया विस्तारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥१३
किरतनिया जो किरतन करई । करि किरतन भवबिच परई
किरतन करै औ हाथ पसारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥१४
भोपा होय करि संख बजावे । दाढी मूंछा घोंट मुड़ावे ॥
उभा पेटको करत पुकारा । राम रहा उनहू ते न्यारा १५॥
जोत जगावे पाव पुजावे । सती धामको राह बतावे ॥
जीव सतावे करै विभिचारा । राम रहा उनहू ते न्यारा ॥१६

सूरा होय सूरापन करई । सेर अन्न कुल कारण मरई ॥
कहा भयो जो धरलिया धारा । राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १७
दाता दान देइ करि भूला । दान देइके मनमें फूला ॥
ऐसा है सत धर्म हमारा । राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १८
सती होय करि सतजो करई । मुरदा संग जीवत मरई॥
कामस्वाद कियो विभिचारा।राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १९
भरमत भरमत सब भरमाई। राम भक्ति कोउ विरलेपाई॥
प्रेमभक्तिसबऊपर राजे। अखण्डरामतहँअटलविराजे॥२०
ऐसी भक्ति करै जो कोई । सतगुरु शब्दमें रहै समोई ॥
आनशब्दसोरहे निनारा। सो भगता कहिये ततसारा२१॥
कहैंकवीर दिया बतलाई । होती गुपत परगट दिखलाई॥
सत्यनामसुमरे जो कोई। ताको आवागमन न होई ॥२२

इति राम परखकी रमैनी ॥

---

निरख परमोधकी रमैनी।

निरगुनदाताहरताकरता।सब जग विनसे आपहि रहता॥
सदा सर्वदा अविचल सोई। तौलना एक न देना दोई १॥
कहा बखानू हूँ गुण तेरा। उस्तुति करत थका मनमेरा॥
जिह्वा ललनी जाने सोई। तौलना एक न देना दोई॥२॥
सबघटव्यापकमालिकमौला।कोघटकाला को घट धौला॥
पांच रंगते न्यारा होई । तौलना एक न देना दोई॥३॥
अलखपुरुषजोनिरगुनहाका । चलत २ मेरामन थाका॥
निरगुन सरगुन एकै होई ।तौलना एक न देना दोई४॥

कहा बखानूँ रूप निशानी। ज्यों दर्पनमो दरसन जानी ॥
है हजूर दिखै न कोई। तौलना एक न देना दोई॥५॥
कथनी कथके कहा बखाना। शबद[1] सुरतमें एक समाना ॥
शब्द सुरत एकै जब होई। तौलना एक न देना दोई ६
शब्द सुरति अच्छर[2] बतलावे। अच्छर संधि लखै सो पावे॥
अच्छर संधि लखै जो कोई। तौलना एक न देना दोई॥७॥
वस्तु अपार पार नहिं पावे। है नजीक[3] पुनिदिष्टि न आवे॥
दिष्टि[4] अदिष्टि मध्य है सोई। तौलना एक न देना दोई ८
जो भीतर सो बाहर जाना। बाहर भीतर एक समाना॥
आदि रु अन्त मध्य है सोई। तौलना एक न देना दोई ९॥
बावन अच्छर नाम न होई। शब्द सुरतिले रहो समोई॥
है निजनाम नाम है सोई। तौलना एक न देना दोई १०
उतपतका जो करूँ बखाना। परलयका भाषूँ अनुमाना॥
उतपत परलय एकै होई। तौलना एक न देना दोई ११॥
शून्न[5]हिंतेसबजग उपराजा। सून्नहिं माहिं शब्दपुनिसाजा॥
सून्न बिसून्न लखै जो कोई। तौलना एक न देना दोई १२
पूरन बल सबहिनमें जाना। सो तो पूरन काल समाना ॥
काल अकाल मध्य हैसोई। तौलना एक न देना दोई॥ १३॥
जहँ लग दीखै तहँ लग नाहीं। जहाँसून्न तहाँ सून्नसमाही ॥
सतगुरुशब्दलखै जो कोई। तौलना एक न देना दोई १४॥
गुरु गम होय तो चश्म[6]हिं पावे। आपा मध्ये आपा समावे॥

---

१ शब्द. २ अक्षर. ३ नजदीक, निकट. ४ दृष्टि. ५ शून्य. चश्म फा० आंख.

आप मध्ये आपु सु सोई। तौलना एको न देना दोई १५ ॥
अलखपुरुषदेखासमदिष्टी । हाथ पसार आवे नहिं मुष्टी ॥
पांच तत्वते न्यारा होई। तौलना एक न देना दोई ॥१६॥
पानीसे पतला करि जाना। धूवाँते अति झीन बखाना ॥
मनही आवे मनही जाई । मनही काल सबनको खाई ॥
मन चंचलही लखै जु कोई। तौलना एक न देना दोई १८॥
मनहीजलथलमनहिअकासा । मनही पांचतत्वपरकासा ॥
मनको रूप देख नहिं होई। तौलना एक न देना दोई १९
ब्रह्मादिक सनकादिक भाई। तेऊ मनके हाथ बिकाई ॥
मन सावज बस करै जु कोई। तौलना एक न देना दोई २०
कौन सु मुनिवर मनको मारै। मनको मारि कौनको तारै ॥
उल्टा मनैनिज मनै समोई। तौलना एक न देना दोई २१
अगमअगाधवारनहिंपारा। गुरुगम शब्दहिंकियाविचारा॥
कहैं कवीर हम देखा सोई। तौलना एक न देना दोई२२

इति रमैनी निरख परखकी ॥

---

सत्यनाम ।

॥ अथ शब्द पारखकी रमैनी ।×

सिंगी निसदिन अनहद बाजे । सदा रहे उन मुनिके छाजे ।
सुरति शब्दमें रहे समाई। कहे कवीर गलतान रहाई ॥ १ ॥

---

× यह शब्द मुझे—सेवक मातादीन कवीर पंथी—करनेलपुरा इन्दौरसे मिला था—जो बहुत पुराना लिखा हुआ है । एकही प्रति होनेके कारण ज्यों का त्यों रहने दिया है । पाठक और प्रतिसे मिलानकर सुधार सकते हैं ॥

बहुत दिवसका सूता जागा। खोलि कपाट नामसो लागा।
धन सतगुरु जिन राह बताई। कहैं कबीर सब विपत मिटाई॥
घटमें भया नामका हेला। मूल गहा जब खेलम खेला।
मोह मायाकी काटी फांसी। कहैं कबीर मिटी चौरासी॥३॥
स्वामी जो संसारसे न्यारा। सो कहिये साहबका प्यारा।
आशा तजिके रहे निरासा। कहै कबीर तब देख तमासा॥४॥
हाथ ठीकरा गलेमें कंथा। निर्गुन होके पकड़े पंथा।
ज्ञान चिरागी घटमें जूपी। कहैं कबीर सो मुक्त सरूपी॥५
फाँटा टूटा कंथा पहिरे। मनसा ममता घटमें गहिरे।
ताकी चौकी मान बडाई। कहै कबीर सो दिया उठाई॥६
मनराजा सरगुनमें भीजै। ज्यों छेरी खटिककी धीजै।
निरगुन सेती लाजा मरई। कहैं कबीर जिब कैसे तरई॥७
फांसी लिया हाथमें माया। ज्यों बाघिन बकरेको खाया।
पल पल सो गवावे रोई। कहैं कबीर ऐसा दुख होई॥८॥
मायाका जोरा है फंदा। यासे उबरा कोइ कोइ बंदा।
स्वास उसास सुमिरन लागा। कहैं कबीर विषय सब भागा॥९
जैसे सरपिनि किया कुँड़ाला। कोइ बन्धा कोई दीया टाला।
कहैं कबीर कुडाला पेले। निर्भय होय जगतमें खेले॥१०॥
यह संसार कुँडाला माहीं। जाको सरपिनि धरधर खाहीं।
कहै कबीर कोइ बाहर आवे। ताको माया नाहिं सतावे॥११
व्यवहार करै औ ऊंचा बोले। निसि दिन फूला फूला डोलै।
मांग तांग कर करैरसोई। कहैं कबीर नफा नहिं कोई॥१२॥

बहुत जतन करि जगत परमोधं । अपने घटको नाही सोधं ।
अंधाशब्दकरेनहिपरिचय । कह कबिर ब्रह्मकेमंदरमे ॥ १३
दुनिया सेती बक बक मूवा । ज्यों नलनीने पकरयोसुवा ।
ऊपर पाँव तले भइ मूड़ी । कहेकबीर संसारी बूडी ॥ १४ ॥
रात दिवस कर ज्ञान पुकारे । मन इन्द्रीका नाहीं मारे ।
कहैं कबीर सुनो नर लोई । कागा हंसा कैसे होई ॥ १५ ॥
कठिन धारना हंसकी भाई । ज्यों नटनी कर बरत चढाई ।
चढै बरत वह तनमनसाधे।कहै कबीर यहिकला अगाधे १६
सुरतनिरतसो नटनीखेले । तन संभालि आगे पग मेले ।
ऐसी धरन नाम जेहि आवे । कहँकबीरसो हंस कहावे ॥ १७
अन्तर लागी करमकी टाटी । दसो दिसा सुरत सो फाटी ।
धोखा चिन्तामें दिनबीता । कहै कबीर यारहिगारीता ॥ १८
जाग शिताबी अब का सोवे । टालाटूलीमें दिन खोवे ।
छाडि अनेक एकको धावे । कहै कबीर निर्भयहोयजावे १९
बांका गढको बेगइ लीजे । पीछे नहीं पयाना कीजे ।
सन्मुख जूझे सोई सूरा । कहै कबीर साहबका पूरा ॥ २० ॥
आठ पहर जो मान पुकारे । घटका बैरी चुन चुन मारे ।
अगम पंथका नाम बोहारे । कहै कबीर नहि जमकेमारे २१
हिंदू तुरुक दोऊ सो न्यारा । गुरुसमोबचनकहेनहिंलारा ।
राह उजडकी लीजे भाई । कहैंकबीरझागरानहिंखाई २२ ॥
छन्द व्याधिसो न्याराराहना।निसि दिनसाहिबसाहिबदरना
कहैं कबीर समझकरदेखो।आनबतीसेनाहि न लेखो॥ २३

सार शब्दका थाला झेले । निर्भय होय जगतमें खेले ।
कहैं कबीर क्यासंशयकीया।नामपियालाभरभरपीया २४
शून्य मँडलमें तारी लागी । मूनी सुरति भडक दे जागी॥
कहै कबीर पियासो लागी। मनकी दुविधा नबही आगी॥
सा०—डोरी लागी डर मिटा, सुरत रही गरनाय ।
सुरत सुहागिन हो रही, पर घर परत न जाय ॥

इति श्री शब्द पारखा सम्पूर्ण ।

---

सत्यनाम ।

## ॥ सर्वांगबत्तीसी रमैनी ॥

काजी कौन ?

सोइ काजी जो होय सयाना। दिल दरिआवमें रहै समाना॥
परम जोतिपर आसन करई । सो काजी भवसागर तरई॥ १

मुल्ला कौन ?

सो मुल्ला जो मनका धीरा । आप आपनी चीन्है पीरा॥
सहज शून्यमें रहै समाई । सो मुल्ला बिहिश्त को जाई॥ २

दुर्वेश कौन ?

सोई दुर्वेश जो दिलका सूरा । घट परचैमें देखै नूरा॥
ज्ञान ध्यानकी बातें करई । सो दुर्वेश जगतमें तरई॥ ३॥

शेख कौन ?

सोई शेख जो शेखी धरई । घट परिचय कर मन सो लरई॥
मनसा मार करै पिसमाना। मन जीतै सो शेख सयाना॥ ४

फकीर कौन ?

सोई फकीर जो फांके काला। इन्द्री जिह्वा एकहि नाला॥
इन्द्री जिह्वा दोष परहरई। काया खोज अलह चित धरई॥५

पठान कौन ?

सो पठान जो परमादहिं तोरे। अलख पुरुष घट माहिं निहोरे
निरगुन कालमें तिनका तूरा। सोई पठान जगतमें सूरा६

सय्यद कौन ?

सो सय्यद जो शरा विचारे। वेद किताबमें रहे नियारे।
वेद कितेब दोनों परिहरई। निर्गुण नाम निरंतर धरई ७

काफिर कौन ?

सो काफिर कहीं न ठोलावे। दुनिया त्याग नहीं मन भावे
घटको छाडि अनत नहि जाई। चितमें खुवं लखे न खुदाई८

हिन्दू कौन ?

सोई हिन्दू जो हिरदयसमाना। पाप छोडि करे पुण्य निधाना
निरगुननाम निरंतर ध्यावे। जरा मरणमें बहुरि न आवे॥९

ब्राह्मण कौन ?

सोई ब्राह्मण जो ब्रह्म पहिचाना। जीव शीवमें रहे समाना॥
तीन लोकमें ब्रह्म परचाना। ब्रह्म छाडि पूजे नहिं आना। १०

क्षत्री कौन ?

सो छत्री जो जमा संभारे। काम क्रोध गुन हिरदय जारे॥
काम क्रोध तन तजे गुमाना। सो क्षत्री रहे निरवाना॥११

वैश्य कौन ?

सो वैश्य जो करे व्योपारा। सत्य शब्द ले हाट

पमाग ॥ झूठ कपटको त्यागन कीन्हा । सब जीवनको भोजन दीन्हा ॥ १२ ॥

शूद्र कौन ?

सोई शूद्र जो सेवा मन लीन्हा । आतमराम सकलघट चीन्हा सेवाको फल पावै सोई । जरा मरन दुख नासै दोई॥१३॥

जुलहा-कोरि कौन ?

सो जुलहा जो कोरै विधाना । विन धरनीको बुनै जो बाना। बाना बुनके करै ठिकाना । मुवा प्रान जो वा घर जाना १४

राजा कौन ?

राजा सो जो दिलमें राजू । निसिदिन करै सत्यको काजू। हाथ अन्तर कबहुं न धरई। सब जीवनकी रच्छा करई १५॥

कायथ कौन

सो कायथ जो करथी विलोवै । पाप पुन्यका संसा खोवै ॥ मिथ्या वचन कबहूं नहिं कहई । निसिदिन ओट नामकी गहई ॥ १६ ॥

योगी कौन ?

सो योगी जो खोजै आपा। लिप्त न होवै पुन्य अरु पापा॥ आपा मध्ये करै विचारा । काम क्रोध ते रहै निनारा १७

संन्यासी कौन ?

संन्यासी करै मनको न्यासा । काम क्रोधको मेटै फाँसा ॥ कनक कामिनि जानै झारी । सतगुरु शब्द दिल माहिं विचारी ॥ १८ ॥

वैरागी कौन ?

सो बैरागी जो राग न करई । बीत राग होय जग संचरई ॥
व्यापक ब्रह्म घटहीमें देखे । सो बैरागी है हमरे लेखे ॥१९॥

रामानन्दी कौन ?

रामहिं छाड़ि न आन ध्यावे । घट घट महँ राम चित लावे॥
भेदभाव कबहूँ नहिं माने । सो रामानन्दी साँच बखाने२०

शैव कौन ?

सो शैव जो शिवोऽहम गावे । जीव शीवको भेद मिटावे ॥
छाडिअमंगलमंगलरांचे । रहिअजांचकबहूंनहिजांचे२१॥

वैष्णव कौन ?

वैष्णवसोई जो व्यापकजाने । भक्त भगवंत एक करि माने ।
दया छिमा उर धरे विचारू । एक दोयका करे निवारू २२

कर्मी कौन ?

कर्मी सोई जो कर्म कमावे । अकरम छोडि सुकरम को धावे ।
पाप पुण्यकी आस बहाई । एक नाम रहै लवलाई ॥२३॥

उपासक कौन ?

इष्ट देवको निकटहिं जाने । रहे सदा सन्मुख मनमाने ॥
उपास्य देवको धरे ध्याना । सद्गुरु दया होय निर्वाना॥२४॥

ज्ञानी कौन ?

ज्ञानी सोई जो ज्ञेय पहिचाने । आतम ब्रह्म एक करि जाने ॥
द्वैत भावको देइ उडाई । कहैं कबीर ज्ञानी सतभाई ॥२५॥

पंथी कौन ?

पंथी होय सुपंथहि चाले । छाँडे पथ न कुपथ पग डाले ।
सद्गुरु बचन सदा मन आने । वेद संत सोइ पंथ बखाने २६
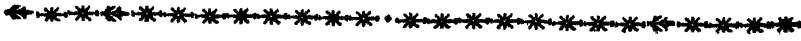
गृही कौन ?

गिरही होय गिरहको जाने। पांच तत्व गुण तीन पिछाने। करि पिछान न्यारा होयजाई। आत्मतत्वमें रहे समाई॥२७

वैद्य कौन ?

वैद्य सोई जो नाडि पिछाने। रोग अरोगका भेद बखाने। पात्र कुपात्रका करे विचारा। औषध नाम करे परचारा२८

मंत्री कौन ?

मंत्री सोई जो मंत्र विचारे। राज काजको भले सँह्मारे। रय्यत राजा बसिकरि राखे। नाम सुधारस निसि दिन चाखे ॥ २९ ॥

गुरु कौन ?

गुरु सोई जो ज्ञान सिखावे। मनका संशय दूर बहावे॥ करम भरम सब देइ बहाई। सांचा सतगुरु सोइ कहाई ॥ ३० ॥

इष्ट कौन ?

इष्ट सोई जो सबका होई। जहां न भेद भाव कछु कोई॥ अखंड स्वरूप अस्ति बखानो। कहैं कबीर निज आतम जानो ॥ ३१ ॥

रहनी कौन ?

ऐसी रहनी रहै जु कोई। मुक्ति पंथको पावे सोई॥ भाव भक्ति दोऊ समतूला। कहैं कबीर सो पावे मूला॥३२

पच्छापच्छी कारने, सब जग गया भुलान।
निर्पच्छ होयके हरिभजे, सोई संत सुजान ॥ १ ॥

आश पास जग बंधिया, आश रहे लिपटाय।
नाम आश पूरन करे, सबै आश मिट जाय ॥ २ ॥
जो तू चाहे मुझ्झको, मते कुछ राखे आस।
मुझ्झ सरीखा होय रहू, सब कुछ तेरे पास ॥ ३ ॥

इति श्रीसर्वांग बत्तीसी रमैनी ॥

---

रमैंनी सोलहतिथिकी ॥

आउ संत मिलि उतरो पारा। सोलह तिथिका करो विचारा ॥ सोरह तिथिकी कथूँ रमैनी। धरम दास यह लोक निसैनी ॥ १ ॥ अमावस जो मन दिढ होई। आतम परिचय मुआन कोई॥ (अमावस आसन दिढ होई। आतम परिचय मानै सोई) ॥२॥ पडिवा प्रीति पियासूँ लागी। संशय गयो द्वैत सब भागी॥ गुरु प्रताप दया जब कीन्हा। दिलका धोखा सब हर लीन्हा ॥ ३ ॥ दूइज भीतर बोले ओई। अन्दर रांचे जोगी सोई ॥ तीज तीन गुन-नसे न्यारा। जो बूझै सो उतरै पारा ॥ ४॥ चौथे चित चैतन सो लागा। दिलका धोखा सबहीं भागा ॥ पाँचै मिलि गुरु पूरा पाया। बहुरि न जोनी संकट आया ॥५॥ छठएँ छूति करो मत कोई। सब घट ब्रह्म व्यापक होई ॥ सातम नाम सुधा रस पीजे। निर्मल नाम साहेबको लीजे ॥ ६ ॥ ( सातें सतनाम रस पीजे। सिरके साँटे सहिब लीजे॥ ) आठम अनुभव लेहु बिचारी। सब घट पुरुष कहूँ नहि नारी ॥७॥ नौनारी देखो इक साथा। है हीरा

जो आवै हाथा ॥ दशों दिसा मन काहेको धावे । अन्दर खोजे साहब पावे ॥ ८ ॥ ग्यारह आवागमन न होई । जो सतनामहिं चीन्हे कोई ॥ द्वादश ऊपर बोले ओई जरा मरन दुख नासे सोई ॥ ९ ॥ ( द्वादश ऊपर बोले सोई । जरा मरनके भरम न होई ॥ ) तेरस तनकी तपन बुझाई । होय लौलीन साहब गुनगाई ॥ १० ॥ चौदस चञ्चल निश्चल कीन्हा । तब साहिब आपन करि लीन्हा ॥ पूनो प्रेम पियाला पीजै । सिरके सांटे साहिब लीजे ११ ॥ सोलह तिथि यहि विधि भाखा । सबहि कला विचार अभिलाखा ॥ सोलह कला सम्पूरन भयऊ । कहैं कबीर सत लोके गयऊ ॥ १२ ॥

साखी–सोरह सुत सो पुरुषके, सोरह कला विहार ।
सत्यलोक सो पावई, सोलह करे विचार ॥

अथ रमैनी अक्षर खण्डकी ॥

अच्छर खानी अच्छर बानी । अच्छरसे अच्छर उत्पानी ॥ अच्छर आदि बसे आकास । अच्छर चन्द सूर परकास ॥ १ ॥ अच्छर ब्रह्मा विष्णु महेस । अच्छर नारद गौरि गनेस ॥ अच्छर धरनि पवन औ पानी । अच्छर आदिहि अगम बखानी ॥ २ ॥ अच्छर नव औतार जो भयऊ । बिन अच्छर कोउ भेद न लहेऊ ॥ बिन अच्छर नाहिं निवेरा । विन सब धुंध कुहेरा ॥ ३ ॥ अच्छर निरंकार परमाना । अदली अच्छर अदल अमाना ॥

अच्छर काया अच्छर माया । अच्छर जग सतगुरु हो आया ॥ ४ ॥ अच्छर मंत्र जंत्र सब पूजा । विन अच्छर कोइ और न दूजा ॥ अच्छरमें सब जगत भुलाना । विन अच्छर नहिं उपजे ज्ञाना ॥५ अच्छर विन कारज नहिं रती । विन अच्छर पावे नहिं गती ॥ अच्छरमें सब जग उपजाया । अच्छर शून्य विशून्य समाया ॥ ६ ॥ अच्छर आवै अच्छर जाई । अच्छर काल सबनको खाई ॥ अच्छर सबका भाखे लेखा । अच्छर गुप्त परगट होय देखा ॥ ७ ॥ सतगुरु अच्छर आनि बतावा । जीवनको भय फंद छुडावा । निअच्छर की पावे सहिदानी । कहैं कवीर तब छूटै प्रानी ॥ ८ ॥

साखी—अच्छर पावे प्रेम सो, धोखा देइ बहाय ।
प्रेम भक्ति जाने विना; जिव परले तर जाय ॥ १ ॥

रमैनी । प्रेम अच्छरकी ।

अच्छर प्रेम लखै जो कोई । प्रेम विना सब दुनी विगोई ॥ जो कोइ करै प्रेम मो बासा । जरा मरणकी छूटै आसा ॥ १ ॥ जोगी गोरख बहु विधि गावें । बहुत प्रेम सो नाद बजावें ॥ नाद बजाय भेद नहिं पावें । छूटै प्रान बहुत पछतावें ॥ २ ॥ एक प्रेम संन्यास विचारे । तीरथ वरत करि काया गारै ॥ करै तपस्या होमैं काया । अच्छर प्रेम कहो कहँ पाया ॥ ३ ॥ एक प्रेमसे पढै पुराना । करम भरम कथि भाषै ज्ञाना ॥ पाप पुण्य

बहु विधि अरथावे। अच्छर प्रेम कहो कहँ पावे ॥ ४॥ एक प्रेम गहि कुलकी कानी। डालि तोड आमकी आनी ॥ करवा चौथ करै बहु पूजा। अच्छर प्रेम कहो कहँ सूजा ॥ ५ ॥ तुरुक कतल करि दीन बनावै। पीर औलिया बहुत मनावै ॥ आयत बैंत हदीस अति गावे। धारै प्रेम मक्के चलि जावे ॥ ६ ॥ पढै प्रेम औ छुरी चलावे। अच्छर प्रेम कहो कहँ पावे ॥ जीव दया दिलमें पहिचाना। सोई प्रेम निज प्रेम समाना ॥ ७॥

प्रेम प्रेम सबही कहै, प्रेम न चीन्है कोय ॥
जाहि प्रेम सहिब मिले, प्रेम कहावै सोय ॥ २ ॥

रमैनी रहनी गहनी।

रहनि गहनि पावे जो कोई। शब्द सार निअच्छर सोई॥ अच्छरमें निहअच्छर सारा। ताहि पाय कोइ हंस हमारा १ हंस होय परखे वह वानी। अच्छर भेद करै पहिचानी ॥ अच्छर भेद करै कडिहारी। निहअच्छरमहँ हंस उवारी ॥ २ ॥ अच्छर निहअच्छर भेद निनारा। जो परखे सो भवजलपारा ॥ कहे कबीर जो कहै विचारै। आप तरै औरनको तारै ॥ ३ ॥

शब्द सार निहअच्छरा, जब तब करियो याद ॥
अन्त फलेगी माहिली, ऊपरकी सब बाद ॥ ३ ॥

रमैनी यमजाल।

तीनलोक जम जाल पसारा। नेम धर्म षटकर्म

अचारा ॥ आचारे सब दुनी भुलानी । सार शब्द कोउ विरले जानी ॥ १ ॥ सत्तपुरुषको जाने कोई । तीन लोक जाते पुनि होई ॥ करम भरम तजि शब्द समावे । इस्थिर ज्ञान अमरपद पावे ॥ २ ॥ सत्यशब्द को करे विचारा । सो छूटे जमजाल अपारा ॥ कहे कबीर जिन तत्तविचारा । सोहं शब्द है अगम अपारा ॥ ३ ॥

शब्द हमारा सत्यहै, सुनि मत जाहु सरख ।
जो चाहे निजमुक्तिको, लीजो शब्दहिं परख ॥ ४ ॥

रमैनी-सांचाकडिहार ॥

नाम अमलमें रहे मतवाला । प्रेम अमीका पीवे प्याला ॥ ज्ञान दीप निज भीतर बारा । सो कहिये सांचा कडिहारा ॥ १ ॥ और अमलको रंग न करई । माया ममताको पर हरई ॥ सार शब्दमें ध्यान लगावे । सो कडिहार जम जाल बचावे ॥ २ ॥ दया छमा औ शील विचारा । धीरज धरम संतोष अचारा ॥ यह सब धरे ममता मारे । सो कडिहार जगत जल तारे ॥ ३ ॥ शब्द सरोतर हिरदय सांचा । छाडि परपंच सत्यसे राँचा ॥ सत्यनाम मो रहै न काँचा । सो कडिहार जगत सो बाँचा ॥ ४ ॥ कुल करनीको मेटै धोखा । समता ज्ञान सु अंतर पोखा ॥ ज्ञान रतनके पूरे नौका । सो कडिहार बैठिहै चौका ॥ ५ ॥ दया छिमा संतोष विचारा । शील वैराग ज्ञान अधारा ॥ काम क्रोध चिन्ता

नहिं परई । सो कडिहार आरति करई ॥६॥ आसा वासा मनको नासे । माया मोह न फटके पासे ॥ कर्म कला सो तिनका तोरे । सो कडिहार नारियल मोरे ॥ ७ ॥ सिख साखा सब प्रेम बढावैं । भहुत भांति ते सेवा लावें॥ कोटिक शिष्य करै सनमाना । रह कडिहार शब्द लप टाना ॥ ८ ॥ गुरुका शब्द सदा परकासे । भेद भरम का दुविधा नासे ॥ नहिं तो कालरूप कडिहारा । सब जीवनका करै अहारा ॥९॥ लोभ मोहकी धरै सगाई । शब्द छाडि जग करै ठगाई ॥ शब्द चाल हिरदे नहिं आवे । सो कडिहार कस लोक सिधावे ॥ १० ॥

आसन चाँपे फूलके, धरै जु जमको भाव ॥
कहैं कवीर तब जानि है, पडै बज्रको घाव ॥ ५ ॥

रमैनी—सत्यनाम ।

सत्यनाम सुमिरो मन माहीं । जहवाँ रजनी वासर नाहीं ॥ आदि अन्त नहिं धरनि अकासा । पावक पवन न नीर निवासा ॥१॥ चन्द सूर तहवाँ नहि कोई । प्रात सांझ तहवाँ नहिं दोई ॥ कर्म भर्म पुण्य नहिं पापा । तहवाँ जपियो अजपा जापा ॥ २ ॥ झलमलाट चहुँदिस उँजियारा । वरषे तहाँ अगरकी धारा ॥ तहँ सतगुरुको आसन होई । कोटि माहिं जन पहुँचे कोई॥३॥ दसो दिसा झिलमिल तहँ छाजा । बाजे तहाँ सु अनहद बाजा ॥ तहवाँ हंसा ध्यान लगावे । बहुरि न जोनी संकट

आवे ॥ ४ ॥ उहवाँको सुख वरनि न जाई । सतगुरु मिलै तो देइ लखाई ॥ ज्यों गुंगाको सुपना देखो । ऐसो जीवत जनम को लेखो ॥ ५ ॥

सा०—मन पवना दुइ थिर हुआ, भया प्रेम परकास।
जीवातम जहँ रमि रहा- पूरन ब्रह्म विलास ॥ ६ ॥

रमैनी–रहनी पहचान ।

सतगुरु सो सत नाम सुनावे । और गुरु कोइ काम न आवे॥ तीरथ सोई जो मोछै पापा । मित्र सोई जो हरे संतापा॥१॥ जोगी सो जो काया सोधे । बुद्ध सोई जो नाहि विरोधे ॥ पण्डित सोई जो आगम जानै । भक्त सोई जो भय नहिं आनै ॥ २ ॥ दातै जो औगुन परहरई । ज्ञानी सोइ जीवता मरई ॥ मुक्ता सोई सतनाम अराधे । श्रोता सोई जो सुरतिहिं साधै ॥ ३ ॥ सेवक सोई गहै विश्वासा । निसिदिन राखै संतन आसा ॥ सतगुरु का लोपे नहि बाचा । कहै कबीर सो सेवक सांचा ॥ ४ ॥

जीवन मरन जानै नहीं, अंधभया सबजाय ॥
द्वारे दाद न पावई, अनेक जनम पछताय ॥ ७ ॥

## अथ कबीर अष्टाङ्गयोग प्रारम्भः ।

अविगत योग रमैनी ॥ १ ॥

अविगत लीला अगम अपारा । धरनी धन्यो संत औतारा ॥ अविगत लीला अगम अलेखा । अबरन बरन रूप नहिं रेखा ॥ १ ॥ जा गति सुरनर मुनि नहिं

पाई । अविगतिकी गति बरनि नहिं जाई ॥ शेष सहस मुख निसिदिन गावैं । उस्तुति करत पार नहिं पावैं ॥२॥ वेद कोटि सहस गुण गावे । अविगतिकी गति बरनि नहि जावे ॥ कहँलों कहौं कहा नहिं जाई । अविगतिको गति अविगति भाई ॥ ३ ॥

सा०–अविगतिकी गति विगत है, मन बुधि चितते दूर ।
आपा मेटि सतगुरु मिलै, पावे दरस हजूर ॥ १ ॥

कर्मयोग रमैनी ॥ २ ॥

योगी योग बहुत जो करई । क्रियायोगते नहिं निस्तरई ॥ फिर फिर आवै फिर फिरि जाई । कर्महि कर्म बहुत उरझाई ॥ होय निहकर्म नाम जो ध्यावे । योनी संकट बहुरि न आवे ॥ कर्महिं कर्म बँधा बहु भारा । कर्महि कर्म अटका संसारा । देह कर्म चो दीन उठाई । मनका कर्म छुटै नहिं भाई ॥ जब लग मनका कर्म न खोवे । तब लग मन निरमल नहिं होवे ॥ मनकी क्रिया जबै मिटि जाई । तब प्रभु मिलै सहजमें आई ॥ मने निरञ्जन आपुहिं होई । याको जाने विरला कोई ॥

तन क्रियाको छाडिके, मनक्रिया रुचिराख ॥
कर्म क्रिया अभिमान तजि, सत्यनाम निज भाख॥२॥

सत्कर्मयोग रमैनी ॥ ३ ॥

तन कर करनी देहु बहाई । मन कर करनी सत्य मिलाई ॥ मनकी क्रिया सत्य जो होई । ताहि समान

क्रिया नहिं कोई॥१॥सांख्य योग करनी–है सारा। जेहिते उतरे भवजल पारा॥ सत क्रिया ते ज्ञानी भयऊ। सत क्रिया साहब मिलिगयऊ ॥२॥ सत क्रिया सत पुरुषहिं ध्यावे। सत क्रिया सतनाम मिलावे॥ सत क्रिया जग होय उदासा। सत क्रियाते मुक्ति निवासा॥ ३॥

समौ०–सत्य क्रिया निर्वाण है, है तन मन ते भिन्न॥
मन पवना दिढ करि गहै, सत्यनाम निज चिन्ह॥३॥

अष्टांगयोग अन्तर्गत.

सांख्य योग रमैनी ॥ ४ ॥

अब मैं सांख्य योग बतलाऊँ योग अष्टाङ्गके लछन दिखलाऊँ॥इक इकके चारि चारि लच्छन। जो जाने सो होय विचच्छन ॥ १ ॥ यों तो कहे लछन बतीसा। अष्टांगयोगमें एकहि दीसा अष्टाङ्गयोग सांख्य जो जाने। और लच्छन बत्तीस पिछाने ॥ २ ॥ प्रथम योग ज्ञान बखाना। दूसर विचार कहै परमाना॥ तीसर योग विवेकहिं जाने। चौथा योग शील परधाने ॥ ३ ॥ पँचवाँ योग संतोष बखाना। योग निरवैर छठवहिं माना॥ सतवाँ सहज योग है भाई। अठवाँ शून्य एक लौलाई४॥

समौ–तेई भवसागर तरै, या करनी निज सार॥
सत क्रिया सतसो गहै, सत्यनाम आधार ॥ ४ ॥

ज्ञानयोग १ रमैनी ॥ ५ ॥

प्रथम योग ज्ञान है भाई। तेहिते सुख परम पद-पाई॥ निरालंब अलंब न कोई। सतगुरु इच्छा होय

सो होई ॥१॥ करम भरम तजि साहब जानै । भली बुरी कछु चित्त न आनै ॥ निरवासिक बास नहिं कोई । जङ्गल वस्ती एकै होई ॥ २ ॥ होय निरभय रहै ततसारा । बाहर भीतर अलख अपारा ॥ द्वैत विचार न मनमें आवे । आतमरूप सदा दरसावे ॥ ३ ॥

समौ–एक नामको जानिके, दूजा देइ बहाय ।
तीरथ वरत जप तप नहीं, आतम ब्रह्म समाय॥५॥

विचारयोग २ रमैनी ॥ ६ ॥

दूजा योग विचार सम्हारे । निर मोही होय आप विचारे ॥ लै निर द्वन्द रहै जगमाहीं । जगके सुखसों लागे नाहीं ॥१॥ मातु पिता सुत नारि निभावे । काम क्रोध मद लोभ भुलावे ॥ होय निशंक शब्द सो लागे । अनहद सुनै आतमा जागे ॥ २ ॥ देह अदेह करै निरुवारा । देही छोड विदेह पैसारा ॥ देह छोड विदेह समाना । हंसा पावे पद निर्वाना ॥ ३ ॥

समौ–जोकुछ करे सुविचारके, पाप पुन्य ते न्यार ।
नाम कबीरा जानिके, जाय पुरुष दरबार ॥ ६ ॥

विवेक योग ३ रमैनी ॥ ७ ॥

तीजो योग विवेक कहावे । बिन विवेक कोइ पार न पावे ॥ जाके समाधान मन होई । भली बुरी कहि जावै कोई ॥१॥ समदर्शी सम ज्ञान विचारे । सब घट भीतर ब्रह्म निहारे ॥ प्रीति गहै सो नाम समाना । और सकल

जग मिथ्या जाना ॥२॥ जाके शान्ति होय घट मांहीं। कोइ कछु कहो क्रोध मन नाहीं॥ सोइ विवेकी सत पद जाने। सबही आतम एक पिछाने ॥ ३ ॥

समौ–जबलग नहीं विवेक मन, तब लग लगै न तीर।
भवसागर नामी तरे, अस कथि कहैं कबीर॥७॥

शील योग ४ रमैनी ॥ ८ ॥

चौथा योग शील कहि दीन्हा। बिना शील साहब नहिं चीन्हा ॥ निर्मल सोचहिं सोच विचारे। सुच रुच दया धरम उर धारे ॥१॥ मनको संयम करै जो जानी। पांचो पकडि एक घर आनी॥ सत्यशब्द भासे संसारा। सतही ते उतरें भवपारा ॥२॥ होय सरोतर सत्य बखाने। भावे भला बुरा कोइ मानै॥ बुरा कर्म ते लज्जा करई। बिना बिचार नहीं पग धरई ॥ ३ ॥ जो काहूको होय उपकारा। मन बच कर्म करै उपचारा ॥ शीलवान जग अस बुधि पाई। आपन दिसि वह चूके नाहीं ॥४॥ शील पाइ इन्द्री निज साधे। गुरुगम पन्थ नाम अवराधे॥ जियत मरै सोई शिलवन्ता। शब्द विचारि गहै मग कन्ता ॥५॥

समौ–शील छमा जब ऊपजे, अलख दृष्टि तब होय।
विना शील पहुँचे नहीं, कोटि कथै जो कोय॥८॥

संतोषयोग ५ रमैनी ॥ ९ ॥

पंचवाँ योग संतोष बखाना। विन संतोष बूडे अज्ञाना॥ मानो नहीं रंक औ राजा। होय अमान नहिं काहुसो

काजा ॥ १ ॥ नर्क स्वर्ग बंच्छे नहि कोई । होय अबंच्छक साहिब सोई ॥ मन स्थिर करि प्रेम उपजावे । अनहत शब्द सुनै चित लावे ॥ २ ॥ जो कछु कर्म योगते आवे । जानि प्रारब्ध शीस चढावे ॥ मनमें छोभ न लावे कबहीं । जो कछु आवे सह ले सबहीं ॥ ३ ॥ होनी होय टले नहिं काहू । करि असंतोष मिले का लाहू ॥ संतोषी हो ऐसी मति राखे । निराश बचन कबहुं नहिं भाखे ॥ ४ ॥ सोई योग संतोष कमावे । काल जाल ते जीव छुडावे ॥ विन संतोष काल मुख जाई । पाई संतोष काल बहाई ॥ ५ ॥

समौ–निरमल शब्द प्रकाशकरि, रह सुख सेज समाय ॥
सत्यनाम संतोष विन, सत्य लोक नहिं जाय॥९॥

निर्बैर योग ६. रमैनी ॥ १० ॥

छठवें योग है निरवैरा । जासे जगमें होय निवेरा ॥ सब घट भीतर एक करि जानै । होय सुहृद प्रेमहि परमानै ॥ १ ॥ सुखदाई सबहिनको भावे । जल सरूप होय अग्नि बुझावे ॥ शीतल होय सबहिनको भावे । समता होय तुरमता पावे ॥ २ ॥ निरबैरी निहकाम रहावे । साईं सेती नेह लगावे ॥ साईंके सबही जग माहीं । कापर दाया कापर नाहीं ॥ ३ ॥ अपनो रूप जगत विखराना । कोहे आपन कोहै आना । कासन बैर करो मोर भाई । अपनहि रूप रहा जग छाई॥४॥

अपनो दांत जीभको काटे । तो कहँ कोई जीभ कहँ छाँटे ॥ आपन अंगुरी आंख गडावे । तो कहँ अंगुरी काटि गिरावे ॥ ५ ॥ एकहि आतम सकल समाना । मायाके गुण आनहि आना ॥ अहै निजरूप सकलमें एकै । जो वस काशी सो बस मक्कै ॥ ६ ॥ माया वसहो सब जग भूला । मोर तोरके गर्वहिं फूला ॥ निरवैरी निहकाम सु होवे । सतगुरु ज्ञान वैर सब खोवे ॥ ७ ॥

समौ–कंचन कांच है एक सम, दुष्ट मित्र सब एक ।
दूजा भाव न जानई, एक नामकी टेक ॥१०॥

सहज योग ७. रमैनी ॥ ११ ॥

सतवाँ योग सहज है मीता । सहज भावसो सबही जीता ॥ एकं विचार प्रेम उपजावे । पाँचूँ इन्द्री सहज समावे ॥ १ ॥ निरलोभी होय लोभ भुलावे । भवसागरमें बहुरि न आवे ॥ निर संसिक होवे जो कोई । संशय काल गहै नहिं सोई ॥२॥ होय निरलेप कितहुँ नहिं लागे । सत्य शब्द गहि आतम जागै ॥ सहज ध्यान रहै लौलाई । सहजे सहजे पार लगाई ॥ ३ ॥ जाघट ज्ञान सहज समावे । सहजे माया आप भुलावे ॥ सहजे परिचय आतम होई । ब्रह्मरूपमें सहज समोई ॥ ४ ॥ सहज समाधि भले जग जाने । गुरु प्रतापते सहज पिछाने ॥ जप तप योग सहजमें आवे । काया कष्ट न कबहुँ करावे ॥ ५ ॥ आतम परि-चय सहजहिं पावे । खुले नैन सो दरस करावे ॥ विना

सहज दूसर कछु नाहीं । सहजेमें सब रहा समाई ॥ ६ ॥ सहज योग जो कोई धारै । आप तरै औ जगको तारै ॥ सहजहिं आतम ब्रह्म प्रकाशा । सहजे जीव सुज्ञान विलासा ॥७॥ विना सहज नहीं भव पारा । विना सहज बूडे भव धारा ॥ कहै कबीर सुनो नर लोई । सहजे सहज भया सब कोई ॥ ८ ॥

समौ—सबजग झूठा जानिके, गहे नाम सत सार ॥
सहजे सहजे प्रकट भया, सतगुरु शब्द सम्हार ११ ॥

शून्य योग ८ । रमैनी ॥ १२ ॥

आठम योग शून्य है नीके । बिना नाम जप लागु सुफीके ॥ सहजे नाम विदेह समावे । विना नाम कहाँ सुख पावे ॥१॥ शून्यहिते सब जग उपराजा।शून्यहिते भौ शब्द अवाजा॥ शून्य सहज एक नाम विराजे । अनहत बाजा बाजन बाजे ॥ २ ॥ सहज शून्य जो लावे ध्याना । अलख लखै आप बलवाना ॥ नाम सहज शून्यमें होई । अलखहिं लखे आप है सोई ॥४॥ सहज शून्य जो ध्यान लगावे । भौजल तरत वार नहिं लावे ॥ सुरातै शब्दमें सहज समावे । सहज समाधि परमपद पावे ॥ ५ ॥ जब लग नाम विदेह न आवे । तब लग सहज समाधि न पावे ॥ ध्यान विदेह औ ज्ञान विदेहा । सहज समाधिमें चहिये एहा ॥ ६ ॥ ध्यान विदेह लखे जब प्रानी । विदेह नाम मिले परमानी ॥ काया नाम सबे जग जाने । नाम विदेह विरले पहिचाने ॥ ७ ॥
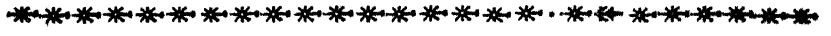
समौ-ज्ञान विचार विवेकसो, शील संतोष समाय ॥
नाम गहै निरभय रहै, सहज सतलोक समाय १२
शब्द सनेही होय रहै, जगते रहै उदास ॥
सुख सागरमें घर करै, सत्य नाम विश्वास ॥

अष्टांगयोगका सार ( १ ) ज्ञान परीक्षा साखी ।

ज्ञानी लक्षण चार हैं, सुनि त्यागो विस्माद ।
निरालंब निहभ्रमपुनि, निर्बासिक निहस्वाद ॥ १ ॥
भावार्थ-ज्ञानकी परीक्षा चार गुणोंसे होती है-
१ निरालम्ब, २ निःभ्रम, ३ निर्वासना, ४ निःस्वाद ॥

( २ ) विचार परीक्षा ।

विचार परीक्षा चार है, निर्मोही निरबन्द ।
निःशंक निरावरण सोई, छुटे कालको फन्द ॥ २ ॥
भावार्थ-विचार योगकी प्राप्ति इन चार लक्षणोंसे-
जानी जाती है. १ निर्मोही होवे, २ निर्बन्धहो, ३ निःशंकहो ४ निरावरण अर्थात् आत्मरूपमें सन्देह न हो ॥

( ३ ) विवेक परीक्षा ।

सर्वज्ञी सुचेत होय, सावधान मन मार ।
सार ग्राही सुजानिये, विवेक परीक्षा चार ॥ ३ ॥
भावार्थ-१ सर्वज्ञी अर्थात् किसी बातको सुनतेही
उसकी तहको पहुंज जाना । २ सुचेत

अर्थात् सदा हृदयको जागृत रखना, गाफिल न होना, प्रमादमें न भूलना, ३ सावधान मन इन्द्री आदि सबोंपर सदा दृष्टि रखना, जिसमें ये ठगने न पावें। ४ सारग्राही–कैसाभी प्रसंग उल्टासुलटा सम्मुख आकर उपस्थित हो उसमेंसे उत्तमसार लेलेना ॥

( ४ ) शील परीक्षा।

शुचि साधन संयम करन, श्रवण करन गुरु वानि।
विनय वचन सब सो कहै, रूप आपनो जानि ॥४॥

भावार्थ–जिसमें शील आता है–उसमें चार गुण आकर बास करते हैं १ पवित्रता–भीतर बाहर दोनों प्रकारसे पवित्र रहता है। २संयम–शारीरक मानसिक जितनेकार्य्य हैं सब नियम पूर्वक करता है। ३गुरुकी वाणी और उपदेशमें श्रद्धा ( विश्वास ) रखता है। ४ नम्रता–सबके साथ कोमलतासे वरतता है।

५ संतोष परीक्षा ॥ ४ ॥

संतोष परीक्षा सुनि लीजे। अयाची अमानी मन दीजे ॥
स्थिर वाञ्छा नहि करई। सो संतोषी संत उच्चरई ॥५॥

भावार्थ–जिसके हृदयमें संतोषका वास होता है वह -१ अयाँची--अर्थात् यथा प्राप्त

संतुष्ट रहकर उसीमें निर्वाह करलेता है किसीसे याँचना करनेकी इच्छा नहीं रखता । २ अमानी--मिथ्या अभिमान कर आप दुःखी नहीं होता दूसरोंकोभी दुःखी नहीं करना । ३ स्थिर-अर्थात् सदा धैर्यके साथ अपना सब कार्य करता है कभी घबराता नहीं । ४ अवांछित-यथा प्राप्तमें संतुष्ट रहनेवाला अधिककी वांछाही क्यों करेगा ।

६ निर्वैर परीक्षा ४.

सुहिरदयता शीतलता, समता जान सुजान ।
सुखदाई सब जीवको, निरवैरी पहिचान ॥ ६ ॥

भावार्थ- निर्वैरता जिसमें आती है वह-१ सुहृद् होजाता है किसीके साथ किसी अवस्थामें भी छल कपटका वर्ताव नहीं करता । २ शीतलता--अर्थात् सदा शान्त अक्रोध रहता है. ३समता-धारण करता है अर्थात् सब जीवोंके सुख दुःखोंको अपने आत्माके समानही समझकर उनसे समानता वरतता है । ४ सुखदाई-सबके लिये सुखदाई होताहै अर्थात् कोई ऐसा कार्य्य नहीं करता जिससे किसीको दुःख होवे ।
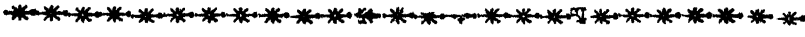
७ सहज पराक्षी ४.

निह प्रपंच निहतरंग रु, निर्द्वन्द निरलेप।
चारो लक्षण सहजके, मिटे सकल विक्षेप ॥ ७॥

भावार्थ-सहजयोग अर्थात् सहज वृत्तिको धारण करनेवालोंमें चार गुण स्वभावसेही वास करते हैं। १ निष्प्रपंचता-सहज वृत्ति-वाला पुरुष प्रपंचमें कभी नहीं फँसता-जहाँ कहीं प्रपंचकी वृद्धि देखता है आप वहाँसे खसक जाता है । २ निहतरङ्ग-नाना प्रकारके मनके तरङ्गोंसे अपने को बचा रखता है। ३ निर्द्वन्द-द्वन्द्वंसे अलग रहताहै । ४ निर्लेप-सदा सबमें रहते हुएभी निर्लेप-रहता है ।

"सबसंग रसिये सब संग बसिये सबका लीजे नाम।
हाँजी हाँजी सबकी कीजे. रहिये अपने ठाम ॥"

८ शून्य ।

लव धीरज अरु ध्यानजो, मिली समाधि है चार।
ये लक्षण हैं शून्यके, किये संत प्रचार ॥ ८॥

भावार्थ-शून्य अथवा समाधिवानके ४ लक्षण हैं। १ लव-एक ओर वृत्ति लगी रहे. २ धीर्य-जिसकाममें लगे दृढ होकर लगे. ३-ध्यान-जिधर वृति जाय उधरही

तन्मय हो जावे. ४ समाधि—ध्येय वस्तुमें ऐसा निमग्न हो जाना कि, जुदाई जान न पडे ॥

समौ—ये बत्तिस जब ऊगहीं, तैतीसो छिपजाय।
कहै कबीर सुनु गोरखा, आवा गमन नसाय ॥

इति अष्टाङ्ग योगकी रमैनी ॥

---

रमैनी—करीमकी हिकमत ॥

वाह करीम वलि हिकमत तेरी। खाक एक सूरत बहु-तेरी ॥ औंधे बासन नीर जमाया। जतन जतन करि नूर उपाया ॥ १ ॥ आप मनीका सकल पसारा। हिन्दू तुरुक कोई नहिं न्यारा। दम दम करि बोलै सब कोई। दमके भीतर हरदम होई ॥ २ ॥ बाहर दमको लखै जो कोई। ताको आवागमन न होई ॥ दम लखिया जिन लखिया नामा। दम छूटा पाये निज ठामा ॥ ३ ॥ पीर पैगम्बर शेख मुलाना। तुम्हरी सिफत सुनि भै दिवाना ॥ कहैं कबीर वह साहब न्यारा। यार वाः यार वाः यार हमारा ॥ ४ ॥

रमैनी—काया मसाजिद ॥

यार वा यार वा यार हमारा। सब जीवनका प्रान अधारा॥ काया मसजिद अजब संवारी। दोय खम्भा दस लगी किवारी ॥१॥ ता भीतर होय बंग निमाजा। हरदम हरदम हरदम साजा ॥ एक मसजिद दसो दरवाजा।

मन मुल्ला तहँ पढै निमाजा ॥ २ ॥ ज्ञान करद मौन दिल पकरी ॥ बिस्मिल कीन्हों पांचों बकरी ॥ पांच चोर करैं कुफराना । मारी शवदसूँ किया छिमाना ॥ ३ ॥ पांच पीर बसै इक थाना । शब्द अनाहद घुरै निशाना । कहैं कवीर अजब कछु देखा । नूर नाम सत साहब पेखा ॥४॥

रमैनी–मन ॥

मनकी मूठ लखै जो कोई । सो जन संत पारखी होई । नगन मगन बकला कंद खाई । देखि दिसा मनको पतियाई ॥ १ ॥ बहु विधि बकता चतुर परवीना । अलप अहारी काया खीना ॥ बहु बुधिवान प्रेमहित रोवै । रंचक चाह रसातल बोवै ॥ २ ॥ ताके फंद परे जो कोई । रंचक सुख दुख बहुते होई ॥ कहै कवीर सोई निज दासा । जाको पारब्रह्मकी आसा ॥ ३ ॥

साखी–जो तू चाहे मुझ्झको, मति कछु राखे आस ॥
मुझ्झ सरीखा होय रहो, सब कुछ तेरे पास ॥

रमैनी-मन राजा ॥

मन राजा संग पवन वजीरा । चित चंचल निश्चल नहि थीरा ॥ पांच मवासी त्रिगुण खाई । पांच पचीस जिनके संग भाई ॥ तैंतीसो मिलि द्वन्द्व मचावें । मन राजाको नाच नचावें ॥ ज्ञान सूरमा बीडा लीन्हा । तैंतीसों पर डेरा दीन्हा ॥ २ ॥ पांच मवासी मिलिया आई । मन राजा पर फिरी दुहाई ॥ जोग जुगतका लशकर साजा ।

गगन दमामा निरभय बाजा ॥ ३ ॥ झलकत चन्दाजोति अपारा। मिटिगा तिमिर भया उजियारा ॥ गुरु परताप सकल बस हूआ । नहीं कोइ जूझा नहि कोइ मूआ ॥ आप आपमें सबही जाना । जिन जाना तिन निजकै माना ॥ कहैं कबीर या पदको बूझे । आपा मिटे तबहीं घर सूझे ॥ ५ ॥

साखी-ऐसी बानी बोलिये, मनका आपा खोय ।
या आपाको डार दे, दया करै सब कोय ॥

रमैनी-कथता बकता ॥

कथता बकता श्रोता सोई। आप विचारे ज्ञानी होई॥
चंचल चपल बुधिका बेला। अगिन पवन पानीका मेला १
नव दरवाजा दसूं दुवारा । बूझहु ज्ञानी ज्ञान विचारा ॥
माटीका गौन पवनका सूआ। पांच तत्वले परगट हूआ॥२
काया माटी बोले पवना । बूझो पण्डित मूवा कौना ॥
मुई सूरति बाद अहंकारा । एक न मूवा बोलन हारा॥३॥
जिस कारन तप तीरथ जाहीं। रतन पदारथ है घर माहीं॥
पढ पढ पंडित वेद बखाना। भीतर होती वस्तु न जाना॥४॥
हूँ न मरूँ मेरि मरै बलाय । बोलन हारा रहै समाय ॥
कहैं कबीर गुरु ब्रह्म बताया। मरता जीता नजर न आया५

सा०-राम मरे तो हम मरे, नातर मरे बलाय ।
अविनासीको चीगुटा, मरे न मारा जाय ॥
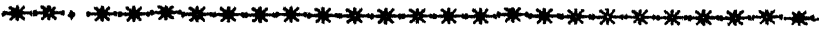
रमैनी । बोलना ।

बोलना कहा कहिये रे भाई । बोलत बोलत तत्त्व नसाई ॥१॥ बोलत बोलत बढै विकारा । चित्त बोलेका होय विचारा ॥२॥ संत मिलै कछु कहिं कहिये । मिलै असंत मौन होय रहिये ॥३॥ ज्ञानी सो बोलै हितकारी । मूरख सो बोलै झखमारी ॥ ४ ॥ कहैं कवीर आधा घट डोलै । भरा होय तो मुखां न बोलै ॥ ५ ॥

सा०—बोलीतो अनमोल है, जो कोइ जानै बोल ।
हिये तराजू तौलके, तब मुख बाहर खोल ॥

रमैनी सातगुरुकी ।

गुरु गुरु कहत सकल संसारा । गुरु सोई जिन तत्व विचारा ॥ १ ॥ प्रथम गुरु हैं माता पिता । रज वीर-जके जो हैं दाता ॥ २ ॥ दूसर गुरु है मनसा दाई । गर्भ-वासको बंध छुडाई ॥ ३ ॥ तीसर गुरु जिन धरिया नामा । लेले नाम पुकारे गामा ॥ ४ ॥ चौथे गुरु जिन दीच्छा दीन्हा । जग व्यवहार रीति सब कीना ॥ ५ ॥ पांचै गुरु जिन वैष्णव कीन्हा । रामनामको सुमिरन दीन्हा ॥ ६ ॥ छठै गुरू जिन भ्रम गढ तोडा । दुविधा मेटि एकसों जोडा ॥ ७ ॥ सातम गुरू सत शब्द लखाया । जहाँका ततले तहाँ समाया ॥

साखी—सात गुरू संसारमें, सेवक सब संसार ।
सतगुरु सोई जानिये, भव जल तारे पार ॥

रमैनी निर्वान देश ॥

हंस वा दिस करहु पयाना । जा देस बसै पुरुष पुराना ॥ हल न चलै जहँ बहै न कुदारा । अमृत भोजन करै अहारा ॥ ॥ १ ॥ चलै न चरखा बजै न ताती । अम्मर नीर पहिरे बहु भांती ॥ बरषै न मेघ चुवै नहिं पानी । शीतल अमी सुरति भरि आनी ॥ २ ॥ चंदन सूर दिवस नहिं राती । कुल नहिं भेद वरन नहिं जाती ॥ रोग न दोष जहँ सोक न सँतापा । कहै कबीर जहँ समरथ आपा ॥ ३ ॥

साखी-सुरति समानी निरतमें, निरत रही निरधार ।
सुरति निरति परचा भया, तब पाया दीदार ॥

रमैनी गुरुकी ॥

गुरु समय दाता कोइ नहिं भाई । मुक्तिक मारग दियो बताई ॥ गुरु विनु हिरदय ज्ञान न आवे । ज्यों कस्तूरी मिरग भुलावे ॥ गुरु विनु मिटै न अपनो आपा । भरम जेवरी बाँध्यों साँपा ॥ गुरु विनु केहरि कूपहिं पडिया । गुरु विनु गज छायहिं लडिया ॥ गुरु विनु स्वान देखि बहु भेखा । मन्दिर एक कांचको देखा ॥ चहुँ दिसि दीखै अपनी छाया । भूँकत भूँकत प्राण गँवाया ॥ गुरु विन सुवा नलनी सो बंधा । गुरु विन कपि पडो सो फंदा ॥ कहैं कबीर भरम्यो संसारा । गुरुविनु सतगुरु किम उतरै पारा ॥

साखी-भरम जेवरी गज बंध्यो, फिर जन्मे मरजाय ॥
कहै कबीर सतगुरु मिलै, तब सतलोक सिधाय ॥

रमैनी–विरह वार्ता ॥

तैं कहँ जानै बिरहकी बाती । प्रेम न उपजै तेरी छाती ॥ जैसी प्रीति मच्छ जो कीन्हा । जलते विछुडे जीवहिं दीन्हा ॥ ऐसी प्रीति मच्छींकी जानी । मूबा पीछे माँग्यो पानी ॥ धन सरवर जहँ काली माटी । प्रीतम बिछुडे छाती फाटी ॥ कब तोर हाड रु माँस सुखाया । कब तोर नयनन लोहू आया ॥ कब तैंने प्रेम पियाला पीया । कब तैं पिय मारग सिर दीया ॥ कहैं कवीर योंही तन खोया । पाँव पसार पेट भर सोया ॥

सा०–जबलग विरह उपजे नहीं, तबलग नहिं पहिचान ।
प्रेम परगट्यो जब अंगमें, मन तब किया कुरबान ॥

रमैनी–गुरुटेककी ॥

जाको टेक एक गुरु दाता । ताको और कछू न सुहाता ॥ पय जो बिगडा माखन खोई । बिगडे छांछ कहै नहिं कोई ॥ पतिव्रताको लांछन होई । गनिका बिगडे कहत न कोई ॥ सूरा भागा आप विगोई । कायर भागा कहै न कोई ॥ नटनी नाचै आपा खोई । देखन हार पडे नहिं कोई ॥ भूला मनको जो समुझावे । आदि अंत सोइ संत कहावे ॥ कहैं कवीर हम एता कहिया । सांच माने सो नरकहिं गइया ॥

सा०–डालकी चूकी बांदरी, शब्दका चूका हंस ।
कहैं कवीर धर्मदास सो, दोऊ निरफल वंस ॥
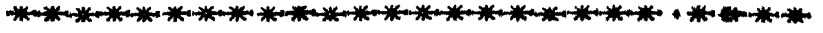
रमैनी--गुरु महिमा ॥

सतगुरु बोलै अमृत वानी । गुरु विनु मुक्ति नहीं रे प्रानी ॥ गुरु हैं आदि अंतके दाता । गुरु है मुक्ति पदारथ भ्राता ॥ गुरु गंगा काशी अस्थाना । चारि वेद गुरु गमते जाना ॥ गुरुहै सुरसति निर्मलधारा । विनु गुरु घटना हो उजियारा ॥ अडसठ तीरथ भ्रमि भ्रमि आवे । गुरुकी दया घर बैठेहिं पावे ॥ गुरू कहै सोई पुन करिये । मातु पिता दोउ कुल तरिये ॥ गुरु पारस परसे नर लोई । लोहते कंचन होय सोई ॥ शुक देव गुरू जनक बिदेही । वोभी गुरुके परम सनेही ॥ नारद गुरु प्रल्हाद पठाये । भक्ति हेतु जिन दर्शन पाये ॥ कागभुसुंड शम्भु गुरु कीन्हा । अगम निगम सबही कहि दीन्हा ॥ ब्रह्मागुरु अग्निको कीन्हा । होम यज्ञ जिन आज्ञा दीन्हा ॥ वशिष्ठ गुरू किया रघुनाथा । पाइ दरस तब भये सनाथा ॥ कृष्ण गये दुर्वासा शरना । पाइ भक्ति तब तारन तरना ॥ नारद दिच्छा धिमरसो पायो । चौरासी सो तुरत छुडायो ॥ गुरू कहै सोई है साँचा । विनु परिचय सेवक है काँचा ॥ कहै कबीर गुरु आपु अकेला । दश औतार गुरुका चेला ॥

साखी–रामकृष्णते को बडा, उनहूतो गुरु कीन ।
तीन लोकके वै धनी, गुरु आगे आधीन ॥
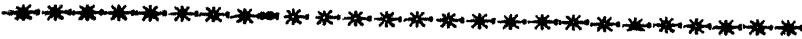
रमैनी—जुलाहा की ।

जुलहा कहि कहि जग भरमाया । मो जुलहेका मरम पाया ॥ समझ बिना जिव भरम भुलाना । बिनही सूतन पसारे ताना ॥ धरनि अकास बिच खाड खुदाई । चन्द सूर दोय नली भराई ॥ आदि नामका पूरन पूरा । चेतहु अंधा पथ है दूरा ॥ सूत कुसूत बुनै नर कोरी । वाको सुरति निरति है जोरी ॥ हम षट दर्शन हम षट भेखा । हमही तत्व अनूप अलेखा ॥ हम हैं सकल सकल हम माहीं । हमते और दूसरा नाहीं ॥ सबहीं कर्म हमारा कहिया । हम करमनते न्यारा रहिया ॥ निरगुन सरगुन खेल हमारा । हमरा चौदह लोक पसारा ॥ बन्दीछोर है बिरद हमारा । हमहीं बन्दी छुडावन हारा ॥ जुग जुग बन्द छुडावन आये । ताते बंदीछोर कहाये ॥ कहै कबीर हम अगम अपारी । स्वसम नली सो एक हमारी ॥

रमैनी—स्वरूप महिमा ॥

जीवत जीव जागनी ठानै । माया ब्रह्म दोऊ पहिचाने ॥
तीन सरूप एकहि देखा । ताको निहचलविज्ञान विसेखा ॥
माया ब्रह्म दोऊते न्यारा । आगे पारब्रह्म उजियारा ॥
विज्ञानीको कोइ नहिं पावे । वाहि स्वरूप नजर नहिं आवे ॥
तृनकी ओट पहाड लुकाना । ऐसे ताहि दूर मति जाना ॥
है हममें हमही सा देखा । निज सरूपको यही विशेखा ॥
आवे कहीं कहूँ नहिं जाई । समुन्द्र लहरि समुन्द्र समाई ॥
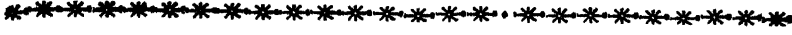
रमैनी–निर्वानपद ।

ऐसा ब्रह्म विचारो भाई । शब्द उठै धुनि कहाँ समाई ॥
काष्ठ मथि २ अगिन उपाई । उलटि अग्नि काष्ठको खाई ॥
दोनों नास भयो इक ठाऊँ । उडगइ भसम धरेका नाऊ ॥
भस्म भई उड कहवाँ गई । सो गति याकी ऐसी भई ॥
मुए जीव जइहो जाहाँ । जीवतही लेराखो ताहाँ ॥
जैसो केल कदली खंद । ऐसा पारब्रह्म गोविन्द ॥
खोजत खोजत पायो ठौर । मैं जानो कछु आगे और ॥
नहि कछु नहिं कछु नहिं कछु सोई । पंछी पीछे खोज न होई ॥
दास कबीर तहां लौलीन । आगे पन्थ न पीछे चीन ॥
सा०–सबही घर है गावमें, गाँव कौन घर माहिं ।
ऐसे सब जग ब्रह्ममें, न्यारो कितहूँ नाहिं ॥

सत्यनाम ।

रमैनी–स्वरूप पहिचान ॥

आपने रूप राम हम पाये । ताते जीवन मुक्ति घर आये ॥ तब हम भक्ति कीन हरि केरी । आसा राखी मनसा घेरी ॥ आसा मनसा भई निरासा । छुटगये बन्धन भये खुलासा ॥ तब हम योगयुक्ति चित धरते । अष्ट-कला मन पवना भरते ॥ अब हम पायो अपना भेव । आपुहि कर्ता आपुहिं देव ॥ तब हम जान्यो यह अब जानी । अन जानेसे करी पहिचानी ॥ गयो भरम मन बढ्यो हुलास । सहजहिं राम कबीरा दास ॥
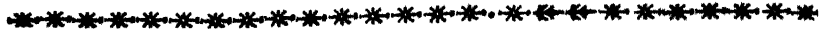
सा०-अर्थ धर्म अरु काम तजि, देह काल सिर धूर।
संशय नाहीं मुक्तिमें, ब्रह्म रहा भरपूर ॥

रमैनी एकतार।

भजि यकतार भ्रममति भूलो। है यकतार सबनको दूलो॥ बिन यकतार कस पतिवरता॥ एक पिया बिन सबै अविरथा॥ १॥ राम राम कहि भक्ति दिढावे। बिन यकतार राम कहँ पावे॥ भागवत सौ पुरान उचारे। निगम चार सुनि श्रुति विचारे ॥ २ ॥ वेद पढै पढि अरथ बतावे। विन यकतार थाह नहिं पावे॥ बिनअंकूर बीज नहिं ऊगे। विन यकतार हंस कहँ पूगे॥ ३॥ बिन यकतार भक्ति क्या कीजे। गुरु प्रताप अमीरस पीजे॥ ररंकार जहँ अनहद गाजे। ता ऊपर यकतार विराजे॥४॥ इंगला पिंगला सुषमन साधै। ले उदान पौन तहँ बांधे॥ अरधै उरधै सुरति लगावे। बिन यकतार पीव नहिं पावै॥ ५॥ वेद पुरान अरु शास्तर सोधै। अर्थ करि करि मन परबोधै॥ जहँलग वेद तहांलग ओंकारा। केवल ब्रह्म वेद सो न्यारा॥ ६॥ षट दर्शन जहँ कोइ न देखा। वह यकतार सुरति सो पेखा॥ जाको गुरु यकतार लखाया। पहुंचा धाम बहुरि नहिं आया॥७॥ जैसे सरिता सिन्धु समाई। ऐसे हंसे सुरति मिलाई॥ है यकतार सजीवन बूटी। विन यकतार वात सब झूठी॥ ८॥ बात कहूँ तो कोइ न मानै। जिन देखा

सोई पहिचानै ॥ पूरब जन्म भक्ति परगटाई । सो यक-तारहिं लखै बनाई ॥९॥ छर अच्छर दोनों ते न्यारा । है यकतार सकल आधारा ॥ है सबरस पर जिह्वा नहिं आवे । बैठि निरंतर नाद बजावे ॥ १० ॥ जप तप और अनेक दृढावे । बिन यकतार मुक्ति नहिं पावे ॥ जप तप व्रत खीन होय जाई । बिन यकतार न हंसा पाई ॥ ११ ॥

समौ-सतगुरु सो सांचा रहै, सुरति रहै यकतार ।
कहैं कबीर धर्मदास सो, पहुंचे लोक मंझार ॥

रमैनी-ज्ञान विरह ॥

लागी चोट शब्दकी तनमें । गिरह नहिं चैन चैन नहिं बनमें ॥ सूरा खेत जबै मंडाना । ना जानू को रहै निदाना ॥१॥ ढूँढत फिरूं पीव नहिं पाऊँ । औषधि मूल कहाँ घसि लाऊँ ॥ तुमसे वैद न हमसे रोगी । बिन दीदार क्यों जिये वियोगी ॥ २ ॥ एकहि रंग रंगी सब नारी । ना जानूं को पियकी प्यारी ॥ कहैं कबीर कोइ गुरुमुख पावै । बिन दरस न दीदार दिखावे ॥३ ॥

समौ-साधु हमारे शिरधनी, हम साधुनकी खेह ।
रोम रोममें रमि रहा, ज्यों बादलमें मेह ॥

रमैनी घट दर्शन ।

बंदा ! दरसे सब घट माहीं । अंधरे अंखिया सूझत नाहीं ॥ या घट चन्दा या घट सूरा । या घट बाजै अन-

हद तूरा ॥ १ ॥ या घट मथुरा या घट काशी । या घट पूरि रहा अविनाशी ॥ या घट भीतर दस दरवाजा । पांच प्रधान छठो मन राजा ॥ २ ॥ या घट भीतर सोलह खाई । चक्र फिरै गढ मुसौ न जाई ॥ या घट भीतर धोबि पुरानी । कपडा धोवै विनु सिल पानी॥३॥ धोयलेरे धोबिया मधुरिसि धारा । उत्तम निर्मल घाट हमारा ॥ कहै कबीर कोइ धोवे विचारो । जो धोवैसो उतरै पारी ॥ ४ ॥

समौ-घटहीमें सबहीं बसैं, जहं लगि ज्ञान विलास ।
सब ऊपर साहब धनी, घटही में निज बास ॥

रमैनी-योग भोगकी ॥

दुनिया दिवानी हमहुं दिवाना । हमरे तोहै अनहत ज्ञाना ॥ दुनिया पट पटंबर भोगी । हमतो ज्ञान पदारथ योगी ॥ १ ॥ दुनिया चाहे हस्ती घोडा । हम पाय पियादे गढ तोडा ॥ दुनिया चाहे विषरा प्याला । हमतो नाम सदा मतवाला ॥२॥ दुनिया अपने मारग जाई । हमतो सतकी राह चलाई ॥ कहैं कबीर हम पाई छाहीं । जीवतके संग मुवाके माहीं ॥ ३ ॥

साखी-हम वासी वहि देसके, पार ब्रह्मका खेल ।
दीपक पाया गैबका, बिनबाती बिनतेल ॥

आदि रमैनी ।

आदि रमैनी कहूँ विचारी । सुनियो संतो कथा निनारी॥ युग छत्तीस छयानवे लाखा । अरब कोटि सत सुकृत

भाखा ॥ १ ॥ जब नहिं होते शून्य बिसून्ना । जब नहिं होते पाप औ पुन्ना ॥ न था वेद अरु ना थी बानी । ना था ब्रह्मा नहिं थी ब्रह्मानी ॥२॥ ना था पवन नहीं था पानी । ना थी माया अकथ कहानी ॥ ना थी धरती नहीं अकासा । जब नहिं होता तत्त्व विलासा ॥ ३ ॥ जब नहिं होता तुरुक औ हिन्दू । माताका रक्त पिताका बिन्दू ॥ जब नहिं होता गाय कसाई । कहो विसमिल्लाह किन फरमाई ॥ ४ ॥ जब नहिं होता भादू माहा । कच्छ मच्छ नहीं बाराहा ॥ जब नहिं होते रघुपति रावन । जब नहिं होते कृष्ण बलि बावन ॥ ५ ॥ जब नहिं होते शम्भू गौरा । जब नहिं होते दश औतारा ॥ जब नहिं हते कूर्म औ शेषा । जब नहिं शारद गौरि गणेशा ॥ ६ ॥ जब नहिं हते निरंजन राया । जिन जीवन कहँ बांधि झुलाया ॥ तेतीस कोट देवता नाहीं । और अनेक बताऊँ काहीं ॥ ७ ॥

समौ--कहँ कविर कछु ना होता, होता आप अलेख ।
तबका आप कवीर है, धरि धरि खेलै भेख ॥

रमैनी—एक ओंकार ॥

ऐसा ज्ञान विचारै कोई । सो नर जीवन मुकता होई ॥ पांचतत्त्व गुण तीनों सोई । अविगत सो सब परगट होई ॥ १ ॥ बोलनहारा कहँ सो हूआ । कैसे उपजा कैसे मूआ ॥ पवनकी गांठ सहज बनि आई । ताका बना बगूला

भाई ॥ २ ॥ खुलिगइ गांठ खोज नहिं पाया । पवनक पुतला पवन समाया ॥ जैसे बादल होत अकारा । तैसे दरसे यह संसारा ॥३॥ मिट गया बादल रहा अकासा । ऐसे आतमको न विनासा॥ इस बहु रंगीका पार न पाया । कहैं कवीर गुरु भेद लखाया ॥ ४ ॥ पाया भेद भया उजियारा। साहब दरस्यो पार ओंकारा॥ यही ज्ञान रतन है भाई । जो पावे सुख विलसे आई ॥ ५ ॥

साखी-ज्ञान रतनकी कोठरी, चुपकर दीजे ताल ।
पारिख आगे खोलिये, शीतल बचन रिसाल ॥

रमैनी गुरुमाहिमा ॥

गुरु मिलेतो सत्य लखावे । बिन गुरु अन्त न कोऊ पावे ॥ जिन गुरुकी कीन्ही परतीती । एक नाम कर भव जल जीती ॥१॥ गुरू प्रेमते जीव मराला । गुरु स्नेह विन काग कराला ॥ गुरु दया गुरु शब्द हमारा । गुरु परगट गुरु गुप्त अधारा ॥२॥ गुरु पृथ्वी गुरु पवन अकाशा । गुरु जल थल महँ कीन निवासा ॥ चन्द सूर गुरु सब संसारा । गुरु विन होय न कोइ व्यवहारा॥३॥ गुरु ब्रह्मा औ विष्णु महेशा । गुरु भगवान कूर्म औ शेशा ॥ चर अचर जहां लगि सब देखा । गुरु विन कछु और नहिं पेखा ॥ ४ ॥ उत्तम मध्यम और कनिष्ठा। ये सब कीन्हे गुरू बरिष्ठा ॥ ये सब जीव गुरू मय जानो । गुरुसे भिन्न और नहिं मानो ॥ ५ ॥ गुप्त प्रगट सबही जग जाया । सबहीमें है

सतगुरुकी छाया ॥ कहैं कवीर सो हंस पियारा। यही भांतिते गुरु दरश निहारा ॥ ६ ॥

सा०-सो गुरु निसिदिन वंदिये, जासो पइये नाम।
नाम विना घट अंध है, ज्यों दीपक विन धाम ॥

रमैनी ॥ गृही रहनी ॥

गृही भाव भक्ति जो साधे। संत साधु सेवा अवराधे ॥ घर तजि बाहर कबहुँ न जाई। गुरु गम भक्ति करै लौलाई ॥ १ ॥ भक्ति करै निर्भय सहदानी। गुरु अरु साधु एक करि जानी ॥ जहाँ साधु तहँ सतगुरु वासा। जहँ सतगुरु तहँ मुक्ति निवासा ॥ २ ॥ जहाँ मुक्ति तहँ लोक उजागर। जहाँ लोक तहँ रह सुख सागर ॥ जहाँ सुख सागर तहाँ कवीर। भक्ति मध्य बाहर औ तीर ॥ ३ ॥ जहाँ मध्य तहँ पुरुष अमान। जहँ बाहर तँह हंस सुजान ॥ जहाँ तीर तहँ निर्मल धीर। जहाँ मरन नहिं व्यापै पीर ॥ ४ ॥ जहाँ पीर तहँ संशय धीर। संशय मध्य असंशय नीर ॥ जहाँ नीर तहँ सुख संतोखा। जरा मरण नहिं व्यापै धोखा ॥ ५ ॥ जहाँ धोख तहँ आवै धीर। जहाँ धीर तहँ गहिर गँभीर ॥ जहाँ गंभीर तहां स्थिर होइ। जहाँ थीर तहँ लहरि न कोइ ॥ ६ ॥ लहरि नहीं तहँ आपै आप। आपा मेटि मिटै संताप ॥ आपा मेटे ममिता खोइ। भाव भक्ति करि मानुष होइ ॥ ७ ॥ मानुष होय गहै निरवाना। पावै सत्य सही अस्थाना ॥

मानुष पद छोडे व्यवहारा। ताते फिरि आवे संसारा ॥ ८ ॥ संसार आइके भक्ति कमाई। भक्ति कमाय भक्त कहाई ॥ भक्त कहाइके रहै उदासा। सत्य गुरु मिलै सत्यविश्वासा ॥ ९ ॥ सतगुरु मिलै तो संशय भागे। सो फिरि बहुरि अंक नहिं लागे ॥ सतगुरु सुख संतोषके नायक। परमारथ सो सदा सहायक ॥ १० ॥ सतगुरु पाय दुसर घर नाहीं। आवागमन रहित घर जाहीं ॥ कहैं कवीर सत्यकरि मानै। साधु गुरू नहिं अन्तर जानै ॥ ११ ॥

सा०–साधु बडे परमार्थी, घन ज्यों बरषे आय।
　　तपन बुझावें औरकी, अपनो पारस लाय ॥

रमैनी बैरागी ( साधु ) रहनी ॥

बैरागी उनमुन घर करई। हर्ष शोक कछु चित्त न धरई ॥ रूखा सूखा करै अहारा। निशि दिन आतम तत्त्व सम्हारा ॥ १ ॥ विकसित बदन भजनके आगर। शीतल सदा प्रेम सुखसागर ॥ रहिता रहै बहै नहिं कबहीं। सो बैरागी पावे हमहीं ॥ २ ॥हमें पाय हमहीं अस होई। आवागमन मिटावे सोई ॥ आवा गमन मिटावे काई। रहैं अधीन तत्त्व समाई ॥ ३ ॥ काया धारि काया कहँ बोधे। आवागमन रहित तत सोधे ॥ जीवत मरै मरै पुनि जीवै। उनमुनि बसे महा रस पीवै ॥ ४ ॥ महाशून्यमो रहै समाई। मरै न जिवे

आवे न जाई ॥ ऐसी विधि वैरागी सोई । हम मिलि रहै हमहिं अस होई ॥ ५ ॥ भीतर रहनी कहा बनायी । बाहर रहनी देहुँ बतायी ॥ बैरागी आसन दृढ होई । रहै अजाँच जाँचे नहीं कोई ॥ ६ ॥ वैरागी अस चाल चलावे । तजै अखज तव हंस कहावे ॥ मद्य मांसके निकट न जाई । करै अहार सो काल कसाई ॥ ७ ॥ प्रेम भक्ति आने उर माहीं । द्रोह घात दिसि चितवै नाहीं ॥ जीव दया राखे हिय जानी । मन वच कर्म घात नहिं आनी ॥८॥ हंस दशा धारि पंथ चलावे । श्रवनि कण्ठी तिलक लगावे ॥ क्रोध कपट सब देह बहाई । क्षमा गंगमें पैठि नहाई ॥ ९ ॥ विन जाँचे जो कछु आवे । रूखा सूखा ना बिलगावे ॥ गृही भक्ति जो सेवा लावे । ताको देखि न मोह बढावे ॥ १० ॥ वर्तमान वरते सो साधा । अधिक चहै तो होय व्याधा ॥ छाडि उपाधि रहै लवलीना । कहैं कवीर सो हंस परवीना ॥ ११ ॥

सा०–संत सराहिये ताहिको, जाको सतगुरु टेक ।
टेक निबाहे देह भरि, रहै शब्द मिलि एक ॥

रमैनी ॥ गुरु शिष्य अधिकारी ॥

साहब सेवक एकै होई । सदा बसंत खेलै सब कोई ॥ गुरु शिष्य एक जब होई । चिन्ह न परै एककी दोई ॥ १ ॥ साहब सेवक वरण दुहेला । एकै वरण गुरु औ

चेला ॥ जैसे फूल बास कहँ तोरी । पाछे तिल संगतेहि जोरी ॥ २ ॥ पाछे फूल सुबासहिं देई । तिल तजि तेल बास गहि लेई ॥ ऐसे गुरू शब्द जो देई । चेला गहै निज हेतु बिलोई ॥३॥ बिना प्रेम जिव होय अनेरा । पाछे परै कालके घेरा ॥ गुरु सुवास है फूल सनेही । तिल अनुमान शिष्यकी देही ॥ ४ ॥ प्रेम भक्ति जो गुरू बतावे । करि विश्वास शिष्य तेहि धावे । गुरु शिष्य भेद नहिं ताही । जोइ गुरु सोइ शिष्य निवाही ॥ ५ ॥ गुरु पूरा शिष सूरा होई । तबहिं काल रहै मुख गोई ॥ शिष, विना गुरु छूटे नाहीं । फिरि फिरि परिहैं भोचक मांही ॥ ६ ॥ सतगुरु सो सतभाव बतावे । शिष, सोई जो प्रेम लगावे ॥ तीनोंलोक एक होय जाई । गुरु शिष अलग होय नहिं भाई ॥ ७ ॥

सा०-गुरु समाना शिष्यमें, शिष कर लीया नेह ।
विल गाये विलगे नहीं, एक प्रान दुइ देह ॥

कर्म खण्डकी रमैनी १ ।

कर्म कथा अब कहूँ बखानी । जौन फाँस अटके नर प्रानी ॥ चारों खानि कर्म अधिकाई । चहूँ खानि मिलि कर्म दृढाई ॥ कर्महि धरती पवन अकाशा । कर्महि चन्द्र शूर प्रकाशा ॥ कर्महि ब्रह्मा विष्णु महेशा । कर्महिते भौ गौरि गणेशा ॥ सात बार पन्द्रह तिथि साजा । नौग्रह ऊपर कर्म विराजा ॥ कर्महि राम कृष्ण अवतारा । कर्महि

रावण कंस संहारा ॥ कर्महि ले वसुदेव घर आवा । कर्महि यसुदा गोद खिलावा ॥ कर्महिते वन गऊ चराई । कर्महि गोपी केलि कराई ॥ कौशिल्या तप कर्म जो करिया । कारण कर्म राम औतारिया ॥ कर्महि दशरथ कीन्ह उदासा । कर्महि राम दीन्ह वनवासा ॥ कर्म जाय जब धनुष चढावा । कर्महि जनकसुता सिरनावा॥कर्महि हर्यो सीता कई आई । दुख सुख कर्म ताहि भुगताई ॥ कर्म रेखते कोई न मुकता । लछमन राम करम फल भुगता ॥ कर्मसागर बांधेउ तहिया । कर्महि जल जीवन दुख सहिया ॥रुद्र राम कर्म कीन्ह लडाई । भला मिलाप हना भेंट चढाई॥कर्मरेख नहिं मिटे मिटाई । जीव पपील लङ्का होय आई ॥ कर्म रेख लंकापति गयो । लंकापति विभीषण भयो ॥ कर्म रेख सबहीं पर छाजा । कहा राम कह रावण राजा ॥ कर्मरेख सबहिन पर होई । देखो शब्द विलोय बिलोई ॥ कर्मरेख सागर बँध हीना । बिरला कोई चीन्हे चीन्हा ॥

कर्म रेख सागर बँध्यो, सौ योजन मर्याद ।
विन अक्षर कोइ ना छूटे, अक्षर अगम अगाध ॥ १॥

रमैनी ॥ २ ॥

सागर है भवसागर धारा । नहिं कुछ सूझे वार न पारा॥ तहवाँ बावन अक्षर लेखा । कर्म रेख सबहिन पर देखा॥ कर्म रेख बंधा सब कोई । खानी बानी देखि बिलोई ॥

वेद कितेब कर्महीं गाया । कर्महिको निःकर्म बताया ॥ सद्गुरु मिले तो भेद बतावे।कर्म अकर्म मध्य दिखलावे ॥ कर्म अकर्म मध्य है सोई । सो निःकर्म अकर्म न होई ॥ अक्षर सागर निर्भय वानी । अक्षर कर्म सबन पर जानी॥ गोरख भरथरि गोपीचन्दा । कर्म फांस सबही पुनी फन्दा ॥ सौ औ सात चौदह इक्कीसा । ब्रह्माके चौरासी भेसा ॥ कर्म फांस तहवाँ लग राखा । जहँ लग वेद व्यास कछु भाषा ॥ दश औ द्वादश कर्म बखाना । जिन जाना तिनहीं पहिचाना ॥ कर्म अकर्म भूल जो करई । गहे मूल सो कर्म न परई ॥ अक्षर सागर मूल भँडारा । अक्षर मूल भेद उजियारा ॥ अक्षर मूल भेद जो जाने । कर्मी होय निःकर्म बखाने ॥

सा०—कर्महिं डोर चारो युग, सुनो सन्त सब दास।
तत्त्वभेद निहतत्त्व लहि, जगते रहो उदास ॥ २ ॥

रमैनी ॥ ३ ॥

सतयुग तप कीन्हे रघुराजा । कारन कर्म नन्द घर गाजा ॥ एक नारि रघुवर दुख पावा । सोलह सहस गोपी निरमावा ॥ कारन कर्म केलि भव कीन्हा । कुञ्ज कुञ्ज गोपिन सुख दीन्हा ॥ जहँ तहँ गोरस जाय चुरावा । जहँ जहँ कर्म तहाँ ले खावा ॥ कर्म कंस ठीका आयो जबहीं । मारन कृष्ण विचाऱ्यो तबहीं ॥ कर्म पूतना भेष बनायो । कर्म पयोधर कृष्ण लगायो ॥ कर्महि

कारण तहाँ सिधारा । कारण कर्म पिवे विषधारा ॥ मारि ताहि कीन्ही गति चारा । कर्म फांस बोरचो संसारा ॥ कर्म इन्द्र बरस्यो दिन साता । कर्म कृष्ण गिरि लीन्हो हाथा ॥ कर्महि मारि विध्वंस जो कीन्हा । कर्म फाँस सबही आधीना ॥ कुब्जा कछू कर्म जो कीन्हा । कारन कर्म कृष्ण गति दीन्हा ॥ कर्म पताल कालेश्वर नाथा । साँवर अङ्ग भयो तेहि साथा ॥ यज्ञ अश्वमेध करत बलि-राजा । कर्मते जाय पताल विराजा ॥ कर्महि वामन रूप बनाया । बलिराजापै दान दिवाया ॥ कर्म अहूठ नापि पग लीन्हा । तीने पग तीनों पुर कीन्हा ॥ आधा पाँव कर्म अधिकारी । बाँधि नृपति पतालहिं डारी ॥ जहँ लगि जीव जन्तु उत्पानी । तहँ लगि कर्म राय परवानी ॥ कर्म फाँस ते कोइ न छूटे । कर्म फाँस सवहिन घर लूटे ॥

सा०—कर्म फाँस छूटे नहीं, केतो करो उपाय ।
सद्गुरु मिले तौ ऊबरै, नहिं तौ परलय जाय ॥ ३ ॥

रमैनी ४ ।

जो कुछ कर्म जगतमें करई । करि करि कर्म बहुरि भव परई ॥ एकन होय यज्ञ व्रत ठाना । एकन पाप पुण्य पहिचाना ॥ एक कर्म कुल लीन्ह उठाई । कर्म अकर्म न जाने भाई ॥ एक छापा और तिलक बनावै । पहिरि मेखला साधु कहावै ॥ वैष्णव होय करै षटकर्मा । वेद विचार सदा शुचि धर्मा ॥ कथा पुराण सुनै चित लाई ।

कर्महि सुमिरै बहु विधि भाई॥ विष्णु सुमिरि तप बहुविधि किये। सो निः कर्म्म विष्णु नहिं भयो ॥ कर्मक डोरि बँधा संसारा। क्यों छूटे उतरे भवपारा॥ एक अभंग एकादशि करई। तन छूटे वैकुण्ठहिं तरई॥ यह वैकुण्ठ न इस्थिर होई। अन्त कर्मगति परलय सोई॥ करै कर्म वैकुण्ठहि जाई। कर्म घटे भव जल फिरि आई॥ योगी योग कर्म्मको साधे। किरिया कर्म पवन आराधे॥ योगी कर्म पवनको किरिया। भुगतै कर्म्म देह पुनि धरिया॥ संन्यासी जो बन बन फिरहीं। होय निःकर्म कर्म फिर परहीं॥ जीयत दग्ध देहको करई। जटा बढाय व्यसन परिहरई॥ कोई नग्न कोई वस्त्र कछोटा। भरमत फिरै सहै पग ढोटा॥ राजद्वार पावै अवतारा। भुगतै कर्म अकर्म व्यवहारा॥ पण्डित जन सब कर्म बखाने। नख शिख कर्मफाँस अरुझाने॥ कर्म धर्मकी युक्ति बतावै। दान पुण्य बहुविधि अरथावै॥ वस्त्र दान लै जन्म गवाँवै। होई ऊँट बहु भार लदावै॥ एक जो करै बरत अवतारा। होई है सूकर श्वान सियारा॥ सूकर श्वान हो कर्म जो भुगता। विन निःकर्म न होई हैं मुकता॥

सा०–बहु बन्धनसे बाँधिया, एक विचारा जीव।
जीव बेचारा क्या करे. जो न छुडावे पीव॥
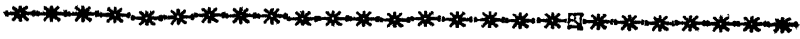
रमैंनी ५।

शब्द भेद निःशब्द बताओं। करि निःकर्म हंस मुकताओं॥ निरालम्ब अवलम्ब न जानै। शब्द निरन्तर भेद बखानै॥ पाप पुण्यकी छोडे आसा। कर्म धर्मते रहे उदासा॥ रहे उदास नाम लौ लाई। तत्त्वभेद निस्तत्त्व समाई॥ तीरथ ब्रतके निकट न जाई। भरम भूतको देइ भजाई॥ सुख सम्पति नहिं विपति विचारे। काम क्रोध तृष्णा परजारे॥ क्रिया कर्म आचार विसारे। होय निःकर्म कर्म निरुवारे॥ सो ग्रहै जो निग्रह काया॥ अभिअन्तरकी मेटे माया॥ शील स्वभाव शरीर बसावे। अन्तर स्थिर ध्यान लगावे॥ ब्रह्म अग्नि मनमें परजाले। ताको विष्णु चरन परछाले॥ गहे तत्त्व निस्तत्त्व विचारा। काम क्रोधको करै अहारा॥ सहज योग सो योगी करई। कर्म योग कबहूँ नहिं परई॥ धन यौवनकी करै न आशा। कामिनि कनकसे रहे उदासा॥ चहुँदिसि मंसा पवन कलोले। ज्ञान लहर अभ्यन्तर डोले॥ उनमुनि रहे भेद नहिं कहई। तत्त्वभेद निहतत्त्वहि लहई॥ जो कोइ आय अग्नि होय दहई। आप नीर होय नीचा बहई॥ मन गयन्द गुरुमतसे मारा। गुरुगम लूटे ज्ञान भँडारा॥ शूरा होय सो सम्मुख जूझै। भोंदू शब्द भेद नहिं बूझै॥ दुखिया होय रैन दिन रोई। भोगी भोग करै सुख सोई॥ दुख सुख भोग

सोग सम जाने। भली बुरी कछु मन नहिं आने॥ भली बुरीका करे सो त्यागा। निश्चय पावै वह बैरागा॥ सींगी अछय रैन दिन बाजै। सिद्ध साधु तहँ आसन छाजै॥

सा०–आसन साधे आपमें, आपा डारै खोय।
कहैं कवीर सो योगी, सहजै निर्मल होय॥ ५॥

इति कर्मखण्डकी रमैनी।

सत्यनाम।

अथ पंचै देहकी निर्णय[1]॥

एकजीवको स्वतःपद, बुद्धि भ्रांति सो काल।
काल होइ यह काल रचि, तामें भये बिहाल॥ १॥
बीहालेको मतो जो, देउँ सकल बतलाय।
जाते पारख प्रौढ लहि, जीव नष्ट नहिं जाय॥ २॥
कारि अनुमान जो शून्यभो, सूझै कतहूँ नाहिं।
आपु आप बिसरो जबै, तन विज्ञान कहि ताहि॥३॥
ज्ञान भयो जाग्यो जबै, कारि आपन अनुमान।
प्रतिबिंबित झाईं लखै, साक्षी रूप बखान॥ ४॥
साक्षी होय प्रकाश भो, महा कारण त्यहि नाम।
मसुर प्रमाणसो बिम्ब भो, नील बरण घनश्याम॥५॥
बढ्यो बिम्ब अध पर्व भो, शून्याकार स्वरूप।

---

१ इस ग्रन्थमें षट्देहका वर्णन है परन्तु इसका नाम पंचदेहका निर्णय है इसका कारण यह है कि, हंस देहको दूसरी देहोंके साथ न मिलाकर अलग माना है। क्योंकि, वह बन्ध और मोक्षसे परे मध्यकी भूमिका है।

ताको कारण कहत हैं, महँ अधियारी कूप ॥ ६ ॥
कारणसो आकार भो, श्वेत अँगुष्ठ प्रमान।
वेद शास्त्र सब कहत हैं, सूक्षम रूप बखान ॥ ७ ॥
सूक्ष्म रूपते कर्मभो, कर्महिते यह अस्थूल।
परा जीव या रहटमें, सहै घनेरी शूल ॥ ८ ॥

संतौ षट प्रकारकी देवी ॥

स्थूल सूक्ष्म कारण महँ कारण कैवल हंस कि लेही ॥
साढे तीन हाथ परमाना देह स्थूल बखानी।
राता वर्ण बैखरी बाचा जागृत अवस्था जानी ॥
रजो गुणी ओंकार मात्रुका त्रिकुटी है अस्थाना।
मुक्ति श्लोक प्रथम पद गायत्री ब्रह्मा बेद बखाना ॥
पृथ्वी तत्त्व खेचरी मुद्रा मग पीपल घट कासा।
क्षय निर्णय बड़वाग्नि दशेंद्री देव चतुर्दश बासा ॥
और अहै ऋग्वेद बतायू अर्द्ध शुन्नि संचारा।
सत्यलोक विषयका अभिमानी विषयानंद हंकारा ॥
आदि अंत औ मध्य शब्द या लखै कोइ बुधिवीरा ॥
कहै कवीर सुनो हो संतो इति स्थूल शरीरा ॥ १ ॥

संतौ सूक्ष्म देह प्रमाना।

सूक्ष्म देह अँगुष्ठ बराबर स्वप्न अवस्था जाना ॥
श्वेत बर्ण ओंकार मात्रुका सतोगुण विष्णू देवा।
ऊर्ध्व सुन्न औ यजुर्वेद है कण्ठ स्थान अहेवा ॥

मुक्ति समीप लोक बैकुण्ठ पालन किरिया राखी।
मार्ग बिहंग भूचरी मुद्रा अक्षर निर्णय भाखी॥
आव तत्त्व कोहं हंकारा मंदाअग्नी कहिये।
पंच प्राण द्वितीया पद गायत्री मध्यम बाणी लहिये॥
शब्द स्पर्श रूप रस गंध मन बुद्धि चित हंकारा।
कहै कबीर सुनौ भाइ संता यह तन सूक्षम सारा॥ २॥

संतौ कारण देह सरेखा।
आधा पर्व प्रमाण तमोगुण कारा वर्ण परेखा॥
मध्य शून्य मकार मात्रुका हृदया सो अस्थाना।
महदाकाश चाचरी मुद्रा इच्छा शक्ती जाना।
उदराग्नि सुषति अवस्था निर्णय कंठ स्थानी।
कपि मारग तृतीय पद गायत्री अहै प्राज्ञ अभिमानी॥
सामवेद पश्यन्ती वाचा मुक्त स्वरूप बखानी।
तेज तत्त्व अद्वैतानन्दं अहंकार निरबानी।
अहै विशुद्ध महातम जामें तामें कछु न समाई।
कारण देह इती सम्पूरण कहै कबीर बुझाई॥ ३॥

सन्तो महकारण तन जाना।
नील बरण औ ईश्वर देवा है मसूर परमाना॥
नाभिस्थान विकार मात्रुका चिदाकाश परवानी।
मारग मीन अगोचर मुद्रा वेद अथर्वन जानी॥
ज्वाला कल चतुर्थ पद गायत्री आदि शक्ति ततु वायु।
आश्रय लोक बिदेहानंद मुक्ति साजोजि बतायु॥

नृणे प्रकरशिक तुरी अवस्था प्रत्यज्ञा। त्मतु अभिमानी
शीव अहंकार महाकारण तन इहो कवीर बखानी ॥४॥

संतौ सुनौ कैवल देह बखाना।

केवल सकल देहका साक्षी भमर गुफा अस्थाना ॥
निराकाश औ लोक निराश्रय निर्णय ज्ञान वसेखा।
सूक्षम वेद है उनमिन मुद्रा उनमुन बाणी लेखा ॥
ब्रह्मानंद कही हंकारा ब्रह्मज्ञानको माना।
पूरण बोध अवस्था कहिये ज्योतिस्वरूपी जाना ॥
पुण्य गिरी अरु चारुमात्रुका निरंजन अभिमानी।
परमारथ पंचम पद गायत्री परामुक्ति पहिचानी ॥
सदाशीव औ मार्ग सिखाहै लहै संत मत धीरा।
कालातीत कला सम्पूरण केवल कहै कवीरा ॥ ५ ॥

संतो सुनौ हंस तन ब्याना।

अबरण बरण रूप नहिं रेखा ज्ञान रहित विज्ञाना ॥
नहिं उपजै नहिं बिनशै कबहूं नहिं आवै नहिं जाहीं।
इच्छ अनिच्छ न दृष्ट अदृष्टी नहिं बाहर नहिं माहीं॥
मैं तू रहित न करता भोगता नहीं मान अपमाना।
नहीं ब्रह्म नहिं जीव न माया ज्योंका त्यों वह जाना ॥
मन बुधि गुन इंद्रिय नहिं जाना अलख अकह निर्बाना
अकल अनीह अनादि अभेदा निगम नीति फिरि जाना
तत्त्व रहित रवि चंद्र न तारा नहिं देवी नहिं देवा।
स्वयं सिद्धि परकाशक सोई नहिं स्वामी नहिं सेवा ॥

हंस देह विज्ञान भाव यह सकल वासना त्यागे।
नहिं आगे नहिं पाछे कोई निज प्रकाशमें पागे॥
निज प्रकाशमें आप अपनपौ भूलि भये विज्ञानी।
उनमत बाल पिशाच मूक जड़ दशा पांच इह लानी॥
खोये आपु अपनपौ सब रस निज स्वरूप नहिं जाने।
फिरि कैवल महकारण कारण सूक्ष्म स्थूल समाने॥
स्थूल सूक्ष्म कारण महाकारण कैवल पुनि विज्ञाना।
भये नष्ट ये हेर फेरमें कतौं नहीं कल्याना॥
कहैं कबीर सुनोहो संन्तो खोज करो गुरु ऐसा।
ज्यहिते आप अपनपौ जानो मेटो षटका रैसा॥६॥

निरख प्रबोधकी रमैनी॥२॥÷

अस सतगुर बोले सत बानी। धन धन सत्त नाम जिन जानी॥ नाम प्रतीत भई सब संता। एक जानके मिटे अनंता॥ १॥ अनँत नाम जब एक समाना। तब ही साध परमपद जाना॥ बिरला संत परम गति जानै। एक अनंत सो कहा बखानै॥ २॥ सबतें न्यारा सबके माहीं। मांहीं सतगुर दूजा नाहीं॥ सत्तनाम जाके धन होई। धन जीवन ताहीको सोई॥ ३॥

दोहा–जिनके धन सतनाम है, तिनका जीवन धन्न।
तिनको सतगुर तारहीं, बहुर न धरई तन्न॥ १॥

सत्तनामकी महिमा जानै। मन बच करमै सरना आनै॥ एक नाम मन बच कर लेई। बहुर न या भव-

÷ निरख प्रबोधकी पहली रमैनी पृष्ठ ५०८ में आगयी है।

जल पग देई ॥ ४ ॥ योग यज्ञ जप तप क्या करई । दान पुन्नतें काज न सरई ॥ देवी देवा भूत परेता । नाम लेत भागैं तज खेता ॥ ५ ॥ टोना टामन पूज पाती । नाम लेत सहजै तर जाती ॥ जो इच्छा आवै मन माहीं । पुरवै तुरत बिलम्ब कछु नाहीं ॥ ६ ॥ सो सत-नाम हृदय अनुरागी । सो कहिये साँचा बैरागी ॥ जब लग नाम प्रतीत न करई । तब लग जनम २ दुःख भरई ॥७॥

दोहा—कबिरा महिमा नामकी, कहता कही न जाय ।
चारमुक्ति औ चार फल, और परमपद पाय ॥ २ ॥

सत्तनाम है सबतें न्यारा । निर्गुन सर्गुन शब्द पसारा ॥ निर्गुन बीज सर्गुन फल फूला । साखा ज्ञान नाम है मूला ॥ ८ ॥ मूल गहेते सब सुख पावै । डाल पातमें मूल गँवावै ॥ सतगुर कही नाम पहिचानी । निर्गुन सर्गुन भेद बखानी ॥ ९ ॥

दोहा—नाम सत्त संसारमें, और सकल है पोच ।
कहना सुनना देखना, करना सोच असोच ॥ ३ ॥

सबही झूठ झूठ कर जाना । सत्त नामको सत कर माना ॥ निस बासर इक पल नहिं न्यारा । जाने सतगुर जानन हारा ॥१०॥ सुरत निरत ले राखै जहवाँ । पहुँचै अजर अमर घर तहवाँ ॥ सत्तलोकको देय पयाना । चार मुक्ति पावै निर्वाना ॥ ११ ॥

दोहा-सतलोकै सब लोक पति, सदा समीप प्रमान ।
परमजोतसो जोत मिलि, प्रेम सरूप समान ॥ ५ ॥

अंस नामतें फिर फिर आवै । पूरन नाम परमपद पावै ॥ नहिं आवै नहिं जाय सो प्रानी । सत्यनामकी जेहि गति जानी ॥ १२ ॥ सत्तनाममें रहै समाई । जुग जुग राज करै अधिकाई ॥ सत्तलोकमें जाय समाना । सत्त पुरुषसों भया मिलाना ॥ १३ ॥ हंस सुजान हंसही पावा । जोग संतायन भया मिलावा ॥ हंस सुघर दरस दिखलावा । जनम जनमकी भूख मिटावा ॥ १४ ॥ सुरत सुहागिन भइ आगे ठाढी । प्रेम सुभाव प्रीति अति बाढी ॥ पुहुपदीपमें जाय समाना । बास सुवास चहूँ दिस आना ॥ १५ ॥

दोहा-सुख सागर सुख बिलसई, मानसरोवर न्हाय ।
कोट कामसी कामिनी, देखत नैन अघाय ॥ ६ ॥

सुरति नाम सुनै जब काना । हंसा पावै पद निर्बाना ॥ अब तो कृपा करी गुरु देवा । तातें सुफल भई सब सेवा ॥ १६ ॥ नाम दान अब लेय सुभागी । सत्त नाम पावै बड़ भागी ॥ मन बच कर्म चित निश्चय राखै । गुरके शब्द अमीरस चाखै ॥ १७ ॥ आदि अंत वहँ भेदै पावै पवन आड़में ले बैठावै ॥ सब जग झूठ नाम इक साँचा । श्वास श्वासमें साचा राचा ॥ १८ ॥ झूठा जान जगत सुख भोगा । साँचा साधू नाम सँजोगा ॥ यह तन माटी इन्द्री

छारी। सत्तनाम सांचा अधिकारी॥१९॥नाम प्रताप जुगे जुग भाखी। साध संत ले हिरदे राखी॥ कहँ कबीर सुन धर्मनि नागर। सत्यनाम है जगत उजागर॥२०॥
दोहा—महिमा बड़ी जो साध की, जाके नाम अधार।
सतगुर केरी दया ते, उतरे भव जल पार॥७॥

निरख प्रबोधकी रमैनी ३।

प्रथम एक जो आपै आप। निराकार निर्गुन निर्जाप॥ नहिं तब भूमि पवन अकासा। नहिं तब पावक नीर निवासा॥१॥ नहिं तब पांच तत्त्व गुन तीनी। नहिं तब सृष्टी माया कीनी॥ नहिं तब आदि अंत मध तारा। नहिं तब अंध धुंध उजियारा॥२॥ नहिं तब ब्रह्मा विष्नु महेसा। नहिं तब सूरज चाँद गनेशा॥ नहिं तब मच्छ कच्छ बाराहा। नहिं तब भादों फागुन माहा॥३॥ नहिं तब कंस कृष्ण बलि बावन। नहिं तब रघुपति नहिं तब रावन॥ नहिं तब सरगुन सकल पसारा। नहिं तब धारे दस औतारा॥४॥ नहिं तब सरसुति जमुना गंगा। नहिं तब सागर समुद्र तरंगा॥ नहिं तब तीरथ व्रत जग पूजा। नहिं तब देव दैत अरु दूजा॥५॥ नहिं तब पाप पुन्न गुर सीखा। नहिं तब पढना गुनना लीखा॥ नहिं तब विद्या बेद पुराना। नहिं तब हते कितेब कुराना॥६॥
दोहा—कहैं कबीर विचार के, तब कुछ किरतम नाहिं।
परमपुरुष तहँ आपही, अगम अगोचर माहिं॥१॥

करता एक अगम है आप। वाके कोई माय न बाप॥ करताके नहिं बंधु औ नारी। सदा अखंडित अगम अपारी॥ ७॥ करता कछु खावे नहिं पीवे। करता कबहूँ मरै न जीवे॥ करताके कुछ रूप न रेषा। करताके कुछ बरन न भेषा॥ ८॥ जाके जात गोत कछु नाहीं। महिमा बरनि न जाय मो पाहीं॥ रूप अरूप नहीं तेहि नाँव। बर्न अबर्न नहीं तेहि ठाँव॥९॥

दोहा–कहै कबीर बिचार के, जाके बरन न गाँव।
निराकार और निर्गुना, है पूरन सब ठाँव॥ २॥

करता कृत्रिम बाजी लाई। ओंकार तें सृष्टि उपाई॥ पांच तत्त्व तीन गुन साजा। ताते सब कृत्रिम उपराजा॥ १०॥ कृत्रिम धर्ती कृत्रिम अकास। कृत्रिम चंद सूर परकास॥ कृत्रिम पांच तत्त्व गुन तीनी। कृत्रिम सृष्टि जो माया कीनी॥ ११॥ कृत्रिम आदि अंत मध तारा। कृत्रिम अंध कूप उजियारा॥ कृत्रिम सर्गुन सकल पसारा। कृत्रिम कहिये दस औतारा॥ १२॥ कृत्रिम कंस कृत्रिम बलि बावन। कृत्रिम रघुपति कृत्रिम रावन॥ कृत्रिम कच्छ मच्छ बाराहा। कृत्रिम भादौं फागुन माहा॥ १३॥ कृत्रिम सहर समुद्र तरंगा। कृत्रि सरसुति जमुना गंगा॥ किृत्रिम स्मृति वेद पुराना। कृत्रिम काजी किताब कुराना॥ १४॥ कृत्रिम जोग जोगावत

पूजा । कृत्रिम देवी देव जो दूजा ॥ कृत्रिम पाप पुन्न गुर सीखा । कृत्रिम पढना गुनना लीखा ॥ १५ ॥

दोहा—कहैं कबीर बिचारके, कृत्रिम करता नहिं होय ॥
यह बाजी सब कृत्रिम है, साँच सुनो सब कोय ॥

करता एक और सब बाजी । ना कोई पीर मसायख काजी ॥ बाजी ब्रह्मा बिष्नु महेसा । बाजी इन्द्र औ चन्द गनेसा ॥ १६ ॥ बाजी जल थल सकल जहाना । बाजी जानो जमीं असमाना ॥ बाजी बरनो स्मृति बेदा । बाजीगरका लखै न भेदा ॥ १७ ॥ बाजी सिद्ध साधक गुर सीखा । जहाँ तहाँ यह बाजी दीखा ॥ बाजी जोग यज्ञ व्रत पूजा । बाजी देवी देवल दूजा ॥ १८ ॥ बाजी तीरथ व्रत आचारा । बाजी जोग यज्ञ व्योहारा ॥ बाजी जल थल सकल किवाई । बाजीसों बाजी लिपटाई ॥ १९ ॥ बाजीका यह सकल पसारा । बाजी माहिं रहै संसारा ॥ कहैं कबीर सब बाजी माहीं । बाजीगरको चीन्हैं नाहीं ॥ २० ॥

## अथ बीजककी रमैनी ।

### प्रथम रमैनी १ ॥

अंतर ज्योति शब्द यक नारी । हरि ब्रह्मा ताके त्रिपुरारी ॥ १ ॥ ते तिरिये भग लिंग अनंता । तेउ न जानै आदिउ अंता ॥ २ ॥ बाखरि एक बिधातै कीन्हा ।

---

१ काई,

चौदह ठहर पाटि सो लीन्हा ॥ ३ ॥ हरि हर ब्रह्मा महंतौ नाऊँ । ते पुनि तीनि बसाबल गाऊँ ॥ ४ ॥ ते पुनि रचिनि खंड ब्रह्मंडा । छा दर्शन छानवे परवंडा ॥ ५ ॥ पेटहि काहु न वेद पढ़ाया । सुनति कराय तुरुक नहिं आया ॥६॥ नारी मो चित गर्भप्रसूती । स्वांग धरै बहुतै करतूती ॥७॥ तहिया हम तुम एकै लोहू । एकै प्राण बियापल मोहू ॥ ८ ॥ एकै जनी जना संसारा । कौन ज्ञानते भयो निनारा ॥ ९ ॥ भा बालक भगद्वारे आया । भग भोगेते पुरुष कहाया ॥ १० ॥ अविगतिकी गति काहु न जानी । एक जीभ कित कहौं बखानी ॥ ११ ॥ जो मुख होइ जीभ दश लाखा । तौ कोइ आय महंतौ भाखा ॥१॥

सा०–कहहिं कबीर पुकारिकै, ई लेऊ व्यवहार ।
एक रामनाम जाने विना, भव बूडि मुवा संसार ॥१॥

दूसरी रमैनी २ ॥

जीवरूप यक अन्तर बासा । अन्तर ज्योति कीन परगासा ॥ १ ॥ इच्छारूप नारि अवतरी । तासु नाम गायत्री धरी ॥ २ ॥ तेहि नारीके पुत्र तिन भाऊ । ब्रह्मा विष्णु महेश नाऊ ॥ ३ ॥ तब ब्रह्मा पूंछल महतारी ॥ को तोर पुरुष तू काकरि नारी ॥४॥ तुम हम हम तुम और न कोई । तुमहिं मोर पुरुष हमहिं तोर जोई ॥२॥

सा०–बाप पूतकी एकै नारी, एकै माय बिआय ॥
ऐसापूत सपूत न देख्यो, बापै चीन्है धाय ॥ ॥ २
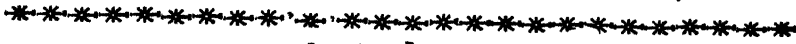
तीसरी रमैनी ३ ॥

प्रथम अरंभ कौनके भयऊ । दूसर प्रकट कीन सो ठयऊ ॥ १ ॥ प्रकटे ब्रह्मा विष्णु शिव शक्ती । प्रथमै भक्ति कीन जिव उक्ती ॥ २ ॥ प्रकटे पवन पानी औ छाया । बहु बिस्तारकै प्रकटी माया ॥ ३ ॥ प्रकटे अंड पिंड ब्रह्मण्डा । पृथिवी प्रकट कीन नवखंडा ॥ ४ ॥ प्रकटे सिध साधक संन्यासी । ये सब लागि रहे अविनासी ॥ ५ ॥ प्रकटे सुरनर मुनि सब झारी । तेऊ खोजि परे सबहारी ॥ ३ ॥

सा०—जीव सीव प्रकटे सबै, वे ठाकुर सब दास ।
कविर और जानै नहीं, एक रामनामकी आस ॥३॥

चौथी रमैनी ४ ।

प्रथम चरण गुरु कीन बिचारा । करता गावै सिरजन हारा ॥ १ ॥ कर्मै करिकै जग बौराया । शक्ति भक्ति लै बांधिनि माया ॥ २ ॥ अद्भुतरूप जातिकी वानी । उपजी प्रीति रमैनी ठानी ॥ ३ ॥ गुणि अनगुणी अर्थ नहिं आया । बहुतक जने चीन्ह नहिं पाया ॥ ४ ॥ जो चीन्है तेहि निर्मल अंगा । अनचीन्हे नल भये पतंगा ॥४॥

सा०—चीन्हि चीन्हि कह गावहू, बानी परी न चीन्हि ॥
आदि अंत उत्पति प्रलय, सब आपुहि कहि दीन्हि ॥४॥

पांचवी रमैनी ५ ॥

कहँलौं कहौं जुगनकी बाता । भूले ब्रह्म न चीन्हे त्राता ॥ १ ॥ हरिहर ब्रह्माके मन भाई । बिबि अच्छर लै

जुगति बनाई ॥ २ ॥ बिबि अच्छरका कीन बँधाना। अनहद शब्द ज्योति परमाना ॥३॥ अच्छर पढि गुनि राह चलाई। सनक सनन्दनके मनभाई ॥ ४ ॥ वेद किताब कीन्ह विस्तारा। फैल गैल मन अगम अपारा॥५॥ चहुं जुग भगत बांधल बाटी । समुझि न परी मोटरी फाटी ॥ ६ ॥ भैभै पृथ्वी चहुँ दिशि धावै। अस्थिर होय न औषध पावै ॥ ७ ॥ होय भिस्त जो चित न डोलावै। खसमहिं छोड़ि दोजखको धावै ॥८॥ पूरुब दिशाहंस गति होई। है समीप सँधि बूझै कोई ॥ ९ ॥ भगता भगतिन कीन सिंगारा। बूड़ि गयल सब माँझहिं धारा ॥ ५ ॥
सा०-विन गुरु ज्ञाने दुन्दभो, खसमकही मिलि बात ॥
जुगजुग कहवैया कहै, काहु न मानीजात ॥ ५ ॥

छठीं रमैनी ६ ।

वर्णहु कौन रूप औ रेखा। दूसर कौन आहि जो देखा ॥ १ ॥ ओ ओंकार आदि नहिं बेदा। ताकर कहौ कौन कुल भेदा ॥ २ ॥ नहिं तारागण नहिं रवि चंदा। नहिं कछु होत पिताके बिंदा ॥ ३ ॥ नहिं जल नहिं थल नहिं थिर पवना। को धरै नाम हुकुम को बरना ॥ ४ ॥ नहिं कछु होत दिवस अरु राती। ता कर कहहु कौन कुल जाती ॥ ६ ॥
सा०-शून्य सहज मन स्मृतिते, प्रकट भई यक ज्योति।
बलिहारी ता पुरुष छबि, निरालंब जो होति ॥ ६ ॥

सातवीं रमैनी ७ ।

जहिया होत पवन नहिं पानी । तहिया सृष्टि कौन उतपानी ॥ १ ॥ तहिया होत कली नहिं फूला । तहिया होत गर्भ नहिं मूला ॥ २ ॥ तहिया होत न विद्या वेदा । तहिया होत शब्द नहिं खेदा ॥ ३ ॥ तहिया होत पिंड नहिं बासू । ना धर धरणि न गगन अकासू ॥४॥ तहिया होत गुरू नहिं चेला । गम्य अगम्य न पंथ दुहेला ॥५॥

सा०—अविगतिकी गति का कहौं, जाके गाँव न ठाँव ॥
गुण विहीना पेखना, का कहि लीजै नाँउ ॥ ७ ॥

आठवीं रमैनी । ( वेदांत विचार ) ८ ।

तत्त्व मसी इनके उपदेशा । ई उपनिषद् कहै संदेशा ॥ १ ॥ ऊ निश्चय उनके बड़ भारी । वाहिको वर्ण करै अधिकारी ॥ २ ॥ परमतत्त्वका निज परमाना । सनकादिक नारद सुखमाना ॥ ३ ॥ याज्ञवल्क्य औ जनक संवादा । दत्तात्रय वहै रसस्वादा ॥ ४ ॥ वहै वसिष्ठ राम मिलि गाई । वहै कृष्ण ऊधव समुझाई ॥ ५ ॥ वहै बात जो जनक दिढाई । देहै धरे विदेह कहाई ॥ ८ ॥

सा०--कुल अभिमाना खोयकै, जियत मुवा नहि होय ।
देखत जो नहिं देखिया, अदृष्ट कहावे सोय ॥ ८ ॥

नवीं रमैनी ९ ।

बांधे अष्ट कष्ट नौ सुता । यम बांधे अंजनिके पूता ॥ १॥ यमके बाहन बांधिनि जनी । बांधे सृष्टि कहालौं गनी ॥ २ ॥ बांधे देव तेंतीस करोरी । सुमिरत बंदि

लोह गौ तोरी ॥ ३ ॥ राजा सुमिरैं तुरिया चढी । पंथी सुमिरि नाम लै बढी ॥ ४ ॥ अर्थ बिहीना सुमिरै नारी । परजा सुमिरै पुहुमी झारी ॥ ५ ॥

सा०--बँदि मनाय फल पावहीं, बँदि दिया सो देव ॥
कह कबीर ते ऊबरे, निशि दिन नामहिं लेव ॥ ९ ॥

रमैनी दशवीं १० ।

राही लै पिपराहीबही । करगी आवत काहु न कही ॥ आई करगी भो अजगूता ॥ जन्म जन्म जम पहिरे बूता ॥ बूता पहिर जम करै पयाना । तीन लोकमें कीन्ह समाना ॥ बांधेउ ब्रह्मा विष्णु महेशू । सुर नर मुनि औ बांध गणेशू ॥ बांधे पवन पावक औ नीरू । चन्द्र सूर बांधे दोउ बीरू ॥ सांच मंत्र बांधे सबझारी । अमृत वस्तु न जानै नारी ॥

सा०--अमृत वस्तु जानै नहीं, मगन भये कित लोय ।
कहहि कबीर कामो नहीं, जीवहिं मरण न होय ॥ ११ ॥

रमैनी ग्यारहवीं ११ ।

आंधरी गुष्टि सृष्टि भई बौरी । तीन लोक महँ लागि ठगौरी ॥ ब्रह्महिं ठग्यो नाग संहारी । देवन सहित ठग्यो त्रिपुरारी ॥ राज ठगौरी विष्णुहिं परी । चौदह भुवन केर चौधरी ॥ आदि अन्त जेहि काहु न जानी । ताको डर तुम काहेक मानी ॥ ऊ उतंग तुम जाति पतंगा । यम घर किहेऊ जीवको संगा ॥ नीम कीट जस नीम पियारा ।

बिषको अमृत (मान) कहत गवारा ॥ विषके संग कौन गुण होई । किंचित लाभ मूल गौ खोई ॥ विष अमृत गौ एकै सानी । जिन जाना तिन विष कै मानी ॥ कहा[1] भये नर सुध बेसुद्धा । बिन परचय जग बूड़ न बुद्धा ॥ मतिके हीन कौन गुण कहई । लालच लागे आशा रहई ॥

सा०—मुवा है मरी जाहुगे, मुये कि बाजी ढोल ।
स्वप्न सनेही जगभया, सहिदानी रहिगो बोल ॥ ११

रमैनी बारहवीं १२ ।

माटिक कोट पषानक ताला । सोई बन सोई रखवाला ॥ सो बन देखत जीव डेराना । ब्राह्मण वैष्णव एक करि जाना ॥ (जोरी) ज्यों किसान किसानी करई । उपजे खेत बीज नहिं परई ॥ छाड़ि देहु नर झेलिक झेला । बूड़े दोऊ गुरू औ चेला ॥ तीसर बूडे पारथभाई । जिन बन दाहे दवा लगाई ॥ भूंकि भूंकि कूकर मरि गयऊ । काज न एक सियारसे भयऊ ॥

साखी—मूस विलारी एक संग, कहु कैसे रहिजाय ।
अचरज यक देखो हो सन्तो, हस्ती सिंहहि खाय ॥ १२ ॥

रमैनी तेरहवीं १३ ॥

नहिं परतीति जो यह संसारा । द्रव्यक चोट कठिन को मारा ॥ सोतो शेषै जाय लुकाई । काहूके परतीति

१ कहां भये नल सूझ बेसूझा । विन पारिचय जग मूढ न बूझा ।

न आई ॥ चले लोग सब मूल गँवाई । यमकी बाढि काटि नहिं जाई ॥ आजु काज जिय काल्हि अकाजा। चले लादि दिग्गंतर राजा॥ सहज बिचारत मूल गँवाई। लाभ ते हानि होय रे भाई॥ ओछी मती चन्द्र गो अथई। त्रिकुटी संगम स्वामी बसई ॥ तबहीं विष्णु कहा समुझाई । मैथुन अष्ट तुम जीतहु जाई ॥ तब सनकादिक तत्त्व बिचारा। जैसे रंकधन पाव अपारा ॥ भौ मर्य्याद बहुत सुख लागा। यहि लेखे सब संशय भागा ॥ देखत उतपति लागु न बारा। एक मरै यक करै विचारा ॥ मुये गयेकी काहु न कही । झूठी आश लागि जग रही॥

सा०—जरत जरतसे बाचहू, काहे न करहु गोहार।
विष विष्याके खायहू, राति दिवस मिलि झारि ॥१३॥

रमैनी चौदहवीं १४।

बड सो पापी आहि गुमानी। पाखण्ड रूप छल्यो नर जानी ॥ बावन रूप छल्यो बलिराजा। ब्राह्मण कीन्ह कौनको काजा ॥ ब्राह्मणही सब कीन्हो चोरी। ब्राह्मणही को लागी खोरी ॥ ब्राह्मण किन्हो वेद (ग्रन्थ) पुराना। कैसेहु के मोहि मानुष जाना ॥ यकसे ब्रह्महिं पंथ चलाया। यकसे हंस गोपालहिं गाया। यकसे शम्भूपंथ चलाया। यकसे भूत प्रेत मनलाया ॥ यकसे पूजा जैन विचारा। एकसे निहुरि निमाज़ गुज़ारा ॥ कोइ काहूको हटा न माना। झूठा खसम कबिरन जाना ॥ तन मन भजि रहु

मोरे भगता । सत्य कबीर सत्य है वकता । आपुहि देव आपुही पाती। आपुहि कुल आपुहि है जाती ॥ सर्व भूत संसार निवासी । आपुहि खसम आप सुखरासी ॥ कहते मोहिभयल युगचारी । काके आगे कहौं पुकारी ॥

सा०—सांचे कोइ न मानई, झूठेके संगजाय ।
झूठे झूठा मिलिरहा, अहमक खेहा खाय ॥ १४ ॥

रमैनी पन्द्रहवीं १५ ॥

उनई बदरिया परिगौ संझा । अगुआ भूले बन खंड मंझा ॥ पिय अन्ते धन अन्ते रहई । चौपरि कामरि माथे गहई ॥

सा०—फुलवा भार न लैसके, कहै सखिनसों रोइ ।
ज्यों २ भीजै कामरी, त्यों २ भारी होइ ॥ १५ ॥

रमैनी सोलहवीं १६ ॥

चलत चलत अति चरण पिराने। हारि परे तहँ अति खिसियाने ॥ गण गन्धर्व मुनि अन्त न पाया । हरि अलोप जग धन्धे लाया ॥ गहनी बन्धन बंध न सूझा । थाकि परे तहँ कछुव न बूझा ॥ भूलि परे तब अधिक डेराई । रजनी अंध कूप ह्वै जाई ॥ माया मोह उहां भर भूरी । दादुर दामिनि पवनहु पूरी ॥ बरषै तपै अखंडित धारा । रैनि भयावनि कछु न अधारा ॥

सा०—सबै लोग जहँडाइया, अन्धा सबै भुलान ।
कहा कोइ नहिं मानही,(सब)एकै माहि समान॥१६॥

रमैनी सत्रहवीं १७ ॥

जस जीव आपु मिलै अस कोई । बहुत धर्म सुख हृदया होई । जासूँ बात रामकी कही । प्रीति न काहू-सों निर्वही ॥ ऐकै भाव सकल जग देखी । बाहर परै सो होय विवेखी ॥ विषय मोहके फंद छोडाई । जहां जाय तहँ काटु कसाई ॥ है कसाई छूरी हाथा । कैसेहु आवै काटों माथा ॥ मानुष बड़े बड़े ह्वै आये । ऐकै पंडित सबै पढाये ॥ पढ़ना पढ़उ धरहु जनि गोई । नहिं तो निश्चय जाहु विगोई ॥

सा०—सुमिरन करहू रामको, छाडहु दुखकी आस ॥
तर ऊपर धरि चापि है, जस कोल्हू कोटि पचास ॥१७॥

रमैनी अठारहवीं १८ ॥

अद्भुत पंथ बरणि नहिं जाई । भूले राम भूली दुनि-आई ॥ जो चेतहु तो चेतु रे भाई । नहिं तो जीव यमै लै जाई ॥ शब्द न माने कथै विज्ञाना । ताते यम दीन्हों है थाना ॥ संशय सावज बसै शरीरा । ते खायल अनवेधल हीरा ॥

सा०—संशय सावज शरीरमें, संगहि खेलै जुहारि ॥
ऐसा घायल बापुरा, जीवन मारे झारि ॥ १८ ॥

रमैनी उन्नीसवीं १९ ॥

अनहद अनुभवकी करि आशा । देखो यह बिपरीति तमाशा ॥ इहै तमाशा देखहु भाई । जहां है शुन्य तहां चलि जाई ॥ शुन्यहि बांछा शुन्यहिं गयऊ । हाथा छोडि बे हाथा भयऊ ॥ संशय सावज सब संसारा । काल अहेरी साँझ सकारा ॥

सा०—सुमिरण करहु रामको, काल गहे है केश ।
ना जानों कब मारिहै, क्या घर क्या परदेश॥१९॥

रमैनी बीसवीं २० ॥

अब कहु राम नाम अविनासी । हरि तजि जियरा कतहु न जासी॥ जहाँ जाहु तहँ होहु पतंगा । अब जनि जरहु समुझि बिष संगा ॥ राम नाम लौलाय सो लीन्हा । भृङ्गी कीट समुझि मन दीन्हा ॥ भौ अति गरुवा दुख के भारी । करु जिय जतन सो देखु विचारी ॥ मनकी बात है लहरि विकारा । तोहि नहिं सूझे वार न पारा ॥

सा०—इच्छाके भव सागरै, वोहित राम अधार ।
कहँ कवीर हरि शरण गहु, गो बछ खुर विस्तार२०॥

रमैनी इक्कीसवीं २१ ॥

बहुत दुखै है दुखकी खानी । तब बचि हौ जब रामहिं जानी ॥ रामहिं जान युक्ति जो चलई । युक्तिहिं ते फंदा नहिं परई ॥ युक्तिहि युक्ति चलत संसारा । निश्चै कहा न

मानु हमारा ॥ कनक कामिनी घोर पटोरा । संपति बहुत रहै दिन थोरा ॥ थोरी संपति गौ बौराई । धर्म रायकी खबरि न पाई ॥ देखि त्रास मुख गौ कुम्हलाई । अमृत धोखे गो विष खाई ॥

सा०-मैं सिरजों मैं मारहूं, मैं जारौं मैं खाँव ।
जल थल मैही रमि रहौं, मोर निरंजन नाँव॥२१॥

रमैनी बाईसवीं २२ ॥

अलख निरंजन लखै न कोई । जेहि बंधे बंधा सब लोई ॥ जेहि झूठे सब बाँधु अयाना । झूठी बात साँचके माना ॥ धंधा बंधा कीन व्यवहारा । कर्म विवर्जित बसै निनारा ॥ षट आश्रम षट दर्शन कीन्हा । षटरस वस्तु खोट सब चीन्हा ॥ चारि वृक्ष छौ शाख बखाने । विद्या अगणित गनै न जानै ॥ औरो आगम करै बिचारा । तेहि नहिं सूझे वार न पारा ॥ जप[1] तीरथ व्रत कीजै पूजा । दान पुण्य कीजै बहु दूजा ॥

सा०-मन्दिर तो है नेहका. मत कोइ पैठे धाय ।
जो कोइ पैठे धायके, बिन शिर सेती जाय॥२२॥

रमैनी तेईसवीं २३ ॥

अल्प सुख दुख आदिहु अंता । मन भुलान मैगर मैं मंता ॥ सुख विसराय मुक्ति कहँ पावे । परिहरि सांच

1 जप तीरथ पूजे व्रत भूता । दान औ पुण्य किये बहूता ।

झूठ निज धावे ॥ अनल ज्योति डाहे यक संगा । नयन नेह जस जरै पतंगा ॥ करहु विचार जेहि दुख जाई । परि हरि झूठा केर सगाई ॥ लालच लागे जन्म सिराई। जरा मरन नियरायल आई ॥

सा०-भरमकी बांधा ई जगत, यहि विधि आवे जाय।
मानुष जन्महिं पाय नर, काहेको जहँडाय ॥ २३ ॥

रमैनी चौबीसवीं २४ ॥

चन्द चकोर अस बात जनाई । मानुष बुद्धि दीन पलटाई ॥ चारि अवस्था सपना कहई । झूठो फुरे जानत रहई ॥ मिथ्या बात न जाने कोई । यही विधि सिगरे गैल विगोई ॥ आगे दैदै सबन गँवाया । मानुष बुद्धि न स्वपनेहु पाया ॥ चौतिस अच्छर सो निकले जोई । पाप पुण्य जानेगा सोई ॥

सा०- सोइ कहंते सोइ होहुगे, निकरि न बाहर आव ।
हो हजूर ठाढे कहौं, क्यों धोखे जन्म गवाव ॥ २४ ॥

रमैनी पचीसवीं २५ ॥

चौतिस अक्षरका यही विशेखा । सहसरो नाम यहीमें देखा ॥ भूलि भटक नर फिर घट आयो । होय अजान सो सभन गँवायो ॥ खोजहिं ब्रह्मा विष्णु शिवशकती । अंनत लोक खोजहिं शिव भगती ॥ खोजहिं गण गंधर्व मुनि देवा । अनंत लोक खोजहिं बहु भेवा ॥

सा०—एक अण्ड ओंकार ते, सब जग भयो पसार।
कहहिकबीरसबनारिरामकी, अविचलपुरुषभतार २७

रमैनी अट्ठाईसवीं ॥ २८ ॥

अस जोलहाका मर्म न जाना। जिन जग आइ पसारल ताना॥ धरति अकाश दोऊ गाड बनाई। चंद्र सूर दुइ नरा भराई॥ सहस तार लै पूरिन पूरी। अजहू बिनय कठिन है दूरी॥ कहहिं कबीर करम सों जोरी। सूत कुसूत बिनै भल कोरी॥ २८॥

रमैनी उनतीसवीं २९ ॥

बज्रहुते त्रिन छनमें होई। त्रिनते बज्रकरै पुनि सोई॥ निझरू नरू जानि परिहरई। कर्मक बांधा लालच करई॥ कर्म धर्म बुद्धि मति परिहारिया। झूठा नाम साँचलै धरिया॥ रजगति त्रिविधि कीन्ह परगासा। कर्म धर्म बुधिकेर बिनाशा॥ रविके उदय तारा भौ छीना। चर बेहर दोनोंमें लीना॥ विषके खाये विष नहिं जावे। गारुड सो जो मरत जिआवे॥

सा०—अलख जो लागी पलकमें, पलकहि में डसिजाय॥
विषहर मंत्र न मानई, गारुड काह कराय ॥ २९ ॥

रमैनी तीसवीं ॥ ३० ॥

औ भूले षट्ट दरसन भाई। पाखण्ड भेष रहा लपटाई॥ जीव शीवका आयन सौना। चौरिउ वेद चतुर्गुण मौना॥

---

१ चारोवद्धचतुर्गुण मौना।

जैनी धर्मक मर्म न जाना। पाती तोरि देव घर आना॥ दवना मरुआ चम्पा फूला। मानो जीव कोटि समतूला॥ औ पृथ्वीको रोम उचारे। देखत जन्म आपनो हारे॥ मनमथ बिंदु करे असरारा। कलपे बिन्दु खसैं नहिं द्वारा॥ ताका हाल होय अघकूचा। छौ दरसनमें जैन विगूचा॥

सा०—ज्ञान अमर पद बाहिरे, नियरे ते है दूरि।
जो जाने तेहि निकट है, रह्यो सकल घट पूरि॥ २०॥

रमैनी इकतीसवीं ३१॥

सुम्रिति आहि गुणनको चीन्हा। पाप पुण्यको मारग लीन्हा॥ सुम्रिति वेद पढै असरारा। पाखण्ड रूप करैं हंकारा॥ पढै वेद औ करे बड़ाई। संशय गांठि अजहूँ नहिं जाई॥ पढिकै शास्त्र जीव बध करई। मूड़ि काटि अगमनकै धरई॥

सा०—कहहि कबीर पाखण्डते, बहुतक जीव सताय।
अनुभव भाव न दर्शई, जियत न आपु लखाय॥ ३१॥

रमैनी बत्तीसवीं॥ ३२॥

अंध सो दर्पण वेद पुराना। दरबी कहा महारस जाना॥ जस खर चंदन लादे भारा। परिमल बास न जानु गँवारा॥ कहहिं कबीर खोजै अस्माना। सो न मिला जो जाय अभिमाना॥ ३२॥

रमैनी तेतीसवीं॥ ३३॥

वेदकी पुत्री स्मृति भाई। सो जेवरि कर लेतै आई॥

आपुहि बरी आपु गर बन्धा। झूठी मोह कालको धंधा॥ बंधवत बंधा छोरि नहिं जाई। विषय स्वरूप भूलि दुनि-याई ॥ हमरे लखत सकल जग लूटा । दास कबीर राम कहि छूटा ॥

सा०--रामहि राम पुकारते, जिभ्या परिगो रौस ।
सुधाजल पीवे नहीं, खोद पियनकी हौस ॥३३॥

रमैनी चौंतीसवीं ३४ ॥

पढि पढि पंडित करहु चतुराई । निज मुक्तिहि मोहि कहु समुझाई ॥ कहां बसे पुरुष कवन सो गाऊँ। सो मोहि पण्डित सुनावहु नाऊँ ॥ चारि वेद ब्रह्मे निज ठाना। मुक्तिक मर्म उन्हौं नहिं जाना ॥ दान पुन्न उन बहुत बखाना। अपने मरनकी खबरि न जाना॥ एक नाम है अगम गँभीरा। तहवाँ अस्थिर दास कबीरा ॥

सा०—चिउटीं जहां न चढि सके, राई नहिं ठहराय ।
आवागमनकी गम नहीं, तहँ सकलो जगजाय ॥ ३४ ॥

रमैनी पैंतीसवीं ३५ ॥

पंडित भूले पढि गुणि वेदा। आपु अपनपौ जानु न भेदा॥ संध्या तर्पण औ षट कर्मा । इ बहु रूप करहिं अस धर्मा ॥ गायत्री युग चारि पढाई। पूछहु जाय मुक्ति किन पाई ॥ औरके छुये लेतहौ सींचा। तुमते कहहु कौन है नीचा ॥ ई गुण गर्व करो अधिकाई। अतिके गर्व न होय भलाई ॥ जासु नाम है गर्व प्रहारी। सो कस गर्वहिं सकै संहारी ॥

सा०–कुल मर्यादा खोइकै, खोजिनि पद निर्वान ।
अंकुर बीज नशाइकै, भये बिदेही थान ॥ ३५ ॥

रमैनी छत्तीसवीं ३६ ॥

ज्ञानी चतुर विचच्छण लोई । एक स्यान स्यान न होई ॥ दूसर स्यानको मर्म न जाना । उत्पति परलय रैनि विहाना ॥ बानिज एक सबन मिलि ठाना । नेम धर्म संजम भगवाना ॥ हरि अस ठाकुर तज्यो न जाई । बालन भिस्ति गांव दुलहाई ॥

सा०–ते नर मरिके कहाँ गये, जिन दिन्हा गुर घोटि ।
राम नाम निज जानिकै, छाडहु बस्तू खोटि ॥ ३६ ॥

रमैनी सैतीसवीं ३७ ॥

एक सयान सयान न होई । दूसर स्यान न जानै कोई ॥ तीसर सयान सयानै खाई । चौथ सयान तहाँ लैजाई ॥ पँचये सयान न जानै कोई । छठयें महँ सब गये विगोई ॥ सतयें सयान जो जानहु भाई । लोक बेदमें देहु देखाई ॥

सा०–बीजक बतावै बित्तको, जो बित्त गुप्ता होय ।
शब्द बतावै जीवको, बूझै विरला कोय ॥ ३७ ॥

रमैनी अडतीसवीं ३८ ॥

यहि विधि कहौं कहा नहिं माना । मारग माँहि पसारिनि ताना ॥ राति दिवस मिलि जोरिनि तागा । ओटत कातत भर्म न भागा ॥ भर्मैं सब घट रह्यो समाई । भर्म

छाडि कतहूँ नहिं जाई ॥ परै न पूरि दिनौ दिन छीना। तहां जाय जहाँ अंग बिहीना ॥ जो मति आदि अन्त चलि आया। सो मति उन सब प्रगट सुनाया ॥

सा०—वहै संदेश फुर मानिकै, लीन्हो सीस चढाय।
संतो है संतोष सुख, रहहु हृदय जुडाय ॥ ३८ ॥

रमैनी उन्तालीसवी ३९ ॥

जिन्ह कलमां कलि माह पढाया। कुदरत खोज तिनहुँ नहिं पाया ॥ करमत कर्म करै करतूती। वेद किताब भया सब रीती ॥ करमत सो जो गर्भ औतरिया। करमत[1] सो निमाज गुजरिया ॥ करमत सुन्नति और जनेऊ। हिन्दू तुरुक न जानै भेऊ ॥

सा०—पानी पवन संजोयकै, रचियाई उतपात।
शून्यहि सुरति समानिया, कासों कहिये जात ॥३९॥

रमैनी चालीसवीं ४० ॥

आदम आदि सुद्धि नहिं पाई। मामा हउआ कहांते आई ॥ तब नहिं होते तुरुक औ हिन्दू। मायाके रुधिर पिताके बिन्दू ॥ तब नहिं होते गाय कसाई। तब विसमिल्लाः किन फरमाई ॥ तब नहिं रह्यो कुल औ जाती। दोजख भिश्त कहां उतपाती ॥ मन मसलेकी खबरि न जानै। मति भुलान दोइ दीन बखानै ॥

---

1 करमत सो जो नामहिं धरिया।

सा०-संयोगेका गुण रवे, बिन योगे गुण जाय ।
जिभ्या स्वादक कारणे, कीन्हे बहुत उपाय ॥ ४० ॥

रमैनी इक्तालीसवीं ४१ ॥

अम्की रासि समुद्रकी खाई । रवि ससि कोटि तैंतीसौ भाई ॥ भवँर जालमें आसन माडा । चाहत सुख दुख संग न छाडा ॥ दुखको मर्म काहु नहिं पाया । बहुत भाँतिके जग भर्मांया ( बौराया ) ॥ आपुहि बाउर आपु सयाना । हृदया बसत राम नहिं जाना ॥

सा०-तेई हरि तेइ ठाकुरा, तेई हरिके दास ।
ना जम भया ना जामनी, भामिनी चली निरास ४१

रमैनी बयालीसवीं ४२ ॥

जब हम रहल रहा नहिं कोई । हमरे मांहि रहल सब कोई ॥ कहहु हो राम कौय तोरि सेवा । सो समुझाय कहौ मोहि देवा॥फुर फुर कहउँ मारु सब कोई । झूठेहि झूठा संगति होई ॥ आंधर कहे सबे हम देखा । तहँ दिठियार बैठि मुख पेखा ॥ यहि विधि कहौ मानु जो कोई । जस मुख तस जो हृदया होई ॥ कहहिं कबीर हंस मुसकाई[1] । हमरे कहल दुष्ट बहु भाई[2] ॥ ४२ ॥

रमैनी तैतालीसवीं ॥ ४३ ॥

जिन्ह जिव कीन्ह आपु विश्वासा । नरक गये ते नरकहिं बासा ॥ आवत जात न लागहि बारा । काल

---

१ मुक्ताई । २ हमरे कलह छुठिहौ भाई ।

अहेरी साँझ सकारा ॥ चौदह विद्या पढि समुझावे। अपने मरनकी खबर न पावे ॥ जाने जिवको परा अंदेसा। झूठहि आनिके कहा संदेसा ॥ संगति छोडि करै असरारा। उब है मोट नरक कर भारा ॥ ४३ ॥

सा०—गुरु द्रोही औ मन सुखी, नारि पुरुष बिचार।
ते नर चौरासी भ्रमि है, जौलौ शशि दिनकार ॥४३॥

रमैनी चौवालीसवीं ४४ ॥

कबहुँ न भये संग औ साथा। ऐसो जन्म गँवाये हाथा ॥ बहुरि न पैहौ ऐसो थाना। साधु संग तुम नहिं पहिचाना ॥ अब तोर होइ नरकमें बासा। निसु दिन बसे लबारके पासा ॥ ४४ ॥

सा०—जात सबन कहँ देखिया, कहहिं कबीर पुकार।
चेतवा होहु तो चेतिले, दिवस परत है धार ॥ ४४ ॥

रमैनी पैंतालीसवीं ॥ ४५ ॥

हिरणाकुश रावण गौ कंसा। कृष्ण गये सुर नर मुनि बंसा ॥ ब्रह्मा गये मरम नहिं जाना। बड सब गये जो रहे सयाना ॥ समुझि परी नहिं राम कहानी। निरबक दूध कि सरबक पानी ॥ रहिगौ पंथ थकित भौ पवना। दशो दिशा उजारि भौ गवना। मीन जाल भौ ई संसारा। लोहकि नाव पषानको भारा ॥ खेवे सबै मरम नहिं जाना। तहिबो कहै रहे उतराना ॥ ४५ ॥

सा०-मछरी मुख जस केंचुवा, मुसवन मुँह गिरदान ।
सर्पन मुँह गहेजुवा, जात सबनको जान ॥ ४५ ॥

रमैनी छयालीसवीं ॥ ४६ ॥

बिनसै नाग गरुड गलि जाई । विनसै कपटी औ सतभाई ॥ विनसै पाप पुण्य जिन्ह कीन्हा । विनसै गुन निर्गुन जिन चीन्हा ॥ बिनसे अग्नि पवन औ पानी । बिनसे सृष्टि कहां लौ गानी ॥ विष्णु लोक विनसे छन माहीं । हौ देखा परलैकी छांहीं ॥ ४६ ॥

सा०-मछ रूप माया भई, यमरा खेलै अहेर ।
हरिहर ब्रह्म न ऊबरे, सुर नर मुनि केहि केर ॥४६॥

रमैनी सैंतालीसवीं ॥ ४७ ॥

जरासिंधु शिशुपाल संहारा । सहस्राजुंने छल सो मारा ॥ बड छल रावन सो गौ बीती । लंका रही कंचनकी भीती ॥ दुर्योधन अभिमानहिं गयऊ । पांडव केर मरम नहिं पयऊ ॥ मायाके दम्भ गैल सब राजा । उत्तम मध्यम बाजन बाजा ॥ छौ चकवे सब धरनि समाना । एकौ जीव परतीति न आना ॥ कहां लौ कहौं अचेते गयऊ । चेत अचेत झगर एक भयऊ ॥ ४७ ॥

सा०-ई माया जग मोहिनी, मोहिसि सब जग धाय ।
हरिचंद्र सतके कारने, घर घर गये बिकाय ॥ ४७ ॥

रमैनी अडतालीसवीं ॥ ४८ ॥

मानिक पुरहि कबीर बसेरी । महति सुनी शेख तकि केरी ॥ ऊजे सुनी जमन पुर धामा । झूसी सुनी पिरनको

नाम ॥ इकइस पीर लिखे तेहि ठामा । खतमा पढै पैग़म्बर नामा ॥ सुनी बोल मोहि रहा न जाई । देखि मुकरवा रहे भुलाई ॥ हबीब औ नबीको कामा । जहांलों अमल सो सबै हरामा ॥ ४८ ॥

सा०—शेख अकरदी शेख सकरदी, मानो बचन हमार ।
आदि अन्त औ जुगहि जुग, देखहु दृष्टि पसार ॥ ४८ ॥

रमैनी उन्चासवीं ॥ ४९ ॥

दरकी बात कहौ दर्वेसा । बादसाह है कौने भेसा ॥ कहां कूच कहां करे मुकामा । कौन सुरतिको करो सलामा ॥ मैं तोहि पूछों मुसलमाना । लाल ज़र्द कीनाना बाना ॥ काजी काज करो तुम कैसा । घर घर ज़बह करावो भैंसा ॥ बकरी मुर्ग़ी किन फ़ुरमाया । किसके कहे तुम छुरी चलाया ॥ दर्द न जाने पीर कहावे । बैता पढि पढि जग भर्मावे ॥ कह कबीर यक सय्यद कहावे । आप सरीखा जग कबुलावे ॥ ४९ ॥

सा०—दिनभर रोजा रहत है, रात हनत है गाय ।
यह खून वह बन्दगी, क्यों कर खुशी खोदाय ॥ ४९ ॥

रमैनी पचासवीं ५० ॥

कह इत मोहिं भयल जुगचारी । समझत नाहीं मोहि सुत नारी ॥ बंस आग लगी बंसै जरिया । भ्रम भुलाय नर धंधे परिया ॥ हस्तीके फन्दे हस्ती रहई । मृगीके
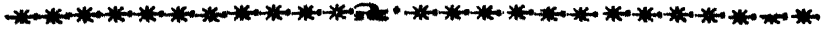
फन्दे मृगापरई ॥ लोहे लोह काटु जस आना । तियाके तत्व तिया पहिचाना ॥ ५० ॥

सा०-नारि रचंते पुरुष है, पुरुष रचंते नारि ।
पुरुषहि पुरुषा जो रचे, ते बिरले संसार ॥ ५० ॥

रमैंनी इक्यावनवीं ५१ ॥

जाकर नाम अकहुआ भाई । ताकर कहा रमैनी गाई ॥ कहेको तातपर्य है ऐसा । जस पंथी वोहित चढि बैसा ॥ है कछु रहनि गहनिकी बाता । बैठा रहै चला पुनि जाता ॥ रहै बदन नहिं स्वांग सुभाऊ । मन अस्थिर नहिं बोलै काऊ ॥ ५१ ॥

सा-तन रहते मन जात है, मन रहते तन जाय ।
तन मन एके है रहै, हंस कवीर कहाय ॥ ५१ ॥

रमैनी बावनवीं ५२ ॥

जेहि कारन शिव अजहुँ वियोगी । अंग बिभूति लायभे जोगी ॥ सेष सहस मुख पार न पावे । सो अब खसम सहित समुझावे ॥ ऐसी विधि जो मो कहँ धावे । छठयें मास दरस सो पावे ॥ कौनेहु भांति दिखाई देऊँ । गुप्तहि रहौं सुभाव सब लेऊं ॥ ५२ ॥

सा०-कहहिं कवीर पुकारिके, सबका उहै हवाल ।
कहा हमार माने नहीं, किमि छूटै भ्रमजाल ॥ ५२ ॥

रमैनी तिरपवननवीं ५३ ॥

महादेव मुनि अन्त न पाया । उमा सहित उन जन्म गंवाया ॥ उनहू ते सिद्ध साधक होई । मन निश्चै कहु केसे

कोई ॥ जब लग तनमें आहै सोई। तब लग चेत न देखो कोई ॥ तब चेतिहो जब तजिहो प्राना। भया अन्त तब मन पछताना ॥ इतना सुनत निकट चलि आई। मनके बिकार न छूटे भाई ॥

सा०—तीन[2] लोक मुआ कौआयके, छुटि न काहुकी आस।
यक अंधरे जग खाइया, सब जग भया विनास ॥ ५३ ॥

रमैनी चौवनवीं ५४ ॥

मरिगो ब्रह्मा काशीके बासी। शिव सहित मुये अविनासी ॥ मथुरा मारिगो कृष्ण गुवारा। मरि मरि गये दसो अवतारा ॥ मरि मरि गये भगति जिन ठानी। सर्गुण मां जिन निर्गुण आनी ॥

सा०—नाथ मछंदर बांचे नहीं, गोरखदत्त औ व्यास।
कहहि कबीर पुकारिके, परे कालके फांस ॥५४॥

रमैनी पचपनवीं ५५ ॥

गये राम औ गये लछमना। संग न गई सीता असधना ॥ जात कौरवन लागु न बारा। गये भोज जिन्ह साजल धारा ॥ गये पांडव कुंतीसी रानी। गये सहदेव जिन्ह बुद्धि मति ठानी ॥ सर्व सोनकी लंक बनाई (उठाई) चलत बार कछु संग न लाई ॥ कुरिया जासु अंतरिक्ष

१ उनसे सिद्ध साधक नाहिं कोई। मन निश्चय कहु कैसे होई।

२— तीन लोक मो आइके, छुटी न काहुकी आश।
यक अंधार जग खाइया, सब जग भया निराश ॥

छाई । सो हरिश्चन्द्र देखि नहिं जाई ॥ मूरख मानुष अधिक सँजोवै । अपने मुवल और लगि रोवै ॥ ई न जाने अपनो मरि जैबै । टकादश बिढै और लै खैबै ॥

सा०-अपनी अपनी करिगये, लगी न काहुकी साथ ।
अपनी करिगये रावणा, अपनी दशरथ नाथ ॥ ५५ ॥

रमैनी छप्पनवीं ५६ ॥

दिन दिन जरै जरलके पाऊ । गाड़े जाइ न उमगे काऊ ॥ कंध न देई मसखरी करई । कहु धौं कौनि भांति निस्तरई ॥ अकरम करै करमको धावै । पढि गुनि वेद जगत समुझावै ॥ छूछे परे अकारथ जाई । कहैं कबीर चित चेतहु भाई ॥ ५६ ॥

रमैनी सत्तावनवीं ५७ ॥

कृतियासूत्र लोक यक अहई।लाख पचासकी आगे कहई ॥ विद्या वेद पढै पुनि सोई । बचन कहत परतच्छै होई ॥ पहुँची[१] बात विद्याकी वेता ॥ वाहुके भर्म भयो संकेता ।

सा०-खग खोजनको तुम परे, पीछे अगम अपार ।
बिन परचे किमि जानिहौ, झूठा है हंकार ॥ ५७ ॥

रमैनी अट्ठावनवीं ५८ ॥

तै सुत मानु हमारी सेवा । तो कहँ राज देऊँ होदेवा ॥ अगम द्रिगम गढ देहुँ छुडाई । औरो बात सुनहु कछु आई ॥ उतपति परलै देउँ दिखाई । करहु राज सुख बिलसहु जाई ॥ एको बार होइहै बाँको । बहुरि जन्म

---

१ पैठी बात विद्याकी पेटा ।

न होइहै ताको ॥ जाय पाप हुइहैं सुख घाना । निश्चय बचन कबीरको माना ॥

सा०—साधु संत तेइ जना जिन, माना बचन हमार ।
आदि अंत उत्पति प्रलय, देखहु दृष्टि पसार ॥ ५८ ॥

रमैनी उनसठवीं ॥ ५९

चढत चढावत भंडहर फोरी । मन नहिं जनिको कारि चोरी ॥ चोर एक मूसल संसारा । विरला जानै कोइ बूझन हारा ॥ स्वर्ग पताल भूमि लै बारी । एकै राम सकल रखवारी ॥

सा०—पाहन ह्वै ह्वै सब गये, अन भितियनके चित्त ।
जासो किये भिताइया, सो धन भया न हित्त ॥ ५९ ॥

रमैनी साठवीं ॥ ६० ॥

छाडहु पति छाडहु लबराई । मन अभिमान टूटि तब जाई ॥ जिन्हलै चोरि जो भिच्छा खाई । सो बिरवा पलुहावन जाई ॥ पुनि संपति और पतिको धावै । सो बिरवा संसार लै आवै ॥

सा०—झूठ झूठ कै डारहू, मिथ्या यह संसार ।
तेहि कारण मैं कहत हौं, जाते होय उबार ॥ ६० ॥

रमैनी यकसठवीं ॥ ६१ ॥

धर्म कथा जो कहतै रहई । लबरी नित उठि प्रातै कहई ॥ लबरि विहाने लबरी संझा । एक लाबरि वस हिदया मांझा ॥ रामहु केर मर्म नहिं जाना । लै मति

ठानी वेद पुराना ॥ वेदहु केर कहा नहिं करई । जरतै रहै सुस्त नहिं परई ॥

सा०—गुणातीतके गावते, आपुहिं गये गमाय ।
माटी तन माटी मिलो, पवनहि पवन समाय॥६१॥

रमैनी बासठवीं ॥ ६२ ॥

जो तोहि करता बरण विचारा । जनमत तीन दण्ड अनुसारा ॥ जनमत शूद्र मुये पुनि शूद्रा । कृत्रिम जनेउ घालि जग दुंद्रा ॥ जो तुम ब्राह्मण ब्राह्मणी जाये । और राह तुम काहे न आये ॥ जो तुम तुरुक तुरुकनी जाये । पेटै काहे न सुनति कराये ॥ कारी पीरी दूहौ गाई । ताकर दूध देहु बिलगाई ॥ छाडु कपट नर अधिक सयानी । कहहि कबीर भजु शारंगपानी ॥ ६२ ॥

रमैनी तिरसठवीं ॥ ६३ ॥

नाना रूप बरण यक कीन्हा । चारि बरण वै काहु न चीन्हा ॥ नष्ट गये कर्ता नहिं चीन्हा ॥ नष्ट गये औरहिं मन दीन्हा ॥ नष्ट गये जिन वेद बखाना । बेद पढे पै भेद न जाना ॥ विमलख करै नैन नहिं सूझा । भौ अजान तब कछुव न बूझा ॥

सा०—नाना नाच नचाइके, नाचे नटके भेष ।
घटघटमें अविनाशी बसै, सुनहु तकी तुम सेष॥६३॥

रमैनी चौसठवीं ॥ ६४ ॥

काया कंचन जतन कराया । बहुत भांतिकै मन पलटाया ॥ जो सौ बार कहौं समुझाई । तहिबो धरा

छोडि नहिं जाई ॥ जनके कहे जो जन रहि जाई । नव निधि सिधि तिन्ह पाई ॥ सदा धर्म तेहि हिदया बसई । राम कसौटी कसतै रहई ॥ जोरि कसावै अन्ते जाई । सो बाउर आपुहिं बौराई ॥

सा०—ताते परी कालकी फांसी, करहु आपनो सोच ।
जहां संत तहां संत सिधावै, मिलिरहे पोचैपोच॥६४॥

रमैनी पैंसठवीं ६५ ॥

अपने गुणके औगुण कहहू । इहै अभाग तुम न बिचारहू ॥ तुम जियरा बहुते दुख पाया । जल बिनु मीन कवन सचु पाया ॥ चात्रिक जल हल भरे जो पासा । मेघ न बरसे चले उदासा ॥ स्वांग धरे भौसागर आसा । चात्रिक जल हल आसे पासा ॥ रामनाम अहै निज सारा । औरो झूठ सकल संसारा ॥ हरी उतंग तुम जात पतंगा । जम घर किये जीवको संगा ॥ किंचित है सपने निधि पाई । हिये न समाय कहँ धरे छिपाई ॥ हिय न समाय छोड़ि नहिं पारा । झूठा लोभ वै कछु न विचारा ॥ सम्रिति किन्ह आपु नहीं माना । तरिवर छर छागर है जाना ॥ जिय दुर्मति डोलै संसारा । तेहि नहिं सूझै वार न पारा ॥

सा०—अन्ध भया सब डोलई, कोइ न करै विचार ।
कहा हमार मानै नहीं, किमि छूटै भर्म जार ॥६५॥

---

१ हरिकी भक्ति जाने विना, भव बूड़ि मुआ संसार ।
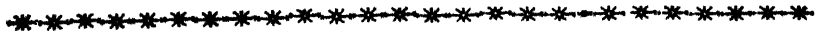
रमैनी छयासठवीं ६६ ॥

सोई हीतु बंधु मोहि भावै । जात कुमारग मारग लावै ॥ सो सयान मारग रहि जाई । करे खोज कबहूँ न भुलाई ॥ सो झूँठा जो सुतकै तजई । गुरुकी दया राम (को) भजई ॥ किंचित[1] है यह जगत् भुलाना । धन सुत देखि भया अभिमाना ॥

सा०-जियं[2] जो नेक पयान किय, मन्दिर भया उजार ।
मरे जे जियते मरि गये, बांचे बाचन हार ॥ ६६ ॥

रमैनी सढ़सठवीं ६७ ॥

देह हलाय भक्ति न होई । स्वांग धरे बहुतै नर जोई ॥ धींगा धींगी भलो न माना । जो काहू मोहि हिदय न जाना ॥ मुख किछु और हिदय कछु आना । सपनेहुं कबहूं मोहि न जाना ॥ ते दुख पावै यहि संसारा । जो चेतहु तो होय उबारा ॥ जो नर गुरुकी निंदा करई । सूकर स्वान जन्म सो धरई ॥

सा०-लखं[3] चौरसी जिव जंतु में, भटकि भटकि दुख पाव ।
कहहि कबीर जो रामहि जानै, सो मोहिनीके भाव ॥ ६७ ॥

---

१ किंचित है एक तेज भुलाना ।

२ दीन नखता किया पयाना, मंदिर भया उजार ।
मरि गया सो मरिगया, बांचे बांचन हार ॥

३ लख चौरासी योनि जिव, भटकि २ दुख पावै ।

रमैनी अडसठवीं ६८ ॥

तेहि वियोगते भयउ अनाथा । परि निकुंज बन पाव न पाथा ॥ वेदो नकल कहे जो जानै । जो समुझै सो भलो न मानै ॥ नटवत[1] विद्या खेलै जो जानै । तेहि गुणके ठाकुर भल मानै ॥ उहै जो खेलै सब घट माहीं । दूसरको कछु लेखा नाहीं ॥ भलो पोच जो अवसर आवै । कैसहुके[2] जन पूरा पावै ॥

सा०—जेकरे शर लागे हिय, सो जानेगा पीर ।
लागे तो भागे नहीं, सुख सिंधु निहारु कवीर ॥ ६८

रमैनी उनहत्तरवीं ६९ ॥

ऐसा योग न देखा भाई । भूला फिरै लिये गाफिलाई ॥ महादेवको पंथ चलावै । ऐसो बडो महंत कहावै ॥ हाट बजारे लावै तारी । कच्चे सिधन माया प्यारी ॥ कब दत्ते मावासी तोरी । कब शुकदेव तोपची जोरी ॥ कब नारद बन्दूक चलाया । व्यासदेव कब बंब बजाया ॥ करहिं लडाई मतिके मंदा । ये है अतिथि कि तरकस बंदा ॥ भये बिरक्त लोभ मन ठाना । सोना पहिरि लजावै बाना ॥ घोरा घोरी कीन्ह बटोरा । गाव पाय जस चले करोरा ॥

---

१ नटवर वन्द खेल जो जानै । ताकर गुण जो ठाकुर मानै ॥
२ कैसे कै जन पूरा पावै ।
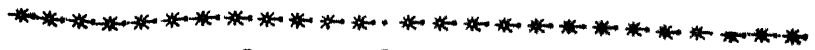
सा०—तिय सुन्दरी न सोहई, सनकादिकके साथ ।
कबहुक दाग लगावई, कारी हांडी हाथ ॥ ६९ ॥

रमैनी सत्तरवीं ७० ॥

बोलना कासो बोलिय रे भाई । बोलतही सब तत्व नशाई ॥ बोलत बोलत बाढु बिकारा । सो बोलिय जो परै विचारा ॥ मिलै जो संत वचन दुइ कहिये । मिलै असंत मौन ह्वै रहिये ॥ पंडित सो बोलिय हितकारी । मूरख सो रहिये झख मारी ॥ कहहि कबीर अध घट डोलै । पूरा होय बिचार लै बोलै ॥ ७० ॥

रमैनी इकहत्तरवीं ७१ ॥

शोक बधावा सम करि माना । ताकी बात इन्द्र नहिं जाना ॥ जटा तोरि पहिरावै सेली । योग युक्तिको गर्भ दुहेली ॥ आसन उड़ाये कौन बड़ाई । जैसे काग चीन्ह मड़राई ॥ जैसे भिस्ति तैसी है नारी । राज पाट सब गनै उजारी ॥ जस नर्क तस चंदन जाना । जस बाउर तस रहै स्याना ॥ लपसी लौंग गनै यक सारा । खांड[1] छांडि मुख फांकै छारा ॥

सा०—यही विचार विचारते, गये बुद्धि बल चित्त ।
दुई मिलि एकै होय रहा, काहि लगाऊं हित्त ॥ ७१ ॥

---

१ खांडे परी हरि फांकै छारा ।
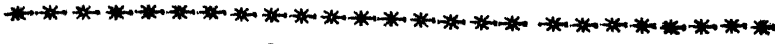
रमैनी बहत्तरवीं ॥ ७२ ॥

नारी एक संसारहिं आई । माय न वाके बापहिं जाई (बाप न जाईं) ॥ गोड न मूंड न प्राण अधारा । जामै भरमि रहा संसारा ॥ दिना सात लो वाकी सही । बुध अध बुध अचरज यक कही ॥ वाहिकि बंदन कर सब कोई । बुध अधबुध अचरज बड़ होई ॥

सा०—मूस बिलाई एक संग, कहु कैसे रहिजाय ।
अचरज एक देखो सन्तो, हस्ती सिंहहि खाय ॥७२॥

रमैनी तिहत्तरवीं ७३ ॥

चली जात देखी यक नारी । तर गागरि ऊपर पनिहारी ॥ चली जात वह बाटहिं बाटा । सोवन हारके ऊपर खाटा ॥ जाडन मरे सुपेदी सौरी । खसम न चीन्है धरनि भई बौरी ॥ सांझ सकारे दिया लै बारे । खसमहिं छाडि सुमिरे लगवारे ॥ वाहिके संग निशिदिन रांची । पियासो बात कहै नहि सांची ॥ सोवत छाडि चली पिय अपना । ई दुख अवधौं कहौं केहि सना ॥

सा०—आपनी जांघ उघारिके, अपनी कही न जाय ।
कि जाने चित आपना, की मेरो जनगाय ॥ ७३ ॥

रमैनी चौहत्तरवीं ७४ ॥

तहिया गुप्त थूल नहिं काया । ताके सोग न ताके माया ॥ कमल पत्र तरंग यक माहीं । संगहि रहै लिप्त पै नाहीं ॥ आश ओस अंडन महं रहई । अगनित अंडन

कोई कहई ॥ निराधार आधार लै जानी । रामनाम लै उचरी बानी ॥ धर्म कहै सब पानी अहई । जातीके मन बानी रहई ॥ ढोर पतंग सरे घरियारा । तेहि पानी सब करै अचारा ॥ फन्द छोडि जो बाहर होई । बहुरि पन्थ नहिं जोहै सोई ॥

सा०–भर्मक बांधल ई जगत, कोई न करै बिचार ।
हरिकी भगति जाने बिना, बूडि मुआ संसार ॥७४॥

रमैनी पचहत्तरवीं ७५ ॥

तेहि साहबके लागहु साथा । दुइ दुख मेटिके होहु सनाथा ॥ दशरथ कुल अवतरि नहिं आया । नहि लंकाके राव सताया ॥ नहिं देवकीके गर्भहिं आया । नहिं यशोदा गोद खेलाया ॥ पृथ्वी रमन दमन नहि करिया । पैठि पताल नहिं बलि छलिया ॥ नहिं बलि राय सो माडी रारी । नहिं हिरणाकुश बधल पछारी ॥ बाराह रूप धरणी नहिं धरिया । क्षत्री मारि निक्षत्र न करिया ॥ नहिं गोवर्धन कर गहि धरिया । नहिं ग्वाल संग बन २ फिरिया ॥ गंडकी सालिग्राम नहिं सीला । मत्स्य कच्छ होय नहिं जल हीला ॥ द्वारावती सरीर नहिं छाडा । लै जगन्नाथ पिंड नहिं गाडा ॥

सा०–कहहि कबीर पुकारिके, वा पन्थै मति भूल ।
जेहि राखे अनुमान करि, थूल नहीं अस्थूल ॥७५॥

रमैनी छिहत्तरवीं ७६ ॥

माया मोह कठिन संसारा। यहै विचार न काहु बिचारा॥
माया मोह कठिन है फन्दा। होय विवेकी सो जन बन्दा॥
राम नाम लै बेरा धारा। सो तौ लै संसारहि पारा॥

सा०— राम नाम अति दुर्लभै, औरे ते नहिं काम।
आदि अंत और जुग जुगै, रामहिसे संग्राम ॥७६॥

रमैनी सतहत्तरवीं ७७ ॥

एकै काल सकल संसारा। एकै नाम है जगत पियारा॥ तिया पुरुष कछु कथो न जाई। सर्व रूप जग रहा समाई॥ रूप अरूप जाय नहिं बोली। हलका गरुआ जाय न तोली॥ भूख न त्रिषा धूप नहिं छाहीं। दुख सुख रहित रहै तेहि माहीं॥

सा०—अपरम परम रूप मगुरंगी, रूप निरूपन ताहि।
बहुत ध्यानके खोजिया, नहिं तेहि संख्या आहि॥७७
अपरम परम रूप मगु रंगी, नहिं तेहि संख्या आहि।
कहहि कबीर पुकारि के, अदभुत कहिये ताहि॥

रमैनी अठहत्तरवीं ७८ ॥

मानुष जन्म चूके अपराधी। यही तन केर बहुत है उपाधी॥ तात जननि कहै हमरों बाला। स्वारथ जानि कीन्ह प्रतिपाला॥ कामिनी कहै मोर पिय आही। बाघिनि

रूप ग्रासे चाही ॥ पुत्र कलत्र रहैं लव लाई । जम्बुक नाईं रहैं मुँह बाई ॥ काग गीध दोउ मरन बिचारैं । सूकर स्वान दोउ पन्थ निहारैं ॥ अग्नि कहै मैं ई तन जारों ॥ सो न कहै जो जरत उबारौं ॥ धरती कहै मोहिं मिलि जाई । पवन कहै मैं लेउं उडाई ॥ जेहिं घरको घर कहैं गंवारं । सो वैरी है गले तुम्हारे ॥ सो तन तुम आपन कै जानी । विषय स्वरूप भूले अज्ञानी ॥

सा०-इतने तनके साझिया, जन्मो भरि दुख पाय ।
चेतत नाहीं बावरे, मोर मोर गोहराय ॥ ७८ ॥

रमैनी उन्नासिवीं ७९ ॥

बढवत बाढि घटावत छोटी । परखत खरी परखावत खोटी ॥ केतिक कहौ कहां लों कही । औरो कहौं परे जो सही ॥ कहे बिना मोहिं रहो न जाई । विरहिनि लै लै कूकुर खाई ॥

साखी-खाते खाते जुग गया, अजहुं न चेतो आय ।
कहहिं कबीर पुकारिकै,जीव अचेतै जाय ॥ ७९ ॥

रमनी आस्सिवीं ८० ॥

बहुतक साहस करि जिय अपना । सो साहेबसे भेट न सपना ॥ खरा खोट जिन नहिं परखाया । चाहत लाभ सो मूर गवांया ॥ समुझि न परे पातरी मोटी । आछी गाढी सब भौ खोटी ॥ कहहिं कबीर केहि देहौ खोरी । जब चलिहौ झिन आशा तोरी ॥ ८० ॥

रमैनी इक्यासिवीं ८१ ॥

देव चरित्र सुनौ रे भाई । सो तो ब्रह्मा घिया नसाई॥ दूजे सुनी मंदोदरि तारा । जेहि घर जेठ सदा लगवारा ॥ सुरपति जाय अहिल्यहिं छलिया । सुर गुरु घरनि चन्द्रमा हरिया ॥ कहैं कवीर हरिके गुण गाया । कुंती कारण कुंआरिहि जाया ॥ ८१ ॥

रमैनी ब्यासवीं ८२ ॥

सुखके वृच्छ एक जगत उपाया । समुझि न परी विषय कछु माया ॥ छौ छत्री पत्री जुग चारी । फल द्वै पाप पुन्न अधिकारी ॥ स्वाद अनन्त कछु बरनि न जाई । करि चरित्र सो ताहि समाई ॥ नट वट साज साजिया साजी । सो खेलै सो देखै वाजी ॥ मोहा वपुरा जुगति न देखा । शिव शकती विरंचि नहिं पेखा ॥

सा०—परदे परदे चलिगया, समुझि परी नहिं बानि ।
जो जानै सो बांचिहै, होत सकलकी हानि ॥ ८२ ॥

रमैनी तिरासीवीं ८३ ॥

छत्री करै छत्रिया धर्मा । वाके बढै सवाई कर्मा ॥ जिन्ह अवधू गुरु ज्ञान लखाया । ताकर मन तहँइं लै धाया ॥ छत्री सो जो कुटुम्ब सो जूझै । पांचों मेटि एक करि बूझै ॥ जीवहि मारि जीव प्रतिपालै । देखत जन्म आपनो घालै ॥ हालै करै निशाने घाऊ । जूझि परे तहां मनमत राऊ ॥

सा०–मनमत मरै न जीवई, जीवहि मरन न होय ।
शून्य सनेही राम बिन, चले अपन पौ खोय ॥ ८३ ॥

रमैनी चौरासिवीं ८४ ॥

ऐ जिय!आपन दुखहि संभार। जेहि दुख व्यापि रह्यो संसार ॥ माया मोह बंधा सब लोई । अल्पै लाभ मूल गौ खोई ॥ मोर तोर में सबै बिगूता । जननि उदर गर्भ महँ सूता ॥ ई बहु रूप खेलै बहु बूता । जन भौंरा अस गये बहूता ॥ उपजि विनसि फिर जोनी आवै । सुखको लेश सपनेहुं नहिं पावै । दुख संताप कष्ट बहु पावै । सो न मिला जो जरत बुझावै ॥ मोर तोरमें जर जगसारा । ध्रिग स्वारथ झूठा हंकारा ॥ झूठो आश रहा जग लागी । इन्हते भागि बहुरि पुनि आगी ॥ जे हितकै राखे सब लोई । सो सयान बाचा नहिं कोई ॥

सा०–आपु आपु चेतै नहीं, कहो तों रुसाबा होय ।
कहै कवीरजो आपु न जागे, निरास्ति अस्ति न कोय ॥ ८४

इति रमैनी मूल बीजककी संपूर्ण ॥

---

१ धृगजीवन झूठौ संसारा ।

२ आपु आप चेतै नही कहौ तौ रिसिहा होई ।
कहे कबीर सपने जगें निरस्थि आस्थि नहिं कोय ॥
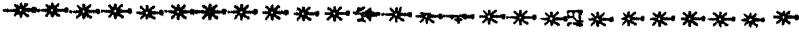
# निरख परमोधकी ।

रमैनी १ ।

अमर लोकते हम चलि आवा । तीन लोक जम लूटत पावा । जम लूटे जिवको नासै । दसौ दिसा सबहुनको फाँसै ॥ १ ॥ सुरनर असुर कोई नहिं बाँचै । बहु विधि भेष धरे घर नाचै ॥ जने तीन परपंची देवा । उनहु न जान्यो जमको भेवा ॥ २ ॥ गरभ बासमें रहे भुलाई । अगम पन्थ जानो नहिं जाई ॥ ब्रह्मा वेद पढै अधिकाई ॥ वरण चार मिलि बांध दृढाई ॥ ३ ॥ विस्नू आपन पंथ चलावा । अविगत मरम काहु नहिं पावा ॥ त्रिपुरारी आसन आरंभा । तीनों मिलकर आसन थंभा ॥ ४ ॥ सो पाखंड षटदर्शन भूले । फिर फिर जोइनि संकट झूलै ॥ करै डिंभ जो मूल गमावे । धोखेई धोखे डहकावे ॥ ५ ॥ एकन पूजे देई देवा । बोल झूठ बूडे यह खेवा ॥ एकन चण्डी मन चितलावा । स्वारथ काजे जीव हतावा ॥ ६ ॥ एकन तीरथ वरत फल ताका । कहैं बिराने आगम भाखा ॥ एक बरतकी आशा लाई । औसर हमको होइ सहाई ॥ ७ ॥ एक दान पुन सरवस देहीं जीवन जन्म सुफल करिलेहीं ॥ ऐसे करि करि सब जग बन्धा । जस संपुटमें लै कुछ रन्धा ॥ ८ ॥ कहा हमार न कोई मानै । मनुष एक हमहूँको जानै ॥ मनुष रूप होय हम दिखलावा । बहुत भाँति कर नर समुझावा ॥ तऊ न अन्ध मोहि पतियावा । धाई धाई जस उन विष

खावा ॥ ९ ॥ खसम न चीन्हे मूढ गवाँरा । हारे ठोके माथ लिलारा ॥ १० ॥ झूठ नात सबही मन माना । साँच बातकी निन्दा आना ॥ हंस होइ सो मुहि पति-आई । और न मुहि पतिआवै भाई ॥ ११ ॥ तज कुल कानि करे उजियारा । यह तो मता कालको मारा ॥ जुग जुग आऊँ कह समझाऊं । जो मानै तिहिं लोक पठाऊँ ॥ १२ ॥ अजहूं कहूं जो कोई माने । अच्छर माहिं मोहि पहिचाने ॥ जिहि घट अच्छर होय हमारा । सो ठठ खोजै आप विचारा ॥ १३ ॥ अच्छर यहमें कहूं विचारा । जो कोई बूझे आन सवारा ॥ अच्छर की प्रतीत कराई । आन उपाय छाडिदे भाई ॥ १४ ॥ अक्षर मध्ये बास हमरा । जो कोई बूझै आन सवारा ॥ आन उपाय विगानी होई । अच्छर विना न छूटे कोई ॥ १५ ॥

सा०—कहैं कबीर सब हंस से, कुल टूटे ते हंस।
तिनसे हमसे भेद नहीं, काटे जमके फंस ॥ १ ॥

रमैनी २ ।

मोर कहा कोई विरले माना । सत्यलोकको दीन पयाना ॥ सत्य लोक सत्यहिते भयउ । जुरा मरण कागज गल गयउ ॥ १६ ॥ जूरा मरण रहितघर पावा । जिन माना मोर समुझावा ॥ और न कोई समझावन हारा । और न कोई राखन हारा ॥ १७ ॥ सो का राखे आपुहि भूलै । आपुहि बानी संकट झूलै ॥ आपुहि झूलै और झुलावे । आपा

माड़ सबन डहकावै ॥ १८ ॥ हमहूँ से जो आपा माड़ै । उलट चोर कोतवाले डाँड़ै ॥ जस नट विद्या नटवे चीन्हा । रातदिवस जिव पालन कीन्हा ॥ १९ ॥ बहुतक वृछ जो लाय दिखाये । तिसके फल सब तोड चखाये ॥ काहूको सन्तोष न भयउ । खाली दिखाय और कछु लयउ ॥२०॥ अस लालच जुग जुग चलआवा । लालच आगे जीव गवाँवा ॥ अम्मर घरको कोई न धावे । करामतकी सेवा लावे ॥ २१ ॥ एक कहे संपत मैं पाई । मान बड़ाई बहुत दिढाई । एक कहै फुर शब्द हमारा । जोरे कहैं सो होय सवारा ॥ २२ ॥ इन बातन बूड़े बड़ ज्ञानी । एक कहे जो सिद्ध कहानी ॥ सिद्ध कहानी अंजुली पानी । घट छूटे की काहु न जानी ॥ २३ ॥ घटकी क्रिया रहनि रहाई । कालहुते तिनहू डहकाई ॥

सा०-बन्दिछोर मम शब्द है, काटै जमके बन्द ॥
लैराखे सतलोकमें, चले काल कटि फन्द ॥ २ ॥
ऐसे कारजको शब्द है, जो तोडै कुलकान ॥
लै राखै सतलोकमें, करै शब्द पहिचान ॥ ३ ॥
शब्द हमारा जो लहै, चलै न जमका जोर ॥
कालै मारै छय करै, हंसा पहुँचै ओर ॥ ४ ॥
सत्तलोकमें पहुँचिया, अमरित भोजन पाइ ॥
जोग जुगंतर रम रहै, कहैं कवीर समझाइ ॥ ५ ॥

रमैनी-यह दुनिया झूठे रंगराची । झूठौ उपाई करे कर नाची ॥ २४ ॥ झूठेसे परतीत कराई । ताते सृष्टी काल मुख जाई ॥ कालक काहू मरम न पावा । काल सबन मिल खसम दिठावा ॥ २५ ॥ काल रूप बरते घट मांही । काल लगन नर आवे जाहीं ॥ काल सबनपै भेष धरावै । कालक दीन सिमरफल पावै ॥ २६ ॥ सो फल चाखै रुआ उड़ावे । हाथ पिछौरे शीस डुलावै ॥ सेवा कर पंछी पछताई । ऐसै जीव काल मुख जाई ॥ २७ ॥ अस जिन जानौ पंछि भुलाना । जनम हार जग जिय पछताना ॥ शब्द हमारे जो फल होई । सो फल कालसु माँगा लोई ॥ २८ ॥ कहो काल कहाँते देई । नंगक आस धोबि का लेई ॥ ऐसे कर कर जग डहकावा । जैसे आगी वनधौं लावा ॥ २९ ॥ अस इन लोगन घर मत कीना । घरके मते अपन पौ लीना ॥ जैसे नाद सो म्रिग भुलाई । समुझे नहीं पारधि दुखदाई ॥ ३० ॥ नाद सुनाइ प्रान हत कीनौ । ऐसै काल जीव हत कीनौ ॥ ज्यों जल मध्ये मीन रहाई । निसवासर अपनौ भछ खाई ॥ ३१ ॥ तहाँ पारधी बंसी लाई । गेंडुआ चार तहाँ लटकाई ॥ मीन न जाने कहाँ ते आवा । लालच लागे जीव गवाँवा ॥ ३२ ॥ पतंग न चीन्है जोत को अहई । यहौ न जान यह मोहिं दहई ॥ जो तो जानै तऊ न डरई । बिन जाने वह नास जो करई ॥ ३३ ॥ स्वानको स्वान

कहाँते आवा। भूसि भूसि उन जीव गवाँवा ॥अपनी प्रतिमा देखि डराना। ऐसे भरम भरमि पछताना ॥ ३४ ॥ कहा केहरिको केहर कीनो। केहर जाइ कूप जिय दीनौ ॥ ताको किनहु विचार न कीनो। यह विचार कोइ ज्ञानी चीनौ ॥ ३५ ॥ यह अच्छर चीन्हहु रे भाई। हिन्दू तुरुकसे कहुँ समझाई ॥ छाडै नहीं तीरथ वरत आसा ॥ पाप पुन्नको कीनी नासा ॥ ३६ ॥ छोडै नहिं गृह दार सुयारी। शबद छाड़ भये अलप अहारी ॥ छाड राज पाहन सिर नायो। छाडिनि तोशः हम कछु न चलायो ॥ ३७ ॥ औंधूको सतगुर कर जाना ॥ अंधाके मन औंधू माना ॥ प्रथम कहैं सुत आसन कीजे। मन पवनाको बस कर लीजे ॥३६॥ अनहद नाद रहै भरपूरी। अब हमते शंसै गो दूरी ॥ इंगला पिंगला सुषमन जागी। दसौ द्वार तब तारी लागी ॥३७॥ दीपक रूप निरंजन देखा ।जोत सरूप निरंजन पेखा ॥ घटही मांहि निरंजय पाया। कहैं जु आवागमन मिटाया ॥३८॥ एक कहैं हम अम्मर भयऊ। एक कहैं हम पच्छहि लयेऊ॥ ऐसी बाजी काल दिखावे। प्रान पयान काम नहीं आवे ॥३९॥ यह मिल औंधू सबहन सीका। अगम पंथको कहैं जो फीका॥ कालके फंद पडे सबलोई। साची कहौं न मानै कोई ॥ ४० ॥ सांचे मरन न काहू पावा। कालक फंदा जग डहकवा॥ वेद कितेब फंद यक

कीना । जैसै कीर जाल बुन लीना ॥४१ ॥ तेहि फंद अटके सब कोई । हम चीन्हे बिन बड दुख होई ॥ ऐसो फंद जुग जुग चलि आवा । सेवक स्वामी सब डहकावा ॥ ४२ ॥ कालै धौ परपंच बनाये । ये परपंच न काहू पाये ॥ तेहिते बचिके बाहिर आये । हुए निनार सो हंस कहाये ॥ ४३ ॥ हंस होइ बहुतै सुख पावा । जोनी संकट बहुरि न आवा ॥ हंस चाल चलै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥४४॥ चाल बिना लागै बड बारा । तहवां नाहीं दोष हमारा ॥ यही बात कहै समझाई । तेई हंसको धोख छुडाई ॥ ४५ ॥

सा०-कहत कवीर हंसनते, धरमराइको लूट ॥
अमरको निहचल करौं, भवजल जाई छूट ॥ ६ ॥

रमैनी-जीव काजको हम चलि आये । आइ देसको मंझा पाये ॥ मंझा लीना देस हम आई । राजा खोट अनीत तहांई ॥ ४६ ॥ रईयत कर कर मार उजारी । ऊँचेते नीचे लै डारी ॥ नीचे डारे सब संसारा । हमरे शब्द बिनु नाहि सहारा ॥ ४७ ॥ सेवा करै जस मोलक लीनौ । सहस आस उन विनती कीनौ ॥ उहिको पच्छ करै जो कोई ॥ सोच विचार रहै पुन सोई ॥ ४८ ॥ रहै दुचित वह चैन न लेई । जस घरही मार घरही बध देई ॥ हाथक दीना खाइ अधीना । बाकी अटक रहै लौलीना ॥ ४९ ॥ अस जिव काम किये मन ऐई ।

जस पकड बहलिया दुख देई ॥ जो भावै सो करै विचारा। ऐसै काल जगत यह मारा ॥ ५० ॥ तेई कालको मरम न पावा। सेवा संजम बहुत दिढावा ॥ छोडे गिरह परिवार घनेरा । कह सो गुरू भला कर मेरा ॥५१॥ कहौ गुरू कहवाँते आवा। कहो गुरू कोनै समझावा ॥ इतनी बूझ न करै अधीना। फटी आँख न कहैं हम चीन्हा ॥ ५२ ॥ घरे गुरु घरही घर चेला । जैसे उढरू चलै अपेला ॥ कान न करै कहो नहीं मानै। जहँ जहँ रुचै तहँ तहँ तानै ॥ ५३ ॥ अस विचार इन सब मिल कीना। झूठे खसमहिं सरबस दीना ॥ कोई कहै राम कोइ रहमाना । ब्रह्मज्ञानी एकके जाना ॥ ५४ ॥ ब्रह्मज्ञान बाँचे नहीं कोई। पानी मिलै कौन सिधि होई ॥ वाको सुख यह कैसे पावै। यह बैठे वह खाइ उडावै ॥ ५५ ॥

साखी—ऐसे डूबे षट दरशन, और सकल संसार।
कविरा हमरे शब्द बिनु, कोइ न पावै पार ॥७॥

रमैनी—लोग कहैं हमही होय स्याना। साँच कहौं कोई नहीं माना ॥ काम झरै कन्द्रप नित झरई। ताको कोइ विचार न करई ॥५५॥ कंदरप यह निकस उपजाना। ताको विरही छटी बखाना ॥ जेहि पिता पुत्रको पालै। जीवन जनम सुफल कर जानें ॥ कहैं हमारौ आगौ चलिहै ॥ चीन्है नहीं कालको बलि है ॥ ५६ ॥

साखी-तैसहिं सुता दिढावै, अपने वसीठ चलान ॥
दान दहेज दे कर जोरै, कहूं कि उन सरमान ॥ ८॥

रमैनी-कहु कौनसी कर यहु आवै । ताको सब मिल माथ नवावै ॥ रहौ पछताई काल धर खावा । जनम जनम पाछे पछतावा ॥ ५८ ॥

सा०-मानैशब्द बंदि जम छूटै, बाते सुनत भयान ।
कहँ कबीर नर भोदू, लोके वेद भुलान ॥९॥

रमैनी-छाड़हु लाज और छाडहु बडाई । छाडहु झूठ जो कथा चलाई ॥ छाडहु पाखंड छाडहु भेषा । छाडहु सब पापनका लेषा ॥ ५९ ॥ छाडहु तीरथ वरत फल भाई । तजौ जोग आतम समझाई ॥ तजौ आसन जो बैठक दीना । छाडहु सुन्न सिखर मन चीना ॥ ६० ॥ चीन्हों जस हम जो चिन्हावैं । अमर करैं सतलोक पठावैं । सुन्न सिखरमें धरम अन्याई। तिह डहकेको शकति पठाई ॥ ६१ ॥ माता बहनी भनजी होई ॥ मिहरि सुता हुइ बैठी सोई ॥ औरो कुल बहु भांत बनाई । वरन चारमें सब डहकाई ॥ ६२ ॥ जोगियन तपियन अपडर कीना । भाज भाज उन बनखंड लीना॥ तिनको खनि खनि कंद खवाये । गिरह दारा सुखसबै छुटावे ॥ ६३ ॥ एक जनम भर मिथ्या खोवै । एक जो गुफाके माहीं सोवै ॥ एक जोग जग उदासी फिरई । मन मथ जोग प्रान हत करई ॥ ६४ ॥ एक नगन हुइ

आपु दिखावे । चौहटे नट जस पसू नचावे ॥ ऐसै तीनों लोक नचावे । धरम रायको मरम न पावे ॥ ६५ ॥ धरम अहै परपंची देवा । उनहू कीन अमलको भेवा ॥ सकती लै परपंच बनाये । जुग जुग जीव सबै डहकाये ॥ ६६ ॥ वेद कितेब फंद एक कीनो । मन बच करम सबै जुग लीनौ ॥ वेदहि रच रच ग्रंथि जु दीना । वेद विचारे परे न चीन्हा ॥ ६७ ॥ तिन ग्रंथिन अटके सब कोई । तिनते छुटत बडो दुख होई ॥ तिन ग्रंथिनते जोरे छुटाऊँ । करि अमर सतलोक पठाऊँ ॥ ६८ ॥ अच्छर कहै सो कीजे भाई । हंस होइ सतलोकै जाई ॥ पांच दूत यहि तनमें जाना । यह तौ धरम राइका बाना ॥ ६९ ॥ पर-धन त्रिया क्रोध विकारो । लोभ मोह तिशनाको जारो ॥ पांच पचीसको संग्रह छूटै । धरमराइको जम कुल लूटै ॥ ७० ॥ सत शब्दमैं डोर समावे । रहनि गहनि सत-लोकै पावे ॥ बिनु रहनी कछु काज न होई । बिन गहनी सतलोक न कोई ॥ ७१ ॥

साखी–कह कवीर निरमलहोय, काट करमके फंद ॥
अमरलोक निहचल भये, जुग जुग करै अनन्द ॥ १० ॥

इति निरख प्रबोधकी रमैनी सम्पूर्ण शुभम् ।

# अथ ज्ञानचौंतीसा प्रारंभः ।

कक्का-केता कहे कबीर, कहा कोई नहिं माने । कायामें करतार, नाहिं कोई पहिंचाने । कर्म बन्ध संसार, काल सों नाहिं बचन है । अरे हाँ अवधू ! काम क्रोध हंकार, कल्पना कठिन है ॥ १ ॥

खख्खा-खारी सो कह खाँड; खाँड खारी विधि लेखै । खरे खोटको न्याव, नहीं हिरदय विवेखै ॥ खोरिन खोरिन फिरै, खाक मुख लायके। अरे हाँ अवधू ! खसम परो न चीन्हि, रहे खिसियायके ॥ २ ॥

गग्गा-ग्यान सोई निज सार, जाही सो थिर भया । कर्मको टूटयो फन्द, द्वन्द्व सब खिरगया ॥ ग्यानी कथै अगाध, रहै हिया फेर फारके । अरे हाँ अवधू ! गाडि रख्यो बातनको, लेगौ चोर उखारिके ॥ ३ ॥

घग्घा-घटमें आतम राम, मिलो साहब सना । घरमें प्रेम निधान, चेत मेरे मना ॥ जहाँ नहीं घाम नहिं छाहँ, तहां इन घर करा । अरे हाँ अवधू ! घरकी सुरत विसार, घसीटनमें परा ॥ ४ ॥

ङङा-( नन्ना ) नयन विना नर अंध, द्वन्द्व धोखा धरा । सूझे वार न पार, प्रान परबस परा ॥ नितकै संशय शूल, मूल विसराइया । अरे हाँ अवधू ! नहीं भयो निरशंक, मुक्ति किन पाइया ॥ ५ ॥

चच्चा–चले जात नर नष्ट, चौरासी धारमें । बिन चीन्हे यहि चले, परे भौभारमें ॥ चतुर बिचच्छन होइ कहो कहँवाँ लगे । अरे हाँ अवधू ! पडे चोरके हाथ, चीन्हि नाहीं भगे ॥ ६ ॥

छच्छा–छल व्यवहारके धोखा छाडहू । काम क्रोध अहंकार कि, लोभ निवारहू । क्षमा शील सन्तोष, सत्य हियमा धरो । अरे हाँ अवधू ! परख, बोलता ब्रह्म चीन्ह ताको करो ॥ ७ ॥

जज्जा–जग जीवन जगदीस, जगत गुरु जीवहै । जाने जान सुजान, सोई निज पीव है ॥ खोजो जो नव खण्ड, भेद निज कहि दिया । अरे हाँ अवधू ! जुग जुग अविचल जीव, कबीर गुरु कहि दिया ॥ ८ ॥

झझ्झा–झूठ झगरा छोडु, द्वन्द्वमें कहा परो । झलक मनी उजियार, निकट हियमें धरो ॥ झाड पातको छोड, सार निज ताय ले । अरे हाँ अवधू ! कहा झखे मतिहीन, परम गुन गायले ॥ ९ ॥

नन्ना–नाह छोडि नरा, नार चली है जारपै । पियाकी सुरत बिसार, तो आशिक यारपै ॥ नीच बुद्धि मतिहीन, नहीं स्वारथ भयो । अरे हाँ अवधू ! जार बसे हिय माँहिं, नरक ताते गयो ॥ १० ॥

टट्टा–टीडी भया जहान, उडा असमान कूँ । हटा नेह निदान, चला घमसानकूँ ॥ टाराही नहिं टरे, भरम

धोखा परा । अरे हाँ अवधू! कठिन, टेक मनमें धरी, तार टूटिया मरा ॥ ११ ॥

ठट्ठा-है ठोरेके ठोरे, दूर धोखा भया । ठोकै सबहिं कपाल, गुसैयाँ कित गया ॥ ठठके बेडा बांधि, पार कोई ना तरा। अरे हाँ अवधू ! ठाकुर, बिसराय, काम ठगसों परा ॥ १२ ॥

डड्डा-डसे भुवंगम चोर, बिरह विष बाढिया । डसे जो चतुर सुजान, विरहमें ढारिया ॥ डार पातकूँ छोडि, सिपत सबहिन किया । अरे हाँ अवधू ! डंड बाजके हाथ, प्रान अपना दिया ॥ १३ ॥

ढड्ढा-ढोल मारि गुरु कहै, सबन सों टेरिके । ढूंढे सरग पताल, थके सब हेरिके ॥ कहँ ढूँढे मतिहीन, कहाँ भटकत फिरे अरे हाँ अवधू ! ढिगही परमानन्द, चीन्हि नाहीं परे ॥ १४ ॥

णण्णा-नन्ना निरगुन निरंकार, निरञ्जन सब जपे । नहिं रूप नहि रेख, ताहीको सब थपे ॥ जहां नहीं तहाँ सही, सही तहाँ नाहिं किया। अरे हाँ अवधू ! नर अज्ञानी असल मिटाय, नकल सिर पर लिया ॥ १५

तत्ता-तत्त्व यही निज सार, और कछु ना मिले । तुही तुही निज तुही, हिरदामें देखले ॥ तिरखावन्त पुनि साधु, तलफ जाकी धरे । अरे हाँ अवधू ! सो बोले घट माहिं, और ले क्या करे ॥ १६ ॥

थथ्था—थकित भये नर नारि, सो ढूंढे ना मिले। थिर होय
लखै न आप, अहंमें सब गले॥ जहाँ अति अगम
अथाह, तहाँ थाह नहीं चले। अरे हाँ अवधू!
थित बिन थँभै कौन, बहे भौमें भले॥ १७॥
दद्दा—दूसर कोई नाहिं, द्वन्द्वमें कहाँ परो। दया धर्म सत
शील, साधु सेवा करो॥ दिलकी दुविधा छाडि,
काम एता किया। अरे हाँ अवधू! दिव्य दृष्टिसे
देख, दरस दिलमें लिया॥ १८॥
धध्धा—धन्य धन्य सो भाग, जाही परतीत है। यही
ध्यान धनसार, और विपरीत है॥ धावे सकल
जहान, धोखामें सब परे। अरे हाँ अवधू! चहुँ
दिस दुंद बहाल, सून्नकूँ सब चले॥ १९॥
नन्ना—निरख देख निज नैन, आपमें आप है। निरभय
धजा निशान, अगर फहरात है॥ निसा मान
भरपूर, परम सुख पाइहो॥अरे हाँ अवधू! निसि
वासरको सोग, सबै बिसराइ हो॥ २०॥
पप्पा--पप्पा पूरण ब्रह्म है; प्रेमते और न कोई। काया
बीर कबीर, परम गुरु निहचे सोई॥ पत्थर पूजे
प्रेत, पार किन पाइया। अरे हाँ अवधू! पैडा
परो न चीन्ह, मूल जहँडाइया॥ २१॥
फफ्फा--फल लागे बड दूर, बीज बकला विना। कौन
खवावे तोर, फहम अकला विना॥ फिरते रहे
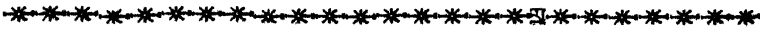
वव्वा–वाही की परतीत, वाहि विन और न कोई । वो सबके सिरताज, काज वासे सहि होई ॥ वह नहिं आवे जाय, सबन सो भिन्न है । अरे हाँ अवधू । ऐसी अकल विवेक, सबन मिलि किन्ह है ॥२८॥

सस्सा–संसय भयो अथाह, सासत जिवको भई । इहां मिलनको नाहिं, सिपत सबहिन कही ॥ सिद्ध साधु संसार, सबै सुमिरन करै । अरे हाँ अवधू ! सुकृत पडे न चीह्न, नहीं संसै टरै ॥ २९ ॥

षष्षा–षोजो खोजी होय, षोज नाहीं मिलै । खोजी खोज सिरी न, कहो तुम कहाँ चले ॥ जहाँ मिलनकी मौज, खोज तहाँ ना किया । अरे हाँ अवधू ! खायो मूल गँवार, खसम दिल ना दिया ॥ ३१ ॥

सस्सा–सत्य सुकृत सतनाम, सबनमें सांच है । सत रूप जगमाहिं, तो मनसा बाच है । संशय टारन भयहरन, सब कल निधि है सही । अरे हाँ अवधू ! जो पूछो सो कही, अब का कही॥३२॥

हहा–हाजिर सो हजूर, गाफिली दूर है । हिरदा कमलमें हंस, सजीवन मूर है ॥ हँसे हँसावे आप, सबनमें सोइ है । अरे हाँ अवधू ! हितकर देख विचार, वचन यह सोइ है ॥ ३३ ॥

छंछा–छल जो गया सब छूट, महा आनन्द भया । मिटी जो जमका त्रास, छत्र सिरपर धरा ॥ छाप सतकी

पड़ी काज पूरन भया । अरे हाँ अवधू ! कहे कबीर विचार, बिछड मिलना भया ॥ ३४ ॥

सा०-शीलवन्त सुजन जन, हिरदे प्रेम प्रकास ।
सत्य टेक शब्दे गहे, सोजन सदा निवास ॥

इति चौतीसा पहला ।

---

अथ दूसरा चौतीसा प्रारम्भः २ ॥

कक्का-काया कुंज करमकी बारी, कर्ता बाग लगाया ।
किनका तामे अजर समाना, बिन बेली पलुहाया॥
पांच पचीस फूल तहँ फूले, मन अलि तहाँ लुभाना । वा फूलनके लपट विषयरस, रमता राम भुलाना ॥

सा०-मनभवंरा यह कठिन है, विषय लहर लपटाय ।
ताहि संग रमता बहे, फिर फिर भटका खाय॥ १॥

खख्खा-खलककी खबर नहीं, ख्वाब ख्यालमें भूला ॥
खाना दाना जोडा घोडा, देख जवानी फूला ॥
खासा पलंग सेज बनि तोशक, तकिया फूल बिछाया । नवल नार ले तापर पौढे, काम लहर उमड़ाया ॥

सा०-लागी नारि पियारि जब, छुटा धनीसों नेह ।
काल जबै ले ग्रासई, खाक होयगी देह ॥ २ ॥

गग्गा-गुरु कीजे निरख परख के, ज्ञान रहनका पूरा ।
गर्भ गुमान मदन मद त्यागी, दया क्षमा सत-

सूरा ॥ गैल बतावै अमर लोककी, गावै सतगुरु बानी ॥ मन गज सिर अंकुश दे बैठे; गुरू ग्यान मल तानी ॥

सा०—पाप पुन्यकी आशा नाहीं, करम भरमसों न्यार।
किरतम पाखंड परिहरे, अस गुरु करो विचार ३॥

घग्घा—घन गुरु ज्ञान बिना अँधियारा, मोह तिमिर तन छाया। सार असार बिचारे नाहीं, अमी छोडि विष खाया ॥ घरका घृत रेतेमें डारे, छाछ ढूंढता डोले। कञ्चन देके काच बिसाहे, हर विगराना तौले ॥

सा०—ज्ञान बिना नर अंध है, अंध कर्म मत हीन।
सांच गहै नहिं परखिके, झूठेके आधीन ॥४॥

ङवां—ङन मत मानों संतो, गहो परमारथ बानी। उपजै सुख तब हिये तुम्हारे, जब परखो मम बानी ॥ ऊँच नीच कछु है नहीं, कर्म कहावै छोटा। जिसके करनी अन्दर नाहीं, सोई माल है खोटा॥

सा०—ऊपर माला जटा जनेऊ, माथे तिलक सुहाय।
संसै सोग घटभीतर, अंदर मैल रहाय ॥ ५ ॥

चच्चा—चित चेतो चतुर चिकनियाँ, चैन कहा तुम सोया। चतुराई सबभार परैगी, जन्म अकारथ खोया॥ चौथा पन तेरा आय लगा, अजहुँ चेत गुरु ज्ञानी। नहिं तो परिहो खो   धियारे, फिर पाछे पछतानी ॥

सा०-ऐसे पाटन आयके, सौदा करो बनाय ।
जो चूकौ या जन्मसे, तो दुख भुगतो जाय ॥६॥

छछ्छा-छल बल छिनमें निकसि जायगा, जब छेकै जम आई। छट पट करे मरे विष ज्वाला, तब कहु कौन सहाई ॥ जमके मुगदर सिरपर बाजे, तब करिहौ किलकारी । तात मात भ्राता सुत सज्जन, काम न आवै नारी ॥

सा०-छूटी सकल सगाई, भया चोरका हाल ।
संगी सब न्यारा रहे, आप परे मुख काल ॥७॥

जज्जा-जमके पाले जबै परै जिव, तब कछु बात न आवे। तहां कछु चालै नाहीं, सीस धुनी पछ-तावै ॥ जम ले पहुँचे चित्रगुपित पहँ लिखनी लेख बिचारे । दयाहीन गुरु बेमुख ढाढे, अगि-नकुण्डमें डारे ॥

सा०-जन्म सहस अजगर देवे, विषज्वाला अकुलाय।
पीछे क्रिमि विष्ठा माँही, भूत खान परजाय ॥ ८॥

झझ्झा-झाखन झूखन छांड़ो, झमकि करो गुरु सेवा। झांई मनकी दूर बहावो, परख शब्द गुरु देवा ॥ झगरा झूठ झाई जग त्यागो, झपट भजो सत नामा। झीन करो मन मेरु मन्दिरमें, गुरु पद पँकज विश्रामा ॥

सा०-होइ अधीन गुरु चरन गहो, कपट भाव कर दूर ।
ज्यों पतिव्रता पति गही, तकै न दूसर कूर ॥ ९ ॥

झञ्भा–इश्क बिना मिले नहिं साहब, केतो भेख बनावे। इश्क मुश्क न छिपै छिपाये, के तो कोइ छिपावे ॥ इत उत यहाँ उहां सब त्यागो, निहचे गहो गुरु शरना । याहीसे हो दुख नसै, मिटै जनम औ मरना ॥

सा०–आदि नाम है जा हिये, सोई गुरु है सार ।
क्रीतमको जो ध्यावई, सोई भव लगै न पार ॥१०॥

टट्टा–टीम टाम बाहर बहुतेरा, दिल दासीसे बंधा । संख धुन लेकरे आरती, छुटा न घरका धंधा ॥ टिकुली सेंदुर चरखा पूनी, दासीने फुरमाया । कच्चे बच्चेने मांग मिठाई, मगन भये तब लाया ॥

सा०–जिन सेवक पूजा दई, ताहि दई आसीस ।
जहाँ नहिं तहां टेढे भये, कहै भसम करो जगदीस॥११॥

ठट्ठा–ठग बहुतेरे भेष बनावे, गले लगावे फांसी । स्वांग बनाये कौन नफाहै, जो न भजै अविनासी॥ठोकर सहे गुरूके आगे, ठीक ठौर तब पावे। ठकठक मेटे जरा मरणका, जमके हाथ न आवे ॥

सा०–मृतक होय गुरुचरण गहे, ठसक करे सब दूर ।
कायर ते नहिं भगति होय, ठानि रहै कोई सूर ॥१२॥

डड्डा–डगमगसे कछु काज न सरिहै, अडिग नाम गुण गहिये। डर मेटे तब विषम कालको, अछै अमर पद लहिये ॥ डरते रहिये गुरू साधुसे, डिंभ

काम नहिं आवे। डिंभ डुबावे भवसागरमें, जनम मरन दुख पावे ॥

सा०-डेढ दिनाको जीवना डारो कुबुध नसाय।
डेरा पावो सत्तलोकमें, सतगुरु शब्दसमाय ॥१३॥

ढद्धा-ढूंढत फिरौ तुम कौनकूँ, ढूँढे सो ढिगनेरे। ढोल मारके सबै चिताऊँ, सतगुरु शब्द निबेरे ॥ है तू कौन कहाँसे आया, कहवाँ निजघर तेरा। केहि कारन तुम भरमत डोडौ, तन तज कहाँ बसेरा ॥

सा०-को रक्षक है जीवका, गहो ताहि पहिचान।
रक्षकके चीन्हे बिना, अन्त होयगी हान ॥ १४॥

णण्णा-गुणातीत निर्गुण अविनासी, दयानिधि सुखसागर। निश्चल ठौर निरंतर बासा, नाम अनादि उजागर॥ निर्मल अमी क्रांति छबि अद्बुद, अकह अजावन सोई। नख सिख नाभि नैन मुख नासा, श्रवण चिकुर सम होई ॥

सा०-चिकुरनके उजियारमें, कोटिन बिधु सरमाय।
कहा क्रांत छबि वरनो,बरणत बरनि न जाय १५

तत्ता-ताहि पुरुषके अंस जीव है, धर्मराय ठगि राखा। तारन तरन आप कहलावे,वेद शास्त्र अबिलाखा ॥ तत्त प्रकृति त्रिगुन तन बंधा,नीर पवनकी बारी। धर्मराय यह रचना कीन्ही, जहां जीव बैठारी॥

सा०—जीवहिं लाग ठगौरी, भूले आपन देस।
सुमिरन करहीं कालका, भुगते कष्टकलेस॥ १६॥

थथ्था—थकित भया जिव भरमत डोलै, चौरासीके माहीं। नाना कष्ट जन्म त्रास जो व्यापै, जरे मरे पछताहीं॥ थाह न पावै बिपत कष्टको, बूडै संसै धारा। भौसागरके विषम लहर है, सूझै वार न पारा॥

सा०—बिकल परे अघ जोयनेमें, बहुविधि करे पुकार।
सतगुरु शब्द चीन्हे बिना, कैसे उतरे पार॥१७॥

ददा—दुंद वाद है बहुत देहमें, परचे तहां न पावै। नर तन धर सो साहब सुमिरे, तो जम निकट न आवै दरस कराऊँ सत्त पुरुषका, देह हिरंमर पैहो। सुख सागर सुख बिलसो हंसा, भौजल बहुर न ऐहो॥

सा०—ऐसा सुख घर छाड़के आगे दुखका भार।
भर्मवस जिव भेद न जानै, लखै न शब्द हमार १८॥

धध्धा—धर्म धर्म कर सबै पुकारै, धर्महिं चीन्ह न पावै। धर्मराय तिहुँ लोकहिं ग्रासे, जीवत बाँध झुलावै॥ धोखा दे सबको मारे, सुरनर मुनि नहिं बाँचे। नर बपुरा की कौन चलाये, तन धरधर सब नाचे॥

सा०—भक्षक कला दिखायके, पुनि धरि रक्षक भाय।
रक्षक जान जपै जिव, पुनितेहि भक्ष कराय॥ १९॥

ननना-निरभै नाम लौ लावे, नकल चीन्ह पर त्यागो ।
नाद विन्दते न्यारा कहिये, सुरत सोहंगम पागो ॥
निराधार निहतत्त निह अच्छर, निह संसै निहकामी
निःस्वादी निर्मल अविगत, निहचिंत सुखधामी ॥

सा०-नामसनेही चेतोहो, भाषो घर को डोर । परखो
गुरुगम सुरतसे, चलो त्रिन जम तोर ॥ २० ॥

पप्पा-पाप पुन्यमें जग अरुझाने, पार कौन बिधि पावे ।
पाप पुन्य भुगते नर धर धर, फिर फिर जम
लेजावे ॥ प्रेम भक्ति परमातम पूजा, परमारथ
चित धारे । पावन जन्म परम पद पावे,
पारख शब्द विचारे ॥

सा०-प्रीतम बिरह वियोग जेहि, परिहरि कपट कुचाल ।
पिउपिउ रटन लगावो, पाँव परे तेहि काल ॥२१॥

फफ्फा-फरामोसकर फिकर, फहम करो दिल माहीं ।
परफुल्लित संतन गुनगावो, जमतेहि देख डराहीं ॥
फाजिल सो जो आपा मेटे, फना होय गुन
गावै । फांसी काटे करन भरमकी, जमके
हाथ न आवै ॥

सा०-फेरफेर नर भर्म बस, भर्महि भटका खाय ।
तीरथ बरत लगी जिव भरमें, उस्सर प्यास न जाय ॥२२॥

बब्बा-ब्रह्म बसत सरब भूत में, दुनिया भाव न होई ।
बर्त्तमान चित चेतत नाहीं, भूत भविष्य बिलोई ॥

बड़ेबड़े विषम बुद्धि लागे, बोलनहार न जोवे।
ब्रह्म दुखित कर पाहन पूजे, बरबस आप बिगोवे॥
सा०—बंध परे नर कालके, बुद्धि ठगाई जान।
बंध छुडा बाहर चलूं, मोहि गहो पहिचान॥ २३॥
भभ्मा—भार परे यह देश बिगाना, भवसागर औगाहा।
भगत अभगत दोऊ कह बोरे, कोई न पावे थाहा॥ भक्षकने लीला बिस्तारी, कला अनेक दिखावे। भक्षकको रक्षक कर थापे, रक्षक चीन्ह न पावे॥
सा०—भछे जाहि सो भक्षक, रक्षक रहे निनार।
परम चक्रमें परे जिव, लखे न शब्द हमार॥२४॥
मम्मा—मन मैंगल मस्त दिवाना, जीवहि उभट चलावे।
अकरम करम करै मन आपै, पीछे जिव दुख पावे॥
मोह बस जिव मन नहिं चीन्हे, जाने यह सुखदाई। मार लगे जब मन होय न्यारा, नरक परे जिव जाई॥
सा०—मन गज अगुवा कालको, परखो संत सुजान।
अंकुस सतगुरु ज्ञान है, मन मतंग भय मान॥२५॥
जज्जा—जो जिव सतगुरु शब्द समावे, तो जम होवे चेरा।
जुगत जुगत कर मनको जीतो, सहजे होय निवेरा॥ जहँ लग काल जाल विस्तारी, सो सब मनकी बाजी। मनहिं निरंजन राजा कहिये, मन पंडित मन काजी।

सा०—गुरु प्रताप भये जोर जिव, निबल भया मन चोर ।
तस्कर लाग न पावई, जो गढपति करै अंजोर ॥२६॥

ररा—रहनी रहै रजनी नहिं चंपे, रमे सतगुरु बानी ।
रहनी बाती जीत उजियारे, जाते होय न हानी ॥
रमता राम काम कर अपना, सपना सब संसारा ।
रार रोस तजि सतगुरु सेवो, जासे उतरो पारा ॥

सा०—रैन दिवस वा घर नहीं, पुरुष प्रकास अंजोर ।
ले राखूँ तेहि ठाँव जिव, जहाँ न झंपै चोर ॥ २७ ॥

लल्ला—लगन लगी जेहि गुरु चरणों, लच्छ प्रगट तेहि ऐसे । लगन लगी तब मगन भया मन, लोक लाज कुल कैसे ॥ लाग रहे गुरु सुरत परेखे, निज स्वारथ नहीं सूझै । लागे ठोकर पीठ न देवे, सूरा सन्मुख जूझै ॥

सा०—लागे लहर ललक मन बुधकी, निकट न आवे ताहि ।
लोटे गुरु चरणन तरे, गुरु सनेह हिय जाहि ॥२८॥

वव्वा—वाके निकट काल नहिं आवे, जो सतनाम समाना ।
वार पारको संसै नाहीं, वाहीसो मन माना ॥
वासिल बाकी काल बली की, ताही हाथ बिकाना ।
वारिसकूँ सौंपा दिल अपना, सबही दुन्द्र समाना ॥

सा०—वाहीसों जिव इश्क लगावे, वाजिब सखुन अजूब ।
वाबद एक करो बन्दगी, गहो पाक महबूब ॥२९॥

सस्सा—सहर चोर घन घोर करे निसि, सोवै सब घर-
वारी । सोर न करै भर्म बस सोवै, लागी विषम
खुमारी ॥ साहबसे फेरा दिल अपना, दुनियां
बीच बँधाया । ससुरा साला साली सासू, समधी
सुजन सुहाया ॥

सा०—सतगुरु शब्द पुकारई, समुझि गहै कोइ सूर ।
सुमिरि लीजो समरथको, जाना है बडदूर ॥ ३०

षष्षा—षलक तजै षलक मन रोचै, नर षोये जात सब
कामा । षबर नहीं घर षर्चं षुटाना; चेतो रमता
रामा ॥ षोल कपाट चितचेतो अजहूँ, वाहिदसे
लो लावो । ष्वाब ष्याल कर दूर दिवाना; हिरदे
नाम समावो ॥

सा०—षालभरी है वायु सों; षाली होत न वार ।
षेम परे जेहि काममें, सो करु बेगि विचार ॥ ३१ ॥

सस्सा—सहज शील संतोष धीरधर, ज्ञान विवेक बिचारो ।
दया छमा सत संगत सेवा, सतगुरु शब्द अधारो ॥
सुमरण कर सत्त नाम धनीको, सूरा तन गहि
रहना । सुमिरो अरि अँजोर परे तब, मनके संग
न बहना ॥

सा०—सैन कही समुझै कोई, रहनी रहै सो सार ।
कहन तरे तो जग तरे, कहनि रहनि बिन छार ॥ ३२ ॥

हहहा-हिया माहिं सतनाम समाना, दया मिहर दिल जाना । हरिके मने बिन तरा न कोई, हरिसे लोक अजाना ॥ हरि बिनुस हरि अजर अमर है, हरिमें हरिको बूझै । हाजर छोड़ बुत्तको पूजे, हद कर नाहीं बूझै ॥

सा०-हम हमार घर छाड़िके, हक्क राह पहिचान ।
हासिल होय मकसद तब, हाफिन अमल अमान ॥२३॥

छच्छा-छैल चिकनिया भयाघनेरा, छाका फिरै दिवाना । छय होय जाय अमर नहिं कोई, आखिरको पछिताना ॥ छर मध्ये निःअच्छर बूझे, समझे गुरु गम धावे । छरमें निःअच्छर जो जाने, निःअच्छर तब पावे ॥

सा०-निच्छर गहै विवेक करि, बावन अच्छर भिन्न ।
कहै कबीर धर्मदाससे, विरला कोई चिह्न ॥ २४ ॥

इति ज्ञान-चौंतीसा—कबीर साहबका सम्पूर्ण ॥

---

## अथ चौंतीसा प्रारंभः ॥

( बीजकका )

प्रथम ओंकार ॥

ॐ ओंकार-आदिहि जो जानै । लिखके मेटि ताहि फिरि मानै ॥ ओंकार कहै सब कोई । जिनहु लखा सो बिरले होई ॥ १ ॥

चौंतीसा ॥

कका–कमल किरणिमें पावै । शशि बिगसित संपुट नहिं जावै ॥ तहां कुसुंभ रंग जो पावै । औगह गहिके गगन रहावै ॥ १ ॥

खखा–खख्खा चाहै खोरि मनावै । खसमहिं छोडि दशहू दिशि धावै ॥ खसमहिं छोडि छमा ह्वै रहई । होइ अखीन अक्षय पद लहई ॥ २ ॥

गगा–गग्गा गुरुके बचनै मानै । दूसर शब्द करें नहिं कानै ॥ तहां बिहंगम कतहुं न जाई । अवगह गहिके गगन रहाई ॥ ३ ॥

घघा–घघ्घा घट विनशे घट होई । घटहीमें घट राखु समोई ॥ जो घट घटै घटै फिरि आवे । घटही माहिं फिर घटहि समावे ॥ ४ ॥

ङङा–नन्ना निरखत निशिदिन जाई । निरखत नैन रहत रतनाई ॥ निमिष एकलौ तिरखै पावे । ताहि निमिषमें नैन छिपावे ॥ ५ ॥

चचा–चच्चा चित्ररच्यो बहु भारी । चित्र छोडि तू चेतु चित्रकारी ॥ जिनयह चित्र विचित्र उखेला । चित्र छोडि तू चेतु चितेला ॥ ६ ॥

छछा–छच्छा आहि छत्र पति पासा। छंकि किन रहै छोडि

१ छकिके रहउ मेटि सब आसा ।
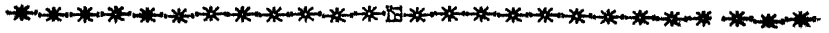
सब आसा ॥ मैं तोहि क्षण क्षण समुझाया । खसम छोडि कस आपु बंधाया ॥ ७ ॥

जजा–जज्जा ई तन जियतहि जारो । जोबन जारि युगति जो पारो ॥ घटहीं ज्योति उजियारी करे । जो कछु जानि जानि पर जरे ॥ ८ ॥

झझा–झझ्झा अरुझि सरुझि कित जाना । हीढत ढूंढत जाय पराना ॥ कोटि सुमेरु ढूंढि फिरि आवे । जो गढ गढ़ा गढ़हि सो पावे ॥ ९ ॥

ञञा–नन्ना निर्खत नगर सनेहू । आपन करु निरुवार संदेहू ॥ नहिं देखो नहिं आप भजाऊ । जहां नहीं तहं तन मन लाऊ ॥ १० ॥

टटा–टट्टा विकट बाट मन माहीं । खोलि कपाट महलमें जाहीं ॥ रहे लटपटे जूटि तेहि माहीं । होहिं अटल तेहि कतहुं न जाहीं ॥ ११ ॥

ठठा–ठट्ठा ठौर दूरि ठग नीरे । नितके निठुर कीन्ह मन धीरे ॥ जेहि ठग ठगे सब लोग स्याना । सो ठग चीन्हि ठौर पहिचाना ॥ १२ ॥

डडा–डड्डा डर कीन्हे डर होई । डरहीमें डर राखु

१ जो कछु युगति जानि तन जरै ।
घटही ज्योति उजियारी करै ॥

समोई ॥ जो डर डरै डरै फिरि आवे। डरहिमें पुनि डरहि समावे ॥ १३ ॥

ढढा–ढढ्ढा ढूंढत ई कित जाना। हीडत ढूढँत जाय पराना ॥ कोटि सुमेर ढूंढ फिरि आवे। जेहि ढूंढा सो कतहुँ न पावे ॥ १४ ॥

णणा–नन्ना दुई बसाये गाऊं। रेनन्ना ढूंढे तेरा नाऊ ॥ मुये एक जाय तजि घना। मरे इत्यादिक केते गना ॥ १५ ॥

तता–तत्ता अति त्रियो नहिं जाये। तन त्रिभुवनमें राखु छिपाये ॥ जो तन त्रिभुवन माहिं छपावे। तत्वहि मिले तत्व सो पावे ॥ १६ ॥

थथा–थथ्था थाह थह्यो नहिं जाई। इह थोरे वह थीर रहाई ॥ थोरे थोरे थिर होहु रे भाई। बिनु थम्भे जस मंदिल थंभाई ॥ १७ ॥

ददा–दद्दा देखहु बिनशनिहारा। जस देखौ तस करौ विचारा ॥ दशौ द्वारमें तारी लावे। तब दयालको दर्शन पावे ॥ १८ ॥

धधा–धध्धा अर्ध माहि उजियारी। अर्धहि छाड ऊर्ध मन तारी ॥ अर्ध छोडि ऊर्ध मन लावे। आपा मेटिके प्रेम बढावे ॥ १९ ॥

नना–नन्ना वो चौथे महजाई। रामके गदहा हो खर खाई ॥

नाह छोड़ किय नर्क बसेरा । नीच अजौं चित चेतु सवेरा ॥ २० ॥

पपा–पप्पा पाप करे सब कोई । पापके करे धर्म नहिं होई ॥ पप्पा कहै सुनहु रे भाई । हमरेसे ये कछू न पाई ॥ २१ ॥

फफा–फफ्फा फल लागो बड दूरी । चाखे सतगुरु देइँ न तूरी ॥ फफ्फा कहै सुनहुरे भाई । स्वर्ग पतालकी खबरि न पाई ॥ २२ ॥

बबा–बब्बा बर बर कर सब कोई । बर बर किये काज नहिं होई ॥ बब्बा–बात करे अरथाई । फलके मरम न जानेहु भाई ॥ २३ ॥

भभा–भभ्भा भर्म रहा भरि पूरी । भभरे ते है नियरे दूरी ॥ भभ्भा कहै सुनौ रे भाई । भभरे आवे भभरे जाई ॥ २४ ॥

ममा–मम्मा सेये मर्म न पाई । हमरे ते इन्ह मूल गंवाई ॥ मम्मा मूल गहल मन माना । मर्मी होय सो मर्महिं जाना ॥ २५ ॥

यया–जगत रहा भर पूरी । जगतहु ते जज्जा है दूरी ॥ जज्जा कहै सुनौ रे भाई । हमरेसे ये जय जय पाई २६

ररा–ररां रारि रहा अरुझाई । राम कहे दुख दारिद जाई ॥ ररां कहै सुनौरे भाई । सतगुरु पूछिके सेवहु जाई ॥ २७ ॥

लला–लल्ला लुतरे बात जनाई। लुतरे पावै परचै पाई॥ अपना लुतुर और को कहई। एकै खेत दुनौ निर्बहई॥ २८॥

ववा–वव्वा वह वह कह सब कोई। वह वह कहे काज नहिं होई॥ वह तौ कहै सुनै नहिं कोई। सरग पताल न देखे जोई॥ २९॥

शशा–सस्सा सर नहिं देखै कोई। सर सीतलता एकै होई॥ सस्सा कहै सुनौ रे भाई। सून्य समान चला जग जाई॥ ३०॥

षषा–षष्षा षरा कहे सब कोई। षर षर कहै काज नहिं होई॥ षष्षा कहै सुनहु रे भाई। राम नाम ले जाहु पराई॥ ३१॥

ससा–सस्सा सरा रच्यो वरियाई। सर बेधे सब लोग तवाई॥ सस्साके घर सुन गुन होई। इतनी बात न जाने कोई॥ ३२॥

हहा–हह्हा हाय हायमें सब जग जाई। हरष सोक सब मांहि समाई॥ हकरि हकरि सब बड बड गयऊ॥ हह्हा मर्म न काहू पयऊ॥ ३३॥

क्षक्षा–छच्छा छण प्रलय मिटि जाई। छेव परे तब को

समुझाई ॥ छेव परे कोउ अन्त न पाया । कह कबीर अगमन गोहराया ॥ ३४ ॥

इति चौतीसा बीजकका सम्पूर्ण ॥

---

# अथ विप्रमतीसी प्रारम्भः ॥

सुनहु सबन मिलि विप्र मनीसी । हरि विनु बूड़ी नाव भरीसी ॥ १ ॥ ब्राह्मण होयके ब्रह्म न जानै । घरमें जग्य प्रतिग्रह आनै ॥ २ ॥ जो सिरजा तेहि नहिं पहिचानै । करम भरम लै बैठि बखानै ॥ ३ ॥ ग्रहण अमावस सायर पूजा । स्वातिके पात परहिं जनि दूजा ॥ ४ ॥ प्रेत कर्म मुख अंतर बासा । आहुति सहित होमकी आसा ॥५॥ कुल उत्तम कुल माहि कहावे । फिरि फिरि मध्यम कर्म करावे ॥ ६ ॥ करम अशुचि उछिष्ट खाहीं । मति भरिष्ट जमलोकहिं जाहीं ॥ ७ ॥ सुत दारा मिलि जूठा खाहीं । हरि भगतनकी छूत कराहीं ॥ ८ ॥ नहाय खोरि उत्तम है आवे । विष्णुभक्त देखें दुख पावे ॥ ९ ॥ स्वारथ लागि रहे वे आढा । नाम लेत जस पावक डाढा ॥ १० ॥ राम किस्नकी छोडिन आसा । पढि गुनिभे किरतिमके दासा ॥११॥ करम करहि करमहिको धावे । जो पूछे तेहि करम दृढावे ॥ १२ ॥ निःकरमीकी निंदा करई । कर्म करे ताही चित धरई ॥ १३ ॥ अस

हिय भगति भगवतको लावे । हिरणाकुसको पंथ चलावै ॥ १४ ॥ देखहु कुमति नरक प्रकासा । विनु लखि अंतर कृत्रिमदासा ॥ १५ ॥ जाके पूजे पाप न ऊडै । नाम सुमिरते भवमे बूडै ॥ १६ ॥ पाप पुण्यके हाथहि पासा । मारि जगत जग कीन विनासा ॥ १७॥ वे बहनी दोउ बहनी न छाडै । वह गृह जारै वह गृह माडै ॥ १८ ॥ बैठे ते घर साहु कहावै ॥ भितर भेद मन मुखहि लगावै ॥ १९ ॥ ऐसी विधि सुर विप्र भनीजे । नामलेत पंचासन दीजे ॥ २० ॥ बूड़ि गये नहिं आपु सवाँरा । ऊँच नीच कहु काहि जोहारा ॥ २१ ॥ ऊंच नीच है मध्यम बानी । एकै सबन एक है पानी ॥ २२॥ एकै मटिया एक कुम्हारा । एकै पवनको सिरजन हारा ॥ २३ ॥ एकै चाक बहु चित्र बनाया । नाद बिंदुके बीच समाया ॥ २४ ॥ व्यापी एक सकलमें जोती । नाम धरेका कहिये मोती ॥ २५ ॥ राच्छस करनी देव कहावे । वाद करे भव पार न पावे ॥ २६ ॥ हंस देह तजि न्यारा होई । ताकी जात कहै धौं कोई ॥ २७ ॥ स्वेद सपेद कि राता पियरा । अवरन बरन कि ताता सियरा ॥ २८ ॥ हिंदू तुरुक कि बूढा बारा । नारि पुरुष मिलि करहु बिचारा ॥ २९ ॥ कहिय काहि कहा नहिं माना । दास कबीर सोई पहिचाना ॥ ३० ॥

सा०-बहिया है बहिजात है, कर गहि ऐंचहु ओर ।
समझाय समझे नहीं, दे धका दुई ओर ॥१॥
इति विप्रमतीसी बीजककी ।

---

कहारा. १

सहज ध्यान रहु सहज ध्यान रहु, गुरुके वचन समाई हो॥मेली सृष्टि चरा चित राखहु, रहौ दृष्टि लौलाई हो॥ जस दुख देखि रहहु यहि औसर, अस सुख होई है पाई हो ॥ जो खुटकार बेगि नहिं लागे, हृदय निवारहु कोऊ हो ॥ भुगतिकी डोरी गाढि जनि खैंचहु, तब बझिहैं बड रोहू हो ॥ मनुवहि कहहु रहहु मन मारे, खिजुवा खीजि न बोले हो॥ मानु मीत मिताई न छोडे, कबहूं गांठि न खोले हो॥ भोगउ भोग मुक्ति जनि भूलहु, जोग जुगति तन साधहु हो ॥ जो यह भांति करहु मतबलिया ता मतके चित बांधहु हो॥ नहिं तो ठाकुर है अति दारुन करिहै चाल कुचाली हो॥ बांधि मारि डंड सब लेही, छूटहि तब मतवाली हो ॥ जबही सावंत आनि पहुँचे, पीठ सांठि भल टुटिहै हो ॥ ठाढे लोग कुटुम सब देखे, कहे काहुके न छुटि हैं हो ॥ एक तो निहुरि पांव परि विनवे, विनतिकिये नहिं माने हो॥ अनचीन्हे रहेहु न कियेहु चिन्हारी, सो कैसे पहिचनबेउ हो॥ लीन्ह बुलाय बात नहिं पूछी, केवट गरब तन बोले हो॥ जाकर गांठि समर कछु नाहीं, सो निर्ध-

नियां है डोले हो ॥ जिन्ह सम युक्ति अगमनके राखिन, धरिन मच्छ भरि डेहरिहो ॥ जेकर हाथ पांव कछु नाहीं, धरन लाग तेहि सो हरि हो ॥ पेलना अछत पेलि चलु बौरे, तीर तीर का टोवहु हो ॥ उथले रहहु परहु जनि गहिरे, मति हाथहुकी खोवहु हो ॥ तरके घाम उपरके भूँभुरि, छाहँ कतहुँ नहिं पायहु हो ॥ ऐसनि जानि पसीझेहु सीझेहु, कस न छतुरिया छायहु हो ॥ जो कछु खेल कियहु सो कीयेहू, बहुरि खेल कस होई हो ॥ सासु ननद दोऊ देत उलाटन, रहहु लाज मुख गोई हो ॥ गुरु भौ ढील गोन भई लचपच, कहा न मानेहु मोरा हो ॥ ताजी तुर्की कबहुँ न साधेहु, चढेहु काठको घोरा हो॥ ताल झांझभल बाजत आवे, कहरा सब कोइ नाचे हो॥ जेहि रंग दुलहा ब्याहन आये, दुलहिनि तेहिरंग राचे हो॥ नौका अछत खेवे नहिं जाने, कैसेक लगवेहु तीरा हो ॥ कहहिं कबीर रामरस माते, जोलहा दास कबीरा हो१॥

कहरा २.

मत सुनु मानिक मत सुनु मानिक, हृदय बंदनिवारहु हो ॥ अटपट कुम्हरा करे कुम्हरैया, चमरा गांव न बांचे हो ॥ नित उठि कोरिया पेट भरतु है, छिपिया आंगन नाचे हो ॥ नित उठि नौवा नाव चढतु है, बेरहि बेरा बोरेहो ॥ राउरकी कछु खबरि न जानहु, कैसेके झगरा निबेरहु हो ॥ एक गांवमें पांच तरुनि बसै, जेहि

मा जेठ जेठानी हो ॥ आपन आपन झगरा प्रकासिनि, पियासों प्रीति नसाइनि हो ॥ भैंसिन मांहिं रहत नित बकुला, तिकुला ताकि न लीन्हा हो ॥ गाइन माहिं बसेउ नहिं कबहूँ, कैसे पद पहिचनबेउ हो ॥ पंथी पंथ बूझ नहिं लीन्हा, मूढहिं मूढ गंवारा हो ॥ घाट छोड़ि कस औघट रेंगहु, कैसेके लगबेहु तीरा हो ॥ जतइनके धन हेरिन ललचिन, कोदइतके मन दौरा हो ॥ दुइ चकरी जनि दरर पसारहु, तब पैहो ठीक ठौरा हो ॥ प्रेम बाण एक सतगुरु दीन्हा, गाढां तीर कमाना हो ॥ दास कबीर कीन्ह यह कहरा, महरा मांहि समाना हो॥२॥

कहरा ३.

रामनामको सेवहु बीरा, दूरि नहिं दुरि आसा हो ॥ और देवका सेवहु बौरे, ई सब झूठी आसा हो ॥ ऊपर ऊज्जरका भौ बौरे, भीतर अजहूं कारो हो ॥ तनके वृद्ध का भौ बौरे, मनुवा अजहूं बारो हो ॥ मुखते दांत गये का बौरे, भीतर दांत लोहेके हो ॥ फिर फिर चना चबाव विषयके, काम क्रोध मद लोभके हो ॥ तनकी सकल वासना घटि गयऊ, मनहिं दिलासा दूना हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, सकल सयानपऊना हो॥३॥

कहरा ४.

ओढन मोर राम नाम, मैं रामहिका बनजारा हो ॥ राम नामका करहुँ बनिजिया, हरि मोर हटवारा हो ॥

सहस नामका करों पसारा, दिन दिन होत सवाई हो ॥ जाके देव वेद पछ राखा, ताके होत हटवाई हो ॥ कानि तराजू सेर तिन पउवा, तुर्किनि ढोल बजाई हो ॥ सेर पसेरी पूरा कैले, पासंग कतहुँ न जाई हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, जोर चला जहंडाई हो ॥ ४ ॥

कहरा ५.

राम नाम भजु राम नाम भजु, चेति देखु मनमांहीं हो ॥ लच्छ करोरि जोरि धन गाडें, चलत डोलावत बांही हो ॥ दादा बाबा और प्रपाजा, जिनके यह भुइँ भाँडे हो ॥ आँधर भये हियहुकी फूटी, तिन्ह काहे सब छाँडे हो ॥ ई संसार असारको धंधा, अन्तकाल कोइ नाहीं हो ॥ उपजत बिनसत बार न लागे, ज्यों बादरकी छांहीं हो ॥ नात गोत कुल कुटुंब सब, इन्हकर कौन बड़ाई हो ॥ कहहिं कबीर एक राम भजे बिनु, बूडी सब चतुराई हो ॥ ५ ॥

कहरा ६.

राम नाम बिनु राम नाम बिनु, मिथ्या जन्म गमाई हो ॥ सेमर सेइ सुवा ज्यों जहँडे, ऊन परे पछिताई हो ॥ जैसे मदपी गांठी अर्थ दे, घरहुकी अकिल गमाई हो ॥ स्वादे उदर भरे धौं कैसे, ओसै प्यास न जाई हो ॥ द्रव्यहीन जैसे पुरुषारथ, मनही मांहि तवाँई हो ॥ गांठि रतन मरम नहिं जाने, पारख लीन्हा छोरी हो ॥ कहहिं कबीर यह औसर बीते, रतन न मिले बहोरी हो ॥ ६ ॥
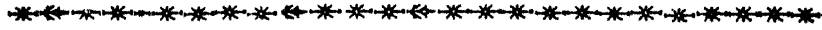
कहरा ७.

रहहु संभारे राम विचारे, कहता हौं जे पुकारे हो ॥ मूंड मुंडाय फूलिके बैठे, मुद्रा पहिर मंजूसा हो ॥ तेहि ऊपर कछु छार लपेटे, भितर भितर घर मूसा हो ॥ गांव बसतु है गरब भारती, बाम काम हंकारा हो ॥ मोहन जहां तहां ले जइहैं, नहिं पत रहल तुम्हारा हो ॥ मांझ मंझरिया बसे सो जाने, जन होइ है सो थोरा हो ॥ निर्भय भये तहां गुरूकी नगरिया, सुख सोवें दास कवीरा हो ॥ ७ ॥

कहरा ८.

क्षेम कुसल औ सही सलामत, कहहु कौनको दीन्हा हो ॥ आवत जात दोऊ विधि लूटे, सरवस हरि लीन्हा हो ॥ सुर नर मुनि जति पीर औलिया, मीरा पैदा कीन्हा हो ॥ कहां लों गनो अनंत कोटि लों, सकल पयाना कीन्हा हो ॥ पानी पवन अकाश जायँगे, चंद्र जायँगे सूरा हो ॥ येभी जायँगे वोभी जायँगे, परत न काहुके पूरा हो ॥ कुशल कहत कहत जग बिनसे, कुशल कालकी फांसी हो ॥ कहैं कवीर सारि दुनिया बिनसे, रहै राम अविनासी हो ॥ ८ ॥

कहरा ९.

ऐसनि देह निरालप बौरे, मुवले छुवे नहिं कोई हो ॥ डंडवाकी डोरिया तोरिया तोरि लराइनि, जो कोटिन

धन होई हो ॥ ऊर्ध निस्वासा उपजि तरासा, कहरा इनि परिवारा हो ॥ जो कोई आवे बेगि चलावे, पल एक रहन न पाई हो ॥ चन्दन चीर चतुर सब लेपें, गरे गजमुकताकी हारा हो ॥ चौंसठ गीध मुये तन लूटैं, जंबु कन उदर बिदारा हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, ज्ञानहीन मतिहीना हो॥ इक इक दिना याहि गति सबकी, कहा राव कह दीना हो ॥ ९ ॥

कहरा १०.

हौं सबहिनमें हौंना हो, मोहि बिलग बिलग बिलगाई हो ॥ ओढ़न मोरा एक पिछोरा, लोग बोलैं एकताई हो ॥ एक निरंतर अन्तर नाहीं, ज्यों ससि घटजल झांई हो ॥ एक समान कोई समुझत नाहीं, जाते जरा मरण भ्रम जाई हो ॥ रैन दिवस ये तहवाँ नाहीं, नारि पुरुष समताई हो ॥ हौं मैं बालक बूढो नाहीं, ना मोरे चिलकाई हो ॥ त्रिविधि रहों संभनिमा बरतों, नाम मोर रमुराई हो ॥ पठये न जाऊँ आने नहिं आवों, सहज रहों बुनियाई हो ॥ जोलहा तान बान नहिं जाने, फाटि बिने दश ठाई हो ॥ गुरु परताप जिन्हें जस भाख्यो, जन बिरलै सों पाई हो ॥ अनंत कोटि मन हीरा बेधा, फिटको मोल न पाई हो ॥ सुर नर मुनि जाके खोज परे हैं, कछु कछु कबिरन पाई हो ॥ १० ॥
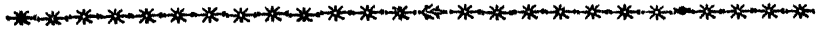
कहरा ११.

ननदीगेतैं विषम सोहागिनि, तैं निदले संसारा गे ॥ आवत देखी एक संग सूती, तैं औ खसम हमारा गे ॥ मोरे बापके दुइ मेहररुवा, मैं अरु मोर जेठानी गे ॥ जब हम रहलि रसिकके जगमें, तबहिं बात जग जानी गे ॥ माइ मोरि मुवलि पिताके संगे, सरा रचि मुवल संघाती गे ॥ आपुहि मुवलि और ले मुवली, लोग कुटम संग साथी गे ॥ जौं लौं स्वास रहे घट भीतर, तौ लौं कुशल परिहै गे॥ कहहिं कबीर जब श्वास निकरि गौ, मंदिर अनल जरिहै गे ॥ ११ ॥

कहरा १२.

ई माया रघुनाथकी बौरी, खेलन चली अहेरा हो ॥ चतुर चिकनिया चुनि चुनि मारे, कोइ न राखेउ न्यारा हो ॥ मौनी बीर दिगंबर मारे, ध्यान धरंते जोगी हो ॥ जंगलमेके जंगम मारे, माया किनहुं न भोगी हो ॥ वेद पढंते वेदुवा मारे, पूजा करंते स्वामी हो ॥ अर्थ विचारत पंडित मारे, बांधेउ सकल लगामी हो ॥ सिंगीऋषि वन भीतर मारे, शिर ब्रह्माका फोरी हो ॥ नाथ मछंदर चले पीठिदे, सिंघलहूमें बोरी हो ॥ साकटक घर कर्ता धरता, हरिभक्ताते चेरी हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, ज्यों आवे त्यों फेरी हो ॥ १२ ॥

इति कहरा बीजकका सम्पूर्ण ।

# अथ चाचरि प्रारंभः ।

### चाचरि पहिला १ ॥

खेलति माया मोहनी, जेर कियो संसार ।
कटि केहरि गज गामिनी, संशय कियो सिंगार ॥ १ ॥
रचे रंगकी चूनरी, सुन्दरि पहिरै आय ।
शोभा अद्भुत रूपकी, महिमा बरनि न जाय ॥ २ ॥
चन्द्र बदनी मृगलोचनी, बिंदुक दियो उघालि ।
यती सती सब मोहिया, गज गति वाकी चालि ॥ ३ ॥
नारदके मुख मोडिके, लीन्हो बदन छिपाय ।
गरब गहेली गरबते, उलटि चली मुसकाय ॥ ४ ॥
शिव अरु ब्रह्मा दौरिके, दोनों पकड़े धाय ।
फगुआ लीन छिनायके, बहुरि दियो छिटकाय ॥ ५ ॥
अनहद धुनि बाजा बजै, सरवन सुनत भो चाव ।
खेलनिहारी खेलि है, जैसी वाकी दाव ॥ ६ ॥
ज्ञानढाल आगे दियो, टारे टरत न पांव ।
खेलनिहारी खेलि है, बहुरि न ऐसो दाव ॥ ७ ॥
सुर नर मुनि भू देवता, गोरख दत्ता व्यास ।
सनक सनन्दन हारिया, औरक केतिक आस ॥ ८ ॥
छिलकत थोथे प्रेम सो, धरि पिचकारी गात ।
करि लीनो बस आपने, फिरि फिरि चितवतजात ॥ ९ ॥

ज्ञान गाडलै रोपिया, तिरगुन लिये है हाथ ।
शिवसन ब्रह्मा लीनिया, और लिये सबसाथ ॥ १० ॥
एक ओर सुर नर मुनि खडे , एक अकेली आप ।
दृष्टिपरे छोडै नहीं, करि लिय एकै छाप ॥ ११ ॥
जेते थे तेते लियो, घूंघट मांहि समाय ।
कज्जल वाके रेख है, अदग्ग न कोई जाय ॥ १२ ॥
इन्द्र कृष्ण द्वारे खडे, लोचन निज ललचाय ।
कहै कबीर ते ऊबरे, जाहि न मोह समाय ॥ १३ ॥

चाचरि दूसरी २ ॥

जारो जगको नेहरा, मन बौरा हो ।
जामें सोग संताप, समुझ मन बौरा हो ॥ १ ॥
तन धनसो क्या गरब, समुझ मन बौराहो ॥
भसम किरमोको साज, मन बौरा हो ॥ २ ॥
विना नेवका देवघरा, मन बौरा हो ॥
विन कहगिलकै ईंट, समुझ मन बौराहो ॥ ३ ॥
काल बूतकी हस्तिनी, मन बौरा हो ॥
चित्र रच्यो जगदीस, समुझ मन बौरा हो ॥ ४ ॥
काम अंध गज बस परैं, मन बौरा हो ।
अंकुस सहिया सीस, समुझ मन बौरा हो ॥ ५ ॥
मर्कट मूठी स्वादकी, मन बौरा हो ।
लीन्हो भुजा पसारि, समुझ मन बौरा हो ॥ ६ ॥
छूटनकी संशय परी, मन बौरा हो ॥
घर घर खायो डांग, समुझ मन बौरा हो ॥ ७ ॥

ऊंच नीच जानै नहीं, मन बौरा हो ॥
घर घर नाचेउ द्वार, समुझ मन बौरा हो ॥ ८ ॥
ज्यों सुवना नलनी गह्यो, मन बौरा हो ।
ऐसो भरम विचार, समुझ मन बौरा हो ॥ ९ ॥
पढे गुनेका कीजिय, मन बौरा हो ।
अन्त बिलैया खाय, समुझ मन बौरा हो ॥ १० ॥
सूने घरका पाहुना, मन बौरा हो ।
ज्यों आवे त्यों जाय, समुझ मन बौराहो ॥ ११ ॥
नहानेको तीरथ घना, मन बौरा हो ।
पूजनको बहु देव, समुझ मन बौरा हो ॥ १२ ॥
बिनु पानी नल बूडिया, मन बौरा हो ।
टेकेउ राम जहाज, समुझ मन बौरा हो ॥ १३ ॥
कहहि कबीर जग भरमिया, मन बौरा हो ।
छोड़ हरिको सेव, समुझ मन बौरा हो ॥ १४

इति चाचरि समाप्तम् ।

---

## अथ बेलि प्रारंभः ।

### प्रथम बेलि ।

हंसा सरवर शरिर हो रमैया राम । जागत चोर घर मूसल हो रमैया राम ॥ १ ॥ जो जागे सो भागे हो रमैया राम । सोवत गैल बिगोय हो रमैया राम ॥ २ ॥ आजं बसेरा नियरे हो रमैया राम । काल्ह बसेरा दूरि हो

रमैया राम ॥ ३ ॥ परेहु बिराने देश हो रमैया राम। नैन मरेंगे ढूंढ हो रमैया राम ॥ ४ ॥ त्रास मथन दधि मथन कियो हो रमैया राम । भवन मथ्यो भर पूरि हो रमैया राम ॥ ५ ॥ हंसा पाहन भैल हो रमैया राम । बेधिनि पद निर्वाण हो रमैया राम ॥ ६ ॥ तुम हंसा मन माणिक हो रमैया राम। हटल न मानेहु मोर हो रमैया राम ॥ ७॥ जसरे कियो तस पायो हो रमैया राम। हमर दोष जनि देहु हो रमैया राम ॥ ८ ॥ अगम काटि गम कीन्हो हो रमैया राम । सहज कियो व्योपार हो रमैया राम ॥ ९ ॥ राम नाम धन बानिजहु हो रमैया राम । लादहु बस्तु अमोल हो रमैया राम ॥ १० ॥ पांच लदनवा लादि चले हो रमैया राम। नौ बहिया दश गौन हो रमैया राम ॥११॥ पांच लदनुआ खांगि परे हो रमैया राम । खाखरि डारिन खोर हो रमैया राम ॥ १२ ॥ शिर धुनि हंसा उड़ि चले हो रमैया राम। सरवर मीत जोहारि हो रमैया राम ॥ १३ ॥ आगि लगी सरवरमें हो रमैया राम। सरवर जरि भौ छार हो रमैया राम ॥ १४ ॥ कहैं कवीर सुनु संत हो रमैया राम। परखि लेहु खर खोट हो रमैया राम ॥ १५ ॥

बेलि दूसरी २ ॥

भल सुस्मृति जहँडायहु हो रमैया राम । धोखा कियो विसवास हो रमैया राम ॥ १ ॥सोतो है बंसी कसि हो रमैया राम । सिरकै लियो विसवास हो रमैया

राम ॥ २ ॥ ई तो है वेद सास्त्र हो रमैया राम ॥ गुरु दीन्हो मोहिं थापि हो रमैया राम ॥ ३ ॥ गोबर कोट उठायहु हो रमैया राम । परि हारि जैहो खेत हो रमैया राम ॥ ४ ॥ बुद्धिबल तहां न पहुंचै हो रमैया राम । खोज कहांते होय हो रमैया राम ॥ ५ ॥ सुनिमन धीरज भैल हो रमैया राम । मन बढि रहल लजाय हो रमैया राम॥ ६॥ फिर पाछे जनि हेरो हो रमैया राम। काल बूत सब आय हो रमैया राम॥ कह कवीर सुनु संत हो रमैया राम । मति ढिगहि फैलाहु हो रमैया राम ॥ ७॥

## अथ बिरहुली प्रारम्भः ।

आदि अन्त नहिं होत बिरहुली । नहिं जड़ पल्लव पेड बिरहुली ॥ १ ॥ निसि बासर नहिं होत बिरहुली । पानी पवन न होत बिरहुली ॥ २ ॥ ब्रह्मादि सनकादि बिरहुली । कथि गये जोग अपार बिरहुली ॥ ३ ॥ मास अषाढहि शीत बिरहुली । बोइन सातौ बीज बिरहुली॥ नित गोडै नित सिंचै बिरहुली । नित नव पल्लव पेड़ बिरहुली ॥५॥ छिछिल बिरहुली छिछिल बिरहुली। छिछिल रहल तिहुँलोक बिरहुली ॥ ६ ॥ फुल यक भल फुलल बिरहुली । फूलि रहल संसार बिरहुली । ७॥ ते फुल बन्दै भगत बिरहुली । बांधिके राउर जाय बिरहुली ॥ ८ ॥ सो फुल लोढहिं संत बिरहुली । डसि गौ बैतल सांप बिरहुली ॥९॥ विषहर मंत्र न मान बिरहुली ।

गाडुर बोले और विरहुली ॥ १० ॥ विषकी क्यारी बोयो विरहुली । अब लोरत का पछिताय विरहुली ॥ ११ ॥ जनम जनम अवतरेउ विरहुली । फल यक कनइल डार विरहुली ॥ १२ ॥ कह कवीर सचु पाय विरहुली । जो फल चाखहु मोर विरहुली ॥ १३ ॥

## अथ हिंडोला प्रारंभः ॥

### हिंडोला पहिला १ ॥

भर्म हिंडोला झूलै सब जग आय ॥ टेक ॥

जहँ पाप पुण्यके खम्भ दोऊ, मेरू माया नाय । तहँ कर्म पटुली बैठिके, को को न झूलै आय ॥ १ ॥ लोभ मरुआ विषय भवरा, काम कीला ठानि । शुभ अशुभ बनाय डांडी, गह्यो दूनौ पानि ॥ २ ॥ झूले सो गन गन्धर्व मुनि नर, झूलै सुरगन इन्द्र । झूलत सो नारद सारदा, झूलत व्यास फनीन्द्र ॥ ३ ॥ झूलत बिरंचि महेस-मुनिहो झूलत सूरज इन्दु । आप निर्गुन सगुन होयके, झूलिया गोविन्द ॥ ४ ॥ छौ चार चौदह सात इकइस, तीन लोक बनाय । चौखानि बानी खोजि देखौ, थिर न कोइ रहाय ॥ ५ ॥ खण्डो ब्रह्मखण्ड खोजि षट दरशन, ये छूटे नाहिं । साधु संग बिचारि देखो, जीव निसतारि जाहिं ॥ ६ ॥ ससि सूर निसि दिन संधि, औ तहँ तत्व पांचौ नाहिं । काल अकालौ परलय नहीं, तहं संत बिर-

ले जाहिं ॥ ७ ॥ तहँके बिछुरे बहु कल्प बीते, परे भूमि भुलाय । साधु संगति खोजि देखो, बहुरि उलटि समाय ॥ ८ ॥ तेहि झूलवेको भय नहीं, जो होय संत सुजान । कहहिं कबीर सत सुकृत मिलै तो, फिरि न झूलै आन ॥ ९ ॥

हिंडोला दूसरा २ ॥

बहु विधि चित्र बनाइके, हरि रच्यो क्रीडा रास । जाहि न इच्छा झूलवेको, अस बुधि केहि पास ॥ १ ॥ झूलत २ बहु कल्प बीते, मन न छोडै आस । रच्यो रहस हिंडोलना, निसि चारिउ जुग चौमास ॥२॥ कबहुक ऊंचे नीचे कबहुंक, सरग भूलौं जाय । अति भरमित भरम हिंडोलना, नेकु नहीं ठहराय ॥३॥ डरपत हौ यहि झूलवेको, राखु जादव राय । कहै कबीर गोपाल विनती, शरन हौ तुम पाय ॥ ४ ॥

हिंडोला तीसरा ३ ॥

लोभ मोहके खम्भ दोऊ, मन रच्यो है हिंडोर । झूलहीं जीव जहान जहँ लगि, कतहुं नहीं थित ठौर॥१॥ चतुरा झूलै चतुराइया; झूलै राजा सेव । चन्द्र सूर दोउ झूलहीं, नाहि न पायो भेव ॥ २ ॥ चौरासी लच्छ जीव झूलैं; रवि सुत धरिया धाय । कोटिन कल्प जुग बीतियां, अजहुं न मानैं हाय ॥ ३ ॥ धरनि अकास दोउ झूलै, झूलैं पवनहु नीर । धरी देह हरि आपहु झूलहीं; लखहिं, हंस कबीर ॥ ४ ॥
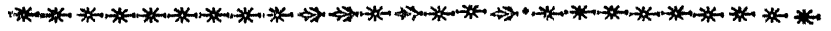
इति हिंडोला बीजक ॥

सत्यनाम ।

# गुरु महिमा ।

सा०-सतकबीरके चरण रज, धर्मदास शिरनाय ॥
बार बार विनवन लगे, सतगुरु होहु सहाय ॥

रमैनी १-धर्मदास बिनवै कर जोरी । हे साहब इक विन्ती मोरी ॥ बारम्बार आप अस भाखो । गुरु गुरु कहि बहुत अभिलाषो ॥ १ ॥ मुझ किंकर पर दया सुकीजे । दास जानि यही बर दीजे ॥ निसिदिन रहौं चरन लौलीना । परु इक चित्त न होवे भीना ॥ २ ॥ महिमा गुरू कहो समझाई । सुनत जीव भगती दिढ पाई ॥ बिना ज्ञान नर होय अजाना । संग्रह त्याग न बिनु पहिचाना ॥ ३ ॥ जब जाने सरधा दिढ होई । बिन जाने सरधा नहिं कोई ॥ बिन सरधा अनुराग न जामें । बिनु अनुराग भगति नहिं तामें ॥ ४ ॥ बिना भगति जिव छुटै न फेरा । बिना भगति जिव होय अनेरा ॥ याते सतगुरु देहु बतायी । गुरु महिमा कहिये अरथायी ॥ ५ ॥

सा०-धर्मदासके वचन सुन, हरपे श्री गुरदेव ।
सुनु धर्मनि अब कहत हौं, गुरु महिमाको भेव ॥

रमैनी२-गुरुते अधिक और कोउ नाहीं । धरमदास परखहु हिय माहीं ॥ गुरु दयालु अस हैं सुखदाई । देहिं मुकतिको पंथ लखाई ॥ १ ॥ गुरुते अधिक कोइ नहिं दूजा । भरम तजि कर सतगुरु पूजा ॥ तीरथ धाम देवल अरु देवा ।

सीस अरपि जो लावैं सेवा ॥ २ ॥ तौ नहिं वचन कहे हितकारी। भूले भरमे यह संसारी ॥ भवसागर है अगम अपारा। तामें बूडि गयो संसारा ॥ ३ ॥ पार लगनको सब कोइ धावे। विना गुरू कोइ पार न पावे ॥ यह जग जीव थाह नहिं पावे। विना गुरू सब गोता खावे ॥ ४ ॥ जग जीवोंसे कहु गोहराई। सत गुरु खेवट पार लगाई ॥ यह जग बूडि जाय मंझधारा। सतगुरु भक्ति भये भव पारा ॥ ५ ॥

सा०—सतगुरु भक्ति न जानई, कहै कबीर बखान।
यह जग भूले बापुरे, गहे न सतगुरु ज्ञान ॥

रमैनी ३—जग क्कर आयु अल्प है भाई। अन्त समै कोइ नाहि सहाई ॥ बहुत पियारि नारि जग माहीं। मातु पिताहु जेहि सर नाही ॥ १ ॥ जेहि कारण नर सीस जु देहीं। अंतसमय सो नाहिं सनेही ॥ निज स्वारथ कहँ रोदन करई। तुरतहिं नैहरको चित धरई ॥ २ ॥ सुत परिजन धन सुपन सनेही। भीर परे कोइ काम न देही ॥ निज तनु सम और न आना। सो तन संग न चलत निदाना ॥ ३ ॥ ऐसो को जग दीखे भाई। अंत समयमें लेइ छुड़ाई ॥ अहै एक सो कहौं बखानी। जेहि अनुराग होय सो मानी ॥ ४ ॥ केवल गुरू छुडावन हारा। निश्चय जानो कहा हमारा ॥ कालहि जीत हंस लैजाहीं। अविचल देस पुरुष जहं आहीं ॥ ५ ॥

सा०–बिना गुरू उतरे नहीं, भवसागरके पार।
कहैं कबीर सब जीवसे, गहिलो गुरू अपार॥

रमैनी ४–सरगुन निरगुन माहिं पिछानो। निगुरा-को नहिं ठौर ठिकानो॥ बिनु गुरु कोई पार न पावे। लोक परलोक महं परगट दिखावे॥१॥ सुकदेव भये गरभ जोगेसर। उन समान नहिं थाप्यो दोसर॥ तपके तेज गये हरिधामा। गुरु बिनु नाहिं लहे बिसरामा॥२॥ रोके पारषद जान न पाये। कह सुकदेव करहु कस भाये॥ कह पारषद सुनो मुनि राऊ। बिनु हरि आज्ञा जान न पाऊ॥ ३॥ करहु बिनती हरिपै जाई। ठाढ द्वार सुकदेव रहाई॥ जबै पारषद हरिपै गयऊ। जस मुनि कहा तस पुनि कहेऊ॥ ४॥ सुनत विष्णु तब बाहर आये। देखतहीं शुक अति हरषाये॥ विस्नु कहे रिषि कहवां आये। गुरु बिहीन तप तेज भुलाये॥ ५॥

सा०–गुरूविना जो तप करे, गुरु विन देवे दान।
गुरु बिनु माला फेरते, सबही निसफल जान॥

रमैनी५–गुरु बिहीन नर मोहिं न भावे। सो कस हरि-धाम सिधावे॥ कह सुकदेव सुनो हरिराऊ। कहि सुपन्थ मोहि राह बताऊ॥१॥ जाहु पलटि करहु गुरु स्याना। तब पैहो इहवाँ अस्थाना॥ सुनि मुनि सुकदेव वेगि सिधाये। गुरू बिहीन तहँ रहन न पाये॥ २॥ ढूंढन गुरू चले मुनि राई।व्यास मुनी तब कह्यो बुझाई॥ मिथला आहि

जनक पुरधामा । विदेह जनक तहँ रहत ललामा ॥ ३ ॥ उन सम ज्ञानि न दूसर कोऊ । जाकर सरण गहो तुम सोऊ ॥ चले सुनत सुक मुनि तहवाँ । राजा जनक रहत है जहवाँ ॥ ४ ॥ सिष भावले पहुंचे जबहीं । मिलत जनक हरष भय तबहीं ॥ जनक विदेह कीन्ह गुरुजानी । हरषि मिले तब सारंग पानी ॥ ५ ॥

सा०—गर्भ जोगेसर गुरु बिना, लागे हरिकी सेव ।
कह कबीर वैकुंठसे, फेर दियो सुकदेव ॥
जनक विदेही गुरु किया, लागा हरिकी सेव ।
कह कबीर वैकुंठमें, उलट मिला सुकदेव ॥

रमैनी ६—ब्रह्मा सुत नारद बड ज्ञानी । जिनकर कथा जगत सब जानी ॥ हरि करते चौरासी परिया । गुरु किरपाते तुरत उबरिया ॥ १ ॥ और देव रिषि मुनिवर जेते । जिन गुरु कीन्ह उतर सो तेते ॥ बिना गुरू भवसागर डूबे । उब डुब होय पार नहिं ऊबे ॥ २ ॥ जो गुरु मिले तौ पंथ बतावे । सार असार परख दिखलावे ॥ गुरू सोई जो सत्य बतावे । और गुरू कोइ काम न आवे ॥ ३ ॥ सत्त पुरुषका कहे संदेसा । जनम जनमका मिटै अंदेसा ॥ पाप पुन्नकी आसा नाहीं । बैठे अछय वृक्षकी छांही ॥ ४ ॥ भ्रिंगी मत होवे जिहि पासा । सोई गुरु सत्त सुनो धर्मदासा ॥ गुरुते अधिक और कोइ नाही । धर्मदास परखहु हिय माहीं ॥ ५ ॥

कमल शिष्य विकसानो ॥ यहि स्नेह सिष निश्चय लहई। गुरु पद परसि दरस हिये गहई ॥ ३ ॥ गुरू गुरूमें भेद विचारा। गुरु गुरु कहे सकल संसारा ॥ गुरू सोई जिन शब्द लखाया। आवागमन रहित पद पाया ॥ ४ ॥ गुरू सजीवन शब्द लखावे। जाके बल हंसा घर जावे ॥ वा गुरुसो कछु अन्तर नाहीं। गुरु अरु शिष्य मता इक आही ॥ ५ ॥

सा०—गुरू गुरूमें भेद है, गुरू गुरूमें भाव।
गुरू सदा सो वन्दिये, सबद बतावे दाव ॥

रमैनी १—सतगुरुकी बलि हारीजावे। अजर दशा जो आन बतावे॥अमि अजरावलि अजरा धामा। सत्य नाम सत्य पुरुष निजनामा ॥ १ ॥ गुरु किरपा करि सो पद पावे। जीवन मुक्त अटल घर जावे ॥ निसिदिन सुरत गुरू सो लावे। साधु संतके मनहिं समावे ॥ २ ॥ जिनपर दया गुरूकी होई। तिनका फांस करम सब खोई ॥ करनी करके सुरत लगावे। सतगुरु लोक ताहि पहुँचावे ॥ ३ ॥ सेवा करि मन रखै न आसा। ताका सतगुरु काटै फाँसा ॥ गुरु चरनन जो राखे ध्याना। अमर लोक सो करत पयाना ॥ ४ ॥ जोगी जोग साधना करई। विना गुरूसो भव नहिं तरई ॥ जो शिष गुरू आज्ञा धारी। गुरुकी कृपा होय भवपारी ॥ ५ ॥

सा०-गुरु मुख गुरु चितवत रहै, जैसे मनी भुवंग।
कहैं कबीर बिसरे नहीं, यह गुरु मुखको अंग ॥

रमैनी १०-गुरु भगता जो जिव आही। साधु गुरू नाहिं अन्तर ताही ॥ साँचा शिष्य ताहिको माने। साधु गुरू नाहिं अन्तर आने॥१॥ जो स्वारथ पागे संसारी। नाहिं गुरु सिक्ख न साधु अचारी ॥ तिनको काल फन्द तुम जानो। दूत अंश काल कर मानो ॥२॥ साधु गुरूको रूप बनायी। बहुते फन्द जीवपर लायी॥ जिनते होय जीवकर हानी। यह तो अहै काल सहिदानी ॥ ३ ॥ सोइ गुरू जो प्रेम गति जाने। सत्य शब्दको राह पिछाने ॥ परम पुरुषकी भगति दिढावे। सुरति निरति कर तहँ पहुँचावे ॥ ४ ॥ तासो प्रीति करै मनलाई । छाडै दुरमति औ चतुराई ॥ तबहीं निह संशय घर पावे। भव तरिके जग बहुरि न आवै ॥ ५ ॥

सा०-करम भरम जंजालतजि, गुरु पद कीजे नेह ।
गुरु मुख शब्द प्रतीतिकारि, निज तन जाने खेह ॥

रमैनी ११-गुरु चरननमें रह लपटाई। तजि भरम औ कपट चतुराई॥ गुरू आज्ञा जो निरखत रहई। ताकर खूंट काल नाहिं गहई ॥ १ ॥ गुरु परतीत दिढके चित राषै। मोहि समान गुरू कहँ भाषै॥ गुरु सेवामें सब फल आवे। गुरू विमुख नर पार न पावे ॥ २ ॥ जैसे चन्द्र कुमोदिनि रीती। गहे शिष्य अस गुरु परतीती ॥ गुरु

मुख निरखत शिष्य हिय हरषे। शब्द अमी जिमि बादल बरषे ॥ ३ ॥ मृतक होयके खोजहिं सन्ता। शब्द विचार गहे मगु अन्ता ॥ धर्मदास जिमि कीटहिं भेवा। यहि विधि शिष्य गहै गुरुदेवा ॥४॥ मिलै कीट भृंगके पासा। भ्रिंगी गही गुरुगम परगासा ॥ भ्रिंगी शब्द कीट जो माने। आपा मेटि गुरु सुरत समाने ॥ ५ ॥

सा०—भ्रिंगी मति गहि कीट जस, भ्रिंगी ही होइ जाय।
गुरू शब्द गहि शिष्य तस, गुरुही माहिं समाय ॥

रमैनी १२—जबहीं कीट सौंप तन देवे। भ्रिंगी गहि आपन करि लेवे ॥ शब्द घात करि महि तिहिं डारे। आपन मंत्र निज तहां विचारे ॥१॥ भ्रिंगी शब्द कीट जो गहई। आपा मेटि भ्रिंगी होय रहई ॥ जाति वरण सब पलटे आई। भ्रिंगी रूप तबै परगटाई ॥२॥ कीट पलटि भ्रिंगी जब होई। ताको कीट कहै नहिं कोई ॥ भ्रिंगी शब्द कीट नहिं गहई। तो पुनि कीट असारे रहई ॥ ३ ॥ धरमदास यह कीटक भेवा। यहि मति शिष्य गहे गुरु देवा ॥ गुरुके वचन सांच कर माने। आपा ओट न बाद बखाने ॥ ४ ॥ तन मन धन अरपे सब ओई। आपा लेश रहै नहिं कोई ॥ मिटै भरम सब दुबिधा नासे। गुरु अरु शिष्य एक घर भासे ॥ ५ ॥

छन्द—भ्रिंगी मत दिढके गहे, करौं निज सम ओहिहो।
दुतिया भाव न चित्त व्यापै, सो लहै जिव मोहिहो ॥

गुरु सबद निसचय सत्य माने, भ्रिंग मत तब पावई।
तजि सकल आसा सबद वासा, काग हंस कहावई॥
सोरठा-तजै कागकी चाल, सत्य सबद गहि हंस हो।
मुकता चुगे रसाल, पुरुष पच्छ गुरु गम गमन॥

रमैनी १३-गुरु कृपा ते साधु कहावे। गुरुकृपा साधक ह्वै आवे॥ गुरु कृपाते ज्ञान विचारा। गुरुकृपा ते भक्ति अनुसारा॥ १॥ गुरु कृपासे सुकर्म कमावे। गुरु कृपा सुकृत कहँ धावे॥ गुरु कृपाते पुण्य बटोरे। गुरु न मिले तो पाप बहोरे॥ २॥ गुरु मिले वैराग दिढावे। गुरु मिले तो भगति घर पावे॥ गुरुकी कृपा सकल अंजोरा। गुरु कृपा जिव परै न भोरा॥ ३॥ गुरु मिले तो शब्द लखावे। बिन गुरुके भव भटका खावे। का गिरही बैरागी भाई। गुरु कृपा सकलो तरि जाई॥४॥ सार नाम सतगुरुसो पावे। नाम डोर गहि लोक सिधावे॥ धरमराय ताको सिर नाई। जो हंसा सतगुरु पहँ जाई ५
सा०-सतगुरु महिमा अनंत है, अनन्त करै उपकार।
ई भवसिन्धु अगाधते, तुरते उतारे पार॥

रमैनी १४-सतगुरु चरननकी बलिहारी। करै सुखी सब कष्ट निवारी॥ चच्छु हीन जिमि पावे नैना। होवै ज्ञान सुनत गुरु बैना॥ १॥ सार शब्द सु विदेह सरूपा। निअच्छर बहिरूप अनूपा॥ कहन सुनन को शब्द चौधारा। सार शब्द सो जीव उबारा॥ २॥ सो निज

शब्द गुरू सो पावे । पाइ शब्द सतलोक सिधावे ॥ धर्म-दास तुम हंस अंकुरी । मोहि मिले कीन्हे दुख दूरी ॥३॥ जस तुम कीन्ह मो सन नेहा । तजि धन धाम नारि सुत गेहा ॥ आगे शिष जो यहि विधि करिहैं । गुरु चरनन मन निश्चल धरिहैं ॥ ४ ॥ गुरुके चरन प्रीति तन धारे । तन मन धन सतगुरु पर वारे ॥ सो जिव मोहि अधिक प्रिय होई । तो कहँ रोक सके नहिं कोई ॥ ५ ॥

सा०—सरवस वारे चरनमें, शरण रहै लपटाय ।
सो जिव पावे मोहिको, रहै काल मुरझाय ॥

रमैनी १५—सिष होय सरबस नहिं वारे । हिये कपट मुख प्रीति उचारे ॥ सो जिव कैसे लोक सिधाई । विन गुरु मिले मोहि नहिं पाई ॥ १ ॥ गुरुसे करै कपट चतुराई । सो हंसा भव भरमें आई ॥ जो जन गुरुकी निन्दा करई । सूकर स्वान गरभमें परई ॥ २ ॥ चौरासी भरमें सो जाई । नारद साख कहौ समझाई ॥ नारद ब्रह्मा सुत बड ज्ञानी । अहैं प्रसिद्ध जगत सब जानी ॥३॥ सो गुरुको छोट बखाना । ताके मन अभिमान समाना ॥ ताते हरि चौरासी दीना । सकलो पुण्य छीन सो लीन्हा ॥ ४ ॥ छूटन राह कहा करि ओही । विनु गुरु शरण मुक्ति नहिं सोही ॥ ओही गुरु सो करे बचावा । दूसर मारग नाहिं दिखावा ॥ ५ ॥

सा०-वेद किताब शास्त्र अरु, पोथी कहत पुरान।
गुरु विन भौसागर महा, छूटे नाहिं निदान ॥

रमैनी १६-गुरुकी शरणा लीजे भाई। जाते जीव नरक नहिं जाई ॥ गुरु मुख हो परम पद पावे। चौरासीमें बहुरि न आवे ॥ गुरु पद सेवे विरला कोई। जापर कृपा साहिबकी होई ॥ गुरु बिन मुक्ति न पावे भाई। नरक उर्द्ध मुख बासा पाई ॥ गुरुकी कृपा कटे यम फाँसी। विलंब न होय मिले अविनासी ॥ गुरु विनु काहु न पाया ज्ञाना। ज्यों थोथा भुस छडे किशाना ॥ गुरु महिमा शुकदेव जु पाई। चढि विमान वैकुंठे जाई ॥ गुरु विन पढे जो वेद पुराना। ताको नाहिं मिले भगवाना ॥ गुरु सेवा जो करे सुभागा। माया मोह सकल भ्रम भागा ॥ गुरुकी नाव चढे जो प्राणी। खेइ उतारे सतगुरु ज्ञानी ॥ तीरथ वरत अरू सब पूजा। गुरु बिन दाता और न दूजा ॥ नौ नाथ चौरासी सिद्धा। गुरुके चरण सेवे गोविन्दा ॥ गुरु विनु प्रेत जनम सब पावे। वरष सहस्र गरभ सो रहावे ॥ गुरु विनु दान पुण्य जो करई। मिथ्या होय कबहूं नहिं फरई ॥ गुरु विनु भरम न छूटे भाई। कोटि उपाय करे चतुराई ॥ गुरु विनु होम यज्ञ जो साधे। औरो मन दश पातक लाधे ॥ सतगुरु मिले तो अगम बतावे। जमकी आँच ताहि नहिं आवे ॥ गुरुके मिले कटे दुख पापा। जनम जनमको

मिटे संतापा ॥ गुरुके चरण सदा चित दीजै । जीवन जन्म सुफलकर लीजे ॥ गुरुके चरण सदा चित जानो । क्यों भूले तुम चतुर स्यानो ॥ गुरु भगता मम आतम सोई । वाके हिरदे रहौं समोई ॥ गुरु मुख ज्ञान ले चेतो भाई । मानुष जन्म बहुरि नहिं पाई ॥ सुख संपति आपन नहिं प्राणी । समझि देखु तुम निश्चय जानी ॥ चौविस गुरु हरि आपहि करिया । गुरु सेवा हरि आपहि धरिया ॥ गुरुकी निंदा सुनै जो काना । ताको निश्चय नरक निदाना ॥ दशवाँ अंश गुरूको दीजे । जीवन जनम सुफल कर लीजे ॥ गुरु मुख प्राणी कोइ न दीजे । हिदय नाम सदा रस पीजे ॥ गुरु सीढी चढि ऊपर जाई । सुख सागरमें रैहे समाई ॥ अपने मुख निंदा जो करई । शूकर स्वान जनम सो धरई ॥ निगुरा करै मुक्ति कर आसा । कैसे पावे मुक्ति निवासा ॥ औरो सुक्रित देह जो पावे । सतगुरु बिन मुक्ती नहिं आवे ॥ गौरी शकंर और गनेशा । सबही लीन्हा गुरु उपदेशा ॥ शिव विरंचि गुरुसेवा कीन्हा । नारद दीक्षा ध्रुवको दीन्हा ॥ सतगुरु मिले परम सुख दायी । जनम जनमका दुःख नसायी ॥ जब गुरु किया अटल अविनासी । सुर नर मुनि सब सेवक रासी ॥ भवजल नदिया अगम अपारा । गुरु बिनु कैसे उतरे पारा ॥ गुरु विनु आतम कैसे जाने । सुख सागर कैसे पहिचाने ॥ भक्ति पदारथ कैसे पावे । गुरु विनु कौन

जो राह बतावे ॥ गुरुमुख नाम देव रैदासा । गुरु महिमा उनहूँ परकासा ॥ तैतिस कोट देव त्रिपुरारी । गुरु बिनु भूले मकल अचारी ॥ गुरु बिनु भरमें लख चौरासी । जनम अनेक नरकके बासी ॥ गुरू बिनु पसू जनम सो पावे। फिर २ गरभ बासमें आवे ॥ गुरू विमुख सोई दुख पावे । जनम जनम सोई डहकावे ॥ गुरु सेवै जो चतुर स्याना । गुरु पटतर कोइ और न आना ॥ गुरुकी सेवा मुक्ति निज पावे । बहुरि न हंसा भवजल आवे ॥ भव-जल छूटत यही उपाई । गुरुका सेवा करो सब धाई ॥

सा०—सतगुरु दीन दयाल है, देवे भक्ति मुकाम ।
मनसा बाचा कर्मना, सुमिरो सतगुरु नाम ॥
सत्य सबदके पटतरे, देवेको कछु नाहिं ।
कहले गुरु संतोषिये, हवस रही मन माहिं ॥
अति ऊँड़ा गहरा घना, बुद्धिवन्त मतिधीर ।
सो धोखा विरचे नहीं, सतगुरु मिलहिं कबीर ॥

रमैनी १७—गुरुदेवनकी महिमा वरनो । जय गुरुदेव तुम्हारी सरनो ॥ गावत जे गुन पार न पावे । ब्रह्मा शंकर सेष गुन गावे ॥ प्रथमहीं गुरु ऐसा कीन्हा । तारक मंत्र रामको दीन्हा ॥ माथा तिलक दिया सरूपा । जाको बन्दे राजा भूपा ॥ ज्ञान गुरू उपदेश बताया । दया धरमकी राह चिन्हाया ॥ जीव दया घटहीमें होई । जीव दया ब्रह्म है सोई ॥ गुरु आधीन सुचेला बोले । खरा शब्द

उर अतन्र खोले॥ खारा मीठा बचने खमैं । गुरुके चरनों चेला रमैं ॥ भीतर हिरदे गुरुसों हिले । ताके पीछे रामहिं मिले ॥ गुरु रीझे सो कीजे कामा । ताके पाछे रामहिं रामा ॥ सिष सरसती गुरु जमुना अंगा। राम मिले सब सरिता गंगा ॥ चेला गुरूमें गुरुमें राम । भगति महातम नियारा नाम ॥ गुरु आज्ञा निरबाहे नेम । तब पावे सरबग्गी प्रेम ॥ सरवग्गी राम सकल घट सारा। है सबहीमें सबसों न्यारा ॥ ऐसी जाने मनमें रहे । खोजे बूझे तासो कहै ॥ गुरुकी महिमा संछेप भनी। गुरुकी महिमा अनंत घनी ॥ औतार धरी हरि गुरू करे । गुरु किये तब नारद तरे ॥ साख पुरातम ऐसी सुनी । बात हमारी गुरुसों बनी ॥ कीडी जैसा मैं हौं दासा । पडा रहा गुरु चरनों पासा ॥ गुरु चरनों राखो विश्वासा । गुरुहि पुरावे मनकी आसा ॥

सा०—गुरु गोविन्द अरु सिष मिलि, कीन्हा भक्ति विवेक ।
तिरबेनी धारा बही, आगे गंगा एक ॥
गुरुकी महिमा अनंत है, मोसो कही न जाय ।
तन मन गुरुको सौंपिके, चरणों रहो समाय ॥

रमैनी १८—गुरु सतपद भजु अमृत बानी । गुरु बिनु मुक्ति नहीं रे प्राणी ॥ गुरु आदि गुरु अन्तके त्राता । गुरु हैं मुकति पदारथ दाता ॥ गुरु गंगा कासी अस्थाना । चारवेद गुरु गमसे जाना ॥ अरसठ तीरथ भरमि भरमि

आवे । सो फल गुरुके चरनों पावे ॥ गुरुको तजै भजै जो आना । ता पसुआको फोकट ज्ञाना ॥ गुरु पारस परसे जो कोई । लोहाते जिव कंचन होई ॥ शुक गुरु किये जनक विदेही । सो भै गुरुके परम सनेही ॥ नारद गुरु प्रह्लाद पढाये । भगति हेतु जिन दरसन पाये ॥ कागभुसुंड संभु गुरु कीन्हा । अगम निगम सबही कहि दीन्हा ॥ ब्रह्मा गुरू अगिनको कियेऊ । होम जग्य जिन विद्या दियेऊ ॥ वशिष्ट मुनि गुरु किये रघुनाथा । पाये दरसन भये सनाथा ॥ कृष्ण भये दुर्वासा सरना । पाये भगति तब तारन तरना ॥ नारद उपदेश धिमरसे पाये । चौरासीसे तुरत बचाये ॥ गुरु कह सोई है सांचा । बिनु परचे सेवक है कांचा ॥ गुरु समरथ सबके पारा । गहे शरण उतरे भवपारा ॥ कहैं कवीर गुरु आप अकेला । दशो औतार गुरूका चेला ॥

सा०-राम कृष्णसों को बडा, तिनहू तो गुरु कीन्ह ।
तीन लोकके वे धनी, गुरु आगे आधीन ॥
हरिसेवा युगचार है, गुरु सेवा पल एक ।
तासु पटन्तर ना तुले, संतन किया विवेक ॥

गुरुउपदेश महिमा ।

दोहा-गुरु संत वन्दन करूं, ऐहै सुखको पूर ।
गुरुमहिमा बरनन करूँ शिर धरि पदरजधूर ॥
संत सबै शिर ऊपरे, निसप्रेही निज नाम ।
सबके मस्तक मुकति गुरु, पुरवे मनके काम ॥

रमैनी १९–परब्रह्मको आदि मनाऊँ। जिनकी क्रिया गुरु चरनन पाऊँ॥ गुरु सोई सब सिरजन हारा। गुरुकी क्रिपा होय भवपारा॥ गुरु बिन होम जग्य नहिं कीजे। गुरुकी आज्ञा माहि रहीजे॥ गुरु संतनके चरण मनायो। ताते बुद्धि उत्तम मैं पायो॥ सबी इष्टनमें सतगुरु सारा। सो सुमिरावे पुरुष हमारा॥ सरन होय शिष आवैं कोई। सहज पदारथ पावे सोई॥ गुरु सुरतरु सुरधेनु समाना। आवे चरन मुक्ति परवाना॥ मन बांछित फल पावे सोई। प्रीति सहित जो सुमिरे कोई॥ तन मन धन अरपि गुरु सेवै। होय गलतान उपदेसहिं लेवै॥ गुरु बिनु पदारथ और न जाने। आज्ञा मेटि और नहिं माने॥ सतगुरुकी गति हिरदे धारे। और सकल बकवाद निवारे॥ गुरुके सन्मुख बचन न कहै। सो सिष रहनि गहनि सुख लहै॥ गुरुसे वैर करै शिष जोई। भजन नाश अरु बहुत बिगोई॥ पीढि सहित नरकमें परिहै। गुरुआज्ञा सिष लोपन करिहै॥ चेलो अथवा उपासक होई। गुरु सन्मुख ले झूठ संजोई॥ निश्चय नरक परे सिष सोई। वेद पुराण भनत सब कोई॥ सनमुख गुरुकी आज्ञा धारे। अरु पाछे तै सकल निवारे॥ सो शिष घोर नरकमें परिहै। रुधिर राध पीवै नहिं तरिहै॥ मुखपर बचन करै परमाना। घर पर जाय करै विज्ञाना॥ जहँ जावै तहँ निंदा करई। सो

दोहा-सात द्वीप नौ खण्डमें, औ इकीस ब्रह्मंड ।
सतगुरु विना न बाचिहौ, कालबडो परचंड ॥

रमैनी २१-यहीभाव भक्तिका लक्षणकहिये। गुरुके भावबिन भवजल बहिये ॥ जिन बातनसे गुरु दुख पावे। तिन बातनको दूर बहावे ॥ वेद पुराण सबै मिलि गावै। नेमी धर्मी चोरासिन जावै ॥ अष्ट अंगसो दंड परनामा। संध्या प्रात करै निषकामा ॥ गुरुको शिष ऐसे नहिं मानै। तीनताप जर चारो खानै ॥ जोगी जती तप आसरमा। बिनु गुरु कोउ न जानै मरमा ॥

गुरुचरणोदक माहात्म्य ।

कोटिक तीरथ सब करआवे । गुरु चरणाफल तुरतहि पावै ॥ चरनामृत कदाचित पावै । चौरासी गत लोक सिधावै ॥ कोटिक जप तप करै करावै । वेद पुराण सबै मिलि गावै ॥ गुरुपद रज मस्तक पर देवै। सो फल तत्कालहि लेवै ॥

दोहा-गुरु चरणोदक अनन्त फल, हमते कही न जाय।
मनकी पुरवै कामना, लेवे चित्त लगाय ॥
सतगुरु समानको हितू, अन्तर करो विचार।
कागा सो हंसा करै, दरसावै ततसार ॥
गुरु महिमा ग्रंथ यह, कहै कवीर समझाय ।
पाप ताप सबही हरै, अमरलोक लै जाय ॥

इति गुरु महिमाकी रमैनी.

# अथ ज्ञानदीपककी रमैनी प्रारम्भ।

रमैनी १३[1]—का कहिये कछु कही न जाई। तुम पंडित लाओ ठहराई॥ बाभनकी बेटी जोगीको बेटा। दोनों मिल संजोग संजोटा॥ अचरज एक भया जिय भारी। कन्या होय पिताकी नारी॥ भाई घर बहिनी जाई। सात पतोह को सौत कहाई॥ सुन जोगी तैं क्या कर जोगा। घर घर सबके यह संजोगा॥ कन्याको कंथ कंथको पूता। पिताका कंथ होय सुन दूता॥ इनको जान पिता नहिं सेवे। पाषाण परतिमा पूजा देवे। बालभोग करि पागे लाई। आपे घंट बजाये खाई॥ अति प्रसन्न जोग वोहि लाया। मगन होय तब आपुहिं खाया॥ ना कछु लेइ न देवे देवा। कारण कौन करे तू सेवा॥ देव न बोले आपहिं बोले। देव न डोले आपहिं डोले॥ जैसा गुरु सिखापन दीन्हा। तैसा सिष हिरदय धरिलीन्हा॥

समै—यहि संयोग मुवा सब कोई, कीन्ह न कोइ विचार।
कहें कबीर चारो युग करता, सबमें फिरा पुकार॥

रमैनी १४—केते मगन होय मनमें भूले। केते पंडित पढ गरबहिं भूले॥ केते करते सेवा पूजा। तुही

---

१—इस रमैनीकी एकही प्रति सत्यलोकवासी सद्गुरु श्री महंत शंभुदास साहबसे सं १९६२ में मिली थी जिस परसे यह कापी उतारी गयीथी, काल भगवानकी कृपासे वह मूल भी जाता रहा और इस कापीकेभी कुछ पन्ने सड गये इसलिये तेरहवीं रमैनीसे आरंभ होताहै। विशेष वृत्तान्त प्रस्तावना और परिशिष्टमें देखना चाहिये।

निरंजन और न दूजा ॥ केते तजत अन्न औ नारी । केते रहते दूधा धारी ॥ केते कनफटा कहावत योगी । केते संयोगते होत बियोगी ॥ केते तीरथ बरत सुन पावा । केते पीर औ नबी मनावा ॥ केते जटा राख सिर धारी । केते भये संयोग बिचारी ॥ केते बांग निमाज गुजारा । केते भये नटवा व्रत धारा ॥ केते होम जग्य करवावे । केते नित उठ देव मनावे ॥ केते मन भगतीमें दीने । केते सदा रस भोगमें लीने ॥ सबहि फंसे तीन लोककी बारी । बिधाता रची भूली सृष्टी सारी ॥

समै०-आस करे सुन्य नगरकी, जहां न करता कोय ।
कहें कबीर बूझो जिव अपने, जाते भरम न होय ॥

रमैनी १५-बोले कबीरा अमृत बानी । बरसे कामर भीजे पानी ॥ चले बटोही हाटे बाटा । सोवनहारके सिरपर खाटा ॥ तुरसाको नित चीरे बांसा । छेरी बेचे चिकवाके मासा ॥ राजा परजा रैयत राई । बिन जंत्री नित बाजा बजाई ॥ तर गागर ऊपर पनिहारी । लडकाके गोद खेले महतारी ॥ ब्राह्मणकी बिटिया ब्याहे बानी । सिङके घर गऊ भइ रानी ॥ बरसे धरती सुरज नहाई । समुद्रका पानी अकासे जाई । चेलाके गुरू लागे पाई । पहिले पुत्र पाछे भइ माई ॥ अचरज एक देखो किन कोई । माता भई पुत्रकी जोई ॥

स०—सब जग भूला एक न भूला, भूला सब संसार।
कहें कबीर बूझो तुम ज्ञानी, करके अपन बिचार॥
तिर देवा गये जात न जाने, गये साधक अवधूत।
कहें कबीर पहिचानो ज्ञानी, पांचो आतम भूत॥

रमैनी १६—आवो पंडित करो बिचारा। सुत माता संयोग व्योहारा॥ त्रिया चरित्र आदि चलि आया। माता निर्गुन पिता बताया॥ इच्छा सरूप भई इक नारी। गायत्री नाम धरा संसारी॥ ब्रह्मा पढे न और बतावे। भेद अभेद बरन कुल लावे॥ तरपन संध्या करे चित लाई। सुच्छम लिंग जोत ठहराई॥ आप न जाने पूजे देवा। उसको अंधा लखे न भेवा॥पाहन कारि पूजे नित देवा। चेतन होयके करे जड सेवा॥ आप अपन नहिं चीन्हे कोई। आपहिं करता आपहिं होई॥ जहां नाहिं कुछ तहांकी आसा। सुन्य नगर जहँ कहे ब्रह्म बासा॥
समै—यह दुबधा मिल दुचित भये, कैसे न चीन्हे मूल।
कहें कबीर तिरगुन गुणा भूले, यही सबनकी भूल॥

रमैनी १७—एक अचंभा देखो आई। गउ अकाश धरती खीर जमाई॥ तुम्बा डूबा सिल उतरानी। बरेड़ी चढे ओरियाका पानी॥ जो गुरु कहे करे सिष सोई। गुरुका बचन तजे न कोई॥ जोत निरंजन कहे निरंकारा। गुरू मंत्र यह सबन पुकारा॥ परंपरा ऐसी चलि आई। अबहीं औरू कैस चलाई॥ जोगी जंगम जती संन्यासी।

सुर नर मुनि सब भये उदासी ॥ करता सबका सिरजन हारा। बिना विचार न उतरे पारा ॥ यह करताको रूप तुम्हारा । करता चीन्हो बूझ बिचारा॥

समै-सब जग ढूंढे हाथ न आवे, ना है पुरुष बिदेह।

कहें कवीर करता तुम चीन्हों, छोड़ो झूठ सनेह ॥

रमैनी १८-जब जिवमें आवे परतीता। तब यह मन होय अतीता ॥ भई परतीत मिटा दुख दुंदा। धोखा मिटा भया अनंदा ॥ मगन हुआ रहा ठहराई। हंस परमहंसकी संस मिटाई ॥ धोखा मिटा भया सुख चैना। किसका नाम जपे दिन रैना ॥ सुरत डोरते चेत न अंधा। निसि बासर करे नित धंधा ॥ सेवक स्वामी और विचारा। आसा लाय तजा घर बारा ॥ करे विसवास नित पूजे देवा। धोखा भया रैन दिन सेवा ॥ धोखा लगि जब तीरथ धावा। दौडि गया तहं देव न पावा ॥ भया निरास नहीं कछु पाया। ज्यों छीरते घिव विनसाया ॥

समै-चेतो किन तुम चेतो, परमहंस संयोग।

कहें कवीर करता नहिं एते, पांचोंमें सुखभोग ॥

रमैनी १९-हरि ब्रह्मा भूले त्रिपुरारी। इन भूलत भूली संसारी ॥ सनक सनंदन भूले वोऊ। नारद शारद भूले स्रोऊ ॥ गोरख भूले भूले हनुमाना। मुनि वशिष्ठ तिनहूं नहिं जाना॥ परहलाद पारासर भूले तेऊ। गौतम लोमस भूले एऊ ॥ इन्द्र कुबेर भूले बहु भांती। जमदग्नि अत्रि

छ भरमाती॥ भूले पीर नबी औलिया। भूले गौस कुतुब मौलिया॥ भूले यह सब नेजा धारी। इनके संग भूले संसारी॥

समै—देव पैगम्बर रिषि मिलि, इनही माना मूल।
निराकारमें यह सब अटके, यही सबनकी भूल॥

रमैनी २०—कासे कहूं मैं यह दुख रोई। जासों कहों सो वैरी होई॥ कहा न माने मोर सुत नारी। कहत कहत मोर रसना हारी॥ गन गंध्रब मुनि माने न देवा। सबते कहा अपन हम भेवा॥ देवी देव बसे सब आई। भूत प्रेत बसें बहुताई॥ गन गंध्रब मुनि तपी संन्यासी। जिया जोनि लाख चौरासी॥ सौ सुत और जो जन्में माथा। घर घर तिनका भया बसाया॥

समै—हमारा यह सब कीन कराया, हमहीं बस परगाँव।
कहे कबीर सबको जगह, हमको नाहीं ठाँव॥
हमरे काज हम सब कीना, बसा पुरुष इक आय॥
रूप न रेखा अंग विहूना, घट घट रहा समाय॥

रमैनी २१—मैं तोहि पूंछो पंडित ज्ञानी। पिरथी अकास रहे नहिं पानी॥ सुक्षम स्थूल रहे नहिं कोई। बिराट सहित परले सब होई॥ तबहिं बिराट काहि अधारा। तब वेद जाप जर होवे छारा॥ होय अलोप जब रवि औ चन्दा। तब कापर रहे बालमुकुन्दा॥ यह अचरज मोहिं निसि दिन भाई। दुरमत मेट मोहि देहु बताई॥

समै-अमिट वस्तु सब मेटे, जो मेटे सो प्रमान।
मिटतन कीन्ह सनेहरा, आपइ मिटे निदान॥
पैंडे सब जग भूलिया, कहँ लग कहौं समुझाय।
कहैं कबीर अब क्या कीजे, जगते कहा बसाय॥

रमैनी २२-प्रथम मन्त्र बिरंचि एक कीन्हा। यह आयसु मातु मोहिं दीन्हा॥ निराकार निरगुन सो देवा॥ ताका काहू लखा न भेवा॥ पग नाहीं पै सब कहिं जाई। कर नहिं पै सबहिं कराई॥ हिय नाहीं पै सब कछु बोला। गुण नाहीं पै गुणो अमोला॥ सरवन नाहिं पै सबे सुनावे। बिन रसना वह सब गुन गावे॥ बिन नैनन देखे संसारा। बिन नासा लेबास अपारा॥ जीव नहीं पै जियत गुसांई। घट घट पूर रहा दुनियाई॥

समै-ब्रह्मा यह समझे नहीं, विना बीज कछु नाहिं।
कहैं कबीर जो उन कहो, सो राखो मन माहिं॥

रमैनी २३-वेद किताब न झूठा होई। जो न विचारे झूठा सोई॥ नरकी नारी जो मर जाई। के तो जन्मे की नरक समाई॥ पिंडा तरपन जब तुम कीन्हा। कहो पंडित उन कैसे लीना॥ कुंभक भरभर जल ढरकावे। जिवत न मिले मरे का पावे॥ जलसे जल ले जलमें दीन्हा। पित्रन जल पिंडा कब लीन्हा॥ वनखंड मांझ परा सब कोई। मनकी भटक तजे न सोई॥ आपनके छुंवन करे बिचारा। करता न लखा परा भर्म जारा॥ परमपरा जैसी चलि आई। तामें समझ रहा बिलमाई॥

समै–वेद हमारा भेद है, हम हीं वेदों माहिं ।
जिस विधि न्यारे हम रहैं, सो कोइ जाने नाहिं ॥
हारिल लकड़ी ना तजे, नर नाहीं छोडे टेक ।
कहैं कबीर गुरु शब्द ते, पकड़ रहा वह एक ॥
धरती बेल लगायके, फल ढूंढत आकास ।
कहैं कबीर घर छोडके, उजरन लिया निवास ॥
रवि चंदाकी गम नहीं, राई ना ठहराय ।
मन बुध जहँ पहुंचे नहीं, तहँ सकलो जग जाय ॥

रमैनी २४–पृथ्वी अकाश पवन नहिं पानी। तब काहे परब्रह्म कहो मोहिं जानी ॥ बीज वृक्ष हता न जहवाँ। देव अदेव न रहते तहवाँ ॥ गन गंध्रव मुनि हते न कोई। चंद्र न सूरज पुरुष न जोई ॥ यह वैराट कहांते आवा। मूल मंत्र किनहू नहिं पावा ॥ करताका कछु लखा न भेवा। मात वचन भूले त्रिदेवा ॥

समै–वृच्छ नहीं बीजो नहीं, साखा पत्र न फूल ।
ताते यह बैराट भया, यही सबनकी भूल ॥

रमैनी २५–कथा कवित्त बहुत मन मानी। सबहिन राम खिलौना जानी ॥ सो ज्ञानी जो रामहिं जाने। कंठी माला तिलक मनमाने ॥ रामहिं जाने तब सुख होई। राम लखे बिन तरा न कोई ॥ रामहिका यह सकल पसारा। रामहिं करताके सिरजन हारा ॥ रामके भगत करे ब्रह्मज्ञानी। रामकी गति नहिं किनहुं जानी ॥ रामहिं

देखे तब सच पाई । राम लखे बिन नरकहिं जाई ॥ दस-रथ सुत सो राम न होई । रामहिं जाने विरला कोई ॥

समै-राम राम सब कोइ कहे, रामते बांधा असनेह ।
कहें कबीर देखा नहीं, पै मरते होय मनेह ॥

रमैनी २६-घर घर होय पुरुषकी सेवा । पुरुष निरं-जन कहे न भेवा॥ताकी भगति सकल संसारा । नर नारी मिल करें पुकारा ॥ सनकादिक नारद मुख गावें । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावें ॥ मुनी व्यास पारासर ज्ञानी । प्रल्हाद और बिभीषण ध्यानी ॥ द्वादस भगत भगती सो रांचे । दे तारी नर नारी नाचे ॥ जुग जुग भगत भये बहुतेरे । सबे परे काल जम घेरे ॥ काहू भगत न रामहिं पाया । भगती करत यह जनम गंवाया ॥

समै-भगति २ सब कोई कहे, भगति न आई काज ।
जहँका किया भरोसवा, तहँ ते आई गाज ॥

रमैनी २७-यह अचरज मोहिं निस दिन भारी । वाही देस जात नर नारी ॥ वाही देवकी खबर न पाई । काहु वहँ ते कहि न पठाई ॥ हम सुख रहत तुमहुं चलि आवो । कि हम दुख तहां महूं बोलावो ॥

समौ-समझो भाई ज्ञानी नर, काहु न कहो संदेस ।
जे गये सो नाहिं न बहुरे, सो वह कैसा देश ॥

रमैनी २८-बूझो पंडित बात हमारी । आधा नारी पुरुष विचारी ॥ कौन नारि को पुरुष कहावे । किसको

निसिदिन सब कोई धावे ॥ संजोग लाग निरगुन विन पानी । करता ते फिर क्यों अनखानी ॥ पुरुष संयोग पुरुषको छाया । तब माता पुत्रनको खाया ॥

समै—चारों जुग समझाइया, ना समझे सुत नारि ।
कहैं कवीर अब कासों कहिये, अपनी चूकी हार ॥
माताते डांइन भई, लिया जगत सब खाय ।
कहैं कवीर हम क्या करें, जगत नाहिं पतियाय ॥
ससा सिंहको खाइया, हरना चीता खाय ।
कहैं कवीर चींटी गज मारी, बिल्ली मूसा धाय ॥

रमैनी—२९ बीज वृच्छकी सार न जानी । कहो पंडित कैसे ब्रह्मज्ञानी ॥ बीज वृच्छका होय विनासा । तब पावे ठाकुरमें बासा ॥ मैं तोहि पूंछो कहो ब्रह्मज्ञानी । कैसे जोतमें जोत समानी ॥ जिवको भेद लखे नहिं कोई । उपनिषद नास कह सब कोई ॥ करता सबका सिरजन हारा । पंडित नाहीं वेद विचारा ॥

समै—बीज वृच्छ दोनों कायामें, कबहुं नास न होय ।
कहे कवीर या वृच्छको, बिरला बूझे कोय ॥
बीज वृच्छ यक साथ है, आगे पाछे नाहिं ।
बीज वृच्छमें वृच्छ बीजमें, जानत कोई नाहिं ॥
विना बीज वृच्छ है नाहीं, यह जानत सब कोय ।
वृच्छ विना बीजो नहीं, यामें संक न होय ॥

रमैनी ३०-यह धोखा है सबको काला । धरती अकाश धोख पताला ॥ धोखाही हंसे धोखाही रोवे । धोखा जगे औ धोखा सोवे ॥ धोखा जंत्र मंत्र औ टोना । धोखा रूपा धोखा सोना ॥ षट दरशनमें धोखा छाया । धोखेका सब किया कराया ॥ धोखा पुरुष औ धोखा नारी । वेद सुम्रिति सब कहत पुकारी ॥ सनकादिक धोखा मन लाया । चारो जुग धोखाको धाया ॥ बिरला जाने धोखा कोई । प्रगट गुपुत धोखो है सोई ॥

समै-धोखे धोखे सब जग बीता, धोखे गया सिराय ।
थित ना पकडे आपनी, यह दुख कहां सिराय ॥

रमैनी ३१-मन खेले मनहीं मन केला । मनहीं बीज वो मनही बेला ॥ पांच पचीस यह मनके साथा । मनहिं तीन गुण लीन्हे हाथा ॥ मनहिं काल औ मनहीं दूता । मनही राच्छस मनही भूता ॥ मनही पूजे मनही देवा । यह मनकी सब करते सेवा ॥ मनही आदि औ मनही अंता । मनही लीला रचा अनंता ॥ मनही जीते मनही हारा । मन सुमरे औ करे विचारा ॥

समै-नटके साथ जस बेसवा, जियरा मनके हाथ ।
केतक नाच नचावई, राखे अपने हाथ ॥
मनके हारे हार है, मनके जीते जीत ।
कहैं कबीर तहँ मन नहीं, जहाँ हमारी रीत ॥

रमैनी ३२--बुंदकी खबर न काहू पाई । एक बुंदमें सरब समाई॥बुंद बुन्द सकल घट माना । बुंदके मित्र तिरगुन जाना॥ बुंदे राखे सोई ज्ञानी । बुंदे करत जो बुंदे जानी॥ पिरथी बुंदे देवे जोई । बुंदहि ते यह सर्वस होई ॥ इच्छा औ मन जहां न होई । तहां बुंद यह स्थिर सोई॥ थाकी खबर न काहू जानी । यही बुंद सब साज समानी ॥

समै—केते बुंद अलपे गये, केते सुलप वोहार ।
केते बुंद तन धरि गये, तिन्ह रोवे संसार ॥
सकल साज एक बुंदमें, जानत नाहीं कोय ।
कहें कबीर जिन जिव भूले परमपरे भर्म सोय ॥

रमैनी ३३--महा अपरबल है यह माया । जिसका यह सब किया कराया॥ मच्छ रूप मथा समुद्र अपारा । संखासुर मारा वेद उधारा॥कच्छ माया धरती ले आई । वराह धार दशन धरे भाई ॥ खंभ फार नरसिंह बिकरारा । हरनाकुस नख उदर बिदारा ॥ बावन रूप बन बलिको जीता । परसराम पृथ्वी बस कीता ॥ रामचंद होय रावण मारा । कृष्ण रूप धरि कंस पछारा ॥ निह-कलंक कालिंद्रा मारा । और असुर बहुते संघारा ॥

समै—माया ते मन उपजा, मनते दस औतार ।
ब्रह्मा विस्नू धोखे गये, भरम परा संसार ॥
करताके नहिं काम यह, यह सब माया कीन्ह ।
कहे कबीर बूझो माया को, नाव धरो जन कीन्ह॥

रमैनी ३४--सुन पंडित यक बात हमारी । तेरा सुत तुमहीको मारी॥काठ मथके अगिन उपाई । लौट अगिन वह काठे खाई ॥ दोउका नास भये एक ठाऊँ । उडगइ, भसम लीनका नाऊं ॥ जो मिरगा संग मिरगा बंधाई । त्यों अपना सुत आपहिं खाई ॥ ताते करम काठ उरझेरा । पंडित कहा न मानत मेरा ॥ काठ ते घुन उपजे भाई । लौट काठ वह चुन चुन खाई ॥

समै-ब्रिही खेतहिं खात है; मात सुतन को खात ।
कहें कबीर सुत नाती खाये,यह दुख नाहिं बिहात ॥

रमैनी ३५-माके ससुरके उपाव बतावे । टोना टांबर बहुत खिलावे ॥ सब घर लिया चोर बताई । घृतका दीपक धरा बनाई ॥ झांझ मंजीरा ढोल बजाया । खेला नावत भरम बताया॥पता मिलाये सब पतियाने । टोना टांबर बहुत सुखमाने ॥

समै-मूड हिलावे नावत, भरम भीहा बैठाय ।
कहें कबीर इन नावत, राखा सब जग भरमाय ॥
चुरैल भूत ना कोई, गन गंध्रव कोइ नाहिं ।
मनसा डाइन संका भूत, संसार परा भ्रम माहिं ॥

रमैनी ३६-जंत्र मंत्र तंत्र हैसारा । त्रिभुवन अटका यही बिचारा॥ नाटक चेटक ते लौ लाया । टोना टांबर बहुत कुछ भाया॥ जनम विताना याही धंधा । करता आप न चीन्हे अंधा ॥ जहां बचन झूठ सुन पावे ।

लाभ जानके मूल गंवावे ॥ जंत्र मंत्र सो जग पतियाना।
जंत्र मंत्रका मर्म न जाना॥

समै–बीज ते आये चार गुण, बीचे गये सिराय।
उपज बिनस जाने नहीं, सब जग रहा भुलाय॥

रमैनी ३७–कथते कथते जनम सब जाई। बिन बूझे कछु हाथ न आई॥ रतिके कहे त्रिया सुख पाई। विषनी संग विस्वा जारो भाई॥ सुखके कहे सुख जो होई। नैन कहे सूझे दृष्टि सोई॥ भोजन कहे भूख जो जाई। तो धनके कहे धन घर आई॥ अगिन कहे जरे जो पाऊ। बस्ती कहे उजर बस गाऊं॥ पाथर पूजे मुक्त जो पावे। बिन नर नारी सो सुत जावे॥ पाप कटे जो तीरथ नहाये। लील दाग कटे न साबुन लाये॥ जलके कहे जो त्रिषा बुझावे। तो जग राम कहे तरजावे॥ बीज वृक्षका भेद जो पाई। तब यह काया अमर रहाई॥

समै–राम कहत २ जग बीता, कहूं न मिलिया राम।
कहें कवीर जिन रामहि जाना, तिनके भये सब काम॥
यह दुनिया भई बावरी, अद्रिस्ट सो बांधा नेह।
कहें कवीर द्रिस्टमान छोडके, सेवे पुरुष विदेह॥

रमैनी ३८–पाथरकी क्या कीजे सेवा। बोले न चाले कहे न भेवा॥ विन देखेकी झूठी आसा। जल होते क्यों मरे पियासा॥ जब तक ना देखे अपने नैना। तब तक न पतीजे गुरुके वैना॥ शिष्य पियासा गुरुपै जाई। चेलाकी

नहीं त्रिषा बुझाई॥ कछुवन वस्तु अमोल बिकाई। राजा रंक विसाहे जाई॥ वस्तु लीन कछु हाथ न आया। लाभ जान फिर मूल गंवाया॥ सब गुण पूजे निरगुण सेवा। पै नहिं पूजे आतम देवा॥

समै-जहँ नहिं तहँ सब कछू, वहं की बांधी आस।
कहें कबीर ये क्यों न त्रिपत, दोऊकी एके प्यास॥

रमैनी ३९-आपहि वृच्छ आपही बेला। आपहि गुरू आपही चेला॥ आपहि जीवे आपही मारे। आपहि बहे आपही सारे॥ आपहि जती आप संजोगी। आप संन्यासी आप वियोगी॥ आपहिं गिरही आप बैरागी। आपहिं गुनी आप गुन त्यागी॥ आप अज्ञान आप है ज्ञानी। आपहिं आप दूसर कर मानी॥ आप पुजेरी आपहिं देवा। आप अभेद आप होय भेवा॥

समै-आप सबनमें होय रहा, आपन भया निनार।
कहें कबीर एक बूझ बिन, भटका सब संसार॥

रमैनी ४०-मनकी बातें अगम अपारा। मन भटकाया सब संसारा॥ यह मन चोर चुगुल अपकारी। यहं मन जीते यह मनहारी॥ यह मन नाचे यह मन गावे। यह मन ताल मृदंग बजावे॥ यह मन देवी यह मन देवा। यह मन अपनी आप कर सेवा॥ यह मन पुरुष यह मन जोई। रूप न रेख न यह मन सोई॥ यह मन जागे यह मन सोवे। यह मन हसें सो यह मन रोवे॥ यह मन

विरहिन ब्रह्म वियोगी । मनै जती औ मनै संजोगी ॥ यह मन देव निरगुन आकारा । यह मन सुगम अगम अपारा ॥ यहि मनका है नाना रंगा । यह मनके बहु उठे तरंगा ॥ यह मन सब जग चुन चुन खाया । यह मन सब जगको भरमाया ॥

समै—राजा रैयत होइ रहा, रैयत लीन्हा पाज ।
रैयत चाहा सोइ लिया, ताते भया अकाज ॥
मूसा चढ़ा बिलार पर, चढी सिंह पर गाय ।
कहैं कवीर कहत न आवे, सुतकी नारी माय ॥
जब जाना तब भरम भया, बिन जाने भया नास ।
कहैं कवीर पुकारके, मनकी झूंठी आस ॥

रमैनी ४१—हंसी न जावे आवे न रोई । धोखे मरे पुरुष औ जोई ॥ आदि भवानी स्त्री हमारी । हमें छोड भई सुतकी नारी ॥ हमरा यह सब कीन कराया । अनख मान उन मनहिं दुराया ॥ निरगुण रचा पुरुष एक माया । हमको तज उनको बतलाया ॥ अब हम कासों करें पुकारा । हारक बिनवे आपन हारा ॥

समै—महा गुननकी आगरी, महा अपरबल नारि ।
कहैं कवीर यह बड़ा अचंभा, व्याहत भई कुमारि ॥
निरगुन आपन उन रचा, लौट भई वह नार ।
कहैं कबीर अनखायके, रचा पुरुष निरकार ॥

निरगुण निराकार करता ठहरावा, तिनहुं दिया उपदेश।
कहैं कबीर त्रिगुन चले, जहां न चंद दिनेस ॥

रमैनी ४२-कोई तीरथ वरत ठहरावा। कोई जप तप कर भरमावा ॥ कोई उरझे बेद पुराना। पूजा रची कोउ अरुझाना ॥ कोई नाद बिंदमें लागा। सुन्न बिसन्न कोइ चला अभागा ॥ कोई बैठा आसन मारी। पंचअगिन कोई तन जारी ॥ कोई मूँड़ मुड़ाय भर्माना। कंठी छाप तिलक मनमाना ॥ नाना भांति पृथ्वी लागी। विन कर्ता मन भरम न भागी ॥

समै-गुरवा संग सब कोइ भटके, करता परा न चीन्ह।
कहैं कबीर मनके भ्रम भूले, गुरु सिक्ख जिव दीन॥
आगे आगे गुरु चला, जहां न ससि औ भान।
कहैं कबीर पाछै चला, गुरुमे यहू समान ॥

रमैनी ४३-रंकार माया जब चीन्हा। यही मंत्र ब्रह्माको दीन्हा ॥ ब्रह्मा ते सिव विस्नू भाई। यही मंत्र सनकादिक गाई ॥ यही मंत्र नारदमुनि पावा। यही मंत्र सुर नर मुनि ध्यावा ॥ यह मंत्र जपा गौतम व्यासा। यही मंत्रका सिव दुरवासा ॥ यही मंत्रका त्रिभुवन चेला। याही मंत्रके बृन्छ नवेला ॥ यही मंत्र कथा वेद पुराना। यही मंत्र सबके मन माना ॥

समै-माता गुरु पुत्र भये चेला, सुतको मंत्र दीन।
कहैं कबीर माताको वचन, सबदिन चित धर लीन॥
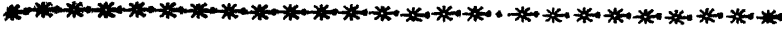
तिसका मंत्र सब जपे, जिसके हाथ न पांव ।
कहें कबीरसो सुत माको. दिया निरंजन नांव ॥
जपते २ जी गया, काहू मिलिया नाहिं ।
कह कबीर तउ नाहीं समझे, सब लागे वहि माहिं ॥

रमैनी ४४—जमी असमान तहां नहिं सोई । हता न पुरुष हता न कोई ॥ पांचो तत्त्व हते नहिं भाई । यह बिस्वरूप कहां ते आई ॥ कहां ते आई आदिभवानी । कैसे रची चंडिका रानी ॥ कौनसे जगह राम अस्थाना । श्री सहित कह रहे भगवाना ॥ कौन सरूप कौनसे देशा । पंडित मुझको देहु संदेसा ॥ लौट पंडिता कहें कहानी । भक्त भागवत रहो तहँ आनी ॥

समै—बिस्व रूप सब साथ था, बिस्वरूप यह सोय ।
जैसे साज पींड़की, आगे पाछे न होय ॥
बहे बहाये जात थे, लोक वेदके साथ ।
बीचे सतगुरु मिल गये, दीपक दीन्हा हाथ ॥
तुझहीसे सब कुछ भया, सब कुछ तुझही माहिं ।
कहें कबीर सुन पंडिता, तेहि ते अंते नाहिं ॥

रमैनी ४५—बूझो पंडित बात हमारी । वेद पुरान शास्त्र बिचारी ॥ बिजनासे पौन कहातें आई । बिजना टूटे कहां समाई ॥ काठते अगिन काठको खाई । लौट अगिन वह कहां समाई ॥ कासीमें धुन उठहिं अपारा ।

कासी टूटे कहां बिचारा ॥ होते बिरवा लीन उखारी । फल औ फूल गये केहि बारी ॥

समै-करता सब घट पूरना, जगमें रहा समाय ।
कहें कबीर एक जुगति बिन, सब कछु गया नसाय ॥

रमैनी ४६-भौको सागर यह संसारा । सब जिव पर मायाकी लारा ॥ देव रिषी सुर गये सयाने । त्रिगुन गये जात नहिं जाने ॥ गन गंध्रब पुरुष औ जोई । असुर मुनी सुर रहा न कोई ॥ पीर पैगम्बर औलिया भाई । गौस कुतुब औ राजा राई ॥ यह भौसागर भव अस्थाना । अंत एक दिन सबको जाना ॥ निरगुन पुरुष रहेगा सोई । त्रिभुवन मरे रहे न कोई ॥

समै-आद अंत अमर हम देखा, जीव मुवा नहिं कोय ।
यह बिश्व रूप ब्रह्मज्ञानी, उतपत प्रलय न होय ॥
मत भूलो ब्रह्मज्ञानी, लोक वेदके साथ ।
कहें कवीर यह बूझ हमारी, सो दीपक लीजे हाथ ॥

रमैनी ४७-बैठ सिंहासन आद भवानी । तीनो सीस नवायो आनी ॥ भय आयसु सेवा चित लावा । आद पुरातम भेद बतावा ॥ हम महामाया मातु तुम्हारी । तीनों मानो बात हमारी ॥ लौटि पूछे ब्रह्मा यह बाता । काकी नार कहो तुम माता ॥ निरंकार निरगुन जो देवा । सो मम कंथ कहा यह भेवा ॥

समै-त्रिदेवा सुमरन लगे, पूजा रचा ग्रंथ ।
तिरिया गई पर पुरुषपै, छोड आपना कंथ ॥

त्रिया कंत न माने, कंता ठाढे द्वार।
सुतको कंत कीन्ह बरनारी, महा अपरबल नार ॥
रमैनी ४८-इच्छा बिप्रित जबे जिय आई। बीजमें अंकुर तबे दिखाई ॥ उठा बीज तीन भय बारा। तीन भये संयोग व्योहारा ॥ महामाया महा रीत भारी। कंतापै आई वह नारी ॥ रीत माँग रीत दीन नचाई। त्रिया अनखाय पुत्रपै आई ॥ धिरज न कीन्ह नारि अनखानी। तजा कंत पुत नारी मानी ॥
समै-कर्ता हम कर्ताकी नार, धीरज न कीन उन।
निरगुन रचा बिचार, धीरजमें सब होतथा ॥
अधीरज कीन्ह विनास, कबीर अब्र कछु न कहना।
अबकी गूठी आस, काहू विधि बनैना ॥
रमैनी ४९-ब्रह्मा पूछे सुनो भवानी। अपन आप तुम कहो कहानी ॥ लौट भवानी सुत समुझावे। अपने पार न और बतावे ॥ खंड ब्रह्मण्ड मैं रची अनंता। सूर्य चंद्र उड़गन अनंता ॥ चौरासी सब हमहीं निरमाई। ओंकार जब ताहि सुनाई ॥ आदि अंत मोहिं पूजें देवा। करो हमारी तीनों सेवा ॥
समै-निर्गुन निर्गुन दोऊ उड़ाइस, आप रही ठहराय।
आपहिं पुरुष नारि ठहरानी, ब्रह्मा कहे समझाय ॥
ब्रह्माके प्रतीत भई, बांधा वेद ग्रन्थ।
प्रगट नैनन देखत नहीं, परा वेदके पंथ ॥

मायाते यह वेद भै, वेद मध्य दोय तत्त ।
निर्गुन सर्गुन दो बतलावे, कहे नाहिं जो सत्त ॥

रमैनी ५०-परम मद माते नर औनारी । जुग गये चार न मिटी खुमारी ॥ माते ब्रह्मा विष्णु महेशा । माते नारद शारद शेषा ॥ माते सनकादिक सब देवा । माते रिषि मुनि करते सेवा ॥ माते नाथ सिद्ध गोपाला । माते शिव नारी बृजबाला ॥ माती लच्छमी आदि भवानी । माती सती ब्रह्मा ब्रह्मज्ञानी ॥ तीनलोक परम मद माता । सिध साधक है येही बाता ॥

समै-महा माया भाठी रची, तीन लोक बिस्तार ।
कहैं कबीर हम रहे निनारे, पी माता संसार ।
ब्रह्मा पियत पिया सब काहू, करता अपन न चीन्ह ।
कहैं कबीर अब कहत न आवे, विरंच इसारा कीन्ह॥

रमैनी ५१-सबे आस वहांकी ठानी । वहांकी गति काहु न जानी ॥ निराकार सब करे करावे । ज्यों बाजीगर कपिहि नचावे ॥ वाहिके हाथ जीवन औ मरना । ताते वाही पुरुषते डरना ॥ वह सब ठांव सबसे न्यारा । उनहि कीन्ह यह सब बिस्तारा ॥

समै-कब जैहो वहि देशवा, जहां पुरुष निरंकार ।
कहैं कबीर हमहूं ते कहियो, जब होय चलन तुम्हार ॥
आगे गये तिन किनहु न कहिया, अब तुम लीजो साथ॥
जो है तुम्हे भरोसवा, गहो हमारा हांथ ॥

त्रिय देवा जान्यो नहीं, कौन रूप केहि देश।
अबहूं चेत समझ नर बौरे, झूठा दिया उपदेश॥

रमैनी ५२—महामति माया आदि भवानी। पांडो घर द्रौपदी रानी॥ रुधिर पियासी भइ मइ माया। अष्टादस छोनी दल खाया॥ इतने खायसि तउ न अघानी। पांडव गरे हेवांरे आनी॥ छप्पनकोट जदुबंस सिधारी। तऊ न त्रिपित भई हत्यारी॥ सुंभ न सुंभ महिषासुर मारा। हरनाकुश रावन संहारा॥ सुरनर मुनि सब खोये झारी। कोइ न बांचा यहि संसारी॥

समै—करताते अनखानी माया, आगम कीन्ह उपाय।
कहैं कबीर त्रिया चंचल, राखा पुरुष दुराय॥
केता हम समझाइया, पै ना समझे कोय।
उनका कहा जगत मिल माना, हमरे कहे क्या होय॥

रमैनी ५३—ब्रह्माके घर भई ब्रह्मानी। शिवके बैठी आद भवानी। विष्णुके भई लछमी नारी। गंध्रवके घरअपसरा बारी॥ इंद्रके बैठी होय इंद्रानी। राजाके घर भई पटरानी॥ जोगीके चेली होय आई। देवनके देवांगना कहाई॥ तुरकनके तुरकानी खेली। सब घर छला त्रियाअकेली॥

समै—पुरुष अपनते विरची नारी, घर २ कीन्हा ठांव।
निरगुनको करता ठहराया, मेट हमारा नांव॥

रमैनी ५४—त्रिय देवा मिल पूछे भेवा। कैसे तुम्हे

पढायो देवा ॥ वह निरगुन तुमहो गुनवंती । निरगुनते कैसे भई जनती ॥ प्रथमे माय होय फिर नारी । यह मेटो तुम संक हमारी ॥ निराकार निरगुन है करता । चहिये सो करे चित धरता ॥ उनका आदि अंत नहिं पाया । जिन रचि हमको तुम्हे पठाया ॥

समै-त्रियदेवा समझे नहीं, भई माय ते नार ।
उन भूलत भूला सब कोई, कहें कबीर पुकार ॥

रमैनी ५५-बेद शास्त्रको बोद्ध गुन गावे । नेति २ फिर अथाह सुनावे ॥ जोगी गगन मंडलको धावे । देख आप दूजा ठहरावे ॥ बैरागी चितमे धारे ध्याना । दरशरूप नारायन ठाना ॥ जिंदा कहें नूर हम देखा । झूठा दरशन नहीं विसेषा ॥ करता अपन न चीन्हे कोई । ईसर सुमरे पुरुष औ जोई ॥

समै-वेद बरन जो पावें, कहें एक तो बात ।
जैसी कुछ माता कही, सोइ कहें दिन रात ॥

रमैनी ५६-इच्छा रूप भई एक गाई । सो वह गाय महा हरहाई ॥ चार पांव दोय सींग है भाई । पत्र अठारे परम सुहाई॥ नौ नारीका पीवे पानी । स्वेत सींग बिगरहकी खानी॥ सुर नर मुनी करें नित सेवा । ब्रह्मा विष्णु महेसर देवा ॥ गाई बांध बिच दावर लाई । तब वह गाई तोड़ पराई ॥

समै-वृक्ष एक छाके नई, फूटी साखा चार ।
अठारह पत्र चार फल लागे, फुलवा लेहु विचार ॥

रमैनी ५७—सांचा देव झुठ पूजें देवा । वृच्छ नहिं फल चाहे करि सेवा॥झूठे पीर पैगम्बर भाई । सांचा देव झूठ लौ लाई ॥ झूठे योगी जंगम उरझाने । झूठे हिंदू हरी न जाने ॥ झूठे तुर्क अल्लह नहिं पाया । बैरागी झूठे मूड मुडाया ॥ झूंठा ध्यान लगावे सेवा । लोटा रिझाय पुजावे देवा ॥ तीरथ जाय पै राम न जाना । झूठ परपंच जगत पतियाना ॥ झूठ सन्यासी जटा रखावें । करता का कछु भेद न पावें ॥

समै—तुम जो भूले बेद विद्या, करता अपन न चीन्ह ।
कह कबीर यहि भ्रममें, सकल सृष्टि जिय दीन ॥

रमैनी ५८—जने तीन परपंची देवा । तिनहूं उनकी कीन्ही सेवा ॥ सेवा कीन्ह भेद नहिं पाया । उन अन-खायके हमें छिपाया ॥ जोग जुगत ब्रह्माको दीन्हा । कुंडली साध गगनको चीन्हा ॥ काया माहि एक मंजारी । तेहि संग जोगी जोग बिचारी ॥ दिन उपदेश निरगुन ठहरावा । पेंड़ छोड़ डार अरुझावा ॥

समै—उनके संग गये तिरदेवा, गया जग उनके साथ ।
कहें कबीर अब मरो मसोसन, मल २ दोनों हांथ ॥

रमैनी ५९—भेद अभेद न उनके होई । निर्गुन पुरुष करता है सोई ॥ हते न तत्त न त्रिगुन देवा । सकल कीन्ह यह सुन्यते भेवा ॥ नाभि कमल होय ब्रह्मा आया । तिन पहिले नारदको जाया ॥ ॥ फिर ब्रह्माकी इच्छा आई ।

मानसी पुत्र भये बहु भाई ॥ ब्रह्मा जान धरले बैरागा। बिना गहे बजावे रागा ॥ साठ कन्या ब्रह्मा ठहराई। कस्यप तिन मिल सृष्टि कराई ॥

समै-निहततसे कैसे तत भया, सुन्न ते भया अकार।
कस्यप कन्या कहां हती, पंडित कहो विचार ॥
पुरुष कामिनि एक संग, कंथ नर संयोग।
कहैं कबीर सुन पंडिता, पुत्र न कंथ वियोग ॥

रमैनी ६०-मैं तोहिं पूछो पंडित ज्ञानी। पंद्रह तिथ तैं कहांसे आनी ॥ सात दिवस को करे है भाई। राम पाषाण कैसे भय आई ॥ चार बरन कहां ते आना। जुगन चारका करो बखाना ॥ कौन मते भाई बहिन नारी। पुत्र पिता ठहरी महतारी ॥ दोय संयोग अनेक होय आया। कहो पंडित कैसे ठहराया ॥

समै-पंडित भूला बेद पढि; लखा मूल ना भेद।
एक नारि एक पुरुषते, सकल साजना खेद ॥

रमैनी ६१-निरगुन पुरुष निरंजन देवा। सब जग करे ताहिकी सेवा ॥ अपन अपन मत कीन्ह बिचारी। बात न बूझे कोई हमारी ॥ बैरागी कहे लेउ बैरागा। ब्रह्म चारी तीरथ व्रत लागा ॥ संन्यासी सर्व नास कराया। जोगी जुगति कर प्रान चढाया ॥ जिंदा परा कुरानके फंदा। भा छानवे झूठ पाखंडा ॥ भेष धरी यहि गुरुवा खिलावे। आप गुरू होय जगत बतावे ॥

समै–नहि कंठी नहिं माल है, नहीं तिलक नहीं छाप ।
न ह वाके कछु भेष है, नहिं वाके तप जाप ॥
जात बरण कछु भेष नहिं, नहि धोखेकी बात ।
ज्ञान भया धोखा गया, ज्यों तारा परभात ॥
जो बहा सो बहनदे, ताते चेत शरीर ।
तैं अपनेको बूझले, कहत पुकार कबीर ॥

रमैनी ६२–मन थिर होय बसे घर मेरा । यह मन घर जारे बहुतेरा ॥ जहं २ जाय तहां तंह फंदा । किनहु न देखा परम अनंदा ॥ जोगी जती तपी सन्यासी । ब्रह्म चार बैराग उदासी ॥ तत्त्व जार जीवको नासे । धोखा अपना नाहिं बिनासे ॥ धोखा मूसे सब संसारा । धोखा कोइ न बुझावन हारा ॥

समै–आपन घर माहुर भयो, छोड २ पछताय ।
कहें कबीर घर औरके, पूछत पूछत जाय ॥

रमैनी ६३–अंते ढूढे सब संसारा । करता निकट न लखे गंवारा ॥ आद उपदेश समाध लगाई । अंग बिहूने रहा लौ लाई ॥ पांच तत्त्वका नास कराया । निराकार समाध पर आया ॥ पांच तत्त्व जीव है सोई । तत्त्व हीनता पुरुष न कोई ॥ चार ठौर गुरुवा दिखराया । तेहि धोखे मिल सुन्य समाया ॥

समै–पांच तत्त्व निज मूल है, हम करता इन माहिं ।
नख सिख ते पूरण बना, सो फिर अंते नाहिं ॥

समै–बहुत मिले बहु भांति, मन अनमिल सब सो रहा।
जाते जियकी पांत, ते जग दुर्लभ पाहुना ॥
जान पूंछ कुंवा ना परे, तजा न पुरुष विदेह ।
कहैं कवीर कासों कहूँ, जो छोडे झूठ सनेह ॥

रमैनी ६७–चले जात सब रंक औ राया। स्थान रहन को किनहु न पाया ॥ जो समझाऊं समझे न कोई। सुनके बचन वैरी जग होई ॥ मूसाके डर नाच बिलारी। सिंह गऊकी करे रखवारी ॥ भैसा न्याव चुकावे भाई। मछरी चढी खजूरपै जाई ॥ केचुआ सरपते कीन्ह सनेहा। घट २ रहा एक पुरुष विदेहा ॥

समै–रातदिन कछु है नहीं, सुन्य पींजरती है सूवा ।
कहैं कवीर ख्याल यह अटपट, नाहीं जिया न मूवा ॥
जाने नही जान जग दीना, जानते भया बिजान ।
कहैं कवीर बेजानको, अबहुंक परे पहिचान ॥

रमैनी ६८–ग्रह चालको करे बिचारा। पाखंड होय जगत रखवारा ॥ द्वादस रास पृथ्वी परछांई। चौवन अच्छर वसे तेहि आई ॥ रासे रास ग्रह नौ लागे। ग्रह चालमें परे अभागे ॥ गृहमंदिलकी खबर न पाई। ग्रहन बीच बसे सब भाई ॥ जो देखे सो ग्रह को फंदा। ग्रिहि न देखो को अनंदा ॥ नहिं जानो ग्रह कहांते आया। मोहिं नहिं काहू ग्रह बताया ॥

समै–ग्रहन नाहीं पर सब जगत, परे गरहन केरा भाग।
मै नहिं जानो पंडित कवे, गरहन ऐहि लाग ॥

चंदा गरहन गरासिया, ऐसे गिरहित लोग।
उग्रह होन न पावई, दिन २ बाढे रोग॥

रमैनी ६९-सुख तजके जग दुख बिसाहीं। आपहिं सुख आपहिं दुखलाहीं॥ जहांजाय तहं औरहिं रीती। जगकी परी काल सो प्रीती॥ पंडित मिले ग्रह दशा बतावें। नावत भूत प्रेत सुनावें॥ ऋषि मुनि कर्म कहें समगाई। वैद्य पित्त कफ बात बताई॥ देखव देवी देवत बानी। बात न कछु उन कहिवत जानी॥

सम-नारायन बैदा भया, रोगी नवा संसार।
राम २ करि पचि मुवा, कीन्ह न अपन बिचार॥

रमैनी ७०-घर सब सोवे कोउ न जागा। रैन चोर घर मूसन लागा॥ पंडित माते पढें पुराना। ज्ञानी माते कथ २ ज्ञाना॥ जोगी माते कान फराई। सन्यासी माते जटा बंधाई॥ जंगम माते घंट बजाया। सेवडा माते दया बताया॥ अघोर माते मलमुत खाई। भगत माते तिलक लगाई॥ बैरागी माते सब कछु नासी। जिंदा माते भये उदासी॥ कामिन माती करी सिंगार। पुरुष माते पढ राम ककहार॥

समै-मठ अकाश बैठत हैं जोगी, चोरवा मूसे भंडार।
वह चोरवाको कोई न चीन्हे, चौरवा ठाढ दुवार॥
चोरवाको हम चीन्हा, चोरवा हमे न चीन्ह।
कहें कवीर वह चोर अपरबल, सबकी बसुधा लीन्ह॥

रमैनी ७१—चेतन रहे न चोरवा, पावे । अचेत पिंड को सदा सतावे ॥ चोरवा एक जुगतते मूसे । चेतन रहे अचेतन विनसे ॥ चोरवा की बात न जाने कोई । चोर बिडारे सब घर खोई ॥ हम चोरवा को जाननहारे । हम चोरवाते रहें निनारे ॥ जो चोरवा का जाने भेवा । आपुहिं करता आपुहिं देवा ॥

समै—अछै पुरुष का बीज यह, वृच्छ न जाने कोय ।
तातै चोरवा मूस अब, कछु ओ कहे न होय ॥
आगे हमारे साथ था, अब भा जिवका काल ।
कह कवीर यह चोरवा चीन्हो, मिटे जीव जंजाल ॥

रमैनी ७२—नैना है पर आंधर भाई । सरवण है पै सुना न जाई ॥ जोगी है पै जुगत बिहूना । बस्ती है पै मंदिल सूना ॥ त्रिया है पै पुरुष न कोई । पुरुष है पै बांह न जोई ॥ पेटतो है पै अन्न न खाई । जीव तो नहीं पै जीवत भाई ॥

समै—पंडित भेद सुनावहू, नहिं तो छांडो गांव ।
मैं पूंछो तोहि पंडिता, निराकार केहि ठांव ॥

रमैनी ७३—कहो पंडित हो मोहि समुझाई । जात बरन कुल कहां ते आई ॥ कौन मते भाइ बहिन कहावे । कौन मते ब्याहले आवे ॥ कौन मते सुद्रा ब्रह्मानी । कौन मते वैश्या क्षत्रानी ॥ पांच तत्त्वका एके भेला । ता संग भयो जीवको मेला ॥ रक्त मांस हाड़ इक गूदा ।

तिनमें कौन ब्राह्मण सुद्रा ॥ वही नार वही पुरुष बियाई । बिंद चोराय सुपचकी लाई ॥ तब वह केहिकी भई नारी । को भय पूत कहु पंडित बिचारी ॥

समै-पंच तत्त्व हम जानत, और न जानत कोइ ।
हमरा भेद जो पावे, तब वह अस्थिर होइ ॥

समै-दो संयोग जग भीतरे, कंथ भामिनि नेह ।
अष्ट धातका युगल तन, एक प्राण दो देह ॥
पढ पोथी भटका मारत, घटकी जानत नाहिं ।
कह कवीर जो घट लखे, तो फिर घटही माहिं ॥

रमैनी ७४-जोइ नरक सोइ सरग बिचारा । जो पृथ्वी सोई पतारा ॥ जो है घट सोई ब्रह्माण्डा । सोई छिद्रम छांनबे पांखडा ॥ जोइ पुरुष सोई भइ नारी । जोइ पिता सोइ महतारी ॥ जोई गुन अवगुन है सोई । जोई पाप पुन्य है सोई ॥ जोइ निराकार सोई अकारा । जो मारे सोइ पालनहारा ॥ जो खाये सोई ना खाई । राय जोई सोइ रंक कहाई ॥

समै-नरक सरग कोइ और है, करताके नहिं काम ।
सुन कहानी तोसों कहों, ऐसे कैसे राम ॥

रमैनी ७५-पहले माया फिर आमाया । तमते फिर सुभाव ठहराया ॥ सुभावते फिर भया अकासा । अकासते वायु कीन्ह प्रकासा ॥ वायु ते अगिन अगिन ते तूवा ।

तुवा ते पृथ्वी औषद हुवा ॥ औषद ते अन्न अन्न ते पुरुखा। पंडित जानत और सब मुरखा ॥

समै–कहो पंडित कछु न हता, केहिते भया अकार।
कहें कवीर कैसे रचा, कहो प्रगट बिचार ॥
पांच तत्त्व गुन तीन जो, जियरा तिहि संयोग।
संजोगे सब कुछ भया, झूठे बोलत लोग ॥
पांचोका भेला पडा, प्रान बसे ता माहिं।
कहें कवीर भेला छुटे, फिर यह जियरा नाहिं ॥

रमैनी ७६–अवस्था चार मुकति भई भाई। जाग्रित स्वप्न सुषोपति आई ॥ तुरिया भई तब ब्रह्म समाना। मेटा फिर उन आवन जाना ॥ सालोक सारूप औभया साजुजा। सामीप भया तब जोत प्रदिजा ॥ ज्ञान प्रदीप जबे कछु होई। जोतमें जोत मिले तब कोई ॥ चार अवस्था पर जब आई। चार मुकति ले सुन्य समाई ॥

समै–सुन्यको होती सब कहो, जहां सुन्य तहां नाहिं।
मुकत अवस्था कुछ नहीं, जिवपर संशय माहिं ॥
चार चौकडी संशय गई, संशय तऊ न छूट।
कहें कवीर सोई ब्रह्मज्ञानी, क्या कहूं वैकुण्ठ ॥

रमैनी ७७–जीव मुकत निराधार कहाया। पसन मध्यमा बैखरी माया ॥ दोनो कीन हैं दोय शरीरा। ना माया पांच धरे कवीरा ॥ ऊपर सोवे वासना वासे। दोऊ शरीरका सोई बिनासे ॥ पांच तत्त्वका जात है सोई।

नौ तत्त्वका जो राखे कोई ॥ तन छूटे तेहि माहिं समाई।
दोहरा नौतम कैसे पाई ॥

समै-कुम्भ भरा जो फूटे, दूसरे में क्यों जाय।
कहे कबीर सुनो ब्रह्मज्ञानी, कैसे अंत जीव समाय॥
जीव न अंते जात है, जैसे घटको नीर।
यह शरीर घट जीवको, समझाय कहें कबीर॥
सो गुन कबहुं न बीसरे, जो गुन होत शरीर।
मन भरमत चौरासी, कहहिं पुकार कबीर॥
स्वेत कृष्ण जिय पीयरा, हरा लाल जिय जान।
पांच तत्त्वके रंग रंगो, पांचोंको पहिचान॥

रमैनी ७८-नेम धरम पूजा लपटाना। ज्ञान कथा अस्थान न जाना॥ अस्थान भङ्ग देखे सब कोई। अस्थान लखे बिनै थित न होई॥ रिषि औ मुनि अस्थानन भाषे। प्रेम धाम अस्थान सो राखे॥ कथा कवित्त बहुत कुछ गाया। करंताका अस्थान न पाया॥

समै-पांच तत्त्व अस्थान निज, इनहिं बिहूना नाहिं।
कहें कबीर बूझो ब्रह्मज्ञानी, जनि पर संशय माहिं॥

रमैनी ७९-तीरथ व्रत रहा लौ लाई। देव दिवाले देव मनाई॥ पितरके नाम सराध करावे। आपहिं नरक सरगले जावे॥ बिनती करके देये मयारू। अबकी बार प्रभु मोहि त्यारू॥ कहे गुरू मोहिं पार लगाई। ताते गुरुवा मंत्र लियो भाई॥ गुरु मंत्र लीना जिव जानी। गुरु

शिष्यकी न त्रिषाबुझानी ॥ घर २ होय निरगुनकी सेवा । निरगुन मंत्र दियो गुरुदेवा ॥

समै-सिक्ख समाना गुरूमें, निजके लागा नेह ।

बिलगाये बिलगे नहीं, एक परान दो देह ॥

रमैनी८०-षट दरशन सुनु बात हमारी । आपन आपन मत कीन निनारी ॥ हरि ब्रह्माते कछू न भेवा । भिन्न भिन्न करु काकी सेवा ॥ सब पंडित मिल रहो बिचारी । हरि ब्रह्मा किनके त्रपुरारी ॥ पिताका कोई खोज न पावे । बिन करता निरगुन बतलावे ॥ पिता नाल का दुर मन आना । भिन्न भिन्न करि भिन्न समाना ॥

समै-प्राण तत्त्वको दुख नहीं, अस्थानेका दोष ।

कहें कबीर समझ जिय अपने, दूसरका नहीं भरोस ॥

सिंह चले हर माहीं, सीगट बोवे धान।

कहें कबीर यह बड़ा अचंभा, छागल भयल किसान ॥

रमैनी ८१-प्राण अपान व्यान उदाना । पांच वायु यह सहत समाना ॥ श्रवणनेत्र औ रुधिर तुचाया । सर्व अंगका होम कराया ॥ विजिया होम अपनका कीन्हा । परव्रित छोड निरव्रित लीन्हा ॥ निरव्रित भया ब्रह्म लोके जाई । बहुर परव्रिति न कबहूं आई ॥ अपनासे निरगुन ठहरावे । सो ज्ञानी ब्रह्मलोकहिं जावे ॥

समै-निरगुन ठहरा सुन्यमें, आपा डारा खोय ।

कहो ज्ञानी तोसो कहों, सो मिट कैसे होय ॥

ज्ञानी बूझो आपको, अस्थान बूझले थीत ।
कहें कबीर नैनन दिसे, ताकी करो प्रतीत ॥

रमैनी ८२-सेवत सुन्य दुख सूना होई । ज्ञान स्वरूपी सिष्टिमें जोई ॥ मान अपमान न वाके भाई । पारब्रह्ममें रहा समाई ॥ वाको मुक्तिकी नाहीं संसा । वह तो सुन्य नगरके हंसा ॥ ज्ञान विज्ञान त्रिपित वह भयऊ । इंद्रिन जीत पार होय गयऊ ॥ सब इंद्रिनको वह बस लाया । आपा खोय निरगुन ठहराया ॥ भौसागर सो उतरा पारा । फिर न आया यहि संसारा ॥

समै-जो चेतन तेहि सब कछु व्यापे, जड़को व्याप न होय।
कहँ कबीर बातें यह झूठी, माने वचन न कोय ॥

रमैनी ८३-चलो जांय बसें वही गाऊं । सुन्य शिखर है वाको नाऊं ॥ पाप न पुन्य दिवस न राती । सुख न दुख न जात न पाती ॥ मुनी ऋषीसुर नहिं देवा । स्वामी सेवक नाहीं सेवा ॥ गुन नहिं कर्म वृच्छ नहिं बेला। तुरुक न हिन्दू गुरू न चेला ॥ भूख न प्यास पीवे न पानी । राव न रंक नहीं रजधानी ॥ बेद न भेद श्रवन न कोई। अनेक न भेष पुरुष न जोई ॥ माया मोह न छै मद कोई । निराकार निरगुन है सोई ॥ तहां जाय कीने बिसरामा । चलो विगत जै भर्म मुकामा ॥

समै-निराकार निरगुन है करता, वाके रूप न रेख ।
तुम कैसे वही मिलिहौ, समझावो करी विवेक ॥
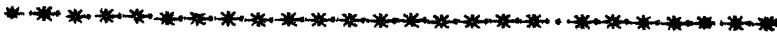
रूप न रेखा निरगुन है साहेब, जब नाहीं वहि देश ।
वहिके वरण तुमहू होइ जैहो, बहुरि न मिले संदेश ॥
वहां न जावो रहो यहि देसवा, मानो कहा हमार ।
कहँ कबीर वह झूट संदेसवा, यह सुखका दरबार ॥

रमैनी८४–ब्रह्मपुरी एक ब्रह्म बनाई । प्रेम वियोग तहां नहिं भाई ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा । बेद विरंचि करें तेहि सेवा ॥ सनकादिक ओ जनक विदेही । और लच्छमी और ब्रह्मा सनेही ॥ द्वादस भक्ता सिद्ध चौरासी । नौ नाथ ऋषि सहस अठासी ॥ गण गंध्रब औ किन्नर भाई । जच्छ देव मिल केल कराई ॥ चलो जांय बसें वहि देसा । भौसागरका न मिले संदेसा ॥

समै–पंडित मोही ले चलो, जौन देश वह लोग ।
ढूँढत मोहि भये जुग चारी, मिटा न परम वियोग ॥
सबहीं गये ये हमरे, अविनासीके गाम ।
कह कबीर करता तुम बूझो, लेव न वाको नाम ॥
एक समय हम गये वहि देसवा, वहां मिला ना कोय ।
बूझ अस्थान गहो जो ज्ञानी, उपज बिनस नहिं होय ॥

रमैनी ८५–सुन्य नगर चल देखो आई । जेहि कौतुक मन रहा ठहराई ॥ कोट चन्द्रका उदे तहँ होई । कोट भान तहँ तपते सोई ॥ कोट ब्रह्मा तहँ पढते बेदा । कोट विष्णु तहँ कहेते भेदा ॥ कोट संकर तहं करते सेवा । कर जोरे तैंतीसो देवा ॥ कोट भवानी ठाढी द्वारा । कोट

धरमराय करत बिचारा ॥ कोट राम तहं ठाढे रहहीं । कोट कृष्ण कथा तहँ कहहीं ॥ कोटिन अनहद बाजे बाजा । पार ब्रह्म तहं करे सु राजा ॥

समै-चल ज्ञाती मैं चलिहो, यह कोतक जेहि देस ।
मेरे जिय एक अचंभा, पार ब्रह्म केहि भेस ॥

रमैनी ८६-मारकंडे मरे न भाई । धरती अकास दुनी सब जाई ॥ होय अलोप जावे रवि चंदा । अच्छै बृच्छ पर बालमुकुन्दा ॥ दम आंगुल पुरुष होय जोई । तीन लोक जेहि जाय समोई ॥ विस्नू सोवें जगें भवानी । नाभि तै ब्रह्मा सुनो ब्रह्मज्ञानी ॥ मुखते ब्राह्मण भुजा ते छत्री । उदरते वैश्य पगते सुद्री ॥ चार ऊपर चौंसठ फिर जाती । सगरी सृष्टि भई यहि भांती ॥

समै-मैं तोहि पूछों पंडित, तुमहू थे वहि पास ।
जो यह बिध समझावत, कह कछु वेद औ ब्यास ॥
अस पंडित कथ भाषत हम, नाहीं जानत भेद ।
ब्रह्मा कही ताते हम जानी, सबहिं बतावत वेद ॥
वेद ब्रह्मा कहा भवानी, ब्रह्मा कीन्हा ग्रंथ ।
कहें कवीर करता नहीं, भाषो मायाका यह पंथ ।

रमैनी ८७-दोपच्छ सृष्टि २ की खानी । दोनों पच्छ बूझो ब्रह्मज्ञानी ॥ एक मास दो पच्छ है भाई । पाप पुन्य दो रहे ठहराई ॥ पिता पुत्र गुरू औ चेला । स्त्री पुरुष

वृच्छ औ बेला॥ दिन औ रात सूर औ चंदा। गगन औ धरनि स्वामी औ बंदा ॥

समै—एक पच्छ अस्थान भंग है, एक लीन्हे अस्थान।
कहैं कबीर सुनो ब्रह्मज्ञानी, सो अस्थाने जान ॥

रमैनी ८८—सुन्य नगर जाको वार न पारा । इक्कीस सरग ब्रह्मंड अपारा ॥ बचन मोर तुम सुनु तिर देवा। आद पुरातमको यह भेवा ॥ ररंकार धुन निरगुन होई। जोग रस कर देखे कोई॥ वाहीकी हम हैं बहुत पियारी। तुम्हरे कारन भई निनारी ॥ तुम ना जानो पिताका भेवा। पिता का समझो तुम त्रिय देवा॥ यह भौसागर महा बिकरारा। समझ पुत्र तुम होहु निनारा ॥ ध्यान धरो तुम तीनों भाई। सुन्य नगर तुम रहो समाई ॥

समै—वहां नहीं पिता तुम्हारो, हम हैं पिता तुम्हार।
वे नारी हम उनके पुरुष, बिच राखा निरंकार।
माता कहा सोई हम मानत, तुम्हरी झूठी बात।
प्रथमे माय हमारी सेवा, जाका यह विस्तार॥

रमैनी ८९—निरगुन पुरुष पुजावे देवा। आवो माता करें हम सेवा॥ माता कहो हमे समझाई। कौन पुरुष ते ध्यान लगाई॥ जो तुम कहो सोई हम जानी। और का कहा न कबहूं मानी॥ लौट माता पुत्रन समझावे। निराकार निरगुन बतलावे ॥ हमें मेट ठहरावे देवा। आदि कथाका कहैं न भेवा॥

समै-हमे दुराय ठहरावैं धोखा, ऐसी त्रिया अनखान।
कहैं कबीर मानों त्रिदेवा, माताकी पहिचान ॥
रमैनी ९०-हम बूझें ब्रह्मा ते कहानी। कहोका कहा आन भवानी॥ लौट ब्रह्मा निज कहैं कहानी। माता बचन निरगुन हम जानी॥ नीरी कोइ न वह सनेहा। पांच तत्त्वकी धरे न देहा॥ निहतत्त्व निरगुण निराकारा। निहकामी वहै वार ना पारा॥ बरन न मेख न पीवे न खाई। कर्म रहा सब जग ठहराई॥ वह निहकर्मी त्रिगुन ते न्यारा। गगन मंडल हम देखत अपारा॥
समै-निहततसे कैसे तत्त्व भया, निरगुनते गुणवंत।
निहकर्म ते कैसे कर्म भया, कहो समझ व्रितंत॥
रूप रेख वाके कछु नहीं, कैसे आवे ध्यान।
कह कबीर अबहूं क्यों न चेतो, कहा हमारा मान॥
रमैनी ९१-नारद मुनि यह कथा सुनाई। एक समय बैकुंठ गया भाई॥ गदा चक्र पीताम्बर काछे। लच्छमी ठाढी बिस्नुके पाछे॥ तब हम बचन कहे दोय चारी। लौट बिस्नु कछु कहा बिचारी॥ काठ पषाण न तिरथ देवाले। अगिन पवनक नाहिं बिचाले॥ भगत भागवत साधु अस्थाना। तहां बसत मैं सत यह ज्ञाना॥ त्रिभुवन नाथ है त्रिभुवन स्वामी। घट २ रहे निरंतर यामी॥
समै-कौनकी भक्ति करो तुम भाई, को बैकुंठ कहां बस सोय।
कहें कबीर झूठ क्यों भाषा, झूठा सब ना होय॥

तहिया हरि नित मिलत थे, अब क्यों रहे छिपाय ।
अब कोइ क्यों ना जावे, ना वह कहे बुझाय ॥

रमैनी ९२—ब्रह्मलोक शिवलोक अपारा । विष्णुलोक बैकुंठ द्वारा ॥ स्वर्गलोक गौलोक है भाई । इंद्रलोक चंद्रलोक कहाई ॥ यक्षलोक देवलोक बनाया । महरलोक यमलोक दिखाया ॥ अंतरिच्छे एक लोक ब्रह्मंडा । छदरशन छयानवे पखंडा ॥ जेहि २ लोककी आसा लाई । तीन लोक लोग बहे जाई ॥ निरगुण झर कोई लख पावे । सुन्यलोक सोइ जाय समावे ॥

समै—चार जुग जात हम देखा, काहु न कहा संदेश ।
जैसे देश सुन्य हम जानत, जो वह ऐसा देश ॥
बात न कहत२जिव दीन्ही, लोका लोक न चीन्ह ।
कहें कवीर बिना वह देखे, आपन जीव जग दीन्ह ॥
लोकालोक अकास नहिं, झूठे लोका लोक ।
कहें कवीर आस जिन बांधो, छांडो जीका सोक ॥

रमैनी ९३—सुन पंडित तैं बचन हमारा । करता सबका सिरजन हारा ॥ कंथ भामिनी कंथ सनेहा । पिताको रूप पिताको देहा ॥ माताको रुधिर पिताको नीरू । दो संयोग मिल धरो शरीरू ॥ पांच तत्त्व गुन तिनके संगा । अष्टधात के जिव रंग रंगा ॥ माटी ते उपज अबहुं किन होई । कारण कौन पुरुष संग

जोई ॥ मनसा शब्दका होय अकारा । तजो कंथ भामिनि व्योहारा ॥

समै-ब्रह्म कुलाल हर जग मट्टी, रुधिर करे सिंगार ।
मानसिक रचना जग रचा, पंडित कहो बिचार ॥
प्रथम उतपत मानसी, फिर भय पुरुष औ जोय ।
कहे कबीर सृष्टिक सबकी, बिरला बूझे कोय ॥
तेहि नारी घर सबके, चार बरण जग कीन ।
तेरह ते तेरह भई खानी, बेद साख असदीन ॥

रमैनी ९४-कर्म बस ब्रह्मा पिंड संवारा । करम बस विस्नू पाले संसारा ॥ कर्म बस रुद्र करे संहारा । कर्म बस विष्णु लेंय औतारा ॥ कर्म बस चंद्र सूर्य भरमाना । कर्म बस नारद भोग अस्थाना ॥ कर्म बस रावण औ गये कंसा । कर्म बस रुधर भये निरवंसा ॥ कर्म बस मग सकल संसारा । करता करम करम बिस्तारा ॥

समै-करता ते कर्म निहकर्म ते कर्ता, झूठा कर्म सनेह ।
कहें कबीर जैसा पड़ा मेला, तैसा जगत करेह ॥

रमैनी ९५-ब्रह्म पाडी सबकी बांटा । सबे लगे अस औघट घाटा ॥ पांच देवका थापना कीन्हा । चारों बेद मंत्र लिख दीन्हा ॥ देव पांचकी कीन्हा सेवा । तैंतिस कोट और किय देवा ॥ तिनहुं कीन्ह सेवा बहु भाई । अगम अगोचर रहा समाई ॥ कोई ब्रह्म रहा

लौ लाई। कोई सुन्यमें रहा समाई॥ कोई बैठा आसन मारी। कोई ध्यान धर लाया तारी॥ कोई सक्ति ठहरावत माया। कोई सूरज ते ध्यान लगाया॥ और जो तैंतीसो क्रोरी। सब जग सेवा करें कर जोरी॥

समै–बिव अक्षर माया जन भाषो, ताते रचो सतंत।
चार वेद षट दरसन, बुध बल नित निचंत॥
ग्रंथ रचा गुण कर्म लगाया, नरक सरग विस्तार।
कहैं कवीर करता नहिं चीन्हो, ये उरले व्योहार॥

रमैनी ९६–गनपत विष्णु महेश्वर देवा। सूर्य भवानी तिनकी सेवा॥ कर स्नान पवित्र होय आया। चौका करि आसन बिछाया॥ चंदन गार तिलक कियो छापा। देव नहवाय करन लग जापा॥ चंदन घस नैवेद चढाई। पुष्प सुगंध अर्पन कियो भाई॥ अगम अगोचर ध्यान लगाया। कर आवाहन सर्गते बोलाया॥ दो कर जोरके विनती कराई। कीन सुमरण जन दीन पठाई॥

समै–देव न देखा सेवको, सेवक देव न दीख।
कहैं कवीर मरे ते देखो, यही गुरू दइ सीख॥
तेरी गति तैं जाने देवा, हममें सामरथ नाहिं।
कहैं कवीर यह भूल सबनकी, सब पर संशय माहिं॥

रमैनी ९७–ज्ञान गूदरी गुरू बिछाई। हरी आसन पर बैठे आई॥ तिलक छाप कंठी औ माला। बैठे आप

धर रूप गोपाला ॥ मूड़ मूड़ाय मुडियनमें आया। भगत कहाय महंत कहाया ॥ मूड मुडाय गुरू होय खेला। नर नारी सब कीन्हे चेला ॥ मूड मुड़ाय महंत कहाया। प्रन उपान उपदेश कराया ॥ चोला पहरा सेल्ही डारी। टोपी देके पाग उतारी ॥

समै–जेई पान पनवारिया, तेई तम्बोली हाट।
　　तेई पान गुरुवा दीन्हा, लायसि औघट घाट ॥
　　औघट घाटी नर गया, गुरुवाके उपदेश।
　　कहें कवीर कोउ नाही लावे, उनका बहुर संदेश ॥

रमैनी ९८–षट दरशन मिल देखे संदेसा। कोइ न रूप करताके भेसा ॥ हता अकेलकी हता वहि नारी। अकाश हताकी हता संसारी ॥ गृहस्थ हताकी हता बैरागी। गुनवंत हताकी हता गुन त्यागी ॥ सुखी हताकी हता दुखि भाई। देह धरेका बिदेह कहाई ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा। संयोग बियोग कहो यह भेवा ॥

समै–निरगुन पुरुष निरंतर देवा, निराकार है सेव।
　　यहि बानमें वह नाहीं, बिरला बूझे भेव ॥
　　पांच तत्त्व गुन तीन धरि, सब गुन धरे शरीर।
　　प्रत्यक्ष जगतमें देत दिखावा, कहहि पुकार कबीर ॥

रमैनी ९९–जप तप पूजा मंत्र बताया। सुन्य मंडलमें मन ठहराया ॥ पूजा करत करत गये हारी। जोग जुगति के आसन मारी ॥ संध्या तर्पण आरति गावें। देव ना

रीझे देव मनावें ॥ जो धंधा नित मन बस भाई। स्वप्ने सूझे धंधा आई॥ जेहि धंधामें जीव लगाया। अंतकाल तेहि धंध समाया॥

समै–जप तप दीखा थोथरा, तीरथ बरत बिस्वास।
सुवना सेम्हर सेइके, उड़ फिर चला निरास॥
सुवना सेम्हर सेइके, बैठा पलासे जाय।
चोंच टकोरे सिर धुने, वो उसहीका भाय॥

रमैनी १००–पांच तत्त्व नहिं त्रिगुन देवा। चंद्र न सूर बेद न भेवा॥ पाप न पुण्य पुरुष न जोई। अस्थान भंग जोहै कर्ता न कोई॥ तेहि घर कर्ताको ठहराया। जो नाहीं कछु तासों लौ लाया॥ अगम अगोचर सिरजन हारा। रूप न रेखा वार न पारा॥

समै–सुमरन सुरतिकी गम नहीं, बहुत बिकट वह पंथ।
सुरति निरति तहवाँ नहिं पहुँचे,अस कथि भाषत ग्रंथ॥

रमैनी १०१–षट दरशन सुनो बात हमारी। छिनमें पुरुष वह छिनमें नारी॥ छिनमें तरुन छिनमें बाला। छिनहि दयाल छिनहि होय काला॥ छिन सुच्छम छिन होय अस्थूला। यह गुण देख जगत सब भूला॥ चंचल चपलकी खबर न पाई। यह वह रूप ठग जग आई॥ यहीके छंद भूला सब कोई। गति नहिं पाई पुरुष औ जोई॥

समै–मनहरवा नगरवा, घट घट रहा समोई।
यह तो काम नाहीं करताके, बिरला बूझे कोई।

जो बूझे सो थीर है, बिन बूझे भरमाय ।
कहकबीर एक बूझे बिन, चले रंक औ राय ॥

रमैनी १०२-जगत पुजेरी बिस्तु सो देवा । सब कोइ करे विस्नुकी सेवा ॥ प्रथम बिरंच सेव चितलाई। फेर रुद्र ध्यान लगाई ॥ सनक सनंदन नारद सेसा सुखदेव नारद व्यास गनेसा ॥ दत्तात्रय जनक विदेही । पारासर आदिक विस्नु सनेही ॥ इनहिं देख सब जग भरमाना । करता आपन नाहीं जाना ॥

समै-षट दरशन तहवाँ चले, जहां न ससि औ भान ।
प्रेमधाम वैकुंठ बिस्नु को, कथत ज्ञान विज्ञान ॥
चलते चलते धाम गा, वहां ते फिरा निरास ।
कहे कबीर बिस्नु ना मिला, सेवा करत निरास ॥

रमैनी १०३-सेवा करत गये जुग चारी । सेवा करत गये नरनारी ॥ सेवा करत गये तिर देवा । सेवा कीन्ह लखा नहिं भेवा ॥ सेवा करत गये औतारा । सेवा करत गये संसारा ॥ षटदरशन सेवा चितलाई । सेवा का कछु भेद न पाई ॥ सेवा पूजा रहा लौलाई । सेवा लेके सुन्न समाई ॥

समै-स्वामी ते दरशन नाहीं, सेवक सेवा लाग ।
कहे कबीर पृथ्वि यह मरगई, हरि ही के बैराग ॥
जीवत मिलना नहिं होय ज्ञानी, मरे न होय सनेह ।
कहे कबीर मिले हरि भाई, जोना होय विदेह ॥

रमैनी १०४—छूँछा भरा भरा ढरकाना, आपहि में जग आप हिराना ॥ सात सरगपर सुन्य एक पोरी । तहां बसे छतिसो कोरी ॥ सुन्य नगर जहँ बसे न कोई । बसन चले तंह पुरुष औ जोई ॥ ऊजर बसि भई वस्ति उजारी । वस्ती छोड चले नरनारी ॥ सुर औ नर मुनि बसे सब कोई । उजर बसेकी खबर न होई ॥ सुन्यकी धुन सुन जगत समाना । क्या पंडित क्या चतुर सयाना ॥

समै—जहां न वस्ती सो बसा, बस्ती भई उजार ।
सुर नर मुनि सब गये बिगूचे, कहैं कबीर पुकार ॥
सहर बसंता छोड़के, उजर बसाया गांव ।
ना वह बस ना ऊजरा, भया बसेका नांव ॥

रमैनी १०५—सुतके घर माता पटरानी । तुम किन बूझो पंडित ज्ञानी ॥ बिन पुरुष उन तिरगुण जाये । होय जोइ तीनों सुत खाये ॥ यह संसार जीते औ हारे । इन पापिन सब जगहिं संहारे ॥ तिरगुन गये जात नहिं जाने । राजा रंक सब गये सयाने ॥ जोगी जपी तपी सन्यासी । मुंडित चुंडित बैराग उदासी ॥ सुन्य नगरकी राखे आसा । ररंकार धुन कीन बिनासा ॥

समै—अगनी पानी खाइया, अंतर पटको पाय ।
यों जगको माता ने खाया, जियरा गया हेराय ॥
अगिन बुझानी बुझगई, दूध बिनासा घीव ।
कहैं कबीर इन आस ने, ऐसा बिनासा जीव ॥

रमैनी १०६-पुरुष आदिकी नारी माया। तिन नारी पुरुष दोय जाया॥ एक बमा जहां बसे न कोई। एक दुनियामें सब कहुं होई॥ और तीन गुण जन्मे भाई। उन फिर चार बरन उपजाई॥ उन फिर जंत्र मंत्र किया पूजा। जोत निरंजन और न दूजा॥ उन फिर नाटक चेटक कीन्हा। निरगुन मंत्र पाट लिख दीन्हा॥ उन फिर जप औ तप अनुसारा। नेम धर्म तीरथ व्रत न्यारा॥ सब संसार परा इन माहीं। करता पुरुष लखो है नाहीं॥

समै-कहा हमार न माने कोई, उनको कहो परवान।
ये जिव चल धोखे मिला, मिट गया जीव निदान॥

रमैनी १०७-हम करता हम सबके सही। चार युग हम सत्ते कही॥ कोइ न माने कहा हमारा। मैं जगते कहि कहि हारा॥ जो कछु माया दिया उपदेसा। सोई उपनिषद दिया संदेसा॥ जो कछु वेद पाठ लिखाया। सब जीवन तासो लौ लाया॥ एक होय तो कहि समझाऊं। सकल रिषि ते कहा कराऊं॥ जो नाहीं तासो लौ लाया। जौ है ताको सबै मिटाया॥

समै-जहां पवन नहिं संचरे, रबि ससि उदय न होय।
कहैं कबीर जहां हरि नहीं, तहां जात सब कोय॥

रमैनी १०८-नगर एक बसें दोय नारी। सब जीवन डहकावनहारी॥ इनते हारे तपी मुनि देवा। इनका

कोई लखा न भेवा ॥ इन लीना जीवनको खाई। इनको जीते बिरला भाई ॥ गण गंध्रब मुनि बचा न कोई। इनको जाने ज्ञानी सोई ॥

समै–बीच ते आई दोय नारी, बीचे कीन अकाज।
कहैं कबीर दोनों जग लूटा, यह करताको साज ॥
जहां बसें ये दोनों नारी, तहां नहीं बिश्राम।
कहैं कबीर इनको संग छाड़ो, यही तुम्हारो काम ॥

रमैनी १०९–षट दरशन सुनो चितलाइ। करताके गुण चेतो भाई ॥ दयावंत शीतल मुख बैना। धर्मसरूप सदा सुख चैना ॥ निहकर्मी निरद्वंद सुधर्मी। सदा संतोषी कर्म सुकर्मी ॥ सब जीवनकी करे नित चिंता। मतबादी धीरज अतिवंता ॥ सदा अनंद धीरज दुख संसा। कोमल बचन सरब गुण हंसा ॥ चेतन सदा सरब कछु सूझे। परगट गुपुत सब ज्ञाने बूझे ॥

समै–अनखाया खानीको पीवे, देखे सुने हजूर।
नख सिखते पूरण बना, तासो कहत जग दूर ॥
सब गुन भरा सृष्टिका करता, निरगुन कहो न कोय।
कहें कबीर प्रगट जग भीतर, भर्मत पुरुष औ जोय ॥

रमैनी ११०–षट दरशन सुनो बचन हमारा। उनके गुन हैं अगम अपारा ॥ मिथ्या बचन संसा विपरीता। खज अखजसे बहुत प्रतीता ॥ निर्दया अमती अकर्मा। अधीरज सदा अधर्मा ॥ कामवंत तामसकी खानी।

नाटक चेटक अगमठानी ॥ सदा निलज्ज दयामें हीना। छल औ छिद्र महा प्रवीना॥ चञ्चल चपल निरमती माया। अधिक गिरामनी सब जग खाया ॥

समै-सुर नर मुनि पशु पंछी मारत, डार आपने जाल।
कहैं कबीर यह महा अपर्बल, बिरले बांचे बिचार ॥

रमैनी १११-करता सबका सिरजनहारा। जान बूझके होते न्यारा ॥ जलगी सदा जलहिमें रहते। उडुगन सदा जल मध्य दिखते ॥ जलगीरी पकड जाल जब आये। जब जलगीरी यहै सब चितलाये ॥ हम जानीकी साथ हमारे। अब हम जाना हते निनारे ॥ ज्यों कंवला जल परसत नाहीं। त्यों साधू रहते जग माहीं ॥

समै-जग बांधा जंजीर कर्मके, छूटा नाहीं कोई।
कहैं कबीर बंधा नहीं, साध जानिये सोई ॥

रमैनी ११२-गुरुवा सिधु राम कहाई। इन संसार ठगा सब भाई ॥ बैठ एकंत पाखंड बताया। निरगुन सरगुन दोय भेद बताया ॥ निरालम्ब आलम्ब न सांगा। कहैं जलाते हम बितरागा ॥ अंतर भरम मिटे नहीं भाई। निसदिन रहो निरंकार समाई ॥ सबजग मिलके सीस नवावे। तब गुरुवा एक बचन सुनावे ॥ यहि जगते हरि रहा निनारा। बिरला कोई बूझन हारा ॥ ब्रह्मा बिस्नु महेश्वर देवा। तिनहू लखा नहीं यह भेवा ॥ ऐसा बचन कह जग भरमाया। यहि गुरुवाका भेद न पाया॥

समै–रामनगर गुरुवा बसा, माया नगर संसार ।
कहँ कबीर यहि दो नगरते, बिरले बचे बिचार ॥
पाप पुन्य गुरु कर्म हरि, बैकुंठ लोक निजधाम ।
ये तो सब ऊजर परे, बूझो आतमराम ॥

रमैनी ११३–जात पांत तज मूँड़ मुँडाया । तिलक छापदे भगत कहाया ॥ मूँड मुँडाय गुरू होय खेला । नर नारी सब कीन्ही चेला ॥ भये महंत सिखापन कीन्हा । निरगुण मंत्र पाट लिख दीन्हा ॥ सेवा पूजा बहुत बताई । तन धन मन लीन्हो अरपाई ॥ करताको अकरता बतलाया । अकरता सो करता लौ लाया ॥

समै–करता ते यहि भयो अकरता, गुरुवाके उपदेश ।
कविरा कोइ लावे नहीं, करता केर संदेस ॥

रमैनी ११४–जो ब्रह्माको दियो संदेसा । सो बिरंच गुरु दियो उपदेसा ॥ धोती चौका मंत्र असनाना । फूलसूं भूषण देव रचाना ॥ काष्ट पषाण धातले आये । तिनकी प्रतिमा आप बनाये ॥ गुरू होय फिर चेला होई । पूजे प्रतिमा पुरुष औ जोई ॥ धातू पूजे धात होय भाई । पषाण पूजे पषाण होय भाई ॥ जलके पूजे जल होय जाई । अगिनौ पूजे अगिन समाई ॥

समै–रमता रामे छोड़के, जो पूजे पाषाण ।
तिन करता नहिं चीन्हिया, अंत पषाण समान ॥

जैसा गुरू सिखापना, सिक्ख चला सोइ चाल ।
कबिरा इन सब खोइया, वे सब भये निहाल ॥

रमैनी-११५-कहो पंडित जो आहि अकरता । तो कैस भयो जगतका करता ॥ कर नाहीं कैसे जग कीन्हा। रसना नहीं कैसे रस लीन्हा ॥ पांव नहीं कैसे कहिं जाई। उदर नहीं कैसे कुछ खाई ॥ सरवन नहीं कैसेक सुनाई। हिया नहीं कैसेक गुनाई ॥ नैन नहीं देखत कैसाही । जीव नहीं कस जीवत गोंसाई ॥

समै-जाके पंडित प्रान है, जग कीन्हो बिस्तार ।
जो रूपधरे करता अहै, ताको कौन निनार ॥
जो करता तेहि नहिं सेवे, यह लोगोंकी बूझ ।
कह कबीर आरसीं अंदर, परा अंधेरे सूझ ॥

रमैनी ११६-हता आप दूजा परमाना । देख आपको आप भुलाना ॥ उझक्का सिंह कूपमें जाई । कांच मंदिलमें स्वान घहराई ॥ फटिक सिलामें जग अरुझाना । प्रतिबिंब देख आप भरमाना ॥ हता आप दूजा ठहराया। आप तजि दूसर लौ लाया ॥ यह तन जीव अकारथ खोया । यह नर चरित्र देखके रोया ॥

समै-समाधि लाय सब जग बैठा, चला संग ले प्रान ।
कबिरा तब भ्रम ऊपजा, देखा और निसान ॥

रमैनी ११७-संग बूझो तुम आपन योगी । संग बूझे बिन भयल बियोगी ॥ संग बूझे बिन चढो लै प्राना ।

घर आपनमें देखु निदाना ॥ पांचवाँ ले चढे अकाशा । कहु जोगी क्या होय तमासा ॥ सुखमन घाट उतर जब जाई । ब्रह्मंड प्राणले रहा ठहराई ॥ कछु एक दिन तुम वहां खराने । आपन मढीले आप उड़ाने ॥ टूटी डोर चले पंच प्राना । ढूढत ढूंढत आप हिराना ॥

समै—बूझो जोगी आपको, बूझब सो यह देश ।
कह कवीर न जाय न ऐवै, बहुर न मिल संदेस ॥
बहुत गये सो कोइ न आया, कासो पूछो बात ।
कहैं कवीर बिना हरि परचे, सकल सृष्टि बही जात ॥

रमैनी ११८—समझो योगी आपन भेसा । छोड़ नगर यह चले केहि देसा ॥ पूरक कुंभक रेचक पौना । सोहं साथ चले कर गौना ॥ दस नारी तज सुखमन घाटा । सहस्त्रदल पंकज बैठ निराटा ॥ अनहद सुन प्रतीत जिय आई । ररंकार धुन दीन सुनाई ॥ आप देख दूजा कर माना । चक्र बेध त्रिभुवनको जाना ॥

समै—खलबल पड जोगी नगर, छोड़ चला जब गांव ।
तेतिस आप रहे न्यारे, सुन्न पडा सब ठांव ॥

रमैनी ११९—पंच मुद्राका आसन कीन्हा । जोग जुगत करि निरगुन चीन्हा ॥ त्रिबेनी घाट उतर जब गयऊ । प्रतिबिम्बका दरशन भयऊ ॥ बाजा बाजे अनहद बानी । कुंडलनी सकती तहां पटरानी ॥ धरनि अकासते लागी डोरी । चला दिसंतर होर बहोरी ॥ पंच

चार तज बैठ निराटा। योगी उतरा अजपा घाटा॥ सोहं तजि मन धर निरबाना। सुन्य नगरजी आय तुलाना॥

समै-खालि देखके भर्म भय, ढूंढ फिरा चहुंदेस।
ढूंढत ढूंढत मर गया, मिला न निरगुण भेस॥
बूझ आपको थिर रहे, योगी अमरसो होय।
आप बूझे भरम तजे, आपइ और न कोय॥

रमैनी १२०-पैतापुरकी लुंवठ रानी। तिन ब्रह्माते कही कहानी॥ अनहद अपजा जोग अभ्यासी। सुन्न नगर आसन चौरासी॥ पंच वायुमें जग अरुझाना। षट चक्र साधि कीन पयाना॥ तीनसौ साठ स्वास ठहराई। कुंडलनी सकती साध ले जाई॥ प्राणायाम धारना साधी। जोग जुगति तेहि करे समाधी॥ दस अंगा दस करे जो भंगा।पंच चार नौ सोरह संगा॥ छ पर संग दोय परभाई। आठ बहत्तर बावन आई॥ दो हजार सत्रहसौ साता। चार चार चारकी बाता॥ एक्कीस हजार छै सौ तेहि डोरी। चले दिसंतर होर बहोरी॥ बारहे नासुक सोरहे सेसा। चार ब्रह्म नाभ नौ परदेसा॥ आठ अकाश परम तहँ पाई। ग्यारह भक्ति तेरहे ठहराई॥ एक सौ बीस साठको योगा। तैंतिस कोटि डेढसौ भोगा॥ समाध लायके चला हरि तीरा। जुगत नेत्र त्रिवेनी तीरा॥

समै-जोग करे ते मर गये, दसो दिशा भइ सुन्न।
कहें कबीर जुगति चीन्हले, जो छूटे वह धुन्न॥
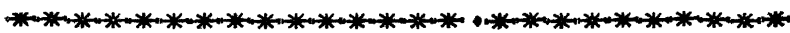
घट फूटा निकसा कुंभते, ढरक गया सब नीर ।
घट राखे जल घट रहे, कहहिं पुकार कबीर ॥

रमैनी १२१–यह घट रत रतनकी खानी । घटमें आप आप घट ठानी ॥ घट बिन जल कहो कहां रहाई। बिन घट जल नहीं है भाई ॥ घटमें जल जल घटते न्यारा । घट बूझे घट बूझनहारा ॥ घट फूटे जल जाय हेराई । जब लग घट तब लग जल भाई ॥ घटको खोजो पंडित ज्ञानी । बिन घट जाने रहे न निसानी ॥ घट खोजे घट माहिं समाई । बिन घट खोजे जल बह जाई ॥ चेतन करो घट जाय न फूटी । सुरतकी डोर जाय न टूटी ॥ गुन टूटे औ घट बहजैहै । औघट गये घाट न पैहै ॥

सर्मे–सहस्र घाट जल भर रखो, फूटे सहस्सर घाट ।
घट फूटा तो फूट भय, भया न नर तल पाट ॥
घट बाहर घट अंदर, घट है जीवन मूर ।
घटमें जल पूर रहे, औघटमें जल दूर ॥

रमैनी१२२–जुग२ जोगी जुगत कराई । जुगत लखे विन जम ले जाई ॥ जोगी सोई जुगत सो माने । जुगत जान अलख पहिचानै ॥ उवाव अनंत जाने भाई । तेहि जोगीको काल न खाई ॥ सोहं हंसा हमही भाई । सोहं मिले सोई हम पाई ॥ नगरी अपनी सुवस बसावे । प्रजा लोग दुख नाहीं पावे ॥ प्रजाके बस होवे ना राऊ । राजा

दुख न देवे काऊ ॥ सो जोगी जो जुगत सयाना। आप जान दूजा नहिं जाना ॥

समै-जेहि पारस ते पारस भये, पारस जानो सोय।
पारस कनक लोहा भया, सो पारस ना होय ॥
वह पारस तुम खोजो, जेहि पारस सब खान।
कहँ कबीर सुन पंडिता, पारस ले पहिचान ॥

रमैनी १२३-काया नगर सो नगर हमारा। घर अपना हम कीन्ह संसारा ॥ घरही में है देव औ देवी। घरहीमें है भेव औ भेवी ॥ पाप पुन्य घरहीमें रहते। घहरीमें रैयत औ महते ॥ घरहीमें वृच्छ बीज अंकूरा। घरहीमें चंदा औ सूरा॥तीन लोक घरहीमें छाया। घरते बाहर किनहु न पाया ॥

समै-जो घर जाबे आपना, करता पडे तेहि सूझ।
कहँ कबीर सुन पंडिता, घर अपनेको बूझ ॥
गुरु कहते जस ब्राह्मण चले, ग्रह पडा नहिं चीन्ह।
यहां वहांकी दोउ गंवाई, जीव अकारथ दीन्ह ॥

रमैनी १२४-सब संसार समाधि लगाई। निराकार लो कोउ न जाई॥रहिगो पंथ थकित भौ पौना। दसो दिशा उजार भौ गौना ॥ बस्ती छोड जैहो नर कहवाँ। जैहो तो नहिं छैहो जहवाँ ॥ खैहोका वहां अन्न न पानी। बोलिहो कासो वहां नहिं बानी ॥ सुख नहिं

भोग दिवस नहिं राती। पांच तत्त्व निरगुन बेदाती॥
जीव न सीव कर्म न काया। पाप न पुन्य वृच्छ न छाया॥
समै—चेतो किन तुम चेतो अबहूं, जहाँ नहीं वहाँ गाँव।
कहें कवीर अबहीं मिल करते, अब न मिटावो नाम॥

रमैनी १२५-ब्रह्मा कुलाल गढे संसारा। तिनमा जीव दिये करतारा॥ जीव देके लिखे बनाई। सोई भोगता भुगते भाई॥ पराल्बध संचित कर्मांना। अक्षर तीन लिखे भगवाना॥ चाहे सुता चाहे करबारी। श्रीरामकी बातें न्यारी॥ चहता सोई कीन्हा करता। चहिये सो दूरम सो हरता॥

समै—मातु न होती पिता न होता, होता रुधिर औ नीर।
कहँ ते आवत पंडित, ऐसा अनूप शरीर॥
तत्त्व भये संयोग दोउ, निहतत नाहीं कोय।
कह कवीर सो फल उपजे, तत्त्व अधिक जो होय।

रमैनी १२६—सुन्य न हता सुन्य सब कीन्हा। जीव न हता जीव सिव दीन्हा॥ पाँचों तत्त्व हता न कोई। दिवस न रजनी पुरुष न जोई॥ निरगुन पुरुष हता निरंकारा। तिन सिरजा यह सब संसारा॥ निराकार निरगुन कस देवा। कैसे सुन्य कहो किन भेवा॥ लौटके कथा कहें ब्रह्म ज्ञानी। निरालम्ब निरगुनकी बानी॥ निराकार आकार न कोई। निरगुनते गुनना होई॥ सुन्य हते नहिं देखन हारा। यह बिध रचा सकल संसारा॥ जो बीजामें लखा सरीरा। वो था साहेब सुनो कवीरा॥

✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳✳

समै–जो अकार गुण कर्म धरे है, सो निराकार नहिं होय।
फल फूल पत्र औ साखा, बिरला देखे कोय।
यही सरूप करताको, ज्ञानी अंते नाहिं।
कहँ कबीर परो जन संशय, गगन मंडल कछु नाहिं॥

रमैनी १२७–पवन सरूपी अगम अपारा। सब घट पूरन सबते न्यारा॥ पुहुपको वास दियाकी जोती। पवन सरूप पिरे तन होती॥ शब्दके रूपमें हरदिकी लाली। विस्नुका रूप ज्ञान गुणचाली॥ काशीकी धुन करो बिनाना। निराकार निरगुन तिन जाना॥ सोहँ हंसा जाने सोई। सोहं हँसा सोइ जिव होई॥

समै–बिना पुहुप नहिं बास है, बिना बीज नहिं कोय।
बिना तन सोहं शब्द नहीं, बिरला बूझे कोय॥
जीव ब्रह्म परब्रह्म नहीं, सुंदर धरे सरूप।
कहें कबीर जाव घट एके, ऐसा ख्याल अनूप॥

रमैनी १२८–ज्ञानी आपन करो बिचारा। जो तुम मानो कहा हमारा॥ चार शरीरको छोडो ज्ञानी। करताका कछु करो बीनानी॥ सूच्छम अस्थूल न कारन महा कारन। चार अवस्था नाहिं निहारन॥ गुण औ कर्मकी-करो न संसा। तुम करता निह केवल हंसा॥ देव आद तुम कहो ब्रह्मज्ञानी। करता पुरुषकी साज समानी॥ बूझ बिचार गहो अस्थाना। निरगुन पुरुषको करो न ध्याना॥

समै–निव्रित परव्रिति दोय मारग, तेहि अटका संसार।
कहैं कबीर दोनों नहीं, समझो बूझ बिचार॥

रमैनी १२९–चार फल कौन कहांते तुम देवा। अवस्था चार कहां तुम भेवा॥ कौन वृच्छ जेहि यह फल लागा। जेहि कारन तुम भये अनुरागा॥ अरथ धर्म काम मोच्छ भाई। जाग्रित स्वप्न शुषोपत ताई॥ अछै वृच्छ एक पुरुष अपारा। तहां यह फल है चार निनारा॥ मारग कठिन न कोई जावे। गगन चढे सोई फल खावे॥

समै–केहि कारण करनी करे, कहां वृच्छ फलचार।
सबे पड़े भ्रम जालमें, कहें कबीर पुकार॥

रमैनी १३०–दिनके रैन विषै जब सोई। भूले आप भूले सब कोई॥ नाना विधिके उठे तरंगा। अदभुत ख्याल दिखे बहुरंगा॥ इन बातनकी खबर न जानी। पार ब्रह्म कैसे पहिचानी॥ कैसे खबर वहांकी पावे। अपने घटकी लखे न लखावे॥ औघट घाटी अगम अपारा। सो पावे जो उतरे पारा॥

समै–मन जिवका संजोग तन, मनके अद्भुत रूप।
जाग्रित स्वप्ना भरमावे, लीला रचो अनूप॥
जाग्रित जाग्रत सांच है, सोवत सपना सांच।
कहैं कबीर मन ना बसे, जहां तत्त्व नहिं पांच॥
मन यह जागत है नहीं, यह मन यही शरीर।
रैयत होय तिनमें रहे, कहें पुकार कबीर॥

रमैनी १३१-यह है गगन जापर बहुरंगा। नाना विधि को उठे तरंगा॥ चौरासी कहो कौन विधि भाई। कौन अस्थान जीव ठहराई॥ पांच तत्त्व कहो किन भेवा। भेला बांधे निनारे देवा॥ त्रिगुनकी उतपती कहो सोई। निराकार कस करता होई॥ दोमें को जग सिरजनहारा। नांदे बिंदे क्या ब्योपारा॥ सहस्रका कहो का अर्थ बूझा। निराकार निरगुन कैसे सूझा॥ ऐसा ख्याल अनूप हमारा। जो बूझे सो सिरजनहारा॥
समै-सबरा आतम आप हमारा, इनमें नाहिं विसेख।
हम जाने सो यह गुन बूझे, पावे पुरुष अलेख॥
जिन जाना यहि भेदको, रहे सोई ठहराय।
कहैं कबीर सो रहे निनारे, लिया जिन्हे जम खाय॥

रमैनी १३२-राम कहा यह कहे जो कोई। जो करता सो यहु होई॥ करता रहा जो सबै समाई। वोकर राम रहा बिलमाई॥ पंच तत्त्व करताको बासा। यह विध राम न होय बिनासा॥ बीजमें वृच्छ रहे-ठहराई। त्यों यह बूझ एक है भाई॥ सो कत होय यह कहे जो कोई। जल पाषाण अगिनको होई॥ सुरत मरे तो यह मर जाई। दोहरा नौतम कैसे पाई॥ संजोगी जो सृष्टि उपाई। अद्भुत तन जिव कहँसे आई॥ राम न करता करता काहा। यह करता तो बूझन माहा॥ दे शब्द उतपन सुस्थाना। दोउकी बूझ एक घर जाना॥

बूझ दोऊकी सुन्न समानी। तत्त्व अधिक इच्छा कित मानी॥ जो यह करता सृष्टिको होई। प्रगट गुप्त कहे सब कोई॥

समै—यह करता बिन बूझ हेराना, ताते भया अकास।
तत्त्व न मिला मत समुझा, लीन्हा तहां निवास॥
जो गुन पावे तत्त्वको, तत्त्वे जाय समाय।
कहँ कबीर अमर तब होवे, कहीं न आवे जाय॥
तन जियरा यह तेरा, कबहुं नास न होय।
कहँ कबीर सुरति मिले, यह गुण बूझे सोय॥

रमैनी १३२—परकाया प्रवेस कराया। बाल वृद्ध तन दिखलाया॥ एक रूपमें धरे अनंता। पर दिलकी पहेचाने चिंता॥ पूरबमें परिचय दिखलाई। पृथ्वीते अकास सिधाई॥ धरन ते बाढी जाय अकासा। लीला अनूप रचे बहु पासा॥ ॐ बीज मेघ दखलावे। धरती बूडे पवन चलावे॥ चाहे जो ले आवे सोई। चाहे पुरुष चाहे होय जोई॥ दसो दिसाकी बातें करई। चाहे करे जोई चित धरई॥ जो कोइ मांगे सोई देई। जहां ते जो चाहे सो लेई॥

समै—अस्थान न जाने जीवका, भगति परी नहिं चीन्ह।
यही बिटम्बना भरमके, जीव अकारथ दीन्ह॥
स्वारथ इनमें कोइ नहीं, ताते रामहिं जान।
कहँ कबीर यह भगती बूझले, बहुर न रहे बंधान॥

रमैनी १३४-जैसे खर औ तैसे गाई। जैसे नारी तैसे माई॥ जैसे सोना तैसे लोहा। जैसे मोहा तैसे निरमोहा॥ जैसे कूकर तैसे हस्ती। जैसे ऊसर तैसे बस्ती॥ जैसे पंडित तैसे चंडाला। जैसे करता तैसे काला॥ जैसे मुत्र है तैसे पानी। जैसे चेरी तैसे रानी॥ जैसे पाथर तैसे मोती। जैसे आंधर तैसे जोती॥ जैसी नदी औ तैसे नारा। जैसे हलाल तैसे मुरदारा॥ जैसे मीठा तैसे विष होई। जैसे अन्न तैसे मल सोई॥ जैसे फल है तैसे माटी। जैसे सक्कर तैसे चांटी॥ जैसे सिंह तैसे बकरी होई। जैसे गुरू तैसे सिख सोई॥ जैसे असुर तैसे देवा। जैसा फल है तैसे देवा॥ जैसे बास तैसे कुबासा। जैसे बरहा तैसे धरन अकाशा॥

समै-एके भया एक कहाया, एके रहा समाय।
कहैं कबीर नहिं करता पाया, जियरा दिया गँवाय॥

रमैनी १३५-गुन कर्म बिहूना राम न सोई। यह गुन जाने बिरला कोई॥ काया इच्छक दया सरूपा। मन उपमान स्वेत नहिं धूपा॥ समै पाय बिन तत्त्व न देई। पर चोरी कर बस्तु न लेई॥ सत्त कहे औ धरमहिं जाने। पर निंदा नहिं जीमें आने॥ पांचों पवन एक घर लावे। नौ दस बारह तीन मिटावे॥ तीन राखके तीनों मारे। पचीस पांच षट सात उचारे॥ सुखमनमें जब बास कराई। प्रगट गुप्त सब अजमत पाई॥

समै—अजमत कछु हांसी नहीं, अजमत कर्म अधीन।
करामात करम चीन्हें, सो ज्ञानी परबीन॥
करना हता सो कर चुका, सब दिखलावे सोय।
कहेंकबीर करता नहिं जाना, अजमत करे क्या कोय

रमैनी १३६—अजोध्या नगर बसे एक राई। तिनके राम औतरे आई॥ जनक सुता ते कीन विवाहा। कैकई बचन गये बन माहा॥ कनक पुरीका रावन दूता। सो बनमें हर लैगा सीता॥ कनक मिरगा राम भुलाने। रोवत वन वन फिरे सयाने॥ पंपानगर सुग्रीव सहाई। कनकपुरी हनुमान चढाई॥ जीते राम रावणा हारा। त्रिभुवननाथके यह व्योहारा॥

समै--करता पुरुष राम ते परे, क्यों भूले भ्रम जाल।
कहें कबीर पूछों तोहि पंडित, काजी जीतो हाल॥

रमैनी १३७--सीताराम सुमरत सब कोई। सीताराम बिन मुक्ति न होई॥सीतारामकी गति नहिं पाई। सीताराम रहा जग छाई॥ धरती छोंडके बसे अकासा। यह गुन देखो राम तमासा॥ सीताराम रचे संसारा। कंठी माला तिलक लिलारा॥ कनकपुरीका रावन राई। सीता जीता करी लड़ाई॥

समै—आस पास घन तुलसी बिरवा, तेहि बिच सालिग्राम।
हते देव पाथर भये, यह करताके काम॥

रमैनी १३८—रामचंद्रके यह ब्योहारा। पिता पुत्र तिनहु रन डारा॥ बालमीक घर सिया बियांनी। लव

कुश भये भरत सिय पानी ॥ लछमन बूझे सियासे माई । डार हडावर फिरे रघुराई ॥ रामचंद्र कारण कर रोया । दुखी भये दिन रैन न सोया ॥

समै -नित बूडे नित ऊछरे, शोभा कहो निहार ।
　　आप बुडे मँझधारमें, उतरत सब संसार ॥
　　सब जग डूबा राम नाम कहि,रामके बिन पहिचान ।
　　जो तू चाहे अमर भया, तो त रामहि जान ॥

रमैनी १३९–रामनाम चढ बुड़ा कबीरा । एको हंस लगा नहिं तीरा ॥ रामनाम सुमरण चित दीन्हा । रामरूप काहू नहिं चीन्हा॥ एक रामनाम दसरथ गृह आया। सो जगते आकास सिधाया ॥ एक राम घरा घर कीन्हा। एक राम सो ना पर चीन्हा ॥ एक राम नित पीवे खावे । जगको देखे जगे दिखावे ॥

समै–इनमें राम जो सांचा, तेहि राम ले चीन्ह ।
　　रामनौमी भया राम कबीरा,जिसका यह तन कीन्ह॥

रमैनी १४०–रामनौंमी भया राम कबीरा । घर घर बाजे झांझ मजीरा ॥ सबके पिता पुत्र भे आई । अजोध्या नगर करे ठकुराई ॥ उतपत प्रळय जिनकी न होई। उतपत प्रळय आये सोई ॥ उपजे न बिनसे आवे न जाई । अजोध्या नगर करें ठकुराई ॥ अन्न न खाय पीवे नहिं पानी । आराकार घर उतरे आनी ॥ आरति मंगल पढे पुराना । जो जन्मा सो किनहु न जाना ॥

समै–निराकार आकार भय, नाम धराया राम ।
राम कह कह जग गई, काहु मिला ना राम ॥
राम भगति जिन जानी, रामे चीन्ह सोय ।
कहँ कबीर वह भगत भय, आवा गवन न होय ॥

रमैनी १४१–मथुरा नगर सो बसे कन्हाई । गोपी ग्वाल जुरे सब आई॥ कंसे मार जमी पर डारा । उग्रसेनको राज बैठारा ॥ करताके यह काम न होई । जो जिव मारे दूजा सोई ॥ काहुकी अङ्गिया काहूका चीरा । ऐसे काम न करें कबीरा ॥

समै–येतो काम नहीं करताके, यह सब मनके काम ।
कह कबीर मनही जे मारा, जीते आतमराम ॥

रमैनी १४२–राम मंदिल वृन्दावन कीन्हा । दूधको दान गोपिन सो लीन्हा ॥ कहीं तरुण बालक होय जाई । कहीं वृद्ध होय देत दिखाई ॥ पलना झूलें मदन गोपाला । दूत कंसको हने होय काला ॥ तीनों लोक मुखमें दिख-लाया । तबहीं जसोदा बहुत डराया ॥ लीला अनंत रचे यदुराई । इन्हे देख सब रहे भुलाई ॥

समै–रास मंडलकर सब जग लूटा, मथुरा नगर मँझार ।
कहँ कबीर यह बंदा बनके, बिरले बचे बिचार ॥

रमैनी १४३–नगर द्वारिका रुकमिनि रानी । तिनके कंथ श्रीकृष्ण ज्ञानी ॥ तिन भर्माया सब संसारा । काशी नगरमें खलबल पारा ॥ राजा नगर कापर बैठाया ।

पांत सब भांतिन भांती ॥ बाज तीतर संग चला कर जोरी। सिंह मऊ संग मुख नहिं मोरी ॥ बाघ संग छेरी चलि भाई। ससा स्वान संग केल कराई ॥ केचवा सर्प संग कियो व्योहारा। लोहक नाव पषाणको भारा ॥
समै–जो न हता सो ब्रह्मैं कहा, जीव भया तहँ लीन।
कह कबीर जिन ब्रह्म जाना, भए ज्ञानी परवीन ॥

रमैनी १४६–यह अचरज तुम देखो आई। सिंह सियारते करे सगाई ॥ हंस कागते करे सनेहा। देह धरे सो होय विदेहा ॥ मछरी बैल ते भा व्योहारा। कुक्कट मोर मिलि जै जै कारा ॥ गिरगिटसे करे सनेह बसंता। सरप नेवरा रचे अनंता ॥ चीता हरिन संग केल मचाई। ससा स्वान मिल बैठे भाई ॥ बगुला बाजते रहस रचाया। राजहिं वजीर पकड ले आया ॥
समै–धरती बेल पताल भय, फल लागे आकास।
कह कबीर चात्रिक चारो जुग, जलमें मरा पियास॥

रमैनी १४७–निराकारकी करे नित सेवा। करता का कछु लखे न भेवा॥ चाहिये दाख बोवे लसोरा। चहिये अंगूर सींचे नीम सहोरा ॥ आम चहिये जग बबुर लगाई। रंभ श्रवेके चाहे मिठाई ॥ करील सींचिके चहे सुपारी। बिना पुरुष सुत जन्मे नारी॥ नरियर चहिये तुंबरा लाई। बेंत लायके कटहर खाई ॥ चहत करोंदा नाय मकोई। बेंत लाय फल चाहें सोई॥ अरंड लाये सदा फल खाई।

**************************

इंद्रवन लायके केरे खाई ॥ ताड लायके चहे छोहारा। यह देखो जगके ब्योहारा ॥

समै—बेल कुढंगी फल बुरा, फुलवा कुबुध गंधाइ।
और बिनासी तूंबरी, सो पातो करवाइ ॥
उगरह धरती छोडके, ऊसर बोवे सोय।
कहें कबीर वृच्छ है नहीं, कैसेके फल होय ॥

रमैनी १४८—मूसा बिलार संग चहे कुसलाई। त्रिन अगिन संग चाहे भलाई ॥ छेरी भेड़िया संग खेला। गाय करे सिंह संग मेला ॥ नारका संग मीन भलाई। सरप चहे सुख नेवरा आई ॥ काग कुही संग चहे बिसरामा। निराकार संग सब चहे सलामा ॥

समै—साजुज्य मुक्तिको सब चले, देख वेदकी रीत।
गये सुन्नमें बहुरि न आये, यह मानो परतीत ॥

रमैनी १४९—ऐसा कौतुक सुनोरे भाई। बिना वृच्छ फल सब जग खाई ॥ देई हिजड़ा कामिनि रितुदाना। घर घर गुंगा बांचे पुराना। बिना पुरुष कामिन सुत जाया। बिन पावक बन अगिन लगाया ॥ बिना फूल सुख बास बसाई। बिन बूझे नर गये अंधाई ॥ बिन पानीके त्रिषा बुझानी। पिंड प्राण बिन बोले बानी ॥ बिना दूध घिव निकसे भाई। बिन रवि ससि रैन दिन आई ॥

समै—बिना बीज वृक्ष जग उपजा, बिन फूलन फल लाग।
कहैं कबीर या वृक्षहिं जाने, कोइ जाननहार सुभाग॥
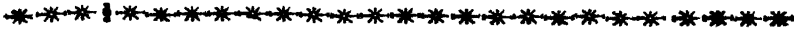
ना फल खट्टा ना फल मीठा, नहिं करुवा नहिं सीठ।
बिन देखे बिन चाखै सब, कहैं कबीरा मीठ ॥

रमैनी १५०-पांच पचीस सदा सुखदाई। नौ औ तीन मिल राज देवाई ॥ कासी नगर बसा एक राजा। राज पाट चारों जुग छाजा ॥ प्रजा लोग करे सुख बासा। नगर मांझ सब करें विलासा ॥ ठग बटपार रहे नहिं कोई। बिरला कारे पुरुष औ जोई ॥ राजा परजाको सुख देई। चारों जुग सो राज करेई ॥ सुखका नगर कासी यह गाऊं। करता पुरुष बसे तेहि ठाऊं ॥

समै-पांच पचीस तीम मिल, दीना अबिचल राज।
इनते एक जो बिछूरे, तिनका होय अकाज ॥
तैंतिस जेहिके संग नहीं, सो करता नहिं होय।
वह कविर अंग विहूना, वहिके जीव न कोय ॥

रमैनी १५१-बीज न वृच्छ पात न फूला। साखा कनाई फल नहिं मूला ॥ धरती ऊपर बिरवा न होई। बिरवा अकास सींचे सब कोई ॥ तेहि बिरवामें चार फल लागे। निरफलते फल चहत अभागे ॥ सो वह बिरवा सकल जग छाया। साखा मूल न काहू पाया ॥ ब्रह्मा विस्नु महेश्वर सेवा। सनकादिक तैंतिस कोट देवा ॥ नारद आदि वो जनक विदेही। वसिष्ठ आदिक राम सनेही ॥ द्वादस भगत औ सिद्ध चौरासी। नौ नाथ रिषि सहस्र

अठासी ॥ यह बिरवा काहू नहिं चीन्हा। परचै बिना जीव सब दीन्हा ॥

समै-प्रथमै वृच्छ बिरंचिहि, तेहि पाछे संसार।
कविर वह वृच्छ निरगुन, बिरला बूझन हार ॥

रमैनी १५२-बात हमारी बूझे जोई। वह पंडित बड ज्ञानी होई ॥ बीज उठा अंकूर कहाया। पौधा भया पात पर लाया ॥ छोटी डारी सो भइ कनाई। बड़ी भई सो साख ठहराई ॥ मध्य पर भया फूल ठहराया। बीज भया तब फल कहलाया ॥

समै-जो बोया सोई भया, ठांव ठांव पर नाम।
पिता पुत्र एके ज्ञानी, जाव न निरगुन गांव ॥
करता माया तीन गुण, पांचों सबल शरीर।
न्यारे २ देत दिखाई, कहत पुकार कवीर ॥
मन माया औ जीव गुण, धोख कहें सब कोय।
गये नहीं औ सब गये, कहत जगत सब रोय ॥

रमैनी १५३-वृच्छ भया बीज विन पानी। तेहिका सेवत पंडित ज्ञानी ॥ आदि अंत न काहू पाया। परिपूरन सो वृच्छ कहाया ॥ फल औ फूल मूल औ डारा। सुंघत पात चहुं दिसि बिस्तारा ॥ तेहिका देव अदेवन ज्ञानी। ब्रह्माते कहो आद भवानी ॥

समै-वृच्छ एक तीन फल लागे, बडहर बेर मकोय।
वृच्छ कवीरा वह अदभुत, उतपत परले होय ॥

रमैनी १५४—बीजा एक वृच्छते आया। बीजामें वह वृच्छ समाया॥ बीज वृच्छको नास न होई। बीजे वृँच्छ देखे सब कोई॥ पांच तत्त्व जीव मिलि यक रंगा। साख लिये सगरी यक संगा॥ पृथ्वी अकास पवन औ पानी। आप आपमें सबहिं समानी॥ जिवको जीव मिले जब जाई। यहिके मरे मरेको भाई॥

समै—धरती अम्मर आदि है, अम्मर है पौन।
मैं तुहि पूछो पंडिता, इनमें मूआ कौन॥
पांच तत्त्वका वृच्छ है, बीज साथ अंकूर।
कह कवीर तजो का जग, रहत जगत भरपूर॥

रमैनी १५५—आदि माया पाट लिखाया। सो त्रिय-देवा सबे पढाया॥ सुनके बचन समाध लगाई। अपनी प्रतिमा दीन्ह दिखाई॥ देख प्रतिमा भये निहाला। सबको मन भये निहचाला॥ पांच वायु ले चले अकासा। आपन आपन देख तमासा॥ कछु एक दिवस किया विसरामा। चला बहुरि तजि अपन मुकामा॥

समै—ब्रह्मा करि विस्नुहिं दीन्हा, विस्नु महेसै दीन्ह।
शिवते पाया जगत सब, जो माया लिख दीन्ह॥
जौन जुगत माया बतलाई, तीनों चले सो चाल।
देखत प्रतिमा आपनी, तीनों भये निहाल॥

रमैनी १५६—माता अपने सुत समझावे। लीन करे तेहि फिर उपजावे॥ ब्रह्मा महेश आप कहाई। मातासे

कन्या होय आई ॥ स्तुति करन लाग त्रिदेवा । सिद्ध समाधि लगाई सेवा ॥ उन भूलत भूला संसारा । निसदिन सेवे जोत अपारा ॥ सेवत जोत जोत मिल जाई । कंचन काया दीन गँवाई ॥ जाका बीज ताहि न जाना । निरगुनको सब जग लपटाना ॥

समै-पांच तत्त्व गुन तीन तेहि, मेट किये यह बात ।
वेद बिचार सब पंडित, कथा कहे दिन रात ।
करता आपन न चीन्हे, नित उठ पढे पुरान ।
सो कबिरा तत्त्व गुण नहीं, ठहरा हरि निरबान ॥

रमैनी १५७-ब्रह्माते कह आदि भवानी । हमरी बात न कोई जानी ॥ चारो जुग हमरी भइ सेवा । हम आपन तुमसों कहि भेवा ॥ सकल सृष्टि हम रचे बिचारी । हम जगकी हैं पालनहारी ॥ हम जग जीतें हम जग हारें । हम जग पालें हम जग मारें ॥ नरक सरग हम दीन्ह निवासा । चारौं जुग हमरी जग फांसा ॥

समै-चार पुत्र हम जनमें, बिना पुरुष संजोग ।
तीन देहधर एक विदेहा, अब तुम करो सुभोग ॥
बसें तीन जग भीतरे, एक सुन्न बस गाँव ।
सकल सृष्टिका करता, जाके हाथ न पाँव ॥

रमैनी १५८-पृथ्वी अकास पवन नहिं पानी । तबका पृथ्वी आदि भवानी ॥ रवि ससि गन गंध्रब नहिं कोई । ये नर किन्नर पुरुष ना जोई ॥ आश्रम मुनीस्वर हते न

देवा। तब कासो कहो यह भेवा॥ कहांथे ब्रह्मा विस्नु महेसा। कहांते भयो सकल यह भेसा॥

समै-ब्रह्मा वेद बखाने सृष्टिते, कहे बात यह आय।
अपरंपार अपर गति हरिकी, कौन कहे अरथाय॥

रमैनी १५९-आप पुरुषकी घरनी माया। तिन पापिन यह सब जग खाया॥ तीनो सुतको लीन्हेसि खाई। भाग बचे हम हमें न पाई॥ सोना पहिर ठगा संसारी। रूपा पहिर रूप सिंगारी॥ दोहुन बैठ सिंहासन कीन्हा। सब जीवनका ज्ञान हर लीन्हा॥ लेके बैठी राज ओ पाटा। भइ सांपिन जग खेदे खाता॥ ब्रह्मा बूझे न जानत कोई। यहि ते बचा अमर भै सोई॥ यहि जंजाल न कोई जाना। यहिके जाल जीव अरुझाना॥

समै-अगुआ बांधे कसकसे, हेरे करडी डीठ।
ऐसा काल अपरबल, खात जगत तहँ दीठ॥

रमैनी १६०-एक पुरुषकी हती जो नारी। एक छोड़ भई अनंत भरतारी॥ कंथे तजे और पै जाई। अरधंगी पतिव्रता कहाई॥ बार सो रहे नीत सँवारी। नित उठ जीव अनंत संघारी॥ माता ते मेहरी कहवाई। फिर वह भई जगतकी माई॥ अंग बिहूना पुरुष ठहराया। त्रि देवनको जाप बताया॥

समै-तिरदेवाके सुमिरते, सबका भया अकाज।
कहैं कबीर कौन यह भुगते, ऐसा अविचल राज॥

************************

रमैनी १६१–सुन्न शिखर एक वसे कवीरा । रंकार धुन उठे गंभीरा ॥ माया आनके दिया संदेसा । त्रिगुनको यह भा उपदेसा ॥ ध्यान धरो तुम तीनों देवा । समाधि लायके करो तुम सेवा ॥ सुन्न नगरते हम तुम आये। निराकार रच हमें पठाये ॥

समै–जो कोइ थामे थाप आपनी, तेहिका करो बिस्तार।
ज्यों जाने त्यों हम आने, जेता यह संसार ॥

रमैनी १६२–पांच तत्त्व गुन हते न जहवाँ । तब काहे प्रहर रहते तहवाँ ॥ दिवस न रजनी पुरुष न जोई । गन गंध्रब रिषि हते न कोई ॥ इ नरकी नर हते न देवा । तब कासो प्रभु कहो यह भेवा ॥

समै–भयो अबूझ बूझे नहीं, जामे करे न बिचार ।
कहैं कबीर पढ २ भूले, जेता यह संसार ॥

रमैनी १६३–जह सृष्टि करताकी आई । सो सब सृष्टि करता कहवाई ॥ गुदरी पहिर अतीत न होई । करता चीन्हे करता सोई ॥ एक करताके पिंड न प्राना । सो वह करता सकल समाना ॥ जो करता नहिं पिंड ते न्यारा । तेहि करताका बीज बिस्तारा ॥ करता एक दूसर नहि कोई । जहां बूझ तहँ करता होई ॥ बिन बूझे करता नहिं पाई । बिन बूझे तन काले खाई ॥

समै–बिन देखे करता भयो, बिन देखे लपटान ।
कहँ कबीर जगत सब, वाही माहिं समाहि ॥

एक समाना सकलमें, सकल समाना ताहि ।
कबिर समाना बूझमें, जहां दूसरा नाहिं ॥

रमैनी १६४–आप पुजेरी आपहिं देवा । आपहिं बेद आपहीं भेवा ॥ आप गुरू औ आपहिं चेला । आप संयोगी आप अकेला ॥ आपहिं ठाकुर आपहिं दासू । आपहिं दाता आपहिं पासू ॥ आपहि बीज आप बृक्ष होई । आपहि हँसे रु आपहिं रोई ॥ आप करे औ आप निनारा । आपहिं करता सिरजनहारा ॥ आप मच्छ संखासुर मारा । आपहिं कच्छ दसधरे धारा ॥ आप प्रल्हाद हिरनाकुश आपू । आपहिं पुत्र औ आपहिं पापू ॥ आप रावना औ रामहिं रामा । आपहिं कृष्ण आप हरिनामा ॥ आप सहस्रा आप परसरामा । आपहिं बावन आप बलिनामा ॥ आप अवध औ आप गयासुर । आपहि भया सुर औ असुर ॥ आप कलंकी कालीद्रा होई । आपहिं पंछी अहेरी सोई ॥ आपहिं सिंह औ आपहिं स्यारा । आपहिं हिंदू तुरुक निनारा ॥

समै–आपहिमें यह जग उरझाना, भरम रहा यह पूर ।
कहँ कबिर यह अटपटा, है नियरे पै दूर ॥

रमैनी १६५–हम करता हम सबके करैया । हम लेता हम सबके दिवैया ॥ हम शाखा हम पात औ फूला । हम सुख दुख समझ हम भूला ॥ हमही बृक्ष बीज अंकूरा । हम दाता हमही हैं सूरा ॥ हम राजा हम परजा

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

लोगा। हमहिं करैं जग सब सुख भोगा ॥ हमहीं छांछ छीर हम हीं घीवा। तत हम हम गुन हमहीं जीवा ॥

समै-हमरा यह तन जीवरा, हमरी सब है बेल।
करता पुरुष अविनासी, सो वह रहा अकेल ॥
हम करता जीव जग मारे, हम करता भय काज।
कहें कबीर हमे जो चीन्हे, ताका अबिचल राज।

रमैनी १६५-राम कहत जग गया हेराई। राम कहत गये बाप औ माई ॥ राम कहत तन धन खोया। राम कहत दिन रैन न सोया ॥ राम कहत तज चला घर बारा। राम कहत बन आसन मारा ॥ राम कहत सब जनम गंवाई। राम कहत आप फिर जाई ॥ राम कहत मरा संसारा। राम कहत घर बार उजारा ॥ राम कहाय राम नहिं जाना। राम लखे विन भया दिवाना ॥

समै-राम राम सब कोइ कहे, रामते परिचे नाहिं।
बांझ झुलावे पालना, कहु का सुख वहि माहिं ॥

रमैनी १६७-पूजत पूजत जन्म गंवाया। रामका खोज काहु नहिं पाया ॥ रमता राम अरमता लागा। रामका खोज न लखे अभागा ॥ बस्ती छोड उजार जग जाई। तौहूं राम मिलत नहिं भाई ॥ रामकी गत कोइ बिरला जाने। सो ज्ञानी जो राम पहिचाने ॥ राम न जाना राम समाया। रामहिं मिला बहुरि नहिं आया ॥

समै-आंगन बेल अकाश फल, अनब्याईका दूध।
ससा सींगका धन कंकरी, रमै बांझका पूत ॥

खोजत २ दिन गया, मिला न निरगुन वीर।
षट दरशन पाखंड छानवे, रहे त्रिय देवन तीर॥

रमैनी १६८—पंडित हाथ ग्रंथ ले आया। राव रंक को पुरान सुनाया॥ अकासके परे वैकुंठ बताया। तंह भागवत रहेस रचाया॥ मानसरोवर है तेहि ठाँय। कल्प वृच्छ एक है वहँ गाय॥ कामधेनु वहां एक गाई। जो चाहे सो केल कराई॥ जप तप पूजा करे जो कोई। वैकुंठ लोक सो प्रापत होई॥ जो कोइ बात अधर्मकी कराई। सो प्राणी यमलोके जाई॥

समै—ले पुरान सब को समझावें, सबहीं लीना मान।
कहें कवीर चला सब कोई, अंधरेकी पहिचान॥

रमैनी १६९—जनम संदेसा पंडित लाये। जमपुरका सब भेद सुनाये॥ जमकी कहें आन मुख चारी। नरक सरगकी बातें न्यारी॥ चित्रगोपित्र कहें समुझाय। जो कुछ सूरज चंद लखाय॥ न्याव कहत सब रिषि मुनि देवा। पावे सोई कियो जस सेवा॥ सुन यह बात सृष्टि डर खाय। निराकार परम ठहराय॥ आपाकी कछु खबर न पाई। लिखेकी बात सृष्टि भरमाई॥

समै—तीन लोक देख हम आये, पाया न जमपुर गांव।
पंडित भरम उपराजिया, राखा जमपुर नाम॥
जिनते जम यह ऊपजा, तिनको लीन्हेसि खाय।
कहँ कवीर सोई जन बांचे, बापे चीन्हे धाय॥

*************************

रमैनी १७०—कहो पंडित तुम बेद बिचारी । पहिले पुरुष कि पहिले नारी ॥ पहले तीर्थ कि पहिले देवा । पहिले बेद कि पहले भेवा ॥ पहले कर्ता कि पहले कर्मा । पहले पाप कि पहले धर्मा ॥ पहले बीज कि तरवर होई । पहले ज्ञान अज्ञान कि सोई ॥ पहले दिवस कि पहले राती । पहले मुख की पहिले जाती ॥

समै—बीज वृच्छ एक साथ है, नजहिं देखे कोय ।
तैसहिं जीव रु साज सब, आग पाछ ना होय ॥

रमैनी १७१—बेद बड़ा कि जिन सिरजाया । ब्रह्म बडा कि जहांते आया ॥ तीरथ बडे कि हरिके दासा । देंह बडी कि बडे अकासा ॥ कृष्ण बड़े कि बडे हनुमाना । राम बडा कि रामहिं जाना ॥ देव बडे कि बड करतारा ॥ धरती बडी कि बडे पहारा ॥ देव बडे कि पूजनहारा । विद्या बडी कि पढने हारा ॥

समै—तीरथ गये एक फल, साध मिले फल चार ।
सद्गुरु मिले अनेक फल, कहें कबीर पुकार ॥

रमैनी १७२—सुन पंडित इक बात हमारी । हरि ब्रह्मा एक रची फुलवारी ॥ मूल चार छे ताकी शाखा । अठारह पत्र चार फल चाखा ॥ बारह कनई फूटी चहुं ओरी । कुंपन बिरोह चहुं दिसि बहु तेरी ॥ सो देखनको चला संसारा । वहां बेठे पंडित रखवारा ॥ देख देख सब कोइ भुलाना । षट दरशन सबके मन माना ॥ रैन

औ दिन करें सब सेवा । वहि बनवारीका लखा न भेवा ॥
समै—जेहि बन सिंह न संचरे, पंछी बैठ न डार ।
सो वन कविरन ढूंढिया, सिंह समाध बिचार ॥
ओंकार नाद यक माया, तहँ लागे गुन तीन ।
तामे अटका जगत सब, भया वहीं लौलीन ॥

रमैनी १७३—देखो देखो जीवके काजा । जात चले तज अविचल राजा ॥ ये देखो लोगनकी भूल । सींचत साख तजत हैं मूल ॥ मीठा फल तजि कडुवे खाता । जो नहिं तेहि जपे दिन राता ॥ बस्ती छोड उजार जग जाई । खांड तजिके खरी जो खाई ॥ करिके विचार तजे जो कोई । जुग जुग यह सुख बिलसे सोई ॥ वहांकी खबर सब ले आया । वहा नाहिं कछु मन भरमाया ॥
समै—साखा पात सींचे सब, हरियर होय सुखाय ।
कबिरा सींचे मूलके, डार पात हरियाय ॥
आस लाय सिंचत बिरवा, जाके फल नहिं पात ।
मोहि निसदिन संसा, दिन दिन सो हरियात ॥

रमैनी १७४—चारो जुग हम फिरे पुकारी । कोइ न माने बात हमारी ॥ कहत कहत मोर रसना हारी । मानत नाहिं मोर सुत नारी ॥ हम संजोग कीन्ह व्योहारा । बंस बेलको रचा संसारा ॥ जो हम हैं सो पूत हमारा । पिता पुत्र ते नाहिं निनारा ॥ हम नित बोलें हम नित चालें । हम करता त्रिभुवनको पालें ॥ हम जललें हम

करें अहारा। यह सब आतम आप हमारा ॥ जो बूझे सो प्राण हमारे। जो नाहीं तिनते हम न्यारे ॥

समै-जिसका करता और है, निराकार नहिं होय।
जो उपदेश दियो सद्गुरुने, जगत कहे सब रोय॥
अमर तखत अडिआसले, पिंड झरोखे नूर।
जाके दिलमें मैं बसूं, सैना लिये हजूर ॥

रमैनी १७५-सुन पंडित मैं पूछो तोही। निसदिन संशय व्यापे मोही॥ चार भुजा जाके पिंड न प्राना। सो प्रभु कैसे भयो पखाना ॥ जाका यह सब कीन कराया। सो प्रभु कैसे गरभमें आया ॥ तीन सृष्टिका करता जोई। सो प्रभु कैसे बालक होई ॥ अकास सीस पाताल जेहि पाया। सो संपुट प्रभु कैस समाया॥ चौदह भुवन छो जो प्रभु छाया। सो अंगुल दस कैसे कहाया ॥ नित उठ जो प्रभु सबको देई। सो प्रभु कैसे तुमसो लेई ॥

समै-आगु आगु पंडित चले, पाछे लागु संसार।
कविरा सेवक सो भया, पाया जिन निरंकार ॥

रमैनी १७६-यह तन पांच तत्त्वका भेला। इनमें कौन गुरू कौन है चेला॥ एह तन है एक नगर अपारा। ताकी वस्तु कहो बिस्तारा॥ कैसी बस्ती कैसी चाला। कैसे लोगवा कैसै ख्याला ॥ कैसे रैयत कैसे राजा। कैसे हरि यह जग उपराजा ॥ यहि बस्तीकी चाल जो पाई। सो अमरापुर नगर बसाई ॥

समै—काजी पंडित पच मरे; पाये गांव न ठांव।
कबीरा मोहि अचंभा, नाहिं धरायो नाम॥
नाम न पाये गांवका, रहे नाहिं ठहराय।
कबिरा लखे बिन हरिके, आपा दिया गंवाय॥

रमैनी १७७—बिना विवेक जगत भरमाना। भेष किया पै राम न जाना॥ बिना विवेक जगत भयो रोगी। भेष धरा जग भया बियोगी॥ जेहिके घर यह बूझ न होई। तिसके बंस न तिष्टे कोई॥ बिना विवेक गये त्रिदेवा। भेष धरा पै लखा न भेवा॥ जहां विवेक तहां करतारा। भेषहिं करता रहा निनारा॥ भेष मध्य निराकार समाना। जहँ विवेक तहँ आतम ज्ञाना॥

समै—कर बंदगी विवेककी, भेष धरे सब कोय।
वह बंदगी बहि जान दे, जहँ शब्द विवेक न होय॥

रमैनी १७८—देखा देखी जग भर्माना। ज्ञान कथा पै राम न जाना॥ काहू तीरथ बरत लौ लाया। कोई सुन्न मंदिलको धाया॥ कोई पीर औलिया सेवे। कोई नित उठ पूजे देवे॥ कोई जोग जुगति अरुझाना। कोई मंत्र जंत्र मन माना॥ कोई मुनि जन काया मारे। कोई जटाधर ब्रह्म बिचारे॥ कोई जन्म कर्म ठहराई। कोई बौध जती कहवाई॥ कोई सकति ते भया संघाती। कोई भगति करे दिन राती॥ कोई ज्ञान करता

ठहरावे । कोई भूत प्रेत तन धावे ॥ एक मते चले ना कोई । अपनी मत पुरुष अपनी मत जोई ॥

समै-पिता न पाया पुत्र ने, परा भरम जी माहिं ।
बहुते चित्त लगाइबो, ताते पहुंचत नाहिं ॥
हती एककी भई अनेककी, बेस्या बहुत भतारि ।
कहें कबीर काके संग जरि है, बहुत पुरुपकी नारि ।

रमैनी १७९-नरकी टेक गही नहिं जाई । कोट कबीर रहे समझाई ॥ कैसे उन तत गुरू पढाया । गुरू मंत्र ले जी भर्माया ॥ रहन गहन जो गुरू पढाई । सो सो जीव टेक जग भाई ॥ खांड तजे खारीको खाई । आप नासि दूजा ठहराई ॥ आपनी तजि औरकी आसा । जलमें ठाढा मरे पियासा ॥

समै-टेक न कीजे बावरे, टेक माहिं है हानि ।
टेक तजे सुख पाइये, कहे कबीर निदान ॥
टेक करी रावन गये, कंस भया निरबंस ।
कबिरा छौंडो टेक तुम, बूझ बचावो हंस ॥

रमैनी १८०-सब जगका ऐसा प्रसथाना । सब कोइ कहे राम हम पाना ॥ कोइ कहे हम जप तप कीन्हां । तहां राम मोहि दरसन दीन्हां ॥ कोइ कहे तजा अन्न अहारा । तंह पाये हम राम दिदारा ॥ कोइ कहे हम भये सन्यासी । सांख्य जोग करि मिले अबिनासी ॥ कोइ कहें कण्ठो छाप

बनाई। तहँ हरि दरसन दीन्हों भाई ॥ कोइ कहें हम दीन्हों दाना। कोइ कहें हम रामहिं जाना॥

समै--जहँ देखा तंह रामको, बिन यक राम न कोय।
बातन हमें जगत प्रबोधे, बातन राम न होय॥

रमैनी १८१--देखो देखो यह नर ज्ञाना। आप तजत पूजत पाषान॥ कोई सिद्ध करे धुन पाना। कोई रह गोड उलाटे ताना॥ कोई बैठा तज अन्न अहारा। कोइ गुफा बैठ आसन मारा॥ कोइ करें नित तरपन जापा। कोई धर्म करें तजि पापा॥ कोई घर तजि भये ब्रह्मचारी। कोई अन्न तजि दूधाधारी ॥ कोइ बैठा तन खाख लगाई। कोइ बैठ तन तिलक दिखाई॥ मठ मंडपा कोइ पहुंचा जाई। कोई सुन्नमें रहा समाई॥ कोई चढावें उलटा पवना। कोइ सकल तजि भया सु मौना॥ कोइ श्रुति स्मृति पढे पुराना। कोई तीरथ बरत जो दाना॥ कोई देश दिसंतर जाई। हरि गुन गाई अन्न न खाई॥ कोइ करे काया प्रछाला। कोई डाले फिरे कंठी माला॥ कोइ करता नित राग औ रंगा। कोइ करते देव मुनीका संगा॥

समै--देखा देखी सब जग भरमा, मिला न सद्गुरु कोय।
कहें कवीर कर कर नित संशय, जियरा डारा खोय॥

रमैनी १८२--घट फूटे जल सब बह जाई। काठ जरे पावक सब जाई॥ फूल सुखाने बास न होई। घटमें

चंद न पावे कोई ॥ दूध बिनासे निकसे न घीव । बिन तन कैसेहु रहे न जीव ॥ कांसी फूटे धुन नहिं आई। बिजना टूटे पवन नसाई ॥

समै--बिन तन कोई लखे न जियरा; बिन तन झूठा रूप ।
कहें कबीर झूठा किन्ह पंडित, ऐसा ख्याल अनूप ॥

रमैनी १८३–सीतै सीत भई सितलाई ।सीतै सीत रोग होय जाई ॥ सीतल मिला सो साधु कहाई । सीत बिहूना साध न पाई ॥ सीतल होय तब सीतल पावे । सीतल होय तब सीत न जावे ॥ सीतै सीत अमर नर होई । सीतल राखे ज्ञानी सोई ॥

समै–सीतै मिल सीतल भया, सीतै सित अधिकात ।
सीतल जीव विनासिया, सीतलकी दो बात ॥

रमैनी १८४–यहि विधि बूझो पंडित ज्ञानी । हिय कपारकी दोउ हेरानी ॥ बृच्छ एक फल भये अनंता । माटी एक घर भये अतिअंता ॥ दो संजोग सृष्टि बहुताई । कंचन एक भूषण बहु भाई ॥ सूत एक वस्तर बहु नामा । अन्न एक धरे बहु नामा ॥ अनेक जान जियं एके जाने । अलख पुरुषको जो पहिचाने ॥

समै–गहना एक कनकते गहना, नाम अनेक धराया ।
कहें कबीर कंचनका भूषण, एक भया जब ताया ॥

रमैनी १८५–पंछी एक जाकी सब सैना । बिन तन जीव बोले मुख बैना ॥ बिना पंख उड़ सब जग जाई ।

बिना चोंच जग लीन्हा खाई ॥ वहि पंछीका खोज न पाया । जिन पंछी सब भरमाया ॥ अकास पताल कीन्ह वहि बासा । घट घट वाका भया निवासा ॥

समे–ब्रह्मा विष्नु महेश्वर, असुर मुनी सुर देव ।
ढूंढत ढूंढत पच मुए, लखा न वाका भेव ॥
तिल जैसी है चिरैया, पंखा नौ नौ हाथ ।
बकोटन मास परोसन वाकी, पूंछ अठारह हाथ ॥

रमैनी १८६–सांचा बनिज करो सब कोई । सांच बनिज लाभ बहु होई ॥ सब गुन भरे जीव सो देवा । निरफल वृच्छकी करो न सेवा ॥ बनखंड मांझ परो जन भाई । शब्द बिचार रहो ठहराई ॥ करता पुरुष ते करो सनेहा । देह धरे जनि होहु बिदेहा ॥ जहां बूझ तहँ करता माना । साधते करता नाहिं भिनाना । करता करे सब जीव जनंता । नित समझावे संत अनंता ॥

समे–जो दिल दगा समुद्र है, तेहि बन जाव जिन कोय ।
सो दिल सदा बनीजिये, जेहि दिल दगा न होय ॥
जैसा दिल मेरा अहै, ऐसा तेरा होय ।
कच्चा लोहा ताय, करि, संधि लखे नहिं कोय ॥

रमैनी १८७–भौ जल नदी महा बिकरारा । मन मलाह तंह खेवनहारा ॥ काम क्रोध दोऊ घटवानी । ते सबकी कर ऐंचातानी ॥ मोह नाव आसा कँडिहारा । लोभ भौंर तृष्ना लहर अपारा ॥ ऐसी नदी नाव यह

आई। तेहि चढ उतरे यह जग भाई ॥ उतर उतरके गये तेहि ठाऊं। मिला संदेस न लीना नाऊँ ॥

समै-गुन टूटे बेरा बहे, औघट लागे जाय।

कहें कवीर मोर यह बिरवा, जड़ पातो गयो सुखाय॥

रमैनी १८८-वचन हमार तुम सुनो कवीरा। करता सब गुन धरे शरीरा ॥ आदि माया संग केल कराई। केल करत इच्छा जिय आई ॥ दो संयोग भये तिरदेवा। तिनहिन लाई उनकी सेवा ॥ सेवा करत गये जुग चारी। किनहुं न मानी बात हमारी ॥ करताकी कछु खबर न पाई। अंग बिहूना रहा लौलाई ॥

समै-बंस बेलके कारने, करता पास उपाव।

करता छोड अकरताकी नारी, पुत्रते कीन्ह अन्याव।

रमैनी १८९-बचन हमारा सुनो अनूठा। वेद किताब कहेको झूठा ॥ बेदको भेद न काहू पाया। झूठा बेद पंडित ले आया ॥ बेद बिहूना न पंडित होई। वेदे जाने पंडित सोई ॥ संध्या तरपन न पंडित जानो। करता लखा सो पंडित मानो ॥ भेद न पाया जग भर्माया। झूंठा झगरा पंडित लाया ॥ तेहि झगरा सब जग अरुझाना। देव आदिका मरम न जाना ॥

समै-चारो जुग झगरा गये, झगरा तऊ न छूट।

यह पंडित सब जग भर्मावे, कहे कबीर सब झूठ॥

रमैनी १९०-बाद बिवाद तजो तुम ज्ञानी। बूझो

बूझो हमारी बानी ॥ बिन बूझे नाहीं गुन पैहो । बिन बूझे तुम हरिहिं समैहो ॥ सत्त होय तेहि तजो न भाई । औ सत तजो जन रहो समाई ॥ तजो नहिं बाप तजो नहिं माया । तजो नहिं कर्म तजो नहिं काया ॥ छाडो न आपन लोग व्योहारा । छाडों न यह सुखको दरबारा ॥ बापहिं चीन्हो चीन्हों फिर माई । तातै चीन्हों तत्त्व समाई ॥

समै—जात पात जिन छोडो, छोडो गांव न ठांव ।
शब्द हमारा न छोडो, जनि फेर धरावो नाम ॥
षट दरशन भूले जातपांत तज, मिला न सद्गुरु कोय ।
कहें कबीर भर्म ऊपजा, थित काहे ते होय ॥

रमैनी १९१—यहि विध बूझो पंडित ज्ञानी । जहां अगिन तहां धूम निसानी ॥ जहां जीव तंह होइहै देही । जहां पुरुष तंह होइहै जोई ॥ घटके अधार नीर घट होय । जहँ देही तहँ जीव संजोय ॥ जहां संशय तंह होइ है रोगा । जहाँ प्रीत तहँ होय वियोगा ॥

समै—एक एक ते होय नहीं, जो पै दूसर नाहिं ।
दूसर मिला एकै भया, इसमें संशय नाहिं ॥

रमैनी १९२—समझो शब्द होय जिय चैना । जिन परछि पाय न देखो नैना ॥ षट शास्त्र यह करत लड़ाई । मिमांसा रहा कर्म ठहराई ॥ वेदान्त कहे ब्रह्म जग करता । जैन मतै बोध चित धरता ॥ करताको ठहराया अन्याई ।

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

मंत्र शास्त्र शिव सकती ठहराई ॥ पातंजली अनेक ठह-
रावे । झगरा मेटे जो न्याव चुकावे ॥

समै–न्याय करे यह सोय जिन, पाया पुरुष अलेख ।
कहें कबीर सोई जिव मुकुत, जिन यह किया विवेक ॥

रमैनी १९३–षट दरशन यह करें बिचारा । निरा-
कार सो सिरजन हारा ॥ निराकार दस दिशा बनाई । दसो
दिशामें रहा समाई ॥ पूरब भगति पच्छिम करे ज्ञाना ।
उत्तर जोग दच्छिन कर्म ठहराना ॥ अग्नै काल वायव्य भई
संसा । नित नेम ईसान नीवंसा ॥ पाताल भर्म अकाश
निराकारा । मृत्युलोकका झूठ पसारा ॥ घरकी नारि तज
भया वियोगी । दसों दिशामें भया विरोगी । समाध
लाय जोतको ध्याया । अलख न चीन्हा जीव गँवाया ॥

समै–दसों दिसा खाली परी, सुन्न ब्रह्म ठहरान ।
कहें कबीर यह बूझ जगतकी, यहि ठहरा गुरुज्ञान ॥

रमैनी १९४–देव निरंजन पुरुष न दूजा । वेद पुकारे
पंडित कर पूजा ॥ मसजिद मुलना करे पुकारा । स्वास
वेद करे निरंकारा ॥ जवाब सवाल न पावे कोई । पुकार
पुकार जन्म सब खोई ॥

समै–आखंडिया झाईं भई, पंथ निहार निहार ।
जीभड़िया छाले परे, अलख पुकार पुकार ॥

रमैनी १९५–षट दरशन मिल समझो बानी । केहि
ठहराया आदि भवानी ॥ अलख बड़ा कि, जिन अलख

लखाया। करम बड़ा कि जिन ककर कराया॥ दसो दिशामें दस व्योहारा। दिशा बडीकी बूझनहारा॥ जो सब बूझे करे करावे। तौन बड़ाकी जो नहिं पावे॥

समै—बीजक बतावे बित्तको, जो विन्न गुप्ता होय।
शब्द बतावे जीवको, बिरला बूझे कोय॥

रमैनी १९६—नरका ढाढस अगम अपारा। गहे न जाय जाय संसारा॥ जनक आद जिव देह जराई। सन-कादिक बसे बन जाई॥ रावन आदि जिन सीस कटाया। हरनाकुस आदि जिन उदर फराया॥ बलि आदिक जिन पीठ नपाई। कंस आदि जिन कीन उपाई॥ गौतम आदि जिन तप कियो भाई। विश्वामित्र आदि सृष्टि करि आई॥ जमदग्नि आदि जिन तप कीना भाई। जड़भरत आदि जिन सरब गंवाई॥

समै—षट दरशन ढाढस मरे, गन गंध्रव मुनि देव।
कहैं कबीर ढाढस तजे, लखे सो अविगत भेव॥
जेहि करता तिन दीन ढाढस, ढाढस वहां न होय।
अंग विहूना जो रहे, अहंकार करे सोय॥

रमैनी १९७—नरसा चतुर न दूजा होई। चतुरे चतुर मिला सब कोई॥ पाप न चतुर चतुर व्योहारा। चतुर चतुर ठगे संसारा॥ चतुरे सुत चतुरे मिल जोई। चतुर विहूना मिला न कोई॥ एक न तजे करे चतुराई। माता एक जोनि ठहराई॥ चतुरे मिल चतुरा समुझावे।

चतुरको भेद चतुर होय पावे ॥ एक न चतुर चतुर संसारा । सब चतुरनतें करता न्यारा ॥

समै–चतुराईको छोडदे, सद्गुरुको मिल बूझ ।
कहें कबीर दीपक विना, अंधेरे परे न सूझ ॥

रमैनी १९८–यह नर उतर पारको जाई । कहो पंडित मोहिं तै समुझाई ॥ नाव न करिया न खेवनहारा । नदी बिकट जेहि वार न पारा ॥ जल अगाध तहँ लहर गंभीरा । औघट घाट सब उतर कबीरा ॥ रैन अंधेरी संग न कोई । आप आप चले सब सोई ॥ दिवस न रजनी पुरुष न नारी । हरि ब्रह्मा तंह नहिं त्रिपुरारी ॥ सुख ना भोग गुरु न चेला । पार उतर जग चला अकेला ॥ निरगुन ब्रह्म कछु ना भाई । सुन्न सेयके सुन्न समाई ॥

समै–गुन टूटे बेराबहा, उठ गया खेवनहार ।
औघट घाटी नर गया, कासों कहों पुकार ॥
फुलवा भार न ले सके, कहें सखिन सो रोय ।
ज्यों ज्यों भीजे कामरी, त्यों त्यों भारी होय ॥

रमैनी १९९–बाट बिकट नहिं कोइ बटवानी । तौने बाट चले ब्रह्मज्ञानी ॥ नगर दूर तंह संग न कोई । गैल सलसली उदो ना होई ॥ भेद अभेद न त्रिगुन माया । पांच तत्त्वकी हती न काया ॥ बोल चाल न पीव न खाई । अंकार नहिं नगरमें रहाई ॥ सुख अनंद ना निद्रा भाई । समझ भूल नहिं आवे जाई ॥

समै—चिउँटी जहाँ न चढि सके, राई ना ठहराय।
आवागमनकी गम नहीं, तहाँ सकल जग जाय ॥
रमैनी २००—वहांकी कोई कहे न बाता। सुन्न नगर की जो कुसलाता ॥ पुरुष साथ जरे जो जोई। वहांकी बात कहे न कोई ॥ निरगुनमें जो जीव समाया। तेहि की खबर न कोई लाया ॥
समै—स्वाद ना पाये कंदका, सब कोइ करे बखान।
मीठा मीठा जग कहे, मीठेमें भइ हानि ॥
बात पराई को कहे, परदा लखे न कोय।
सहना छिपा पयार में, को कह बैरी होय ॥
रमैनी २०१—प्रेम प्रीति सुनत जग आया। सरगुन छोड निरगुन गुन लाया ॥ निरगुन पदमें बैठा जाई। निरगुन रहा सुन्न ठहराई ॥ निरगुनका गुन लखे न कोई। प्रेम लगाय पुरुष औ जोई ॥ प्रेम प्रेम सकल जग बंधा। प्रेमका गुन कछु लखे न अंधा ॥ प्रेम प्रेम मुवा सब कोई। प्रेम बूझ प्रीतम है सोई ॥
समै—साध बसें हरि भीतरे, हरि बस साधन मांझ।
कहें कबीर देश वह ऐसा, जहां भोर नहिं सांझ ॥
रमैनी २०२—सब पंडित मिल कहें बिचारी। केकर बाप काकी महतारी ॥ हमना कोइके कोइ न हमारा। उड़ जैहे जब बोलनहारा ॥ सुन्न नगरका पवन यह भाई। सुन्न नगरमें जाय समाई ॥ संग साथ नहिं कोई आया।

बीचहिं माया बीच मिलाया ॥ यह कह गुरुवा जम भर-
मावे। सहर छुटाय सुन्न ले जावे ॥

समै–वहां की आसा लायना, झूठी यहां की आस।
ग्रह तज घर बन मांडिया, जुग जुग फिरे निरास ॥

रमैनी २०३–एक दिवस वो एके राती। सात रैन
दिन कहो केहि भांती ॥ एक पुरुष वो एके जोई। दो
संजोग जगत सब होई ॥ एके प्रान वो एके काया। बहुत
जीव धर कहां ते आया ॥ एक ऊखकी एक मिठाई।
अनेक नाम कैसे धर भाई ॥

समै–नीवके बिचले सबघर बिचला, अब कछु नहींवसाय।
कहें कबीर जो कोइ समझे, तेहिको काल न खाय ॥

रमैनी २०४–कहो पंडित तुम निगम बिचारी।
काहे ते पुरुष काहे ते नारी ॥ कहां ते पुरुष कहां ते
राती। काहे ते जात काहे ते पाती ॥ कहां ते गुरू कहांते
चेला। काहे ते बृच्छ काहे ते भेला ॥ काहे ते हिंदू तुर्क
कहाये। काहे ते नरक सरग बतलाये ॥ कहो पंडित
अनेक व्योहारा। सत्त मिर्तमें है संसारा ॥

समै–एके यह तन जीउरा, एक बृच्छ एक बेल।
कहें कबीर एक जो समझे, एक अनंत अकेल ॥

रमैनी २०५–अचरज एक सुनो तुम भाई। बिंद
चोराइ स्वपचका लाई ॥ उठी बेल फल तामे लागा।
माथ बहिन सब गावें रागा ॥ छठी भरी तंह बाजन

बाजे । बंदनवार मंडलमें छाजे ॥ पर लडका मरम काहु न पाया । तैंतिस कोट देवतन खाया ॥ जेहिका सुत तेहि राख दुराई । पर पुत्र पर तात खिलाई ॥

समै-पेडे मूल बिगाडिया, सुत आगे भरमाय ।
कहें कबीर जेहिका सबकीना, तेहिका कछु न बसाय॥
आद भई अब नाहीं, परा बीज पर खेत ।
कहें कबीर समझे नहिं कोई, विरथा जीव मृगदेत ॥

रमैनी २०६-भरत भूत एक खेले भाई । ऐसा भूत लखा न जाई ॥ दिवस एक भूत लपटाना । दूसर होयके पिंड समाना ॥ नावत भौहा करें दवाई । भर्म भया पै भरम न जाई ॥ नित उठ पीर वो देव मनावें । आप भरम आप थित लावें ॥ जहांते भरम उठा यह भाई । तहां भरम वह जाय समाई ॥

समै-मथुरा नगर भरम एक प्रानी, कविराके उपदेश ।
कहें कबीर वहां कोइ नहीं, झूठा बहुत संदेश ॥

रमैनी २०७-पांच तत्त्व गुन एके भाई । रक्त मांस कछु भेद न पाई ॥ नासिका सरवन मुख एकै बैना । रोम त्वचा पग कर नैना ॥ रक्त मांस हाड एक गूदा । ब्राह्मण छत्री वैश्य वो सूद्रा ॥ कहो पंडित मोहि तुम समझाई । बरन भेद तेहिं देहु बताई ॥

समै-एक वृच्छ बहु फल लगे, कौन बड़ा को हीन ।
जो जाहीमें संचरे, सो ताही आधीन ॥

रमैनी २०८-पंडित खोल देख तुव ग्रंथा । जग संजोग कामिन वो कंथा ॥ नांदे बिंद समते है भाई । बालक होय बिरंच बनाई ॥ नांद बिंद मिल जग भौ पाडा । ते कैसे कहे माटीको भांडा ॥ नांद बिंदकी खबर न जानी । फिर फिर धोखा कहें कहानी ॥

समै-बिन संजोग भया कछु नही, ऐसा दिया संदेश ।
बिन संजोग जगत सब उपजा, यह आया उपदेश ॥

रमैनी २०९-बिन काजे काया जिव जारी । रट रट राम जनम सब हारी ॥ रटे रैन दिन गुरु समझाई । रटें रामपै राम न पाई ॥ रामहिं जाने रहित तब होई । रामहिं कहे भये जम लोई ॥

समै-बिन डाड़ें जग हांडिया, सोरठ परिया डांड ।
बाटनहारा लोभिया, गुर सो मीठी खांड ॥

रमैनी २१०-ले चोरीटा बाभन लावे । दोकर जोरके देव मनावे ॥ नारसिंह भैरोंके लाई । हनूमान देवी कहवाई ॥ पीर पैगम्बर कहें यह देवा । घर घर होय सबनकी सेवा ॥ दूध पूत मांगे जग जाई । कोई कहें कंथ सुत आई ॥ कोई कछु कोई कछु कहई । जो जो मांगे सो सो लहई ॥ सृष्टि बावरी तेहि दिल लावे । देवी देवका मरम न पावे ॥

समै-राम रहे वन भीतर, गुरुकी पूजी न आस ।
कहें कबीर पाखंड सब, झूठे सदा निरास ॥

रमैनी २११—बिस्व रूप नया न होई। बीज वृच्छ गुन नया न कोई ॥ सत मिथ्या कछु नया न जानो। मती अवस्था नया न मानो ॥ इनही निरगुन सरगुन ठहराया। इनहिं कहा इनहीं लौ लाया ॥

समै—निरगुन पुरुष सरगुनका थापा, निरगुन बसा निनार।
निरगुनमें यह सब अटके, कहत कबीर पुकार ॥

रमैनी २१२—वोई नैन वो वोई बैना। वोई कंथ कामिन सुख चैना ॥ वोई गुन तत्त्व वोई सब भाई। वोई प्रकृति वोई रस आई ॥ वोई करें औरहिं ठहराई। पुरुष बिदेही फिर जग समझाई ॥ ऐसी तजे पुरान न पंथा। तत्त्वमा सगरे डारे कंथा ॥ प्रगट जगतमें देत दिखाई। फिर फिर गुरुवा ग्रंथ सुनाई ॥

समै—अपनी सुरत बिसारिके, पढ पढ भया निरवान ॥
जो जौन जाके बस परा, सो ताके आधीन ॥

रमैनी २१३—पांच तत्त्व गुण जीव औ देही। पचीस प्रकृति बिकार सनेही ॥ तिनमें चार बरनको भाई। तेहि पंडित मोहिं कहो समुझाई ॥ नांद बिंद जब जाय समाया। जीव सनेही भई यह काया ॥ माटीकी काया क्यों ठहरावे। अवरन बरन गुन बरन लगावे ॥ बरन लगाय गहे नोलावे। कहि कहि पंडित जग भरमावे ॥

समै—जीव ब्रह्म पर ब्रह्म ना, अरजन बरन शरीर।
हिन्दू तुर्क दोउ मिल भूले, कहत पुकार कबीर ॥

रमैनी २१४—सब कोइ बात नहीं समझावे। कोइ ना मोहिं वह देश दिखावे॥ उदे अस्त लो वाहीकी बातें। हिन्दू तुर्क कहें कुसलाते॥ सब जग वाही ते भौलाया। कर्ता न लखा जीव भर्माया॥ षट दरसन छियानवें पाखंडा। लेके प्राण चढे ब्रह्मंडा॥ वह देसवाकी खबर न पाई। बेद किताब सबन सुनाई॥

समै—देव रिषी सुर औ गन गंधर्व, जच्छक किन्नर आद।
कहें कबीर सब वहीं समाने, कर गुरुवा सो बाद॥

रमैनी २१५—गुन टूटे बेडा बहजाई। टूटे डोर पतंग न आई॥ घट फूटे जल औघट जैहे। काया गये जिव सुन्न समैहे॥ कला चूके नट जीव गंवाई। आप चीन्हे बिन करता न पाई॥ दूध बिनासे घिव ना होई। पुरुष बिना सुत जने ना जोई॥

समै—बिन बूझे धोखे गये; तिरदेवा तिरलोक।
थित ना पकड़ी सृष्टि यह, यही भया जी सोक॥
बहते बहते औघट गये, पाया घाट ना तीर।
बही सृष्टि सब जात है, कासों कहें कबीर॥

रमैनी २१६—उतपत प्रलय वहांकी न होई। रूप न रेख पुरुष न जोई॥ सूछम स्थूल न वंहके ठाऊं। अर्थ उर्ध निरंजन नाऊं॥ निराकार निरगुन वह देवा। यह उपनिषद देत है भेवा॥ चारो जुग सेवा चित लाया। निरगुन पुरुष न काहू पाया॥ एक होय तो कह समझाई। सकल सृष्टि ते कहा न जाई॥

समै–नारि वह अंग बिहूना, सुत कन्या भइ चार ।
माता बिगडी सुतन ते, पंडित लेहु बिचार ॥
रमैनी २१७–जेठ मास जल जाय सुखाई । कुम्भका नीर कहांते आई ॥ कहो विष सर्प कहांते लाया । कहो मक्खी मधु कहांते पाया ॥ गये चारा भीतर घांस कराई । च्छीर कहांते गऊ वह दुहाई ॥ अगिन काठमें कहांते आई । पुष्पमें बास कहांते भाई ॥ सरमें ज्ञान कहांते होई । करामात कहांते सोई ॥ बनखंड माहिं परा संसारा । हैं सब नेरे कहत निनारा ॥
समै–नियरे रहा दूर अब भइ, भई वहांकी आस ।
कहैं कबीर गया तब तहवाँ, फिरके चला निरास ॥
रमैनी २१८–पांच चार बैठे एक तीरा । तहां बसे परमहंस कबीरा ॥ पांच चार मिल खेलैं पाला । तिनका भया हंस यह बाला ॥ पांच चारके हैं यहते जो जो । किया करे इनका वह सो सो ॥ पांच चारके जो बस आया । तें करताको चीन्ह न पाया ॥ पांच चार बस लावैं जोई । सुबस बसैं सो करता होई ॥
समै–पांच चार जग लूटे, कोई लिया न भेद ।
जग पंडित भर्मावई, पढ पढ चारों वेद ॥
बारह मास युग चारो, नौ नायकके साथ ।
कहैं कबीर किनहीं नहिं चीन्हा, झगरा चला जगहाथ ॥
रमैनी २१९–बाजीगिर एक बड़ा अन्याई । आप न

नाचे जगहिं नचाई ॥ सब जग करे वाहीकी सेवा । घर घर गुरू पुजावें देवा ॥ बाजीगरकी कोइ खबर न पावे । नाचे जग जो नाच नचावे ॥ बाजीगरको लखे जो कोई । सो बाजीगरका गुरु होई ॥ बाजी खेलाय रह्म संसारा । बिरला बाजी बूझन हारा ॥

समै-बिना रूप बिन रेख बिन, जगत नचावे सोय ।
मारे जांचे जो नहीं, ताहि डरे सब कोय ॥
डर उपजा जिय माहिं डरा, डरते परा न चैन ।
लेखा रामै देन है, यही कहें दिन रैन ॥

रमैनी २२०-तन धरके नर सुख ना पाया । हीरा जन्म बिन काज गँवाया ॥ योगी जंगम भया सन्यासी । जती सती बैराग उदासी ॥ वनखंडी ब्रह्मचारी ग्रेही । जहां लो जीव धरे जग देही ॥ पात पात सब दुखिया भाई । सुखमें दुख जग लीन उठाई ॥

समै-सुखका सागर मैं रचा, दुख दुख मेलो पांव ।
थित न पकड़ी आपनी, चले रंक औ राव ॥
दुख न हता संसारमें, हता ना सोग वियोग ।
सुखहीमें दुख लादिया, बोली बोलें लोग ॥
सुख विलसो सुख विलसो, काटो भरमकी डोर ।
कहें कबीर पुकारिके, जगते होर बहोर ॥

रमैनी २२१-सांच कहों तो जग दुख पाई । झूठ कहों तो कहा न जाई ॥ सत्त बात झूठ जग जाने । झूठ बात

सत्तके माने ॥ कहा हमार न माने कोई । पूत धरे है बापकी जोई ॥ सरगुन ब्रह्म निरगुन ठहराई । पिता ते पुत्र होय जग भाई ॥ ससुर बहूका भर्ता होई । बहूकी सौत ससुरकी जोई ॥ बहिन होय भैयाकी नारी । जो इला लौट होय महतारी ॥

समै-ऐसी जगकी चाल, मूल वस्तु माने नहीं ।
भरम परा संसार, माने जो जाही कही ॥

रमैनी २२२-कहो पंडित तुम मोहि समुझाई । छीर गऊ यह कहांते लाई ॥ जंत्र होय सब निकसे भाई । मधको कौन दोष लगाई ॥ जंह लग बस्तु पृथ्वी पर होई । पांच तत्त्व विन उपज न कोई ॥ सो नित खाय सकल संसारा । मद माँस दे दोष निनारा ॥ जेहिके मन जो चाल जो भाई । सोइ कछु करे वहै कराई ॥ पांच तत्त्वका यह विस्तारा । पांचो ते कछु नाहिं निनारा ॥ स्वासा बिंद कहो जो नाहीं । वह संयोग वाहिके माहीं ॥

समै-आद अटकमें सब परे, अटक तजे नहिं कोय ।
कहँ कवीर नर बंधन भया, आवागमन न होय ॥

रमैनी २२३-गुरु गुरु करे न गुरुवा पावे । सद्गुरु माहीं जगत समावे ॥ साती गुरुवा मर गये भाई । निहअच्छरमें गये समाई ॥ जब जग मर गये लोक सिधाया । निहअच्छ-रकी खबर न पाया ॥ यह अजपासे अजपा नियारा । तहां उठे अनहद झनकारा ॥ अधर दीप है वाको नामा ।

जगत मुवा गया उस ग्रामा ॥ बिन कर बिन पग सब कहुं जावे । नैन बिन देखे बिन मुख गावे ॥ बिन हिय बिन सरवन सुनता । रुन झुन सोहं सोहं झुंता ॥ बिन नासिका बिन इंद्री भोगा । बिन गुन बिन जिव जोगी जोगा ॥
समै—जोगी ऐसो जुगति बिहूना, तासों जनि करु नेह ।
कहें कवीर तुम करता, खोजो काल पुरुष विदेह ॥

रमैनी २२४—ऐसी सुनी अकथ कहानी । सुर नर मुनि सब गावें प्रानी ॥ क्षर अक्षर निअक्षर गावे । तत्त्व माहिं निज धर्म बतावे ॥ अमी शरीर नांद औ बिंदा । निहअच्छर पुरुष तहँ करे अनंदा ॥ सुन्न परे निज धाम बताया । निरगुन पुरुष तहां ठहराया ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर थाके । सुर नर मुनि तहां कोइ न राखे ॥ सब बातनते रहे निनारा । निहअच्छर पुरुष जान अपारा ॥ हिंदू तुर्क दोऊ यक बानी । निहअच्छर पुरुष न कोऊ जानी ॥ निरगुन सोइ निअक्षर जोई । लखे न वाको चले सब कोई ॥ छर कहे माया अच्छर प्राना । निहअच्छर निरगुन निरवाना ॥ बस्ती उजार उजार बसावे । छर अच्छरकी खबर न पावे ॥

समै—छर अच्छर दोनों नहीं, निहअच्छर निज नाम ।
सुन्नके परे मुकाम है, सो जानो निज धाम ॥
सुन्न परे एक शिखर है, तापर है एक ठांव ।
तहांते हंसा आइके, जीव धरायो नाव ॥

शिखर परे निज धाम है, शब्द उठे गंभीर।
तहांते हंसा आइके, भये वीर कवीर॥
घरको छोड़ बाहर चले, निहअच्छर जहं नाम।
कहैं कवीर पुकारके, द्वादस गये निज धाम॥
निहअच्छर निजधाम है, जो सुन्न परे है नाहिं।
सुन्न परे निज सुन्नहै, निरगुन पुरुष वहां नाहिं॥

रमैनी २२५-षट दरशन मिल करें बिचारा। आपन आपन मत कीने न्यारा॥ औ पंथ अनेक हैं भाई। अपन अपन मत सबे बताई॥ अपनी अपनी कथा बतावें। करताका अस्थान न पावें॥ जोगी कहें जोग करो भाई। अलख पुरुष तब देइ दिखाई॥ जैन कहें करो पारस पूजा। पारसनाथ पर देव न दूजा॥ सन्यासी कहें तत्त्व जो जारी। सच्चिदानन्द मिले त्रपुरारी॥ जंगम कहें करो शंकर सेवा। संकरनाथ पर और न देवा॥ दरबेस कहें चार पर आवें। अल्लह तब लाहूत दिखावें॥ब्राह्मण कहें वेद जो जाने। वेदकी रीत ते ब्रह्म पहिचाने॥ यहि विधि कहें जहां लो, पंथा। निरगुन कथ गल डारें कंथा॥ नौधा भगतिका भेव बतावें। चौका आरति और करावें॥ जमते तिनका बहुर तोड़ावें। शरीर अर्थ नारियर अरपावें॥ निहअक्षर निरगुन निरबाना। लैके जाय जबे निनाना॥ पान परवान सनंद जब पावे। अधर दीप तब जाय समावे॥ निरगुन निराकार निज

जोई । अलख निरंजन जाने सोई ॥ जो परवाना पावे भाई । अमरलोक सोइ जाय समाई ॥ सोरहें भान तेज सो होई । वाकी सुरत करे सब कोई ॥ ऐसे कह कह जग भरमाया । सबै जीव यहि भांति ठगाया ॥ वे ब्योहार सुने मन माना । यही कहें मोहिं वा घर जाना ॥ घर घर झालर झांझ बजावें । निहअक्षरकी लीला गावें ॥ वहांसे उतर यहां जिव आया । यहां वहां कछु भेद न पाया ॥ कहें मैं कहो सो न समझे कोई । शब्द हमार न चीन्हे लोई ॥ जो कोइ सुरतवंत होय सांचा । काल मिटावे मनसा बाचा ॥ सुवना सेम्हर बहुत दिढाया । ऐसे कह कह मान उतराया ॥ सुवना सेम्हर त्यागो भाई । यही छुगली पर बैठो आई ॥ सुगना सुरत कीन जिव सांचा । सेम्हर त्यागो मनसा बाचा ॥ उड़ सुगना छुगली पर आई । छुगली प्रीत कीन्ह चितलाई ॥ वही सेय पाई तहँ हरुना । जबहिं निरासा उड़ सुवना ॥ ऐसे जीव भूल भट काया । आरति चौका बहुत कराया ॥ देहे त्याग जेहे यहि लोका । सत्तनाम सुमिरो नहिं सोका ॥ बारह बाट कीन जिव भाई । समता नाहीं लोग लुगाई ॥ झूठी बनिज करो मत कोई । सांचा शब्द परखो निज सोई ॥ जीवन भई भर्मकी फांसी । मुये मुकति कौन उदासी ॥ अच्छर अम्रर वो छर है माया । यहीते सब जगत डराया ॥ ज्यों का त्यों छर अक्षर भाई । बिना बूझ सब जगत डराई ॥ येतो सबे चढे ब्रह्मण्डा । भये झूठ सबही पाखण्डा ॥

समै–साहेब अंते है नहीं, जेहि सेवे संसार।
तुझही ते साहेब तुझहीते बंदा, कहें कबीर पुकार॥
ऊपरकी दोऊ गई, हृदयकी गई हेराय।
जाके चारो लोचन गये, तासो कहा बसाय॥
सेम्हर केरे सुगना, छुगले बैठा जाय।
सीस पटके सिर धुने, ये उसहीका भाय॥

रमैनी २२६–अगम अगोचर कहें सब ज्ञानी। विरला बूझे हमरी बानी॥ कबीर कबीर कहें सब कोई। जहँ लग सृष्टि कबीरा सोई॥ तामें अनेक विवेक समाना। सो कबीर जिन रामहिं जाना॥ अल्लह राम न दो हैं भाई। अल्लह रामने सृष्टि उपाई॥ एक कबीर समुद्रके तीरा। जलहल बूडा एक कबीरा॥ दोनों एक कबीर कहाया। वैष्नव एक कबीग गाया॥ एक कबीर कासीमें रहिया। अनंत कबीरको तेरा सहिया॥ अनंत बीज करता कहवावे। देश देश अपनी मत गावे॥

समै–तुर्की अरबी फारसी, संसकृत उनमान।
अपनी अपनी भाषा, सब कोई करे बखान॥

रमैनी २२७–तीन काल बिच खेलो भाई। इक्कीस छै सोलह ठहराई॥ ताते अठोत्र जाप कहाया। नारी पुरुष यहि देख भुलाया॥ छैसौ छत्र जाप जो होई। एक एक ते अंस मिले सोई॥ यह अजपाका जाप बिचारा। एक

पाये। मिटी काग गत हंस कहाये॥ चौबिस पारस सात सिकारी। भिन्न भिन्न तिनकी गत न्यारी॥ बिन बूझे हुलसे सब कोई। हुलस हुलस जिय डारा खोई॥

समै—जड काटो ता वृच्छकी, जहँ हंसाको बास।
कहें कवीर हंस सब जरगये, करके सुखकी आस॥
हंसा तुम जिन जावो, अधर दीप निज धाम।
कहें कवीर उजाड पडा बूझो आतमराम॥

रमैनी २३०—तन चौका सतसुकरित वीरा। अधर जोत जहँ जरे कवीरा॥ नारियर मोरा रेखा साता। तेहि नारियर कीन्ह जम घाता॥ पांचो सीखी जर गये भाई। जरामरण कैसे अंक मिटाई॥ पानमें अंक लिखे कडिहारा। तेहिकी आस उतरे संसारा॥ धर्मदाससो सुनो हमारी। हमरी गत मत सबते न्यारी॥ चार धाम जहं पुरुष अपारा। खोजे हंसा करें दीदारा॥ यहि बिध भूले सब कडिहारा। काया छोड मरा संसारा॥ गुण औ तत्त्व न तनमन भाई। सुछम रूप सो पुरुष सवाई॥

समै—सुछम २ जनि कहो, सुछम जीका काल।
कहें कवीर करता लखो, सुछम है जंजाल॥
कहा दीप कहा नाम है, कहा पुरुषका गांव।
कहें कवीर जनि भरमो, वहां जीव न ठांव॥

रमैनी २३१—ठांव ठांव सबही मिल करिया। ठांव न चीन्हा भरमि भरमि परिया॥ जैसे कन्या गुडिया बनाई।

तेहि संग बहुबिध केल कराई ॥ विरहिन सुता पियाका नाऊं । ढूंढत फिरी सब ठावन ठाऊं ॥ प्रेम भगति ते पिया बोलावे । पिया बोलावे पीव न आवे ॥ पिय पिय करत अपन जिव दीन्हा । पियाका दरसन कबहुं न कीन्हा ॥ आरत मंगल पिया लडावे । ब्राह्मण सो जो दास कहावे ॥ कोटिन ब्राह्मण बहे अपारा । कोटिन दास भये संसारा ॥ गत मत पुरुषको नाहीं पाई । भगति विरहिनी प्रेम लगाई ॥

समै–विरहिन साजे आरती, कंथ पियारे आव ।
　चाहत पिया जो ना मिले, कहो ब्राह्मणको भाव ॥
　बिरहिन हती तो क्यों ना गई, पिय अपनेके साथ ।
　झूठे नेह सनेहरा, मरे मरोरे हाथ ॥
　आसा ऐसी जगतकी, ज्यों बिरहिन पिय आस ।
　सेवा करे सबनकी, सोये पियाके साथ ॥

रमैनी २३२–चंदा झलके जलके माहीं । जलमें झलके दूसर झांई ॥ दोनों झूठे साँचा चंदा । सुख तत्त्व तब होय अनंदा ॥ सुख तत्त्व रहे नहिं भाई । कीहै चंदा जो जाय समाई ॥ दुतिया भया वहै दुखदाई । सोइ वहे जो देत मिटाई ॥ जबलग चार ठौरमें खेले । तब लग भरमत फिरे अकेले ॥ तत्त्व नास जनि करो रे भाई । तत राखे बिन जमले जाई ॥ तत्त्व बित्तका एके

भावा । परब्रह्म सो ब्रह्म कहावा ॥ तत्त्व बित्त ते जो है न्यारा । सो नाहीं तुम्हारो करतारा ॥

समै—आसा झूठी मुक्तिकी, झूठा पुरुष दरबार ।
कहैं कबीर खोजो तुम करता, जिन ढूंढो दीदार ॥

रमैनी २३३—दीदार दीदार कहे सब कोई । दीदार कहे दीदार न होई ॥ को तुझसे दूजा है भाई । जेहि दीदार प्रेम चितलाई ॥ अलम जाहद आरफ जोई । आशक माशूक दीदारको होई ॥ आशिक इश्क समाना भाई । प्रेम समाना प्रेम समाई ॥ दूजे प्रकृति कहो जो कोई । करता माया एके होई ॥ बिन माया करता नहिं भाई । बिन करता नहिं माया आई ॥ जो ब्रह्मा पारब्रह्म सोई । ब्रह्माते न्यारा पुरुष न जोई ॥ सब गुन भरा यह करता तेरा । कहा मान तैं चेत सबेरा ॥ तेरी सुरत जो सुरत समाई । जरा मरन कहो को फिर आई ॥ जेहि कारन यह सब जग नाचा । ना वह मिला न वहिते बांचा ॥

समै—जो न्यारा सो बैरी तेरा, माया ब्रह्म करतार ।
कहैं कबीर समझो तुम ज्ञानी, मानो कहा हमार ॥
तीन मारे तीन राखे, आठ मारे काठ ।
लौट हंसा नीर पीवे, सुखमनाके घाट ॥

रमैनी २३४—रहे समाय जो सुरता कोई । आवा गवन न ताकर होई ॥ बाहर मरे न सुरत समावे । ताते फिर फिर आवे जावे ॥ अष्टधात ले रहे समाई । जुग

जुग सो सुखराज कराई ॥ तत्त्व मध्य त्रिभुवन समाना । तत्त्व मध्य है पवन औ प्राना ॥ बिहार पवन कहां ते भाई । जहांते पवन जीव ले आई ॥ बाहर भीतर सोई पवना । समझ न परे कहे आवागौना ॥ एक पवन ते अनेक बिचारा । तत्त्व पांचका है टकसारा ॥ छत्तिस नारि पचासी पवना । अपन आपन गुन लावे तौना ॥ पंचते ढूंढ कर एक निकारी । मूल तीन ऐसा टकसारी ॥
समै-समुद्र समाना बुंदमें, बूंद मध्य बिस्तार ।
कहें कबीर भेद करताका, बूझो यह टकसार ॥

रमैनी २३५-तत्त्व बित्त हमरी टकसारा । तेहिका सब जग करो बिचारा ॥ तत्त्व बित्त ते न्यारा जोई । जानो काल तुम्हारा सोई ॥ राखे तत्त्व तो तत्त्व समाई । तत्त्व बिना जीव मरजाई ॥ देखो तत्त्वमें बित्त समाना । तत्त्व बित्त काहू नहिं जाना ॥ तत्त्व बित्त्व आगम टकसारा । तत्त्व बिना नहिं करता न्यारा ॥ तत्त्व बित्तका जाने भेवा । आपहिं करता आपहिं देवा ॥
समै-तत्त्व बित्त निज सार है, झूठा अपरंपार ।
पार उतर कोइ ना गया, परख देख टकसार ॥
खंड अखंडित खंड है, खंडित दूजा खंड ।
कहें कबीर घरमें रहो, खाली है ब्रह्मंड ॥

रमैनी २३६-अच्छर पांच ब्रह्मंड अपारा । तिनही बीच कबीर बिचारा ॥ तेहिमें अच्छर एक जो मुकता ।

तेहिका जाने कोई जुगता ॥ मा-के ऊपर क-के नीचे । परखो ज्ञानी तत्त्वके बीचे ॥ दूसरे ठौर न वहँ पर कोई । यह बिध जाने मुक्ता सोई ॥ ना जाने यह कोई भेदा । सब जग गावे चारों वेदा ॥ बीहिजमें अंकूर समाया । सो अंकूर बीज छे धाया ॥ करता माया बीज अंकूरा । बूझो ज्ञानी यह मत पूरा ॥ बीज ते रहा अंकूर निनारा । ऐसा देखो राम बिचारा ॥ है सबमें और सबते न्यारा । अगम अगोचर कथा हमारा ॥

समै-सरवज्ञ ज्ञान प्रज्ञान नहीं, देखो तत्त्व बिचार ।
पछा पछीमें जन परो, मानो कहा हमार ॥
आदि अंत दो मत हैं, तिनमें मता अनंत ।
कहें कवीर दोनोंके मध्यमें, देखो हमारा तंत ॥

रमैनी २३७-तत्त्व बित्त जो हमरा पावे । चौरासीका अंक मिटावे ॥ द्वादस सोडस अष्टादस सोई । सहस्र दो दल औ चतुर बिगोई ॥ यही नहीं और जो न्यारा । तेहि गुरुवाका झूठ बिचारा ॥ झूठे झूठ मिला सब कोई । झूठी बात बहुत सुख होई ॥ सांच कहो तो कहा न माने । बूझ न परे तब झगरा ठाने ॥ झगड झगड सब मरगये भाई । झगड झगड सब वहीं समाई ॥

समै-मता अनंत पाखंड छियानबे, देखो अपने नैन ।
कहें कवीर दरशे बिना, जनि पतियाओ बैन ॥

जब आपन करता लखो, सरवज्ञ होय तब ज्ञान ।
कहैं कबीर करता भया, मेटा सरब ब्याखान ॥

रमैनी २३८-देह धरे बिदेह कहावे । करम करे करता न कहावे ॥ जगमें रहे औ रहे निनारा । ब्रह्मांड मध्य है नाहिं बिचारा ॥ ज्ञान ध्यानमें नाहीं आवे । इच्छा करे न इच्छा पावे ॥ सब कछु करे वो नाहीं करता । ना कछु धरे वो नाहीं धरता ॥ माता पिता न बंधू भाई । सुख संपतमें रहा समाई ॥ है संयोगी फिरे बियोगी । सदा अनंद फिरे कह रोगी ॥

समै-देखो तत्त्व बिचारके, केहि घरमा है करतार ।
कहैं कबीर सदा तुझहीमें; कैसे भया निनार ॥

रमैनी २३९-निनार निनार कहैं सब कोई । कोइ ना देखे वह कैसे होई ॥ अविगत पुरुष जो अगम अपारा । परले उतपत नाहिं दिदारा ॥ अष्ट लोक सब जगत बतावे । पांच देवका भाव ले आवे ॥ करनी सर ठहरावे भाई । जो नाहीं तासों लव लाई ॥ दोमें अटका सब संसारा । लोकालोक जहां बिस्तारा ॥ लोका लोककी गत है न्यारी । पारस पिया निरंजन धारी ॥ दिरग औ बैराग अपारा । स्थूललिंग औ जोत बिचारा ॥ सुच्छम औ दस अंगुल कहाया । चतुरभुजी अंगुष्ठ पर लाया ॥ सहस्रा रिषि औ अवगत देवा । ताते भया सकल यह भेवा ॥ नेत नेत करके ठहराया । निराकार आकार बताया ॥

समै—कर बियोग वहि पुरुषको, छांडो यह संसार ।
कहें कबीर न हाका गया, आपन क्यों न बिचार ॥

रमैनी २४०—महम्मद काहे यह फरमाना । एक दिन क्यामत होय निदाना ॥ करनायत निकसे अवाज अपारा । रुईसे उडई वृच्छ पहारा ॥ हफत जमींन हफत असमाना । धूमसे उडे यही फरमाना ॥ कापर तख्त रहे ठहराई । कहां उम्मत जो रसूल छोडाई ॥

समै—ले फरमान महम्मद आये, उम्मत किया कबूल ।
कहो अल्लह क्योंकर रहे, बिना साख बिन मूल ॥
आग दोनों घर लागी, कैसेहु नाहिं बुझाई ।
कह कबीर ये दोनों अगुवा, दीन्हा जग भर्माई ॥
बैकुंठ धाम ब्रह्मा रचा, भिस्त महम्मद कीन्ह ।
ब्रह्मा दीये ब्राह्मनन, महम्मद तुर्कन दीन्ह ॥

रमैनी २४१—दीनके काजे अल्लह पठाया । ले फरमान महम्मद आया ॥ तिन फिर दुसरी राह चलाई । रोजा नमाज़ बांग ठहराई ॥ कलमा कुल मंत्र ठहराया । देहरा फोर मसजिद उठवाया ॥ तिन फिर कीन्हा मक्का मदीना । किबला कावा कुरान सफीना ॥ तिन फिर कीन्हे चार जो यारी । हराम हलाल औ पाये चारी ॥ मुरगी बकरी घोडा गाई । इनके तिन तकबीर बताई ॥ तिन फिर फिर हिंदू तुर्क बताया । हिंदू पर जजिया फरमाया ॥ तिन तन छूटे गोर गड़ाया । पीर औलिया

अंबिया ठहराया ॥ तिन बेचून अल्लहको कीन्हा । आप चून हुकुम यह दीन्हा ॥

समै-अल्लहके दोस्त महम्मद, ते लाये फरमान ।
मुसलमान होवो सब कोई, पेट ते हो मुसलमान ॥
अल्लहका नूर पैगम्बर, नबीका नूर जहान ।
मुसलमान भिस्त जांयगे, दोजख परे हिंदुवान ॥
खुदा महम्मद एक है, सबही कहो बिचार ।
सबे परे भर्म जालमें, कहें कवीर पुकार ॥

रमैनी २४२-अल्लह एक महम्मद जाना । अल्लह ते दूर रहा हिंदुवाना ॥ ब्राह्मन ब्रह्मे मिले सब जाई । तीन बरन अधविच रह भाई ॥ अल्लह मुकाम पश्चिमें कीन्हा । राम मुकाम पूरबमें लीन्हा ॥ दिवाले बसे चल सालिग्राम । मसजिद अल्लह किया मुकाम ॥ पूरब राम पश्चिम रहिमाना । और मुलक किसका अस्थाना ॥ पूजा रचा बहुत चितलाई । राम न कबहूं दृष्टि दिखाई ॥ रोजा निमाज मरा तुर्काना । कबहूं न मिला नवी रहमाना ॥

समै-धोखे धोखे सब जग बीता, दो अगुवाके साथ ।
कहें कवीर पडे जो बिगारी, अब काहे न आवे हाथ ॥

रमैनी २४३-बेदका भेद न काहू पाया । कहो पंडित जीव कहां ते आया ॥ करताका किस घर विसरामा । काया छूटे कहां मुकामा ॥ काजी मुलना पढे कुराना । ब्राह्मन भूले पढे पुराना ॥ अपने करताकी खबर न

पाई । माया भरम रहा लौ लाई ॥ कर्मके बंधन तजे न कोई । ताते बिनसे पुरुष औ जोई ॥

समै लिखा पढीमें सब परे, यह गुन तजे न कोय ।
सबे परे भरमजालमें, डारा यह जिव खोय ॥
कुसल बिनासी सब दुनिया, दुनिया कुसले लाग ।
कहें कवीर अब ना बूझे, घर घर लागी आग ॥

रमैनी २४४–सब तुर्कन मिल कीन्ह विचारा । लाख पैगम्बर भये असी हजारा ॥ तिन पर खतंम महम्मद पाई । किताब कुरान अल्लाह पठाई ॥ अमर नाहीं औ चार मुकामा । वस्ती छोड़ उजार विसरामा ॥ जबरील हुवा उनका दरमानी । यहां वहांकी कहे कहानी ॥ दो इमाम भमे चार यारा । लौलाकलमाका भया पसारा ॥ जग करता बेचून कहायो । बीच कुरानके यह लिख आयो ॥ यहांकी आस झूठी सब भाई । वहांकी आस लिया तिन खाई ॥

समै–सबके पीर महम्मद, मोमन तिनके मुरीद ।
दोस्त अल्लहके ये भये, और जहान नादीद ॥

रमैनी २४५–काजी एक रवायत लाया । अजरोस सो बुत त्रास कहाया ॥ तिसका बेटा हुवा खलीला । मुसलमान भया कहे दलीला ॥ यह देखो भूलनकी बाता । एक घरमें धरे दो जाता ॥ आगमें परा भया गुलजारा ।

गिरोह ले गया दरिया पारा ॥ हदेहद मरा सब भाई। अल्लहकी गत किनहुँ न पाई ॥

समै-कहते कहते वह गये, मिला न बहुरि संदेश ॥
वाही संधिमें सब परे, अगुवाके उपदेश ॥

रमैनी २४६-जब अल्लाह तूफान उठाया। तबहिं महम्मद किस्ती लाया ॥ बैठ किस्ती सब उतरे पारा। नूह भया सो खेवनहारा ॥ पुत्र भया उसका अन्याई। तूफान उठा तेहि दिया डुबाई ॥ कहर खुदाका जिस पर आवे। तिस बंदेको कौन बचावे ॥ यह आयेत कुरानमें आई। मुसलमान सब रहो लौलाई ॥

समै-इनही बातन सब जग भूला, करता परा न चीन्ह।
पढ पढ बहुत किताबें जोही, अपना जी पै दीन ॥
जिस वृच्छका बीजथा, लखा वृच्छ नहिं सोय।
अकरता करता सब मिले, डारा जियरा खोय ॥

रमैनी २४७-यह आयत कुरानमें आई। जहांते आया तहां समाई ॥ वह साहेब हम बंदा भाई। लाहूत ते सृष्टि किया पैदाई॥ लम यलद व लम युलद कहाया। वह बेचून न लखे लखाया॥ उसका नूर सकल पर छाया। वहांक, थाहिं न किनहूँ पाया ॥ बहुर वहाँकी हुकुम ते आया। कुन फैकुन कर पैद कराया ॥

समै-बाहर कोई ना हता, जो कछु लखे नमून।
कहैं कबीर वह भटकके, नाम धरा बेचून ॥

सब कहते बेचून है, नाहिं बसे वह सुन्न ।
कहें कबीर कहत न बने, यासे गुन गुन ॥

रमैनी २४८—ऐसी सुनी अकथ हम बानी । काजी मुलना कहें कहानी॥यह बेटा अल्लहको कहाया । कुमबइजनी कहि मुवा जिलाया ॥ सो वह गये चौथे असमाना । खात मुलना करें बखाना ॥ मूसाते नूर अल्लह छिपाया । लितरानीका नूर दिखलाया ॥ देख नूर भया बेहोसा । अकल फहम सब भूले मूसा ॥ जो अल्लहका बंदा कहाई । सो बंदा वहें भिस्तमें जाई ॥ यही बात तुरुक सब गावें । करताका कछु भेद न पावें ॥

समै—एकके ऊपर एक भया, अपनी चलावे चाल ।
कहें कबीर किनहू नहिं भेजा, यह है अद्भुत ख्याल ॥

रमैनी २४९—तालिब पूजे देव औ देवा । वह परतीत करें नित सेवा ॥ खतमुन्नबी भये तेहि ठाईं । सात तबककी छबीना भाई ॥ जाही खतना सब कछु जानी । दिलते बाहर कछु न आनी ॥ जब जबरईल अल्लहने पठाया । महम्मद सोई आयत ले आया ॥ और हुकुम अल्लाहने दीन्हा । खतामन्नबी बूझ तब लीन्हा ॥ अब प्रगट होय खेलो भाई । किताब कुरान मददको आई ॥ हिंदू मार करो तुरकाना । करामात सो तत्त्व ठहराना ॥ यह अल्लह फरमान पठाया । लायहला कलमा लिय आया ॥ एत काद सबे मिल कीन्हा । अकलका कलमा महम्मद दीन्हा ॥

समै-यह सब काम मूसाके जानो, बूझे बिरला कोय।
झूठी बात सबे पतियाना, जीव अमर कैसे होय॥
तौरीत अंजील मंसूखकरी, ठहरा एक कुरान।
ता घर अल्लहको ठहराया, जो है यही इमान॥
अल्लह पैदा करनेहारा, सो बेचून निदान।
कहैं कबीर अल्लह यह नाहीं, ठहरा मकां लामकान॥

रमैनी २५०-रोसन किताब किताब कुराना। सीसी पारेकी आना॥ अलाह संवासी तहां लिख आई। रोजा नमाज और कछु भाई॥ सरीयत मिल्लत नासूत तरीका। हकीकत मारफत लाहूत जबरूता॥ एक मकानके मकान बहुकीन्हे। नबी खुदाके पाट लिख दीन्हे॥ तिनमें अटका सब तुरकाना। मूसक भेद बिलार न जाना॥
समै-ठौर ठौर सब छोडके, गया जहां लाहूत।
कहैं कबीर दोनों पछ लूटे, अंसा अंतमें दूत॥

रमैनी २५१-यह देखो अजरज तुम भाई। किताब कुरान ले जगत बताई॥ बीज दरख्त का है लाहूता। साखा वृच्छ कहे जबरूता॥ मलकूत तिसका पल्लव लिख आया। फलवृच्छका नासूत कहाया॥ नासूत अल्लहकी कहे जबाना। सो नासूत अटका तुरकाना॥ ऐसी खबर जबरईल ले आया। पढ पढ मुलना सब भरमाया॥
समै-वृच्छ नाहीं डार फल लागे, चाखत सब संसार।
कहैं कबीर वृच्छ वह अबिगत, नाना फल अधिकार॥
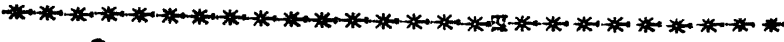
बीज वृच्छ दोनों नहिं, धरती नाहीं गाँव ।
तेहि वृच्छ ते वृच्छ उपजे, सो फैले सब ठांव ॥

रमैनी २५२–ले किताब काजी समझावे । रूह चार अल्लाहकी बतावें ॥ जमाती एक दूजे हैवानी । नबाती बहुर भये इनसानी ॥ अजब ख्याल अल्लह जब कीन्हा । जीव एक चार जिव दीन्हा ॥ पानी ते जीव रूह नावाती ॥ जीव पवनते रूह जमाती ॥ दौडत जीव रूह हैवानी ॥ लकम खुदाये रूह इंसानी ॥

समै–महम्मद बैठे मक्केपर, दिया यही उपदेश ।
सब जीवनमें खाकी प्यारा, दूर बंदगी भेस ॥

रमैनी २५३–नासूत मुकाम सरेका भाई । मलकूत तरीकत सब समझाई ॥ जबरूत हकीक भया संदेसा । लाहूत मारफत भया उपदेसा ॥ जिक्र तरीकत शुक्र शरीकत । फकर मारफत फिकर हकीकत ॥ प्रथम मुकाम सरेका भाई । दुसरी हकीकत लिया अर्थाई ॥ तिसरा मारफत कहे सब कोई । चौथा हकीकत दिया सोई ॥ इनकी बातनमें सब भूला । भया न लाभ गंवाया मूला ॥

समै–करता अपनेको नहिं चीन्हा, चला जहां नहिं कोय ।
बूझ समानी नाहिंमें, डारा यह जिव खोय ॥

रमैनी २५४–यय सब कोई कहें संदेसा । चार चार का दिया उपदेशा ॥ पहले तर्क नफसकी करे । तर्क

खलक दूजी दिल धरे ॥ तर्क दुनियाकी करे बिचारी। तर्क आखिर करे नर नारी ॥ दो वजूद आदमके गावे। बाज बिलवजूद मुमकीन बतलावे ॥ मुमकिन छोड वाजिबमें जाई। वाजिब जाके फेर न आई ॥

समै-बैठ मुकाम लाहूतके, बेचून दिया उपदेश।
करता परा न चीन्हके, झूठा दिया संदेस ॥
झूठे संदेस बहुत सुख उपजा, करके गरब गुमान।
कहैं कबीर गये सब धोखे, फिरी मुहम्मद आन ॥

रमैनी २५५-तिहेत्तर फिरके करे बिचारा। लामान लाहेको वारा ॥ आप आपमें झगरा ठाना। अल्लहका भेद काहु न जाना ॥ झगरा करत गये जुगचारी। किन हुन मानी बात हमारी ॥ रूह नफस निदी मारक आई। रूह इनसान खेतलाफ कहाई ॥ रूह नवाती लिया अरथाई। जमाती हिया बसाया गाई ॥ दिलमें बसे रूह हैवानी। ले किताब वह कहे कहानी ॥ लामातते आया जब रूत। जबरूत ते फिर आया मलकूत ॥ मलकूत ते लाहूत हिराना। लाहूत ते आया नासूत पयाना ॥ अर्जर भया फिर फकरमें आया। फकरे मुवा न करता पाया ॥

समै-पीर पैगम्बर सब चले, जहं लाहूत मुकाम।
कहैं कबीर उपदेश नबीके, जीव गये बेकाम ॥
रसूल गया लाहूतको, उमत्ता पाछे लाग।
जीव करताके सब मरे, बिरले बांचे भाग ॥

रमैनी २५६—आदम सबका पिता कहाया । तीन गेहूँ भिस्तमें खाया ॥ किया गुनाह जमीं पर डारा । आदम हौवा हुवा करतारा ॥ तिसके भये दो बेटे भाई । एक सुन्नी एक कुफर चलाई ॥ ऐहमकाथ जो किया अजावा । यही खबर दया कुरानकी तावा ॥ वही असमानते जबरील ले आया । तिनको नवीने जन्म कराया ॥ कुल आलमको दिया उपदेशा । दुनिया चली वाहिके भेषा ॥

समै—आदम अल्लह दो कहे, आव अनासर नाह ।
रूह फिरस्ते जनवो आदम, हुकम ते भये जग माह ॥
खबर नहीं अल्लाहकी, कौन रूप कौन भेष ।
कहें कबीर कहे ना नाहीं, झूठा यह उपदेश ॥

रमैनी २५७—वहांकी खबर न कोई लाया । बातन बातन जग भरमाया ॥ महम्मद कबहुं भेद न दीन्हा । मुसलमान कुल ना नहिं कीन्हा ॥ एक कोई भया पूछनवाला । कहो वचन तुमनकी रसूला ॥ कौन हता आदमके आगे । की यह सृष्टि रही बैरागे ॥ खबर दई आदम था भाई । आदम पर आदम गोहराई ॥

समै—मक्के अंदर मूसाथा, बिलारका भया दीवाना ।
मूसा सबको खात है, मूसा कोइ न जाना ॥

रमैनी २५८—खबर एक ऐसी हम पाई । सो वह लिखा कुरानमें आई ॥ दोनों हद आपन कर खेला । हरगिज एक न दुइ कर मेला ॥ तिसकी खबर महम्मद दीन्हा ।

अल्लह बेहोस वाहिको कीन्हा ॥ खबरदार होय दिया संदेसा । मुसलमान सब भयो उपदेसा ॥ इसकी खबर कहे नहिं कोई । जीका भरम न डारे खोई ॥

समै-करार न था अल्लाहको, लोट पोट कहे बात ।
कहें कबीर अल्लाहना तहां, जहां नहीं दिन रात ॥
अल्लह महम्मद दो कहे, कहे नबी अस बात ।
कायमको फानी कहें, येही भूलकी बात ॥

रमैनी २५९-एक समय कुरानको खोला । आदम खता नसियाँ कर बोला ॥ येही आदम खताकी खानी । खताते भया खता यह जानी ॥ नापाक आबते पाक यह होई । अल्लह पहचाने औलिया सोई ॥ मनकी चाल चले सब चाला । यह मन सबहीका घर घाला ॥ यहि मनको कोई नहिं पाया । करता लखा न जीव गँवाया ॥

समै-मन सेती जियरा मिला, मन उड़ चला अकास ।
मन मिलके धोखे गया, तजिके भोग बिलास ॥

रमैनी २६०-तुर्क कहें कलमा पढ भाई । कल्मा पढा पै खोट न जाई ॥ कलमा पर साबूत ले आया । कलमाका कछु भेद न पाया ॥ जो कलमा कलमा है सोई । कलमाको चीन्हा नहिं कोई ॥ कलमा कहे भिस्तकी तारी । भिस्तकी आस दिया जिव हारी ॥ कलमा राह भिस्त ठहराई । कहो कैसे अल्लाहको पाई ॥ कलमाते किताब सब भाई । कलमाकी प्रतीत जिव आई ॥

समै–कलमा तोड़े कुफर बोले, सो जावे वहि गांव।
अङ्ग बिहूना पुरुष वह, कहुं नाहीं वह खाँव॥
आलिम पढ पढ सब मरे, कलमाकी परतीत।
कायम कोई ना हुवा, वाव जगतकी रीत॥

रमैनी २६१–जो आया सो फेर न होई। एके दिवस पुरुष औ जोई॥ केते रूह भई हैं भाई। पैदा होत होत रह जाई॥ करके कौल अल्लाह पठावे। काज करे दो घरले जावे॥ ऐसी भांति अल्लाहकी भाई। महम्मद सब उम्मत बकसाई॥ एक बात अल्लहकी नाहीं। भरमकी बात जगत भरमाई॥

समै–जिस बिध पैदा सृष्टि भई, तिस बिध कहै न कोय।
जस करता तस ना कहे, यही भरम जिय होय॥
एक रीति करता करी, सकल करी सकलाय।
कहें कबीर बहु बिध भई, अब कछु नाहिं बसाय॥

रमैनी २६२–मुसलमान पै फरज यह आई। रोजा नमाज निकाह पढाई॥ ईद बकरीद जीव खंखारा। इन बरतन ना रीझे करतारा॥ दीन मजहब औ चारो यारा। ईमान भयको तुम निहारा॥ तकबीर करी फातिहा कराई। राजी भये आप लिया खाई॥

समै–मनकी लहर जैसी उठी, तैसी लागे करार।
करार पर जो कछु मिला, सो सब ले गये झार॥
जे समझे ते बच रहे, गये जहाँते अजान।
कहें कबीर चेतो किन अबहूं, छाडो मनका फरमान॥

रमैनी २६३-मक्का मदीना काबा ठहराया। रूह अपनी काबे पर लाया ॥ तहं अल्लहका भया निवासा । रोजा बांग भई मन आसा । मसजिद जाय बांग करे भाई। और ठौर अल्लह नहिं पाई॥ मोमिन कहें दोस्त खुदाया। जिन कारन यह दुनीं बनाया ॥ मक्के मदीना हज्ज कहवाई । वहां जो रहे सो कौन है भाई ॥ मोमिनका घर मक्का मदीना । दीन वो मजहब कुरान सफीना ॥ हिंदूका वहँ नाहीं कामा । यही नबीका हुवा कलामा ॥

समै-मक्के भीतर सब रहे, अल्लह ते भइ ना भेंट ।
किबला काबा कर मरे, मनकी परी झपेट ।

रमैनी २६४-कुल आलमीन भया खुदाई । खुल मुसलमीन लिखा न आई ॥ क्या बूझ हिंदूको मारो । नातो मुसलमान कर डारो ॥ इसका संदेसा देय न कोई । मार धार आल है निरगम होई ॥ नाहीं अदली जो अदल चलावे । धोखा मेटि करतहिं लखावे॥करता आपन चीन्हों भाई । झूंठी बात न जीव गंवाई ॥ रोजा नमाज औ चार मुकामा । मक्का मदीना भया विसरामा ॥ झूंठा ख्याल तजे जो कोई । आप बिचारो करता सोई ॥

समै-बोलत बालत झगडा पडा, झगड़ा बहुत बकान ।
कहें कबीर भरमत फिरा, ताते तत्त्व नसान ॥
वहे वेचुन बेनमून नहीं, कहे तजल्ला नूर ।
कहें कबीर नेरे बतलावे, बहुरि बतावें दूर ॥

यह अल्लह यही नूर है, यहि ते देख जमाल।
कहे कबीर बातें असमानकी, सो है ख्वावत ख्याल॥
रमैनी २६५—बहु भाषा जनि बोलो भाई। बोलत बोलत तत्त्व नसाई॥ हिंदू हद देहरा गाई। मुसलमान मक्का ठहराई॥ तीरथ बरत उनके मन माना। रोजा नमाज इनके ठहराना॥ बनके रसूल बखसावन हारा। इनके राम न ये करतारा॥ राम कीन्ह पूरब बिसरामा। अल्लह पश्चिम लिया मुकामा॥
समै—करता आप न चीन्हे, झूठे लागा नेह॥
पूरब पश्चिम कर मरे, देहते भया बिदेह॥
अल्लह राम दो करता, दोउका एक मुकाम।
कह कबीर जगत सब, तहां लिया विसराम॥
रमैनी २६६-क्योंकर भये ब्राह्मन! ब्रह्मानी। तुम दस कर्म वह एक न जानी॥ काजी लुनि सुन्नत करावें। घरकी नारी क्योंकर कहवावे॥ पुरान बेद औ शास्त्र वे देवा। जगत हीन करो फिर सेवा॥ तुर्क नमाज कुरान भुलाना। पढ पढ मुवा मरम नहिं जाना॥ वे कहें अल्लह वे कहें रामा। एकही घर दोऊ विसरामा॥
समै—जो जाके मन ऊपजे, सो वह चितमें देइ।
कहें कवीर यह बातें झूठी, समुझ हमारी लेइ॥
रमैनी २६७—कंठी माला इनके मन माना। उनके तसबीपर किया ठिकाना॥ इन देव पूजा तीरथ ठहरावा।

उन नमाजके दिल लावा ॥ इन बैकुंठ किया विसरामा। उन भिस्त चल लीन मुकामा ॥ इनके अगुवा ब्राह्मण भाई। उनके महम्मद रहे ठहराई ॥ इनके धोती चौका असनाना। उनके एकेकै सब माना ॥ इनके दस करम रहे विचारी। उनके खतना सुन्नत संभारी ॥
समै–दो मारग दो करता, कहो कौन केहि देस।
कहें कबीरा दोनों ते पूछत, उनका लावो संदेस ॥
रमैनी २६८–एक बीज दो वृच्छ कहाई। एक बीज दो क्योंकर भाई ॥ बेद न काहू पेट पढाया। सुन्नत कराये तुरक नहिं आया ॥ माला कंठी तिलक न संगा। तसबी वह लिया न अंगा ॥ हिंदू तुरक हो कोइ न आया। हिंदू तुरक बीच ठहराया ॥ तुरक पश्चिम दिशि चले बिचारी। हिंदू पूरब चले संभारी ॥ हिंदू तुरक कहा बिनाना। यहीं भया औ यहीं समाना ॥
समै–बीज वृच्छ नहिं चीन्हे, मरे दोय पद सब कोय।
कहें कबीर दोनों पच्छ छाडो, करता चीन्हो सोय ॥
रमैनी २६९–गगन गुफा तंह राम हमारा। साध प्रान चला संसारा ॥ हिंदू चले सुन्नको भाई। ला मकान तुर्क लौ लाई ॥ पीर मुरीद दोऊ एक संगा। धोखे गये भये तेहि भंगा ॥ षटदरशन छयानबे पाखंडा। सबे मुये चढे ब्रह्मण्डा ॥ सांचा भेद झूठकै माना। दोनों मिल झूंठे लपटाना ॥

समै—सहकामी सेवा नहीं, सेवा सो जो निहकाम ।
धोखा सेवत जनम गँवाया, खोया किया न काम ॥
जंह काहूकी गम नहीं, नहीं चंद्र नहिं सेस ।
तहां कबीरा घर किया, सद्गुरुके उपदेस ॥

रमैनी २७०—दुइ जगदीश जगतमें छाया । मैं नहिं जानो कहां ते आया ॥ हजार नाम अल्लाह कहाया । सहस्र नाम रामके गाया ॥ एक सुन्नी एक काफ़िर भाई । अपन अपन गुरु चीन्ह्यो धाई ॥ तीरथ मूरत राम निवासा । मक्का मदीना अल्लहको बासा ॥ आप आपको दोनों लागे । करता आप न लखे अभागे ॥

समै—गगन गुफा बैठे हते, तिरबेनीके तीर ।
कहैं कबीर सबही बैठे, सुन्न सिखर गंभीर ॥

रमैनी २७१—पंद्रह तिथि पंद्रह व्रत भाई । तुर्क मास रोजा ठहराई ॥ तीज दसहरा फाग दिवारी । दाहा सुबरात औ ईद बिचारी ॥ हिंदू खाया बकरा मारी । तुर्कन बकरी गाय पछारी ॥ हिंदूके घर बेद पुराना । तुरकनके ठहरा फरमाना ॥ हिंदूके निरगुन निरंकारा । तुरकनके बेचून बिचारा ॥ हिंदू नरक सरग ठहराया । तुर्कन भिस्त दोजख बतलाया ॥

समै—एक गांव दो बहिनी, दोनोंका एक नांव ।
दोनों पर एक बालक थे, बिन बूझे छूटे गांव ॥

रमैनी २७२—एकादसी व्रत रहा लौलाई । अन्न तजे

छीर गऊको खाई ॥ निराधार रहे आतम जारी । करता आप न लखे बिचारी ॥ रोगी रहे तदवीर कराई । पढे नमाज मासको खाई ॥ दो घडी रात रहे फिर जगहीं । सरगही खाय परे नर तबहीं ॥ जीव हने कहें खाया खुदाई । उनका उलस लिया हम खाई ॥ पीर पैगम्बर सबहीं खाया । जबह किया फातिया दिलाया ॥ साद भया तब ध्यान पर आया । सब देवनको अरप चढाया ॥ पहले भोग देवको दीन्हा । तब वह खाय आप फिर लीन्हा ॥ वैस्वदेव करे चितलाई । देव पित्त-रको दीन खवाई ॥

समै—यहि धंधा दोनों मरे, करता चीन्हे नाहिं ।
बिन समझे जाने सुमिरे, यही भूल जग माहिं ॥

रमैनी २७३—कहो महम्मद मोहि समुझाई । मामा हौवा कहांते आई ॥ आदम किसका पुत्र कहाया । उन कैसे विश्वरूप बनाया ॥ पंडित अपना खोल पुराना । विश्वरूपका करो व्याना ॥ ब्राह्मण ब्रह्मा कहांते आय । कैसेके यह सृष्टि उपाय ॥ लौट उमील करे बयाना । ओंकारको दीन प्रवाना ॥ कौन रूप कौनसा गाऊं । कौन देश निरगुनका नाऊं ॥

समै—पुरुष नार एक संग हैं, साथ बीज अंकूर ।
देश बिलायत सुन्न पर, परिपूरण सदा हजूर ॥

रमैनी २७४—दोई दीन कहांते आये । कहो कैसे

दो दीन चलाये ॥ वेद न काहू पेट पढाया । सुन्नत कराय तुरुक नहिं आया ॥ देव न देहरा रामउ खाये । पीर मसीत न अल्लह बनाये ॥ बेद पुरान न राम बखाना । अल्लह न पढा किताब कुराना ॥ रोजा नमाज न अल्लह पढाया । पूजा अरचा न राम बताया ॥ पूरब राम न कहा संदेसा । पश्चिम अल्लह न कहा उपदेसा ॥
समै–बहे लोग सब जात हैं, दो अगुवाके साथ ।
कहँ कबीर ऐसा कोइ नाहीं, जो गहि राखे हाथ ॥

रमैनी २७५–चार यार मिल किनहु न जानी । बीबी फातमा जो पहचानी ॥ दसतार महम्मदी धरा उठाई । नूर महम्मदी दीन दिखाई ॥ सकल सृष्टि जो देख न पाया । कुंती जसोदा सोइ दिखाया ॥ कृष्नमई देखा संसारा । जिसके बखनका वार न पारा ॥ तेहि कारण हिंदू तप साधी । तेहि कारण उन कीन्ह उपाधी ॥
समै–मायाके यह सरब गुन, चंचल चपल ब्योहार ।
छल छिद्र उनही बन आवे, करता इनते निनार ॥
नाटक चेटक अड़त अगम, रहा चहुंदिशि पूर ।
कहें कबीर यह भिस्त नहीं है, रहा सो खालिक दूर ।

रमैनी २७६–एक महम्मद एक खुदाई । एक निरगुन एक सरगुन भाई ॥ निरवृत साधे लोग व्योहारा । रोजा नमाज दुनी ते न्यारा ॥ चहिये भिस्त चहिये दीदारा । राम चहिये औ सरग द्वारा ॥ पीर पैगम्बर औ चार यारी ।

बीबी फातमा बकसावन हारी ॥ देवी देवा आदि भवानी। एक दो नाहीं बहुत जिन जानी ॥

समै-एक साधे सब सधे, सब साधे सब जाय।
कहैं कबीर चेतो दोउ भाई, हम दीन्हो समझाय ॥

रमैनी २७७-लूटे ब्रह्मा हरि तिरपुरारी। लूटे गौतम सुखदेव ब्रह्मचारी ॥ लूटे सनक सनंदन दोऊ। लूटे अगस्त विश्वामित्र ओऊ ॥ लूटे वशिष्ट अत्री दुरवासा। सृंगीरिषि लूटे वन वासा॥ पारासर लूटे माझ मंझारा। लूटे जमदग्नि औ सनतकुंमारा ॥ लूटे गौस कुतुब बाबानी। लूटे औलिया अंबिया पीरानी ॥ महम्मद लूटे राह चलाई। लूटे चार यार जिनकी थी दुहाई ॥ लूटे ईसा मूसा मनसूरा। लूटे अरबहिं मदीन के सूरा ॥ लूटे गोरख औ जैपाला। लूटे गोपी लूटे ग्वाला ॥ माधवाचारज लूटे जनकादे। रामानिज लूटे धर्मादे ॥ लूटे हनुवात नारद सपता। लूटे पांडव औ बलदाता ॥ लूटे नाथ मच्छंदर जोगी। लूटे युधिष्ठिर षट रस भोगी ॥ सुर नर मुनि सब लूटे झारी। सब मिल मानो बात हमारी ॥ अष्टभुजी माया आदि भवानी। तिन लूटे ज्ञानी विज्ञानी ॥

समै-माया सब जग लूटिया, भरम जालमें डार।
कहैं कबीर क्या कीजिये, ना समझे संसार ॥
ऐंचातानी सब करें, कटे न भरमक डार।
चारों जुग सबको समझाया, कहा न मान हमार ॥

रमैनी २७८—एक शब्दका सकल पसारा । एक शब्द सबहीं ते न्यारा ॥ एक शब्द सब जीते हारे । एक शब्द सब एक बिचारे ॥ एक शब्द नित मरे औ जीवे । एक शब्द खावे औ पीवे ॥ एक शब्द सब करे करावे । एक शब्द कहुं जाय न आवे ॥ एक शब्द नित बोले चाले । एक शब्द त्रिभुवनको पाले ॥ एक शब्दके बाप न माई । एक शब्द निज रहा छिपाई ॥ एक शब्द है सरव सनेही ॥ एक शब्दके प्रान न देही ॥ शब्द शब्द जो कहे बिचारी ॥ तो यह आतम मरे न मारी ॥

समै—कह पंडित अस बोल तुम, क्यों भटकावो लोग ।
कहँ कबीर शब्द एक है, वहि क्यों करो वियोग ॥
अपनेको अपना मिला, दोदो नैना जोय ।
सरबंगी सबसो मिला, दिलकी दुबधा खोय ॥
तिल समान यह जगत है, काहू परा न चीन्ह ।
कह कबीर सद्गुरु मिले, ज्ञानदीप जिन दीन्ह ॥
भली भयी नैनो लखा, मिटी दूरकी आस ।
जो कोई समझे भले, सोई है धर्मदास ॥

इति ज्ञानदीपककी रमैनी संपूर्ण ।

## परिशिष्ट ।

ज्ञानदीपककी रमैनी जो पृष्ठ ६७२ से आरम्भ होता है, उसीका यह परिशिष्ट भाग है, जिसकी सूचना उसी पृष्ठकी टिप्पणीमें दिया है, । सडे हुए पन्नासे जहां तक पढेजासके हैं यहाँ दिया जाता है–

( पहली रमैनीका पन्ना एक दम नष्ट हो गया )

दूसरी रमैनीकी अन्तिम साखी ।

हद हता तब आप था, सकल हता ता मांहि ।
ज्यों तरवरके बीजमें, डार पात फल छांहि ॥

रमैनी तीसरी ३.

सब गुन पूरन माया रानी । उन फिर ... ...
उन फिर रचा वृच्छ औ ... ... ... ...

और सब नष्ट हो गया इसकी अंतिम कडी
और समै बचे हैं सो यह है–

तीन पुत्र तिर विधि गुनकारी । हरि ब्रह्मा तिनके त्रिपुरारी ।
समै–हम संजोग गुन तीनभै, उन्हूं पुनि कीन्ह पसार ।
हमें छोड गुन तीनते, उन कीन्हा बेभिचार ॥

चाथी रमैनीका केवल इतनी अन्तिम कडी शेष है ।

ब्रह्मा भूला देख लोभाना । माताते पुत्रन छल माना ॥
सुतते पुरुष मातु ते नारी । पुत्रते पिता मात ते बारी ॥
समै–माताते मेहरी भयी, भया पूत ते बाप ।
कहैं कबीर बडा अचंभा, ... ... ... ...

पांचवी रमैनीमें इतना शेष है ।

मैं कहत हौं पंडित अगम विचारा । ... ... ...

पुत्र सीख देइ महतारी। ... ... ... ... ...
पिता तुम्हारा रहे निरंकारा। ... ... ... ...
कहे ब्रह्मा ते रूप न रेखा। ... ... ... ...
अरध न उरध पुरुष ना नारी। ... ... ... ...
इतना सुनके बचन भुलाना। ... ... ... ...
मातुकी बात ब्रह्मा नहिं बूझे। ताते पैंडा नहिं कछु सूझे ॥
समै–सुत नहिं माने बात, सेवे पुरुष विदेह।
कहँ कबीर अबहूँ नाचेतो, छाडो झूठ सनेह ॥

छठी रमैनीमें इतना बचा–

... ... महा बलिया। एक बार छलके फिर छलिया
... ... ... । अष्ट भुजी माया आदि भवानी ॥
... ... ... । सावित्री सती लच्छ कुमारी ॥
... ... ... । तीनहु मिल संजोग कराई।
.... .... .... । सो पुत्रन ते भयी बेभिचारी।
.... .... .... । फिर महेशते छल बल कीन्हा।
..............................................................
असँख जुगलो कहि कहि हारा। सेवें सबै सून्य निरंकारा ॥
समै–त्रिगुन हेत हती महमाया, हता न वह बिस्तार।
कहँ कबीर भरमु त्रिदेवा, कीन्ह न आप बिस्तार।

सातवीं रमैनीका बचा हुवा।

सुनु ब्रह्माते आदि कहानी । ... ... ... ...
हमहे वहि देसकी नारी । ... ... ... ...
कर हम मींजे परे त्रय छाला । ... ... ... ...
हमरे पुत्र होय तिर देव । ... ... ... ...

समै–ब्रह्मा जननीसे पूछे, ... ... ... ... ...
कौन बरन वहि पुरुष है, ... ... ... ...
रूप नहीं रेखा नहीं, ... ... ... ... ...
गगन मंडलके बाहिरे, ... ... ... ... ...
ध्यान जु धरो गगनका, मूँदिन बज्रकिवार।
देख परतिमा आपनी, तीनों भये निहाल॥
त्रिदेवाके सुमरते, सबका भया अकाज।
ब्रह्माका आसन डिगा, सुनत आपनी गाज॥

आठवीं रमैनीका शेष।

माया महा आदि भवानी। वेद पाठ शास्त्र जो बखानी॥
... ... ... ... । छनिवंती देवी जयवंती॥
... ... ... ... । नैनबान गहि सबहिं पछारी॥
... ... ... ... । सुरनर मुनि सबके घर खाया॥
समै–केदली खंभ दोउ जंघा, छबि दोउ कुचन अनार।
... ... आदर्श अति, झलकत चंद लिलार॥
... ... सो छल किया, तीनों लीनसि खाय।
... ... तीनोंके पीछे, जगको छलसि बनाय॥

नौमी रमैनीका बचा भाग।

छलबल बहुत कीन वर नारी। दो संजोग भयी संसारी॥
दो संजोग त्रिभुवनपर छावे। दोउ पर कीन नाहिं लखावे॥
एक प्रान देखे दो देही। पुरुष न रहे एक सनेही॥
बीज वृच्छ है एके संगा। वृच्छ बीजका एके रंगा॥
माया ते मन उपजा भाई। करता जिय ... ... ...

इच्छा विपरीत भई इक संगति । ... ... ... ...
बीज मंत्र सब सृष्टि करतामें । ... ... ... ...
करता फिर सबनते पुकारी । माने सो ... ... ...
समै—अष्ट धातका पूतला, ... ... ... ... ...
कह कबीर सुमरो जन क ... ... ... ...

दशवीं रमैनीका शेष ।

सुक पंडित तैं बात हमारी । ... ... ... ... ...
मन उपजा इच्छा भइ भारी । भौ संजोग पुरुष औ नारी ॥
ताते भये तीन यह बारा । बिन संजोग नहीं संसारा ॥
अन्तर प्रापति नहिं पावा । धोखा सेवा मूल गंवाया ॥
जाके प्रान नहीं है देही । रूप न रेखा प्रान विदेही ॥
.... के पै कोइ न लखावे । पुरुष विदेही सबै बतावे ।
.... .... कहत पुकारा । जीमें कोई न करे बिचारा ॥
... ... ... ... छीजे । माने नाता सो का कीजे ॥
समै—......करपूतला, करता ताहि सनेह ।
समरो जिन कबहूँ, जो है पुरुष विदेह ॥

ग्यारहवीं रमैनीका शेष ।

... बात हमारी आगम पंथा । स्रीके गोद खेलैं कंथा ॥
वहिन ते पुत्री पुत्री भइ नारी । नारी ते फिर भई महतारी ॥
कंथ खेलावे पुत्रके जाने । नारी पुत्र कंथके माने ॥
पुत्र ते होय संजोगिन माता । पिताते पुत्र पुत्र ते ताता ॥
यहअचरजकहुकासोकहिये।कहियेतोफिरकहुकहँरहिये॥
पंडित पढ पढ बेद सुनावे । नाद बिंदकी खबर न पावे ॥
जोगी जती रंक औ राया । किनहुं नहिं यह भेद बताया ॥

पिता छोडिके निरगुन सेवा । ... ... ... ... ... भेवा ॥
समै-माता ते मेहरी भई, मेहरी ते भइ माय ।
जो नहिं सो सबका करता, अचरज कहा न जाय ॥

बारहवीं रमैनीका बचा खुचा ॥

सुनु पंडितका वेद अरथावे । वेद पढे कछु भेद न पावे ॥
एकादसि बरतसो मन माना । पूजे देव औ पढे पुराना ॥
जिन जिन पिताको चीन्हा भाई । थिर भया ... ... ॥
भूलत फिरी सृष्टि सब धाई । पिता न लखा तजी न माई ॥
जेजे पुत्र पिताको पाये । आप आपमें सबहिं समावे ॥
आपा चीन्हे सो बड ज्ञानी । पिता पुत्र एके सहिदानी ॥
पिता पुत्रकी एके काया । मातु पिता निरगुन बतलाया ॥
जो जाने यह भेद अनूपा । दुबिधा तजे ते देख सरूपा ॥
समै-जहवाँ नहिं सृष्टिका करता, तहवाँ तकु सब कोय ।
कह कबीर मानो नहिं ताहि, जो जिय बैरी होय ॥
पूतहु ते प्रीतम भया, प्रीतम ते भौ पूत ।
...खेल तुम हमरी, चीन्हो आपन दूत ॥

इन बारह रमैनियोंके पन्ने सड गयेथे, इनके आगे १३ तेरहवीं रमैनी पृष्ठ ६७३ से आरम्भ होती है । बहुत स्थानोंमें ढूंढनेपर भी 'ज्ञानदीपक' की रमैनीकी प्रति किसीके पास नहीं मिली, इसलिये मजबूरन जो कुछ था उसेही छपवा देना पडा । क्योंकि, यह ग्रन्थभी जब सड गया है तब इसके नष्ट होते भी क्या देरी है । सज्जनोंको चाहिये कि, इस अमूल्य अपूर्व ग्रन्थकी प्रति जहांसे मिले उससे इसे शुद्ध करलें और कृपाकर मुझेभी सूचित करें तो फिरसे इस रमैनीको छपवानेमें सुभीता हो ॥ श्रीयुगलानन्द बिहारी.
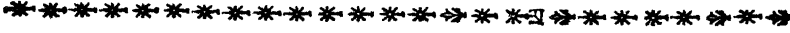
# तत्त्वदर्शन साखियाँ ।

### मङ्गलाचरण ।

जाकी कृपा कटाक्षते, मोक्ष मुक्ति फल होय ।
सत्य कबीर बन्दन करूँ; काया बच मन सोय ॥ १ ॥
बोधे सो गुरु देव है, सत गुरु सत्य कबीर ।
बोध लेइ सो शिष्य है, धर्मदास मति धीर ॥ २ ॥
साधन चार सम्पन्न जो, गुरु भक्ति उर जासु ।
तासु हेतु वर्णन करो, दर्शनतत्त्व विकासु ॥ ३ ॥

### शिष्य प्रश्न ।

साधन चार विचार जो, मोसे कहु गुरु देव ।
सुनत ज्ञान उरमें धसे, मनमें उपजे भेव ॥ ४ ॥

### गुरु उत्तर ।

साधन चारसु कहत हौ, प्रगट कहत वेदान्त ।
जाहि लहे जिव होत है, परम सुखी औ शांत ॥ ५ ॥
विवेक विचार प्रथम अहै, दूजे जानु विराग ।
षट सम्पति तीजे कही, चौथ मुमुक्षु बड भाग ॥ ६ ॥

### शिष्य प्रश्न चार साधन ।

का विवेक वैरागका, षट सम्पतिका गुरुदेव ।
मुमुक्षुता कासे कहो, सो समुझावहु भेव ॥ ७ ॥

### गुरु उत्तर-विवेकस्वरूप ।

नाश मान जग देखिके, मनमें उपजे चाव ।
सत्य वस्तु जानन चहै, कह विवेक सो भाव ॥ ८ ॥
पांच तत्त्व गुण तीन मिलि, अष्टंगी तेहि नाम ।
आठो आठो ते मिल्यो, भयो जगत परिणाम ॥ ९ ॥
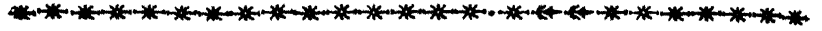
साधारण वैराग्यस्वरूप ।

नाश मान जग जानिके, मनुवा होय उदास ।
मुनिजन कहत विराग सो, नासत विषय विकास ॥१०॥

शुद्ध वैराग्य स्वरूप ।

राग गयो मनते जबै, द्वेष न आवै पास ।
शुद्ध विराग ताते कहो, मिटे सकल सतभास ॥११॥

शमस्वरूप ।

भयो विराग जु मन विषै, मिटी बासना जाहि ।
मन रुक्यो विषयानते, शम कहियत है ताहि ॥१२॥

दमस्वरूप ।

मन रुक्यो विषयानते, इन्द्रिन धार्यो धीर ।
दम ताहीको कहत हैं, सत मत गहिर गँभीर ॥ १३॥

उपरति स्वरूप ।

मन इन्द्रिनके रुकतही, छूट्यो विषय विकार ।
सुधर्म रत तब मन भयो, उपरम ताहि विचार ॥१४॥

तितिक्षा स्वरूप ।

शीत उष्ण क्षुधा तृषा, सुख दुख औरो आहि ।
इनको सहन सुभाव सो, कहत तितिक्षा ताहि ॥१५॥

श्रद्धा स्वरूप ।

सत खोजनकी चाह मन, गुरु शास्त्रन ढिग जाहि ।
दृढ विश्वास तिनके बचन, शरधा कहिये ताहि ॥ १६॥

समाधान स्वरूप ।

सद्गुण पा मन थिर भयो, थिरता बलकी खान ।
समाधान सोई कहो, छूटे मनको मान ॥ १७॥

मन इन्द्री तो वश भयो, उपरम तितिक्षा लार ।
शरधाते मन थिर भयो, समाधान कहि सार ॥१८॥

तीसरे साधनकी समझ ।

शम समाधान लो कहे, सम्पति षट है सोय ॥
तीसर साधन ज्ञानको, चौथ मुमुक्षुता होय ॥ १९ ॥

मुमुक्षुत्व स्वरूप ।

इहै लोक परलोकलो, बन्धन दीखे जाहि ।
मुक्त होनकी चाह जो, मुमुक्षुत्व कहि ताहि ॥ २० ॥
साधन चार विचारभो, हिये जासु परकाश ।
तत दर्शनके पावते, होय अविद्या नाश ॥ २१ ॥

गुरू भक्ति शिष्य प्रश्न ।

साधन चार जान्यो भले, सुगुरु कृपा निधान ।
गुरू भक्ति कासे कहो, ताका करूं बिधान ॥ २२ ॥

गुरु उत्तर-गुरु लक्षण ।

गू अँधियारे जानिये, रू कहिये परकास ।
मेटि अज्ञानहिं ज्ञानदे, गुरू नाम है तास ॥ २३ ॥
गुरू बहुत हैं जगतमें, परगट देखु विख्यात ।
सतगुरुके पाये विना, कबहुँ न भरम नसात ॥ २४ ॥
सत्य वस्तुको ज्ञानदे, भानै भरम संदेश ।
आतम तत्त्व लखावई, मेटि अविद्या लेश ॥ २५ ॥

गुरु भक्ति स्वरूप ।

ताहि गुरुकी शरणमें, हिये भक्ति निज धार ।
श्रद्धा युत अर्पण करे, असत सकल संसार ॥ २६ ॥

गुरू होय प्रसन्न जबे, लहे सु आतम ज्ञान ।
ताते सतगुरु भक्ति करी, लीजे पद निर्वान ॥ २७ ॥
गुरू महिमा अतिशय विमल, संतन कियो बखान ।
ताहि विचारे बहुत विधि, पावे पूर्ण विधान ॥ २८ ॥
अब आगे जो पूछहू, सुकृत शिष्य सुजान ।
सो सब मैं तोसों कहौं, रंच न संशय आन ॥ २९ ॥

शिष्य प्रश्न ।

गुरु भक्तिको भेद अब, जानि परो गुरु देव ।
जाकी कृपा कटाक्षते, मिटे सकल दुख लेव ॥ ३० ॥

तत्त्व स्वरूप ।

अब आगे मोते कहो, तत्त्व अतत्व विचार ।
जाके जाने जीव जग, लहै मुक्ति ततसार ॥ ३१ ॥
तत दर्शन काते कहो, सुनु गुरु दीन दयाल ।
बिलग बिलग मोसे कहो, मिटे अविद्या जाल ॥ ३२ ॥
जड चेतन दो वस्तु हैं, अति प्रसिद्ध जग माहिं ।
इनकी पारख प्राप्ति विन, बन्धन छूटत नाहिं ॥ ३३ ॥

[ सत्योपदेशमणिमाला ॥ ]

शिष्य प्रश्न ।

जड चैतन दोऊ कहो, विलग विलग गुरु राय ।
तुमरी कृपा कटाक्षते, भ्रम सकल नसि जाय ॥ ३४ ॥

---

१ कवीर धर्मदर्शन ग्रन्थ मालाके प्रथम भागको देखो । जिसमें गुरुमहिमा सत और सत्यसंग महिमा आदिका सुन्दर विवरण हैं—लिखो—स्वामी युगला-नन्द बिहारी—कवीर आश्रम—पो० खरसिया जि० विलासपुर सी० पी० ।

गुरु उत्तर ।

जड तम पुंज प्रसुप्त सम, अप्रबोध दुख रूप ।
चैतन परमानन्द घन, ज्ञान स्वरूप अनूप ॥ ३५ ॥

[ सत्योपदेश मणिमाला । ]

शिष्य प्रश्न ।

अस तम पुंज सु को अहै. जड असत्य दुख रूप ।
पहिले ताहि बतावहू, गुरु ज्ञानिनको भूप ॥ ३६ ॥

गुरु उत्तर ।

पांच तत्त्व त्रिगुण सहित, अष्टंगी जेहि नाम ।
आद्या माया जानिये, दृश्य जगत परिणाम ॥ ३७ ॥

शिष्य प्रश्न ।

पांच तत्त्वका नाम अरु, गुन त्रयनको धाम ।
माया आदि अष्टंगि जो, दृश्य जगत परिणाम ॥३८॥
बार बार बन्दन करूँ, श्रीगुरु दीन दयाल ।
भिन्न भिन्न वर्णन करि, हरहु अज्ञान विशाल ॥३९॥

गुरु उत्तर ।

[ अष्टंगी ( माया ) का कर्म्म ]

अव्याकृत अव्यक्त जो, मूल प्रकृति प्रधान ।
अद्या ताको कहत हैं, सुनु शिष शील निधान ॥४०॥
पांच तत्त्व गुण तीन मिलि, अष्टंगी तेहि नाम ।
आठों आठो ते मिलो, भयो जगत परिणाम ॥४१॥

जगतका स्वरूप ।

चैतनके संयोगते, पाई शक्ति अपेल ।
तनु मात्रा परगट कियो, गुण तीनन जगमेल ॥४२॥
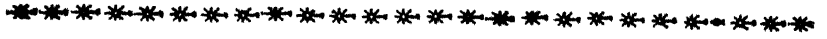
पांच तन्मात्रा।

शब्द स्पर्श अरु रूप है, रस अरु गन्ध अनूप।
तन मात्रा यही कहत हैं, जाने मुनिवर भूप ॥४३॥

पांच तत्त्व।

पृथ्वी अप अरु तेज है, वायू और अकाश।
पांचतत्त्व यह जानिये, कारण विश्व प्रकाश ॥४४॥

तीन गुण।

सत रज तम यह तीन जो, गुण कहियत है तात।
पांच संग यह तीन मिलि, जगत सबे दरशात ॥४५॥

जगत।

इनहीके संयोगते, भयो जगत सब आय।
देह अवस्था कोश पुनि, जीव ईशलो भाव ॥ ४६ ॥
व्यष्टि समष्टिके भेदते, भया जगत प्रकास।
जीव शीव सब परगटे, इनहीके दृढ भास ॥ ४७ ॥

जीव-शीव।

व्यष्टि अभिमानी जीवहै, समष्टि अभिमानी शीव।
ज्ञान दृष्टि करि देखहू, यही जगतके पीव ॥ ४८ ॥

शिष्य प्रश्न।

देह अरु अवस्था कही, हे गुरु मुनिवर भूप।
परगट आप बखानिये, दीजे ज्ञान अनूप ॥ ४९ ॥

गुरु उतर-छः प्रकारकी देह।

दृश्यमान जो जगत है, जानो देह सुजान।
तासु भेद अब कहत हौं, सुनो शिष्य दे कान ॥५०॥
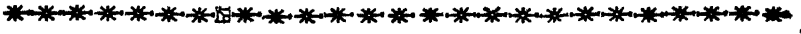
षट प्रकारकी देह है, जामें अरुझा जीव।
जीव शीवके भेद ते, भयो दास अरु पीव ॥ ५१ ॥
स्थूल सूक्ष्म कारण अरु, महकारण पुनि जोय।
कैवल पंचम जानिये, छठी हंस कहि सोय ॥ ५२ ॥

छःअवस्थाके नाम।

जागृत स्वप्न सुषप्ति है, तुरिया तुरिया तीत।
पूर्ण अवस्था बोध पुनि, छओं देहकी रीत ॥५३॥
निज निज कर्म प्रतापते, सुख दुख भोगन हेत।
स्थूल शरीर प्रगट है, पांच पचीस गहिलेत ॥५४॥

पंचीकृत।

तमगुणके प्रतापते, पांचों भेलम भेल।
पंचीकृत सोई अहै, स्थूल जगतको खेल ॥ ५५ ॥
एक एकते पांच भई, प्रकृति पच्चीस निदान।
ताही ते सब परगटे, पिण्ड ब्रह्माण्ड सुजान ॥५६॥

पच्चीस प्रकृति।

अस्थि मांस नाडी त्वचा, रोम पाँचवों होय।
पृथ्विते यह सब प्रगटे, प्रकृति कहावत सोय ॥५७॥
रक्त बीज अरु मूत्र जो, परसेवा युत लार।
जल प्रकृति यह पांच हैं, मनमें देखु विचार ॥५८॥
आलस कांति क्षुधा तृषा, निद्रा पंचम जान।
अगिन प्रकृति यह पाँच हैं, जाने संत सुजान ॥५९॥
कटि उदर हिरदय गला, पंचम शिर आकाश।
पांच जानु यह गगनकी, कीन प्रकृति प्रकाश ॥ ६० ॥
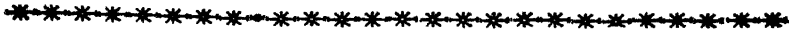
शरीरका वरण।

अंधा काना पाँगुला, बहिरा गुंग बखान।
लूला लंगडा कूबडा, स्थूल विशेषण जान ॥ ७० ॥

चार वरण।

ब्राह्मण क्षत्री वैश्य युत, शूद्र वरण जो चार।
स्थूल देहके कारणे, भये जगत बिस्तार ॥ ७१ ॥

चार आश्रम।

ब्रह्म चर्य्य और गृहस्थ पुनि, वानप्रस्थ सन्यास।
आश्रम चार बखानिये, देह स्थूल बिलास ॥ ७२ ॥

स्थूल देहका प्रमाण।

स्थूल देह परमान है, हाथसु साढे तीन।
लोकसो मृत्यु लोकहै, एता वरण प्रवीन ॥ ७३ ॥

स्थूल देहकी सम्बन्धि।

जागृतमें यहि जीवको, नेत्र अहै अस्थान।
गुण सु रजो गुण जानिये, सकती क्रिया मान ॥ ७४ ॥

शिष्य प्रश्न।

जागृतको अब भेद प्रभु, मोको देहु बताय।
केहि विधि जड स्थूल सो, जागृत कहु समझाय ॥ ७५ ॥

गुरु उत्तर सूक्ष्म इन्द्रियोंकी उत्पति।

पहिले सुनु शिष भेद अब, अपंचीकृत पसार।
जाके परगट होतही, भयो जगत विस्तार ॥ ७६ ॥
अपंचीकृत भूतके, रजगुण अंश प्रपंच।
पांच करम इन्द्री भये, भये प्राण सो पंच ॥ ७७ ॥

गुदा लिंग पग हाथ मुख, बिलग बिलग भय आप ।
कर्म इन्द्री तासों कहें, जपे कर्मको जाप ॥ ७८ ॥

पांच प्राणके नाम ।

प्राण अपान समान है, व्यान उदान प्रमान ।
पांच प्राण यहि कहत हैं, वायु प्रधान बखान ॥ ७९ ॥

पंच उपप्राणके नाम ।

नाग कूर्म किरकल कहे, देवदत्त पुनि जान ।
पचवें धनञ्जय जानिये, उपप्राण तेहि मान ॥ ८० ॥

पांच अन्तःकरणके नाम ।

अपंचीकृत भूतके, सतगुन अंश मिलाप ।
अन्तःकरन परगट भये, अन्तर इन्द्री आप ॥ ८१ ॥
मन बुद्धि चित्त हंकाररू, अन्तःकरण सुजान ।
यही पांच सो जानिये, अन्तर ज्ञान परमान ॥ ८२ ॥

पांच ज्ञानेन्द्रियोंके नाम ।

श्रोत्र त्वचा चक्षू कही, जिह्वा जान घ्राण ।
पांचों इन्द्री ज्ञानकी, साधन ज्ञानसमान ॥ ८३ ॥

त्रिपुटा व्याख्या ।

अब इन्द्रिनके विषय अरु, देवहुँ कहौं बखान ।
सुनियो शिष्य सु ध्यान दे, प्रत्यक्ष बचन प्रमान ॥८४॥
इन्द्रीसो अध्यात्म है, विषय जानु अधिभूत ।
अभिमानी अधिदेव है, सो त्रिपुटी समझूत ॥ ८५ ॥
पांच कर्म पंच ज्ञान रु, अन्तःकरणहु जो पांच ।
इन्द्री पन्द्रह जानिये, कहौं त्रिपुटीं सु बाच ॥ ८६ ॥

पांच कर्म इन्द्रियोंकी त्रिपुटी।

गुदा विषय मल त्याग है, देव अहै यमराज।
उपस्थ, विषय सो भोग है, परजापति महराज॥८७॥
गमन विषय है पांवका, वामन देव कहाय।
पाणि विषय आदान है, देव इन्द्र बलराय ॥ ८८ ॥
बाक विषय है बोलना, अग्नि देव अधिकार।
त्रिपुटी इन्द्री कर्मकी, मनमें राखु विचार ॥ ८९ ॥

पांच ज्ञानेन्द्रियोंकी त्रिपुटी।

देव अश्विनी कुमार है, इन्द्री घ्राण प्रमान।
विषय गहत है गंधको, इन्द्री ज्ञान समान ॥ ९० ॥
जिह्वा इन्द्री ज्ञान है, देव वरुण पहिचान।
ग्रहण करै रसको विषय, अद्भुत कला निधान ॥९१॥
चक्षु देखे रूपको, देव सूर्य्य भगवान।
इन्द्री त्वचा विषय स्पर्श, वायू देव पिछान ॥ ९२ ॥
शब्दहिं गहै सो श्रोत्र है, देव अहै दिकपाल।
त्रिपुटी इन्द्री ज्ञानकी, महा कठिन भ्रमजाल ॥ ९३ ॥

पांच अन्तःकरणकी त्रिपुटी।

अन्तःकरण अध्यात्म है, स्फुरण सो अधिभूत।
महा विष्णु अधिदेव है, व्यापक विश्व विभूत ॥९४॥
मन जहाँ अध्यात्म है, अहै चन्द्र तहँ देव।
कल्प विकल्प अधिभूत है, जगका कारण भेव॥९५॥
बुद्धिस्वतः अध्यात्म है, है निश्चय अधिभूत।
ब्रह्मा तहाँ अधिदेव है, अनुभव लागा सूत ॥ ९६ ॥

नित अध्यात्म चिंतन करे, सो अधिभूत विचार।
वासुदेव अधिदेव है, सबका मूल अधार ॥ ९७ ॥
अहंकार अध्यात्म जो, अधिभूत अभिमान।
रुद्र कहो अधि देवता, सकल सृष्टि मंडान ॥ ९८ ॥

त्रिपुटीकी स्पष्ट व्याख्या।

करणसो अध्यात्म अहै, विषय अहै अधिभूत।
देव सोई अधिदेव है, त्रिपुटी कहै अवधूत ॥ ९९ ॥

जागृत अवस्था स्वरूप।

अपंचीकृत भूतकी, एती भयी संतान।
जागृत अवस्था अब कहूँ, सुनूँ शिष्य दे कान ॥ १०० ॥
इन्द्री कर्म अरुज्ञान पुनि, मन बुद्धि चित्त हंकार।
इनहीकी तिरपुटीसो, व्यालिस तत्त्व विचार ॥ १०१ ॥
पांच पचीसों संग मिलि, व्यालिस तत्त्व समुदाय।
विश्वात्म जब कारज करे, जागृत सोई कहाय ॥ १०२ ॥

चार प्रकारकी वाणी।

परा पश्यन्ति मध्यमा, सहित बैखरी चार।
वाणी सोई पिछानिये, मूल जगत व्यवहार ॥ १०३ ॥

बैखरी स्वरूप।

बैखरी कहिये बोल जो, मुखसे निकसे आय।
स्थूल जगतमें प्रगट है, सबही देत लखाय ॥ १०४ ॥

सूक्ष्म देह वर्णन।

सूक्ष्म देह अब कहत हौं, सुनु शिष्य दे कान।
भिन्न भिन्न बरनत तेही, सज्जन बुद्धि निधान ॥ १०५ ॥

सूक्ष्म देहके तत्त्व ।

सूक्ष्म देहको कहत हैं, पन्द्रह तत्त्व प्रधान ।
कोइ कहत उन्नीस हैं, कोइ पच्चीस विधान ॥१०६॥
कोइ कहत चालीस हैं, कोइ कहत हैं साठ ।
सत्तर कोईं कहैं, कोईं एक सौ आठ ॥ १०७ ॥
छियानवे कोईं कहैं, नवहिं बतावे कोय ।
एक बातकी बात है, बहुविधि वरनत सोय ॥१०८॥

पन्द्रह तत्त्वका सूक्ष्म शरीर ।

पांचो इन्द्री कर्म अरु, पांच ज्ञान समुदाय ।
प्राण पांच पुनि लीजिये, मन बुधि संग सहाय १०९॥
ऐसे सत्रह तत्त्वकी, सूक्ष्म देह परमान ।
औरो यहि विधि जानिये, सब जो करत बखान ११०

उन्नीस तत्त्वका सूक्ष्म शरीर ।

उपर्युक्त सत्रह तत्त्वमें, अहं अरु चित्त मिलाय ।
उनइस इमि सो भाषते, औरो सुनो बनाय ॥१११॥

पचीस तत्त्वका सूक्ष्मशरीर ।

इन्द्री ज्ञान अरु कर्म जो, विषय प्राण समुदाय ।
अन्तःकरणसोपाँचमिलि, कहतपचीस मुनिराय ११२

साठ तत्त्वका सूक्ष्म शरीर ।

पन्द्रह इन्द्रीं विषय सहित, पन्द्रह देव मिलाय ।
पांच विकार दश प्राण युत, भये साठ समुदाय ११३
कारन कारज भेदते, भयो अनेक समुदाय ।
एक बातकी बातको, बहुविधि मानत आय ११४ ॥

हेतु सबनको एकहै, होय बोध परकास ।
स्वप्नवस्था जानिके, छुटे अविद्या भास ॥ ११५ ॥

कारण शरीर ।

कारण शरीर अज्ञान है, सुषुप्ति अवस्था जाहि ।
सृष्टि मूल बखानिये, शून्य रूप जहँ आहिं ॥ ११६ ॥
तत्त्वदर्शन वर्णन किये, सूक्ष्म रूप बखान ।
सविस्तार सो देखिये, टीका माहि निदान ॥ ११७ ॥
अध्यात्म दर्शन नाम है, पंची करन विख्यात ।
बूझे विचारे जो उसे, छुटे अविद्या घात ॥ ११८ ॥
चराचर अनुचर जानिये, युगलानन्द अविधान ।
हेतु मुमुक्षु सो लिखे, दया धर्म परधान ॥ ११९ ॥
जो चाहत जानन अधिक, पंची करन परेखु ।
आतम दर्शन नाम जिहिं, लेहु मुमुक्षु सरेखु १२० ॥
कबीर आश्रम विदित है, पोस्ट खरसिया जाहि ।
जिला अहै विलासपुर, मध्य प्रदेश के माहि ॥ १२१ ॥

इति श्री अध्यात्म दर्शनका प्रथम खंड तत्त्वदर्शन नामक ग्रन्थ
कबीराश्रमाचार्य्य स्वामी श्रीयुगलानंद बिहारी
विरचित समाप्त शुभम् ।

# शब्दावली–पांचवाँ खंड।

## वसंत प्रारम्भः।

वसंत १–ऐसो वसंत नहिं बार बार। खेलि लेहु दिन चार चार ॥टेक॥ करि साध संगति गडवा मंझारि। मन मोरि राखि जामें संभारि॥ प्रीति वसन सो ढाँकि लेह। लै सुमति सखीके हाथ देह॥ सुन्न महले में रचो खेल। चित चोवा परमारथ फुलेल॥ अभै अरगजा लेहु हाथ। तुम या विधि चरचा प्रान नाथ॥ सुकृत नीरमें नहाय लेह। भरम भार टरै सुध होय देह॥ कहैं कबीर ऐसे खेले संत। तब कुसल होयगी आदि अंत॥

वसंत २–तुम देखो सन्तो थिर वसंत। सतगुरु संगति सुख अनंत॥ टेक॥ थिर वसंत नहिं जानै भेद। पार न पावे सुमृति वेद। आदि विष्नु ब्रह्मा महेस। पार न पावे पुरान सेस॥ थिर वसंत नहिं जानै सार। उपजै विनसै बारम्बार॥ थिर नाहिं जहां झरै है पात। पवन सरूपी जम करै घात॥ निरगुन सरगुन दोय उपाय। षट दर्शन सब येही लौ लाय॥ भवँर जाल फिरि फिरि

भुलाय । जंजाल रंग सब मिटि न जाय ॥ जहां निसि वासर नहिं चंद सूर । नहीं तीन लोक वैकुंठ मूर ॥ नहीं जहां शून्य नहीं जहां कार । नहीं जहाँ निरंजन निराकार ॥ थिर वसंत जहां थिर शरीर । थिर तरवर जहां पात थीर ॥ थिर वसंत जो जानै भेद । ताकों भवजल नहीं है खेद ॥ थिर बसंत जो जानै रहै । अमर होय पद अमर लहै ॥ कहै कबीर थिर कहो बुझाय । थिर समाय अमृत फल पाय ॥

वसंत ३–अनभै बसंत खेलो सुजान । भरम भाव नहिं होय हानि ॥ टेक ॥ प्रथम वसंत मेल्यो शरीर । गुरू संजम मन धरो धीर ॥ पिचकारी करि हेत लीन्ह । काम क्रोधको टारि दीन्ह ॥ दूजे मेरो मन महामंत । ताको काहु न लह्यो अन्त ॥ कुबुधि गुलाल उड़ावै सोय । सुरनर मुनि सब गये बिगोय ॥ नाद बिंद तहां लागे बंद । यह वसंत थिर होय कंद ॥ थिर होय बिंद प्रकासे चंद । परम जोति परगट अनन्द ॥ कहै कबीर यह परम खेल । सत्सुकृतसो भय मेल ॥ काल जाल सब दीन्ह मेंट । तब पार ब्रह्मसो भई भेंट ॥

वसंत ४–जहां सुरति सुहागनि खेले फाग । पार ब्रह्म तहां करै राग ॥ टेक ॥ अनहद मुरली बाजे तूर । विन रसना सुर ऊठत पूर ॥ ध्वनि सुनि सीतल भयो गात । सरवन रुचत नहीं और बात ॥ लौकर
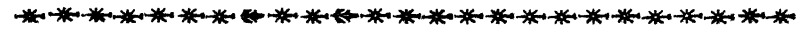
भूषन पहरै अंग। सीलको सिंदुर दियो है मंग॥ लखि दर्पन सतगुरुके बैन। ज्ञानको अंजन दियो है नैन॥ लोक लाज सब डारि दीन्ह। प्रेम छाड़ी गह हाथि लीन्ह॥ सुमति सखीको कियो संग। रच्यो खेल जहां विविध रंग॥ घेरि घारि जब होरी कीन्ह। ब्रह्म अग्नि जहां लेस दीन्ह॥ सब जरि गई उड़ानी धूरि। ब्रह्म निरंतर रह्यो पूरि॥ गगनि गली जहां मगन ख्याल। तहां लखि पायो अलख लाल॥ हिलि मिलिकै किन्हौ विलास। जनम जनमकी मिटी भास॥ रसातल भूतल अरु अकास। प्रेम सुगन्धकी फैली वास॥ कहैं कबीर मोहि भावै संत। जो या विधि खेलै रितु वसंत॥

वसंत ५–को का को पुरुष को काकी नारि। ये सब संगी दिवस चारि॥ टेक॥ को काको पिता कोउ काको पूत। जन्म जन्मके उरझ्यो सूत॥ जो सुरझावै सोई सुजान। मेरि मेरि करता तजै प्रान॥ को काकी माय को काकी धीय। समझि देखि नर अपने जीय॥ अंत काल जब पहुँचे आय। बांह पकडि जम लिये जाय॥ को काको कुटुम्ब को काकी जाति। अंतकाल कोई संग न साथि॥ यामैं नहीं अपनो है कोइ। सत शब्द सुनि लेहो लोइ॥ हैर उगौरी बड़ धोखा कीन। झूठी माया संग लीन॥ या बाजीको लखै जुकोय। कहैं कबीर जन भेदी होय॥

वसंत ६-बन माली जाने बनकी आदि । राम भजन बिना जनम वादि ॥ टेक ॥ एक फूल जो फुल्यो रितु वसंत। जामें मोहि रहे सब जीव जन्तु ॥ फुलनमें ज्यों वसत वास । ऐसे घट घट गोविंद निवास ॥ उड उड रे भौंरा जायओ देस । मेरे हरि प्रीतम सोक हो संदेस ॥ चोली पुरानी जीवन भार । मोहि विरह सतावे बार बार ॥ ऊंचा पर्वत विषम घाट । अगम पंथ न सूझै वाट ॥ पर बेली रात्यो मेरा कंत । मैं का संग खेलौं रितु वसंत ॥ रितु वसंतकी परी झूल । अंब मौरे कचनार फूल ॥ कहैं कवीर मन भयो आनंद । मोहि हरषि मिलै गुरु रामानंद ॥

वसंत ७-कोइ हैरे हमारा गांवका । जासुं परचै बूझुं हाँवका ॥ टेक ॥ विन बादल बरषै अखंड धार । बिन बीज चमकै अति अपार ॥ शशि भानु बिना होय प्रकास । सतगुरूके शब्द लियो निवास ॥ वृच्छ एक जहां अति अनूप । जाके साखा पचम छांह धूप ॥ बिन फूलन भौंरा करै गुंजार । फल लाग्यो जाके निरा-धार ॥ ऊंच नीच नहीं जाति पांति । जहां त्रिगुन न व्यापे सदा सांति ॥ हरष शोक नहीं राग दोष । सदा आनंद संसै न सोग ॥ अखण्ड पूरी एक नगर नाम। जहां वसिये साधो सहज धाम ॥ उपजै न बिनसे आवे न जाय। कहें कवीर तहां रहो समाय ॥

वसंत ८–सतगुरू खेले रितु वसंत । परम पुरुष जहां साधु संत ॥ टेक ॥ तीन लोकते भिन्न राज । जहां अनहद बाजा बजै बाज ॥ जहां चहूँ दिशि जोति उगे अपार । तहां विरलो जन कोइ उतरे पार ॥ जहां कोटि कृष्ण नवावैं माथ । कोटि विष्नु खडे जोडे हाथ ॥ कोटि महादेव धरै ध्यान । कोटि ब्रह्मा जहां पढें पुरान ॥ जहां कोटि सरस्वति करै राग । कोटि इन्द्र फिरै गोहन लाग ॥ कोटि दुरगा जहां करै सिंगार । कोटि कुबेर जहां भरै भंडार ॥ जहां चोवा चंदन अरु अबीर । पहुप बासरस गहर गंभीर ॥ सुरति सुरंग सुवास लीन्ह । सत्यलोकमें वास कीन्ह ॥ अजर द्वीपमें पहुंचे जाय । अजर पुरुषको दरस पाय ॥ कहैं कबीर लीजो बिचार । नरक उधारन नाम हमार ॥

वसंत ९–या सुन्दर तनमें मनुआ भुलान । जाते जम धरि करै हान ॥ टेक ॥ कुबुद्धि सखी सो ताको नेह । भरि पिचकारी कुमति देह ॥ निसि दिन भ्रमको खेलै खेल । आसा तृष्ना संग मेल ॥ दम्भ कपट डफ बाजै ताल । कंठ विषयकी डारि माल ॥ नाचत गति लिये और और । करै निरति गति लहै न ठौर ॥ आप आपको जानै नाहिं । परयो भरम गति भीर मांहिं ॥ सतगुरूको जो संग होय । लहै अमरपद अमर घर सोय ॥ छाडो खेल विकार मूल । भरम मांहि क्यूं

रहे भूल ॥ कहै कबीर बिचारि देख । सत शब्द गहि कर विवेक ॥

वसंत १०-जहां नित वसंत अमृत निधान । सतपुरुष जहां सत्त ध्यान ॥ टेक ॥ अगम अगाध लीला अपार । सुरनर मुनि सब रहे हार ॥ पुहुप अखंडित सेत भास । सत्त पुरुष तहां कीयो बास ॥ बाजै नाद अखण्ड घोर । ताल मृदंगका बहुत सोर ॥ बिन पग निरति तहां होय नाच । बिन मुख बोलै शब्द सांच ॥ फुले वसंत बिन पुहुप बेल । सेत भँवर तहां करै केल ॥ नाना बरन अरु नाना रंग । बिन सरवर तहां उठे तरंग ॥ उनमुनिता जो होय नैन । सो लखि पावे संत सैन । कहै कबीर कोई लहै न अन्त। सुखसागरमें सुक्ख बसंत ॥

वसंत ११-ऐसो खेलो संतो मन भये बिसारि । जम जालमकी मेटो रारि ॥ टेक ॥ जहां पांच मवासी घेरै गैल । मन राजा तहां करै खेल ॥ सखी पचीस तहां करै सोर। अनहद बाजा बजै घोर॥ ज्ञान गलीमें बाढे आय। सुरति निरति को संग लाय ॥ करि सनेह जो खेले फाग । भवसागरका करहु त्याग ॥ होय अचिंत जो चिन्ता मिटाय । सतगुरू पद मैं रहै समाय ॥ कहै कबीर गुरु किरपा कीन । भय छूटा तब फगवा दीन ॥

वसंत १२-तुम सुनियो संतो जुग वसंत । कोई अगम

विवेकी बूझै संत ॥ टेक ॥ बसे नगर तहां उठै घोर । पांच सखी तहां करैं सोर ॥ रंग रंगीली नौऊ नारि । विषम सरोवर रची धमारि ॥ नाना विधि सों करै कलोल ताल मृदंग अरु बाजै ढोल ॥ चौरासी पिचकारी हाथ । लिये सखी सब फिरै साथ ॥ अहं गुलाल लिये गोद मांहि । सुर नर मुनि कोई बच्यो नाहिं ॥ मन राजाके सबही संग । बाढे भये तहां जमुना गंग ॥ उततैं आये ज्ञान बीर । सुरति निरति लिये संग धीर ॥ पिचकारी हित प्रेम लीन । सुमति सखीके हाथ दीन ॥ सेत अबीर उडावै हेल । ऐसा अद्भुत अगम खेल ॥ कहैं कबीर कोई लखै साध । जिन त्रिगुन तापकी तजी उपाधि ॥

वसंत १३—खेलत वसंत मन महा मोह । विषय फाँस तन देह छोह ॥ टेक ॥ आलस महलमें करै केल । आशा तृष्ना संग मेल ॥ अहंकार मद मंत्री संग । कुबुधि सखी सुं करै रंग ॥ लिये हाथ डफ डिम्भ केर । ब्रह्मादिक जिन लिये घेरि ॥ करै उलाहल काम वीर । महादेव कौं मारयो तीर ॥ इन्द्रासन लुटचो बनाय । सुर नर मुनि सब लिये खाय ॥ नर नारी नहीं देवै चैन । निशि दिन बोलै विषय बैन ॥ सब वन फूले विषय वसंत । ताहि जरावै विवेकी संत ॥ उग्र ज्ञान मिलि मता कीन । सुरति सखी तिहि साथ दीन ॥ ब्रह्म अग्नि औटावे रंग । विषय बान सब कीये भंग ॥ सत्त शील संतोष चैन । सत शब्द मुख बोले बैन ॥ सतसंतोष सुखमें समाय । गुरू

मुख खेलै वसंत गाय ॥ कहैं कवीर मिट्यो गरभ जंत ॥ सुख सागर सुख निधि बसंत ॥

वसंत १४–मोह निरपति खेलै बसंत । सुर नर मुनि कोइ लहै न अंत ॥ टेक ॥ काम प्रधान तिहि राव साथ । सकल सभा मिली रच्यो राथ ॥ पांच बान पिचकारी लीन । पांचू पांच मिलि खेल कीन ॥ संकट करि करि मोरच्यो उजासु । होय अकरष न रह्यो उदासु ॥ मोहनी होय सब हरच्यो ज्ञान । मारयो शिवको पहुप बान ॥ कुमति सखी तहां खेलै खेल । चौरासी सब दीये ठेल ॥ सुभ असुभ तहां गावे गीत । लालच लोभमें सबै भात ॥ जोगी वनमें करै जोग । मारे बान तहां जाय लोभ ॥ जोग जुगति कछु रहै न थीर । पहुप बान लग्यो शरीर ॥ रावन मारच्यो महा मोह । भक्त जना सों कियो द्रोह ॥ माया मोह लाग्यो राय । सबकूं मोह नरेस खाय ॥ अभिमान बान जुरजोधन लीन । वचन हेत नहिं भयो अधीन ॥ ताको लालच लाग्यो बान । मोह नृपतिने मारच्यो तानि । एक ओर भयो मोह राव । इत विवेक ने लायो दाव ॥ सुरति निरति पिचकारी प्रेम ॥ शील संतोष अति बचन हेम ॥ खेलन लागे मगन होय ॥ तहां मोह पुनि चल्यो रोय ॥ छिकत छिमां छबीले रंग । सुमति सखि तहां लीये संग ॥ काम क्रोध तहां घरे छीन । महा मोह तहां भय हीन ॥ खेलैं विवेक संतोष संत । कहैं कवीर सुख निधि वसंत ॥

वसंत १५—चल भौंरा जहां नित वसंत। अवसर गये न फिर मिलंत ॥ टेक ॥ सुख सागर जहां सुख निधान। तहां ग्रीषम नहीं करत हान ॥ जहां कुमुद फूले अनंत हो। तहाँ भवरा खेलत बसंत ॥ कुंज सवन तहां कुहके मोर। प्रेम बुंद सागर हिलोर ॥ स्वतः प्रकास सो बन फूलंत। सुख निधान तहां करू बसंत ॥ यहि बन विषय विकार भोग। जहाँ व्यापै संसै महा सोग ॥ चलो वहाँ यहाँ तजो संत। जहाँ जोग जीत खेलै बसंत ॥ तहाय पुहप अगर महँके सुवास। सेत गुलाल अरु सेत भास ॥ सत पुरुष जहां मिलै कंत। कहैं कबीर तहां करो बसंत ॥

वसंत १६—काम कला खेलै वसंत। गिनै न काहू अति मैंमंत ॥ टेक ॥ नैन सैन पिचकारी लीन। लै इन्द्रिनके हाथ दीन ॥ सकल संग ये मारे खाय। सुरनर मुनि सब दिये ढाय ॥ देख रूप मन करै भंग। कुबुधि सखी लिय धावै संग ॥ बदन देखि मति भये हीन। करै क्रोध सब देह छीन ॥ गुन अवगुन कछु गिनै नाहिं। सबही को करै एक राहि ॥ अन्त न जानै कहा होय। जम द्वारे लैकरे विगोय ॥ मोह रूपकी कला बनाय। जहँ तहँ फंदा रह्यो फंदाय ॥ मैं तू खेलको करत रारि। बाँह पकडि डारे पछारि ॥ तीन लोकमें डारे रोर। व्यापित करै अंधियारे घोर ॥ गति मति सबहि गई हिराय। मदन बान तन रह्यो समाय ॥ अरे नर मूरख अबकी चेत। अब जानौ कछु याको हेत ॥ विष अमृत

निरवारो भेद। छोड़ो बाद विवाद खेद॥ जो विष खाये सो परलय होय। विन अमृत नहीं बाँचै कोय॥ था औसर तू मूढ मान। सत शब्दको गहो प्रमान॥ मिलि सतगुरु सो खेलो खेल। जरा मरनकी मिटे जेल। कहैं कबीर गहो सत भाव। बहुरि न ऐसो पावो दाव॥

वसंत १७–बाबासो जोगी जाके सहज भाव। अकलि प्रीति की भिच्छा खाय॥ टेक॥ शब्द अनहद सींगी नाद। कामक्रोध विषीयान बाद॥ मन मुद्रा जाके गुरुका ग्यान। त्रिकुटि कोट मैं धरैं ध्यान॥ मन करनीको करै अस्नान। गुरुको शब्द लै धरे ध्यान॥ काया काशी खोजौ बास। ज्योति स्वरूप जहां भयो परकास॥ ग्यान मेखला सहज भाव। वंक नालि कौ रसहि खाय॥ जोग मूलका देत बंद। कहैं कबीर थिर होय कंद॥ १७॥

वसंत १८–मगन रूप निरखत वसंत। विविधि प्रकास महिमा अनंत॥ टेक॥ सरवन सुनत सोहं ग्यान। रसना बरनत आपु ध्यान॥ नेत्र छकै लखि आप रूप। वरनत अमि छवि अति अनूप॥ भोग नासिका सुखद वास। हिरदय कमलकी लै सुवास॥ तुचा मेल कियो नासा संग। संग समान कियो परसंग॥ ध्यान लिये है प्रेम प्रीति। सेवा बंदन संत रीति॥ विषय पंथ नहिं चाले पाय। सुखित धाम बसि कहूं न जाय॥ दरसन दरसत आप ब्रह्म। जल घटमें जल मध्य बिम्ब॥ तेज जोतिमें जोति तेज। विलसत सुख यह अमर सेज॥ कहै कबीर

मन मगन ग्यान। सोधि शब्द लेहु तत छान ॥ प्रान पिंडमें पिंड प्रान। शब्द रीति बूझत सुजान ॥

वसंत १९—चेतन रूप निरखत वसंत। प्रेम अमीरस आदि अंत॥ टेक॥ मन अज्ञा बस प्रेम संग। बुधि अस्थिर गति एक अंग॥ चित अमी रस पिये अघाय। अहं कृत तब चित मिटाय॥ सुरति लिये सोहं जाप। कुमति काम तजि भय संताप। जीव सीव है ब्रह्म आप। सहज मिटि तन मनकी ताप॥ द्वैत मिटी निज पदको पाय॥ यह सतगुरु सतपद लखाय॥ तन मन मन तन रह्यो छाय॥ ततलौ वित वित तत समाय॥ तूं पद ततको छुटयो धंध॥ पाय धाम पद नित अनंद॥ कहै कबीर आनंद कंद। स्थिर घर मिलि भान चंद॥

वसंत २०—सदा वसंत मन राखो थिर। मेटि कल्पना धरो धीर॥ टेक॥ काया नगर बसि करि विलास। आपा चिन्हों तजि सकल आस॥ झूठी आसा तनको नास। ताते जगत है काल ग्रास॥ कहा भवर होय फिरै उदास। यहि संपुट देखो कमल वास॥ चारि पहरको रंग रास। सुरझत कमल करि लै हुलास॥ केतिक है तेरे जिवको त्रास। धोखे लेत क्यों अनत बास॥ तूही फूल तूही अगर बास। का ढूंढै बन बन होय उदास॥ अजहूं चेत है तन में स्वास। सुरति सुमति गुन राखि पास॥ सकल मही गुरू है निवास। अटल राज जुग जुग

विलास ॥ हरष शोक नहीं भूख प्यास। रैन दिवस नहीं सदा उजास ॥ सही धाम निरमल शरीर। सदा अखंडित कहै कबीर ॥

वसंत २१-कहा अरूझि रहै मायाके जाल। निसि दिन जीवको संशय काल ॥टेक॥ अनंत भूप अलेख साध। सिद्धि न पाई गये अगाध ॥ मरम मिल्यो नहिं मिटी व्याधि। ब्रह्म ब्रह्म रटि ठान्यो वाद ॥ ब्रह्म कौन कहु मन है कौन। कौन शब्द कहु कौन पौन ॥ भिनि भिनि करि त्यागये भौन। भरम रच्यौ जिमि पानी लौन ॥ प्रगट सिष्टिपात लखै जो कोइ। सर्वं यथा भरि पूरि सोइ ॥ बीज विरछ यक संग जोय। जस चंदा एक संग लोय ॥ ब्रह्म वदन धुनि तत रूप। सकल साज सरगुन सरूप ॥ उदित भान यक संग धूप। सरब मूल यक बीज रूप ॥ सोई दृष्टि है सोई नैन। सोई तेज तन मनमें सैन ॥ सोई पेड फल सोइ कैन। सुख निधान आनंद चैन ॥ यही जम करताको साज। मरम मिलै तो सरै काज ॥ विना मरम गुरू देत राज ॥ भेद न पायो भयो अकाज ॥ अगम ग्यान चित भरम जान। लख सरूप तजि दूरि ध्यान ॥ कहै कबीर गहो सत्त जान। अमीतत गुरू पान पान ॥

वसंत २२-देखो देखो रे या नरकी भूल। सींचत साखा तजत मूल ॥ टेक ॥ प्रगट ब्रह्म है घट समान। ताहि

छांडि पूजै पखान ॥ जल पीवै पाषान धोय । सो तो आदि अंत पाषान होय ॥ स्वर्ग सीस पाताल पाय ॥ सो कैसे सम्पुट समाय ॥ अलख पुरुष आवे न जाय । सो कैसे दिये तुम्हारो खाय ॥ जुगन जुगन मैं कह्यो पुकारि । नर शब्द न चीन्हे करै रारि ॥ कहै कबीर नर कियो न खोज । भटकि मर्‌यो जैसे वनको रोज ॥

वसंत २३–कोई संत विवेकी मनहीं जान । जामें अरूझि रह्यो सगरो जहान ॥ टेक ॥ मन पंछी होय उड़े अकास । मनही जल थल सकल बास ॥ मनही चहुं दिशि रहो छाय कोइ न चिन्हे मन सबको खाय ॥ मनही पाप अरु मनही पूजा । मनही रूप धर्‌यो यह इजा ॥ मन मध्य मन आदि अंत । मनही लीला रची अनंत ॥ मनके बस सुर सकल देव । मनहीकी सब करै सेव ॥ मनही धाम जो रच्यो बनाय । मन जनम्यो नौ बेर आय ॥ ब्रह्म फूटि मन भयो अंस । तीन लोक मन कियो. विध्वंस ॥ कहै कबीर जो मनही जान । सत शब्द गहि ले पहिचान ॥

वसंत २४–खेलत वसंत तन मन बिरह रंग । भव सागर नाना तरंग ॥ टेक ॥ कोई जोग करे कोइ जज्ञ दान । कोई नेम धर्म पूजै पषान ॥ कोई गिरही कोई फिरै उदास । कोइ नग्न त्वचा गुफामें वास ॥ कोई डंड कमंडल धूमपान । कोई उरध तपस्या गोड तान ॥ कोई दूधारी पवन ग्रास । कोई अग्नि जरावे चहूं पास ॥ कोई छत्र धारी
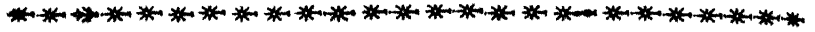
धज निशान । कोइ सूरासन मुख खेतठान ॥ कोई पीर औलिया करै मिजाद । कोई षटदरसनमें करैं बाद ॥ कोइ उदय अस्त दहना वल देय । कोई चारि मास जल सैन लेय ॥ कोई बहुत भेष धरि करै स्वांग । कोई साधे धतूरा पोस्त भांग ॥ कोई उरध कपाली आसन राधि । कोई निशि वासरकी निद्रा साधि ॥ कोई रिद्धि सिद्धि करामाति जान । कोई जोगी मुद्रा पहिरै कान ॥ कोई अलह कहै कोई कहे राम । हिन्दू तुरक दोय धर नाम ॥ सकल ब्रह्म समान एक । कहैं कबीर लीला अनेक ॥

वसंत २५–ऐसे सबै मद माते कोई न जाग । संगहि चार घर मूसन लाग ॥ टेक ॥ जोगी माते जोग ध्यान पंडित माते पढि पुरान ॥ तपसी माते तपके भेव । संन्यासी माते अह मेव ॥ माते ऊधो औ अकरूर । हनुमत माते लिये लंगूर ॥ शिव माते हरि चरन सेव । कलि माते नामा जय देव ॥ जैनी माते करम बाद । जंगम माते घंट नाद ॥ मुल्या माते देदे बांग । राम विमुख सब भूले मांग ॥ राजा माते भरि भंडार । रानी माती करि सिंगार ॥ दानी माते दे दे दान । प्रजा माती विषया पान ॥ ब्रह्म रटत हैं चारों वेद । रावन गइयो घरके भेद ॥ या मनुवाकों अधम काम । ताते कहै कबीर भजु सत्त नाम ॥

संत २६—नारि नाहिं संतो हरि तुम्हार । बिना मूल जैहो जनम हार ॥ टेक ॥ हरिश्चंद समान नहिं दानी आन । निज रानी सहित पुत्र विकान ॥ विन विचार चित लियो है मानि । हरिचंद भरो डोम घर पानि ॥ पांडव कहिये सब सौ जोर । तिनका पाँव नरकमें बोर ॥ राजा बलि करनी जो कीन्ह । बावन रूप छली बाहू लीन्ह ॥ रावन भयो चहुँ खंलके राल ॥ तिनको काल कियो पैमाल ॥ मथुरा कंस सिर छत्र ढार । कृष्ण किस्ना काल धरि चोटी मार ॥ यही भांति सब गये है बीति । काहुन मानी शब्दकी रीति ॥ कहैं कवीर यह हारि बिचार । शिव विरंचि सब खायो झार ॥

वसंत २७—इस घरमें बाबा बाढी रारि । नित उठि लागै चपल नारि ॥ टेक ॥ एक बडी जाके पांच हाथ । पांचनके पच्चीस साथ ॥ पचीस बतावै और और । और बतावै कई ठौर ॥ इक अंतर बैठि अन्त लेय । इक झक झोरै झोटा देय ॥ अपनों अपनों चाहैं भोग । कहुँ कैसेके यह सधै जोग ॥ नियरे रहन न पाऊँ दूरि । चहुं दिशि बाबरि रही पूरि ॥ लाख अहेरी एक जीव । ताते पुकारे पीव पीव ॥ घर बांधु नहिं मांगु भीख । बहुत दिननको लागी सीख ॥ अबकी जो कहुं होय बचाव । कहैं कवीर परै पूरा दाव ॥ २७ ॥

****************************

वसंत २८—मोपै मोह मृग मार्यो न जाय । मेरी बुद्धि वारीमें वसो खाय ॥ टेक ॥ मेरी बुद्धि वारीमें मुकतीमै न । मोहि देखत चरि गयो कैन कैन ॥ रहन ना पावे फूल पात । सींचत हारी पटकि हाथ ॥ सुरति निरतिके लिये है वान । ग्यान धनुष साधै सधान ॥ अब मारूं तो ताकि ताकि । होय विदेह तहां गयो विलाप ॥ सुरनर मुनि सब थके हारि । मोह मृग नहीं सके मारि ॥ कहै कबीर हम दियो टारि । गुरुके शब्दकी करी बारि ॥

वसंत २९—मोहि ऐसे बनिज सो नहिं काज । जामे घटत मूल नित बढत व्याज ॥ टेक ॥ नायक एक वनिजरे पांच । बैल पचीस वाके संग साथ ॥ नौ वहिया दस गौंनि आहि । कस निवेहै तारि लागी ताहि ॥ सात सूत लै बनिज कीन । कर्म टहलुवा संग लीन ॥ चारि जगाती माड़ी रारि । ताते नायक चाल्यो हारि ॥ खरच खुटान बनिज टूट । चहुं दिशि टांडो गयो फूट ॥ कहै कबीर विष यह बनि बादि । पड़ि गौनिको देय लादि ॥

वसंत ३०—ऐसो नगर निरंजन वसो न जाय । जहां धरम राये मांगे धराय ॥ टेक ॥ काया पुर पटन दसूँ दुवार । ऊँची कुलफ दिढ लगे के वाँहू ॥ पांच जना नहिं माने कोय । मुसै चोर घर बेग सोये ॥ तत वदरे आये प्रचंड । घर मोदीको कियो हैं वंध ॥ भाजि चले पाँचूं परधान । ले मोदी गुदरी दीवान ॥ सहली घाट अरुझौनी बाट ।

द्वरग जगाती रोके घाट ॥ डांड लगैका पूछे मोहि। पूछै जावों कहा देंव तोहि ॥ सब अनाथ मैं कहूँ काय। कहौ कौन विगुचे इहां आये ॥ मैं तो बंदूँ चरन धीर। सुख-सागर होय मिले कबीर ॥

वसंत ३१–ऐसो संगवास मोहि वस्यो न जाय। जहां आप स्वारथी पांचू भाय ॥ टेक ॥ अटपट कुनबा बारह बाट। फिरि फिर जल पीवै दसो घाट ॥ नैन नासिका जीभ्या कान। इंद्री स्वाद चाहे आन आन ॥ काम क्रोध को कठिन जार। भवसागर सूझै वार न पार ॥ चहुं दिसि पसरयो माया फांसि। जहां मन बंधे करम बास ॥ दुख सुख व्यापे दोनों भांति। काया नगरमें परिहै भ्रांति ॥ कहैं कवीर कहा कथिये ज्ञान। दो तलवारको एकहि म्यान ॥

वसंत ३२–मेरो हार हिरानौ मैं लजांव। सांस दुराचर्नी पीव डरांव ॥ टेक ॥ हार गयो मेरो राम धाग। बिच बिच मानिक लाल लाग ॥ तरन पियाला परम जोति। अंतर अंतर लगेहै मोति ॥ पांच सखी मिलि हैं सुजान। चलि जइये तीर वेनी नहान ॥ नहाय धोय सिर तिलक दीन्ह। ना जानो हार मेरी कौन लीन्ह ॥ हार हरयो जिन विमल कीन्ह। ले पारोस निहार दीन्ह ॥ तीन लोककी जानै पीर। सब देव सिरोमनि कहै कवीर ॥

वसंत ३३–जिन पतित उधारे सो संभारि । आदि अन्त राखे मुरारि ॥ टेक ॥ यक गनिका होती नगर माहिं । जाको राम कहनकी सुधि नाहिं ॥ खरचे दाम सुवा लियो मोल । तुम पढौ परबते राम बोल ॥ एक अजा मिल पंडित असाच । सो तो गनिकाके संग रहेग रांच ॥ राम नारायण पुत्र साखि । सो तो जमदूतनसे लियो राखि ॥ एक वधिक हते कोटनि जीव । जिन सपनेहु नहिं भज्यो पीव ॥ हरिके चरण लखि मारयो बान । सो वधिक चढि गयो विमान ॥ पतित उधारण विरदा तोर । सरन आय लज्जा राख मोर ॥ कहै कबीर देवा न देव । सुर नर मुनि जाके लह्यो न भेव ॥

वसंत ३४–नाहि छाडो बाबा राम नाम ॥ मोहि और पढनसों कौन काम ॥ टेक ॥ प्रह्लाद पधारे पढन शाल । संग सखा लिये बहुत बाल ॥ कहा पढावे पांडे आल जाल । मेरी पाटीमें लिखिदे श्रीगोपाल ॥ कहे पंडित तुम सुनौ राय । तेरो पुत्र चलत है अपने दाय ॥ मैं मारूं डारै बुझान । ये तो नेक न मानै मेरी कान ॥ संडेमरके कह्यो जाय । प्रह्लाद बंधायो बेगि आय ॥ राम कहनकी छाडबान । अबही छुड़ाऊँ मेरो कहा मान ॥ कहा डरावे पांड़े बारबार । जिन जल थल गिरिको कियो प्रहार ॥ मार डार भावे देह जारि । राजाराम तजूं मेरे गुरूहिं गारि ॥ काढि खडग कोप्यो रिसाय । तोरे

राखन हारो मोहि बताय ॥ कहैं प्रह्लाद कछु शंका नाहिं । मोमें तोमें सकल माहिं ॥ खड्ग खम्भमें रहो पूरि । मेरो राखन हारो नाहिं दूरि ॥ खम्भ फारि प्रगटे मुरारि । हिरनाकुस मार्‍यो नख विडारि ॥ आदि पुरुष देवानदेव । धार्‍या भक्त हेत नरसिंह भेव ॥ कहै कबीर हरि भगती प्यार । प्रहलाद उबार्‍यो अनेक वार ॥

वसंत ३५—बाजि बाजिरे मधुर वा मधुरि तान । तेरी तान मेरो बसो प्रान ॥ टेक ॥ प्रथम सहनाई बाजै नाद । मिटि गये मनके विषै वाद ॥ रूम रूम खुली सुखकी खान । जन्म सुफल कियो अपनो जानि ॥ दूजे घंटा बाजे घोर । तिमीर नासि भयो दिवस भोर ॥ सुकृत बैन भयो थकित गात । बिसरे मनको पांच सात ॥ तीजे संख ध्वनी पड्यो कान । गति पलटी मति भई आन ॥ जन्म जन्मके पाप फंद । नास भये सब दुख द्वन्द्व ॥ चौथे नादजो बाजे झांजि । कसमल मनके डारे मांजि ॥ अहंकारको काट्यो सीस । चित्त चंचल गति घटत दीस ॥ पाँचवें तंती सुर सोहाय । राग अखंडित गीत गाय ॥ लगै सुहावन होय आनंद । जम जालिमके कटै फन्द ॥ छठवें बाजे मंजीरा ताल । जरा मरणका मिटै साल ॥ पांच सखिनके भयो चैन । सरवन सुनत सुख पीवके बैन ॥ सतवें बाजो सरस बीन । तन हार्‍यो मन भयोलीन ॥ निगम निरंतर धर्‍यो ध्यान । सुधि विसरी बुधि भई

विज्ञान ॥ आठवें तूर मोहि बहुत प्यार । तू मति मोते होय न्यार ॥ साधु संत तेरा ध्यान लेहिं । तेरे सुनत पीव दरश देहिं ॥ नवमें बाजे करनाली भेरि । अगम अगोचर निरखि हेरि ॥ जागत जागत रैन जाय । हेरत हेरत दिन विहाय ॥ बड भागी सुनै दसूं नाद । जिहि सुनि भागै सकल वाद ॥ मेघ नादमें रहै समाय । सुरति निरन्तर अथ्र जाये ॥ यकादस बाजे नौबत घोर । गगन बंब बहु उठै सोर ॥ शब्द सुरति तहां करि विचार । पैठि गये गहि मकर तार ॥ द्वादस मध्ये भयो प्रगास । मन मनसाको भयो नास ॥ बाजै अनंत नहिं अंत ओर । सेत पुहुप अरुसेत भौंर ॥ देख्यो दीप अमान ठौर । थकत भयो मन मिटि दौर ॥ जहो सुघर सुरन बाजै रबाब । जोग जीत तहां खेलै फाग ॥ अधर दीप अरु अधर वास । सत पुरुष सोहै प्रगास ॥ तहां हंस पहुंचे जो कोय । जरा मरनसो रहित होय ॥ अमृत फल तहां सदा भोग । मिटि गये क्षुधा तृषा सोग ॥ कहैं कबीर गुरू दीयो लखाय । अछय वृच्छ फल रह्यो छाय ॥

वसंत ३६–वसंत आरति करि सुजान । भौ सागर नहिं होय हानि ॥ टेक ॥ गुरु मुख साजो अमी पान । चौदह पवन आरति प्रमान ॥ अनहद बाजै घंटा ताल । भवसागर छूटै जंजाल ॥ आरति करि खेलो वसंत । जम जालिमको छूटै दंत ॥ अधर जोति दीपक निशान ।

गगन बंब गरजै सुजान ॥ घट माहिं उपजो ज्ञान ध्यान । पूरन ब्रह्म सब माहिं जान ॥ कहैं कवीर गुरु मिले खेलि। दुर्गदानीको दीन्ह पेलि ॥

वसंत ३७–तकि मार्‌यो सतगुरु सुजान । मेरे हिरदे लागो शब्द बान ॥ दसहुँ दिसा मन करत दौर । चित न चलै मन रहौ ठौर ॥ चल न सके मन पांव एक । मेरे कठिन करेजे भयो छेक ॥ ऊपर घाव न दीसे कोय । नख सिख व्यापे साले मोय ॥ को जाने मेरे तनकी पीर । सो जाने जेहि लागो तीर ॥ पलट्यो तन मन पलट्यो अंग । पांच पचीसक लीन्हे संग ॥ उलट समाने आपु मांहि । कहँ कवीर बलिजाऊँ ताहि ॥

वसंत ३८–चल भौंरा खेलहिं बसंत । पुहुप बास महके अनंत ॥ बन मोरे भये हरियर झार । पियरे पियरे पात सार ॥ बेल नबेली आस पास । जुग मरनको भयो नास ॥ निस चंदा परकास कीन्ह । बासर सूरज गवन लीन्ह ॥ अब न मिली गत भये विनास । विकस कँवल देखो प्रकास ॥ संपुट खोल भौंरा उड़ान । गई रजनी जब भये बिहान ॥ रुन झुन भौंरा लाये सोर । पुहुप बास महँ करे घोर ॥ निस बासर नहिं चंदा सूर । पुरुष रूप अविगत है पूर ॥ सर्व सार रस भिन्न अंग । जम कंटकके छूटे संग ॥ सुख सागर निरभयको धाम । पुहुप अखंडित सत्त नाम ॥ कहें कवीर ऐसे खेल साध । पुरुष दरस पावे अगाध ॥

वसंत ३९–चल चलरे भौंरा कँवल पास । तेरी भौंरी डोले अति उदास ॥ दिना चारको सुरंग फूल । ताहि देख भौंरा रहो भूल ॥ सब फूलनको लियो भोग । सुख न भयो तन बाढे रोग ॥ जित देखो तित बन पलास । मोहि कतहुं न दीसे जीवको बास ॥ बनसपती जब लागी आग । अब भौंरा कहां जैहो भाग ॥ पोहप पुराने गयो सूख । भौंराको लागी अधिक भूख ॥ उड़ न सके बल गयो टूट । भौंरी रोवे सीस कूट ॥ जबमें बरज्यों बार बार । तोहे बन ढूंढ्यों डार डार ॥ कहें कबीर यह मनको भाव । सत्त शब्द बिन जमको दाव ॥

वसंत ४०–कहां जइये ग्रह लागो रंग । चित न चले मन भयो अपंग ॥ जहां जाय तहां जल पखान । पूरि रहो प्रभु सबहिं समान ॥ बेद स्मृति सब देखो जोय । उहां जाय सो इहां न होय ॥ एक दिन मनमें भये उमंग । घसि चोवा चन्दन चरजे अंग ॥ पूजन चली सब ठाहिं ठाहिं । ब्रह्म बतावे गुरु आप मांहि ॥ अंजन मंजन तजु विकार । अरसठ तीरथ एक द्वार ॥ काहेको नर अन्ते जाय । घटहीमें तीरथ काहे न न्हाय ॥ सतगुरु मैं बलिहारी तोर । सकल कर्म भर्म मेटो मोर ॥ कहें कबीर सुन रामानंद । गुरुको शब्द काटे कोट फंद ॥

वसंत ४१–नगर निरंजन बसो जाय । धरमराय मांगे बेध राय ॥ काया पुर पाटन दस दुवार । कूंजी कुलफ

दिढ लागे किंवार ॥ पांच जना नहिं माने काहु । मूसे चोर धर बांधो साहु ॥ तलबदार आये परचंड । परमोधी पर कीन्हे डंड ॥ भाग चले पांचों परधान । ले मोदी गुजरे दीवान ॥ आगे अगम है बिषम घाट । दुर्गदानी जगाती रोके घाट ॥ दान देहु का पूछो मोहि । रीते जावकी देऊँ तोहि ॥ सबे अनाथमैं कहों काहि । को कोन बिगूचे इहां आहि ॥ सब सुख चाहो धरो धीर । सुखसागर जब मिलो कबीर ॥

वसंत ४२—कोई सन्त विवेकी मनही जान । उरझ रहो सकलो जहान ॥ मन पंछी उडि गयो अकाश । जल थल मांही सकल बास ॥ मन उरझाय रहो है छाय । कोई न चीन्ह मन सबहीं खाय ॥ मनहिं पाप औ मनहीं पुन्न । मन सिरजा देखो तीन गुन्न ॥ मनहि धाम जो रचा बनाय । मन जन्मो नौ बार आय ॥ मनके ब्रत सुर सकल देव । मनहीकी सब करत सेव ॥ मनहि मध्य औ आदि अन्त । मन सिरजो लीला अनंत ॥ ब्रह्म फूट मन भयो अंस । तीन लोक मन कियो बिध्वंस ॥ कहें कवीर जो मनही जान । सत्य शब्द गहि पद निरवान ॥

वसंत४३—मोहि ऐसे बनिज सो नाहीं काज । घटत मूर दिन बढत ब्याज ॥ नायक एक बनजारे पांच । बैल पचीसक संग साथ ॥ नौ वहियां दस गोन लाद । कसन बहत्तर लागे तास ॥ पाप पुंन दोय बनिज कीन्ह । कर्म

पयादे संग लीन्ह ॥ तीन जगातीसे मांडी रार । तासों नायक गयो है हार ॥ पूंजी खुटायल बनिज टूट । चहुं-दिस टांडा गयो फूट ॥ कहें कवीर ऐसो बनिज बाद । परि है गौन को देई लाद ॥

वसंत ४४–सतगुरु खेले नित बसंत ।मुक्त पदारथ मिले हो कंत ॥ धरती रथ चढ देखो देस । घर धर देखो नृप नरेस ॥ जोजन चार पेंतुरे फेर । बांध मवासी घरमें घेर ॥ अधर निअच्छर गहो ढाल । भाग चले रन छोड़ काल ॥ सूर सुध घट गहो कमान । चंद चिता गहि मारो बान ॥ साध संगत मिल करहू जोर । तब गढ छोडे चतुर चोर ॥ ऐसी बिध जो लडे सूर । तब काल मवासी होय दूर॥ अधर निअच्छर गहो डोर । जो निज मानो बचन मोर ॥ धरती तुरे होय असवार । कहें कवीर भौ उतरो पार ॥

वसंत४५–देखो देखोरे या नरकी भूल । सींचत साखा तजत मूल ॥ प्रगट निरंजन घटही मान । ताहि छोड पूजत पषान ॥ जल पीवे पाषान धोय । आदि अंत पाखान होय ॥ गगन सीस पाताल पांय । सो कस ठाकुर संपुट समाय ॥ अलख निरंजन आवे न जाय । सो कस दिये तुम्हारो खाय ॥ बार बार हम कहा पुकार । शब्द न माने करत रार ॥ कहें कवीर नर कियो ना खोज । भटक मुये जैसे बनके रोज ॥

*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*

वसंत ४६-नहिं नहिं रे संतो हरि तुम्हार। एक मुल बिना जैहो जन्म हार॥ हरि चंद समान कहु कौन दानि। पुत्र सहित जिन बेंचि रानि॥ करनी कीन्ही मनहि जानि। आप नीच घर भरयो पानि॥ राजा बलि भल करनी कीन्ह। बावन रूप हरि छल जो लीन्ह॥ ता कहं दीन्ह पताल बास। देखो देखो रे संतो हरि बिश्वास॥ राय युधिष्ठिर भक्त जोर। ताहूके पांव नरकमें बोर॥ कहें कबीर सुन हरिके दास। ऐसे मूरख चाहे बैकुण्ठ बास॥

वसंत ४७-होत व्याह सतगुरुके द्वार। जहां बरषत शब्द अखंड धार॥ बाहर द्वादश खंभ गाड़। प्रेम प्रीतको मंडप मांड॥ ज्ञान तत्त्व लेकर चढाव। श्वेत मुकुट माथे बंधाव॥ जगमग जोत जहां अति अपार। सुघर पुहुप जहां अति सुवास॥ कहें कबीर रहु सुमत धीर। ऐसे व्याह रचे सतगुर कबीर॥

वसंत ४८-जप जप रे जियरा सुकृत सोर। काहे न गहो निज शब्द डोर॥ जहां सुकृत तहां अग्रबास। रवि शशि धरनिन बहे बतास॥ गगन नगर जिन बरसे नीर। सुरत निरत ले रोपो धीर॥ षट दरशन मिल कथहीं बेद। सिध साधक सब अपने भेद॥ सुर नर मुनी कोइ गम्म न कीन्ह। औंट मुवे बिन जलके मीन॥ इकइस खण्ड

पृथ्वीको भाव । गन गन्धर्व बीते याही ठांव ॥ कहैं कबीर रहु अति अधीन । सत शब्द गुरु कहि जो दीन्ह ॥

वसंत ४९–ब्रह्ममंड धाम रस एक जान । जामें सप्त सिंधु औ चार खान ॥ चर अचर जीव जुग बेद देव । सुर असुर नाग सब करत सेव ॥ बाग वृच्छ सलिता अनूप । फल फूल पात शोभा सरूप ॥ बड़े सूर सूरनर सकट साल । रबि चंद बंद हैं अमल ताल ॥ रिध सिध सरबत्र ऐन । गुरु ज्ञान ध्यान धन मर्म चैन ॥ सरग नरक घर धरन धाम । पाप पुंन नहीं चलन काम ॥ पांचों गुरु मंत्री प्रवीन । भोग नार पचीस कीन ॥ इनके अनंद सुख भौ सुभाय । पूर रहो मोहि प्रगट काय ॥ पांच तत्त्व गुन तीन साज । मन राजा जहां करत राज ॥ ब्रह्म अखंड है सबते न्यार । बेद पुरान न पावे पार ॥ निह तत्त्व अच्छर शब्द सार । किंचक लखे सो उतरे पार ॥ नहिं आवे नहिं धरत देह । कहैं कबीर वह है बिदेह ॥

वसंत ५०–मोह मिरग मारो न जाय । यह तन बारीमें बसो आय ॥ बारीमें उपजे मुक्त बेल । देखत चुनगये केल केल ॥ बचत नहीं फल फूल पात । सींचन हारो पटके हात ॥ सुरत निरतके साजो बान । ज्ञान ध्यान साजो कमान ॥ जो कोइ मारे ताक ताक । होत बिदेह बिलाय जात ॥ सुरनर मुनि कोई सके न मार । गन गंधर्व सब

रहे हार॥ कहैं कबीर हम दीयो टार। सत्य शब्दके रोपी बार॥

वसंत९१–सबही मद माते कोइ न जाग। संगहिं चोर घर मूसन लाग॥ जोगी माते जोग ध्यान। पंडित माते पढी पुरान॥ तपसी माते तपके भेव। सन्यासी माते कारि हमेव॥ मुल्ना माते पढी मुसाफ। काजी माते दे निसाफ॥ संसारी माते माया धार। राजा माते कर हंकार॥ माते सुखदेव ऊधो अक्रूर। हनुमत माते ले लंगूर॥ सिव माते हरि चरन सेव। कलि माते नामा जय देव॥ सतसत कहे सुम्रित बेद। ऐसे रावन मारे घरके भेद॥ चंचल मनको अधम काम। कहैं कबीर भजो राम्नाम॥

वसंत ९२–जहां बारा मास बसंत होय। परमारथ बूझे बिरला कोय॥ बरषे अगिन अखंड धार। जहां बिजुली चमके अति अपार॥ ससि भान बिना जहां प्रकास। हरियर भौवन अठाराभास॥ बिन पानी आद्र कहे लोय। पवन गये सब मिलन धोय॥ बिन तरव फूले अकाश। शिव बिरंचि तहां लेय बास॥ सनका दिक भूले भँवर होय। लख चौरासी जिव गये बिगोय॥ जो तोहि सतगुरु सत्त लखाव। कहीं न छूटे करनी भाव॥ अमर लोक फल देखो आय। कहैं कबीर जाने सो पाय१६

वसंत ९३–सतनाम तत्त्व तीन लोक सार। लवलीन

भये सो उतरे पार ॥ एक जोगी जुगवे जटाधार । एक अंग भभूत धारे अपार ॥ एक मौनी मुखमौन लीन्ह । भ्रमत फिरे जुग जुगन छीन ॥ एक आराधे सकती सीव । एक पर दादे दे रटत जीव॥एक कुलदेवीको जपत जाप । ऐसे त्रिभुवन पति भूले आप॥ एक अन्न छांडक पीवे दूध । हरि न मिले बिन हृदे सूध ॥ कहें कबीर चित चेतो अंध । नातो परिहो जमके फंद ॥

वसंत ९४-सतगुरु कँवल है सुख निधान । जहां मोरे लागा अछे ध्यान ॥ सोहंग तार अखण्ड डोर । बानी मुकता परगट सोर॥पानी पावै आद अनाद । ग्रह सिंगी सब गयो है बाद ॥ जलुवा मलुवा दुनियां चोर। ये सब परे हैं कालके डोर ॥ दावन कुत्ता दूत लबार । ध्यान छाडि बकते अपार ॥ अदल नाम चूरा मन ध्यान। ध्यान छाप बिन इष्टज्ञान । साहब कबीर कहें बसंत। ध्यान छाप बिन खेह पडंत ॥

वसंत ९५-सत सुकृत खेलें रितु बसंत । करो अनंद दुख मेटो संत ॥ जीवन सांच भल तबहीं होय । गुरुगम भेद लखपावे कोय ॥ लख चौरासीको कटे फंद । अमर करो मन छाडो दंद॥ सोई सोहागिन पियहिं चीन्ह । द्रिष्ट मांहि रहे अतिअधीन ॥ दरशन शोभा रहे समाय । नहिं बिछुरे लिये संग जाय॥ परष जान जब नाम लीन्ह ।

रतन पदारथ लेव भीन ॥ कहैं कवीर यह खरच थार। अजर अमर घर रहो निनार॥

वसंत ५६—सतगुरु खेले ऋतु बसंत। परम पुरुष जहां साध संत ॥ तीन लोकते भिन्न साज। सुनिये अनहद बाजे बाज ॥ कोट सूर्य जहां उगे अपार। बिरला जन कोई पावे पार ॥ कोट सरस्वति करहिं राग। कोट इंद्र मुन गावन लाग ॥ कोट कृष्ण कर जोरे हाथ। कोट विष्णु जहां नावे माथ ॥ कोट ब्रह्मा जहां पढे पुरान। कोट शंभु जहां धरे ध्यान॥ अखंड जोत जहां बरे अथाह। बिरला साधू पावे थाह ॥ नाना बिध जहां करहिं केल। ते वह लोके रहे मेल ॥ प्रथम बसंत एक राग कीन्ह। सतगुरु शब्द उचार लीन्ह ॥ गन गंध्रब मुनि गने न जाय। तहां प्रभु आप बिराजे आय ॥ कहें कवीर ऐसो मत हमार। पतित उधारन नाम सार ॥

वसंत ५७—चल हंसा सुख सागर घाट। तेरी हंसनी बैठी चितवे बाट ॥ सार शब्दमें जाय देख। अति सुंदर तहां अति बिशेष ॥ तहवां अमृत मोती होय। हंसा भोजन करे सोय ॥ अमृत नीर जो पिये अघाय। जन्म जन्मकी तिरषा जाय॥ आवागमनसे होय निचिंत। शब्द मांहि खेलै बसंत ॥ जहां अनहद बाजा अति सुहाय। सदा बसंत जह अछैछाय॥ षोडश सूरजके प्रमान। हंस एक उजियार जान ॥ श्वेत दीप जगमग प्रकास। पुहुप

बसंतकी महके बास ॥ स्तेत सिंगासन छत्र स्वेत । स्वेत वृछ तर हंस सेत ॥ केहि बिध हंस वा घर जाय । सार शब्दमें जाय समाय ॥ शब्द चाल चले शब्द मांह । ले पहुंचे धर्मदास बांह ॥ शब्द बिना नहिं पावे बाट। शब्द चूक परे औघट घाट ॥ चूके शब्द जम पकर लेइ । फिर नर हमको दोष देइ ॥ अपनी चूक जो समुझे नाहिं । ते नर अंध बिगोय जाहिं ॥ चेतहु तौ नर खोज लेहु । नातो फिर फिर धरहु देहु ॥ सत शब्दकी कर प्रतीत । भौजलते चलो निहचे जीत ॥ जो कोइ चाल नर चूक जाय । पंच अमीमें ध्यान लगाय ॥ सांची सुरत जो संग लेय । सागरमो पहुंचाय देय ॥ ऐसी रहन जो हंस होय । सुखसागर देखै सोय ॥ अमृत भोजन करे अहार । काया घर मैं कहों बिचार ॥ देखे दीपन दीपन हंस । तब नरको सब जाय संस ॥ सागर सुंदर अति गंभीर । सतसुकृत सो निर्मल शरीर ॥ हंस हंस झरे पुहुप अनंत । कहँ कवीर तहां करो बसंत ॥

वसंत ५८—सुखसागर जियरा कर अस्नान। जहां सुर नर मुनि नहिं पावैं ध्यान। बिन जल जहँवा उठे हिलोर । बिन परबत जहां कुहके मोर ॥ बिन सिंगी जहां सुनिये नाद । सत संगत पावे बड़े भाग ॥ बिनकर बाजा सुनिये ताल । परम पखावज अति रसाल ॥ बिन वग नटुवा नाचे नाच । बूझो संतो शब्द साच ॥ बिन नैनन देखो

अति निनार । संतो ऐसो मत हमार ॥ जोत बरे बिन बाती तेल। काह कहों कछु अगम खेल ॥ सुन रामानंद गुरु प्रसाद। निरंतर भावे सुख स्वाद ॥ आशा मेटके गहो ओट। साहेब कबीर दिल नाहीं खोट ॥

वसंत ५९–ऐसो दुरलभ जातहै सरीर। भजु अचिंत जेह लागो तीर ॥ गये बेनु बलि गये कंस। दुरजोधनके बुड़ो बंस ॥ पिरथु गये पृथवीके राव। त्रिविक्रम गये रहे न कांव ॥ छौ चकवे मंडलीके झार। अजहूं हो नल देखु विचार ॥ हनुमत कस्यप जनक बालि। ये सब छेकल जमके द्वारि ॥ गोपीचंद भल कीन्ह जोग। रावन मारेउ करत भोग ॥ जात देख नर सबहि जान। कहैं कबीर भजु सतनाम ॥

वसंत ६०–को कौन बिगूचे स्वामी मोर। ऐसे गर्भ प्रहारी नाम तोर ॥ हरिचंद समान नहिं दानी आनि। पुत्र सहित जिन बेचे रानि ॥ उन अपने मन लियो जान। अधम डोम घर भरो पान ॥ बलि बेनू बिधना अजै चंद। लंक दहन रावनको अंत ॥ सहस भुजा बन रहे ताहि। गये कौरव दल दुंद मांहि ॥ कौरव पांडव करन द्रोन। सतुवा मे के भये लीन ॥ जरासिंध ससिपाल मार। कंस नृपनिको दाप झार ॥ अबके दुबहियां करत रार। केते नृपति गये हाथ झार ॥ कहैं कबीर भूमियां करोर। कोको न गये कर मोर मोर ॥ हमरे कहलको ना पति-

वसंत ६२–मन माया खेलत बसंत । सुर नर मुनि जाको लहे न अंत ॥ काम क्रोध मन मिलहि अंग । लोभ मोह साजे सुगंध ॥ पिचकारी तृष्णा तरंग ॥ मनसा सीचे सकल रंग ॥ जोगी भीजे जोगध्यान । पंडित भीजे पढ पुरान ॥ सुरआदिक भीजे असुर झार । ब्रह्मादिक भीजे मनहिं हार ॥ मगन माया कोई बरे भाग । निस बासर गुरु सरन लाग ॥ अब नाहीं भाजनके छोर । कहें कबीर भीजे सोर बोर ॥

वसंत ६३–रसना पढि लेहु श्री बसन्त । पुनि जाइ परिहौ जमके अंत ॥ जो मेरु दंडपर डंक दीन्ह । सो अष्ट कमल परजारि लीन्ह ॥ तहं ब्रह्म अग्नि कीन्हो प्रकास । जहं अरध उरध बहे बतास ॥ तहं नौ नारी परिमल गांव । मिलि सखि पांच तहं देखन धाव ॥ जहं अनहद बाजा रहल पूर । तहं पुरुष बहत्तर खेलैं धूर ॥ तै माया देखि रहलि भूलि । जस वनस्पति बन रहल फूल ॥ कह कवीर यह हरिके दास । फगुआ मांगै बैकुंठ बास ॥

वसंत ६४–आयउ मेहतर मिलन तोहि । रितु वसंत पहिरावहु मोहि । लम्बी पुरिया पाई झीन । सूत पुराना खुंटी तीनि ॥ सर लागे तीन सौ साठ । कसनी बहत्तर लागे गांठ ॥ खुर खुर खुर चालै नारि ॥ बैठी जोलानि पलथी मारि ॥ ऊपर नचनी नचि करै कोड़ ।

करिगह मां दुइ चलहीं गोड ॥ पांच पचीसौ दशौ द्वार । सखी पांच तहं रची धमार ॥ रंग बिरंगी पहिरैं चीर । हरिके चरन धरि गाव कबीर ॥

वसंत ६५-बुढिया हंसि कह मैं नितहीं बारि । मोहि अस तरुनी कहु कौन नारि ॥ दांत गयल मोर पान खात । केस गयल मोर गँग नहात ॥ नयन गैल मोर काजल देत । बैस गैल पर पुरुष लेत ॥ जान पुरुषवा मोर अहार । अनजानेका करूं सिंगार ॥ कह कबीर बुढिया आनन्द गाय । पूत भरतारहि बैठि खाय ॥६५॥

वसंत ६६-बूझहु पण्डित कौनि नारि । कोहु न ब्याहल रहलि कुमारि ॥ सब देवन मिलि हरिहीं दीन । तेहि चारियु जुग हरि संग लीन ॥ प्रथमहिं पद्मिनि रूप आय । है सांपिन जग खेद खाय ॥ ईश्वर युवति वै बार नाह । अति तेज तिया है रैनि ताह ॥ कह कबीर सब जग पियारि । अपन बल कवै रहलि मारि ॥

वसंत ६७-माइ मोर मनसा अति सुजान । धन्धा कुटि कुटि करत विहान ॥ बडे भोर उठि आंगन बाढु । बडी खांचलै गोबर काढु ॥ बासी भात मनुष लै खाय । बड़घैला लै पानी जाय ॥ अपने सैयां बांधी पाट । लै रे बेचौं हाटे हाट ॥ कह कबीर ये हरिके काज । जोइयाके ढिगरे कौन है लाज ॥

वसंत ६८—घरहीमें बाबुल बाढी रारि। अंग उठि उठि लागे चपल नारि। वह बडी जाके पांच हाथ। तेहि पचहुंनके पचीस साथ॥ पचीस बतावैं और और। वे और बतावें कई ठौर॥ सो अन्तर मध्ये अन्त लेइ। झक झोरी झेला जिव देइ॥ सब आपन आपन चाहैं भोग। कहु कैसे परि है कुशल जोग॥ विवेक विचार न करे कोइ। सब खल्क तमासा देखे सोइ॥ मुख फारि हसैं सब राव रंक। तेहि धरन न पावे एक अंक॥ नियरे बतावे खोजै दूरि। चहुंदिसि बागुलि रहल पूरि॥ है लच्छ अहेरी एक जीव। ताते पुकारे पीव पीव॥ अबकी बारि जो होइ चुकाव। कह कबीर ताकी पूरी दाव॥

वसंत ६९—कर पल्लवके बल खेलै नारि। पंडित होय सो लेइ विचारि॥ कपडा न पहिरे रहै उघारि। निरजीव सो धन अति पियारि॥ उलटी पलटी बाजै तार। काहुहि मारे काहु उबार॥ कह कबीर दासनके दास। काहुहि सुखदे काहु निरास॥

वसंत ७०—सिव कासी कैसी भई तुम्हार। अजहूं हो सिव देखु विचार॥ चोआ चन्दन अगर पान। घर घर स्मृति होय पुरान॥ बहु विधि भवनन लागैं भोग। अस नगर कोलाहल करते लोग॥ बहु बिधि परजा निरभय तोर। तेहिकारन चित्त है ढीठ मोर॥ हमरे बालकको

यहै ज्ञान । तोहरा को समुझावे आन ॥ जग जो जेहि सों मन रहल लाय । सो जिवके मरे कहु कहां समाय ॥ तहं जो कछु जाकर होइ अकाज । है ताहि दोष नहिं साहेब लाज ॥ हर हर्षित हो तब कहल भेव । जहं हमहीं हैं तहं दूसर केव ॥ दिना चार मन धरहू धीर ॥ जस देखो तस कहहु कबीर ।

---

## होरी प्रारम्भ ।

होरी १-जिनको सत्संगति प्यारी । अहो खेलत वसंत सुखकारी ॥ टेक ॥ कथा अतर सरधा कस्तूरी, जतसत केशरलीनी । भाव भक्तिकी गुलाल वनायी, भरि भरि सतगुरु दीनी ॥ ज्ञान भक्ति वैराग दयानिधि, मेलि अरगजा कीनो ॥ सील स्वातिको वन्यो कुमकुमा, ख्याल वन्यो रंग भीनो ॥ अनभय अचल भयो अभि अंतर, थकत भयो सब गाता ॥ भयो ज्ञान देह सुधि विसरी, सुनी खेलकी बाता ॥ ऐसो सतगुरु ख्याल बतावे, जो कोई शरनै आवे ॥ कहै कबीर ऐसो संत विवेकी, क्यों न परम पद पावे ॥

होरी २-काया नगर मंझार, संत खेले होरी । गावत राग सरस सुर सोहे, अति आनन्द भयोरी ॥ टेक ॥ चंदन सील सुगन्ध अरगजा केसरि करनी गहरी ॥

* * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * * *

अगर अगम सुगम करि लिन्हाँ अभि उर अंतर धारी ॥
प्रीति फुलेल गुलाल ज्ञान करि, लेऊ जुगति भरि भोरी ॥
चोवा चित चेतन प्रकासा, आवत वास घनेरी ॥
त्रिकुटि महलमें बाजा बाजे, जग मग जोति उजेरी ॥
सहज रंग रंचि रह्यो सकल तन, छूटत नाहिं करोरी ॥
अनहद बाजा बजै मधुर धुनि, विन करताल तंबूरी ॥
बिन रसना जहां राग छतीसों, होत महां निधि पूरी ॥
सुन्न महल यक रंग मजलिस, कबहूं टरत न टारी ॥
कहै कवीर समझि लेहो संतो, निरगुन कह्यो सदारी ॥

होरी ३—तुम होय निःशंक खेलो सम्हारी। मोह महा बल फंद रचो है पकडत माया रसरी डारि ॥ टेक ॥ पाप पुन्य दोऊ मिलि खेलैं, कुबुद्धि सखा सब लिये लारि ॥ विसरावत सबहीनकी सुधि बुद्धि, काम क्रोधको गुलाल डारि ॥ डिम्भ कपट मृदंग डफ वीना, करम भरम बाजे करतार। अधर्म धर्म गावे राग रागिनी, मोहलियो सगरो संसार ॥ आसा मनसा संग सहेली, बडी अपरबल तीनऊँ नारी। वास लिये धावत जितजित तै, सुर नर मुनि डारे पछारि ॥ त्रिविधि तापकी कठिन ठगौरी, अपनी अपनी करत रारि। नाचत मन संग लिये इंद्रीयन, उपजावत अति बिषय विकार ॥ आये विवेक ज्ञान संग लिये, सत शबद गावे धमारि। शील संतोष भरि प्रेम पिचकारी, मदन मस्त

को दियो बिगारि ॥ पांच पचीस खेलै निरभय होय, हिल मिलिके ये नौ सारी । रटना लगि सबे ये गावे, प्रेम आनंद होय मंगलचारी ॥ मिलि सतगुरू जहां होरी खेलैं, आवा गवनको दुख निवारि । कहैं कबीर छाँडि भवसागर, बहुरि न आवे या संसार ॥

होरी ४—मन राजा खेलन चले रंग होरी हो । काया नगर मंझार राम रंग होरी हो ॥ टेक ॥ पांच पचीस मिलि खेलहिं रंग होरी हो ॥ मन राजा सरदार राम रंग होरी हो ॥ इंगला पिंगला सुषुमना रंग होरी हो ॥ तिरवेनीके घाट राम रंग होरी हो ॥ ग्यान गली ठाढे भये रंग होरी हो ॥ सुरति निरति दोउलार राम रंग होरी हो ॥ सील छमा छिडकत फिरै रंग होरी हो ॥ बाढ्यो रंग अपार राम रंग होरी हो ॥ मेर डंड छाजे चढो रंग होरी हो ॥ उडता प्रेम गुलाल राम रंग होरी हो ॥ अनहद बाजा बाजई बाजहिं रंग होरी हो ॥ निरति करें सबनारि राम रंग होरी हो ॥ दास कवीर जहां खेलहि रंग होरी हो ॥ अविनाशीके संग राम रंग होरी हो ॥

होरी ५—ऐसे खेलत फाग सबे नारी । जाके हाथ लकुटिया मुखगारी ॥ टेक ॥ ग्रह ग्रहते निकसी वन सुन्दर । भांति भांति पहरे सारी ॥ अबीर गुलाल लिये भरि झोरी । मिलन चली पियाकी प्यारी ॥ अपने अपने

झुंडन मिलिके । गावत प्रिय तरुन बारी ॥ पहुँची जाय जहां हरि मन्दिर । बर बैठे मूरति धारी ॥ एकनि चंदन केसरि छिडके । एकनि मुट्ठी भरि भरि डारी ॥ एक सन्मुख ठाढी कर जोडे । एकनि हाथ चंवर ढारी ॥ को चितवै को बोलै कासों । निर्जीव रूप कहुं कारी ॥ निहुरि निहुरि सब पांव पडत हैं । यह देखो अचरज भारी । सब सहेली बहुरि चली घर । कोई न संग रही प्यारी ॥ आपुनैंहीं भूले नर नारी । प्रान पियाकी गति न्यारी ॥ यह सब भरम छाडिदे बोरी । अब जिन जन्म जुवा हारी ॥ कहैं कबीर अपन पौ चीन्हो । सुख सागरमें सुखकारी ॥

होरी ६–जग होरी मच रही है भारी । तुम संतो खेलो संसारी ॥टेक॥ जड़ चैतन दोऊ रूप बनाये एक कनक दूजी नारी ॥ पांच पचीस संग लिये अबला हँसि हँसि मिलि गावें गारी ॥ डिम्भ कपट लिये करमें डफ डूबड डूँबडकी तारी ॥ त्रिगुन ताल तबला बाजे आसा तृष्ना गति न्यारी ॥ पाप पुन्य दोऊ भरि पिचकारी छूटत है बारंबारी ॥ सन्मुख होय कारि जोवब खेले, ताके छींट लगी कारी । चौब चंदन अबीर अरगजा माथकी गारभरी ॥ षट दरसन पाखण्ड छीयानवे पकडि किये सब वेगारी ॥ कुमति गुलाल डारि मुख मीडै काम कला पुटरी मारी ॥ सुर नर मुनिजन पीर औलिया

भजि रही सब संसारी ॥ चतुरा फगुवा देदे छुटे मूरखको लागे प्यारी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू निर्गुन ग्यान गली न्यारी ॥

होरी ७–ऐसे खेलै संत सदा होरी । जहां दुंद उपाधि नहीं कोरी ॥ टेक ॥ ताल मूल सुर साधि बाट घर। पश्चिम दिशा चढि गहि डोरी ॥ खुलै कपाट सहज घर पावों । सुंदर रूप सुरति गोरी ॥ जहां चतुर सखी नित गावहिं । बाजत तूर देत तारी ॥ सुर नर मुनि सब करत कौतूहल । ग्यान गुलाल उड़त भारी ॥ कोइ निर्गुन कोइ सरगुन राचे । आप आप बिसरे सबही ॥ कहैं कबीर चेत नर प्रानी । शब्द सरूप मिलै अबहीं ॥

होरी ८–म्हारेको खेलै ऐसी होरी । जामें आवा गवनकी है डोरी ॥ टेक॥ श्रवन न सुनयो नैन नहीं देख्यो । पीया पीया लागिरही लौरी ॥ पंथ निहारत जनम सिरानो। प्रगट मिल्यो नहीं चोरी ॥ जा कारन गृह तजिकै निकसी । लोक लाज कुलकी तोडी ॥ चोवा चंदन अगर कुमकुमा का पर डारों रंग रोरी ॥ येकन तो मृग छाला वोढी यकन गुदरी अरु झोरी ॥ येकन बहु विधि स्वांग बनायी । लोगन लागी ठगौरी ॥ जगन्नाथ बद्री रामेश्वर। देश देशान्तर सब दौरी ॥ अरसठ तीरथ पृथ्वी प्रदक्षिना । पुहकर हूमें लट बौरी ॥ वेद पुरान

भागवत गीता। चारिउ वरन ढंढोरी॥ कहैं कबीर सद्गुरु दया बिन। भरम न मिटि है ये बौरी॥

होरी ९—आवो पीया संग खेलो होरी। सुरति शब्द सो ओ जोरी॥ टेक॥ नाना रंग सबै बनि आवौ। ग्यान गुलाल भरे झोरी॥ चित चंदन चरचा मन लावौ। केसरि भरि पिचकारी॥ प्रेम प्रीति प्रकास परम गुरु सत सुकृत वर पायोरी॥ तब मन थिर भयो थिति पाई। आदि अंत दीप लायोरी। तत पद सार संगति सतगुरुकी। कहैं कबीर सम आयोरी॥

होरी १०—आओ पीया संग खेलो होरी। सुमति सखी सुनि सुनि दौरी॥ टे०॥ करम जंजीर काटि सत-गुरु सब। जरा मरनको गयो भौरी॥ सत संतोष शील मति थिर होय। खेलो फाग विचारोरी॥ अग्र अमी अबीर ले आवो। कामक्रोध तजि दोउरी॥ भाव भक्ति अरु सही सलामति। सो पद पायो नाम उधोरी सुख आनंद सब होरी खेलो। काल कठन भरम भयो दूरी॥ कुलकौं त्याग मान सब तोरी। कहैं कबीर पिया संग होरी॥

होरी ११—हरि होरि हो हरि होरी। हरि होरि मैं हरि होरी॥ कोई साधु संत खेलैं होरी। सतनामको झांड़ो रोप्यौ धरम धजा गहिं जोरी॥ टेक॥ बाजत ताल मृदंग झांझि डफ। नाचत है तन मन तोरी॥ वंसी

बीन अनहद धुनि बाजै ॥ जसि मति सुमति नाचे गोरी। चोवा चंदन और कुंम कुमा । अबीर लिये भरि भरि झोरी । उडत गुलाल विसाल लाल रंग । रंग रही गगन् गरक गोरी ॥ जब अंतर पट गांठि दइही । अब पायो है पट जोरी ॥ कहैं कवीर अखंडित फगुवा । जुग जुग पावो मति मोरी ॥

होरी १२-सतगुरू संग रचि है धमारि होरी मैं खेलूंगी ॥ टेक ॥ साधु संत मिलि मंगल गावें । लगी शब्दकी मार ॥ उडत गुलाल अरुन भयो अंबर। प्रेमकी परत फुहार ॥ चोवा चंदन और अरगजा। पिचकारिनकी मार ॥ दास कवीर स्वामी निरगुन गावे। संतो लेहु बिचार ॥

होरी १३-मेरे सतगुरू दियो बताय मारग नामका। नाम नाम करि जाये पहुँच । पाय अभय पद धामका ॥ टेक ॥ वा मारग मोहि ले चलि सजनी । जहां पियाको देस ॥ परसों चरन कमल नागरके । मेरो रहै सुहाग हमेश ॥ आयो फाग वसंत सखीरी । फूले आंब पलास ॥ कली कली कलियाँ खुली । सब संतन भयो विलास पांच पटै लनि खेलन निकसी । सखी पचीसों साथ ॥ खेलै फाग वसंत पांच मिलि । अपने अपने हाथ ॥ ज्ञान गुलाल करनी करो । अन भौ करो अबीर ॥ अमृत पिचकारी भरो प्रेमसे । छिडको सकल शरीर ॥ मैं हारी

पीया मारग पायो । ले सतगुरुकी रीति ॥ कहैं कवीर सतलोक पहुँचे । साहेबकी प्रतीति ॥

होरी १४–प्रीतम आइया हो मेरे सतगुरु दीन दयाल ॥ टेक ॥ बन्दी छोड मुकतिके दाता । परम सनेही नाम ॥ साधु संतसो अति अभिलाषा सब विधि पूरन काम ॥ जैसे चातक स्वाति बुन्दकों । रटत है आठों जाम ॥ जाकी सुरति लगी सतगुरूसे । विसरी सुखके धाम ॥ आनंद मंगलचार परम सुख । अमर करत है जीव ॥ सुमिरनदे सतलोक पठाये । ऐसे समरथ पीव ॥ चरन कमल सतगुरुकी सेवा । मन चित्तदे अनुराग ॥ कहै कबीर ऐसी होरी खेलै । जाके पूरन भाग ॥

होरी १५–ये होरी खेलूंगी मेरे साहेब आवेंगे आज ॥ हंस उबारन जीव निसतारन अधम उधारन नाम ॥ ॥ टेक ॥ करनी कलश सेजोय सकल विधि । प्रीति पात्रदे डारि ॥ चरण प्रछालि चरणामृत लेऊँ । मनकी मनी उतारि ॥ तन मन धन सब अरपन करिहुँ बहु विधि आरति साजि ॥ प्रेम मगन होय मंगल गाऊँ विसरी कुलकी लाज ॥ धोखा धूरि उड़ाय शरीरते ज्ञान गुलाल प्रकास ॥ पारम पान लेऊं प्रीतमसों मेटि दूसरी आस ॥ दया धरमकी केसरि घोरौं भाव भक्ति पिचकार ॥ सत सुकृत दोउ अबीर अरगजा देऊँ पिया पे डार ॥ साहेब कबीर मोहि मिले सतगुरु

फगुवा दीनों है नाम ॥ आवागमनकी मिटि कलपना पाये सुखकी धाम ॥

होरी १६-होरी होरी रंग बोरी बिरहा झकोरि मारी ॥ टेक ॥ चौवा चाल अरगजा महनी करनी केसर घोरि ॥ प्रेम प्रीतिसों भरि पिचकारी रूम रूम रंगी सारी ॥ हमारी ॥ बाजत ताल मृदंग बिना कर बीना शब्द रसाली ॥ खेलत है कोइ सुघर खेलैया योग जुगति लगि तारी ॥ हमारी ॥ इंगला पिंगला रास रच्यो है सुखमनि बाट बुहारी॥सुरति निरति दोउ नाचन लागी बढ्यो रंग रति अपारी ॥ मैं वारी ॥ या विधि होरी खेली संतो या होरी दिन थोरी ॥ गुरू कवीर आतम परमातम खेलत बहियाँ जोरी ॥ मैं वारी ॥

होरी १७-होरी खेलन न जाने यह मन निपट अनाडी ॥ टेक ॥ काम क्रोध मद लोभ मोहकी सिर धरि गागर भारी ॥ उठी पैंठ सौदागर आयो का करै बनिज व्यापारी ॥ येक भरै येक भरि भरि लै आवें दूजे भरनकी बारी ॥ पियाकी सुहागिनी पिया संग खेलै । और सब भई न्यारी ॥ या घट भीतर पांच मवासी और-पचीसों नारी ॥ इन्हें मारि होरी खेलैं नियारे काज सुधर जाय सारी ॥ छमा दयाको अबीर बनायो सुमतिकी भरि लई झोरी ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो या विधि खेलो होरी ॥

होरी १८—का संग होरी खेलिये हो वालम परदेसुवा ॥ टे० ॥ आई ऋतु वसंतकी हो फूलन लागे केसुवा ॥ वसन रंगीले पहरन लागे विरहिन डारत आंसुवा ॥ भरि गये ताल तलैया सागर बोलन लागे देसुवा ॥ उमंगी नदी नाव कहां पै कौनी विधि लिखौं संदेसुवा ॥ वहांके गये बहुरे नहिं हो कैसो है वा देसुवा ॥ आवत जात लखे नहिं कोई या जिय बड अन्देसुवा ॥ बालापनकी अबलौं निबाही अबतो निबहै कैसुवा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो मिलि सतगुरू उपदेसुवा ॥

होरी १९—मन लागि रह्यो होरी सत्सुकृत नाम दुलारे सो ॥ टेक ॥ आवागवन मिटै जब प्रानी जब छुटै यम द्वारे सो ॥ एक नाम विनु पार न पैहो हिन्दू तुरुक नर नारी सों । स्वामा सार तार निसिवासर उठत घोर झनकारे सो ॥ सतगुरू पद प्रतीत भई है अगर सुहंगम मारे सो ॥ सतगुरू दरश परस पद पइहै मिलि सुकृत सठि हारेसौं । कालके करम जाल सब छुटै-मिलि कबीर मत वारे सो ॥

होरी २०—खेलत फाग व संत रैन दिन सहज सून्यमें होरी ॥ टेक ॥ सतगुरू दया साधुकी संगति त्रिकुटी महल रचोरी ॥ गुंजत भंवर कोकिला बोले सोहं सोहं सोरी ॥ बाजन ताल मृदंग झाँझि अगम निगमकी झोरी ॥ मानों कोटि भान ससि उगे जहां मनुवां विलगोरी ॥

सुरति सुहागिनि मनलिये मनुवां दिये सुमतिकी खोरी॥ कहें कवीर मगन भई विरहिनि ब्रह्म ज्ञान झक झोरी॥

होरी २१–हमारे को खेले ऐसी होरी, जामें आवागवन लागी डोरी॥ श्रवण न सुनो नैन नहिं देखो, पिया पिय लागी लौरी। पंथ निहारत जनम सिरानो, प्रगट मिले नहिं चोरी॥ जा कारन तुम गृह तज निकसे, लोक लाज कुल तोरी। षट दरशन मिल स्वांग बनाये, लोगन लाग ठगोरी॥ अंग भभूत गरे मृगछाला, कोइ लाये गुदर भर झोरी। चोवा चंदन अबीर अरगजा, कपड़ा दे रंग गेरी॥ जगन्नाथ बद्री रामेश्वर, देश देशान्तर दौरी। अरसट तीरथ पृथी पैकरमा, पोहकर मैं लट बोरी॥ वेद प्रमान भागवत गीता, चारों बरन टटोरी। कहें कवीर सतगुरुके दया बिन, भरम मिटे नहिं भौरी॥

होरी २२–कैसी मजा करडारी, ऐसे होरीके खिलारी॥ भारी भ्रमकी सारी फारी, मानकी बेसर तोरी। लोभ मोहके कंकन फोरी, प्रेमके रंगमें बोरी॥ ज्ञान गुलाल परो नैननमें, देखत नहिं जग सोरी। त्रिगुन बंद अंगिया टूटे, शब्द कुमकुमा मोरी॥ नित्या नित्य देत है गारी, लाज सरम सब तारी। एकहि भाव बिलास करत है, कौन पुरुष को नारी॥ पूरन प्रेमहि भूलगयो है, ऐसी न देख धमारी। साहेब कवीर परख रंग रंगिये, परखके कीन्हे न्यारी॥

होरी २३ - ऐसी होरी खेलो, जामें हुरमत लाज रहोरी ॥ शील सिंगार करो मेरी सजनी, धीरज मांग भरोरी । ज्ञान गुलाल उड़ाव सखीरी, सुमता फेंट गहोरी ॥ होत धमार नगर तेरेमें, अनहद बेन बजोरी । गुरुसे फगुवा मांग सखीरी, हृदया सत्त करोरी ॥ संस्कृत भाषा पढ पढ आये, ज्ञानी लोग कहोरी । मोह मायामें बहि-गये सजनी, जमके फंद परोरी ॥ खेती बनिज गऊ औ बाछा, चेला शिष्य करोरी । नाव लगी है पार लगनको, कालीदहमें परोरी ॥ मान मनीकी मटकी सिरपर, नाहक बोझ मरोरी । मटकी पटक मिलो सतगुरु सो, साहब कबीर कहोरी ॥

होरी २४–दृग अंजन नैन सँवार, काहूको मारोंगी ॥ ॥ टेक ॥ भौंह बनी बरछीकी नोके, नैन बने खरसान बिरहके बान नैनसे छूटे, गोसा चढी कमान ॥ चंद्रबदन मृगलोचनी माया, कर सोरा सिंगार । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा, इनको कीन्ही यार ॥ नरसे नार कियो नारदको पुत्रसे साठ पदार । शृंगीरिषि पारासर देवा, इनको कीन्हा ख्वार ॥ जीव उबारन सतगुरु आये, तेरो लगे नहि लार । कहैं कबीर सुनों भाई साधू, इनते रहो हुशियार ॥

होरी २५–ऐसा रंग बनाया, मेरे नैनोंमें समाया ॥टेक॥ पहिला रंग नबीजीको आया, जिन उमंद बगसाया। अलीजीके नाम रौशन दुनियांमें, जीव जीव कलमा पढाया ॥ दीन उनहीने बनाया ॥ दुसरा रंग सोहे हमं नैनको, जिनोंने सहादत पाया ॥ वे रनसूर लडे रन भीतर, सन्मुख सीस कटाया ॥ शहर कर्बलेका बसाया। तिसरा रंग सोहे पंजतनका, हूरे मंगल गाया । सिर सेहरा मुख मकना बिराजे, नूरके छत्र फिराया ॥ हाथ कंगन बंधवाया॥ चौथा रंग रंगीले साहबके, रंग सबके मन भाया। औलिया अंबिया गौस कुतब, या सब मिल रंग बनाया॥ ध्यान मौलासे लगाया ॥

होरी २६–मेरे साहब आवन हार, होरी खेलोंगी॥ करनीके कलस संजोय सकल बिध प्रीत पांवडे डार। चरन पखार चरनामृत लेहों, मनकी मनी उतार ॥ तन मन धन सब अरपन करिहों, बहु बिध आरती साज। प्रेम मगन होय मंगल गावो, बिसरी कुलकी लाज॥ धोखा धूर उडाव शरीरसो, ज्ञान गुलाल प्रकास। पारस पान लेवे सतगुरु सो, मेट दूसरी आस ॥ दया धर्म तन केशर घोरो, भाव भगति पिचकार। सत सुकृत अबीर अरगजा, देउँगी पिया पर डार ॥ साहब कबीर मिले मोहि सतगुरु, फगुवा दीन्हो नाम । आवागमनकी मेट कल्पना, पायो आनन्द धाम ॥

होरी ८–मेरे सतगुरु दीनदयाल, प्रीतम आये हो ॥ टेक ॥ हंस उबारन जिव निस्तारन, अधम उधारन नाम । बंदीछोर मुक्तिके दाता, परम सनेही नाम ॥ साधु संत औ अति अभिलाषा, सब विधि पूरण काम । जैसे चात्रिक स्वातिबूंदको, रटत है आठों जाम ॥ जिनकी सुरत लगी सतगुरु सों, बिसरे सुख ग्रह धाम । सतगुरु दया करत जीवन पर, देकर अविचल बिश्राम ॥ आनंद मंगल उचार परम सुख, अमर करत है जीव । सुमिरन दे सतलोक पठाये, ऐसे समरथ पीव ॥ चरन कमल सतगुरुके सेऊं, मन चित दे अनुराग । कहें कवीर ऐसी होरी खेले, जाके पूरन भाग ॥

होरी ९–होरी खेलत लालनके संग प्यारी, हम देखी मुसक्यान ॥ टेक ॥ ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी, प्रेम प्रीति पिचकार । छमा केशर ले छिरकन आई, सुरति-सोहागिन अविगतनार ॥ पांच सखी मिल मंगल गावें, सुषमन थार सँवार । चंद सूर दोउ दीपक बारें, ब्रह्म जोत उनमुन उजियार ॥ मैं मेरे पियको नितउठ चाहों, जो पिया मोहिको चाहि । आवागमनके फेरे मिटावे, भौसागरमें बहुर न आहि ॥ शीलकी सेज सँवार महलमें, लौका सिंगार करोरी । साहब कबीर सुरत संजोग, ले, संतलोक गये रसभोगी ॥

होरी १०-कायानगरकी पौररी, मन खेलत होरी ॥टेक॥

सुरत ज्ञान डफ बाजन लागे, अनहद्के घनघोर री। पांच पचीस बनिता बनि आयी, तेऊ रंगमें बोररी ॥ अबीर गुलाल हेत कर सजनी, प्रेमकी चाचर जोररी। तन नारी औ मन है नारायन, प्रीतम अंग मरोररी ॥ खोल घुंघट सन्मुख होय खेलो, होनी होय सो होयरी। कहैं कबीर औसर नहिं पैहो, फगुवा लेउ न बोररी ॥

होरी ११-ऐसे खेलत फाग बसंत, निरंजन सहज सुन्नमें होरी ॥टेक॥ बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, अगम निगमकी डोरी। मन एक भँवर कोकिला गुंजे, सोहम् सोहम सोरी ॥ अष्टकमल दल भीतर मनुवां, त्रिकुटी महल रचोरी। कोटि भानु जगमग उजियारो, जहँ मनुवां बिलमोरी ॥ मानसरोवर हंसा डोलै, अति घन पुहुप फुलोरी। जरा मरनकी संसै मेटो, जाति बरन बिसरोरी ॥ सुरति सोहागिन संग लिये मनुवां, हाथ सुमतिकी डोरी। कहैं कबीर मगन भई बिरहिन, ब्रह्म जलमें झकझोरी ॥

होरी १२-तुम संतो खेलो संभारी, जग या होरी मचरही भौभारी ॥ टेक ॥ जड चेतन दो रूप बनाये, एक कनक दूजी नारी। पांच पचीस लिये संग अबला, हंत हंस मिल गावें गारी ॥ दुरमति डिंभ गहे करमें डफ, हों बड हों बड दे तारी। त्रिगुन तार तमूरा बाजे, आशा तृष्णा गत न्यारी ॥ चोवा चंदन अबीर अरगजा, मायाकी गागर भारी। षटदरसन पाखंड छानवे, पकर किये सब बेगारी ॥ लोभ मोह दोउ भर पिचकारी, छूटत है बा

बारी । जो कोइ सनमुख होयके खेलै, उनको छींट लगी कारी ॥ कुमति गुलाल डार मुख मींडे, काम कला पुटरी मारी। सुर नर मुनि औ पीर औलिया, भीज रहे सब संसारी ॥ चतुरन फगुवा दे दे छूटे, मूरखको लगी प्यारी । कहैं कवीर सुनो भाई साधू, निरगुन ज्ञान गली न्यारी ॥

होरी १३–ऐसी खेलत फाग सबै नारी, जाके हाथ लकुट मुखमें गारी ॥ टेक ॥ ग्रिह ग्रिह ते निकसीं बनि सुंदरि, भांतिन भांति पहिर सारी । अबिर गुलाल लिये भरझोरी मिलन चलीं पियको प्यारी ॥ अपने अपने झुंडसों निकसीं, मावत तरुन ब्रिध बारी । बैठीं जाय हरिमंदिरमें जहां, बैठे वर मूरत धारी ॥ एकन मूठी चोवा चंदन चरचे, एकन मूठी भर मारी ॥ एक खडे सनमुख कर जोरे, एकन हाथ चँवर ढारी ॥ को बोलेको चितवे कासों, निरजीव रूप कहो कारी । निठुर निठुरके पांय परत हैं, ये देखो अचरज भारी ॥ सबै सहेलरी मुरक चली हैं, कोई न संग गई प्यारी । आपहि नर नारी होय बैठे, प्रान पियाकी गत न्यारी ॥ ये सब भर्म छोड दे बौरी, अबकी जन्म जुवा हारी । कहैं कवीर अपनपौ खोजो, सुखसागर सुखकी क्यारी ॥

होरी १४–अब कहां जात बेदरदा हो, मोपे गरदा झारके ॥ टेक ॥ आये बसंत सबै बन फूले, बन बन होगये जरदा । जबसे लागी बसंत पंचमी, सब बन होगये मरदा। लोक लाज कुल कान बिसरगई, अंदर खुलगई परदा ॥

चलोरी सखी मिल चौसर खेलें, पासा परगये नरदा ॥ कहे कबीर सुनो भाई साधू, गुरु चरननकी सरधा ॥

होरी १५-जग या दुई खेलत होरी, बनी हंसनकी जोरी ॥ टेक ॥ सतगुरु तो सतलोकसे आये, बांधोंमें फाग मचोरी । धरमदास उठि चरनन लागे, ये दोई मेल रहोरी ॥ सो तो नहिं जान कहोरी-जगयादुइ-गुरू शिष्य मिल होरी खेलें, संत खेलें चहुं ओरी । प्रीति परस्पर सांची कहिये, ज्ञान ग्रंथ गठजोरी ॥ सो तो सुरझावत कोरी-जगयादुइ-धर्मदास आमिन समुझावे, सब मिल चरन गहोरी । बडे भागसे सतगुरु आये, सब मिल चरन परोरी ॥ यामें कछु नाहिन खोरी-जगयादुइ-कहैं कबीर सुनो भाई साधू, जीवनभाग जगोरी । नाम पान परवाना पाये, फगुवा मिलो भरझोरी ॥ जनमसो तिनुका तोरी-जगयादुइ बोलत होरी ॥

होरी १६-रंग खेलत फाग सुघर नारी, हाथ सुमति लिये पिचकारी ॥ टेक ॥ पांच पचीस सखी संग निकसीं, सुक्रित रूप पहिर सारी । धीरज अंजन सीमाकी बेंदी, शील-सिंदूर मांग भरी ॥ बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, सब मिल गावें मंगल चारी । ज्ञान गुलाल अनंद अर-गजा, सहजे अबीर उड़त भारी ॥ दया धरमको केशर घोरी, प्रेम प्रीति छुटे पिचकारी । शब्द छडी जबही कर लीन्हें, समुझे संत पर जाय मारी ॥ सुंदर फाग खेले चेतन सों, एक महलमें पिय प्यारी । कहैं कबीर छबि कहँ लग बरनो, सुमतिपर कोटिन मुकता वारी ॥

होरी १७—रितु फागुन नियरानी, कोई पियाको मिलावो ॥टेक॥ सोई सुंदर जाके पियाको बरत है, सो पियके मन मानी। खेलत फाग अंग नहिं मारे, सतगुरु सों मनठानी ॥ पियका रूप कहांलग बरनो, पियके रूप लुभानी। सुर नर मुनि जाको ध्यान धरत हैं, सो संतन मिल जानी॥ एकहि खेल गई ग्रह अपने, एकहि कुल उरझानी। एकहि नाम बिना डहकावे, हो रही ऐंचातानी॥ तुम जिन जानो एही फाग है, ये कछु अकथ कहानी। कहें कबीर सुनो भाई साधू, बूझे बिरला ज्ञानी॥

होरी १८—या मन निपट अनारी, होरी खेलन न जाने॥ ॥टेक॥ काम क्रोध औ लोभ मोहकी, सिर पर गठरी भारी॥ या नगरीमें पांच मवासी, और पचीसों नारी॥ इन्हें मार होरी खेलो पिया संग, बात सुधर जाय सारी॥ सखी सहेली होरी खेऊँ पिया संग, कुमति सखी रहु न्यारी॥ कहें कबीर ऐसी होरी खेलो, हाथ सुमति लिये पिचकारी॥

होरी १९—गगन मंडल उरझानी, नित फाग मची है॥ ॥ टेक ॥ ज्ञान गुलाल अबीर अरगजा, सखियां ले ले धांई। उमँग उमँग रंग डार पिया पर, फगुवा देव बढाई॥ फगुवा नाम मिले मोहिं सतगुरु, तनकी तपन बुझाई। शब्द डार जहां अगर उड़त है, शोभा बरनि न जाई॥ गगन मंडलमें होरी मची है, गुरुगम झर लख पाई॥ कहें कबीर मगन भई बिरहिनि, आवागवन नसाई॥

होरी २०—ऐसे नाम उजागर, होरी खेलन बर आये ॥ ॥ टेक ॥ कासीमें सतगुरु प्रगट भये हैं, नीरूके गृह आवे । राम नंदके शिष्य भये हैं, निरगुन पंथ चलाये ॥ कथ निरगुन निज नाम अभय पद, सुन पंडित रिसियाये । षटदरसन मिल बादको आये, जीत न काहू पाये ॥ एक दिना सब प्रपंच बहु कीन्हें, नारद आन लदाये । सबे लुटाय कछू नहीं राखी, लीन्हें साधु बुलाये ॥ कपड़ा बुने बेंचले आवें, तामें सबको देई । लाख टका कोई आन चढावे, ना काहूको लेई ॥ साह सिकंदर परचे लीन्हा, करामात दई तीन्ह । कासी तज प्रभु मगहर आये, तब कछु चितवन कीन्ह ॥ जलमें बोर अगिनमें डारे, बिनशत नाहिं शरीर । मस्ता हाथी आन झुकाये, निरभय सत्यकवीर ॥

होरी २१—बीतो जात बहार, होरी खेलन आई ॥ टेक ॥ पांच पचीस बनिता बन आईं, खेलत धूम घमार । अपन पिया संग होरी खेलो, मेट सकल भ्रम जार ॥ आतम रंग सुरंग बनाये, प्रेम प्रीति पिचकार । कहैं कवीर ऐसी होरी खेलो, आवागमन निवार ॥

होरी २२—होरी खेलन तो जाग सखीरी, फिर ऐसा दाव न पाइये ॥ टेक ॥ मनको तार बिरहमिरदंग, बाजत हरिगुन गाइये ॥ तन कर मटका मन कर केशर, शीलको रंग जमाइये ॥ चोवा चंदन अबीर अरगजा, सांचेको टीको लाइये ॥ जपकर मंजन तपकर संजम, दरसन फगुवा पाईये ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, नाम पदारथ धाइये ॥

होरी २३—अपने पिया संग होरी खेलो, सुमति सखी संग लाय॥टेक॥खेलोंमैं होरी अंगना मेरो, तन मन सुरति लगाय। प्रीतम पास आस भई पूरन, राखों मैं हिरदे समाय॥ दुबधा दुरमति दूर परानी, जब देखो निरताय। परसत अंग रंग भये अबिचल, तनकी तपन बुझाय॥ अजर अखंड अमान अभैपद, कौन सकै गुन गाय। गुनवंती निर्गुन गुन राखो, गुरुगम प्रीतम पाय॥ प्रीतम पास सेज सुखविलसो, यह सुख बरनि न जाय। धर्मदास ऐसी होरी खेलो; सब संशय मिटजाय॥

होरी २४—हेरे प्रीतमजीकी बाट, ठाढी अलबेली॥टेक॥ गंगा जमुना बहे सरस्वती, तिरवेनीको घाट। अर्ध उर्धके मध्यमें मूरख पाई सांट। सगरे पंथ बिच दोय गली जहां, भर केशरको मांट॥ कुमति करार होय रही अभागिन, मतकर मनकी आंट। पिया दरसनको प्यास भई है, चली जगतसे फाट॥ काम क्रोधकी मूठ त्यागके, जगसो भई उचाट। कहें कबीर मिलो पिय प्यारी, सतगुरु खोल कपाट॥

होरी २५—छाये प्रीतमजी परदेश, मैने अब जानी॥ ॥टे०॥ अंग बिभूति रमाऊं निसि दिन, स्वेत जटा भये केस। घर घर अलख जगावत डोले, धर जोगिनको भेश॥ मैं भौसागर भूल रही हों, लिखना भयो संदेस। ऐसे सतगुरु

नाहिं मिले, मेरी सुर्त करे परवेस ॥ जाको ध्यान धरे ब्रह्मा दिक, ध्यावत शंकर सेस । नाम लेत भौसागर छूटे, कटगये करम कलेस ॥ जेठ देवरके मोह त्यागके, पियसे बांधो लेप । कहैं कबीर मिलो पिया प्यारे, छूटे सकल अंदेश ॥

होरी २६—तू कैसे रूस रहीरी, नहिं रूसन वारी ॥टेक॥ कबकी मैं ठाढी तोहि मनाऊं, तू नहिं चितमें धारी । गगन मंडलमें धूम मची है, उठचल वेग संवारी ॥ ईंगला पिंगला हाथ छरीले; सुषुमन केशर गारी । पांच पचीस भई एक ठौरी, गावे दे दे तारी ॥ जरद कसबका लँहंगा सोहे, और कसूंमल सारी । कहे कबीर ऐसी होरी खेलो, निरतत सुषुमन नारी ॥

होरी २७—खेलो खेलो सुहागिहोरी ॥टेक॥ चरन सरोज पियाहित जौलों, रजकी केशर घोरी ॥ भरम अबीर उडाव सखीरी, लोक लाज कुल तोरी ॥ सोहम् नार जहां रंग राची, बीच सुषुमना डोरी ॥ पुरुष पंच गली एक जानो, एकहि संग ढंढोरी ॥ शब्द सजीवन ख्याल पीवका, गहि लीजे निज डोरी ॥ रंग अनंग सखी मत राचों, पियके पांव परोरी ॥ कहैं कबीर ऐसी होरी खेलो, मिटे जमके झगरोरी ॥

होरी २८—पियके रंग रंगी कोई, मेरो काह करेगो॥टेक॥ पिया मेरे सजनी मैं पियकी, पियके पांव परोरी ।

पियकी सेज सँवारत सजनी, सर्व सोहाग भरोरी ॥ कर सिंगार मगन भई ठाढी, बिरहिन रूप खड़ी । साहब कबीर पिय पाये सजनी, सबको काज सरी ॥

होरी २९—कोई मोपै रंग न डारोरी, मैं तो भई हों बावरी ॥टेक॥ एकतो बौरी दूजी बिरहकी माती, तीजे नेह लगायोरी ॥ ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी, प्रेम प्रीति पिचकारोरी ॥ पांच सखी मिल होरी खेलैं, और सुहागिन नाररी ॥ अपने पिया संग होरी खेलो, यही बसंत यही फागरी ॥ कहैं कबीर ऐसी होरी खेलो, आवागमन निवाररी ॥

होरी ३०—अहो मन सा मदमाती खेलो रंगभरी ॥टेक॥ आस पास सब सखी बिराजें, ता बिच आप खडी॥ चंचल चपल चातुरी बोलैं, नैनन सैन करी ॥ इन्द्रहि जाय आप बस कीन्हे, ब्रह्मा चले पराई । तिनहूं जाय काम बस कीन्हा, सकुच रहे सिरनाई ॥ शंकर ध्यान छूटे ना कबहूं, बहु बिध कीन्ह उपाई। देखो रूप मोहनी केरे, पीछे काम जगाई ॥ सुर नर किन्नर जच्छ गुनीजन, कोई धरे नहि धीर । साहब कबीर आप अबिगत है, माया जीतशरीर ॥

होरी ३१—आज पियाके मिलनको मैं गेंद भई ॥ टेक ॥ घरसों निकस अँगन भई ठाढी, ले चौगानमें डारदई ॥ ज्ञानकी गेंद सुरतको डंडा, जित चाहो तित ढरक गई । पांच पचीस खेलैया ठाढे, घाट बाट फिर रोक लई ॥

सतगुरु ढोला दियो शब्दके, तैंतीसोंके बस न भई। कहैं कबीर सुनो भाई साधू, निहाल भई जब हाथ लई ॥

होरी ३२–अहो सोई नार सयानी, प्रीतमके मन मानी ॥टेक॥ प्रीतम हमको पतिया पठाये, देखतही मुसकानी। पातीके बांचत छाती जुडाई, रूपमें रूप समानी ॥ रंगमहलमें आयपुन बैठी, यही वस्तु निज जानी। गगन मंडलमें खेल रचो है, सोई देख ललचानी ॥ परम पुरुष अबिगत अविनाशी, ताकी अकथ कहानी। कहैं कबीर सुना भाई साधू, शब्दमें सुरति समानी ॥

होरी ३३–सतसुकृत खेलें होरी, अभय नगर अस्थान ॥ ॥टेक॥ इतसों आये ज्ञान लाडले, उतसों आई मन बोरी। त्रिबेनी तट खेल रचो है, खेलत हो हो होरी ॥ इतसें पांच सखी उठधाई, कोइ स्यामल कोइ गोरी। त्रिगुन पिचकारी हाथ लिये सब, खेलत हो हो होरी ॥ इत सों क्षमा सखी उठि धाई, शील सुमति दोउ जोरी। प्रेम पिचकारी रंग रोस सहित, झगरत खेलत होरी ॥ ताल मृदंग झांझ डफ बाजे, अनहद शब्द करोरी। सुषुमन नारी राग अलापत, गावत मंगल होरी ॥ सुरति निरति द्वै मता बनाये, चलो अगम संग होरी। मेरुदंडके छज्जे चढके, खेलत हो हो होरी ॥ मूल कमलते रंग बढो है, बंकनाल निज ठोरी। सुरतिनाल चढ बाहिर आये, खेलत हो हो होरी ॥ खेलत खेलत जहां गयी है, सतगुरु शब्द किये सोरी। साहब कबीर दयानिधि सागर, खेलत हो हो होरी ॥

होरी ३४—होरी खेलैं संत सुजान, आतम राम सों । ॥ टेक ॥ घरि घरि पल पल छिन छिन खेलैं, निस दिन आठों जाम ॥ योगी खेलैं योग ध्यानमें, दुनियां भूत पखान ॥ पंडित खेलैं चार वेदसे, मुलना किताब कुरान ॥ पतिबरता खेलैं अपने पियासंग, वेश्या सकल जहान ॥ महा प्रचंड तेज मायाको, सब जग मारा बान ॥ कामी खेलैं कामिनिके संग, लोभी खेलैं दाम ॥ साहब कबीर खेलै संतनसों, और न काहू काम ॥

होरी ३५—मेरी उमर आई होरी खेलनकी, पिया मोसे मिलके बिछुर गयेरी ॥ टेक ॥ पिय हमारे हम पियकी पियारी, पिय मोसे अंतर कर गयेरी ॥ पिया मिलै तो जीऊं मोरी सजनी, पिय बिन जियरा निकस गयेरी ॥ अबीर गुलाल लिये भर झोरी, पिय प्यारी संग रंग रहेरी ॥ धर्मदास बिरहिन पिय पाये, चरन कमल चितलाग रहेरी ॥

होरी ३६—प्रथम फाग वसंत पञ्चमी, सतगुरु मेहेर करोरी ॥ टेक ॥ अब पकडो छूटे नहिं कबहूँ, पियसों जाय मिलोरी । प्रथम गुफामें बैठके सजनी, नाभी आड दईरी ॥ दूजे बंद कंठ ले छेदो, सूखी नाल भईरी ॥ करम भरमके बरुना काटे, चेतन अगिन दईरी ॥ दियो जराय कुबुध कलेसको, उडके अकाश गईरी ॥ चोवा चंदन अबीर अरगजा, केशर कीच भरोरी ॥ धीरज ध्यान प्रेम कुमकुमा, रंग सतसुधि न रहोरी ॥ आपहि खेल खेलारी साहब, आपहि

ज्ञान गुनोरी ॥ दिना चार मायाको ख्याले, खेलत आप धनीरी ॥ इहैं उहैं बाहिर भीतर सबमें, जानेंजान गुनीरी ॥ ज्ञान गुलाल लगावो मखीरी, सतगुरु संग चलोरी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, एकहि फूल फुलोरी ॥

होरी ३७-या मन जालिम जोररे, बरजो नहिं माने॥टेक॥ निसिबासर सो चलत रहत है, सांझ गिने नहिं भोररे ॥ कोटि जतन कर तनमें राखों, भागे सांकर तोररे ॥ सात- द्वीप इकइस ब्रह्मांड लों, जहांलग याकी दोररे ॥ सुन नर मुनि औ पीर ओलिया, काहु न पायो चोररे ॥ ब्रह्मा विष्नु महेसुर कहिये, एहि कटे चित चोररे । कहैं कबीर जुगतसे राखो, गुरु चरननकी बोररे ॥

होरी ३८-ये फागुन दिन चारी, होरी खेल मनारे॥टेक॥ दया धरमको केशर घोरी, प्रेम प्रीति पिचकारी । बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, अनहद धुनि झनकारी । उड़त गुलाल लाल भये बादर, बरषत रंग अपारी । बीच बीच मुरली धुनि बाजे, रोम रोम लगी तारी । दश दरवाजे घेर मन पकरो, दुरमति खैंच उतारी । घूंघुटके पट खोल गये हैं, लोक लाज सब झारी ॥ होरी खेल उलट घर आवे, सो तिरिया पिय प्यारी । कहैं कबीर टरे नहिं टारी, परम पुरुषकी नारी ॥

होरी ३९-फागुन आयो दुख देन सखीरी, मेरो पिया घर नाहीं ॥टेक॥ अपने अपने भवनसो निकसे कामिन कंथ । मेरो पिया परदेस सखीरी, मोको कैसे बसंत ॥ चोवा चंदन

अबीर अरगजा, का घसि लाऊं अंग । सुध बुध मेरी सब गई सजनी, वाही पियाके संग ॥ तेरो पिया समीप सखीरी, तू तो हिलमिल खेल । नाहीं वर मेरोरी सजनी, गयो है ऊभी मेल ॥ एक संदेशा सुनरी सजनी, पिया घर आवेंगे आज । दुबरी बिरहिन भई बावरी, अजहुँ न आवे लाज ॥

होरी ४०—खेलो सइयां संग होरी, रंग भीनी पिया सों॥ ॥टेक॥ निरगुन रूप लियो घट भीतर, मनसा हौदे भरोरी । चित चोवा बुध केशर कहिये, भाव अरगजा घोरी ॥ शील संतोष ज्ञान उजियारो, पिचकारी भक्ति भरोरी कहैं कवीर ऐसी होरी खेलो, जाते भाग जगोरी ॥

होरी ४१—फागुन मेरोरी मैं कैसे भरों दिन रैन ॥टेक॥ परकी फाग पिया संग खेली, अबीर गुलाल उड़ाय । आसोंकी फाग पिया घर नाहीं, खेलोंगी हमरी बलाय॥ हमरे आंगन चंदनके बिरवा, जहँ चढ बोलै काग । झूंठे सगुन तुम्हार सखीरी, झूठे बनके काग ॥ उड़ उड़ काग सुलछना, जो पिय आवैंगे आज । असी कोस मोरे पिया बसत हैं, सो कस आवैंगे आज ॥ हमरे बालम फुलवारि लगाई मृगा चुन चुन जाय । मारोंगी मृगा गुलेलसों, नयन कमान चढाय ॥ अपने बलमाको पतिया भेजों, नयन कज्जल मसि लाय । बीच बीच बिरहा लिख-भेजो, दुख सुख लिखो न जाय ॥ सतगुरु आये कंठ

लगाये मिटगइ तपन हमार । गुरु प्रताप ताप गई तनकी, धर्मनि कहैं पुकार ॥

होरी ४२–मैं तो आनपरी चोरनके नगर, सतसंग बिना जिव तरसे ॥ टेक ॥ हाथके हीरा डार दियो, का मूठी भरी कंकर से। होरी खेलनकी यही बेर है, फिर चौरासी मंदिलसे ॥ अपने पिया संग होरी खेलों, और न काहू मनसे॥ कहैं कबीर यह मोहिं लखाया, क्या छोड़ चलेहो फिरसे॥

होरी ४३–मैं तो अब कैसे खेलोंगी होरी, मोहि लागी शब्दकी डोरी ॥टेक ॥ या होरीका सकल पसारा, लोग कहे थोरी थोरी ॥ होरी जो खेलो अपने पियासंग, या होरी मेरे अंग बयोरी । निशिदिन खेलों अपने पियासंग, टूटत नाहिं न डोरी ॥ धर्मदास सतगुरुसों माते, साहेब कबीर भ्रम तोरी ॥

होरी ४४–गुरु लाये मुकतिके पान, प्रीतम आये हो॥ ॥ टेक ॥ पान परवाना देन जीवनको, वे पावै सुख धाम । चौदा लोक पर जोत निरंजन, तीन देव परमान ॥ तीरथ व्रत औ चार वेदमें, इनमें जगत भुलान । सात सुरनिके ऊपर कहिये, सोई पुरुष पुरान ॥ सही छाप गुरु उहांसो लाये, समरथके फुरमान । सतयुगमें सतसुकृत कहिये, त्रेता मुनिंदर नाम । द्वापरमें करुणानिध स्वामी, कलियुग कबीर निधान। कालको जीव कही नहिं माने, कंठ सुने जो ज्ञान ॥ जैसे लाख अगिनमें पिघले, बिछुरत काठ समान । जे करतासे सब जग उपजो, भूले ठौर ठिकान ।

जुगन जुगनके बिछुरे, हंसा भेटे पुरुष पुरान। तेरह पीढी ज्ञान रजधानी, दोऊ दीन ले पान॥ राजा रंक सकल फिर आवे, छोंड़े कुल अभिमान। पांच हजार पांच सौ बीते, चलि है पंथ निशान॥ घर घर सत्य शब्द जो फैले, सतजुग बरते आन। साहब कबीर आये निज घरसो, फगुवा दीन्हे नाम॥ निरगुन भगतीरूप कलजुगमें वेद मरम नहिं जान॥

होरी ४५–मेरे मन परदेसी मीत होरी खेलिये॥ जब जैहो घर आपने, तब कौन तुम्हारे साथ ॥टेक॥ बाहिर खेलन नाहीं पैहो, आनि गहे जमराज। बांह पकर जम ले चले, धरी रहे सब साज॥ जो तुम काज आपनो चाहो, नाम गहो बहु भांत। अजहूं चेत अचेत बावरे, जन्म सिरानो जात॥ ज्ञान पुटरिया बांधके हो, सुरत अबीर उडाव। जाय लगो पियके हिये, अब खेलनको दाव॥ पांच नार तुमको सजी, पांच हुए के जात। वे रस चाहें आपनी, अपनी भांत॥ साहब कबीर होरी रचो, मचो कुलाहल सोर। समुझ देख नर बावरे, ये तो होरी कैसे भोर॥

होरी ४३–तेरो है घर कंथ सुजान, खोलो रंग भरी। जनम जनमकी मिटी कलपना, पायो जीवन प्रान॥ टेक॥ पांच सखी मिल मंगल गावें, गुरुगम शब्द बिचार। बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, उठत शब्द झनकार॥ खेलन चली पंथ प्रीतमके, तनकी तपन बुझान। पिचकारी छूटे

अति अद्भुत, रसके कीच बहान ॥ सतगुरु मिल आप बिसरावै, लागी खेल अपार । जित कित हो हो होय रही, रटना लगी हमार ॥ सुख सागरमें न्हाइये, निरमल भये शरीर। आवागमन तब मेटिया, जब फगुवा पाये कबीर॥

होरी ४७-तज काम क्रोध मद मोह होरी खेलिये ॥ ॥टेक॥ज्यों पंकज जलमे रहे, जल नहिं परसत देह। उरमाया मन परहरी, सतगुरुसे कर नेह ॥ ज्ञान सुगंध गोद भर लीजे, कुबुध गुलाल उड़ाय । सत्यनाम गुन गाइये, जश को डफ बजाय ॥ मानुष जन्म दुरलभ है संतो, खेलो फाग सुभाव। कहें कबीर चित चेतो हंसा, बहुर न ऐसो दाव ॥

होरी ४८-मिल खेलो बिमल बसंत, प्यारे कंथसो। खोल अंधेरी कोठरी, मिल बैठो महल एकंत ॥टेक॥ गगन मंडल दीपक धरे भवन करो उजियार । छैल छबीले कब मिलो, मेरे जीवन प्रान अधार॥ गंग जमुनके अंतरे, चंद सूरके बीच । अर्ध ऊर्धके मध्यमें जहां मचो अरगजा कीच ॥ बिन पग निरत होत है, बिन कर बाजे ताल । बिन नैनन छबि देखिये, विना स्रवन झनकार ॥ जहां सुरंग रंग रहो, हिल मिल एकहि ठांव । धर्मनि भेटे भावसों, गुरु पाये अपने नाव ॥

होरी ४९-खेलत फाग वसंत रैन दिन। सहज शुन्यमें होरी ॥ टेक ॥ सतगुरु दया साधुकी संगते । त्रिकुटी महल रच्योरी ॥ गुंजत भवंर कोकिला बोले । सोहं सोहं सोरी ॥ बाजत ताल मृदंग झांझि । अगम निगमकी

झोरी ॥ मानो कोटि भान ससि ऊगे। जहां मनुवां विल मोरी ॥ सुरति सुहागिनी संग लिये मनुवां । दिये सुम तिकी खोरी॥कहैं कबीर मगन भई विरहिनि । ब्रह्म ज्ञान झकझोरी ॥

## फाग प्रारम्भ।

फाग १-मेरे सतगुरु आये आज खेलन फागरी। बानी बिमल सुगन सब बोले अति सुख मंगल रागरी ॥टेक॥ चाँचर सरस सखा संग बोलै। अनहद बानी रागरी ॥ शब्द सुनत अनुराग होत है। कहा सोवे उठि जागरी॥ पानी आदर पवन बिछौना। बहुत करूं सन्मानरी ॥ देत अशीस अमर पद लेऊँ। अब चल युग युग राजरी ॥ चरन प्रच्छालि चरनोदक लेहु । उठि उनके पग लागरी ॥ पांच सखी मिलि मंगल गावे। पीव अपने संग लागरी ॥ पांच अमृत भोजन लेवे। प्रेम प्रीति भरि थाररी ॥ महा प्रसाद संत सुख पावे। आनि खुले मेरे भागरी॥चौरासीकी बंध छुड़ावन। आये सतगुरु आपरी ॥ पान प्रवाना देत जीवनको। वे पावें सुख बासरी ॥ चोवा चंदन अरगजा कुमकुम। पुहुप माल गल हाररी॥ फगुवा माँगि मुक्ति फल लेवौं। जीव अपनेके काजरी॥ सोलहो सिंगार बत्तीसो आभरन । सुरति सिंगार सँवाँररी ॥ संत कबीर मिले सुख सागर। आवा गवन निवार री ॥

फाग २-मिलि खेलो विमल वसंत। प्यारे कँत, सों॥

खेली अंधेरी कोठरी मन । बैठो महल इकंत ॥ टेक ॥ गगन महल दीपक धरा हो । भवन कियो उजियार ॥ छैल छबीलो ना छीपै । मेरे जीवन प्रानाधार ॥ विन पग नटवा निरति होत है । विन कर बाजे तार ॥ विन नैन जहां देखिये । बिन श्रवण सुनि झन्कार ॥ गङ्ग जमुनके अंतर है । चंद सुरजके बीच ॥ अरध उरधकी संधिमें । जहां मची अग्गजा कीच ॥ रंग सुरंग रङ्ग रंगि रहे हो । हिलि मिलः एके ठांह ॥ धर्मनी भेंटे भावसों हो । मिले पुरातम नाह ॥

फाग ३–जहां मन पावे विसराम, संगति साधुकी । साधु संत मिलि होरी खेलो, निशि दिन आठों जाम ॥ ॥टे०॥ होरी हरिको नाम है हो । लीजिये गाय बजाय ॥ फगवा बारह मासहै हो । तुम मति विसरो ताहि॥ पिच-कारी नासा बनि हो । स्वासा केसर रंग ॥ भरि भरि डारै सुषमना । धुनि अनहद ताल मृदंग ॥ तीन रंग एके भयो है । पीत श्याम अरु सेत ॥ होरी खेले आत्मा । पर-मातम कंत समेत ॥ कबीर बलि गुरूदेवकी । पद पर-सत राजा राम ॥ जापर दया भई सतगुरुकी । जुग जुग अविचल धाम ॥ ३ ॥

फाग ४–कारि सुमरन सुरंग होरी खेलिये हो । ज्ञान पिचकारी ध्यान केशर भरि ॥ या विधि मनको लहिये हो टे० ॥ पांच - खी मिलि उठि उठि धावै । इनकी लुकट बचइये हो ॥ काम क्रोध अरु लोभ मोह सब । अबीर

गुलाल उड़इये हो ॥ बाजत ताल मृदंग झांझि डफ । अनहद नाद बजइये हो ॥ सुरति निरति और राग रागिनी । अनचित चितसो गईये हो ॥ चोवा चंदन अरु अरगजा । रसकी कीच मचइये हो ॥ कहै कबीर तब साध कहावैं । गुरूसों फगुवा पइये हो ॥ ४ ॥

## धमार प्रारम्भ ।

धमार १–नित मंगल होरी खेलिये हो । अहो मेरे संतो नितही वसंत नित फाग ॥ टेक ॥ दया धरमकी केशर घोरो । प्रेम प्रीति पिचकारी ॥ भाव भगत सों भरि सतगुरुको । सुफल जनम नर नारी ॥ छिमा अबीर चरच चित चंदन । सुमरन ध्यान धमारि ॥ ज्ञान गुलाल अगर कसतूरी । उमंगि उमंगि रंग डारि ॥ चरणामृत प्रसाद चरण रज । अपने शीश चढाय ॥ लोक लाज कुल कांनि मेटिके । निर्भय निशान बजाय ॥ कथा कीर्त्तन मग्न महोछव । करि संतनकी भीर ॥ कबहूँ ना काज बिगड़ है तेरो । सत सत कहैं कबीर ॥ १ ॥

धमार २–कोई नाम सनेही खेलै वसंत । अहो मेरे संतो कुलकी हो कानि निवारी ॥ टेक ॥ सत्संगति अरु दया भावसों । लागो प्रेम गुरू संग ॥ आसा मूल निराश बिसारी । बाजत नाद मृदंग ॥ डिम कपट गुलाल उडै जब । लागो रंग अपार ॥ पांच सखी मिलि मंगल गावे । लागि रही इक तार ॥ खेलन चली पंथ प्रीतमके । अति

ही उलास आनंद ॥ भव विसारि कछु शंक न कीन्ही। सुरति शब्द गठि बंद ॥ चाचर रचि संग प्रीतमके। खुलिया ज्ञान भंडार ॥ पीवत नाम महारस छाके। निरखत रूप अपार ॥ कहैं सुनै कछु वनती नाहिं। जो खेलै संत सुजान ॥ अजर अमर अविनाशी साहेब। निर्भय नाम अमान ॥ जरा मरण भय संशय छूटी। छाड्यो विष संसार ॥ दास कबीर ऐसे खेलिये हो। आवागवन निवार ॥

धमार ३-निज नाम रंगीले रंग रंगे हो। अहो मेरे संतो छाडो हो कर्म अपार ॥टेक॥ छाडौ कनक कामनि बहु रंगा। याते कपट विकार ॥ जनम जनमके फंद कटत हैं। सतगुरु शब्द सम्हार ॥ जम पाटनको करम निवारो। हंस हो निरबान ॥ माया आस विचारि तजो जीव। बहुरि न भरम समान ॥ चेतो रे नर मूरख प्रानी। ये जम बड बरियार ॥ सार शब्द निश्चय उर धारो। भाग चले जम धार ॥ सत्सुकृतको निजकर सुमिरो। गहो अगमकी डोरि ॥ सतगुरू सेती परिचय पाइये। छूट्यो जमको जोर ॥ पारस परम अमर घर पायो। हंस भये अस्थीर ॥ सदा करारी जुरा न व्यापे। तारंग रंगे हैं कबीर ॥

धमार ४-कोई नाम रंगीले रंग रंगे हो। मेरे साधो गहो शब्द टकसार ॥टेक॥ प्रेम ते गगन पखावज बाजे। सुनिये छतीसौं राग ॥ आवरन वरन गुलाल बहु रंगी।

बहु रंगी पांचो राय॥बीस पांच अरू तीन सहेली । खेल त्रिकुटीमें आन॥ अगर अबीर कुमकुमा केशर अष्ट कमल परमान ॥ गगन मंडलमें खेलत हौं होरी । तत मता गल तान॥फगवा लेन भरली विधि आवो । पावे मुक्ति फल दान॥कहैं कवीर ऐसी होरी खेलो । पांच पचीसों मारि॥ नाम गहे ते परम पद पावे । पुनरपि जनम निवारि ॥

धमार५–सतगुरू संग होरी खेलिये हो । अहो मेरो साधो जाते जरा मरण भरम जाये ॥ टेक ॥ ध्यान जुगतकी करि पिचकारी । छमा चलावन हार ॥ आत्म ब्रह्म जो खेलन लागे । पांच पचीस मंझारि॥ज्ञान गलीमें होरी खेले । मची प्रेमकी कीच ॥ लोभ मोह दोऊ कटि भागे। सुनि सुनि शब्द अजीत॥ त्रिकुटी महलमें बाजा बाजे । होत छतीसों राग ॥ सुरति सखी जहां देख तमाशा । सतगुरू खेलत फाग ॥ इंगला पिंगला सुषुम्ना हो । सुरति निरति दोउ नारि ॥ अपने पिया-संग होरी खेलों । लज्जा कानि निवारि ॥ शुन्य शहरमें होत कुतूहल । करे राग अनुराग ॥ अपने पुरुषका दर-शन पावे । पूरन प्रेम सुहाग ॥ सतगुरू मिलि फगवा निज पायो । मारग दियो है लखाय ॥ कहै कवीर जो ये तत पावे । सो जीव लोक सिधाय ॥

धमार ६–ऐसे निर्गुण होली खेलिये हो । अहो मेरे साधो जहां पुरुष विसराम ॥ टेक ॥ मूल शब्दका बजे

मिरतक व्यापे। भवसागरमें वास॥ पांचों चोर छठो मन राजा। निश दिन करत विनास॥ घर माटीको भीत झाँझरी। अष्ट धातको जडाव॥ नव दरवाजे रहत मलीने। काहेको करत उपाव॥ प्रकृति पचीसों संग जंजाली। काम क्रोध कोटवाल॥ इतने कटकमें राजा भूलौ। खेलत भरमको ख्याल॥ भरम छाँड़ि अजहुँ किन चेते। कहैं कबीर समुझाय॥ कहा हमारा जो कोइ माने। आवागवन नसाय॥

धमार ९-अविनाशी दुलहा कबीर कब मिलिहो। अहो मेरो साधो सब संतनके रक्षपाल॥टेक॥ जल उपजी जलसों नहिं नेहा। रटत प्यास प्यास॥ मैं विरहिनि ठाढी मग जोहूं। राम तुम्हारी आस॥ दिवस न भूख रैन नहीं निद्रा॥ ग्रह आंगन न सुहाय॥ सेजरिया वैरन भई हमको। जागत रैन विहाय॥ छांडया गेह नेह लाग्यो तुमसो। भयी चरन लवलीन॥ तुम विनु जियरा यूँ तलफतु है। जैसे जल विनु मीन। हमतो तुम्हारी दासीहो प्रभुजी। तुम हमरे भरतार॥ दीन दयाल दया कर आवो। साहिब सिरजन हार॥ कै तो प्रान तजति हूं साहेब। कै अपनी कर लेव॥ दास कबीर विरह अतिबाढी। हमको दरशन देव॥

धमार १०-कैसे जीवेगी विरहनी पिया विनुहो। अहो मेरा साधो कीजे हो कौन उपाय। टेक॥ दिवस न भूख रैन नहिं सुख है। जैसों कलिजुग जाम॥ खेलत

फाग छाड़ि चलि सुंदर । तजि चलि धन अरु धाम ॥ बन खंड जाय नाम लाव लावो । मिलि पिया सुख पाय॥ तलफत मीन विना जल जैसे । दर्शन दीजे हो धाम ॥ बिना अकार रूप नहिं रेखा । कौन मिलेगा आय॥आपन पुरुष समुझिले सुन्दरी । देखो तन निरताय ॥ शब्द-सरूपी जब पिया बुझो । छाड़ो भरमकी टेक ॥ कहै कवीर आन नहिं पूजा । जुग जुग हम तुम एक ॥

धमार ११-खेले तेरी माया मोहिनी हो । अहो मेरे साधो जिन जेर कियो संसार॥टेक॥ चंद्र वदन मृगलोचनी माया । विदँलो दियो है लीलार ॥ जनी सती सब मोहि लियोहै । गज गति बाकी है चाल॥ हरे रंगकी चुदरी हो । माया पहिरे ताही ॥ शोभा अद्भुत रूपकी हो । महिमा वरनि न जाय॥ जेते तेते लिये हो।घूँघुट मांहि समाय॥आँ-जन वाकी रेख हो। अदग गयो नहिं कोय॥छिड़कत थोथे प्रेम सुमाया । भरि पिचकारी गात॥ सनकसनंदन कहत है । औरकी केती बात॥अनहद ध्वनि बाजा बाजेहो । सरवन सुनत भयो चाव॥ खेलन हारे खेलिहै हो । बहुरि न ऐसो दाव ॥ ज्ञान डगा पग रोपिया हो । टारचो टरत न पांव ॥ बाँम लिये कर आपने हो । फिरि फिरि झूरत जाय ॥ ब्रह्मा शंकर वश कियो माया । दोऊ पकडे जाय ॥ फगुवा लीन्हो आपनो हो । बहुरि दियो छिटकाय ॥ नारदको मुख मोरिके । माया लीन्हो बसन

छुटाय ॥ गर्व गहेली गरबते हो । बहुरि चली मुसकाय ॥ सुर नर मुनि एक ओर भये हैं । एक अकेली आप । सनमुख कोऊ ना रहै हो । मारि लियो एक धाप ॥ इन्द्र सकुचठाढे गढौ भयो हो । लोचन ललित अंजाय ॥ हरि अविनाशी उबरेहो । कहै कवीर गुण गाय ॥

धमार १२–भरम भुली माया जग मोहै हो । अहो मेरो साधो खेलत भ्रमको ख्याल ॥ टेक ॥ कटि केहरि जग गामिनी माया । संशय कियो सिंगार ॥ राखे रोकि सब मोह नदीमें कोउ न उतरचो पार ॥ ब्रह्माको चित्त चोर लियोहै । शिवको लिन्हों साथ ॥ बस किय विष्नु विश्वके ठाकुर इंद्र नवायो माथ ॥ तैंतीस कोटि छले मुनि देवा । डारचो भरम गुलाल ॥ बरन फेरि अवरन होय नाची । ऐसी अलबेली नारि ॥ पंडित आँखिन आँजन आँज्यो । मूरख आंखिन धूरि ॥ जती सती सब बाँसन मारे सुरनर मुनि किय चूर । गोपीचंद भरथरी गोरख । खेलन आये फाग॥ शृंगी ऋषि पाराशर लुटे । छांडि छांडि वैराग ॥ सात दीप नौखंड तिहुपुर । फगवा सब सो लीन ॥ ठाढी विनती करै कबीरसों, हम तुमरे आधीन ॥

धमार १३–तुम दीन दस खेलों साजना हो । अहो मेरो सेतो बहुरि न ऐसो दाव ॥ टेक ॥ रितु वसंत माया संजोरी । कछुक करो अनुराग ॥ फिरि पीछे पछता-वगे संतो बीति जायगी फाग ॥ ग्यान डगा तुम रोपि

हो । सन्मुख रहो सम्हारि ॥ मारेगी चित चोरके हो । मोहिनि चंचल नारि ॥ हरि सुमिरनकी गारी दीजे । गुरु के वचन संम्हाँरि ॥ साधु संगति तुम जोरिके हो । कबहुं न आवेगी हारि ॥ अनहद बाजा बाजे सखीरी । नौतम प्रीतम ठांय ॥ केशरि चरचो प्रेमकी हो । जुग जुग रंग न जाये ॥ कहै कबीर ऐसी होरी खेलो । तीन तीसकों मारि ॥ नाम गहेते परम पद पइये । आवागमन निवारि ॥

धमार १४—कर मन संग भरमत केई जुग गये । अहो मेरो साधो उपज्यो न केवल ज्ञान ॥ टेक ॥ कबहुंक बन चर तुम भये हो । कबहुंक तिन चर रूप ॥ कबहुँक सिंह दहारत वनमें । कबहुंक मींडक कूप ॥ कबहुंक नरपति तुम भए हो । कबहुंक मांगत भीख ॥ कबहुंक गज होय घूमंत डोले । कबहुंक मस्तक लीख ॥ कबहुंक विकत तुम भयो हो । कबहुंक गये फंदे जंजाल ॥ कबहुंक उडिके गये गगनकूं । कबहुं गये पाताल ॥ कबहुंक सुर पति तुम भये है । कबहुंक नरक निदान ॥ कहै कबीर ऐसे भरम डोले । जैसे सूकर स्वान ॥

धमार १५—ऐसे पिया संग होरी खेलियेहो । अहा मेरो साधो सुरति सुहागिन नारि ॥ टेक ॥ पांच पचीस सखियनकी संगति । तत मत सखी लिया साथ ॥ अरस परस पियाके संग राची । सहज लकुटिया हाथ ॥ गगन

मंडलमें होत कुलाहल । उठत राग अनुराग ॥ बाजत ताल मृदंग झांझि डफ । बहु विधि भयो सुहाग ॥ ग्यान गुलाल अनहद अरगजा । चित चोवां मन लाय ॥ कर-करनी केशरि रंग भीनी । विन रसना गुन गाय ॥ धन सतगुरु धन साधुकी संगति । धन हमारे भाग ॥ सांची फाग भगति सतगुरुकी । कहैं कवीर सुहाग ॥

धमार १६—अभि अंतर अनहद मुरली बाजे । अहो भेरो साधो चलो न देखन जाय ॥ टेक ॥ काया कुंज गली वृन्दावन । अनुभव जमुना नीर ॥ बैन बजाई बीचमें मोहन नाभि कमलके तीर ॥ सुधि बुधि विसार गई सब श्यामा । सुनि मुरलीकी टेर ॥ उलटी सिंगार कियो है आतम । पहरयो है अम्बर फेर ॥ मुरलीको शब्द सुनत सब गोपी । भूलि गई परिवार ॥ पांच पचीस सखी सँग राधो । भेटन चली है मुरार ॥ आस पास गोपियनको मंडप । विचि विचि परमानन्द ॥ भयो उछाह प्रेम अति वाढयो । ज्ञान उदय जिमि चंद ॥ थाके चंद सुरगन मारुत । वहै न जमना नीर ॥ मुनि मुनिव रको ध्यान डिग्यो है । बछा न पीवै क्षीर ॥ घट घट रास रच्यो वृन्दावन । घट घट गोपी कान्ह ॥ घट घट राम रमे अविनाशी । जाने कोई संत सुजान ॥ सतगुरुके प्रताप सखीगी । वरनि सुनायो रास ॥ मानुष जन्म सुफल भयो साधो । गावें धनि धरमदास ॥

धमार १७-अहो अविनाशी दूलहा कब मिलिहो हो॥ हो भाई साधो मिलिहो सनेही आय ॥ टेक ॥ जल उपजे जलसो नहिं नेहा, रटत पियास पियास। मैं बिरहिन ठाढी मग जोहों, पिया मिलनकी आस॥ दिन नहिं चैन रैन नहिं निद्रा, घर अंगना न सोहाय। सेजरिया बैरन भइ हमको, जागत रैन बिहाय ॥ हूं तो तुम्हरी दासी साहब, तुम हमरे भरतार। दीन दयाल दया करो जन पर, साहब सिरजन हार॥ आमिनकी बिनती सुन साहब, रहूं चरन लौ लीन॥ तुम बिन जियरा ऐसे तलफे, जैसे जल बिन मीन॥ की हम प्रान तजत हों साहब, की आपन कर लेव। साहब कबीर बिरह रस भीगी हमहूंको दरशन देव ॥ १ ॥

धमार १८-अहो ऐसे गुरु संग. होरी खेलिये हो हो॥ हो भाई साधो हो. जरा मरन भ्रम जाय ॥ ज्ञान जुगतकी कर पिचकारी, छमा चलावन हार। आतम ब्रह्म संग खेलन लागे, पांच पचीस मंझार॥ ज्ञान गलीमें खेलैं होरी. मची प्रेमकी कीच। लोभ मोह दोउ कुढि कुढि मरैं, सुन सुन शब्द अजीत ॥ त्रिकुट महलमें बाजा बाजे, हो छतीसो राग। ज्ञान ध्यान दोउ देखैं तमाशा, सतगुरु खेलैं फाग॥ इंगला पिंगला सुषुमन रोको, सुरति निरति दोउ नार। अपने पिया संगहोरी खेलो, लज्जा कान निवार॥ सुन्न महलमें होत कुतूहल, करहिं राग

अनुराग। अपने पियाके दरशन पाऊं, पूरन प्रेम सोहाग ॥ सतगुरु फगुवा पाइया हो, मारग दियो बताय । कहैं कबीर जो यह तत्त्व पावे, सो जन लोकहिं जाय ॥

धमार १९—अहो साहब संग होरी खेलिये हो ॥ हो भाई साधो हो खेलो तन मन वार ॥ टेक ॥ धोखेकी एक होरी बनाई, भवको डांडो गाड । दुबधा की जार लाय इत उतसों, लज्जाको देउंगी जार ॥ प्रेम पावक ले होरी दागों, कर्म बरूला डार । भावर दे दे मंगल गावों, त्रिगुण फंद निरवार ॥ समुझकी झोरी सुमतिने पकरी, होरीकी भस्म लई झार । जित कित धूर उड़ाय जगत पै, कुल पर डारोंगी छार ॥ करनी को केशर घटमें घोरों, रहन करो पिचकार। परख पतंगके रङ्ग उतारों, देउंगी मन पर डार ॥ दया अबीर गुलाल धर्म कर, चित चंदन लेइ गार । सतगुरु मुख पर डारों प्रीतसों, पांचौ चोरन मार ॥ जो कछु चाल होय गुरु समरथ, पहिले देहु निवार । आमिनकी बिनती सुन साहब, फगुवा देहु हमार ॥ कहैं कबीर सुन धर्मनि नागर, अब है राह बिचार । अमी अंक परवाना पावे, पहुंचे पुरुष दुआर ॥

धमार २०—अहो बैरागी नागर होरी खेलिये हो हो॥ हो भाई साधो हो, खेलो निरगुन नाह ॥ गढ बांधोमें चाचर खेलै, निरगुन नाम विचार । संगन सनेह, हंस परबोधो, जमसो जीव उबार ॥ सूर सनेह गहो निशि बासर,

सुषुम वेद टकसार । निरगुन नाम निअच्छर गावो, जुग जुग शब्द पुकार ॥ मंदिरसों निकसी एक सुंदर, कर पग शीश न छंद । बिन नैनन देखिये वाकी सूरत, दिन दिन परम अनंद ॥ बिन जुगबंध काल छोडे, बहु बिध भेष बनाय । जब लग जमकों चिरे न कागद, काल धरी धरखाय ॥ पिंड न प्रान देह नहिं सुंदर, बिन रसना गुन गाय । ऋग् यजु साम अथर्वण थाके, बिन गुरु कौन लखाय ॥ जोजन तीन चले बिन चरनो, करपलो पर मान । सुर नर मुनि जाको मर्म न जाने, निरगुन चतुर सुजान ॥ तैंतिस कोटि देव नहिं जानें, निरगुन भेद नियार । कहें कबीर मुक्तिके दाता, परख परख टकसार

धमार २१—अहो करनाटक नागर होरी खेलैं हो हो ॥ हो भाई साधो हो खेलैं जो राय बंकेज ॥टेक॥ एक समय गज अस्थल आये, करनाटकके लोग । बिहँसि बिहँसि सब मंगल गावें, बहुत करहिं सुख भोग ॥ राय बंकेज हंसनके राजा, गज अस्थल कडिहार । हंसन पार उतारहीं, परख परख टकसार ॥ हंस हंस युग बांधहीं, जम सों जीव छोडाय । सत्य शब्द दे लोक पठावे, अभय निशान बजाय ॥ ज्ञान सुगंध धरो घट भीतर, कुबुधि अबीर उडाय । सुरति शब्द जीवनको दीन्हे, हंस लिये मुकताय ॥ भये लवलीन हंस मुकताहल, सतगुरु बांह चढाय । कहैं कबीर मुक्तिके दाता, तबहिं अभय पद पाय ॥

धमार २२–अहो भर्म भारी माया जग मोहे हो हो ॥ हो भाई साधो हो जेर कियो संसार ॥ टेक ॥ कटि केहरि गजगामिनि माया, संशय कियो सिंगार। रोक रही सब मोह नदी में, कोई न उतरे पार ॥ ब्रह्माके चित चोरी माया, शिवको लीन्ही साथ। बस कीन्ही बसुधाके ठाकुर, इंद्र नवावे माथ ॥ तेंतिस कोटि छले मुनि देवा, डारी बिरह गुलाल। बरन फेर अबरन होय नाचे, ऐसी अबला नार ॥ पंडित आंखिन अंजन दीन्हे, मूरखके मुख धूर। जती सती सब बांसन मारे, सुर नर मुनि किये चूर ॥ गोरख गोपीचंद भरथरी, आये खेलन फाग। शृंगीऋषि पाराशर आये, छांड छांड़ बैराग ॥ सात द्वीप नौ खंड तिहूंपुर, सो सो फगुवा लीन्ह। साहब कबीरसों अरजी करत हैं, तुम मोहिं कछू न दीन्ह ॥ ६ ॥

धमार २३–अहो गुरुगम सों होरी खेलिय हो हो ॥ हो भाई साधो हो शब्द सुरति लौ लाय ॥ टेक ॥ कोई एक नाम निरंजन ध्यावे, कोई कहे निरधार। जोत सरूपी अलख कहत है, राँचि रह्यो संसार ॥ कोइ दुर्गा शिवको जानै, कोई जाने भूत। कोई यंत्र मंत्रसों राचे, मूल बिसारो सूत ॥ कोईक नवली कर्महिं साधे, पवना देइ चढाय। बिंदहि साध मगन होय फूले, सतगुरु शब्द न पाय ॥ अजपा सुन्न जपे सब कोई, छर अच्छर लग दौर। मारग भूल फिरे भटकाना, मन आवत नहिं ठौर॥

कोई ओहं कोई सोहं ध्यावे,कोई एक नहिं ठहराय । घटमें ज्ञान कथे सब ज्ञानी, तन छूटे कहँ जाय ॥ पूरन ब्रह्म कहे सब कोई, सो जग करे अहार । तन छूटे कहु मिले ब्रह्मको, जनम जु होत खुवार ॥ ऊर्ध तपे बन खण्ड जात है, खात वृच्छके पात । जोगी जंगम औ दरवेसा, भेष धरे संसात ॥ कथनी बकनी पार न पावे, सतगुरु शब्द अकाल । अच्छरमें निःअच्छर दरशे, सतगुरु होहिं दयाल ॥ युक्ति जान खेलै जो कोई, शब्द डोर चढजाय । अमर लोकमें पुरुष बिदेही, सत कबीर लौ लाय ॥ ७ ॥

धमार२४-अहो कोई नाम रंगीला सतसंगी हो हो ॥ हो भाई साधो हो गहो शब्द टकसार॥ टेक ॥ प्रेमसो गगन पखावज बाजे, बिन कर बाजे ताल । रुनक झुनक अन हद धुनि बाजे, उठत छतीसों राग ॥ अरुन बरुन गुलाल बहुरंगी, बहुरूपी पांचों राव। इन पांचौं विश्वास न लीन्हे, खेलै त्रिकुटी भाव ॥ प्रेमके रंग सींचत रहे, अष्ट कमल परकास । ज्ञान गली छूटे पिचकारी, भँवर गुफा निज बास॥ गगन मंडलमें होरी खेलैं, तत्त्व मता गलतान । फगुवा नाम लिये बन आवे, पावे मुक्ति फलदान ॥ कहै कबीर ऐसी होरी खेलो, तीनों तापको मार । निगम ये जाओ परमपद पावो, पूरन जन्म निवार ॥

धमार २५-अहो सतगुरु संग होरी खेलिये हो हो ॥ भाई साधो हो बहुर न ऐसो दाव ॥ टेक ॥ खेलत हंस बंस कर

लीन्हे, मिटगये बिषय बिकार। भाव रचेउ रंग संग निज पायो, खुलगये दशहू दुवार॥ गगन गुलाल उड़ाव रैन दिन, भर पिचकारी शील। खेलत हंस परम पद पावे, बिमल हंसनकी भीर॥ गगन मंडलमें हंसा खेलै, चढे सवाया नूर। खेलै हंस सोहंगम डोरी, वर पाये भरपूर॥ सोरह सुतका एक तत्त्व है, जासों न्यारा बीज। कहें कवीर हम निशदिन खेलैं, सतगुरु दीन्हा चीज॥

धमार २६—अहो नित मंगल होरी खेलिये हो हो॥ हो भाई साधो हो, नितही बसंत नित फाग॥ दया धरमकी केशर घोरो, प्रेम प्रीति पिचकार। भाव भक्ति भर भर सतगुरु सो, सुफल जनम नर नार॥ छमा अगर छिरक चित चन्दन, सुमिरन ध्यान धमार। ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी, उमँग उमँग रंग डार॥ चरनामृत प्रसाद चरन रज, अपने शीश चढाय। लोकलाज कुलकान तोरके, निरभय निशान बजाय॥ कथा कीर्तन मगन महोत्सव, करे संतनकी भीर। कबहुँ न काज बिगरे नर तेरो, सत, गुरु कहें कवीर॥

धमार २७—मन रंगी राजा खेलै धमार॥ काहूको पाताल पठावे, काहूको देत अकाश। काहूको बैकुंठ पठावे, फिर फिर नरकमें बास॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर बांधे, माया रसरी डार। सुर नर मुनि सबहीको बांधे, कोइ न सके निरवार॥ जोगी जती तपी संन्यासी, दिगंबर

दरबेश। सनक सनंदन सबही बांधे, काहुन पायो भेश॥ तेंतिस कोटि देवता बांधे, माया रसरी डार। कहैं कबीर तेई जन बांचे, चीन्हा शब्द हमार॥

## शब्द चाचर।

चाचर मची अबहो हो खेल जिन चाचर माहीं॥ टेक॥ चाचर खेलें दोय जने एक मन औ माया। पंथ चलन नहिं पावै बहु द्वन्द मचाया॥ लोभ मोहकीपिचकारी मारो चतुरा ज्ञानी। सुरनर मुनि सबही छले जेते अभिमानी॥ डफ कपटही बाजे सही बहु जग भरमाई। तृष्णा लागे खेलई सम्हरा नहीं कोई॥ काम क्रोधकी अरगजा सब अंग लगोई। आशा तो चहुंदिशि फिरे सब सुधि बुधि खोई॥ नाना रंग बनायके नाचे मन माया। ठांव ठांव फंदा रचे कोई जान न पाया॥ अंग अनेक दिखायके सबही जग खाया। मचे खेलके आंधरे काहू मरम न पाया॥ षट् दरशन सब खेलहीं बहु भेष बनाई। मन रंगीके खेलमें सबही बिलमाई॥ पंडित वेद पुरानको पढ पढ अरथावैं। शेष सहस मुख गावहीं कछु भेद न पावैं॥ तीरथ व्रत जग लागिया धावे चहुंओरा। देवी देवल देवता खेलैं सब ठौरा॥ सुख संपतिके कारने अरुझा सब कोई। अंतकाल औसर परे कोई संग न होई॥ पछा पछी सब खेलहा बहु भरम भुलाने। वार पारकी सुधि नहीं कथनी लपटाने॥ जाके जो कछु मन बसे वह वाही माने। सत

शब्द चीन्हें नहीं बहु झगरा ठाने ॥ साँचेको माने नहीं जिह्वाके लपटी । वादिनकी कछु सुधि नहीं जम मारे झपटी ॥ मन मायाके रंगमें सबही ये भूले । चौरासीके खेलमें सदा जोनी झूले ॥ सतगुरु शब्द पुकारिया खेलै जो कोई । भौसागरके भय नहीं फिर जन्म न होई ॥ कहैं कवीर बिचारिके खेलो तुम साधो । न्यारा सबही खेलते जाको अवराधो ॥ १ ॥

सत्यनाम ।

## अथ कहरा प्रारम्भः ।
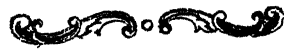
कहरा १-मतसुन मानिक मतसुनु मानिक मतसुनु मानिक सब धारेरे। मगन हुआ जब घर उठिचाला गुरूके चरन चित तुव धारेरे ॥ बगला पक उछारी मच्छीं सो धिमरा कैसे पावेरे ॥ वंसी टूटि पडी पानीमें है कोई गाँठ जुरावेरे ॥ तीन लोक धिमरा फिरि आया सिमरीके अन्त न पावेरे ॥ चारी चरन सिमरीके कहिये नो पंखुरी पखानारे ॥ नाका तोड़ि बैठ उर अंतर सतगुरू जुगति लखानारे ॥ दो मुख शब्द पडे टकसारा बूझै संत सुजानारे ॥ सुर नर मुनि ओर पीर औलिया ब्रह्मा विष्नु महेसारे ॥ कहैं कवीर शब्द विन परखै पार न पाया सेसा रे ॥

कहरा २-अरे मन मिहरा करहु तियारी विलंब करे भूल नाहि रे ॥ बेगहि सुरति करो तुम धुरकी दिन सब

बीते जाहिरे ॥ पांच कोटि और नौ हैं नारे ये सब वेगि सुखेहैरे ॥ यह तन नदी झूर हुइ जैहै मंछा हाथ न ऐहैं रे ॥ धीरज करी तुम डारौ वंशी इस विधि मंछा ऐहैरे ॥ नातर तो मगरा हरि खैहैं जीव अकारथ जैहैरे ॥ निरति सुरति करि धागा बांटो शब्द सुई पहिरावोरे ॥ अंतर कबहुं रहन न पावै ऐसा जाल बनावोरे ॥ शब्दकी डोरि तहां गहि राखो इस विधि जाल पसारोरे ॥ पांच पच्चीसो सिमरी भमरी सोई वेगि धरि मारौरे ॥ ए मन मिहरा वेगि मथौ तुम पवन महर ले साथारे ॥ इक मत हुईके चढोना उपर सिमरी आवै हाथारे ॥ वा सिमरीको लखे न कोई जहां मनसा जाईरे ॥ पिछले महरा जहँ लग होते खोजत रहे भुलाईरे ॥ नौ दरवाजे हैं सिमरीके जे सबहि तुम रोकोरे । पिछली प्रीति बिना कर जोरे दास पठावै छेकारे ॥ जिस सिमरीके रूप न रेखा नहिं बरन नहिं भेषारे ॥ जा खोजत सुरनर मुनि भूले कोई विरले पेखारे । झिलमिल नीर तिरवेनी संगम तहां ब्रह्मका बासारे ॥ कहै कबीर सुनो तुम साधो एक नामकी आशारे ॥ ८

कहरा ३–नाम सुमिर मन नाम सुमिरि मन नाम सुमिर मन मेरारे ॥ आवत जात बहुत दुख पैहो धरि धरि तन बहु तेरारे ॥ बालापनके गुनह करम सब प्रगट कहौं सुनिहौरे ॥ सुखसे भेंट भयी नहिं कबहूं

बहु दुख दारुण कीयारे ॥ सरवन कथा सुनी नहिं कबहूँ वचन शुचि मानारे ॥ नयना सुंदर रूप लुभाना यही करत तन माहिरे ॥ जीभ्या तेरी षट् रस राती है अंतर रस मानीरे ॥ नासा तेरी वासकी बासै विशेष विशेषारे ॥ सरवन तेरे रागके भीने अनहद शब्द न परेखारे ॥ कामी पड़े कामके वशमें छीजत दिन औ रातीरे ॥ एक घडीके सुखके काजै खोवे कुल और जातीरे ॥ संगी तुम्हरे गुप्ता महरम लाजत नाहिं लबारारे ॥ राग बाग तन कस कारि बांधो शब्दगहो हथियारारे ॥ गहि हथियार खेतमति छांडो रहियो खेत मंझारारे ॥ सूरा पनकी गति है न्यारी जाने संत कोई सूरारे ॥ पांच पचीस पकडि वश कीने जूझे गगन दुवारारे ॥ शूरा होयसो सन्मुख जूझे दरसै अलख अपारारे ॥ सम दृष्टिको सतगुरू दरशै परसे अप-रम पारारे॥ऐसी रहन रहै कोइ हंसा आवै लोक हमारारे ॥ कहै कबीर नामको कहरा परख शब्द टकसारारे ॥

कहरा ४–निहुरि नाच मन निहुरि नाच मैं तेरी दुलहि नियारे ॥ निहुरे नाचे शब्द विचारे चित्र विचित्र रहिनि-यारे ॥ कुंवटा एक पांच पनिहरियां पनियां भरै पतल-वारे ॥ बात सखीनसों चित गगरी सों चित सों गगरी न छूटै रे॥ चित्त छुटै तो गगरी फूटै पनियां खिर गगरी फूटे रे ॥ पानीके प्यासे पानी पीरेवा उर बैठि शब्दकी छहिरे रे ॥ आगि लगे तेरी मथुरा नगरीया कान्ह पियासे

जैहरे ॥ ज्ञान धनुईयां सुमति तीरले तृष्णासों विधि मारे रे ॥ कहै कबीर नामको कहरा महरम कोई विचारैरे ॥

कहरा ५—मूल छाडि ते डारन लागा ते नर परम अभागारे ॥ सोइ सोइ सब रैन गंवाई भोर भये नहिं जागारे ॥ शब्द पुकारत जागत नाहीं जनम जनमके सुतारे ॥ बांधे गरे रहटकीसी घडिया आवत जात विगूतारे ॥ पूरब जाउँ तो राम बखाना पश्चिम अल्लाह मकानारे ॥ दोनों दिन खोजि हम देखे सतनाम मन मानारे ॥ देवल जाऊँ तो पत्थर पूजा तीरथ जाऊँ तो पानीरे ॥ आसपास परिक्रमा दीनी पत्थर न बोला बानीरे ॥ ओछी बुद्धि अगोचर बानी सो गति विरले जानीरे॥ गुरुका सबद बसै जिस घटमें सोई सतब्रह्म ज्ञानीरे ॥ तुरक मसीत देहरा हिन्दू दो बिच राम खुदाइरे ॥ तहां मसीत देहरा नाहिं जहां अगम ठकुराईरे ॥ बिन गुरु ग्यान भरोसा किसका सरनो किसके रहियेरे ॥ कहैं कबीर एक तरवर फूला उपजी अनहद बानीरे ॥

कहरा ६—पंछी एक चोंच बिन पगका बिन पंख उडि जावैरे ॥ अलप अलेष लखै तन मनमें जोरे तनक हुइं जावैरे ॥ मगन मंडलमें उसका वासा अनहद नाद बजावैरे ॥ दुइके बीच ब्रह्मका वासा सतगुरु होय लखावैरे ॥ मांको मारि बापको बांधे घरमें अगिन लगावैरे ॥ काम क्रोधका करै पियाला निरत सुरत ठहरावैरे ॥ सलिल

न्हाई देखि जमुनाकौं भंवर फाकौं धावैरे ॥ नाभ कमलकौं समकरि राखै अठसठ चार मिलावैरे ॥ बंक नालकौं गहि कर पकरै सुषमन सिखर चढावैरे ॥ घरके घेरि घेरि घरही में उलटि उलटि पर चावैरे ॥ अनहद बाजे मधुर धुनि गाजैं आपा सब विसरावैरे ॥ परम हंस जहां केल करत हैं सतगुरु सहज लषावैरे ॥ हुइ निहचंत चिंता सब तजिकै सब अलमस्त कहावैरे ॥ कहैं कबीर ग्यान गुरगमसैं अटल हुआ लौलावैरे ॥

कहरा ७—अगम अगोचर ऐसारे। मैं कहि बतलाऊँ कैसारे ॥ जो कहिये सो हइये नाहीं है सो कहा न जाईरे ॥ सैना बैना कासौं कहिये गूँगेका गुठ भाईरे ॥ दिष्ट न आवै मुष्ट न आवै बिनसैं होइ न न्यारारे ॥ ऐसा ग्यान कथौ गुर गरुए पंडित करौ विचारारे ॥ काजी हाथ किनेब न बांचै पंडित वेद पुरानारे ॥ वह तो अक्षर लिखा न जावै मात्रा लगै न कानारे ॥ कोई धावै निराकारको कोई धावै अकारारे ॥ वह तो सत दोउन तैं न्यारा जानै जाननहारारे ॥ समझा होइ सो सब्द विचारै अचरज है अनजानारे ॥ समझ न परै ग्यान मतहीना आवागमन समानारे ॥ रागी बागी पढना गुनना बहु चतुराई भीनारे ॥ उतपत परलै कबहुँ न आवै सो सत विरले चीन्हारे ॥ जिन चीन्हा सो लोक समाने अमरलोक निज सूझैरे ॥ कहैं कबीर नामको कहिरा महिरा होइ सो बूझैरे ॥

कहरा ८—ऐसा मंदिल रचा विनानी सो गत विरले जानीरे ॥ अष्टधातका किया गिलावा दरज अनूठी ठानीरे ॥ दोनों खंभ दसो दरवाजा चौका सचौक पुराथारे ॥ पाँचो करी पचीसौ की रचना ऐसा महल बनायार ॥ दस दिगपाल देहके माहीं　नकी दस दस नारीरे ॥ निस दिन केल करे घट भीतर इच्छा सकल विचारीरे ॥ नौके परें निरंतर शोभा तहां सरस इक छाजारे ॥ दिष्ट मुष्ट तें अगम अगोचर ऐसा गढका राजारे ॥ कोट गियान सबद तहां उचरैं सुनो सत परवानीरे ॥ कहैं कवीर बदर नहिं चीन्हे बादकी करावे ग्यानीरे ॥

कहरा ९—संसा मेटि लगो गुरचरनौ सतनाम मुख बोलैरे ॥ या तरवर एक बसे पखेरु आ चुगत जुगन लिये डोलैरे ॥ यह पंछी कोई मोहि बतावे जो घट माहीं बोलैरे ॥ याकी संधि लखे जन कोई कौन ठमहिं बोलैरे ॥ आवे संझ उडि जाइ सबेरा गम न काहू देवैरे ॥ दुरमत छांड अनंद घर छावे पंछीं बसेरा लेवैरे ॥ दुइ फल चाखि नषर वह आगैं और नहिं दस दीसारे ॥ कहैं कवीर साध कोई जाने सतनामकी आशारे ॥

कहरा १०—सुनो संत इक निरगुन कहरा महरा होय सो बूझैरे ॥ तनसे न्यारा मनहुसे न्यारा देउ दिष्ट होइ सूझैरे ॥ बिन नैनन जहां सब कछु दीखे बिन सरवन सुने बानीरे । विना नाशिका वास सुवासा षट रस पावे

ग्यानीरे ॥ विन जिभ्या जहां अमृत भोजन विन इंद्री संजोगारे । पांच पचीस जहां हैं नाहिं नहीं संजोग बिजोगारे ॥ रूप रेख विन निरगुन नामा सत गुरू लखावेरे । कहैं कवीर नामकी महिमा ग्यानी होय सो पावेरे ॥

कहरा ११—वा घरकौं कोई मोहि बतावो जा घरसैं ब्रह्म आयारे ॥ काया छांडि चले जव हंसा तव ब्रह्म कहां हमायारे ॥ मैं मेरी ममताके काजैं बारहिंबार ठगायारे । समझ न परत ग्यान मति हीना फिरि फिरि भटका खायारे ॥ अव मेरी प्रीति नामसौं लागी उलटि निरंतर धायारे ॥ सहजै सुषमनि पांउ पलौटे निज धनी अपनायारे ॥ नहीं जहां चंद्र नहीं जहां सूरा जहां जाइ मठ छायारे । कहैं कवीर ग्यान धुनि मांहीं सहजैं सहज समायारे ॥

कहरा १२—जोरा जोर रचा जुग ऊपर संतौ करौ बिचारारे । एक ओर सुरनर मुनि ठाढे एक अकेली मायारे ॥ पारारिषको पानपटारी सिर ब्रह्मोको झाहीरे । नाथ मछंदर पीठि दै भागे गोरख पैज सम्हारीरे ॥ नारद केरि निशान ठवाये हनमत हांक हकारीरे । शृंगी ऋषि से वनमें लूटे शंकर नेजा धारीरे ॥ वृन्दावनकी कुंज गलिनमें लूटे कुंज विहारीरे । कहैं कवीर पाषरिया लूटे रइयत कौन विचारीरे ॥

कहरा १३—मन मतवारा नाम रस पीवे गगन मँडल गुन गावैरे । नाम सुधा रस भर भर पीवे सुषुमन सुरति मिला-

वैरे ॥ ग्यान सुराही भरे कलवरिया छकि २ मोहि छका वैरे । साध संत मिलि पीवन लागे अनहद धुनि सुनि पावैरे ॥ सतगुरु दया बहु कीनी घट घट अलख लखावैरे । दास कवीर कहरा गावे महरा होय सो पावैरे ॥

कहरा १४—चुनरी हमारी पियने सुधारी ओढैगी पियकी प्यारीरे । हूंठ पैंडकी बनी चुनरियां या चौपाट अपारीरे ॥ बिनहीं ताना वनी है चुनिरिया बहु विधि रूप सम्हारीरे । चांद सूरज दोऊ अवलां लगाये जगमग जोति उज्यारीरे ॥ पांच पचीस वाके पैवंद लागे ओढैगी री झन-वारीरे । कहैं कवीर साधु भल सोई एक नाम व्रत धारीरे ॥

कहरा १५—गगन गुफामें पैठि क्यों न देखो जहां पुरुष इक ऐसारे । दिष्ट न मुष्ट न अगम अगोचर जाने जो तैसारे ॥ तामैं हम सोई हम मांही पकरि देहुं क्या भैंसारे । सतगुर सबद परष जब आवे परषन कौं क्या पैसारे ॥ समझे सबद समझ घट आवे वह जैसेका तैसारे । कहैं कबीर सुनो तुम साधो है हम मैं हमहैसारे ॥

कहरा १६—अबगत नगर बसौं भाई हंसा आवा-गवन मिटाईरे । काल अकाल जंजाल न व्यापे तिहि पुरवतन कराईरे ॥ उदै नहि अस्त दिवस नहीं रजनी पाप पुन्न नहीं दोईरे । मोक्ष न मुकति जनम नहि बंधन उपजै मरै न कोईरे ॥ ब्रह्म सहर जहां निर आलम है अलष पुरुष किंधु होईरे । कहैं कबीर अमरपुर वासा इह सुख जाने सोईरे ॥

कहरा १७-जिनके सुभाग भाग बड़ पियसौं सोई नारि सुहागिनरे। जो तूं पियकी आज्ञा मानै कबहू न होत दुहागिनरे॥ जो पिय मारै पाऊँ न टारै सहई कठिन कसौटीरे। जो पिय मारै गहि झिझकारै पियके चरन पलोटैरे॥ उलटि घटा अनहद घहरानी बाजत अनहद तू रारे। सरग उडि कागदकी गुडिया सुरत डोर कर पूरारे॥ जो कबहुं छुटि जाई हाथसौं तौ सब होत बिगारारे। उर अन्तर निरबान पुरुष है पुहुप दीप उजियारारे॥ ताहि लखै कोई संत विवेकी सुषमन सुरति लगावैरे। दास कबीरका निरगुन कहि रामहि रम होई सो पावैरे।

कहरा १८-पुरुष पुरातम वसै अपारा ताहीं सैं नेह लगावौरे। पुदगल रूप दियो करतानै शील कंकन पहिरावौरे॥ भाउ भगतका करौ चोलना ग्यान भूत रमावौरे। या घट भीतर ब्रह्म विचारौ खोज अगमका पावौरे॥ शील संतोष ग्यान धुनि लागी अधिक नेह नहीं छूटैरे। जो कहूं छूटि परै भै माहीं पकरि जम तब लूटैरे॥ चांद सूरजकी बनी पलकिया चढि चलौ देश हमारारे। अमर लोक हंसनका बासा दरसै दरस अपारारे॥ अमृत फलका भोजन पावे हुइहै मगन दिवानारे॥ कहै कबीर नामको कहिरा बूझे संत सुजानारे॥

कहरा १९-तेरे तौ कारन मेरे मन मोहन ढूंढा देश विदेशारे। सब फिरि आया कहूं न पाया किनी तपसी

की भेसारे ॥ तीरथ वरत बहु विधि कीना धूप शीत तन गारारे । तेरे कारने मेरे मन मोहन पांचो इंद्री जारारे ॥ स्रवन सुनले बिषकी बातें अब इमरत चितधारारे । नाही विषकी वास सुहाती अब सत सबद सुवासारे ॥ नैन विषे रस माते फिरते अब निज रूप निहारारे ॥ जिभ्या पट रससे लुभानी अबतो नाम रस पीयारे ॥ पांचो इन्द्री विषै रस मानी लाज कान नहीं कायारे ॥ त्रिपति भई सब पांच पचीसौ घरही बैठे आयारे ॥ गुर गम नाम अमीरस प्याया पियत परमपद पायारे । दास कबीर सुषमना वासी गगन पयाना दीयारे ॥

कहरा २०—धागा टूटा गगन विनसि गया हंसा कहां समाई रे । इह अचरज मोहि निस दिन व्यापै कोई न कहै समझाईरे ॥ घर नाहीं घरन नाहीं घरावन हारा नाहीरे। इंगला पिंगला सुषमन नाहीं यह गुन कहाँ समा- हीरे ॥ सबद अतीत रहै संग रमता यह गुन कहाँ समाईरे। टूटी जुरे जुरी फिरि टूटै जब तब होइ विनासारे । तबको साहिब अबको सब कहु काको बिसवासारे ॥ सीषै सुनै कहै कहा होई जो नहिं पदहिं समानारे । कहैं कबीर गगन नहिं विनसे यौ धागा उन मानारे ॥

कहरा २१—सुनौं सियानी अकथ कहानी पिय अप- नेका लेवोरे । जो धन तुमकौ पियने सौंपा सो धन वाद मत षौवोरे ॥ गहि मारे और धरि झिझकारे कैसे सहो

कसौटीरे ॥ जो मारौ तौ पाउ न टारौं अबै सुरति लौ लाऊँरे॥घरमै रहौंकै आँगन ठाढी सतसौं नेह न छांडौरे॥ कागद गुडिया सरग उडानी सुरति डोरि मति डांडौरे॥ जो कबहुं छुटि जाइ हाथसौं तौ सुख नींद न सोवौरे ॥ एक सतवंती पिय संग गवना रहत पियाके संगारे ॥ एक सतवंती पिय संत जरई झरत न मोरै अंगारे ॥ पांच पचीस संगके रोवैं वह सुख मंगल गावैरे ॥ पूरवको सूरज पछिम दिस ऊगै सतिया सत न छाँडैरे ॥ बूढी बैस सुहागन सोहै बालम हाथ न आवैरे ॥ दास कबीर पढै यह कहिरा महिरम होइ सो पावैरे ॥

कहरा बिलरी२२—बिलरी बिलोइ तंत मथ हंसा आगे करौ पयानाहो। झंडा रोपि गमन कर हंसा पावौ अगम निसानाहो ॥ सूरजका द्वार उलटि गहु हंसा चंद लगन गहु बाटाहो। दुइ बिलरी दुइ दिसा समनिया निरषै इक घाटाहो ॥ इस विधि बिलरी सधि चल हंसा सुरति कमलकी जोटाहो। बजर सीला जब उघरै हंसा निकसि जाइ सब षोटाहो ॥ मध्य अकार धरमका आसन बाजन बजै अपाराहो। उठै धूम जहां तुरही बाजै नरसिंघा झनकाराहो ॥ उठै तरंग जहां नौबत बाजै भांति भांतिके रागाहो। जहा बैठे हैं हंस वरनवरनके अति अनूप सब बागाहो ॥ सात सुन्नपर सत्रह बाजा कँगुरा कँगुरा छाजाहो। जिहि सब करी पसारा चीन्ह चलौ हंसा राजाहो ॥ आदि पुरुष

जहाँ बैठे विदेही जगमग जोति अपाराहो । वामैं यह निज हंस उबारन धरि मन करहु विचाराहो ॥ यही सबद तुम निज करि चीन्हौ उतरौ भौजल पाराहो । कहैं कबीर त्रिवाचा पालौ सांचा सबद अपाराहो ॥

कहरा विलरी २३-सब संतन मिलि सुरति विचारी सतसैं प्रीति लगाईहो । अमृत गहिके अमृत सुधारे दुरमति दूरि विहाईहो ॥ चित्त चौका संतोष बैठका प्रीतिकी पातरि लावौहो । ग्याने गारि छान पट गाढ़े भावको भात बनावौ हो ॥ प्रेमकी खांड परोसौ हितके ततको तंत मथावौ हो । लौकौं लेवौ जुगतकौं जैवो सब संतन मिलि पावौ हो ॥ मानकी कपटी दीन दही कर जोरो संग छगावौहो । निहनो नोंन पीसकर लावौ तामैं तुरत मिलावौ हो ॥ बिरहको बरा बनाइ जतन सौं पानी पूरन भिजावौ हो । हित करि हेत हिये हिरदेसौं नीको बरा जिमावो हो ॥ बंकनाल सूधाकर बौरी जिन इह बरा बनावो हो । भाव कर भेंटा शीलकर सेमी पापर आवा लावो हो ॥ याही तंतसैं हंसा आवे पहुचे लोक हमारो हो । कहैं कबीर सुनो तुम साधो यह निज तंत समारो हो ॥

कहरा २४-अब नहीं तजौं भजौं नहीं कबहूँ जो था सो पहिचानैरे । करौ करम भरम गति पाई भरम बिझका छूटारे ॥ पाप पुन्नतैं रहौ निरंतर करनी संसे छूटारे । जाके जतन भये छुटि बंधन विधि निषेध परि हरियारे ॥

उत्तम मध्यमकासौं कहिये तत अखंडित भरियारे ।
चंचल अचल चलाचल थाके सुषमनि सुरति समानीरे ॥
कहैं कबीर स्थिर पद दरसे मिटिगइ आवा जानीरे ॥

कहरा २५—ना मैं धर्मी ना मैं अधर्मी नामैं कामी अकामीरे। ना मैं श्रोता ना मैं वकता ना मैं सेवक स्वामीरे॥ नामैं गुपता ना मैं मुकता ना निरबंधी सरबंगीरे। ना हम काहुते न्यारे रहते ना काहूके संगीरे ॥ ना हम सुरग लोकको जाते ना हम नरक सिधारें रे । सबै करम हमहीने कीने हम करमनतें न्यारेरे ॥ इह विवेक कोई विरला बूझे जो सतगुरुको भेटैरे । मत कबीर काहूको थापै मत काहूकौ मेटैरे ॥

कहरा २६—दिष्ट परैसो मायारे दिष्ट परे सो मायारे ॥ वहतो अचल अलेष एक है दिव्य दिष्टि मैं आयारे॥ सत गुरू दियो लखाई आपमें है माहीं सत सोईरे । दूजो किरतम थापि लियौ है मुकति कहांते होईरे ॥ काया पराई त्रिगुन ततकी बिनसि जाई छिन माहीरे । निरगुन ब्रह्म लखौ घट अंतर जो विनसनमें नाहींरे ॥ ऐसे सदा देहगति सबकी महरम कोई उचारैरे । आपही होइ न्यायी करि न्यारो इहि विधि माया विचारैरे ॥ सहजे रहै समाइ सब रुपैना कहूं जाइ न आवैरे । धरै न ध्यान करै नहीं जप तप राम रहीम न गावैरे ॥ तीरथ वरत दोऊ फल त्यागे सुन्न दौरि नहीं धावैरे । यह संसे जब

समझ परेगी पूजे काहि पूजावैरे ॥ जोग जुगतिसौं करम न छूटे जो पै आपा आपन सूझैरे । कहैं कवीर ते जन गरुये जे कोइ समझे बूझैरे ॥

कहरा २७–मनषा जनम सुधारौ संतो धोखे कहा बिगारोरे ॥ गुड गुडीका ख्याल छांडि देहु आतम तत लौ लावौरे । जब लग घटमें परचै नाहीं तब लग कछू न पावौरे ॥ नेम वरत और जप तप संजम यह करनी मति भूलोरे । करम फन्द जुग जुग गल पहिरे फिरि फिरि बोना झुरैरे ॥ न कुछ नहाये ना कुछ धोये, ना कछु घंट बजायेरे । ना कुछ नेती ना कुछ धोती ना कछु नाचे गयेरे ॥ से लीन सिंगी जटुआ न बटुआ आप स्वांगमे न्यारारे । कहैं कवीर मुकति तब पावौ गहौ जु सबद हमारारे ॥

कहरा २८–बंझा एक सुपनमैं सूती पूत जना अति लोभारे । बहुतक दान दिये विपरनकौं बहु रूपा बहु सोनारे ॥ फिरि सुपनेमें सुपना देखा ब्याहि पूत घर आयारे । आवत ही मरिगया पूत हूआ रोवन पीटन ठांगेरे ॥ यह संसार सुपनसम देखा कहैं कवीर विचारीरे ॥

कहरा २९–अरे मन महरा करहु सितावी बिलम किये भल नाहीरे । एक नवरिया पाँच खिवटिया धरमराइको साईपारे ॥ पहिली धारा वेद किलेबा हिंदू तुरक मिलि धाइरे । दूजी धारा काम किरोधा ओहीमें बहि जाइरे ॥

तीसरी धारा कर्मकी फांसी जाइ लगा संसारा रे । चौथी धारा नौ औतारा राम किसन गुनवारारे ॥ पचवीं धारा जोतिसरूपा हिंदू तुरुक मिलि धायारे । घटवरिया मोहि जान न देसी घाटहीमें लेख चुकायारे ॥ कहैं कवीर मेरा साध विवेकीषां धारासे रहा हुइ न्यारारे ॥

कहरा ३०—वा घरकी कोई मोहि बतावौ जा घरसैं ब्रह्म आयारे । काया छांडि चलै जब हंसा तब ब्रह्म कहां समायारे ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश न होते आदि न होती मायारे । रज वीरज दोनौं नहीं होते तब ब्रह्म कहां रहायारे ॥ पवन पानी मिलि दही जमाया अगिनिका जामन दीयारे । चंद सूरज दोनौं करत षवासी घोर मथन घृत कीयारे ॥ मैं मेरी ममताके कारन बारहीं बार ठगायारे । अजहुं समझ ग्यान मति हीना फिरि फिरि भटका खायारे ॥ सुरति सुहागिन चरन पलोटे धनी आपना पायारे ॥ जिनकी सुरति लगी सत सबदे उलटि निरंतर धायारे ॥ चाँदौ सूरज दिवस नहीं रजनी जहां सुरति लौलायारे ॥ कहैं कवीर ग्यान धुनि उपजी सहजै सबद समायारे ॥

कहरा ३१—आपही आप इच्छना धारी इछा बेल पसारीरे ॥ आप अपारू इछा धारू बहु विधि रूप सम्हारीरे ॥ इछा माहिं बीज विस्तारा मूल पत्र औ डालीरे । पेड और डाल फूल फल सबही वा माहीं है सारीरे ॥

चौंसठ चौक पूर जब करके ले आपुन आप माहींरे।
कहैं कबीर यह एकम एका और दूसरा नाहींरे॥

कहरा ३२-अविगत अगम अपार अशेषा रूप वरन नहीं भेषारे॥ दिष्ट न मुष्ट लषा नहीं जाई ना काहुन पेषारे॥ वाकी महिमा कहाँलौ वरनौ मो पै वरनि न जाईरे॥ ऐसा अलष लषै नहिं कोई ना काहू दिया दिखाईरे॥ अपरमपार अपार अखंडा घटमें रहा समाईरे॥ जिन कछु खोज पिंडका कीया सैनहि सैन बताईरे॥ ब्रह्मंड नौ पंडपिंड मांहि पूरि रहा गुरु पूरारे॥ कहैं कबीर गगन धुनि माहीं बाजत अनहद तूरारे॥

कहरा ३३-तन धरि सुषिया कोई न देखा जो देखा सो दुखियारे॥ उगन आथनकी बात कहत हौ सबका किया विवेषारे॥ ब्रह्मा विष्णु महादेव दुखिया जिन यह राह चलाईरे॥ सुखदेव आचारी दुखके कारन गरभहि माहिं छपाईरे॥ राजा दुषिया रानी दुषिया रंक दुषी धनहीनारे॥ जोगि दुखी और जंगम दुखिया कपटीको दुख दूनारे॥ आशा तृष्ना सब घट व्यापै कोइ महल नहीं सूनारे॥ घाट बाट तो सब जग दुखिया क्या गेही पढगीतारे॥ कहे कबीर यह सब जग दुखिया कोई संत सुखी मन जीतारे॥

कहरा ३४-सतगुरु आइ करी निज दाया अब हम आया चीन्हारे। निज बुध रूप पिरापत नितही अचरज

सहीजु कीन्हारे॥ ना हम मनुष देवता नाहीं ना गेही बन षंडीरे। ब्राह्मन छत्री बैसहू नाहीं ना हम सूदर डंडीरे॥ ना हम जोगी ना हम जंगम ना हम तपी सन्यासी रे। ना वैरागी ना ब्रह्मचारी ना हम जपी उदासीरे॥ ना हम ज्ञानी चतुर न मूरख ना पंडित न पोथीरे॥ ना हम शायर ना मरजीवा ना हम सीप न मोतीरे॥ ना हम गगन शुन्न भी नाहीं ना हम तेज न पानीरे॥ मन बुधि चित अहंकार भी नाहीं ना हम वेद न वानीरे॥ ना हम अमर मरे नहिं कबहूँ हम कबीर ज्योंका त्यौंहीरे। व्यास कपिल और वामदेव ऋषि सबकी अनुभव यौंहीरे॥

कहरा ३५—ग्यान विचारन ग्यान विचारन ग्यान विचारन जोगीरे॥ रहै उदास सबसे सबहुनमें सुषमनि सुरति संजोगीरे। जैसे कमल रहै जल भीतर जलसे रहत निनारारे॥ ऐसे साध रहै जगमाहीं परम तत्त्व निरवारारे॥ जैसे धाइ बालको पोषै अपनो जानत नाहीरे। करम करै करता न कहावे यौं साधु जग माहीरे॥ उदै भयो तिमर सब खोया अंधकार सब नासारे। कहै कबीर विचार अभै पद निहतत निजवासारे॥

कहरा ३६—हम तो भरम बिसारि डारिके एक एक कारि जानारे। दूजा कहै गहीकै दूजा जिन नाहीं पहिचानारे॥ एकै पवन पावक और पानी एकै जुत संसारारे। एक खाख गढे बहु भांडे एकै सिरजन हारारे॥ जैसा

बढई काठे काटै अगिनि न काटै कोईरे ॥ ऐसे व्यापि रह्यो अभिअंतर धरैं सरूपा सोईरे ॥ माया मोहकारि जगत भुलाना अर्थ देखि पतियाना रे ॥ होइ निरशंक कछू नहीं व्यापै कहैं कबीर गियानारे ॥

## गौरी प्रारम्भ ।

गौरी १-संतो मन चिन्हो रे भाई । मन चिन्हे विना परलैतर जैहो जीव को जमले जाई ॥ टे० ॥ मन चिन्हे ते हंस हमारा । तजै खलककी आस ॥ छूटै पिंड काल नहिं पावे । पावे मुक्ति निवास ॥ मूल लेखामें जीव जो आवे । दुविधा दूर बहाइ ॥ पुरुप नामको सुमिरन कारिके । अगर डोरि चढि जाइ ॥ निशि दिन सुरति करे साहिबसों । सबद हेत लिय बोले ॥ कहैं कबीर सुनो भाई संतो । सो जीव कबहूँ न डोले ॥

गौरी २-जा दिन मन पंछी उडि जैहै । तेरो नाम न कोई लैहै॥टे०॥ सूखे ताल नीरकैं निबडै । सूखे कमल कुमलैहै ॥ सूखे पुरइन सरकी शोभा' जित तित धूर उडै है ॥ जब लग तेल दीपमें बाती । दिष्ट पडे सब कोई ॥ निपटै तेल बीत गइ बाती । जग अंधियाग होई ॥ जा प्रीतमसो प्रीति करत हैं । ताहीको अंग डरिहै ॥ दूर करों मंदिर सों बाहिर । प्रेत भया धरिखैहै ॥ दिन दोय चार नाम भजि लेहु ।काल अचानक खैहै ॥ कहैं कबीर जगतका वासी । निकस पयाना देहै ॥

गौरी ३—मन रे जागत रहिये भाई। गाफल होय वस्तु मत खोवे ॥ चोर मुसे घरजाई ॥ टे० ॥ षट्‌ चक्रकी कनक कोठरी वस्तु भाव है सोई ॥ ताला कुंजी कुलफ कर लागे उघड़त बार न होई ॥ पांच पहरवा सोय गया है वस्ती जगवा जागी ॥ जरा मरन व्यापै कछु नाहिं गगन मंडल लव लागी ॥ कर विचार मन ही मन उपजी ना कहुँ गया न आया ॥ कहै कवीर संशय जब छूटै नाम रतन धन पाया ॥

गौरी ४—डग मग छाडि दें मन बौरा ॥ अब तो जरै बिन आवे लीन्हो हाथ सिधोंरा ॥ टे० ॥ पहिर जंजीर पैठि रन भीतर जूझ मरे नहीं भागे ॥ जन्म मरनकी आशा छोड़े सो पग धारे आगे ॥ होय निःशंक मग्न होय नाचो लोभ मोह भरम छाडौ ॥ सूर कहां मरन सो डरपै सती न सांचौ मांडौ ॥ अग्नि जरै सो सती न कहावे जूझ मरै नहीं सूरा ॥ ब्रह्म अग्निमें यह तन होमैं सो पद पावे पूरा ॥ लोक लाज कुलकी-मरजादा येही गलेमें फांसी ॥ आगे होय पग पीछे धरि हैं होय जगतमें हांसी ॥ ये संसार सकल जग-मैला नाम भजै ते सूचा ॥ कहैं कवीर हरि भक्ति न छांडो गिरत परत चढि ऊंचा ॥

गौरी ५—नट होय नाच रे मन मेरा जो रीझै साहिब तेरा ॥ टेक ॥ ज्ञानको ढोल बजाय रैन दिन शब्द सुनै

सब कोई ॥ राहु केत गह जब कोपै जम घर बंधन होई ॥ द्वादश तिलक बनाये वांस चढि जग तजि होय रहो न्यारा ॥ सहस कला होय नाचे मन मोरा रीझेगा साहेब प्यारा ॥ जो रीझे जगदीश जगतगुरु देगा दान बुलाई ॥ भरी सभामें चोला बकसे फाटि कबू नहिं जाई ॥ जो तू कूदि जाये भवसागर कला बतादूंगा तेरी ॥ कहैं कबीर सत व्रत साधो, नव निधि होय रहै चेरी ॥

गौरी ६-जगमें काहु न मन वश कीन्हा । भारत खंडमैं भरतसे ग्यानी मृग सुत मन हर लीन्हा ॥ टे० ॥ शृंगी ऋषि सो वनमें रहते, विषय विकार न जाने ॥ पठई नारि भूप दसरथने, पकडि अजोध्या आने ॥ सूखे पत्र पवन भखिरहते पाराशर से ज्ञानी ॥ भरमैं रूप देखिके गनिकाको काम कंदला वानी ॥ जमदग्निकी नारि रेनुका, गयी यमुना जल लेने ॥ भरमि देखि भूपको मन्दिर, थकित भये दो नैने ॥ सोई सुरपति जाके नारी सुचीसी, निश दिनही संग राखी ॥ गौतम घर कामनि होर वसि, निगम कहत है साखी ॥ पार्वतीसी पत्नी जाके, ताके मन क्यों डोलै ॥ खलित भये छबि देखि मोहिनी, हाहा कह कह बोले ॥ येक ही नाल कमल हित ब्रह्मा, जग उपराज कहावैं ॥ कहैं कबीर एक मन जीते, विना जीव विसराम न पावे ॥

गौरी ७-मनसा बिन दौडे न रहैरे । जो मैं राखों जग

जुगति सो, छिन छिन मोहि दहैरे ॥ टे० ॥ यह गयंद पांचों मद माते, आँकुशको न सहैरे ॥ नाम सुने रंग राते नाहीं, विषकी वेल गहैरे ॥ समझत नाहिं मूढ मारगको, उबट राह बहैरे ॥ अरध मास भादोंकी नदिया। वे मरजाद बहैरे ॥ सीखे सुने गावे बहु तेरे, कोइ यक राह न रहैरे ॥ कहैं कबीर यह भगत दुहेली, विरला जन निबहैरे ॥

गौरी८—मन तू थकत थकत थकि जाइ। विन थाके तेरा काज ना सरि है, फिर पाछे पछिताई ॥टे०॥ जब लग तू सरजीव रहत है, तब लग परदा भाई ॥ टूटि जाये ओट तिनकाकी, जो मन शिखर दह जाई ॥ सकल तेज तजि होय नपुंसक, या मति सुनि तू मेरी ॥ जीवन मृतक दशा विचारे, पावे वस्तु घनेरी ॥ याके परे और कछु नाहिं, यह मत सबसूं पूरा ॥ कहै कबीर मारि मन मैंगल, होय रहै जस धूरा ॥

गौरी ९—मन तू चेतन होरे भाई। जाते काल फांस मिटि जाई ॥ टे० ॥ घटमें सिन्धु सिन्धुमें जल है। तामें कमल विराजे॥तामें जोति प्रगट परमेश्वर। सिखर घरावर बाजैं ॥ रवि शशि और सकल तारायन। गंगा जमुना दो धारा ॥ तामें जोति वरै पावककी। त्रिभुवन भया उजियारा॥सात अरु पांच चतुर्दश तामें। और बहत्तर थाना। ज्ञानी गुनी जानि जिव अपना। घटमें सिंधु समाना ॥

तेतीस तीन चारि ताहि खोजैं । शंकर पार न पावे ॥ कहैं कबीर बलि बलि सतगुरुकी । घटही माहिं लखावे ॥

गौरी १०–मन तू पार उतरि कहां जैहै । आगे पंथी पंथ न कोई, कुछ मुकाम न पैहै ॥ टेक ॥ नहिं तहां नीर नाव नहीं खेवट; ना गुन खैंचनहारा ॥ धरनि गगन कलप कछु नाहिं, ना कछु वार न पारा ॥ नहिं तन नहिं मन नहि अपन पौ, सुन्यमें सुधि न पैहै ॥ विलै मान होय जाय फूटि घट, याहु ठौर विन होय हो॥ बार बार विचार देखि मन, अन्त कहूँ नहिं जैहो ॥ कहैं कबीर सब छाँड़ि कलपना, ज्योंका त्यों ठहरैहो ॥

गौरी ११–या मनको खोजोरे भाई । तन छूटै मन कहां समाई ॥ टे० ॥ शिव विरंचि नारद मुनि ज्ञानी । मनकी गति उन्हुँ नहिं जानी ॥ ध्रुव प्रहलाद विभीषन शेषा । तन भीतर मन उन्हुँ न देषा ॥ सनक सनंदन जय देव नामा । भक्ति करि मन उन्हु न जाना ॥ याम-नका कोइ लहै न भेव । रंचक लीन भया सुखदेव ॥ गोरख भरथरी गोपीचंदा । या मनसौं मिलि करे अनंदा ॥ एकलि निरञ्जन सकल शरीरा । या मनसौं मिलि रहा कबीरा ॥

गौरी १२–है कोई भूला मन समझावे । यह मन चंचल चोर पाहरू छूटा हाथ न आवे ॥टे०॥ जोड़ि जोड़ि धन औडे गाडे, जहां कोई लेन न पावे ॥ कंठ कपोल

आनि जम घेरे, दे दे सैन बतावे ॥ खोटा दाम गांठि लिय डोले, बडी बडी वस्तु भुलावे ॥ बोवै बबूल दाख फल चाहै, सो फल कैसे पावे ॥ गुरूकी दया साधुकी संगति, ये दोउ मति विसरावे ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, बहुरि न भौजल आवे ॥

गौरी १३–मन तू क्यों भूलारे भाई, तेरी सुधि बुधि कहा हेराई ॥ टे० ॥ जैसे पंछी रैन वसेरा, बसे वृच्छ में आई ॥ भोर भये सब आप आपको, जहां तहां उठि जाई ॥ सुप्नामें तोहि राज मिल्यो तहाँ है, हाकिम हुकुम दुहाई ॥ जागि पड्यो जब लावन लसकर, पलक खुले सुधि आई ॥ मात पिता सुध बंधु तिरिया, नाती सगो सगाई ॥ यह तो सब स्वारथके संगी, झूठी लोक बडाई॥ सागर माहिं लहरि उठत है, गिनती गिनी न जाई ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, दरिया लहरि समाई ॥

गौरी १४–मनुवा नाहिं मानत मोरा। वार वार मैं कह समझायो, जगमें जीवन थोडा ॥टे०॥ या काया का गर्व न कीजे क्या श्यामल क्या गोरा ॥ भजन विना तन काम न आवे, कोटि सुगन्ध चहोरा ॥ या माया जनि देखत भूलो, क्या हस्ती क्या घोडा ॥ जोडि जोडि धन बहुत विगूचे, कोटिक लाख करोड़ा ॥ उवध्या उरमति और चतुराई, जन्म गमायो बौरा ॥ लेत उपाय गिरत भव परियो, जैसे बालक भौंरा ॥ अजहुं आयकरो

सत्संगति, हरि भजि मानि निहोरा ॥ कहैं कवीर मन चितराखो, ज्यों रे सुईं बिच डोरा ॥

गौरी १५-मन तू मानत क्यों न मनारे। कौन कहन को कौन सुननको, दूजा कौन जना रे ॥ टे० ॥ दर्पनमें प्रतिबिंब जु भासे, आप चहुँ दिशि सोई। धोखा मेटि एक जब होवे, जो लखि पावे कोई ॥ जैसे जलते हेम बंधत है, हेम धूम जल सोई ॥ तैसे या तत वा तत सो, फेरि यह अरू वह सोई॥ जे समझे तो खरी कठिनहै, नासमझै तो खोटी ॥ कहे कवीर दो उपाधि त्यागे, ताकी मति है मोटी ॥

गौरी १६-साधो भाई आतम सत प्रगासा। ज्यों सूरजमें नहीं अंधेरा, ऐसे सत्य उजासा ॥ टेक ॥ ज्ञान स्वरूप महा अति सूच्छम, करन कहै विज्ञाना ॥ अंधाको सूरज नहिं सूझे, भूल्यो सकल जहाना ॥ बद्लीमें सूरज जिमि छिप जाई, माया ब्रह्म लुकाना ॥ ऐसे आतम सत प्रकाशा, विरले साधू जाना ॥ आपहिं एक अनंत युनि आपही, नरक स्वर्ग तहां नाहीं ॥ कौन तरे कौन काको तारे, भूलि रह्यो बाहिर माहीं ॥ करता काल कर्म नहिं माया, आपही है सब जागा ॥ जन्म मरन नाहिं कछु धोखा, आप चीन्ह भ्रम भागा ॥ विन चीन्हे कौनसो कहिये, दुतिया होये बताऊँ ॥ जाकी वस्तु गईसो ढूंढे, गई नहिं क्या पाऊं ॥ आदि अनादि

पार के पारा, वार पार सब एका ॥ कहैं कबीर बूझिये भाई, साधू करै विवेका ॥

गौरी १७–जब ते आत्म तत्त्व विचारा। तब निर्वैर भया सबहीते, काम क्रोध गहि डारा ॥ टेक ॥ सबमें आपमें आपमें सबहीं, आप आपमें मेला। नाना भांति घड़े बहु भांजन, रूप धरे धरि खेला ॥ पूरन ब्रह्म सकल घट कहिये, को पंडित को जोगी। राजा रंक कौनसों कहिये, कौन वैद कौन रोगी ॥ चारूं दिशा ढूंढि हम आये, निरगुन कोई न बतावे। कहैं कबीर कोई दास निज निर्गुनी, और सब लीला गावे ॥

गोरी १८–आपन पौ आपनहींमें पायो। शब्दही शब्द भयो उजियारा, सतगुरु भेद बतायो ॥ टेक ॥ जैसे सुंदरी सुत लै सुती, स्वप्ने गयो हेराय ॥ जाग परी पलंगपै पायो, ना कहुं गयो ना आय ॥ जैसे कुवाँरि कंठ मनि हीरा, आभूषन विसरायो ॥ संगकी सखी मिलि भेद बतायो, जिवको भरम मिटायो ॥ जैसे मृग नाभि कस्तूरी, ढूंढत बन बन धायो। नासा स्वाद भयो जब वाके, उलटि निरंतर आयो ॥ कहा कहूं वा सुखकी महिमा, ज्यों गुंगें गुड खायो ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधो, ज्योंका त्यों ठहरायो ॥

गौरी १९–राम विना कछु नाहिं साधो, राम विना कछु नाहिं ॥ रामहिं आगे रामहि पीछे, रामहिं बोले माहिं॥टे०॥ उत्तर राम दक्षिन राम, पूरव राम पश्चिम रामा॥

जहां जाय लाड लड़ालाहायो ॥ कहै कबीर कोइ पियाकी प्यारी, पिया पिया रट लायो ॥

गौरी २२—बात लगे मोहि नीकी प्यारी, तेरी बात लगे मो नीकी । जो कोई कोटि भांति समुझावे, सबही लगे मोहि फीकी ॥ टेक॥ जलको मीन पलंगले राख्यो, ले अमृत जल सींची । तलफ तलफ तजत पलंगपै, सुधि बुधि विसरचो जिवकी ॥ स्वातीको स्वाद पपीहा जाने, को जाने वाके जिवकी ॥ पियाको मरम सोइ भल जाने, जाके चोट विरहकी ॥ हीराकी परख जौहरी जाने, चोट सहै सिर घनकी । कहैं कबीर जहँ प्रेम वसतु है, छिपी न रहै वा जनकी ॥

गौरी २३—संतो बोलनहारा राम रजा । पिंड ब्रह्मांड रहै भर पूरा, आप अकेला बांधि धजा ॥टेक॥ जैसे बुंद परी जल माही, जलहीते बुद बुद उपजा ॥ मिट गया बुद बुद जलही समाना, होय गया एक सरूप सजा ॥ कोटिक कुम्भ भरे जल झलके, तामें दीसे चंद सजा ॥ विनशै कुम्भ चंद नहिं विनशै, शब्द स्वरूपी अमर अजा ॥ जामें हम सोई हम माहीं, मैं ते ते मैं गगन गजा ॥ कहैं कवीर कछु संशय नाहिं, तत्त्व लखा जब भ्रम भजा ॥

गौरी २४—संतो भाई हरिसा हीरा लाधा, देखत ही मन मगन भयो है, गिन गिन गांठी बांधा ॥ टेक ॥ पल पल परखों छिन छिन निरखों, राखूं छांनै छांनै ॥ भेद

काहुपे भानू नाहिं, परचो रंकके पाने ॥ तोल न मोल अमोलक कहिये, फोरेहु नहिं फूटे ॥ कहैं कवीर यह खुल गइ गठरी, खोले नहिं खूटे ॥

गौरी २५-जप जप अजपा जाप भला । सुरति न विसरूं एक पला ॥ टे० ॥ येही राह वहै सतगुरुकी, पंछी मारग मीन चलां ॥ हंसा मारग सोध चले हैं, जा खोजत जम मान दला ॥ सतलोक सतगुरूका आसन, सुरति निरतिकी बांधि कला ॥ अगम डोरि नगरीके निरंतर, मकरतार तहां सोधि चला ॥ भया सुचेत सुरति लव लागी, कहैं कवीर जब होय भला ॥ सतगुरू शब्द विलोय कह्यो है, मन छाडै जब नाम मिला ॥

गौरी २६-साधो भाई नाम ध्वजा फहराई । लोक वेदकी चाल मिटाई, सो निज देखो आई ॥ टे० ॥ कहा पढे पंडित वेद पुराना, भेद न हिरदे समाई ॥ खसम छोडि भयी बिबचारिनी, बातें करत बनाई । वेद पढै पुनि भेद न पावे, फिर फिर भटका खाई ॥ कोइ कोइ संत विवेकी विरला, रहै राम लव लाई ॥ नाम प्रताप सदा सिर ऊपर, दरसन पाय नसाई ॥ जाको काल सदा सिरनावे, दूरि दूरि होय जाई ॥ कहूं कहा कछु कहत न आवे, सब घट रह्यो समाई ॥ नाम प्रतीति भई जा जनको, कहैं कवीर समझाई ॥

गौरी २७-गुनका भेद न्यारा न्यारा, जानगो जानन

हारा ॥ टे० ॥ सोई राज राजकुल मंडन, जाके मस्तक मोती ॥ और सकल ये भार लदनियां, मैहका सुतके गोती ॥ सोइ भुवंग जाके मस्तक मणि हैं, जोति उजारै खेले ॥ और सकल सावनका कीडा, जगत पावतारि पेलै ॥ सोई सुमेर जो उदय उजागर, जामें धातु निवासा ॥ और सकल पाषान बराबर, टांकी अग्नि प्रकासा ॥ सोई पतिव्रता पियाव्रतसाधे, आज्ञा कानि न लौपे ॥ और सकल ये स्वान सूकरी, सुंदर नाम न औपे॥ कहैं कवीर सोई जन गरुवा, नाम भजन अधिकारी ॥ और सकल साहिबको बाना, देख्यो तत्त्व विचारी ॥

गौरी २८–देखे एक सतगुरु संत सिपाई । प्रेम प्रीतिका पटा लिखाया, अभय जगीरी पाई ॥ टे० ॥ सुरति सिगड़ी साज समझको, तनकी तुबक बनायी ॥ दारू दम सहजका सीसा, ज्ञानको गज ठहकायी। शील सोपता प्रेमकी पथरी, चित चकमंक चमकाई ॥ जुगति जाम कुधिका मंदिरा, प्रीति पियाले पाई ॥ सतनामका उठत पलीता,हारि ही होत हवाई ॥ गम गोला गढ भीतर लागा, भरमकी बुरज ढहाई ॥ सतसमसेर जुगति जम घर, छमाकी ढाल बनायी ॥ मोह मोरचा पहले तोडा, माया भाग नशाई ॥ मन मेंवासी गठपतिराजा, जाकी फिरत दुहाई ॥ शब्द स्वरूप सदा सिर ऊपर, सुरति सुरंग लगाई ॥ अकल गरीबी दावा दीना, लिया विवेक गढ

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

आई ॥ संत सूरमा गढ मेरा डाका, पकडे गढके रोई ॥ पकडे खान जान नहिं पावे, पकडी ममता बाई ॥ साहिब कबीर चढे गढ ऊपर, जीति निशान बजाई ॥

गौरी २९—पूछे कोई संत सुजान सन्देसा । सतगुरु दियो उपदेश सबनको, चलो अपने देसा ॥ टे० ॥ अगम संदेश अगोचर महिमा, नहिं जहां रूप निशानी ॥ जीवन ब्रह्म सुरति नहिं मन गति, ऐसा पद निरवानी ॥ या नगरी कोई रहन न पावे, भय चिंता दुख खानी ॥ सुन्दर रूप देखि मत भूलो, छिनमें जात विलानी ॥ अब एक शब्द हमार सुनिये, निरखि परखि दिल दीजे ॥ सुन्यके मिले सून्य होय जेहो, अजर अमर तहां जीजे ॥ जो कछु तुम्ह तुम बिन कछु नाहिं, सरजीव जमा संभारो ॥ कहैं कबीर एक हम तुमहिं, घट घट रूप निहारो ॥

गौरी ३०—मिलो प्यारे संत सुजान सनेही । बहु दिन बीते तुम बिछुडे को, चेतो बेरिया एही ॥ टे० ॥ या अवसर जीव जमा संभालो, दुरलभ मनुखा देही ॥ अबही समझि रहो घट भीतर, जन्म सुफल करि लेही ॥ निरखो शब्द सदा सुखदाई, जुग जुग हम गोहराई ॥ दया सरूप रहो नितसंगही, अन्त कहूं नहिं जाई ॥ खोलो दिष्टि उघाडो निर्मल, चीन्हो वचन हमारा । कहैं कबीर सुखसागर तजिके, कहा मन लग्यो तुम्हारा ॥
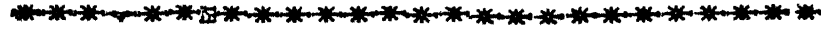
गौरी ३१–सौदा राम निरंतर भाई ॥ टे० ॥ ज्ञानका गोन सुरति बनजारा, लौकी लार लगाई ॥ गमका बैल बालदी मनवा, हरि भजि हा हा हाई ॥ मनसा तोडि मोल करि महंगा, हित करि वेच विचाई ॥ जन जन सेती साटन करिये, गाहक लेगा आई ॥ पूरी........ चनिकै उतारि, शंका रही न काई ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, सतगुरुकी शरनाई ॥

गौरी ३२–अवसर बहुत भलोरे भाई, मनुषा देह देवनको दुरलभ, सोई देह तैं पाई ॥ टेक ॥ तजि अभिमान झूठ प्रपंचको, छाडु गुमान बडाई । मात–पिता स्वारथके संगी, माया जाल बंधाई ॥ जब लग जरा रोग नहिं तेरे, ले गुरु ग्यान भलाई । साधु संगति मिलि भजु सतगुरुको, सोई सकल सुखदाई ॥ कहूं पुकारि चेत नर अंधा, यह तन आन गवाँई । कहैं कवीर देही कांचको कूप, विनशत बार न लाई ॥

गौरी ३३–बन्दे नाम साहेबको लेरे । नाम विना तेरो काज न सरिहै फिर पीछे पछतैहै रे ॥ टेक ॥ एक लख पुत्र सवा लख नाती, संपति थिर न रहै रे ॥ लंकासे कोट विनसि गये, छिनमें ऐसी ब्यार बहै रे ॥ नदी नाव संजोग बनो है, ऐसे मिलना हैरे । ना कोइ तेरा ना तू काहूका, पैडे खलक बहैरे ॥ ये तो सब स्वारथके गरजी, गुरू बिन सुख न लहैरे ॥ छनिक मांहि

तन विनसि जायगा फिर कछु कर न सकैरे ॥ ताते बेगि सम्हार अपनपौ, सत कवीर सत्य कहैरे ॥

गौरी ३४-जिवरा तू जायगो मैं जानी । आवेगी कोई लहर लोभकी, बूडेगो बिन पानी ॥ टेक ॥ राजकरंते राजा जायगा, सेज संजती रानी । बेद पठनले पंडित जायगा, कथा सुननते ज्ञानी ॥ जोग करन्ते जोगी जायगा और जायगा अभिमानी । कहैं कवीर सत् भगति न जायगी, आदि अन्त ठहरानी ॥

गौरी ३५-अबतो ऐसेही बनि आई । भावे कोई निंदो भावे कोई वन्दो, छोड़ी लोक बडाई ॥ टेक ॥ कुलसे निकसि भई जब गनिका, बहुरि न कुलै समाई । केहरि कोटि करै जु लंघन, भूखा घास न खाई ॥ भव सागर तरवेके कारन, नामकी नाव बनाई । हलके हलके पार उतारि गये, बूडे मान बडाई ॥ जैसे मृग नाद धुनि सुनिकै, प्रान तजत है आई ॥ जैसे मीन मरै विन नीरा, जल विनु रह्यो न जाई ॥ परगयी छाप भक्ति अनुभवकी, उर अंतर लपटाई ॥ दास कवीर डिगै नहिं कबहूं, बाढी अमिट सगाई ॥

गौरी ३६-धोखा सबको मारे साधो, धोखा सबको मारे ॥ ऐसो है कोई संत विवेकी निरमल ज्ञान विचारे ॥ टेक ॥ कोई खोजै शिव सकतीको कोई खोजै काया ॥ कोई खोजै सून्य मंडलको, ऐसे जग भरमाया ॥ कोई

मुनिजन मनको खोजै, उलटी पवन चढावे। कोई खोजै भवँर गुफा, अजपा सो लौ लावे॥ कोई सिद्ध होय आसन साधे, कोई सीख सयाना। कोई देश देशान्तर डोलै, तीरथ व्रत लपटाना॥ करम भरमकी सांकर काटै, पार ब्रह्मको सेवै। कहैं कवीर सोई जन गरुवा, सिरपै बोझ न लेवै॥

गौरी ३७—साधो भाई मनका धोखा भागा। बहुत दिननका भरमत फिरिया, सोया था अब जागा॥ टेक॥ लोग कहैं यह काल बली है, सब काहूको खावे। हम जाने यह अलख पुरुष है, आपा मांहि समावे॥ जैसे बेयार बँगूरा होई, धूर उडावे भारी। खुली गांठि जब पवन भई है, सो गति भई हमारी। जैसे लून भया जल सेती, सब कोई कहँ सारा। उलटि जु लून आप संग मिलिया, मिटिगा नाम विकारा॥ ज्यों वहनी काष्टमें होई, कर न सके परगासा। जब काष्ट वहनीमें आया, छूटि गया भरम पासा॥ भरम छाडि निह भरम भया है, निज तत्त्वसो पहिचाना। कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, मिटिगा आवन जाना॥

गौरी ३८—पंडित सत पद जपरे भाई। चरन कमल विन सब नर बूडे, नरक पडी चतुराई॥ टेक॥ ज्ञान न उपज्यो ब्रह्म न चीन्हो, आप कहांसे आई॥ एक बुंद सो चारि वरन भै, ब्रह्म देह कहँ पाई॥ शूद्र

शरीर ब्रह्म तेहि भीतर, भिन भाव जहाँ नाहीं । लख चौरासी जीव जो इनमें, वरत रह्यो सब मांही ॥ नौगुन सूत उरझि नहिं सरुझे, तीन गिरह दे आनी । ताको जनेऊ कबहूँ नहिं टूटे, दिन दिन बारह बानी ॥ ब्रह्म गायत्री गुरू अस्थाना, अजपा जाप थिर माहीं । संझा तरपन तहवाँ कीजे, कुश पानी जहँ नाहीं ॥ रिग जजु ग्यान ध्यान धारि पशुवा, साम अर्थवन सोई ॥ सुसम वेदको भरम न जाने, कैसे ब्राह्मन होई ॥ कहैं कबीर निज ब्रह्महीं चीन्हो, पास जनेऊ सोई । पाखंडकी गति सबही छूटे, तब निज ब्राह्मन होई ॥

गौरी ४२—पंडित अपनी अगिन बुझावो । हम तो अपनी राह चलत हैं, तुम काहे दुख पावो ॥ टे० ॥ को तुम कौन कहाँ सो आये, अंत कहाँ तुम जाई । यहाँ तो तुम ब्राह्मन होय बैठे, चौरासी बिसराई ॥ दशों मास औंधे मुख रहिया, सप्त धातु रस पीया । जहां तो तुम चौका करि जीमो, वहां चौका किन दीया ॥ ना मैं चीन्ह हारि मत चालो, अनंत अनूप उघाडो । क्रोध चंडाल सदा संग व्यापे, ताको मूल उखाडो ॥ कुल अभिमाना आनकी पूजा, यही बिथा तोहि लागी । जो यह जाति बडी है पांडे, सुखदेवने क्यों त्यागी ॥ पांच तत्त्वको सकल पसारा, जहवाँ जीव दुख पावे । कहैं कबीर सोई सत ब्राह्मन, उलटा ब्रह्म समावे ॥

गौरी ४३–पांडे बूझि पियो जल पानी, तोही छूति कहाँ लपटानी ॥ टेक ॥ जलसूतक थलभी सूतक, सूतक पवन रसोई। जनम मरन दोऊभी सूतक, सूचि कहां ते होई ॥ नहाय धोयके चौके बैठा, बहुत करी सुथराई ॥ उडि माखी चौकेमें बैठी, बूडि गई चतुराई ॥ मक्खी एक अखज भखि आयी, हसती ऊँट अरु घोडा। उडि माखी पनवारे बैठी, ताको करो निबेडा ॥ पीर मुये पैगम्बर गाडे, सहस अठासी पांडे। जलि बलि राख भये धरनी पर, उस माटीके भांडे ॥ पाँचो कपड़ा एक सूतका, जुलहे एक बनाया। कपड़ा लेकर अलगे राखो, धोती चौके लाया ॥ हाड़ झरै झर चाम झुरैझर, दूध वहां सो आया। सोई दूध तुम पीवन लागे, चपिया छूत लगाया ॥ नदी एक जो जल बहिआया, एक रेत जल सरिया। मगर मच्छ जो जलमें ब्याए, जल सूतकसे भरिया ॥ तुमतो पहरि जनेऊ बैठो, मेहरी को क्या पहिराया। वहि कहिये बारेकी सूद्दर, उन परसी तुम खाया ॥ चार अचार छाडिदे पांडे, रहो तत्त्व लव लाई। कहे कबीर सुनो हो पांडे, गहो संत सरनाई ॥

गौरी ४४–पांडेना कर वाद विवादं। या देही विन सबद न स्वादं ॥ टेक ॥ खंड ब्रह्मांड पिंडभी माटी, माटी नय निधि काया। माटी खोजत सतगुरु भेटा, तिन कछु अलख लखाया ॥ जीवत माटी मुए भी माटी

देखो ज्ञान विचारी । अंत काल माटीमें बासा, लोटे पाँव पसारी ॥ माटीकी भीत पवनका थम्भा, बिंद संजोग उपाया । भांडे गोढे सँवारे सोई, या साहेबकी माया ॥ माटीका मन्दिर ज्ञानका दीपक, बाती पवन उजियारी । जाहि जिया सब जग सूझे, कहै कबीर विचारी ॥

गौरी ४६–पंडित मिथ्या करत विचार । नहिं तहां सृष्टि न सिरजनहार ॥ टेक ॥ सुन्न अस्थूल पवन नहिं पावक, रवि शशि धरनि न नीरं । ज्योति स्वरूपी काल न तहिया, नाहीं वचन शरीरं । भरम करम वहां कछु नाहिं, नाहीं वेद विचारं । हरि हर ब्रह्मा शिव सकती नाहीं, नहिं तीरथ आचारं ॥ गोरख राम वहां कछु नाहीं, नहीं मन्त्र नहिं पूजा ॥ सज्जन असज्ज भावभी नाही, कौधू एककि दूजा ॥ माय बाप गुरू नहिं वाके, वो तो पुरुष अकेला ॥ कहै कबीर जो अबकी समझे, सो सतगुरु का चेला ॥

गौरी ४७–पंडित कहो मोसो समझाई । अरथ धर्म काम मोक्ष फल, कौन दिसि है भाई ॥ टेक ॥ उत्तर दच्छिन पूरब पच्छिम, सरग पाताल भूमाहीं । बिना ब्रह्म खाली नहिं कितहूं, नरक पडे सो काहीं ॥ अन समझे की नरक सरग है, ततदरसीको नाहीं । जा डरसो संसार डरत है, सो डर हमरे नाहीं ॥ पाप पून्यकी करूं न आशा, सरग नरक नहिं जाऊँ ॥ कहै कबीर सुनो भोई साधो, जहँ पद तहँ ठहराऊँ ॥

गौरी ४९-भगतकी हांसी करो मत कोई। जाको हंसे महा दुख होई ॥ टेक ॥ पहिली हाँसी करी हिरनाकुश, नखसे उदर विदारो। बाँह पकडि भुजा उपाडी, ले धरतीमें डारो। दूजो हांसी रावन कीन्ही जनम तीन तिहिं मारो। भगत विभीषन राज दियोहै, अजहुँ टरत न टारो॥ भीषम करन द्रौन दुर्योधन, ये हांसी करि हारे। कौरव कुटुम्ब निकंदन कीन्हो, भगत चूकसे मारे॥ जिन जिन हांसी करी भगतकी, सो २ नर नरक सिधारे॥ तिन पतितनको नरक दियो है, कहैं कवीर पुकारे॥

गौरी ५०-हरितो भगतनके बस भाई। जाति वरन कुल रीझत नाहीं, ना रीझे चतुराई॥ टेक॥ सेवरी जाति भीलनी होती, वेर जूठ लेआई। प्रीति जानि वाके फल पाये, तीनों लोक बडाई॥ करमा कद आचार कियो थो, हरिसे प्रीति लगाई। छप्पन भोग पाछै आरोगे, पहिले खीचडी खाई॥ तिर लोचन और नामा पीपा, हरि पेठे बिकराई। सेन रूप होय मर्दन कीन्हो आप भये हरि नाई॥ सहस अठासी जग्यमें जीमें, तबहुं घंट नहिरे बाज्यो। कहैं कवीर स्वपचके जीमे, संख मगन होय गाज्यो॥

इति गौरी॥

-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-*-

## राग कल्याण प्रारम्भः ।

राग कल्याण १--पल पल बलिमैं गुरुके जाऊँ, जिनरे किरपा करि नाम दियो है, गुरूकी पटतर काहि लगाऊँ॥ टेक ॥ सुखदेव दियो वैकुंठ फेर । बिन गुरु नाहिं भयो निवेर । जनकको जाय कियो गुरूदेव । ताही ते पायो अलख अभेव ॥ नारद निंदा गुरूकी कीन्ही । ताहीते चौरासी दीन्ही ॥ रंचक उन गुरु दया जु करी । गुरू प्रताप चौरासी टरी ॥ गुरू समान दाता नहिं कोय । भगति दान गुरू दियो मोय ॥ कहैं कवीर सुनो नर लोई । गुरूको भगति विनु मुकति न होई ॥

राग कल्याण २--गुरू मेरे बुटिया अजब पिलाई । भया सुचेत मिटी दुचिताई ॥ टे० ॥ नाम औषधि रसन कटोरी । ताहिके पीवत कुमति गइ मोरी ॥ सुषुमनिके घर भयो अनंदा । मिटि गई तिमिर उदय भौ चंदा ॥ सुरति सुहागिनि भरि भरि लाई । पीवत अमृत कबहुं न अघाई ॥ सुषुमनि सुरति भई मतवारी । कबहुं न लागे विषय खुमारी ॥ ब्रह्मा नारद रहे लुभाई । खोजत शम्भु ध्यान लगाई॥ प्रेम प्रीति भरि पिया जु कोई । कहैं कवीर अमर भै सोई ॥

राग कल्याण ३--भाग बडे जाके संत पधारे । करि सुमिरन भव सागर तारे ॥ टे० ॥ आये संतको आदर कीजे । चरन धोय चरनामृत लीजे ॥ येही संत हैं पर

उपकारी। सरन आयेको लेत उबारी॥ साहेबको घर संतन मांहिं। साहेब संत कछु अन्तर नाहिं॥कहैं कबीर संतन भले पधारे। जनम जनमके कारज सारे॥

राग कल्याण ४—जबते मन प्रतीति भयी। दिन दिन अवगुन छूटन लागे, बाढन लागी प्रीति नयी॥टे०॥ सुखसागर सुख मंजन कीन्ही, स्वाती बूंद निज सीप-लई। मानिक पुरमें मोती निपजे, हीरा हंसा भेट भई॥ सुरति दोऊ ज्ञान जौहरी, निरख परखि निज वस्तु लई। थोड़ा बनिजन वस्तु भइ भारी, उपजन लागी लाल मयी॥ पायो दाव भाव बनि आयो, सतगुरु मिले बड साहु सही॥ बाढ़ी बढै घटै नहिं कबहूं, परम तत्त्व ले मनो-तहीं॥ अगम निगम तत खोज निरंतर, गुरू नाम निज मूल दयी। कहैं कबीर दया सतगुरुकी, हती कुमति सो दूर गयी॥

राग कल्याण ५—सुमिरन सार साधो सुमिरन सार। सुमिरि सुमिरि जन उतरे पार॥टे०॥ सुमरनहीं शिव शंकर जोगी। सुमिरनही इंद्रादिक भोगी॥ सुमिरनही प्रल्हाद उबारे। खम्भ फाड़ि हिरनाकुश मारे॥ सुमिरनही ध्रुव निश्चल कियो। सुमिरन राज विभीषन दियो॥ सुमिरन द्रोपदीको चीर बढायो। गजके काज पयादेइ धायो॥सुमिरन नाम देवकी छानि छवाई। मंदिर फेर्यो गऊ जिवाई॥ सुमिरन नामदेवकूं दरशन दियो। बांह

पकडी मन्दिरमें लियो ॥ कहैं कवीर सुमिरन है ऐसा। अपनी करनी करो कोई जैसा ॥

राग कल्याण ६—करन मते सो करै करता । और सकलका झूठ मता ॥ टे० ॥ पूतना कहां कमाई कीन्ही, अघ मोचन जांकी दूरि गता ॥ वाहि वैकुंठ पाताल पठायो, बलि राजामें कौन खता ॥ कबहुंक सैलपर सागर, कबहुंक सोखे सब सलिता ॥ कबहुं भूपतितैं करै भिषारी, तनहांके सिर छत्र धरता ॥ एक रहै मायामों शीतल, एक फिरै माया जलता ॥ एकनके घर बैठेही आवे, एक फिरै घर २ मँगता ॥ एक पुत्रकों नृप पचिहारे, जाके हती वहुत बनिता ॥ साठ पुत्र नारदको दीन्हा, माया त्यागि फिरें विरकता ॥ पंच भरतारीकी लज्जा राखी, लंछन लगायो पति वरता ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो वा साहेबकी अगम गता ॥

राग कल्याण ७—सब अवगुनके सिर अभिमान। दुरजोधनके मेवा त्यागी, दासी सुत घर आये भगवान ॥टे०॥ याही चूक बलि गयो रसातल, मारयो बालि एकहि बान ॥ याही चूक गयो लंकापति, काटी शीश दसरथ सुत आन ॥ सुखदेव मुनिसे को बड होई, इन्द्री जीति बिष डारयो भान ॥ वैकुंठमें आदर नांहि, कृपा भई गुरु लागे कान ॥ राजसु जग्य रच्यो पंडवनके; सुर नर मुनि कियो जलपान ॥ संख पंचायन जबही

बाज्यो, स्वपच भगत रस लीयो सान ॥ जोग रु जग्य नेम व्रत संजम, चारिवेद अरु पढैं पुरान । कहैं कबीर जब लगि मैं मेरी, तब लगि भगति नहीं परमान ॥

राग कल्याण ८—जारूं मैं या जगकी चतुराई । प्रभु जीको नाम विसरजन कियो, जिन या जलसो जुगति बनायी ॥ टे० ॥ जोरत दाम काम अपनेको, हम खैहैं लडक व्योसायी । सो धन चोर हाकमा लीनो, रहो सहो ले जात जमाई । या माया कलवारिन कहिये, मद पिवाय राखे बौराई । एक जे परो धूरिमें लेटे, एक कहैं चौका देरी माई ॥ या माया सुरनर मुनि बहके दयी देवता सब धरि खायी । कोइ कोइ लागि रहे गुरु चरना, तिनको माया फिरि पछिताई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, ले फांसी हमहुँ पै आई । गुरु प्रताप साधुकी संगति, अब हम रहे निशान बजाई ॥

राग कल्याण ९—अजहूं प्यारे चेत मना, समुझ विन जीवना कछु ना ॥ टेक ॥ धन जौवन दारा अरु बारा, ये तो रैनका है सुपना । तन सुन्दर छवि देखि न भूलो, यह तन रहन न एक छिना ॥ जेते तेते ध्यान लगावें, आँखियन देखा सरवन सुना । सुमिरन भजन करें सब कोई, बिन दरशन सबही भरमना ॥ शब्द विचारि रहो तुम सन्मुख, अखंड स्वरूपी अजर घना । कहैं कबीर आप लखि आपे, जुग जुग शब्द सरूप बना ॥

राग कल्याण १०—मैं बौरी मेरा राम भतार। जा कारन रचि करूं सिंगार ॥ टे० ॥ जैसे धोबिया रज मिलि धोवे, हमरा पाप यूं निंदक खोवै ॥ निंदक मेरा प्रानअधार। विन वेगार चलावे भार ॥ निंदक मेरा माय अरु बाप। जनम जनमका काटे पाप ॥ कहैं कबीर निंदक बलिहारी। आप रहे जन पार उतारनी ॥

राग कल्याण ११—साधू घट शील संतोष विराजे ॥ दया स्वरूप सकल जीवपै, शब्द सरोतर गाजे ॥ टेक ॥ जहां जहां मनकी मनोरथ दौड़े, ताके संग न धावो। आसन अटल छिमा धीरज धरि, तन तजि अनत न जावो ॥ सत्यवादी सतगुरु पहिचाने, आतम दिष्टि परगासा ॥ निरमल दसा सरब सुखदाई, आनंद घर रहिवासा ॥ सूधी चाल सदा शीतल गति, निसि दिन सबद विलासा । कहैं कबीर ऐसे संत विवेकी, जहां हमारा वासा ॥

राग कल्यान १२—जनको दीनता जो आवे। सौं पद देऊं दास अपनेको, ब्रह्मादिक नहिं पावे ॥ टेक ॥ और नको पूरा करि जाने, आपन बोछ कहावे । अवधू तुमसे सत्य कहत हौं, सो मेरे मन भावे ॥ एकै ब्रह्म सकल घट देखे, दुविधा दूरि बहावे ।। इन पांचन तैं तोरि सनेहा, जब गोविंद गुन गावे ॥ होय आधीन प्रेम लवलीन, कुल अभिमान मिटावै ॥ सहज सुन्यमें रहै

समाई, पढि गुन सब विसरावै ॥ गुरुकी दया साधुकी संगति, भाव भगति चित लावै। कहैं कबीर सुनो भाई साधो, क्यों न परम पद पावै ॥

राग कल्याण १३—भजनमें होत आनंद आनंद। बरषत शब्द अमीके बादल, भीजत है कोई संत ॥ टे० ॥ अगर वरन जहाँ ततकी नदियां, मानो धारा गंग। करि अस्नान मगन होय बैठै, चढ तब शब्दको रंग ॥ रोम रोम जाके अमृत भीना, पारस परसत अंग। शब्द गहो जिव संशय नाहिं, साहेब है तेरे संग ॥ स्वासा सार रचो मेरे साहिब, जहां नहिं माया सोहंग। कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, जपो सोहंग सोहंग ॥

राग कल्याण १४—क्यों न हमारे आये केसो, क्यों न हमारे आये। षड्रस व्यंजन छाड़ि रसोई, साग विदुर घर पाये ॥ टे० ॥ जहां अभिमान तहां हम नाहीं, वह व्यंजन विष लागे। सोई मुनिजन पूरा कहिये, जो अभिमानीको त्यागे ॥ जाति हीन जाके कुल नाहिं, है दासीको जायो। जाकी टपरिया तुम जइ बैठे, कहा बड़ापन पायो ॥ सत सत वचन कहो दुर्योधन, सुन लो बात हमारी। विदुर हमारे प्रानसों प्यारे, तुम विषिया बेकारी ॥ पुरातन कथा तुम्हारी प्रभुजी, वनमें छाछ मंगाई ॥ ग्वालनके संग भोजन करते, सो मति तुम मैं आई ॥

प्रेम प्रीतिके हम हैं भूखे, अभिमानी नहि भावे। कहैं कबीर साधुकी महिमा, हरि अपने मुख गावे ॥

राग कल्याण १५—कौन तुम्हारे आवे राजा, कौन तुम्हारे आवै। ऐसो हेतु विदुरको कहिये, सोई गरीब मोहि भावे ॥ टे० ॥ तुमरो दूध विदुरको पानी, अमृत करि करि जानी। तुमरी मेवा विदुरकी भाजी, रसभर एक न आनी ॥ भोजन तो दोऊ विधि राजा, विपत्ति परकी प्रीती। तुम्हारे प्रीति न हमरे आपदा, यही बडी अनरीती ॥ खीर समान साग हम पाये, गावत रैन बिहाई। कहैं कबीर दासकी महिमा, आप श्री मुख गाई॥

## राग कान्हरा आरम्भः।

राग कान्हरा १—जा कुल भक्त भागवत होई। गिनिय न अवरन बरन रंक धन, विमल वंस मानिये निजसोई ॥ टेक ॥ ब्राह्मन छत्री वेश्य सूदलौं, नारि चंडाल मलेच्छ जो होई। होय पुनी तजे भगवंता, आप तरे तारे कुल दोई ॥ धन वही गांव ठांव सोइ पावन, होत पुनीत संगके लोई। सुर पंडित अरु निरपति पादसाह, भगत बरोबर तुले न कोई ॥ गहत सार पद पीवत ग्यान रस, तजि संसार जानि जस छोई। पुरइन पत्र समान रहत जल, कहैं कबीर जगमें जन सोई ॥

कान्हरा २—बहुत दिननसों प्रीतम पाये। भाग भले घर बैठहिं आये ॥ टे० ॥ मंगल चारि मांहि मन राखूं।

राम रसायन रसना चाखूँ ॥ मंदिर माहिं भयो उजियारा, ले सूती पिया अपना पियारा ॥ मैं जो निरासी जो निधि पाई । हमरो कहा पिया तुमरी बड़ाई ॥ कहैं कबीर हम कछु नहिं कीनो । सहज सुहाग राम मोहि दीनों ॥

राग कान्हडा ३—अब तोहिं जान न देऊँ रामा प्यारे । ज्यों भावे त्यों रहो हमारे ॥ टे० ॥ बहुत दिननके बिछडे पाये। भाग भले घर बैठेहिं आये॥ चरन लागि करूँ बरियाई । प्रेम प्रीति राखूं उरझाई ॥ आय बसो मन मंदिर चोखे । कहैं कबीर परो मति धोखे ॥

राग कान्हडा ४— अब मोहि राम भरोसो तोरा । को काहू का करे निहोरा ॥ टेक ॥ जाके हरि अस ठाकुर भाई । सो क्यों अनत पुकारन जाई ॥ तीन लोक जाके सिरभारा । क्यों न करे जनकी प्रतिपारा ॥ कहैं कबीर सेवो वनवारी । सींचो मूल फलै सब डारी ॥

राग कान्हडा ५—चल मन हरि चटशाल पढाऊँ । जात कुमार मारग लाऊँ ॥ टेक ॥ पाटी प्रीति सुरतिकी लेखन, रर्रा मम्मा दोय अंक लिखाऊँ ॥ गुरूकी साटि शब्दकी औपटि, बिच बिच सहज समाधि लगाऊँ ॥ बावन भिन्न रहत जोइ अच्छर, सो पद परसि बहुरि नहिं आऊँ ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, हेलो मारि कहि समझाऊँ ॥

राग कान्हडा ६—नाम मोर पूंजी नाम मोर धना। या पूंजीसे लगो मेरो मना ॥ टेक ॥ या पूंजी है अगम अपारा। कोई इक बनिजै साहूकारा ॥ अगिन जरै न ईलीखाय। राजा डंडे न चोर लेजाय ॥ खेती करै न बनिजन जाय। नाम खजीना बैठा खाय ॥ कागद चढै न फूता होय। कहै कबीर धन पाया सोय ॥

राग कान्हडा ७—भजन बिन तीनों पन बिगडे। चेतोरे नर जीवन थोडा, काल करत नित झगडे ॥ टे० ॥ बालपना बालपन खोये, अरू तरूण पन टेडे। बिरध भयो तब काल गरासे, अंध होय निवेडे ॥ मन भुजंग मायाको माता, बोलत है करडै। जबहिं हंसा देत पयाना मांटी होय निवडे ॥ मानुष देह धारि काहेको, पशु न भया कहुरे। कहें कबीर सुनो भाई संतो, कोई संतहि ध्यान धरें ॥

राग कान्हडा ८—अब देखो विसरी गया इहाँ आय। अति मंद मस्त मोह तन छाके, फिरत लटेम कराय ॥ टेक ॥ जननीके गरभ उरध मुख झूल्यो, तहां रहै दुख पाय ॥ अति संकट तहां भाठी औटै, मलमें मूँड गडाय ॥ ता दिन तेरे कौन संग था खान पान पहुंचाय। जाको पिता प्रान पति कहिये, ताको क्यों विसराय ॥ अति मति हीन बुधि तुच्छ तनमें, सब विधि हाथ पराये। कहैं कबीर मृग सर लागा, वालि विपैके खाये ॥
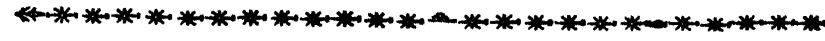
राग कान्हडा ९-जायरे दिनहिं दिन देहा । करिले बावरे राम सनेहा ॥ टेक ॥ बालापन गयो जौबन जासी । जरा मरन भव संकट आसी ॥ पलटे केस नयन जल छावे । मुरख चेत बुढापो आवे ॥ राम कहत लज्जा नहिं कीजै । पल पल आयु घटै तन छीजे ॥ लज्जा कहै मैं जमकी दासी । एक हाथ मुद्गर दूजे फांसी ॥ कहैं कबीर तिन सरबस हारा । राम नाम जिन मना विसारा ॥

राग कान्हडा १०-कहा मांगू कछु थिर न रहाई । देखत नैन चला जग जाई ॥ टे० ॥ एक लख पुत्र सवा लख नाती । ता रावन घर दिया न बाती ॥ लंका सो कोट समुद्रसी खाई । ता रावनकी खबर न पाई ॥ सोनेदा महल रूपेदा छाजा । छोडि चला नगरीका राजा ॥ को कर महल को कर टाटी । उडि गया हंस पडी रहि मांटी ॥ आवत संग न जात संघाती । कहा भयो द्वारे बांधे हाथी ॥ कहैं कबीर अन्तकी बारी । हाथ झारि जस चले जुआरी ॥

राग कान्हडा ११-सोइरे अजीत जो कालहिं जीते ॥ टेक ॥ निरख होय तो शब्दहिं पावे, शब्द कहे मोहि दिढ करि लीजे ॥ बहुरि नहिं कछु दोष हमारा, अपने अवगुन आपही छीजे ॥ जारसो रहै खसम सों रूसे, कहो सुहागि कैसे कै दीजे॥ जार रूठे तब जाय मनावे, हमहिं देखि कछु परदा दीजै॥ सब कोइ साधु कहे

चलनेको, चल न सके तेहि कैसे कीजे ॥ इन बातन सो अमर घर चाहे, कहो अमर घर कैसे दीजे ॥ यही उछाह कहै सब कोई, जानि बूझिके अंतर भीजे ॥ कहैं कबीर सोई हंस निरखियो शब्द हमारा हमहिं पतीजे ॥

राग कान्हडा १२-कहा भयो मुख राम कह्योरे । ज्यों भुजंग मंत्रन वस कीनो, अन्तर्गत वाको विष न गयोरे ॥ टेक ॥ माला तिलक भेप धारि हरिको, मांगत मांगत जन्म गयोरे ॥ जैसे बधिक ओट टाटी की, बहु जीवनको दाव दियोरे ॥ अन्तर कपट बचन मुख शीतल, तन अधीन मन तऊ न नयोरे । कहैं कबीर ताको संग न कीजे, विन विवेक जिन भेप लयोरे ॥

राग कान्हडा १३-जोतैं हिरदयमें राम न जान्यो । तसबी गहे कहा भौ भाई, कहा कितेब बखान्यो ॥ टेक ॥ स्याही गई सफेदी आई, दिल सफेद अजहुं न हुआ ॥ हुजरे निमाज बांग क्या दीजे, हुजरे भीतर पैठि मुआ ॥ आन्यो जीव पछाड्यो परबस, गला काटि सिर भार लिया ॥ जीवता मारि मुर्दार किया है, ताको कहै हलाल किया ॥ अपना किया न बूझै मुगधा, कहै हमारो बडेन किया ॥ उनकी खून तुम्हारी गर्दन, जिन तुमको उपदेश दिया ॥ जाहि मांसकुं तुम पाक कहत हो, ताकी उत्पत्ति सुन भाई ॥ रजवीरजते मांस उत्पाने, मांस न पाक लखाई ॥ वेद पढे पढि पंडित

भूला, काजी पढि रहु कुराना॥ कहैं कवीर तेनर नरक पडेंगे, जिन आतम राम न जाना॥

राग कान्हडा १४—कहा पंडिताई भूलो रे प्रानी। सतनाम जप अमृत बानी ॥टेक॥ घरही पंडित युधिष्ठिर केरा। काहे न घंट बज्यो तेहि वेरा॥ कोटिन विप्र जिमायो राजा। सुपच भगत विन घंट न बाजा॥ पढि लिय भारत चारिवों वेदा। विन सतगुरु नहिं पायो भेदा॥ सुपच भगत कीनी जिवनारा। बाज्यो घंट भई झनकारा॥ कहैं कवीर हम सब कछु जाना। देखत गनिका चढी विमाना॥

राग कान्हडा १५—सतगुरू अहिरन अजब बनाया। एक मढीके दस दरवाजा, सरब तत जहँ लपटाया ॥टे०॥ अहरन आनि अग्निमें पटकी, घनवां पांच लगाया॥ सुरति सँडासी हरष हथोडा, अकिल आँकडा लाया॥ स्वांस उस्वांसकी नाल बनाई, उलटा पवन चलाया॥ करम काठका कोयला झोंक्यो, अकरम कीट जलाया॥ मन लोहाको इस विधि ताया, ताव भला बनि आया॥ सील साँचकी चांडी रोपी, तामैं आनि बुझाया॥ तोल न मोल हलकों नहिं भारी, ऐसा रतन निपजाया॥ कहैं कवीर बलि बलि सतगुरूकी, लोहाकरि पारस लाया॥

राग कान्हडा १६—मन नटनीको निरत विचारी॥ ॥टे०॥ गागरि पांच धरी शिर ऊपर, वरत चढी यक नारी॥ तन मन दियो बरतके ऊपर, जैसे भरे पनि

हारी ॥ आडौ बाँस सलिया कर तोलैं, दाबी पांव तर थारी ॥ आपन नाचै रिझावे जगको, आप जगतसों न्यारी ॥ गुरूका शब्द गहै कर दंते, कटिसों बांधि. कटारी ॥ नौ नारी मिलि खेल रचो है, तन मन हो हुशियारी ॥ जैसे मकडी उलटि तारसों, पलटि गहै फिर तारी ॥ ऐसी कला नाच मन मोरा, तरत न लागे बारी ॥ तीन लोक चौथे मतवारी, छर अच्छर सो न्यारी ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो पंचे रीझ भई भारी ॥

राग कान्हडा १७–अब हम सकल कुसल कर जाना। सती भई जब सहज समाना ॥ टेक ॥ तनमें होती कोटि उपाधी। उलटि भई सुख सहज समाधी ॥ बैरी उलट भया है मिकता, साकट उलटि भयो है संता ॥ जमतें उलटि भया है रामा। दुख विसरा सुख किय विसरामा ॥ आप जानि उलटि ले आया। तब नहिं व्यापै तीनों तापा ॥ अब मन उलटि सनातन हूवा। तब हम जाना जीवत मूवा ॥ कहैं कबीर सुख सहज समाऊँ। आप डरूं नहिं और डराऊं ॥

राग कान्हडा १८–अब हम एक एक करि जाना। दूजा कहै ताहिको दोजक, जिन तू नहिं पहिचाना ॥ टेक ॥ पवन पावक पानी पृथ्वी नभ, एक जोति संसारा ॥ एकहि खाक घडै बहु भांडा, एकहि सिरजन हारा ॥ जैसे बढई काठहि काटै, अगिन न काटै कोई।

ऐसे व्यापक है सबहिनमें, रवि स्वरूप है सोई ॥ माया मोह कारि, जगत भुलाना, गरंथ देखि गरबाना ॥ होय निःशंक शंक नहिं व्यापै, कहैं कवीर दिवाना ॥

राग कान्हडा १९–अब मैं पायो ब्रह्म ग्यान । सहज समाधी सुखमें रहिबो, कोटि कल्प विसरान॥टे०॥ गुरू कृपाल कृपा जब कीन्हा, हृदया कमल बिगासा ॥ भागा भरम दसों दिसि सूझा, परम जोति परगासा ॥ मृतक उठी धनुष कर लीन्हा, काल अहेरी भागा ॥ उदसिया सूर निसि किया प्याना, सोवतते तब जागा ॥ अविगत अकल अनूपम देखा, कहता कहो न जाई ॥ सैन करे मनही मन राखे, गुंगे जान मिठाई ॥ पुहुप बिना एक तरुवर फलिया, बिन कर तूर बजाया ॥ नारी विना नीर घट भरिया, सहज रूपसो पाया ॥ देखत कांच भया मन कंचन, बिन बानी मन माना ॥ उडा विहंगम खोज न पाया, ज्यों जल जलहि समाना ॥ पूजो देव बहुरि नहिं पूजूं, नहाय उदक न नहाऊँ ॥ भाग्या भरम एकहि कहता, आप बहुरि नहिं आऊँ ॥ आपामें जब आप निरखिया, आपनमें आपहिं सूझा ॥ आपहिं कहत सुनत पुनि आपै, आपनमहिं आपा बूझा ॥ अपने परिचय लागी तारी, आपनमें आप समाना ॥ कहैं कवीर जे आप विचारे, मिटिगा आवन जाना ॥

राग कान्हडा २०–कौन मरे जन्मे को आई । सुरग

नरक कौन गति पाई ॥ टेक ॥ पांच तत्त्व अविगत ते उपजा, ये कै किया निवासा ॥ बिछुरा तत्त्व फिर तते समाना, रेपहिं रही न आसा ॥ जलमें कुम्भ कुंभमें जलहै, बाहर भीतर पानी ॥ बिनसा कुंभ जल जलहि समाना, यह तत कथै सु ग्यानी ॥ आदे गगना मधै गगना, अंतहि गगना भाई ॥ कहै कवीर करम काहे लागै, झूठौ सकल उपाई ॥

राग कान्हडा २१-ताहि विचारो पंडित लोई। जाके रूप बरन नहीं होई ॥ टेक ॥ पिंडमें प्रान कहां तैं आवे, मुवा जीव कहु कहां समावे ॥ इंद्री कहां करे विसरामा। सो कित गया जो कहता रामा ॥ पांच तत्त्व जहां सबद न स्वादा। अलख निरंजन विधी न वादा॥ कहैं कवीर मन मनहि समाना। अगम निगम झूठ करि जाना ॥

राग कान्हडा २२-मन मेरा पंछी विलमत हीरारे। गुरुका सबद एक अजर अमर है, धूप छांह दुख दुंद-नहीरे ॥ टेक ॥ अमर लोक हंसनका बासा, सुख सागर सुख लेत तहीरे ॥ तहँके गए बहुरि नहीं आवे, करत अनंद दुख दुंद नहींरे ॥ कपटकी पांष दूरि निरवारो, जो ले उडत विकार महीरे ॥ सुरतिकी चांच संवारि सबेरे, नाम चुगै चुग रहु ढिगहीरे ॥ निरमल नाम जपौ हिरदामैं, बारबार मैं तोहि कहीरे॥ आवागमन मिटै तब तेरो, बहुरि न या जग जनम लहीरे ॥ सदा आनंद

होत है वा घर कबहुं न होत उदास वहींरे॥ कहैं कबीर जहां बधिक जाल नहीं, गुर मारग चलि जाय तहींरे॥

राग कान्हडा २३—हरिजन हंस दिसा लिय डोलै। निरमल नाम चुनि चुनि बोलै॥ टे०॥ मान सरोवर तटके बासी। राम चरन रति आन उदासी॥ मुकताहल बिन चोंच न लावे। मौन रहे कै हरिगुन गावै॥ कौआ कुबुधि निकट नहिं आवे। सो हंसा निज दरशन पावै॥ कहैं कबीर सोई जन मेरा। नीर षीरका करै निबेरा॥

राग कान्हडा २४—धोषैही धोषै डहकायो। समुझ न परी सनद सतगुरकी, बहु फंदनमें आय फंदायौ॥ टे०॥ सुवना एक अंबके भोरे, सेवा करन आक की आयो॥ मारी चोंच जब रूओ उडायो, छीर शरीर अंग लपटायो॥ रातो फूल देखि सेमलको सुवना, अंत वासों नेह लगायो॥ मारी चोंच फल गयौ टूटि जब, उडि गयौ तूर तिवारो आयो॥ उडि न सकै बहु परचो झोलमैं, तातै नाम फिर जुवो कहायो॥ कहै कबीर नीचकी संगति, जाति गई औ जनम गवाँयो॥

राग कान्हडा २५—नाम बिना धिक धिक नर नारी। कहां तै आय कियो संसारी॥ टे०॥ धिग वो रसना धिग वो कामा। चीन्हो नाहीं आतम रामा॥ जाकुल पुत्र न भक्ति बिचारी। जनमत क्यों न मरी महतारी॥ भरम मुचे मुच रही क्यों न बंझा। सुकरी रूप फिरे जग

मंझा ॥ बिधवा नारी करत सिंगारा । शोभा न पावे बिन भरतारा॥वेश्याके पुत्र पिता कासो कहै । बिन गुर चेला ग्यान कैसे लहै ॥ राज बिना कैसी रजपूता। ग्यान बिना फोकट अवधूता ॥ जा कुल नाही हरिको दासा । सो कुल जानो ढाक पलासा ॥ कहैं कवीर भक्ति निजसारा । जो चीन्हे सो उतरे पारा ॥

## अथ राग काफी प्रारम्भः ।

काफी १-मैं तेरा दीदार हो दीदार दिवाना । घडी घडी तुझे देखा चाहों, सुनु साहेब रहमाना ॥ टे० ॥ पडा-रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यूं घरका बंदी जादा ॥ नेकी कुलाह लिये सिर ऊपर, गलै प्रेमका धागा ॥ हुआ अलमस्त खबरि नहीं तनकी, पिया जो प्रेम पियाला ॥ ठाढे होय कारि झुकि झुकि परते, तेरे रंग मतवाला ॥ तसबी और निमाज न जानूं, ना धरि जानो रोजा ॥ बंग जिकिरि जबहीसैं बिसरायो, जबते तन मन खोजा ॥ कहैं कवीर कजा नहीं करना; दिलहीसे दिल लाया ॥ मक्का हज्ज हिय बिच हिजरत, पूरा मुरसिद पाया ॥

काफी २-सतगुरु हो महराजा मोपै राम रंग डारा॥टे०॥ सबदकी चोट लगी मेरे तनमें, बेधि लिया तन सारा॥ औषध मूरि कछुओ नहिं लागे, का करे बैद बिचारा॥ सुर नर मुनिजन पीर औलिया, कोइ न पावे पारा ॥ दास कवीर अब रंग रंगिया, सब रंगन रंग न्यारा ॥

राग काफी ३—दूर नहीं रह माना कोई सबद विचारो,दूर नहीं रहमाना॥ दूर भटक नहिं मरनारे यारो, नेरेही मन माना ॥टे० ॥ एक जो खोजियारे, दूजा दिलहि समाना॥ खोजत खोजत थकित भये हैं, हिन्दू मुसलमाना॥ कहा पढि लीये वेद पुराना, कहा कथलीये ग्याना॥ गुरू पीरसो पाईये तब, पहुँचे जाय ठिकाना ॥ सबद विचार रहो तुम सन्मुख, नेरैही मन माना॥ बंदे तू करे बन्दगी, तोहि साहब पै जाना॥ एकम एका होय रहा है, ज्यों जल जलहि समाना ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, लगा निरंतर ध्याना॥

राग काफी ४—नैना आशिक मेरा महबूब तूही है। जित देखूं तित याही मूरति है, यामें अनंत चितेरो ॥ टेक॥ ऐसा नैन लालची मेरा, तुमही मैं खूब खूबैरा॥ जब देखूं मैं अपनी मूरतको, निकट बिराजत नेरा॥ ऐसी प्रीति लगी तुम मांहीं, जैसे चंद चकोरा॥ देखत देखत उलटि परी है, यूं मन लग्यौ जु मेरा॥ गांसी सार सबदकी, घायल लेत घुमेरा॥ उरझि पुरझि रह्यो बंक नाल में, सुरझत नाहिं सुझेरा॥ लगन लगी कोई लाख कहोरे, छूटत नाहिं हटेरा॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, मिटि_ गौ सकल अंधेरा॥

राग काफी ५—नैनन माझ बसाऊँ जो मैं साहिब पाऊँ ॥ टे० ॥ नैननमें मेरा साहेब वसदा, डरती पलक न
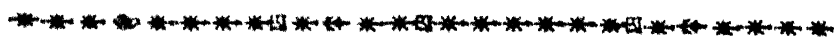
ऊगाऊँ ॥ एक टक ठाढी पंथ निहारौं, पलकसौं पलक न काऊँ ॥ त्रिकुटी महल में बना है झरोखा, जहां सुख झांकी पाऊँ ॥ अकह महलमें चवँर दुराऊँ सुखकी मेज विछाऊँ ॥ पियाको परसि भई पटरानी, आनंद मंगल गाऊँ ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, सिंधु बुंद मिलि जाऊँ ॥

राग काफी ६-लेखा तेरा लीजेगा रे सुनु दिल महरम यार ॥ टे० ॥ चलना दूरि अभी क्यूं थाक्यो; पंथ खड्गकी धार ॥ हकहि साखी न्याव जो होयगा, वा सांचे दरबार ॥ धरम राय जब लेखा मांगे, परत गुरजकी मार, घरकी नारी प्रान सों प्यारी, सो न चलै तेरे लार ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, हरि भजि उतरो पार ॥

राग काफी पंजाब ७-साहबसों लौ लाव हो मन गरब गुमानी ॥ टे० ॥ आज कालि अरु पांच दिनामें, आवैंगे जमदानी ॥ हाथमें मुगदर लोहका, तेरी खूब करैं मिजमानी ॥ पल पल आयु घटै छिन छिनमें, ज्यों अंजुली जन पानी । अब तू समझि देख दिल अपने, सुरति करौ पहिचानी ॥ हस्ती घोडा छत्र सिंहासन, दुनियां देखि लुभानी ॥ बाँह पकडि जम ले चले जब, होयगी ऐंचातानी ॥ भयो नर अंध मगन मायामें, ज्यूं कपि मूठ बंधानी । कर्म डोरि बाजीगरके बस, घर घर नाच नचानी ॥ दिल मिल एक जो होय रहै, सबदमें सुरति समानी ॥ अग्रदास दीदार दिवाना, दरिया बूंद मिलानी ॥

राग काफी ८—येही हाल फकीरा हंदा, सुन लीजो सब कोई बे ॥ सुरग मिरत पताल लोककी, फिकर फकीरो खोई बे ॥ टोपी तत स्रवनी चितवन, सींगी अन हद सोई बे। नाम निरंतर चोला पहिरै, सेली सुरति समोई बे। जत कोपीन सत आडबंद, मगन पतंगा होई बे। सिरजनहार तिलक सिर ऊपर, सुमरन कंठी पोई बे ॥ भिच्छा भाव सहजकी चीपी, झोली अकल जुढोंई बे। जो देवै जाइपै लेवे, ऊँच नीच नहिं कोई बे ॥ सेज भोम अकास ओढना, जोति चंद्रमा जोई बे ॥ पवन रैन दिन करै षवासी, दिढ आसना परि सोई बे ॥ धुनी ध्यान धकावै रैन दिन, फिकर फावडी होई बे ॥ आशा तृष्ना इंधन लकरी, धूंनी माँहि धकोई बे ॥ उन मुनि दिष्ट उदास जगतसे निस प्रेही निरमोहीं बे ॥ तरक त्याग बैराग धार ना, राव रंक नहिं जोई बे ॥ एका एकी रहै अवनि पर, दिलकी दुरमति खोई बे ॥ कहैं कवीर अल मस्त फकीरा, आय निरंतर सोई बे ॥

राग काफी ९—वाह वाह गुजरान फकीरी दी ॥ टे० ॥
कबहुँक सौड निहाली पथरिया, कबहुँ भूत सरीरो दी ॥
कबहुँ टुकडा बासी कूसी, कबहुँक खीर मलीदो दी ॥
कबहुँक ओढै मल मल खासा, कबहूँ गुदडी लीरों दी ॥
कबहुँक मैडी कबहुँक मन्दर, कबहुँक आसन चौडो दी ॥
कहैं कवीर परवाह न किसीदी, एक परवाह गुर पीरो दी ॥

राग काफी १०-रस मगन भया जब क्या गावे ॥टे०॥
दिल दरियाव सदा जल निरमल, अनत नहावनकूं कहँ जावे ॥ जाग्रत सुपन सुषोपति तुरिया, भवँर गुफामें घेर छावे ॥ इंगला पिंगला सुषमन नारी, वंक नालकी सुधि पावे ॥ त्रिकुटी ऊपर ध्यान लगावे, अविनाशीकूं लखि पावे ॥ कहैं कबीर सिषपर बैठा, आवागवन जब मिटि पावे ॥

राग काफी ११-मेरा दिल लगा फकीरीमें ॥ टे०॥
जो सुख पायो नाम भजनमें, सो सुख नाहिं अमीरीमें ॥ भली बुरी सबकी सुनि लीजे, करि गुजरान गरीबीमें ॥ प्रेम नगरमें रहन हमारी, भली बनि आई सबूरीमें ॥ कहँ कबीर दया सतगुरुकी, पाई भगति जगीरीमें ॥

राग काफी १२-दिल मगन भया जब क्या बोलैं ॥ टे० ॥ तेरा साहेब है तुझ माहीं, बाहर नैना क्या खोलै ॥ मान सरोवर हंसाबासी, डाबर डाबर क्या डोलै ॥ सुरति कलाली भयी मतवाली, अमृत पाया बिन तोलै ॥ हस्तीकी चाल चलु मन मेरा, बाहर भीतर क्या डोलै॥ कहैं कबीर अलमस्त फकीरा, साहेब पायो तिन ओलै ॥

राग काफी १३-दिल मगन भया अनहदबासी ॥ टे० ॥
अडसठको फल जान लियो है, खोजि लई काया कासी ॥ अष्ट सिद्धि नौ निधि आगे ठाढी, जुगन जुगनकी है दासी ॥

बिन ब्याई जहाँ काम धेनु है, दूझत है बारह मासी ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधो, गगन मंडलका है बासी ॥

राग काफी १४–मेरी लगन साहेबसो लागी है ॥टे०॥ बन्धन काटि किया गुर मुकता, जरा मरन भरम भागी है ॥ जबसे दया भई सतगुरुकी, लोक लाज कुल त्यागी है ॥ गुरुकी दया साधुकी संगत, अमर लोक लौ लागी है ॥ सुरति निरति दोउ भइ मतवारी, प्रेम सुधा रस पागी है ॥ एक नाम बिन और न दूजा, कहैं कबीर बड़ भागी है ॥

काफी १५–फकीरोंदा हाल यह हानी ॥टे०॥ गोदडी गुरु ज्ञान दी हो, दया दी कफनी । कमर मतंगा जतदा, माथे तिलक उनमुनी ॥ धूनी धीरज ध्यान दी हो, सेली सुरति अपार । फावडी गुरु ज्ञानदी हो, चित्त लगदा दसवें द्वार ॥ अन्तर तुरिया झूलदा हो; मरम न जाने कोय । जग विच दीसा बावरा हो, टुक हंस दे टुक रोय ॥ माता हस्ती झूलदो हो, आठूँ पहर खुसाल ॥ चेला दास कबीर दा, पद गावे कमाल ॥

राग काफी १६–गलताना मता जब आवैगा, तब जीवड़ा सुख पावैगा ॥ टेक ॥ अचार विचार छुटै या जिवका, दुरमति दूर नसावैगा ॥ माया मोह भरमके बादल, परदा खोलि बहावैगा ॥ पांच पचीस करो बसि अपने, सतगुरु सबद लखावैगा ॥ रहनि गहनिकी नाव

सवारी, तब भव पार सिधावैगा ॥ हंस सुजन जन बहुरि मिलैंगे, साहिबका गुन गावैगा ॥ अमरलोक इम्रतकी काया, तहां बड़ा सुख पावैगा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, यह तत विरला पावैगा ॥

## अथ मंगल प्रारम्भः ।

मंगल १—तन मन सुरति विचारि तो बात जनाइये। तुम प्रभु दीन दयाल सो ब्याह रचाइये ॥ बेद बुधि करि विधिसों चौक पुराइये । विषम भरम सब मेंटिकै कलश धराइये ॥ त्रिकुटी छाजे बेठि नगर खलबल परी। गावत मंगल चार लगन हाथे धरी ॥ काम क्रोध दोउ काटिके खम्भ बनाइये । सत्सुकृतके बाँसन मंडप छाइये ॥ सुरतिको घुडिला पलानि चित चाबुक लियो। अनहद बाजो बजायके ब्याहन चढि चल्यो ॥ शीलको खड्ग बँधाय छिमाको मौरिया । चले अमर पुर जाय धनीकी पौरिया ॥ ब्याहै सदगुरु आप सवारे हेतियो ॥ कहै कबीर सतिभाय अमर घर चेतियो ॥

मंगल २—दीननके हो दयाल भगतिकी पन करो। सरन आयकी लाज गई साहिब जिनि करो ॥ नऊ द्वार बिकार थार नौका वगें। मेरी सुरति नहीं ठहराय लगन कसैं लगे ॥ पांच तत गुना तीनका सावर साजीया। जम राखे बिलमाय तो फंदन फांदिया ॥ त्रिगुन फांसि फंदि आय माया मद जालमें। भवसागरके बीच महा जंजालमें ॥

मोक्ष मुक्ति जब होय दया जनपै करो। मेरो काटो कर्म विकार दास अपनो करो ॥ साहेब कबीर बंदी छोर अजर इक मानिये। हमसे पतित उधारि सरन साहिब आनिये ॥

मंगल ३—जो तुम आये हो सरन बचन इक मानियो। तजियो खलककी आस, सुरति ऐसे जानियो ॥ ज्यूं जल मीन सनेह, सदा जलमें रहै। जल बिछूरत तजै परान, लगन ऐसी लहै॥ तजो नीर पीवो, खीर लप नहीं लावई। ते नर हंस हमार, सुरति ऐसे धावई ॥ काग वचन तुम छांडि दे, हंस गति लावई। तेरे पुनि पूरन करि देउँ, बहुत सुख पावई॥ काटूँ करम विकार, भार सिर लेइहौं। हंसा तो में रहूं समाय, आप सम करि गहौं॥ कहैं कबीर धरमदाससों तत मतसार ॥ हंसा बेगे लोक मंझार नाम आधार है ॥

मंगल ४—मूल कमलमें बैठि धर रनिको बंध दयो ॥ सप्त अगरासी कोटि सबदको वस भयो ॥ मूंदे सप्त पताल मेरु मंडल हले। गरजो गगन अकास अमीसागर झले ॥ नई भई पहिचानि नवल भयो नेहरा। अगर जोति सिरमौर विराजै सेहरा॥ उठौ सुहागिनि नारि महलको गम करो। वजर पौर उधारि पुरुषसो तुम मिलौ ॥ परम ज्योति प्रकाश निरंतर राजई ॥ मिलौ सुहागिनी नारि तो पुरुष रिझावई ॥ देख्यो सबद रूप विहँसि

सुंदरि मिली। त्रिकुटी नगर मंझार मदन मूरति लगी। धरमदास चित चेति चरन चित लाईये॥ सतगुरु कबीर कहि दीन तो दीप जगाइये॥

मंगल ५—सतगुरु आनंद मंगल आरति बोलिये। जुग जुग कहो पुकारिके पर्दा खोलिये॥ अलख निरंजन राय तो चरित्र बनाइया। संसामें छिन भंगु सुपनौ दिखाइया॥ यह मंसार सराय तौ बाट बरानिया। उठ चले अपने पंथ न काहू जानिया॥ सुन धरमदास सयान पुकार जो कीजिये। निंदा अस्तुति त्यागि पिया चित दीजिये॥ पंथ दुहेला नाहि कोई सत संगिया। सायर बुंद बिनोद प्रेम चित मंडिया॥ नाहि करौ संशय सोग जीवन सब धुन्ध है। अजर अमर एक आत्मा अमृत बुंद है॥ पांच तत्त्व सम बुंद पचीस सुहावना। अष्टधातुको जुगल सो पियाको खेलावना॥ पिया है प्रगट बिचारि नाहिं कोई बुझिया। अंन दुहागिन नारि तत्त्व नहिं सुझिया॥ अच्छरमें गम राखि निःअच्छर जानिये। शब्द मंत्र गुरू भाषि सुरति पहिचानिये॥ हरष शोकते भिन्न बूझ प्रवीन हैं। जाग विवेकतें दरसै जोति अधीन है॥ जग मन दीप बनाय आरति कीजिये। घट घट जोति परगास दरस सुख लीजिये॥ यहां वहां भरिपूर न दुनिया भावना। गुरुगम परचे होत तो इस विधि पावना॥ कहै कबीर धर्मदाससों मूल उचारिये। यही विधि आरती साजि शबद निरवारिये॥

मंगल ६–मनुषा देही पाये सुकृतको धाइये । सुरति जो अषन कुवाँरि हंसको ब्याहिये ॥ सतगुरु विप्र बुलाय तो लगन लिखाईये । वेगि कारि लेहु ब्याह ढील नहिं लाइये ॥ मिलौ पचीसो नारि तो मंगल गाइये । चौरासीका दुख बहुरि नहिं पाइये ॥ सुरति जो सज्यो सिंगार पियापै जाइये । जन्म कर्मके अंकतो तुरत मिटाइये ॥ हंसै कियो विचार सुरति सो यों कही जुग जुग अछन कुँवारि एता दिन क्यों रही ॥ सुरति जु कारि सलाम पीया तुम सत कही । मोहि सतगुरु मिलिया नाहीं कुवाँरि यों रही ॥ परम पुरुषकी सेज अखंडित खेलना । अमृत प्याला पाइ अधरही झेलना ॥ पान परवाना पायतो नाम सुनावई । सतगुरु कहैं कवीर जीव गति पावई ॥

मंगल ७–पीहर रही भुलाय घना दिन बापके । कर सतगुरुको संग चालु घर आपके ॥ मामा और ममसाल भुवा दस बेहनरी । तजि उनहूँको संग जाय सन्मुख अरी ॥ मात पिता सुतवीर तजो परिवारको । उभा छोड़ लोग चली है पारको ॥ बहुरि न मिलना होय पीहरि प्यारा लोगसो । चली है अपने देश पूरवला जोग सो ॥ लंघिया औघट घाट कमल सब छेदिया । भवँर गुफाके घाट निरंजन भेदिया ॥ चढी कलश पर जाय–अगम गम्य जहँ किया । निराकार निरलेप पयाना तहँ दिया ॥ अगम महलमें जाय मिलिहै पीवसो ।

नहिं पायक हो ॥ मनतारे मन बौरे मनहिं नचावे हो। मन आवै मन जाय नाम सब गावै हो ॥ विष बोयउ संसार अमृत कहां पावौ हो। पुनिरपि जनम तुम्हार दोष केहि लावौ हो ॥ मायाके विस्तार नींद नहिं आवै हो। कह राजा कहँ रंक दोऊ मिलि रोवै हो॥ कहै कवीर सुन संतो मन निरवारो हो। बूझहु करहु विचार बहुरि नहिं आवोहो ॥

सत्यनाम ।

## अथ तीसा यंत्र प्रारम्भः। *

बन्दी छोर कवीर गुरु, धर्मदास शिषजासु ।
तासु चरण बन्दन किये, होय अविद्या नासु ॥

इन्दव छन्द–सोय रह्यो नित मोह निसा महँ, जानि परो नहिं राम पियारो। जन्म अनेक गये सपनांतर, एकहु बार न जागृत धारो॥ आदि गुरु तब देखि दया

---

* यह तीसा यंत्र किसी निर्पक्ष विचार वान् महात्माने परोपकारार्थ प्रकट किया है । इसमें निर्पछ सुन्दर विचार और उपदेश होनेके कारण, तथा सद्गुरु कबीरकी भी, प्रायः साखियाँ इसमें आनेके कारण, कबीर पंथियोंको अत्यन्त प्रिय होनेसे, शब्दावलीके संग्रह करनेवालोंने इसे भी, अपनी शब्दावलीमें सम्मिलित कर लिया है। हस्त लिखित या छपी जितनी प्रति मिली सबमें–इसका नाम तो तीसाही यन्त्र लिखा है, किन्तु गिन्तीके उपदेशी प्रश्नोत्तर केवल अठाइसही लिखे हैं, इस लिये उसकी पूर्तिके लिये अन्तके-

करि, तीसा यंत्र शब्द उचारो। चारहु वेद पुरान अठारह, सोधि कह्यो यह तत्त विचारो ॥

सा०-जीव किरतारथ कारने, भाषा कीन विचार।
तीसा जंतर बूझिके, नर उतरे भव पार॥
कलिमें जीवन अलप है, करिये वेगि सम्हार।
तप साधन नहिं हो सके, केवल नाम अधार॥

प्र० जगाइये क्या ? उ० प्रेम.

प्रेम जगावे विरहको. विरह जगावे पीव।
पीव जगावे जीवको, वही पीव वहि जीव ॥ १ ॥

---

-दो प्रश्नोत्तर शामिल कर तीस पूरे कर दिये गये हैं, आशा है कि, मेरी इस मभ्य धृष्टताको शिष्टगण क्षमा करेंगे।

इसकी एक प्रति, दिल्ली खारीबावलीके श्रीमहंत सुखलाल दासजी साहबने बहुत दिन हुए मुझे दी थी, जिसका नाम तीसा यंत्र न होकर शिक्षा दर्पन लिखा है। इसको किसी शैव सन्यासी महात्माने अपना करके छपवाया है। कबीरपन्थियोंके पास जो प्रतियां हैं, उसमें मतमतांतरसेरहित उपदेश मात्र हैं किन्तु शैव महात्माने इस यंत्रको शैव बनानेके लिये. बीच बीचमें अपने अनुकूल कई दोहे मिलाकर यंत्रको अपना बनानेका प्रयत्न किया है। इस प्रकारके कार्य अनुचित होनेपरभी साम्प्रदायिकताके कारण लोगोंसे भूल हुआही करती है इसी लिये सद्गुरुने कहा है-

पछापछी कारने, सब जग गया भुलान।
निरपछ होयके हरि भजे, सोई संत सुजान॥

जिनको अपना कल्याण करना है उन्हें सदा ऐसी साम्प्रदायिकता और मिथ्या अभिमानसे अलग रहकर सत्यकेही खोज और ग्रहणमें रहना चाहिये।

संग्रहकर्ता-श्रीयुगलानन्द विहारी,

प्र० कीजिये क्या ? उ० पूजा।

पूजा गुरुकी कीजिये, सब पूजा जेहि माहिं।
ज्यों जल सींचे मूलको, फूले फले अघाहिं ॥ २ ॥

प्र० परखिये क्या ? उ० शब्द।

परखो द्वारा शब्दका, जो गुरु कहे विचार।
विना शब्द कछु ना मिले, देखो नैन निहार ॥ ३ ॥

प्र० लीजिये क्या ? उ० नाम।

नाम मिलावे रूपको, जो जन खोजी होय।
जब वह रूप हिरदे बसे, क्षुधा रहे ना कोय ॥ ४ ॥

प्र० करिये क्या ? उ० सत्संग।

करिये नित सतसंगको, बाधा सकल मिटाय।
ऐसा अवसर ना मिलै, दुरलभ नर तन पाय ॥ ५ ॥

प्र० बोलिये क्या ? उ० मीठा।

मीठा सबसे बोलिये, रस उपजे चहुँ ओर।
बसी करन यह मंत्र है तेजो बचन कठोर ॥ ६ ॥

प्र० होइये क्या ? उ० दास।

होय रहै जब दास यह, तब सुख पावै अंत।
देखि रीति प्रह्लादकी, सबमें निरखो कंत ॥ ७ ॥

प्र० मानिये क्या ? उ० सबकोसत्य.

मानिये सबको सत्य है, जाको व्यवहार।
जियन मरत दोऊ लगा, थिर होय देखु विचार ॥८॥

प्र० बराइये क्या ? उ० झगरा।

झगरा नित्य बराइये, झगरा बुरी बलाय।
दुख उपजे चिंता बढै, झगरामें घर जाय ॥ ९ ॥
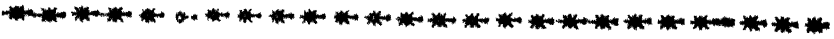
प्र० खाइये क्या ? उ० गम।

गम समान भोजन नहीं, जो कोइ गमको खाय।
अम्बरीष गम खाइया, दुरवासा बिललाय ॥ १० ॥

प्र० राखिये क्या उ० निज धर्म।

राखिये निज २ धर्मको, दिढ गहिये सब काल।
निज धर्म आपन राखतें, सहजे भये निहाल ॥ ११ ॥

प्र० त्यागिये क्या ? उ० सब कुछ।

त्याग तो ऐसा कीजिये, सब कुछ एकहिं बार।
सब प्रभुका मेरा नहीं, निश्चय किया विचार ॥ १२ ॥

प्र० छोडिये क्या ? उ० अभिमान।

छोडि झूठ अभिमानको, सुखी होय यह जीव।
भावे कोई कछु कहै, हिये बसे निज पीव ॥ १३ ॥

प्र० पाइये क्या ? उ० सुख।

सुख पइये निज रूपमें, द्वैत भाव करि त्याग।
निरखो आपा सबनमें, रहै न दुखको लाग ॥ १४ ॥

प्र० देखिये क्या ? उ० आत्मराम।

देखे सबमें राम है, एकहि रस भरपूर।
ऊषहिते सब बनत है, चीनी शक्कर गूर ॥ १५ ॥

प्र० मिटाइये क्या ? उ० भ्रम.

भरम मिटा तब जानिये, अचरज लगे न कोय।
यह लीला सब रामकी, निरखे आपा खोय ॥ १६ ॥

प्र० निरखिये क्या ? उ० निजरूप।

निरखत अपने रूपको, थीर होय सब अंग।
कहन सुनन कछु ना रहे, ज्यों का त्योंहि अभंग १७
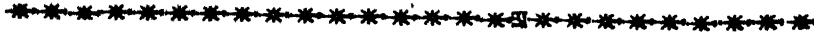
प्र० सुनिये क्या? उ० गुणवार्ता ।

सुनिये गुणकी वार्ता, औगुन सुनिये नाहिं ।
हंस छीरको गहत है, नीरस त्यागत आहि ॥ १८ ॥

प्र० साधिये क्या ? उ० इन्द्री ।

साधे इन्द्री प्रबलको, जिहिं ते उठे उपाध ।
मन राजा बहकावते, पाँचो बडे असाध ॥ १९ ॥

प्र० मारिये क्या ? उ० आशा ।

मारिये आशा साँपिनि, जिन डसिया संसार ।
ताकी औषध तोष है, यह गुरु मंत्र विचार ॥ २० ॥

प्र० दीजे क्या ? उ० दान ।

भूखेको कछु दीजिये, यथा शक्ति जो होय ।
ता ऊपर शीतल बचन, लखी आत्मा सोय ॥ २१ ॥

प्र० बडा पुण्य क्या ? उ० दया ।

दया पुण्य सबसे बडा, सबके ऊपर भाख ।
जीव दया चित्त राखिये, वेद पुराण है साख ॥२२॥

प्र० बडा पाप क्या उ० हिंसा ।

बडा पाप हिंसा अहै, ता समान नहिं कोय ।
लेखा मांगे धर्म जब, तब सब नौबत होय ॥ २३ ॥

प्र० खुशबूई क्या ? उ० यश ।

खुशबूई यशकी भली, फैलरही चहुँ ओर ।
मल्या गिरि सम गंध है, प्रगट बसे जग सोर ॥२४॥

प्र० दुर्गंध क्या ? उ० अपयश ।

अपयश सम दुर्गंध नहीं, नीका लगे न सोय ।
जैसे मलके निकटमें, बैठ सके ना कोय ॥ २५ ॥

प्र० धारिये क्या ? उ० धीरज ।

धीरज धरिके जानिये, समुझि सबनकी रीति ।
उनकी औगुन आपमें, कबहुँ न लइये मीति ॥२६॥

प्र० ठहराइये क्या ? उ० मन ।

मन ठहराये जानिये, अनसुझ सबै सुझाय ।
ज्यों अंधियारे भवनमें, दीपक बारि दिखाय ॥ २७॥

प्र० होनी क्या ? उ० होनहार ।

होनी सोई होत है, होनहार जो होय ।
राम चन्द्र बनको गये, सुख आवत दुख जोय ॥२८॥

प्र० विचारिये क्या उ० निज तत्त्व ।

जो निज तत्त्व विचारिके, राखे हिये समोय ।
सो प्रानी सुखको लहै, दुख नहिं दरसे कोय ॥ २९॥

प्र० तौलिये क्या ? उ० बोली ।

बोली तो अनमोल है, जो कोइ बोले जान ।
हिये तराजू तौलके, तब मुख बाहर आन ॥ ३० ॥

प्र० सर्वोपरिक्या ? उ० गुरुकी दया ।

सर्वोपरि गुरुकी दया, जो हारी भव खेद ।
गुरु भगता सो जानई, और न पावे भेद ॥ ३१ ॥

सवैया—भाग जगे जब पूरबको तब, श्रीगुरुदेव दया करि हेरी । ज्ञान कपाट उघार दियो जब, मोह निसाके मारग फेरी ॥ थोरेइमें समझाय दियो तब, धीर भयी चंचल मति मेरी । सूझ परो सबही घट साहब, छूटि गयी सब तर्क घनेरी ॥

इति तीसा यंत्र ॥

सत्यनाम

# शब्दावली—छठा खंड।

## अथ शब्द प्रारम्भः।

शब्द १-संतो सतगुरु अलख लखाया। जासो आप अपन दरसाया॥ बीजमध्य ज्यों वृच्छ देखिये, वृच्छ मध्य ज्यों छाया॥ परमातममें आतम जैसे, आतम मध्ये माया॥ ज्यों नभ मध्ये सुन्न देखिये, सुन्न मध्य ऊंकारा॥ अच्छरमें निहअच्छर दरशे, छर अच्छर विस्तारा॥ ज्यों रवि मध्ये किरन देखिये, किरनमध्य परकासा॥ पारब्र-ह्मते जीव ब्रह्म है, इमि जीव मध्यमें स्वासा॥ स्वासामध्ये शब्द देखिये, अर्थ शब्दके माहीं॥ ब्रह्मते जीव जीवते मन है, न्यारा मिला सदाही॥ आपे बीज वृच्छ अंकूरा, आप फूल फल छाया॥ सूरज किरन प्रकाश आपही, आप ब्रह्म जिव माया॥ आतममें परमातम दरसे, परमा-तममे झांई॥ झाईमें परझांई बोलै, लखे कबीरा साई॥

शब्द २-संतो गगनमंडल लगी तारा। खोलैंगे कोई संत जौहरी कोटन मध्य बिचारा॥ प्रथमें सोहं ध्यान लगावें, ता बिच सुरत करे पैठारा॥ तब आगेकी सुध

कीजिये, ता भीतर निजरूप हमारा ॥ मंडल भीतर पुरुष बिराजे, कुलफ तीन तहां अगम अपारा ॥ ताकी कूंची गुरुगम मांहीं, ज्ञान ग्रंथसो न्यारा । जुगभर जोग समाध लगावे, कोटन करे बिचारा ॥ पुरुषरूप कबहूँ ना दरसे, जो गुरु मिलै न सारा ॥ जब गुरु वहियां होय दया निधि, निजमति खोल सुधारा ॥ तबै हंसको मारग सूझे, खोलै कुलफ किंवारा ॥ ता गुरुपै तन मन धन वारे, छोड कपट व्यवहारा ॥ तब गुरु होय कृपाल जीवपै, कागाते हंसा करडारा ॥ कही हमारी मानो हंसा, या मति कोट ज्ञानसो न्यारा ॥ जीवत हंसा लोक समावे, जो यह शब्द बिचारा ॥ अजपा ध्यान गगनमें दरसे, है सबहीसों न्यारा ॥ कहैं कबीर सुनो हो संतो, भेंटो निज करतारा ॥

शब्द ३—संतो वह घर सबते न्यारा । जहां पूरन पुरुष हमारा ॥ टे० ॥ जहां न दुख सुख सांच झूठ नहिं, पाप न पुन्य पसारा ॥ ना दिन रैन चंद ना सूरज, बिना जोति उजियारा ॥ ना तहां ज्ञान ध्यान ना जपतप, बेद अहै नहि बानी ॥ करनी धरनी रहनी गहनी, ये सब वहां हेरानी। धरना अधर न बाहिर भीतर, पिंड ब्रह्मांडौ नाही ॥ पांच-तत्त्व गुन तीनों नाहीं, साखी शब्द न ताही ॥ मूल न फूल बेल ना बीजा, बिना वृच्छ फल सोहे ॥ वोहं सोहं अर्ध उर्ध नहिं, स्वासा लेखत को है ॥ ना निरगुन ना सरगुन

भाई, ना सुच्छम अरु अस्थूला॥ ना अच्छर ना अविगत भाई, या सब जगके भूला॥ जहां पुरुष तहंवां कछु नाहीं, कहें कबीर हम जाना॥ हमरी सैन लखै जो कोई, पावे पद निर्वाना॥

शब्द ४–संतो वह घर ऐसा जाना। जहवां है पुरुष ठिकाना॥टे०॥ जब कछु रचना ताहि धनीका, आद न अंत पसारा॥ रूप रेखा ना बरन अबरन, तबकी समुझ बिचारा॥ ईच्छा एक भई सम्रथसों, ताका सब मंडाना॥ फिर नहिं साहब ईछा आये, ईछा यहां लुकाना॥ ईच्छाते शब्द सुरत नौतम भये, इनके कुंभ बनाया॥ कुंभै उपजे कुंभै बिनसे, ईच्छाआवे जाया॥ सबनर चाहै बाहर भीतर, नखसिख ईच्छा खेला। ईच्छा भेद लखे जो कोई, पावे पुरुष सुहेला॥ ज्यों जब त्यों अबही है संतो, समुझ जुगत सो पावे॥ कहें कबीर शब्दते न्यारा, इस विधि पुरुष रहावे॥

शब्द ५–संतो दृष्टि परे सो माया॥ वहतो अचल अलेख एकहै, ज्ञानदृष्टिमें आया॥ सतगुरु दिये बताय आपमें, है माहीं सत सोई॥ दूजा क्रीतम थाप लिया है, मुक्त कोन विध होई॥ काया झांई त्रिगुन तत्त्वकी, विनसे कहवाँ जाई॥ जल तरंग जलहीसो उपजे, फिर जल मांहि समाई॥ ऐसी देह सदा गत सबकी, मनमें हरदम कोइ उचारे॥ आपे भयो नाम घर न्यारा, इस विधि मया

देख विचारे ॥ आपे रहे समाय समुझमें, ना कहुँ जाय न आवे ॥ ऐसी स्वासा समुझपरे जब, पूजे काह पुजावे ॥ धरे न ध्यान करे ना जप तप, राम रहीम न गावे ॥ तीरथ बरत सकलो भ्रम छोडे, सुन्न दौर ना जावे ॥ जोग-जुगतसो कर्म न छूटे, आप अपन ना सूझे ॥ कहें कबीर सोइ संत जौहरी, जो या समुझे बूझे ॥

शब्द ६–संतो तन चीन्हे मन पाया ॥ तनही मन है मनही मन है, मनही निरंजन राया ॥ मन गुन तीनों पांचतत्त्व है, मनका सकल पसारा ॥ जैसे चंद उदकमें दीसे, है मांही सत न्यारा ॥ जागृत सुपन सुषोपत तुरिया, चारों मनके झांई ॥ मन औतार असंख्य कला होय, मनते दुसरा नाईं ॥ आद हतांसो अब है संतो, सतगुरु भेद बताया ॥ कहें कबीर कंचनके भूषण, एक-हुवा जब ताया ॥

शब्द ७–संतो ज्ञान कौनसे कहिये, कौन ध्यान विज्ञान कौन है, कैसे निजपद लहिये ॥ कोहै जीव ब्रह्म कहु कोहै, को अच्छरसे न्यार ॥ कोहै नाम अनामी कोहै, को कहिये औतारा ॥ चार अवस्था पांचौ मुद्रा, जोग करे सो कवना ॥ मुक्तनाम काहेसो कहिये, कौन सार निज पवना ॥ कहो शब्द कहवांसे आया, करत अवाज अमोला ॥ काट कसर होत अंदरमें, कौन राह होय बोला ॥ बाहर भीतर व्यापक को है, सकल ठौरमें बासा ॥

उतपति परलै कौन करत है, को कर सबे तमासा ॥ येता जुग्त लखे सो कोहै, अलख नाम है काको ॥ कहैं कवीर सुनो हो संतो, खोजकरो तुम ताको ॥

शब्द ८—संतो सुनो शब्दका ज्वाबा ॥ करिहो छान जान जब पैहो, हासिल सबे हिसाबा ॥ ज्ञान सोई जो आतम चीन्हे, और ज्ञान कछु नाहीं ॥ चार दिसाकी छोंड आसरा, मगन रहे मनमाहीं ॥ ध्यान सोई जो उनमुन दरसे, बालक सम विज्ञाना ॥ या रहनीमें चूके नाहीं, चहे न मान गुमाना ॥ जीव सोई जो जुग जुग जीवे, उतपति परलै माहीं ॥ देही धर भरमैं चौरासी, निरभय कबहुं नाहीं ॥ ब्रह्म सोई जो सबघट व्यापक, निअछरको छय नाहीं ॥ ॐकार आद सबहीके, त्रिगुन तत्त्व ता माहीं ॥ नाम सोई जाके है रूपा, निअछर निज नामा ॥ राम कृष्न औतार आदिलो, धरे निरंजन जामा ॥ शब्द सोई जो सबते न्यारा, त्रिकुटी मो टकसारा ॥ कंठद्वार होय बानी बोलै, निकसे मुखके द्वारा ॥ मनहिं अवस्था मनही मुद्रा, मन करता तिहुँलोका ॥ मुक्तनाम वाहीसो कहिये, मिटगये धंधा धोखा ॥ सार पवन सबहीके ऊपर, पंचासीके पारा ॥ उतपति परलै काल करत है, तासो है वह न्यारा ॥ कहें कवीर यह लेख बताऊं, संत होय सो बूझे ॥ गुप्त प्रगट औ बाहर भीतर, सकल ठौर तिहिं सूझे ॥

शब्द९—संतो काम सकल जग खाया ॥ टे० ॥ स्वादी जीव

कोई ना बांचे, परघर गमन कराया ॥ काम लहर काहु ना चीन्हा, कहो कहांसे आया ॥ जासों भयो ताहि धरखायो, खाता विलंब न लाया॥अद्यारूप ब्रह्म छय कीन्हो, तन दे नाथ गिराया ॥ ब्रह्मा विष्णु मुनिजन जोगी, सकल जीव भरमाया ॥ स्वर्ग मृत्यु पाताल कामवस, चार खान रहु छाया॥ कहे कवीर काम जोरावर, तीन लोक धरखाया॥

शब्द १०-संतो निरंजन जाल पसारा ॥ टे० ॥ सरग पाताल रचा मृत्युमंडल, तीन लोक विस्तारा ॥ ब्रह्मा विष्णु शंभु प्रकट कर, तेही दीन्हो सिर भारा ॥ ठांवठांव तीरथ वरत रोपे, ठगवेको संसारा ॥ चौरासी लच्छ जीव फंदाने, कबहुं न होय उबारा ॥ जारिबारि भसम करिडारी, फिर फिर दे औतारा॥आवागमन रहे उरझाई, बूडे भौ मंझारा॥ सतगुरु शब्दके बिना चिन्हारी, कैसे उतरे पारा ॥ माया फांस सकल जिव फांसे, आप भये कर्तारा ॥ अजरलोक जहां पुरुष विदेही, जहांके मूंदो द्वारा ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा, ये ओइले व्योहारा ॥ जो साहबसे निरंजन प्रगटे, सो सबहीसे न्यारा ॥ महाकालसे बांचा चाहो, गहो शब्द टकसारा ॥ कहे कवीर अमर कर राखों, जो निज होय हमारा ॥

शब्द ११-संतो माया तजी न जाई । जैसे बेल बृच्छ लपटाई॥टे०॥ काम तजे तो क्रोध न छूटे, क्रोध तजे तो लोभा ॥ लोभ तजे तो आशा मांडे, मान बडाई शोभा॥

ग्रह तजे तो मढी बनावे, उदै अस्त दे फेरी ॥ कुटुम्ब तजे सिख साखा चाहै, मन मायाने घेरी ॥ देखत पैसा हाथ न छूवै, फूटी फावरी ताके ॥ आदरमान कछू ना चाहै, दीनी माया झांके ॥ कर्म संजोग भया ना पावत, तौलग माया त्यागी ॥ आशा तृष्ना मिटी न मनकी, का ग्रेही बैरागी ॥ स्वामी सिष साखाके कारन, सौ जोजन चलि जावे ॥ जो छूटे तो सीधे छूटे, हिरदै ज्ञान समावे ॥ माया त्यागे मन बैरागी, सबदमें सुरत समानी ॥ कहैं कबीर सोई संत जौहरी, जिन झूठी कर जानी ॥

शब्द १२—संतो सहज समाध भली है ॥ जबसो दया भई सतगुरुकी, सुरत न अनत चली है ॥टेक॥ जहँ जहँ जाउँ सोई परिकरमा. जो कछु करों सो पूजा ॥ ग्रह उद्यान एक करि लेखों, भाव मिटाऊँ दूजा ॥ शब्द निरंतर मनुवाराचे, मलिन बासना त्यागी ॥ जागत सोवत ऊठत बैठत, ऐसी तारी लागी ॥ आंख न मूँदो कान न रूँधो काया कष्ट न धारों ॥ उघरे नैनमें साहेब देखो, सुंदर बदन निहारों ॥ कहैं कबीर या उन्मुनि रहनी, जो प्रगट करि गाई॥ दुख सुखके वह परे परमपद, सोई सुख रहा समाई॥

शब्द १३—संतो एकपंथ दोय बाटा ॥ आगे अंतरगत एक दुबिधा, तहांसो मारग फाटा ॥टेक॥ हिंदूके हद गऊ देहरा, तीरथ व्रत स्नाना ॥ बकरी मार मांस मुख मेलै, कहो रामका जाना ॥ रोजा बांग निमाज गुज़ारे,

मक्के मसीद मुलाना ॥ तसबी फेर ततबीर न छोडे, कहो अलहका जाना ॥ अपनी बुधसो छेदे काना, सुन्नत वही कराई ॥ जोरे हुकम अल्लहके होता, कटी क्यों ना आई ॥ तुरुक सुन्नत ईंद्रीका कीन्हा, मूल न काटे मीयां ॥ विन सुन्नत बीबी घर मांही, क्यों राखे बिन कीया ॥ हिंदूकी दया मिहर तुरकनकी, दोनों घटसे भागी ॥ वे हलाल वे झटकामारें, आग दोउन घर लागी ॥ सूकर गऊके एकहि लोहू, एक हाड़ इक चामा ॥ कहे कवीर हम दोनों त्यागे सबघट आतमरामा ॥

शब्द १४—संतो ऐसी भक्त निरासा ॥ जो कोइ चाहैं मुक्ति पदारथ छांडि सबकी आसा ॥ टेक ॥ जो माया परपंच न होता, नृप जंगल क्यों जाता ॥ दे पाहन पारस तेली घर, दत्तखगी क्यों खाता ॥ रतन जडित सुखसेज साहके, नामदेव जलहि बहाया ॥ गोरख कनक कूपमें डारे, गुरू कहें चानक लाया ॥ गरभवास शुकदेव महामुनि, महासुमत होय जागे ॥ होय अनुराग ब्रह्मसो झगडे, मनबांछित फलमांगे ॥ साहेब कबीर भक्तपरमारथ, अम्मर बेचन आये ॥ ब्रह्मरूप होय शब्द सुनाये, देत गहर ना लाये ॥

शब्द १५—संतो मेंहीं होय सो पावे ॥ टे० ॥ खांड जो बिखरी रेतमें, हस्ती चुनी न जाय ॥ या बूरेका यही महातम, चींटी होय चुन खाय ॥ मोटे काते बिने गूझनी, मिहीं कहांसे पावे ॥ वा कोरीको दोष न दीजे, मिही

*************************

बिन मिट्टी न पावे ॥ मोटे माटी बसे कुम्हारके, मुगदर मार दिवावे ॥ मोटेको जब मार परत है, तब तिहिं कौन छुडावे॥ कूट काटके ले जल बोरे, मुकियन लात लगावे॥ मिट्टी भई कुम्हार मनमानी, करगहि चाक फिरावे ॥ कहैं कबीर मिट्टीं कर मनुवां, और मिट्टीं कहँ पावे ॥ मरजीवा होय जलमें पैठे, मानिक मोती लावे ॥

शब्द १६–संतो मोहि कोई समुझावे ॥ जीव ब्रह्म एककी दोई, या मति मोहि बतावे ॥ टे० ॥ एक कहेते जाय न संशय, दोय कहेते न बनि आवे ॥ कहुं कहुं एक कहूं कहुँ दोहै, शास्त्र दोऊ बिधि गावे ॥ ब्रह्म सनातन भूतक कहिये, श्रीमुख गाय सुनायो ॥ जीव सदा उपजे औ बिनसै, सो क्यों ब्रह्म कहायो ॥ जीव कहांते आया संतो, कहो कहां को जाई। आवत जात चार जुग बीते, गति न काहु लखि पाई ॥ या संशय सतगुरु बिन संतो, को कर कृपा मिटावे ॥ ब्रह्म अनादि जीव मायामें, प्रगट कबीर लखावे ॥ ❋

शब्द १७–संतो अब हम आपा चीन्हा। निज सरूप प्राप्त है नितही, अचरज सहित सो कीन्हा ॥ टे० ॥ ना हम मनुष देवता नाहीं, ना ग्रेही बनखंडी। ब्राह्मण क्षत्री बैसहु नाहीं, ना हम सुद्र न दंडी ॥ ना हम ज्ञानी चतुर न मूरख, ना हम पंडित पोथी। ना हम सागर ना मर-जीवा, ना हम सीप न मोती ॥ ना हम सरगलोकको जाते, ना हम नरक सिधारें॥ हम सबरूप सबनते न्यारा,

ना जीता ना हारे ॥ ना हम अमर मरे ना कबहूं, हम कबीर ज्योंका त्योंही ॥ व्यास कपिलमुनि नामदेवऋषि, मनका अनुभव योंही ॥ ❋

शब्द १८-संतो शब्द साधना कीजे। जाहि शब्दसे राम प्रगट भये, सोई शब्द लिख लीजे॥टे०॥शब्दहिं वेद पुरान बखाने, शब्दहि शब्द ठहरावें ॥ शब्दहिं सुर नर मुनिजन गावें, शब्दका भेद न पावैं ॥ शब्दै गुरु शब्द सुन सिष भये, शब्दै बिरला बूझै ॥ सोई गुरु सोई सिष आनम, अंतरगत जब सूझै ॥ शब्दै शब्द शब्द बहु अंतर, सारशब्द मथ लीजे ॥ कहै कबीर जेहि सारशब्द नहिं, धृकजीवन जग जीजे ॥

शब्द १९-संतो नैन बान हैं गाढे। जानन लगे सोई तन जाने, परै चैन नहिं ठाढे ॥ निस दिन व्याकुल फिरत रैनदिन, कामकलासों बाढे ॥ आगे समुझ परेगी तोको, जब जम होय हैं ठाढे ॥ साहेब कबीर मिले गुरु पूरे भौसागर सो काढे ॥

शब्द २०-अवधू छर अच्छरसो न्यारा, तुम ताका करो बिचारा ॥ टे० ॥ खैंच पवन जो गगन चढावो, करो गुफामें बासा ॥ गगन पवन जब दोनों बिनसे, कहां रहे जोग तमासा ॥ जब बिनसे वह ईंडा पिंगला, रवि शशि सुषमन नारी ॥ जो उनमुनसो तारी लावो, सो कहां रहे तुमारी ॥ मेरुडंड पर डार दुलीचा, जोगी तारी लावे ॥

सो सुमेरकी खाख उडेगी, काचा जोग कमावे ॥ जो या जोति गगनमें दरशे, पानी मद्धे तारा ॥ निघटे नीर बिनस गये तारे, निकसो कौन दुवारा ॥ दोय तत्त्वके मध्य बीचमें, अटके मुनिवर जोगी ॥ अच्छरहूकी खबर बतावे, सोई मुक्त बियोगी ॥ वोतो पद दोनोंसे न्यारा, छर अच्छर ना हेरा ॥ कहैं कवीर ताहि लखि गोरख, बहुर न होय जग फेरा ॥

शब्द २१-अवधू कहि बतलाऊँ कैसा । एक अगम अगोचर ऐसा ॥टे०॥ जो कहिये सो हैबी नाहीं, है सो अगम न जाई । सैना बैना कासो कहिये, ज्यों गूंगे गुडखाई ॥ काजी हाथ किताब कुराना, पंडित बेद पुराना । वह अच्छर लिखवेमें नाहीं, मात्रा लगे न काना ॥ दिष्टि न आवे मुष्टि न आवे, बिनस न होय नियारा । ऐसा ज्ञान कथै जग गुरुवा, संतो करो बिचारा ॥ कोई ध्यावे निराकारको, कोई ध्यावे ओंकारा ॥ वह तो पद दोऊसैं न्यारा, जानैं जाननहारा ॥ नाद बेद लों पढना गुनना, औ चतुराई भीना ॥ कहें कवीर वह कबहुं न परलै, जो सत बिरले चीन्हा ॥

शब्द २२-पीले अबधू होय मतवाला, प्याला प्रेम अमी रसका रे ॥ पाप पुन्य दोउ भुगतन आया, कौन तेरा अरु तू किसका रे ॥ जो दम जीवो नामगुन गावो, धन जोबन सपना निसिकारे ॥ बालापन सब खेल गवाँया,

तरुन भया नारी बसका रे ॥ वृद्धाभया कफ बायुने घेरा, खाट परे तन जात सकारे ॥ नाभि कमलमें है कस्तूरी, कैसे भरम मिटै पशुकारे ॥ विन सतगुरु इतना दुख पाया, जैसे भटकिमुवा मिरगारे ॥ लख चौरासी उबरन चाहो, तो छाडो कामिनि चसका रे ॥ कहे कबीर सुनो भाई साधो, नखसिख रूप भरा बिषकारे ॥

शब्द २३–करमनते सो करे करता रे ॥टे०॥ कबहूं सैन करे सागरमें, कबहूं सोषे सब सरिता रे ॥ कबहुं रावसे करत भिखारी, कबहूं रंक सिर छत्र धरता रे॥ पुतना कोन सुकृतिकर आई, गुन औगुन वाके सब हरता रे ॥ ताहि मार बैकुंठ पठाई, बलिराजामे कौन खता रे ॥ एक पुत्र बिन नृप पचिहारे, ताके हते बहुत बनिता रे ॥ साठ पुत्र नारदको दीन्हे, माया त्याग रहे विरक्ता रे॥ पंच भ्रतारीके पनराखे, दोष लगाये पतिब्रता रे ॥ कहें कबीर करतासे डरिये और सकलके झूटमतारे ॥

शब्द २४–करन हारसे डरते रहिये, करतन लागे घडी अरुपलरे ॥टे०॥ पलमें देखे महल बावडी, पलमें देखे टीबा थलरे ॥ पलमें मेह बरसते देखे, पलमें देखे चलता हलरे ॥ पलमें पवन अंधेरी चाले, पलमें चाले पातल दल रे ॥ दो तपसी जहां खडे पुकारे, ताको दीन्हे अमृतफल रे॥ पलमें पच्छी बनबन बोले, पलमें आन कटाया गल रे ॥ पलमें घरसे बाहर काढे, जैसे काढे राजा नल रे ॥ जो कछु

किया सो ध्रुवने पाया, किया राज अरु भयां अटल रे ॥
साहेब कवीर अवधूसे बोले, तिनहु न पाई पलकि गैल रे॥
शब्द२५–अवधू सो जोगी गुरुसांचा। प्रभुजीको सेवो मनसा बाचा॥टे०॥ सीलकी मुद्रा सहजकी झोरी, सुरतनिरत ले खेलै॥ ज्ञान भभूत सबही तन लागा, साहेब अंतर खोलै॥ क्षमा दंड संतोष मेखला, अंमर प्याला पीवे॥ अविनाशी घर भिच्छा मांगे, ऐसे जोगी जीवे॥मन थिर राखै आगम खोजे, दुनियाँ संग न लावे॥ कहे कवीर या जोग जुगतसो, अविनाशी को पावे॥
शब्द २६–अवधू ऐसो ज्ञान बिचारी। यामें कौन पुरुष को है नारी॥ टे०॥ ब्राह्मणके घर नेती धोती, जोगीके घर चेली॥ कलमा पढपढ भई तुर्कनी, ताते रहत अकेली॥ नां मैं ब्याही नहिं मैं कुँवारी, पूत जना जन हारी॥ कारेमूंड कोई ना छांड्यो अजहू बालकुवाँरी॥ ससुर हमारा बालाभोला, सासू बाल कुवाँरी॥ सांई हमारा पालन झूलें, हमहिं झुलावन हारी॥ ना जाऊं ससुरार न नैहर रहुंमैं, कोउ पुरुष संग नाहि नसाऊँ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधू, नहीं अंगसे अंग मिलाऊँ॥
शब्द २७–हंसा छोड करमकी आसा। कर्मकाल सब जगत नचावे, फिरफिर करे गरासा॥टे०॥ उपजन बिनसन कर्महिं कहिये, कर्महिं जगत बिनासा॥ कर्महिं काल व्याल पुनि कर्महिं, कर्महिंका सब त्रासा॥ जप तप कर्म

बांधि जग राखे, पापपुन्य विस्वासा ॥ कर्महिं देवल तीरथ कहिये, कर्महिं अलह उदासा ॥ कर्महिं जोग ध्यान तप पूजा, कर्म चढावे दासा ॥ कर्महिं दुखसुख जड चेतन है, तीनलोक परकासा ॥ कर्महिं देयलेय पुनि कर्महिं यज्ञ दान रहिवासा ॥ प्रतिमा भूत कर्मके बसहै, सुविचार अचार निवासा ॥ कर्म दुखी दालिद्री कहिये, कर्महिं भोगविलासा ॥ कर्मविकार राह तज बैठो, कहैं कबीर सुखबासा ॥

शब्द २८—हंसा त्रिगुन कर्मकी मोट ॥ राजस तामस और सतोगुन, विषम कालके चोट ॥ टे० ॥ द्वादस बानबंध्यो तीनोंको, कोई बडे कोइ छोट । चित बुध अहं मोह मद माया, मार चराचर चोट ॥ राग. द्वेष भौंबान कामके, आदि रैन दिन कोट । जरा मरन माहुर बंधायो, मरे विषनके चोट ॥ एकै दिष्टि बान सरताने, चक्रदेव गनकोट ॥ जप तप कोट साधना पूजा, चढै मांस मदरोट ॥ नाना अमल मात जिव माते, ज्ञानहीन तनखोट । कहैं कबीर बिन सतगुरु सेवा, करमन बांधल पोट ॥

शब्द २९—हंसा करले शब्द बसेरा ॥ रोम रोम जमदूतन घेरो, ज्यों कांटे ढिग केरा ॥ टे० ॥ अहिनिस बसो शब्दके मांही, गुरुमुख शब्द निबेरा ॥ गुरुके बचन शिष्य जो मानै, शब्दसुरति सो हेरा ॥ शब्दसार गुरु बचन संदेसा, आदि मध्य कर हेरा । गुरू शिष्यको पार उतारै, मिटै

सकल जग फेरा ॥ गुरुके शब्द हिये गहि राखै, त्रासकरै बहुतेरा ॥ ताके खुले नैन हिरदेके, दिव्य दृष्टिसो हेरा ॥ सदा अधीन रहे संतनसो, जस भृंगी ब्रन फेरा ॥ दरसे ताहि शब्द निसि बासर, जैसे चित्र चितेरा ॥ निसि बासर जागे औ लागे, सिरपर शब्द उजेरा ॥ कहैं कबीर जो सत गुरु सेवे, सो सतगुरु हित तेरा ॥

शब्द ३०–हंसा करले शब्द नवेरा । देह धर करे अनेक चातुरी, मुवें कहां घरतेरा॥टे०॥ आपा मेट आपको खोजो, आपै मध्य बसेरा । आपा भेट आपको देखो, मिटे सकल जम जेरा ॥ छाडौ कपट चातुरी तामस, छाडो कुमति बसेरा ॥ ज्ञान गयंद चढो गुरु गमसो, काल होय तब चेरा ॥ क्षमा शील संतोष धरन धर, शब्द सुरति कर मेला॥ भव बारिधि जब सहजे बाधो, बांध लेहु दिढबेरा ॥ सैन उलंघत चले मोह तज, सुखसागर कर डेरा॥ कहैं कबीर भव बारिध लांघो, दरस होय प्रभुकेरा ॥

शब्द ३१–हंसा निंदक जनि मुख आनो । निंदकके संगत मत बैठो, जनि अमृत विष सानो॥टे०॥ साधु जहां तहां निंदा नाहीं, शीलवंत निरबाना ॥ दया प्रीत दीनता बरते, सत सुकृतको ध्याना ॥ मात पिता सुत नारि बंधु हित, इतने संतत जानो ॥ संकट हरन साधुके बाना, सत्त वचन फुरमानो ॥ साध सनेह देह सुख पावे, दिन दिन उपजे ज्ञाना ॥ दीन दुखीमें रहै उजागर, जागृत

साध प्रमाना॥ निंदाकरे औ साध कहावे, सो निंदक अज्ञाना ॥ आप नष्ट औरनको घाले, जमपुर जाय निदाना॥ मान पांच नौ नेह बिसारे, भँवर गुफा अस्थाना॥ आवागवन मिटे चौरासी, कहैं कबीर प्रमाना ॥ ❋

शब्द ३२–हंसा निंदकका भल नाहीं। निंदकके तो दान पुन्य व्रत, बहु प्रकार छै जाहीं ॥टे०॥ जा मुख निंदा करे संतकी, ता मुख जमकी छांहीं॥ मज्जा रुधिर चले निसि बासर, कृमि कुबास तन मांहीं॥ शोक मोह दुख कबहुँ न छूटे, रस तजि निरघिन खाहीं॥ बिपत बिपात कष्ट बहु पीरा, भौसागर बहि जांहीं॥ निंदकके रच्छक कोऊ नाहीं, फिरफिर अनल तन डाहीं॥ गुरु द्रोही साधनको निंदक, नर्क मांहिं बिहसाहीं॥ जेहि निंदेसो देह हमारी, जो निंदेसो काही॥ निंदक निंदा कर पछतावे, साधसंत हम आही॥ धरम दया संतोष समावे, क्षमा शील जेहि मांहीं॥ कहैं कबीर सोइ साध कहावे, सत गुरु संग रहाहीं॥ ❋

शब्द ३३–हंसा आपमें आप निवेरो॥ आपन रूप देख आपहिमें, नौ निधि होवे चेरो ॥टे०॥ जागृत रहो सदा दिल-माहीं, ज्ञान रसिक ढिग हेरो॥ आपा मध्ये आप निहारो आपा मेट सबेरो॥ सुरति आगे निरति करले, सिद्धि मिले बहुतेरो॥ गृह बन बैठे काम धाममें, राह चलत पग-हेरो॥ जागत लागो सोवत सपने, फहम करे फल केरो॥ सुषमनके घर फहम करे जब, तुरिया चित्त चितेरो

फहम आगे फहम पाछे, फहम दहिने डेरो ॥ फहम पर जो फहम देखै, सो फहम है मेरो ॥ आठो सिधि नव निधि पावै, सतगुरु फहम निवेरो ॥ कहैं कबीर भृंगीके कीडा, बहुर न कीटहि घेरो ॥ ❋

शब्द ३४–हंसा परख शब्द टकसारा। बिन पारख कोइ पार न पावे, भूलि मुवा संसारा॥टे०॥ बड बड साध जौंहरी कहिये, पारख काहु न पाई ॥ आये थे बैपार करनको, घरकी जमा गवाँई ॥ बड बड साधू बानी छानी, राम भाग दोय कीन्हा ॥ राअछर पारख कर लीन्हे, म माया तजि दीन्हा ॥ राम रतन प्रह्लाद पारखी, जिन दिठ पारख कीन्हा ॥ इंद्रासन सुख आसन कीन्हे, सार वस्तु ना चीन्हा ॥ मुनि शुकदेव पर्मतत दरसी, आतम लीन न माया ॥ परआतम अजपा गहि चेते, न्यारा भेद न पाया ॥ अब सुन लेव जौहरी मोटा, खरा खोट जे बूझा ॥ शिव समान गोरख है जोगी, तिनहूँको ना सूझा ॥ जो कोई जगमें होय पारखी, सो या पदको बूझे ॥ तीन लोक औ चारलोकलों, सबै ठौर तेहि सूझे ॥ कहैं कबीर हम सबको देखा, सबे लाभको धावे ॥ सतगुरु मिले तो परख बतावे; ठीक ठौर तब पावे ॥

शब्द ३५–हंसा पूरण गढ चले भाई ॥ कच्चा कोट पक्का दरवाजा, गहिरे जंजीर लगाई ॥ टे० ॥ मस्त हाथी आन झुकाये, दुरमति लेत लडाई ॥ ज्ञान ध्यान दोय अनी

बराबर, यह दोय अदल सिपाई ॥ हिरदय ढाल राव सुमिरनका, जमकी चोट बचाई ॥ गगन घन धुन अनहद, बाजे, बिन मीठी कहूँ जाई॥पांचो मार करे बस अपना तापर अदल चलाई ॥ सत्य शब्दको दिढ करि राखे; अनुभव कथा सुना ॥ कहैं कबीर जो अजपा जपते, तिन्ह काल नहिं खाई ॥

शब्द ३६-मनमीता गीता पढ सोई । बिन रसना अइलोक यादकर, जामें अच्छर अंक न होई ॥टे०॥ सुसुम बेदका भेद समुझले, जापढ पंडित निरमल होई ॥ बाहर भीतर अगम अगोचर, द्वादस आंगुर बांचे सोई ॥ जो पुन ग्यान ब्रह्म बिध धारे, आनम तत्त्वरख मुख गोई ॥ एक स्वासमें सकल पसारा, अछै नाममें सूरति समोई ॥ कहं कबीर सोई सत जोगी, सायर गगन मिलावे दोई ॥

शब्द ३७-मनरे तू अबकी बेर सम्हारो । जन्म अनेक दगामें खोयो, बिन गुरु बाजी हारो ॥ टे० ॥ बालापनमें ज्ञान न तनमें, जब जनमें तब बारो ॥ तरुनापन तामसमें खोयो, वृथाकिये कूच नगारो ॥ सुत दारा मतलबके साथी, ताको कहत हमारो ॥ तीनलोक औ भुवन चतुरदस, सबहिं कालको चारो ॥ पूर रह्यो जगदीश जगतगुरु, मिले रहे औ न्यारो ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, सब घट देखनहारो ॥

शब्द ३८-मन तूं समुझके लाद लदनियां ॥ पीना होय इहां तु पीले, आगे देश निपनियां ॥ टे० ॥ सौदा होय सो

इहां कर लेना, आगे हाट न बनियां ॥ बड बड नायक लाद् गयेहैं, तेरी बात कितनियां ॥ जमराजाके दूत फिरतहैं, तोरिडारे गरदनियां ॥ घरके लोग जगाती होके, छीनलेत परदनियां ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधू, सब्दमें सुर्त समनियां ॥

शब्द ३९–मनरे तू मनहीमें उलट समाना ॥ टे० ॥ या मन हस्ती जंगल बासा, खोज सकल फलखाता ॥ जो बस परे महावतकेरे, दे अंकुश मुरकाता ॥ या मन जोगी या मन भोगी, या मन देवी देवा ॥ या मन उलट होत बैरागी, करै गुरूकी सेवा ॥ मनके खोज कोई ना पावे, शिव सनकादिक ब्रह्मा ॥ अपरंपार पार नहिं पावे, अगम अगोचर महिमा ॥ नियरेके दूर दूरके नियरे, जिन जैसा अनुमाना ॥ ओरियवतियोके चढे बडेरी, जिनरे पिया तिन जाना ॥ अनुभवकथा कौनसे कहिये, है कोई संत विवेकी ॥ कहैं कवीर गुरुदिये पलीता, वा घर बिरला पेखी ॥

शब्द ४०–मन तोसे केतक बार कहा। समुझ न गहे गुरुकी शरनागत, औरे रंग रहे ॥टे०॥ ना गुरुभजन ना साधू सेवा, एकौ ना निबही ॥ तू ना लहुवे चतुर बिवेकी, पय तजि पिवत मही ॥ मन मतंग फिरे कुंजनमें, अंकुश शूल सही ॥ हीरारतन अमोल छोडके, कांचसो करत-सही ॥ जैसे माखी जतन करत है तनके आडदई ॥

आयो व्याधा सब रस लेगयो, आंखिन छारदई ॥ लापर लंपट औ परनिंदा, या तेरी न गई ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ, साधू सुख तिहुं लोक नहीं ॥

शब्द ४१—मनरे तू धीरज क्यो न धरे । शुभ औ अशुभ कर्म पूरबिले रतिओ न घटै बढ़ै ॥ टे० ॥ होनहार होवैसो होवे, चिंता काहू करे ॥ पशुपंछी औ कीट पतंगा, सबकी खबर करे ॥ गर्भ वासमें रच्छा कीन्ही, सो कैसे बिसरे ॥ तुमतो हंस वहि माहेबकी, भटकत काह फिरे ॥ सतगुरु छोड औरको धावे, काज तो नाहिं सरे ॥ मात पिता सुत संपत दारा, मोहके झार जरे ॥ समुझ देख मन कोइ न अपना, धोखामें काहि परे ॥ संतन सरन गहो मोरे मन, कोटिन व्याधहरे ॥ कहै कबीर सुनोभाई साधू, सहजे सहज जीवतरे ॥

शब्द ४२—मनरे तू बूझ सबद उपदेसा । सारसबद औ गुरुमुख बानी, ताका गहो संदेसा ॥ टे० ॥ जाहि तत्त्वको मुनिवर खोजे, ब्रह्मादिक सो ज्ञानी ॥ सोई तत्त्व गुरु चरनन लागे, भक्ति हेतकर प्रानी ॥ प्रथमें दया दीनता आवे हांसी मिथ्या त्यागी । आतम चीन्ह परातम जाने, सदारहे अनुरागी ॥ पद प्रतीत औ शब्द कसोटी, निसदिन बिरह बिरागी । जहांको अर्थ तहांलो बूझे, जहां लागी जहां लागी ॥ कहे कबीर यहि तत्त्व जो बूझे, मानै सीख हमारी ॥ काल दुकाल तहां ना व्यापे, सदा करों रखवारी ॥

शब्द ४३—मनरे तूं सपनेमें सुख पाया॥ टे०॥ अगम पंथ गुरुगमका चढना, बिन गुरु पंथ नसाया। सतगुरु सब्द कहा ना माने, मारग कौन बताया॥ ईहां आपने हेत जानके, जगमें करत बडाई। एक दिन होय काल-का पहरा, बिनगुरु कौन छुडाई॥ यातन जान जरेजस लकरी, सब मिल देय जराई। लोग कुटम मरघटके साथी, हंस अकेला जाई॥ झूठ मोह तजिदेरे गवांरा, करले नाम सगाई। निहअच्छर लखनाम धनीका, कहै कबीर समुझाई॥

शब्द ४४—गगन बिच मनको रमनाहै॥ टे०॥ राखत नाद बिंदको बसकर बंक नाल चढ गमनाहै॥ बांधत मूल बिराजत आसन, उलट पलट सुषमनाहै॥ आवे न जाय रहे ना अस्थिर, उलट बहा तब जमनाहै॥ कहै कबीर सुनो भाई साधू, जोग जुगतसो मलनाहै॥

शब्द ४५—राम तेरो नाम बिना दुखभारी। ताते संतन यही बिचारी॥ एक बेद कितेबा राते। एक मायाके मदमाते॥ एक देश देसांतर डोले। एक बहु ज्ञानी हो बोले॥ एक नागा दूधाधारी। ताते मोहि अचंभा भारी॥ एक मौनी औ बिसवासी। ताते कटी न जमकी फांसी॥ एक काया कसत अपारा। एक मरत खरगके धारा॥ एक किये गुफामें बासा। जानो बहु जीवनकी आसा॥

कोइ आदि जुगादी जागे । जाके जरा मरन भ्रमभागे ॥ कहें कबीर बिचारी । भवसागर उतरो पारी ॥

शब्द ४६-राम रासो पंडित मोहि भावे, बिन जिभ्या बेद पढावे ॥ टे० ॥ एक कायथ गुनी कहावे । वह बिन मसी अंक बनावे ॥ वह बिन मशि अंकम होई । तव बहुरि लिखे नां कोई ॥ एक धोबी धोवनहारा । वह बिन जल करत पखारा ॥ वह बिनजल निर्मल होई । तब बहुरि न धोखे होई ॥ एक बढई बहुते ज्ञानी । वह छीले बिना रुखानी ॥ बिन काठके खंभ बनावे, तब बहुरि न जगमें आवे ॥ एक खेवट बहुत बिदानी । वह खेवत है बिन पानी ॥ जब नइयामें नदियां समावे । तब उलटा डंड चढावे ॥ एक पारधी चतुर सयाना । वह तो घातकरे असमाना ॥ बिन पिंडके सावज लावे । जब मनहिमें उलट समावे ॥ एक माली चतुर बिदानी । वह सींचतहै बिन पानी ॥ विन मूलके फूल लेआवे । तहवाँ मन मधुकर बिलमावे ॥ एक सूई सीवन हारा । वह सीवत है बिन तारा ॥ जब सुई सुमेरु समाना । कहें कबीर तबै मन माना ॥

शब्द ४७-भाईरे अनी लडे सो सूरा । दोय दल बिच खेले गुरुपूरा ॥ टे० ॥ जहां जन्म नहीं तहां मरना । जम आगे लेखा भरना ॥ जमदूत खडे बैरी तेरे । का सोवत नींद घनेरे ॥ जे बांध पांच हथियारा । गुरू ज्ञानके खर्ग सँवारा ॥ जे मारे पांचों बाना । तब साहेब भये अगवाना ॥

जहां तीर तुपक ना छूटे। उहां शब्दोंसे गढलूटे॥ गढ भीतर हाकम होई। गढ गढलूटसके ना कोई॥ जहां बजे जुझाऊ बाजा। सब कायर उठउठ भाजा॥ कोई शूर लडे मैदाना। जे मार किया घमसाना॥ मनमार अगम गढ- लीन्हा। सतब्रत पर डेरा दीन्हा॥ जहां बजे कबीरका डंका। तबं जीतलिया गढ बंका॥

शब्द ४८—भाईरे मुसलमान सोई दीन। जाको पीर मिले परवीन॥ टे०॥ बकरी पांच बसे घट भीतर, ममता मुरगी तीन॥ इनको मारो जीव उबारे, घटहीमें मक्का मदीन॥ कहताहै मुरदा नहिं खाते, कर हलाल सो खाना॥ घट भीतरसे जीव निकसगये, सो मुरदा परवाना॥ जिस कपडेमें छींटा लागे, उसको कहत नपाक॥ जो मुरगी कीडा चुन खाती, सो कैसे भइ पाक॥ किया पेशाब उदरके भीतर, जासो जिव उतपानी॥ जीव मारके मांस भखतहै, सो कैसे मन मानी॥ परघाती पर पीर ना जाने, सो काफिर बेपीरा॥ कहैं कबीर अंध नर भकुवा, कैसेके लागे तीरा॥

शब्द ४९—भाईरे मुसलमान होय भूला॥ मुसल्लमदीन छोडके ऐसा, कुफर माहिं दिल फूला॥ टे०॥ मुस- लिम सोई कुफर सब छाडे, जीव दगा ना देवे॥ दीन ईमान दया दिल धरिके, इलम इलाही लेवे॥ आला इलम नहीं दिल आया, क्या अल्ला गोहराया॥ हल

किया हक ना हाजा, छूरी हलक हिलाया ॥ रब्ब रहीम करीम कहेका, अकरम कफर कराया ॥ रोजा वजू निवाज नबीका, सो ऐसा डहकाया ॥ हैदर हैदर करता डोले, दर दर भया दिवाना ॥ जिस घरमे वह हैदर आया, तिस घर खबर न जाना ॥ का हैदर कादरहै दरका, का हजरत का हक्का ॥ जियरत करे जहां जुल्म तकी, खबर नहीं दिल मक्का ॥ कबर मुकरबा महजिद मुरदा, पूज मलीदा मेती ॥ मुरगी बकरी गाय जबह कर, भया जाय जम हेती ॥ भया मुरीद न मुरदा छूटा, कैसा पीर तुम्हारा ॥ बदबखती बद बाद गईना, गयो इमान खुवारा ॥ सुन्नत जबह न किया महम्मद, जे कुरान जग लाया ॥ रोजा वजू निमाज बंदगी, कलमा पांच पढाया॥मिहरबान दिल भया महम्मद, मारत जीव बचाया ॥ हिरनी और फाखता फांसी, जामिन देइ छुडाया ॥ तुमको कौन सिखाया ऐसा, किया आप मन-भाया ॥ दोजक जुबाँ स्वादके खातर, जीव जबह कर-खाया ॥ जो कोइ कहै इब्राहीम, कीन्हतो ऐसा ना कीन्हा ॥ हक्क हुकम हकके खातिर, बेटाका गल दीन्हा ॥ आंखमूंद बेटा गल देते, दुम्मा बदले आया ॥ मरा नहीं हरामी बोला, गुसा इब्राहिम लाया ॥ छूरी फेंकदई असमाने, उहां टीडी गल दीना ॥ परी आय छूरी जलभीतर, दियो आय गल मीना ॥ दुमा टीडी

मछली तीनो, बदलेमें गल दीन्हा ॥ फजल भया फरजंद बचाया, फिर ऐसा ना कीन्हा ॥ अपने बदले जो गल देवै, ताहि मार क्या खाना ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ मुसलम, रहिमत कहां समाना ॥

शब्द ५०–जोगियासे मेरा दिल लागा ॥टे०॥ जबसो प्रीति लगी जोगियासे, भयउं हंस रहेउं ना कागा ॥ जोगियाके कारन जोग कमाऊं, आठ पहर रहों जागा ॥ जबतब जोगिया मौज करतहै, पायः अमरपद जागा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, जरामरन भ्रमभागा ॥

शब्द ५१–जोगी नाम न जाना हियेमे ॥टे०॥ काहभये गलकंठी डारे, काह तिलक सिर दियेमे ॥ काहभये सिर जटा बढाये, का गुदरीके सियेसे ॥ काहभये बनबनके डोले, काहूबी रंग पियेसे ॥ काहभये काशीके बासे, का गंगाजल लियेसे ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, कारे बहुत दिन जियेमे ॥

शब्द ५२–प्रभु तो भगतीके बसभाई। जात बरन कुल रीझत नाहीं, ना रीझे चतुराई ॥टे०॥ करमा कौन अचार कियो है, कब काशी करिआई ॥ छप्पन भोजन पीछे लागे, पहिले खिचड़ी पाई ॥ सेवरी जात मुमहरिन कहिये, जूठ बेर ले आई ॥ प्रीति जान ताके फलखाये, तीनोंलोक बडाई ॥ व्याधा कबें अचार कियो है, कब गीता पढ-भाई ॥ तुरन गोपालको पकरि ले आया, घरी न दुसर

विताई ॥ तिरलोचन नामदेव पीपा, हरिमों हेत लगाई ॥ सेनरूप होय मर्दन कीन्हे, आपभये हरि नाई ॥ सहस अठासी मुनीजग्यमें जेवें, तबहुं न घंटा बाजे ॥ कहै कबीर सुपचके जेवें घंटामगन होय गाजे ॥

शब्द ५३–अब हम जानो काया बुढानी ॥ टे० ॥ हाड सूख गये, मांस सूखगये पांवपरे जैसे ऐंचातानी ॥ आंखिन आगे सूझत नाहीं, लारगिरे जैसे ओरियक पानी ॥ धीया पूता कोइ काम न आवे, देत न बुंदभर पानी ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधु, का सोचो दिन आयसिरानी ॥

शब्द ५४–जगमें गुरु समान नहि दाता, अरे मन ऐसो जानरे ॥ टे० ॥ आगे दिन पाछे गये, किये न हरिसों हेत ॥ अबके चेते का भये, जब चिरिया चुनगई खेत ॥ बनजारेके बैलवा लदे देसंतर जाय ॥ एकानके पूरे भये, एकन मूल गँवाय ॥ कहैं कबीर सुन केसवा, तेरी गत अगम-अपार ॥ साधुन लादे नाम धनीका, विष लादे संसार ॥

शब्द ५५–चुनरिया पचरंग, मोहे ना सुहाय ॥ टे० ॥ पांचतत्त्वकी बनी चुनरिया, नाम बिना रंगफीक दिखाय ॥ या चुनरी मोरे मईकेसे आई, अपने गुरुसे लई बदलाय ॥ चुनरी पहिर धनि गई बजरवा, कालनिगोडा ले पछुवाय ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, को मोर आवे को मोर जाय ॥

शब्द ५६–कोने रंगरेज रंगी मोरी चूनरी ॥ टे० ॥ धागा पांच पचीस यामें लागे, हाथपरी परमारथ दुलरी ॥ चौकी

चार प्रेमका बूटा, पहिरतया धनि होगई पिउरी ॥ पहिर ओढ धनि भई सतमारग, समुझ समुझ भई दिनदिन दुबरी ॥ कहैं कबीर अजब रंगरेजवा, साधु संगति गहि चरनन उबरी ॥

शब्द ५७–संतो चुनरी मेरि नई ॥ टे० ॥ पांचतत्त्वकी बनी चुनरिया, सतगुरु मोल दई ॥ भौ सागरमें पहिर न पाऊं, रंग बदरंग भई ॥ दिना चारके पहिर ओढे, मैली बहुत भई ॥ मैं अपने जिव लाज मरतहौं, अबकी रंग दई ॥ या चुनरीको बडा भाग है, सतगुर मिले सही ॥ जो चुनरीकी मरम बताई, प्रेममें डुबाय दई ॥ साहब कबीर या रंग बनाये तामें बोरदई ॥ जन्म जन्मकी छूटी मलामत, चटकमें चटक भई ॥

शब्द ५८–मेरी रंगमे चादर भीनी ॥ टे० ॥ पांचतत्त्वकी चादर हमरी, तीनगुनन लेबीनी ॥ धोबिया देव हाथ नहिं लागे रंगमैली तन झीनी ॥ दासमलूक सलूकसे ओढे, रघुबर टुकरी लीन्ही ॥ धनि धर्मदास जुगनसे ओढे, गठबांधा चौका कीन्ही ॥ साहब कबीर शब्दसे ओढे, जस लीन्ही तस दीन्ही ॥

शब्द ५९–जोगी चेतन नगरमें रहुरे ॥ टे० ॥ प्रेमप्रीति रंग ओढो चादर, दिलकी तसबी गहुरे ॥ अजपा जाप जपो दोय अच्छर, काल भरम सब डहुरे ॥ नामकी धूनी-अंदर बारो, भेद न परगट कहुरे ॥ आसनमार गुफामें बैठो, नाम धनीका भजुरे ॥ सोहं शब्द समाय सबनमें,

स्वासा संग धुन गहु रे ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधु, भौजलपार उतर रहु रे ॥

शब्द ६०–सोवे जोगिया कौन जगावे ॥ टे० ॥ गढ परबत जोगी कुटी बनावे । मृगछाला जोगी झाड बिछावे ॥ अन्न न खाय जोगी पानी न पावे । ये जोगिया जगरूप दिखावे ॥ जीव न सीव स्वासा सुर नाहीं । जाय गगन बिच ध्यान लगाही ॥ कहैं कबीर सुनो साधो । भाई या जोगियाको कैसे समुझाई ॥

शब्द ६१–संतो धोका सबको मारे ॥ टे० ॥ ऐसा है कोई संत बिवेकी, निरमल ज्ञान बिचारे ॥ कोई खोजे शिव-शक्तीमें, कोई खोजे काया ॥ कोई खोजे सुनमहलमें, ऐसे जग भरमाया ॥ कोई मुनीजन मनको मूंडे, कोई उलटा पवन चढावे ॥ कोई जंत्र मंत्र कोई औषद खोजे, कोई काशी करवत लावे ॥ कोई जंगम जलमांहि नहावे, कोई कोई भेष सयाना ॥ कोई कोई देसदिसंतर डोले, कोई तीरथ ब्रत लपटाना ॥ कोई कर्मभर्मकी सांकर काटे, कोई पारब्रह्मको धावे ॥ कहै कबीर सोई जनसेर, सिर अपने भार न लावे ॥

शब्द ६२–हंसा सुरत करो ठहराई ॥ जामों जिव परले ना आई ॥टे०॥ साख रैमनी बहुत कहतहो, कथकथगये अपारा ॥ राईभर अमृतके पाये, हंस भये ततसारा ॥ राई भरहै वस्तु हमारा, अरधराई अस्थूला ॥ लहरलहर

घटभीतर होवे, सोई पुरुष निजमूला ॥ सेत पान पुरइनपर चौका, जहां एक पुरुष है सौरा ॥ असंख पंखुरीके लोक बना है, सिर छुरत अग्रके चौरा ॥ कहें कवीर हम शब्द कहा है, कछू न राखी गोई ॥ है अनमोला शब्द हमारा लखपावे जन सोई ॥

शब्द ६३–अवधू भजनभेद है न्यारा ॥ टे० ॥ का मुद्रा मालाके पहिरे, का चंदन घिसे लिलारा ॥ मूंडमुडाय का जटा रखाये, का अंग लगाये छारा ॥ का गाये का लिखपढलाये, का भरमें संसारा ॥ संध्या का तरपन का कीन्हे, का षटकर्म अचारा ॥ का पानी पाहनके पूजे, का कंद मूल अहारा ॥ तीरथ व्रत का संजम कीन्हे, जो नहिं तत्त्व बिचारा ॥ कर परचे स्वामी होय बैठे, करविवेक व्योहारा ॥ दया धरमके मरम न जाने, ठाने वेद ऊंकारो । फूंके कान कुमत अपनीसों, यह बोझे वह भारा ॥ विन सतगुरु गुरुकेते बहिगये, लोभ लहरकी धारा ॥ भेप अभेप बधिककी टाटी, लिये फिरे विप चारा ॥ ज्यों बाला ध्यानधरे जल भीतर, अपने अंग विकारा ॥ गहिर गंभीर पीर जो पावे, खज अखजसों न्यारा ॥ भये सुदिष्ट पार चलनेको, सहज मिटे भ्रमभारा ॥ निर्मलजोत आतमा जागे, है निजनाम अधारा ॥ कहें कवीर जानेसे कहिये, मैं तैं तजे बिकारा ॥

शब्द ६४-सो जन मतवाला, जिन पिया पुर्मका प्याला ॥

टे० ॥ मूलकँवलपर बंद लगावे, उलटा पवन चढावे ॥ अमृत पिये मगन होय बैठे, बिन रसना गुनगावे ॥ बिन धरतीके मंदिर दीसे, बिन सरवर जहँ पानी ॥ बिन दीपक जगमग उजियारा, गुरुमुख बोले बानी ॥ इंगला पिंगला सुषुमुन सोधे, उनमुनके घरमेला ॥ षट दल चक्र एक कमल बिराजे, जहां पुरुष अलबेला ॥ चंद सूर जो घरको लावे, सुषुमुन सुरति समावे ॥ कहै कबीर कायाकी बाते, सतगुरु मिले लखावे ॥

शब्द ६५–गलतान मता जब आवेगा। तब जियरा सुख पावेगा ॥ टे० ॥ चार अचार मिटे जब तनकी, तब साहब सुख पावेगा ॥ ज्ञान ध्यानमें निसदिन राचे, आप अपन समुझावेगा ॥ अनहद बाजा बजे सुहेला, हरदम खबर मंगावेगा ॥ कहै कबीर तत्त्व जब दरसे, मैं तें दूर बहावेगा ॥

शब्द ६६–मेरी सुरति सोहागिन जागरी ॥ का सोवे पंडित लोभ मोहमें, उठ गुरुके चरने लागरी ॥ चितदे सरवन सुन दोय अच्छर, उठत मधुर धुन रागरी ॥ का तू अटकी लोभमोहमें, उठ गुरुके शब्दसो लागरी ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधू, यह जगत पेरा जमजालरी ॥

शब्द ६७–पंडित मिथ्या करोविचारा । तब नहिं सृष्टि न सिरजनहारा ॥ सुन्न अस्थूल पावक जब नाहीं, पवन न रवि शशि धरना ॥ जोनसरूप निरंजन नाहीं, नहिं भाषा नहिं बरना ॥ गोरखदत्त राम तब नाहीं, नाहीं

तीर्थ पखाना ॥ हरि ब्रह्मा नाहीं शिवसकती, नाहीं बेद आचरना ॥ कर्म भर्म दोजख तब नाहीं, नहीं मंत्र नहिं पूजा ॥ बैकुंठ मसीत भाव तब नाहीं, ना तब एक न दूजा ॥ मात पिता कुल वाके नाहीं, वहतो पुरुष अकेला ॥ कहैं कवीर या पदको बूझे, सो सतगुरुका चेला ॥

शब्द ६८—रामुरा भौंरा कँवल ना पावे । ताते जनम जनम डहकावे ॥टे०॥ सुच्छम खेत बिजूका रोपा, मिरगा चरन नहिं पावे॥ भर्महि मारे भरम पछारे, ताते निकट न आवे ॥ पुरइन पेड बसे एक दादुर, स्वातीके स्वाद न पावे ॥ कँमल बास भौंरा जब बेधे, सहजेही चल आवे ॥ भक्ति करत चौबिस जुग बीते, कोई सुरति समाध लगावे ॥ कहे कवीर सुनो भाई साधू, बहुरि न भौजल आवे ॥

शब्द ६९—बांका गढको लीजे मन भाई, जामें खेवड, कोट औ खेवड खाई ॥टे०॥ काम किवारी दुख सुख दरबानी, पाप पुन्य दरवाजा ॥ क्रोध प्रधान काल उमराऊ, मन मवासी राजा ॥ पांच पचीस बडे उमराऊ, आडी प्रेमल माया ॥ मोहि गरीबके जोर चले नहिं, मैं का करों रघुराया ॥ सेना सदा तोप ममताके, कुमति कमान चढाई ॥ तृष्णा नीर बहे घट भीतर, सो बुध हाथ न आई ॥ ननकी तोप सुरतके हवाई, ज्ञानके गोला भराई ॥ प्रेम पलीता सहज प्रजारे, एके चोट गढढाई ॥ शील संतोष दोउ लडने लागे, तोडा दस दरवाजा ॥ सार संतनकी भीर

शब्द ७३—हमारे देश रहो कहिं अचरज ख्याल॥टे०॥ उमड़ घुमडके आवे बदरिया, रिमझिम बरसे मेहा ॥ परे रहों चौगान चौहटे, भीजत नाहीं मेरी देहा॥ हमारे देशमें उर्धमुख कूंवा, सांकुर वाकी खोरी ॥ सुरति सोहागिन है पनिहारी, ना गागर ना डोरी ॥ हमारे देशमें नित उठ पूनो, कबहु न होत अमवासिया ॥ छांह धूप व्यापे ना कबहूँ, ना ग्रीषम ना पावसिया ॥ हमारे देशमें बाजा बाजे, अजगैबी होत अवाजा ॥ साहेब कबीर टुक मगन भये हैं, बैठ गगन गढ छाजा ॥

शब्द ७४—पंडित अपनी अगिन बुझावो ।हमतो अपनी राह चलत हैं, तुम काहे दुख पावो ॥टे०॥गरभवास औंधे मुख झूले, सप्तधात रस पीया॥अब तुम चौका देके बैठे, उहां चौका को दीया ॥ कौनहो तुम कहांसे आये, अनेक जनम फिरि आये ॥ अबतो तुम ब्राह्मन होय बैठे, चौरासी बिसराये ॥ कुल अभिमान आप विप्रपूजा, यही कुमत तोहे लागी ॥ जो तेरी जात भली थी, पंडित शुकदेव काहे त्यागी ॥ पांच तत्त्वका सकल पसारा, तामें जिव दुख पावे ॥ कहें कबीर ब्राह्मन मत सोई, उलटा ब्रह्म समावे ॥

शब्द ७५—परमगुरु सोई दया कर दीन्हा । ताते अनचीन्हे हम चीन्हा ॥टे०॥ बिनपग चलना बिनपर उडना, बिना चोंचके चुगना ॥ बिना नैन जहां देखन पेखा, तहां

मृतक होय रहना ॥ चंद न सूर दिवस ना रजनी, तहां जाय सुरति मिलाई ॥ बिन जिभ्या जहां अमृत अचवे, बिन जल तृषा बुझाई ॥ जहां कुछ नहीं तहां सब कुछ देखा, या सुख कासों कहना ॥ कहैं कबीर बलबल सतगुरुकी, धन्य शिष्यका लहना ॥

शब्द ७६–ऐसा कोई प्रेमका देखा मतवालाहो ॥ टे० ॥ छाकचढी क्षुधा बीसरी, पिया प्रेम पियाला ॥ पीवत तेहि तन बीसरी, सो जगतमे न्यारा ॥ कान सुना देखा नहीं, वाने मतवाला ॥ सो छाका निज नाममे, सतगुरुका प्याला ॥ गोली लागी ज्ञानकी, कसनी बहुते दीन्हा ॥ जीवतही मृतक होय रहे, जिन गुरुनाम चीन्हा ॥ नाम-रसायन जो पिये, जग बहुर न आवे ॥ कहै कबीर सोई छका, जेहि कछु और न भावे ॥

शब्द ७७–एक दिन होयगा प्रान बिगाना ॥ टे० ॥ जो लग प्रान बोले घटभीतर, तो लग करत गुमाना ॥ निकसे प्रान बाहिरकर डेरा, घरके लोग डराना ॥ काठके ठठरीमें लेके चढावे, लै जमुना पहुँठामा ॥ पांच जने मिल फूंकदिये हैं, जरगये सुखके ग्रामा ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधू, या पद है निरबाना ॥ पद निरबान चीन्ह ना पावे, अंतकाल पछताना ॥

शब्द ७८–निस दिन माला जुगतकी फेरे ॥ टे० ॥ रवि शशि बांध मन धागा करे, गहिगहि तार सोहंगम घेरे ॥

बंक नाल चढि गिरवर तरवरे, जब टकसार गगनगढ पैरे ॥ अर्धउर्ध बिच अजब रंग कहिये, बरषे शब्द अमी-रस झरे ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, ऐसा ध्यान कोइ बिरले धरे ॥

शब्द ७९– हंसनके नाह तुम तबहीं कहाये हो ॥टे०॥ काशीमें केवल नाम माडो है, उडीसा धाम पंडो पग जरत, देखत वहीं बुझाये हो ॥ साहू सुमरन कीन्हा तबहीं दरशन दीन्हा, उदधि उबारन बोहित बचाये हो ॥ तुम साहब दया जोय जीवनको दिये पान, ताके तन छूट गयो हांसी कराये हो ॥ तुम साहब मेरी गतराखो घट बांधो पतधर्मनी, दुखित जान कबीर पिया आये हो ॥

शब्द ८०–जंगलमें भोंदूका फिरे, तेरे घरहीमें ठग लूटे ॥ जानेगा कोई सूरबीर, सांचे मतसे छूटे ॥टे०॥ का जप का तप का संजम, काका कर दिखलावे ॥ साहबसे परचे नाहीं, का बहु भेष बनावे ॥ चलरे मन सेहरापुर पाटन जइये। भजिये त्रिभुवन नाथको निरभै हो रहिये ॥ अमर नहीं संसारमें, विनसे या देही ॥ कहें कबीर एक सांच, ले राखो नाम सनेही ॥

शब्द ८१–नामसनेही साधवा, मुखपाट न खोले ॥ नाम जपे निरबानपद, बूझे सो बोले ॥टे०॥ जो बोले सो सत कहे, मुख असत न भाखे ॥ कलह कलपना मेटके, चरनों चितराखे ॥ धुनमें ध्यान लगाय रहे, बिसराम न

छांडे ॥ बिन बूझे जो आपतें, बकवाद न मांडे ॥ सार शब्द संग्रह करे, त्यागे सब छोई ॥ कहं कबीर तिहु-लोकमें, तत्त्ववेता है सोई ॥

शब्द ८२-भींजे सुरजन माहीं हो नागर ॥टे०॥ धरन अकाश नीर नहिं पवना, अमृत बरषे ताही ॥ सौ जो-जन जहां बादर नाहीं, घटहि माहि घहराई ॥ बिन घट बार घाट ना छूटे, निजमें जाय समाई ॥ बारा मास कम-रिया भीजे, शीतल अंग बुझाई ॥ आदि महल बिदेही नामा, आवागमन मिट जाई ॥ बरषे गगन नदी सब सूखी, प्यासे बूडे ताही ॥ प्रीतम छाड चले सब ऊपर, जग मरन मिट जाई ॥ सदा रहे इनहीं बिच गौना; द्वादशहीने न्यारा ॥ कहें कबीर सो प्रीतम साथी; जो परखे टकसारा ॥

शब्द ८३-निरखो निरगुन निरबानी ॥टे०॥ अमर मूरत मरे ना कबहू, सो मूरत मनमानी ॥ लखत बने तो भल-सुख उपजे, ज्ञानरतनकी खानी ॥ जाका आदि सकल जग रचना, इच्छाते भइ अनहद बानी ॥ कहे कबीर सुनो भाई साधू, उलट दिष्ट जाकी सुरत समानी ॥

शब्द ८४-अजब रंग लागारे गुलजार ॥ टे० ॥ चलो सखी जहां देखन चलिये, निरतकरे करतार ॥ मिली सोहागिन परमपुरुषको, जुगन जुगनके यार ॥ झिलमिल जोत निरंतर दरसे, बिच बिच मोतिनके हार ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, सत गुरु कबीर अपार ॥

शब्द ८५—निरख निजनामहिं चीन्होहो ॥ टे० ॥ नाम बिना बहुते दुखी वे तीनों देवाहो । गन गंधर्व मुनि देवता, सब कालके भेवाहो ॥ पानी तज पय अचवे सो, हंसा कहिये हो ॥ सो हंसा ना बिछुरे, जिन या मत लहि येहो ॥ भेष धरे पाखंडका, करता नहिं चीन्हाहो ॥ मिथ्या जनम गवाँइया, जम कागद भीनाहो ॥ काम क्रोध मद त्यागके, निरमल कर लीन्हाहो ॥ कहैं कबीर सुख अमरदे, दुख बनिज न कीन्हाहो ॥

शब्द ८६—संतो तो उतरे भौ पारा । मनकी इंद्री मनही त्यागे, छांडे विषै बिकारा ॥ टे० ॥ धीर गंभीर औ सहज भावसों, गहै सतनाम पियारा ॥ प्रेमभाव उपजे हिरदेमें, साध संगत आधारा ॥ दयाधीर संतोष धरे जिव, सुरति निरति चित धारा ॥ ज्ञानदृष्टि सबहीको देखे, गहै शब्द टकसारा ॥ मत सुकितके नावपें चढिये, ज्ञानगुरू कडि-हारा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, उतरो भौजलपारा ॥

शब्द ८७—संतो अब मेरा मन माना ॥ सतगुरु राह बताय दईहैं, चीन्हो आतम रामा ॥ जो उपदेश दियो मोहि सतगुरु, ताहि कियो पहिचाना ॥ घाट बाट कोई रोकि सके नहिं, हाथ दियो परवाना ॥ सो हंसा निज घरको पहुंचे, दीन्हा ज्ञान दमामा ॥ डंका बाजे शब्द बिराजे, शिरपर छाजे नामा ॥ श्वेतध्वजा फहरात

धनीकी, निरभै अनहद धामा ॥ कहं कबीर बलिहारी गुरुकी, दई अविचल विसरामा ॥

शब्द ८८-संतो नायक राम हमारा। जाका सब जगहै बनजारा ॥ टे० ॥ पाप पुन्य दोउ बैल लदाये, तृष्णा गोन भराई ॥ पांचजने मिल लादन लागे, गोनी लाद न जाई ॥ आशा थाकी मनसा थाकी. थाकी कंचन काया ॥ सुरति निरति वह दोनों थाकी, एक न थाकी माया ॥ या संसार हाटका लेखा, सब कोई बनिजे आई ॥ कहै कबीर जिन जैसी लादी, तिन तस करी कमाई ॥

शब्द ८९-गुरु मोही घुँटिया पिलाई ॥ टे० ॥ जबसे गुरु मोही घुँटिया पिलाई । भई सुचित मिटी दुचिताई ॥ ज्ञान ओपदी रतन कटोरी । सो भर पिवत कुमति गई मोरी ॥ ब्रह्मा पिये विष्णु लौलाई । शिवशंकर रहे ध्यान लगाई ॥ कहैं कबीर सुनु साधो भाई, गुरुके चरनपर ध्यान लगाई ॥

शब्द ९०-बेग गहो गुरु सरनाहो, भटक मरजाई ॥ ॥ टे० ॥ या संसार कागदका पुतरा, बूंदपरे गल जानाहो ॥ या संसार अगिनकी चिनगी, भूलपरे जरजानाहो ॥ या संसार कांटेकी बारी, समुझ समुझ पग धरनाहो ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधू, निरख परख गुरु करनाहो ॥

शब्द ९१-भलारे गुनी ऐसो गरब न कीजे ॥ टे० ॥ गरब किये रतनागर सागर, जल खारा करडारारे गुनी ॥ गरब किये लंकापति रावन, मरद गरद करडारारे गुनी ॥

गर्व किये जंगलके घुंगची, मुँह काराकर डारारे गुनी ॥
कहें कबीर सुनो भाई साधू गर्व किया सो हारारे गुनी ॥

शब्द ९२–प्रेम बान जोगी माराहो, कसके जोर मोर ॥ टे० ॥ जोगियाकी लालील:ली अंखियां हो, जैसे कँवलके फूल ॥ हमरो सुरंग चुनरियाहो, सोहै तालमतूल॥ जोगीको लेवे मृगछालाहो, हमरो पटचीर ॥ दोऊ मिल सींवे गुदरियाहो, होइ जाय फकीर ॥ गगनमें बंसी बजावेहो, जितवे चहुं ओर ॥ जोगी अजब रंगभीनाहो, मनहर लीन्हा मोर ॥ जोगिया अमर मरे नहीं, पुरवे मेरी आश ॥ पुरबजनम फल पायेऊंहो, गावे धनी धर्मदास ॥

शब्द ९३–जिव जिन मार मुवा मत लावो, मांस बिना मत आवोहो ॥ टे० ॥ पैल पार एक बेलवृछवा, वृछामें पत्र नहीं है हो ॥ सोई पत्र चुग जात मिरगवा,मिरगाके शीश नहीं है हो ॥ उरबिन खुरबिन चरन चोंच बिन, पंख बिहूना हंसाहो ॥ सो सावज मोहि मार देखावो, जाके रकत न मेसाहो ॥ धनुष बानले चलो पारधी, धनुपमें पनच नहीं है हो॥ सोई धनुपमे मारे मिरगवा, मिरगाके घाव नहीं है हो ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, या पदहै निरबानाहो ॥ जो या पदके अरथ लगावे, सोई संत सुजानाहो ॥

शब्द ९४–झडाका सुमरनमे मनलागा ॥ टे० ॥ मथुरा आम बोवाईया, जगन्नाथ गई डार ॥ फूल फुलाने द्वारका,

फल लागे बर्दाद्रार ॥ पोस्ताकेरे खेतमें फूल बना सब हेत ॥ कोई कुदरती लालहै और सेतका मेत ॥ आगे दिन पीछे गये, किये न हरिसे हेत ॥ अब पछताये का भया, जब चिरिया चुनगई खेत ॥ आगझरे लोहाझरे, झरझरपरे जंजीर ॥ गुरु रामानंदके फौजमें, मनमुख लडे कबीर ॥

शब्द ९५—साहेब बाग लगाया है कोई अजब तरंका ॥ टे० ॥ चारखूंट चौरासी क्यारी, ता बिच फूल फुलाया है॥मोहके क्यारा बागके भीतर, बारमबार सिंचाया है ॥ सूखगये कँवलभँवर जब उडचले,लालचमें फिर आया है॥ कहै कबीर सुनो भाई साधू, साहेबका फुरमाया है ॥

शब्द ९६—कोइ दिन याद करोगे, रमनाराम फकीर ॥ ॥टे०॥ कोइ दिन सोवे कोइ दिन जागे, कोइ दिन साईंकी जगीर ॥ कोइ दिन ओढे साल दुशाला,कोइ दिन भगवां चीर ॥ कोइ दिन पावे मेवा मिठाई, कोइ दिन अचवे नीर ॥ कोइ दिन बैठे घोडे पालकी, शिरपर अबदागीर। कोइ दिन जंगल कोइ दिन बसती, फिरते लाल फकीर॥ कहै कबीर सुनो भाइ साधू, गुरुके चरन रहु थीर ॥

शब्द ९७—चरखा तोरडारोहो, भजो रामके राजी॥टे०॥ चरखातेरा रंगबिरंगी, पोनी लालगुलाल ॥ काननवारी छैलछबीली,तन मन डारे तार॥छोटकी ननदिया चोकन पीसेछे,वडकी भरेछे पानी॥वो दहिजरवा लीटी लगाइस,

हम चरखा तर रहली ॥ जाये गवाँये गँवार परोसिन, हम चरखेकी रानी ॥ एक बेर चरखा कातन पाऊं, दोहरी नथनी गढानी ॥ सातसेरकी सात बनाये, चौदासेरकी एके ॥ वो दहिजरवा मानो खायस, हम कुलवंती एके ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, या पदहै निरवानी ॥ जो या पदके अर्थ लगावे, ताको मुकति निशानी ॥

शब्द ९८–अवधू मनमथ करम न होता। तब घरअघर कहांते होता ॥टे०॥ मात पिता मिल बेरा माजे, करी कर्मकी पूजा ॥ पहिले पिता अकेले होने, पूत भये भय दूजा ॥ अलख रूप आतुर होय खेला, नादहिने बिंद छूटा ॥ ताका सकल पसारा कहिये, ब्रह्म किंच होय फूटा ॥ याको निंदे वाकों बंदे, सो तो निगुरा कहिये ॥ याते न्यारा वाते न्यारा, न्यारा न्यारा रहिये ॥ कहें कवीर सोई सुख कीन्हा, आप आपमें मेला ॥ रचि जनि रहो बिरचि जनि छांड़ों, संग मिल रहो अकेला ।

शब्द ९९–अवधू निरख परख गुरु करना । तन मन कछू हाथ ना आवें, काहेको पच मरना ॥ टे० ॥ काल न छूटो जंजाल न मेटो, भयो न मनको सूरा ॥ कुलको बास करो मत कोई, जो गुरु मिले न पूरा ॥ अष्टधानका पिंजरा बनाया, तामें जुगनका सूवा ॥ सतगुरु मिले तो कालसे बांचे, नातो परले हूवा ॥ कंद्रप रूप कायको

मंडन, मिथ्या काह उलीचं ॥ कहें कबीर समुझ नर भोंदू, अमी अरंड का सींचे ॥

शब्द १००-अवधू जोग अपूठो पैंडो । पहुंचेगा कोई गुरुका बालक, निगुरा भूला गेंडा ॥टे०॥ पोदी झटक बाज गहि लीने, छेरीने सिंह खाया ॥ चीतेकी गरदन हरन दबाई, खलक तमासे आया ॥ खोजेके घर बालक उपजे, गगनमें सिंगी पूरी ॥ ले मरघट मुरदा पर जारे, तस कर ऊपर मूरी ॥ कहें कबीर सुनो हो अवधू, अकथ कथा यह भाखी ॥ जानेगा कोई जानन-हारा, नार पुरुष पर राखी ।

शब्द १०१-अवधू सो जोगी पद बूझे, जाको अगम अगोचर सूझे ॥ टे० ॥ काया हमारी शब्द बोलिये, ज्ञान भभूत प्रकाशा॥सुरत हमारी सवता कहिये, अलख हमारो बासा ॥ सिंगीशब्द अनाहद बाजे, उनमुन शब्द समाना ॥ प्रेमपियाला पीवे जोगी, धुनमें अधर अमाना ॥ मीच बिन मरन नीर बिन तरना, रागबिन रंग अपारा ॥ सोवे सदा जागे निशिवासर, ऐसा शब्द बिचारा ॥ कहें कबीर सुनोहो अवधू, सबद कहां तुम पाया ॥ सत्य-शब्द सतगुरुको चीन्हो, माया जग भरमाया ॥

शब्द १०२-कैसे बोलो स्वामी, गगन नहिं धरनी ॥ चंद न सूर दिवस नहिं रजनी॥टे०॥जड़ नहिं मूल वृच्छ नहिं बेला॥सबद न स्वाद गुरू ना चेला॥ उपजे न बिनसे

आवे न जाई। जरा मरन वाके बाप न माई ॥ नहायवेको तीरथ न परसवेको देवा। कहैं गोरख सुन अलख अभेवा ॥

शब्द १०३–ऐसे बोलो अवधू गगनमें धरनी। चंदमें सूर दिवसमें रजनी ॥ जरमें मूल वृच्छमें बेला। शब्दमें स्वाद गुरुमें चेला ॥ उपजेमें बिनसे आवेमें जाई। जरा मरन वाके बापहिमें माई ॥ नहायवेको तीरथ परसवेको देवा, कहैं कबीर सुनो गोरख भेवा ॥

शब्द १०४–रामुरा ऐसा को बैरागी, आठपहर लगरहे सबदसो, कलह कल्प विप त्यागी ॥ टे० ॥ ब्रह्मा एक सृष्टिका करता, नाम कुलाल धराया ॥ बहुबिध भांडे उनही गढिया, मायाको अंत न पाया ॥ तरवर एक नानाबिधि फरिया, जाके पत्र न साखा ॥ भौजल भूल रहे सब प्रानी, सो फल किनहु न चाखा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू. मिथ्या दुनियां अंधी ॥ माटीमें माटी मिलजासी, सबद गुरुका संधी ॥

शब्द १०५–ऐसे राम कहे का होई, जोपै मनकी दुविधा न खोई ॥ टे० ॥ राम कहि कहि नरक परतहैं, पढ पढ वेद पुराना ॥ राम कहि कहि सबे गयेहैं, मिटे न आवाजा ॥ राम कहि कहि सती जरतहैं, साधनमें न समाई ॥ डाकपरी लिये हाथ सिधोरा, मृत्तकसे लौ लाई ॥ वेदपढे पर भेद न जाने, पढ पढ लोक रिझावे ॥ कालपु-

रूपका मरम न जाने; घर जरै घूर बुझावे ॥ लोगनके राम हंसी खेलौना, सबके प्रान अधारा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, काहु न कीन्ह विचारा ॥

शब्द १०६-रामभजे सो जानिये, जाके आतुर नाहीं ॥ शील संतोष लीन्हे रहै, धीरज मन माहीं ॥ टे० ॥ काम क्रोध व्यापे नहीं, तृष्ना न जनावे ॥ फर फुल्लित आनंद सदा, हरषित गुनगावे ॥ दुरमति दुरासा परिहरै, या मद हंकारा ॥ साधु भया तब जानिये, जो तजे बिकारा ॥ पर निंदा भावे नहीं, मुख असत न भाखे ॥ कलह कल्पना मेटिके, चरना चितराखे ॥ समदृष्टी शीतल सदा, दुबिधा नहिं आने ॥ कहैं कबीर ता दासमे, मेरा मन माने ॥

शब्द १०७-राम हमारा मूवा हम निहत्रेके बांत्रे ॥ छूटे सब जंजाल भरमके, होनाहता सो हुवा ॥ टे० ॥ रामनाम जप जन्म गवाँया, जैसे सेमर सूवा ॥ फूलेफले पाके फिर फूटे, उड़े भरमके भूवा ॥ प्रेमनगरको राह बिकट है, जो जावे ते जूवा ॥ पूरा परे दाव तब लागे, कहैं कबीर तब हूवा ॥

शब्द १०८-पंडित सतपद जपरे भाई ॥ चरन कमल बिन सब नर बूडे, नरकपरी चतुराई ॥ टे० ॥ ज्ञान न उपजे ब्रह्म न चीन्हे, आप कहांते आये ॥ एक जोनीते चार बरन भये, ब्रह्म देह कहां पाये ॥ शूद्र शरीर ब्रह्म ता भीतर भिन्न भाव तहँ नाहीं ॥ लखचौरासी जियाजोनमें, बरत-

रहा सब माहीं ॥ नौगुन सूत संजोग बिचारो, तीन गिरहदे आनी ॥ ताके जनेऊ कबहुँ न टूटे, दिनदिन बारहबानी ॥ ऋग यजु वेद ज्ञानके पशुवा, साम अथरबन सोई ॥ सुसुम वेदकी खबर न जाने, कैसे के ब्राह्मन होई ॥ बाराबेदी ब्रह्मबिचारे, सोरा सक्ति समानी ॥ संध्या तर्पन तहवां कीन्हा, जहवां कुश नहिं पानी ॥ ब्रह्म अगिनगत थिर न रहे मत, आप अगिन गहि आनी ॥ ब्रह्म अगिनको नाम न लीजे, लीजे ब्रह्म पहिचानी ॥ कहैं कबीर गुरु ब्रह्मै चीन्हो, जात जनेऊ सोई ॥ पाखंडकी गत सबे मिटावे, तब निज ब्राह्मन होई ॥

शब्द १०९—पंडित पढ पुरान का कीन्हा। साधसंतकी सेवा कीन्ही, भूखेको अन्न न दीन्हा ॥ टे० ॥ पूज सिला चंदन घसलावे, बक ज्यों ध्यान लगावे ॥ अंतरगतके राम न चीन्हे, थोथे घंट बजावे ॥ काम न बिसरो क्रोध न छूटो, लोभ न बिसरो देवा ॥ परनिंदा ते हदे न बिसरी, निरफल गइ तेरी सेवा ॥ दोष लगाय घर मूस पराया, पेटभरे अपराधी ॥ जो निंदा तोहे साधन बरजी, सो हिरदे आराधी ॥ कहैं कबीर संतनकी महिमा, परमपुनीत सुनाई ॥ आपा मेट आपको चीन्हो, तब परमपद पाई ॥

शब्द ११०—पंडित होय, तापहिं भागी ॥ जाके चित्रगुप्त लिखधारी ॥ टे० ॥ जीवत जीव ब्रह्मको दुखवे, खूनकरा घरमाहीं ॥ तृष्ना कारन जीव बधतहो, बूड रसातल

जाही ॥ चोकादे शुचि संजम कीन्हा, सुनो महातम सोई ॥ जो मर सुनके अन्न तजत है, सोमर तपे रसोई ॥ कर अस्नान तिलक दे बैठे, कांधे त्रिगुन जनेऊ ॥ हंडिया हाड हाड थारी मुख, अब षटकर्म बनेऊ ॥ घाटी उतरभई सब माटी, मन धीरज धर रहिये ॥ कहै कबीर ये विषके लाडू, खाय पीर कोन सहिये ॥

शब्द १११-मियांजी देखा अजब तमाशा ॥ सांची बात कही ना माने झूंठा लगे खुलासा ॥ टे० ॥ कहे हक्क पर हक्क न बूझे, नाहक जीव सताया ॥ हाथ पांव बरबसके बांधे, गल बिच छुरी चलाया ॥ खासे दोस्त नबी साहबके, जिव बध नहिं फरमाया ॥ एक मिस्वाक मास शह्य करते, वृछों नाहिं सताया ॥ भूखेको वे भोजन देते प्यासेको पानि पिलाया ॥ उमर तमाम बंदगी कीन्ही, जो सिवाय नहिं खाया ॥ फक्का फक्कर फकीरी खुसकी, खमे कछू न चाहा ॥ शब्द कबीर खोज दिल अंदर, तब पावे कुछ लाहा ॥

शब्द ११२-मियांजी बोले नाम न आवे ॥ दूधको दूध पानीको पानी, जोरे करे सो पावे ॥टे०॥ हो मिस्कीन खुदाई बंदा, तू जियरा जस भावे ॥ असल खोदाय दीनको साहब, जोर नहीं फरमावे ॥ रोजा रहे निमाज गुजारे, कल्मा भिस्त न होई ॥ सत्तर काबे हैं घट भीतर, जो कल पावे कोई ॥ धनीकी जासकी आसकर बंदे, मान मनी कर दूरी ॥ आपा मेट औरको खोजो, तब पावो कछु

भूरी ॥ माटी एक बने बहु भांडे, सबमें नूर समाना ॥ कहें कबीर ऐसी भिस्त छोडके, दोजक सों लपटाना ॥

शब्द ११३—मुलना खूब नजर दिल दीजे ॥ हाजिर नाजिर है घटभीतर, जबह काहेको कीजे ॥ टे० ॥ पकर हलाल हाथ कर लीन्हा, पांचोंपीर मनाया। हलाल हता तो खोयगया अब, मुरदे सोंख लगाया ॥ पैगम्बर महिं रकतसों राजी, आपहि सजल सँवारा ॥ फेर दरेग कयामत तांई, दामनगीर तुम्हारा ॥ कर निमाज सिर भुईंमें मारे, मैं बंदा खोदाई ॥ करे खून तृष्नाके कारन, साहबका फुरमाई ॥ का तसबी दानेके फेरे, पढ कुरान का बूझा ॥ दिलके नैनन अंध भये हैं, परम तत्त्व नहिं सूझा ॥ जो जेहि मारे सो तेहि काटे मिटे न भौजल फेरा ॥ कहें कबीर तुम जोर करतहो, कहा न मानो मेरा ॥

शब्द ११४—देखो बनीआदमकी बातें ॥ सांची बात-कही ना माने, नरक परतहैं ताते ॥ टे० ॥ ओछी बुद्धी त्वचा चामकी, औ थोरे धन माते ॥ थोरी उमर गुमर बहु भारी, अडचा काम कलाते ॥ हरचा ज्ञान ध्यान मम भूला, हष्लिगी अबलाते ॥ वेतो आठे दसमी जागे, बेकरे बारवफाते ॥ अंगुरीनाय कान दोउ मूंदे, पढे बंग सलवाते ॥ रोजा करें निमाज गुजारे, सत्रह पढे रकाते ॥ साझपरे खानेकी बेरा; उमड करे जिव घाते ॥ करें खून बंदगी ठाने, पाक कहें कलमाते ॥ भूले दीन

दया तज भागे, हरिलगी बिपयाने ॥ भीतरभरी भंगार भरमकी, ऊपर माजे गाते ॥ जानत नहीं आप अपनेको, आयगये भों कहांते ॥ दरद न जाने पीर पराई, चलत फिरत इतराने ॥ कहैं कबीर यह अजब तमाशा, इनको भिस्त कहांते ॥

शब्द ११५–सेखजी बंदा मुरीद केहेकेरा ॥ इस पदका करो निबेरा ॥ कबकी बात कही पैगम्बर, हती कोनसी बेरा ॥ क्या महम्मद तुम्हें गुप्त सुनाई, किनावें नौ हजारा ॥ का तुम राखी का तुम प्रगटी, हजूर, कहिके परदा ॥ खोजा खोज करो तुम अजहूं, वह औरत है की मरदा ॥ कौन बिलायत कोनसी जगह, बैठे थे किस ठाई ॥ औवल सफा हकीकत बोलो, तुम जानतहो की नाहीं ॥ का फरमान हुवा बंदेपर, की तुम कहो बनाई ॥ कहैं कबीर साहब फरमाई, के बीचहि कल्पाई ॥

शब्द ११६–काहूने फिर न कही वह बातें ॥ जो नर यहां ते मुक्त कर गये, ता फलकी कुसलाते ॥ सूर चले सनमुख रन जीतन, दे सनमुख उरघाते ॥ वाके स्वाद पूछिये कासों, सहत सेल सिर सांटे ॥ सती जरे पिया अपने संग, बिरह प्रेम रस माते ॥ वाके स्वाद पूछिये कासों, सीरे जरी कि ताते ॥ यह संसा उठो उदभुद जो, आयगये धों कहांते ॥ कहैं कबीर देह गत पेसी, जानपरी है याते ॥

शब्द ११७–नर तू पार उतर कहां जेहो ॥ आगे पंथ-

पंथीना कोई, कूच मुकाम न पैहो ॥ टे० ॥ नीर नाह नहिं खेवट किरवा, ना गुन खेवनहारा ॥ धरती अकाश कल्प कछु नाहीं, ना कछु वार न पारा ॥ यह तो आपी आपा कहिये, सुन्न सोध ना पैहो ॥ विलैमान हो जाहु छिन-कमें, याहू ठौर बिन होइ हो ॥ बारंबार बिचार सोच जिय, अपने माहिं समैहो ॥ कहें कवीर मुकति नहिं आगे, ज्योंका त्यों ठहरैहो ॥

शब्द ११८—नर तुम कियो न एकौ काजा ॥ काम क्रोध तृष्नाके बांधे, लूटत है जमराजा ॥ टे० ॥ बनखंड जाय जोग तप कीन्हा, कंदमूल फलखाया ॥ होते ज्ञानी परम सुख ध्यानी, पाती काह लिखाया ॥ चारवेद तुम हित के राखे, फीकी उनकी आशा ॥ काल भच्छ सब दुनियां सिरानी, इनहीके विस्वासा ॥ प्रेम भगति हिरदे ना आवे, नाच काछ मन दीन्हा ॥ रागरागनी डिंभ धरी-धर, तिन हरसों का लीन्हा ॥ फिरै काल अनंत लोकमें, मध्य लखे मुनि ज्ञानी ॥ कहें कवीर ते भये खालमे, रामभक्ति दिढ जानी ॥

शब्द ११९—नर तुम झूठे जनम गवाँया ॥ उस झूठेका कोई अंत न पाया ॥ टे० ॥ झूठेके घर झूठे आया, झूठे ते परचाया ॥ झूठी थारी झूठा भोजन, झूठे ले सब खाया ॥ झूठेके घर झूठा आया, झूठे व्याह रचाया ॥ झूठा दूलह झूठी दुलहिन, झूठे व्याहन आया ॥ झूठे नर सब झूठी

नारी, झूंठे बालक जाया ॥ झूठा छाती झूठी कोखी, झूठी दूध पियाला ॥ सांच कहूं मैं झूठ न बोलूं, सांचेको झूठाया ॥ कहै कवीर सोई जन सांचा, अपने मांहि समाया ॥

शब्द १२०–सुन राजा हरचंद भुवनके, सत्त तुम ठानी ॥ विप्र एक काल होय प्रगटो, तुमहूं असत्त न छानी ॥ टे० ॥ पतनी सहित राज तुम दीन्हा, हाटो हाट बिकानी ॥ जो यह सत्त भली पुन होती, करत नहीं कुल हानी ॥ जेहि कारन तुम नीच डोम घर, भरलाये घट पानी ॥ बमर्हाके तुम चीर छोडाये, उलटी मत तुम ठानी ॥ अगम अगोचर मूल ब्रह्मको, सो तुम कितहु न पाई ॥ सत्यकर तुम नीचबुध घर, फिर फिर जोनी आई ॥ भरम छांड सत्य तुम चीन्हो, सत धोख न कहाई ॥ सतस्वरूप जब तुम पावो, यह सत चित्त न आई ॥ मैं तो तुमरे भले कहतहों, सत्य सरूप विचारो ॥ कहै कवीर वह सत्त समुझके, आवागमन निवारो ॥

शब्द १२१–देखो अलख पुरुषकी करनी, बडे बडे घरा विगूचे ॥ टे० ॥ हरचंद चले मिहरी बेचनको, पूतहि खायो सांपा ॥ वाकी अम्मा जरावन लागी, जरन न देतो बापा ॥ दशरथके दोय पुगरा कहिये, औरत सो चित दीन्हा ॥ बडा बियोग भया रघुपतिको, रावन गा सिर लीना ॥ सोरा सहस आठ पटरानी, एते कान्हर आनी ॥ बडे वजीर हते पाठनमें, तिन्हूंकी हुरम लुटानी ॥ पांचो

पांडव छठी द्रौपदी, और बिगूचे केता ॥ लैके हाड हिमारे गारे, जन कबीर जग जीता ॥

शब्द १२२—धर्म सुत काहे न देख बिचारी ॥ सत्त बोलते राज तुम्हारे, दीन्हों देश निकारी ॥टे०॥ पांचपूत कुंतीके कहिये, एकोतरसौ गंधारी ॥ एकै बूंद पिताके होते, काहेको मांडी रारी ॥ ब्रह्मज्ञान अरजुन तब चीन्हें, धनुष बान दिये डारी ॥ छल प्रपंच कृष्न एक कीन्हे दीन्हा बदन पसारी ॥ पांच भइयाकी एकै नारी, सबही संग सुख कीन्हा ॥ जीवदान भीम तब मांगे, कृष्न सहित आधीना ॥ भारथ भरीके अंडा राखे, तुम कुरु-क्षेत्र कराये ॥ गोत्रघाव दाव नहिं जानो, ताते हिमाल पठाये॥कुंजल एक हतो रन भीतर, तुमसो झूठ बोलावे॥ नरकबास दिखलावे तोही, जब सुरपुरहिं पठावे ॥ सोई सत्त दो परदी कहिये, जाकी भक्ति तुम ठानी ॥ कहैं कबीर सुनो हो पांडव, हिरदे करो बिलछानी ॥

शब्द १२३—संतो परी अब्रह्मन भारी॥कहैं सुने कछु हाथ न आवे, अबिगतकी गत न्यारी॥टे०॥कोई कहे हम निरगुन सेवे, निरगुनका गुन कैसा॥को निरगुन को सरगुन कहिये,एही बडा अंदेसा॥ निरगुन कहिये नाम महातम, सरगुन संत बिराजे॥गुन बिन निरगुन हाथ न आवे, औगुन देखे भाजे॥निरगुन सरगुन एकरूपहै, बिरला जन पद परसे ॥ हंस शब्द एक चित होवे, अमी सुधारस

बरमे ॥ कहें कबीर अंतरकी करनी, परगट होय तब सांची॥ अपने पतिकेर पतिबरता, गगन मगन होय नाची ॥

शब्द १२४–सो तो अबिगत अगम अपार, पार कस पावे॥टे०॥जा खोजत ब्रह्मादि भुलाने, तिनहुं न पाये भेव॥ जा खोजत शिव मगनभये, शनकादिक शुकदेव ॥ सत जुगमें सतबरता, द्वापुर पूजा पान ॥ त्रेता होम जज्ञ व्रतसंजम, कलजुग केवल नाम ॥ सेस सहसमुख निस-दिन गावे, अस्तुत करे मुरार ॥ ऋग् यजु साम अथ-र्वन थाके, कर न सके निरवार ॥ जोगी जती तपी संन्यासी, दिगंबर दरवेस ॥ चुंडित मुंडित और जटा-धर, ये उरझे बहु भेश ॥ तीरथ गये ते एही महातम, तब कोइ पूजे पानी ॥ एको सुमत हाथ नहिं आवे, करगय मुनिजन ज्ञानी ॥ धरती अगिन पवन औ पानी, भिन्न भिन्न विस्तारा ॥ आवे न जाय मरे ना जीवे सबने रहत निनारा ॥ जो कहिये सबहीमों साहब, मौत कहांते होई॥ कहें कबीर तिनके जिव डोले, पिंड प्रान बिन सोई ॥

शब्द१२५–हेरे अडोला कहिं डोलत नाहीं॥ गगनमें चंदा जलबिच झांई, मीनगहे मुख आवत नाहीं ॥टे०॥ चंदन काठ मूल जो जाही, ताकी बास ताहीमें रहाही ॥ मिरगा नाभि बसे कस्तूरी,तन नहिं खोजत खोजत मूरी॥ कहें कबीर मन मिलिया होई शब्द सुरतमें राख समोई ॥

शब्द १२६–कोई जन जानेगाहो अबिगत नाथ मतो॥

भंजन घडन सँवारन आपे, अलखपुरुष रहतो ॥ टे०॥ ईंद्रदवन ऐसे होते, नित घृते होम करतो ॥ अजगर कीन्हे कूपजलको, पवनभखी भख रहतो॥ राजानल ऐसे होते, नित सहस गऊ देतो ॥ कजगीबनके कुंजर कीन्हे, हरी डार चरतो॥ राजा हरिचंद सतवादी, नित सत्यहिमे रहतो ॥ ढोये नीर नीच घरहीको, भये मरघटके संगरो॥ दस मस्तक बीस भुज वर गवन, रात दिवस बकतो ॥ छिनमें मार पछारिया गये लंकामे रोतो ॥ राजाबलि ऐसे होते, नित सहस जज्ञ करतो ॥ ताहि पताल पठाइया, जहां शेशनाग रहतो ॥ अजामेल ऐसे होते, नित गनका संग करतो॥ ताहि बैकुंठ पठाईया ऐसी उलटी रीत करतो ॥ पांडवसुत ऐसे होते, नित छप्पन भोग करतो ॥ ताहि हिमार पठाइया, ऐसे प्रीत तोर बिचरतो ॥ जिन खोजा तिन पाईया, कोई साधूजन लहतो ॥ संतन सदा समीप बसतहे, गावें जन कबीर भगतो ॥

शब्द १२७–संतो कोई जन शब्द बिचारा ॥ शब्द भेद आद सतगुरुका, परखलेव टकसारा॥टे०॥शब्दै सुन सुन भेखधरतहैं, शब्द कहे अनुरागी ॥ षटदरशन सब शब्द कहत हे, शब्दे कहे बेरागी॥ शब्दै वेदपुरान कहत हे, शब्दे शब्द ठहरावे ॥ शब्दै मुनिवर साध कहत है, भेद न कोई पावे ॥ शब्दै येही जग उपजाया, शब्दै केर पसारा ॥ कहै कबीर जहांते शब्द उपजो, ताका भेद नियारा ॥

शब्द १२८-संतो जिन जाना तिन माना ॥ शब्दहि चालचले कोई विरला, कथनी कथ लपटाना ॥ टे० ॥ शब्द निराधार जीव आधारी, कहु कैसे रहि जाई ॥ बीचहि अटक रहे वैपारी, भेंट मवनकी खाई ॥ रहे सरगुनमें कहे निरगुनकी, दुनियाभाव न जाई ॥ निरगुन सरगुन दोउ पछभारी, फिर माया लपटाई ॥ इंद्री भोग आपनी जाने, दोजकसों मन माना ॥ कहें कबीर जिभ्याके लंपट, माया हाथ बिकाना ॥

शब्द १२९-कहे सुने कछु नाहीं संतो, कहे सुने कछु नाहीं ॥ जबलग जीव जंजाल न छूटे, विषे विकल तन मांहीं ॥ टे० ॥ करत अनीत मगन मायामें, कहे अगमकी बानी ॥ सो प्रतीत जो साधनमानी, मुष्टमाहली जानी ॥ सीखे साख ब्रह्म होय बैठे, निरभै विषे कमावे ॥ पूछेते परपंची प्रानी, साख अगमकी लावे ॥ पदसाखी सिध साधिक दीसे, इंद्रिनहै अपराधी ॥ जो घट नाम नहीं निज निर्मल, देहदसा को साधी ॥ जो कछु किये ज्ञान अज्ञाना, सोई समझ सयाना ॥ कहें कबीर तिनसो का कहिये, देखत दृष्टि भुलाना ॥

शब्द १३०-संतो कथनी कथे ते खोटा ॥ जोंलग कर्म विकार न खोवे, कोयला कपट जिय ओटा ॥टे०॥ ज्ञान ग्रंथ कब चातुर कीन्ही, बांधे विषके मोटा ॥ तज अनरीती औ कुलके लालच, जगमें बडे घर लूटा ॥ सांचे शब्दकी

चाल न आवे, हिरदै नहींहै हेता ॥ ऐसी भक्ति मुक्ति ना पावो, साहब है नहिं काचा ॥ कहें कवीर अंतरकी करनी, निकसे जिभ्या मुखवाटा ॥ सारशब्दकी परख न आवे, झूठा लागे मीठा ॥

शब्द १३१–मनको चीन्होरे नरभाई ॥ आतम मार पखानहि पूजे, बहो सकल जग जाई ॥ टे० ॥ आगे आगे पंडित पाछे सब दुनियां, अचरज कही न जाई ॥ सबे गये मोहि यही अंदेशा बहुर खबर नहिं पाई ॥ एक दोय होयतो कहि समुझाऊं, जगसों कहा न जाई ॥ वैद्य अनेक स्वान जो लागे, पूंछ न मिटै टेढाई ॥ सांच कहों तो सब जग खीजै, झूठा कहा न जाई ॥ समझ कवीर रहो घटभीतर, को पच मरे बलाई ॥

शब्द १३२–भरममें भूल रह्यो संसार । बीजवस्तु कैसे के पावे, जाका सकल पसार ॥ टे० ॥ कीतम नाम जान बहु थापे, करता रहो नियार ॥ एक दिष्टि चितवत नहिं तनमें, को है सिरजनहार ॥ वेद पढे पर भेद न जाने, कथनीकथे अपार ॥ आपर न बूझे जगहिं बुझावे, सूझे वार न पार ॥ मृगानाभि बसे कस्तूरी, ढूंढे घास उजार ॥ कहें कवीर वा घट परगट, है कोई बूझनहार ॥

शब्द १३३–जगमें करता काल कहावे ॥ निराकर जग बाडा बांध, बाहर जान न पावे ॥ टे० ॥ तीनलोक बाडा बिच कीन्हे, ठौर ठौर रखवारा ॥ ऊबर कोऊ जान न

पावे, आपकरे संथारा ॥ माथे बान धनुष धर लीन्हे, दूतन बाहिर पठावे ॥ भागे जीव ठौर ना पावे, फिर फिर मुखमें आवे ॥ सुन्नमें वर्धक जोत सरूपी, बैठे घंट बजाई ॥ सुनके जीव सबे उठ दौरे, परे कालमुख जाई ॥ सोई रैन उजियारी, देखजीव सब धावे ॥ इनको मारत बिलम न लागे, उसे दरद ना आवे ॥ कहं कबीर जो सतगुरु चीन्हे, सो यह भेदहिं पावे ॥ बाडातोर बाहिर ले निकसे, निहचल घरहिं पठावे ॥

शब्द १३४-संतन ज्ञान लहर धुन माडी ॥ शब्द अतीत अनाहद राचे, या विधि तृष्णा खाडी ॥ टे० ॥ खाडबुने कोरीमें बैठा, भौ खूंटा दे गाडी ॥ नानाबाना परो बनासा, सुत कहे बुनगाडी ॥ वनके ससे समुद्र कीन्हा, मशा चढी पहाडी ॥ शूद्र पिवे ब्राह्मण मतवाले, फल लागे बिन डारी ॥ मूसा तपे बिलारी सबे, स्यार सिंहको खाई ॥ एक अचंभा देखो भाई, जलमें अगिन रहाई ॥ कहै कबीर सुनो भाइ साधू, अगम ज्ञानपद माहीं ॥ गुरुप्रताप सुईके नाके, हस्ती आवे जाई ॥

शब्द १३५-सहज एक ऐसी झूल परी ॥ भाग शिव शनकादिक नारद, मोहे अचेत हरी ॥ नौ दस भाग भगे तैती सौं, चौरासी सगरी ॥ भेख अभेख करे को लेखा, काहु न जानपरी ॥ ब्रह्मा आदि इंद्र सब भागे, सुध बुध सत बिसरी ॥ ये सबहीके देखादेखी, दुनिया भगी सपुरी ॥

धीरज राखरहे ना कोई, छांड भगे नगरी ॥ कहें कबीर हटको नहिं माने, धौखेकी बिडरी ॥

शब्द १३६—संतोकाल रची जग बाजी ॥ वेद पढे पढ पंडित भूले, पढकुरान भूले काजी ॥ टे० ॥ आप न बूझे जगत बुझावे, शब्दवेद अरथावे ॥ अमृत विषहिं एक कर माने, भेद न कोई पावे ॥ आप कहे जग काल अपरबल, आपहिं धारे ध्याना ॥ जिन जिव दियो सोई जिव लेवे, सबका एही ज्ञाना ॥ वेदपढे औ अरथ बिचारे, सूझ बूझ न पावे ॥ जरा मरनके आस बंधे सब, फिरफिर जोनी आवै ॥ जोगी तपसी मुनिवर कहिये, संत साध सब धावे ॥ आवत जात जन्म बहु बीते अस्थिर घर ना पावे ॥ पीर औलिया गोस कुतबिया, फिरफिर यही पुजावे ॥ मेहनत करे सोई फल भुगते, पाक साहब ना पावे ॥ उत-पति परले पैठ लगाई, सकल जीव भरमावे ॥ भँवरजाल कियो भौसागर, पार न कोई पावे ॥ कहें कबीर जो सत-गुरु चीन्हे, सो यहि भेदका पावे ॥ आवागमन दोऊ दुख मेटे, निश्चल घरहिं पठावे ॥

शब्द १३७—माया काली नागनि जिन डसिया सब संसार ॥ टे० ॥ इंद्र डसे ब्रह्म डसे, नारद डसिया व्यास ॥ बात कहत शिवको डसी, जाके छिन एक बैठी पास ॥ कंस डसे सिसपाल डसे, रावन डसिया जाय ॥ दस मस्तक जाके भूमि परे, ताकर लंका दई लुटाय ॥ बड बड़

गारुड सब डमे, कोइ न कीलनहार ॥ कच्छ देश गोरख डमे, जाका जोग अपार ॥ चुन चुन मारे चतुर सूरमा, जाकी करें जग आर ॥ तोमे गरीबकी कौन गिने, कहैं कबीर बिचार ॥

शब्द १३८–रामगति पार न पावे कोई ॥ चिंतामन प्रभु निकट छोडके, भरम भरम मन बुध खोई ॥ टे० ॥ नेम धर्म व्रत संजम पूजा, बहुत भांत हर मोंय ॥ सत्य सोहाग कैसेके पावे, अच्छर कंथ बिरोध ॥ नारीपुरुष रहत एक संगा निसदिन जात अबोले ॥ तजि अभिमान मिलत नहिं पियको, बन बन ढूंढत डोले ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, बूझे बिरला सोई ॥ प्रेम प्रीत अंतर कछु औरे, कहा न माने कोई ॥

शब्द १३९–खाय लियेसब दुनियां देखनिया ॥ टे० ॥ घेर घेर सकलो जग खाये, घर घर सांपनियां ॥ देश देशके राजा खाये, गांवगांव भुमिनियां ॥ सरग पताल लोक सब खाये, तिहुं पुर पाटनियां ॥ जैनी जती नाथ सब खाये, शीश धुनी धुननियां ॥ स्वामी सब उपदेसित खाये, निरधन औ धननियां ॥ तीरथ भवंते भोंदू खाये, कनक औ कामनियां ॥ जोडी जंगम तपसी खाये, खाये मुनि बाधंनियां ॥ शंकरके समाध छुडाये, माया मोहनियां ॥ चारबरन चारों जुग खाये, दोऊ दीन दुननियां ॥ षट दरशन पतिवरता खाये, बीनबीन बिननियां ॥ दोय एक

बांचरहे हैं, राम नाम गुननियां ॥ कहें कबीर एक सांच प्रचे, नहिं बांचे सब दुननियां ॥

शब्द १४०—बाजी गर बाजी रची, माया बिस्तारा ॥ बाजीसों बाजी रमें, बाजीगर न्यारा॥टे०॥अहं बांस ममता गडो, नौ डोर पसारी ॥ मोह ढोल बाजे सदा, नाचे नर नारी ॥ काम क्रोध हंकारका, ले डमरू बजाया ॥ जल-थलमें जिव जित किते, माया भरमाया ॥ दुख सुख गोता ऊचरे, माया मद पीया ॥ ब्रह्मा विष्णु महेशको, माया बसकीया ॥ चंचलते निहचल भया, अमर घर आया ॥ कहें कबीर बाज़ी तजी, बाजी गर पाया ॥

शब्द १४१—मायाके गोविंद हैं, गोविंदकी माया ॥ माया औ गोविंदके, काहू अन्त न पाया॥टे०॥ राजकुँवारी द्वारे सोहई, माया बिन नंगी ॥ माया घर चंडालके, सोहत अति चंगी ॥ जेते बेद किताब हैं, माया बिन फीके ॥ जेते देवी देहरा, माया सो नीके ॥ शेखसैयद मुनि जना, सब मायाके वारी ॥ ऊपर त्यागी सब कहें, अंतरकी प्यारी ॥ आगेसे माया चली, पीछे भी माया ॥ कहें कबीर साधू बिना, कोई अंत न पाया ॥

शब्द १४२—भज भगवंत भूल मत जावोरे ॥ मानुष जन्म को एही लाभोरे॥टे०॥ गुरुसेवा कर भक्ति दिढाऊं। ताते मानुष देही पाऊं ॥ जो देहीको सोचे देवा । सो देही कर हरिकी सेवा ॥ अब न भजो भजो कब भाई ।

आवे अंत तोहि भजो न जाई ॥ सतगुरु मिले तो होय ततसारा । फिर पछतैहो बारंबारा ॥ जौलों काल न ग्रासे काया । तौलों जरा मरन नहिं आया ॥ जौलों हिये परो नहिं बान । तौलों भजो नर सारंगपान ॥ एही तेरो औसर एही तेरो दाव । घटहीमे एक शब्द चेताव ॥ कहैं कबीर जीत भावे हार । बहु बिध कहां पुकार पुकार ॥

शब्द १४३-सतगुरुदेव दयाकरो विधि देहु बताई ॥ जीव ब्रह्म कैसे भयो, केहि पूछों जाई ॥ टे० ॥ सुनो संत चितलायके, यह खेल अपारा ॥ आवत जात लखे नहीं, यह अचरज सारा ॥ जा घरते जिव आइया, सो तुम्हें लखाया ॥ पवन डोर चढ संचरे, जल सिरजी काया ॥ पूरब पश्चिम दछिन, उत्तर फिर आया ॥ दिव्यदृष्टि पावे नहीं, घरघर भरमाया ॥ दश दरवाजा प्रगटहै, चार कुलफ लगाये ॥ दोय दरवाजा ऊघरे, हंसा सचु पाये॥पांचतत्त्व एकतत भये, नौ खंड बनाया ॥ तामें भौंर बिलंबिया, नख सिख लौं लाया ॥ कुंभके जल सायर मिला, जल जलहिं समाया ॥ सो जल कैसे काढिये, विधि देहु बताया ॥ सतगुरु खेवट साथले, जिन अथाह थहाया ॥ कुंभके जल कुंभे मिला, जल जलहि समाया॥कहैं कबीर धर्मदाससों,मैं कहों पुकारा ॥ एक नाम चीन्हे बिना, अटके जमके द्वारा ॥

शब्द १४४-तुम सब घट पूरन सांई, मेरी ओर चित-

वत नाहीं ॥ टेक ॥ या घटके कोई ना जाने मेहरम ॥ साँई ॥ अबकी बार चितवो नेक मोपर, जिवकी कल्पना जाई ॥ सेवा सुमिरन कछू न जानो, औगुन है गुन नाहीं ॥ हमसे पतित तुम केते उबारो, हमहूंको तरु गोसांई ॥ अधम उधारन सुन यह बिनती, अरजी बिसर न जाई ॥ साहब कबीर अधमको तारो, तुम्हरो बिरद लजाई ॥

शब्द १४५–बोलनहारा राम रजाहै ॥ पिंड ब्रह्मंड रहा भरपूरी, आप अकेला बांध धजाहै ॥ टे० ॥ जैसे बुंद परो जल मांहीं, जलहीते बुदबुद उपजाहै ॥ मिट बुदबुद जल मांहि समाने, होरहो एक सरूप सजाहै ॥ जैसे कुंभ भरो जलमाहीं, सबमें दरसे चंद सजा है ॥ विनसे कुंभ चंदना बिनसे, शब्द सरूपी अमर अजाहै ॥ जामों हम सोई हममांही, वाही तत्त्वमें गगन गजाहै ॥ कहें कबीर संशय कछु नाहीं, तत्त्व लखा तब भरम भजा है ॥

शब्द १४६–बैरागी रामा गांव ठांव, खोजे सचु पाऊंगा ॥ टेक ॥ तीरथ जाऊं न जलमें पैठों, जीव जतन सत पाऊंगा ॥ सकल तीर्थ गुरु घटमें बतायो, तामें पैठ नहाऊंगा ॥ पानी ढोरों न पाहन पूजों, देव देवल नहिं जाऊंगा ॥ व्रत अखंडल मंडल ऊपर, अनहद बीन बजाऊंगा ॥ बेद किताब सुमृति ना मानों, गीत कवित्त न गाऊंगा ॥ पांच सोहंग करों नहिं पुजा, भला भला न कहाऊंगा ॥ बैठ नाम निहछत्र सिंगासन, अविगतसों

लौ लाऊंगा ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सहज समाध लगाऊंगा ॥

शब्द १४७–तुम चलोतो चाल निगोडा, मैंतो गंगा न्हाऊंगी ॥ टेक ॥ इमनी बेचूं तिमनी बेचूं, सेर दस गेहूं लाऊंगी ॥ पांचसेरकी करों कडाई, मंजिल मंजिल पर खाऊंगी ॥ छोरा पटकूं छोरी पटकूं, घरमें आग लगाऊंगी ॥ सुनियोरी मोरी पारपडोसन, दिनाचारमें आऊंगी ॥ गंगाजीके तीर जायके, अजपा जाप जपाऊंगी ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, मूंडमुडाय घर आऊंगी ॥

शब्द १४८–कायागढ नगरियासे, गगरिया भरके लावोरे ॥ टेक ॥ पवनके इनरवासे, सुरतिया डोरिया लावोरे ॥ नौ नारी पनिहारी आई, लागा पूरा दावोरे ॥ पांचपचीसो रंगे चंगे, मनके माते भावोरे ॥ निरगुनके इंडरोया धारे, हौले होले आवोरे ॥ गगन अटरिया चढके देखो, सबका भावोरे ॥ सदरद दिवाने खडे दुवारे, दरसे वाके पावोरे ॥ साहब कबीर गुरु भरभर लावें, संतनको पीलावोरे ॥ जन्म मरन भौ संशय नाहीं, ऐसा कहरा गावोरे ॥

शब्द १४९–नइया बिच नदिया डूबी जाय, कहीं देखेहो मिसरजी ॥ टे० ॥ एक अचंभा हमने देखा, कुवामें लागी आग ॥ जल हता सो जरगया, मछली न लागी आंच ॥ नदी किनारे नइया लागी, नदिया डूबीजाय ॥ ये माया भगवानकी, ताहीसे डबियाय ॥ चीटी चली सासरे नौ

मन काजर लाय ॥ हाथी मार बगलमें दाबे, ऊंट लिये लटकाय ॥ एक चींटीके मुवले, खाये गिध हजार ॥ बाकी बचेसो काकरे, चील रही मरड़ाय ॥ एक चीटीके मूतमें बहगये नदिया नाल ॥ पंडित पछारे धोतियाँ, धीमर डारे जाल ॥ गगन मंडिलमें गऊ वियानी, धरती दही जमाय ॥ बाछा वाके पेटमें, माखन हाट बिकाय ॥ एक अचंभा हमने देखा, गदहाके सिर सींग ॥ चींटीके पग डोरी लागे, खैंचे अर्जुन भीम ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधू या पद है निरबान ॥ या पदका कोई अरथ लगावे, सोई संत सुजान ॥

शब्द १५०—बानी छोडदे अभिमानी॥टे०॥जे भईयाके गरब करतथे, सोई भये अगवानी ॥ जे सायरके गरब करतथे, तापे सिला उतरानी ॥ जे लंकाके गरब करतथे सोई भये धुरधानी ॥ कहे कबीर सुनो भाइ साधू, शब्द लेउ पहिचानी ॥

शब्द १५१—अवधू कौन देश निजडेरा। तेरो हंसा लेत बसेरा ॥टे०॥ कौन देश है कौन दिशा है, कौन आपहो सांई ॥ कौन महलकी टहल करतहो, कहो खबर केहि तांई ॥ नरनारीके गरभ भोगते, सहजे काया पाई ॥ की तुम जनमें मात पितासे, की बीचहि आन समाई ॥ चित्रगुप्त जब लेखा मांगे, बहु बल रूप सँवारा ॥ गोच-केवार बांध फटकारे, अगिन कुंड ले डारा ॥ मझधार

नइया डोलन लागी, अजहूं खेव सवेरा ॥ कहैं कबीर अबकी बेर चेतो, तब मिटिहैं जम जेरा ॥

शब्द१५२-दोय दिन खेलले यह खेला ॥ ये तो नदी नावको मेला ॥टे०॥ कौडी कौडी माया जोरे, संग न जाय तेरे धेला ॥ और जनम बहुतेरे पावो, मानुष जन्म दुहेला ॥ मात पिता सुत कुटुम्ब कबीला, संग न जाय तेरे भेला ॥ चारवेद षटशास्त्र पुकारें, संतन देहैं हेला ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, गर्ताका बिरद दुहेला ॥

शब्द १५३-तुझे बोलनकी सुध नाहीं रे ॥टे०॥चंद चढे कुल आलम देखे, मैं देखों तेरे तांई रे ॥ दुनियां पूजे पीर पैगंबर, मैं पूजों गुरु सांई रे ॥ काम क्रोध अभिमान भरो है, कालके फांस पराई रे ॥ नारिको यार माते मदिरासे, बिके बिराने हाथाई रे ॥ जो तनका तूं गर्व करत है, सो तन नहीं रहाई रे ॥ अजहूं चेत मुगध नर मूरख, सतगुरु होय सहाई रे ॥ अरे मतिमंद जनमके अंधा, किन ऐसी मति दहाईरे ॥ कहं कबीर अबकी बेर चेतो, योंही न जन्म गवांई रे ॥

शब्द १५४-क्या लडना बिराने भागोंसे ॥टे०॥एकजु खाते दूधबतासे, एक गुजारे सागोंसे ॥ एकजु चढते हाथी घोडा, एक लगे वाके बागोंसे॥एकजु पहिरें मखमल खासा, एक गुजारे आगोंसे ॥ जो लिखनी विधने लिख दीन्हा, सो न टरे वाके भागोंसे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सतगुरुचरन दीदारोंसे ॥

शब्द १५५–मायाका गुलाम गेदीक्या जाने बंदगी ॥ ॥ टे० ॥ साधुसे धूमधाम, चोरनसे करे काम ॥ धींगनसे हाथ जोरे, कपटकी बंदगी ॥ कपटके माला लीन्हे, पाखंड तिलक दीन्हे ॥ आधारंगी धोती पहिरे, करत मिजाज गी ॥ होद ना सके बंदगी, किया चाहे सिद्धगी, कहैं कबीर धिक्कार ऐसी जिंदगी ॥

शब्द १५६–गाफिला साईंका नाम बिसारा ॥ टे० ॥ पानीके बुंदसे पिंड प्रगट भये, ऐसा सिरजनहारा ॥ नीचे शिर ऊपर पग तेरा, जब तूं किया पुकारा ॥ नौ दस मास गर्भ प्रतिपाले, वहां तोहि दिया अहारा ॥ जठर अगिनमें राख लियो है, ऐसा राखनहारा ॥ कौल बोलके बाहिर आये, यहां भये वटपारा ॥ कहैं कबीर समुझ नर अंधा, कौलको करो संभारा ॥

शब्द १५७–दोय दिन पडाव हैंदा भाई ॥ टे० ॥ हिंदू शूवर घेरके मारे, मुसलमान काटे गाई ॥ घड पखानके मुरत बनाये, ता पूजन दुनियां धाई ॥ मुरदा गाड मसीत बनाये, तासों पीर कहे भाई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो बिन समुझे परले जाई ॥

शब्द १५८–सोवें मन मेरा जगे न जगायेसों ॥ आलस अमलरस मदरस पायेसों ॥ टे० ॥ ऐसो पापी मन पंचो, ठगन ठगायेसों ॥ गुरुमुख बात न सुने सुनायेसों ॥ आगे बात न बनिहै बनायेसों ॥ गुरु उपदेश न सुने सुनायेसों ॥

फिर नहिं बान आगे बनि है बनायेसां ॥ छूटी भगी गगरी करम ठर कायेसां ॥ का सोया बहुत न सुने गोह-रायेसां ॥ कहं कबीर सुन या जग आयेमां ॥ अमृत छांड बिषै रस पायेसां ॥

शब्द १५९-मेरे सतगुरु गहलई बांह, नहीं तो मैं बहे-जाती ॥ टे० ॥ जग झूठा बदनाम है, मन ज्ञानी अभिमान॥ सतगुरु बोली बोलिया जामे, झनक पगी मेरे कान ॥ बारू नग पैदाकिया, धन कारीगर तोहि ॥ सिकलीगर सतगुरु मिले, दरस दिखावो मोहि ॥ माया मार ममता तजे, शब्द सनेही होय ॥ लोभ लालच ये सब तजे, सतगुरु परसे सोय ॥ काम क्रोध जो त्याग है, तिन घट ब्रह्म समाय ॥ कहं कबीर ते बांचहीं, ना तो जमपुर जाय ॥

शब्द १६०-कित गया रे पंछी बोलता ॥ टे० ॥ अनभी खाता पंछी पानीभीपीता, उड तरवर पर बैठता ॥ सेत सुपेती नरम गंदरा, तापर पंछी पौढता ॥ लटपट पाग बांधे मूंछ सँवारे, ले दरपन मुख देखता ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, रती रती कर भेजता ॥

शब्द १६१-सांईके चरन चित लाव मना ॥ टे० ॥ उदर भरनके कारने सुरही बनको जाहिं ॥ त्रिन चरे चहुँ दिस-फिरे, वाके सुरत बछरुवा मांहिं ॥ पांच सात सहे-लरी हिलमिल पनियां जाहिं ॥ देतारी मुख वे हंसी, वाके सुरत गगरिया माहिं ॥ नटनी नाचे चौहटे, लोग

करत हैं शोर ॥ सुरति बांध चढी बांससे, वाके चित्त न लगे कहुं और ॥ ज्वारी राचे जुवामें, कामी राचे काम ॥ कहें कबीर धर्मदाससों, तुम या बिध सुमरो नाम ॥

शब्द १६२—हमारे पिया मिले ब्रह्मज्ञानी ॥टे०॥ काग बरनते हंसा कीन्हे, दीन्हा शब्द निशानी ॥ सुंदर रूप सोहावन मूरत, पूरन है ब्रह्मज्ञानी ॥ सेज सँवारो गुरुज्ञानकी, सुरति निरतिसे आनी ॥ कुमत जराय कियो हम काजर, प्रेम प्रीतसों आनी ॥ शील संतोष पहिर दोय कंकन, होरही मगन दिवानी ॥ इतना सिंगार कियो जब बिरहिन, तब पियके मन मानी ॥ ऐसे पिया मोहि कबहुं न मिलिया, देख सुरत ललचानी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, तनकी तपन बुझानी ॥

शब्द १६३—तोहे बान परगई देखनकी, दो नैननके बीचमें ॥ टे० ॥ ररा मम्मा अच्छर दोई, भूल गई सुध लेखनकी ॥ बहदा खूब दोई घट साहब, जानपरें कोई भेषनकी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, संत निशानी टेकनकी ॥

शब्द १६४—सतनाम हीरा सार, हिरदे लगाय राखोरे ॥ ॥टे०॥मनकी रे मनोरथ माला, मनको पहिरावोरे॥कपटके कँठुला उतार डारोरे ॥ मनकारे मनोरथ धोती, मनको नहिं धोयारे, दिलके दगवा, छुटाय डारोरे ॥ प्रेमप्रीतके बिरछा, ले अमृत सींचोरे, बिषके बेली, उपार डारोरे ॥

कबीर अपने तनमें, दिल अंदर खोजोरे, सूरतसे मूरत मिलाय राखोरे ॥

शब्द १६५—छाडो मन मेरा जगतके खटका ॥ टे० ॥ बैदतो बैदाई करें, नारी मन अटका ॥ पिंजरामे सुवटा कौन विधि सटका ॥ पंडिततो पंडिताई करें, पोथी मन अटका । औरनको राह बतावे, आप खाय भटका ॥ गुनियां मांग पान फूल, देवी मांग झिटका । कितना मांगे और और आवत काल कोई ना हटका ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, काल कलाधर आवत नटका ॥

शब्द १६६—बाबा सांईजी ए तो ख्याल तुम्हारा ॥टे०॥ असमानी एक बाज उडाहै, कउवा तीर चलावे ॥ जद बकरीने बाघ पछारा, उसको कौन छुडावे ॥ चूहाने तो बिल्ली पकरी, मुरगा घर घर रोवे ॥ बंदरके घर धूम मचीहै, ऊंट बिसुन पद गावे ॥ गूंगा कहे बधिरसों बातां, अंधा पुरान बांचे ॥ जद टूंटा मृदंग बजावे, लंगडा क्या खुब नाचे ॥ कहें कबीर यह उलटा पदहै, बिरला जाने ज्ञानी ॥ सतगुरु घरका पूरा होई, सो यह बात पिछानी ॥

शब्द १६७—संतो अचरज एक मोहि लागे ॥ कुलकी रीत सदा उर धारे, सत्यशब्द सो भागे ॥ टे० ॥ कुलकी रीत भगति ना होई, ये सब बिषे व्योहारा ॥ मन मायासो अटके प्रानी, सूझे वार ना पारा ॥ औरनसों कहें त्यागो

भाई, आप सर्वस लपटाने॥जो लग जोग जुगत ना आवे, सकल काल घरजाने ॥ बांस बडाई छांडत नाहीं, ढिग चंदनके बासा ॥ आपा तजे न बांस बडाई, ताते गयो निरासा॥जोपै लोक हमारा चाहो, धर्मनि तजो बडाई ॥ सतगुरु शब्द खोजके देखो, करम भरम छैजाई ॥ कहैं कबीरमैं कहों पुकारी, सुनो संत निज बैना ॥ जबलग कुलकी रीत न छूटे, तबलग फूटे नैना ॥

शब्द १६८–कितने दिननके ठानो ठाठ ॥टे०॥ जो देहिया तुम निशदिन पालो,सो देहिया मिले माटी माट॥ परनपखेर नगर एक काया, ना जानो जाये कोने बाट ॥ मरमर जैहो फिरफिर ऐहो, सौदा कर सतगुरुके हाट ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो,अब का करिहो कागद फाट॥

शब्द १६९–माली सींचता फुलवारी ॥ टे० ॥ ऊपर माली घर कियाहै, नीचे राखी द्वारी॥ पानीसे जिन पिंड रचाहै, ऐसा अविगत प्याली ॥ नौका बैठे रहट चलावे, सींचत काया बारी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरुकी बलिहारी ॥

शब्द १७०–लगी ना छूटे चाहे जिय जाय॥टे०॥सारके भाले सालरहे, गुरु ज्ञान कमान चढाई ॥ सतगुरु केवल वहियाँ, कोई अंदर भाल रमाई ॥ ध्रुव लागी प्रहलादे लागी, लागी बिभीषन राई ॥ बिप्र सुदामाको ऐसी

अब भूले ॥ मन ममताके कारने, कीन्हे नरक निवास । मुगध रूप हो रहे, तब जीव गरभ दस मास ॥ इन दुख-नसे काढि, प्रगट बाहेर प्रभु कीन्हा । भगति अंगकी छांप प्रभू, दस्कत लिख दीन्हा । उनको नाम न लेसके, जिन पठये भवमांह । रंचक सुखके कारने, विसरगये, निज नाह ॥ बालक बुध अजान, कहा कछु मर्म न जाने । खेले सहज सुभाव, जहां वाके मन माने ॥ अधिक हठीले हो रहे, ना काहूको मान । भला बुरा चित न धरे, बारा बरस अजान ॥ नौ दस भीतर आय जान, जब जुरी सगाई । नारीते पहिचान, नाम बद कीन्हे भाई ॥ पुरुष नाम ना लेसके, जिन पठये भौ माहिं । येहूं उमर भूले फिरे, देख कुटम्बकी बांह ॥ जोबन जोर झकोर, मम्मी जब मुखपर आई । अंग सुगंध लगाय, शीश पगिया ढर-काई ॥ अंध भये सूझे नहीं, फूटगये, जो चार । झूठे काम पतंग जो, देख बिरानी नार ॥ जैसे रंग कुसुम, बहुत दीखतके नीके । भावे दिन दस चार, अंत लागंगे फीके ॥ माया निकट बुलायके, देवे छाती चाढ । लीन्हे रंग निचोयके, ज्यों कोल्हू तिलकाढ ॥ नाम जो रंग मजीठ लगे, छूटे ना भाई । रचे रच रहे शरीर, सत्र दिन दिन अधिकाई ॥ बारम्बार धोवाइये, देव करारी धोय । ज्यों ज्यों फटे पिछोरा, दिन दिन ऊजल होय ॥ जोधा अजर अजीत, पलट पुहमी पग धरते । दुशमन

रहत डराय, जाहि छल बल करि गहते ॥ सो जोजन मरजादहे, सिंधु करत एक फाल । हांथन परबत तौलते, तो धरि खायो काल ॥ जिन बांधा बल बीर, देव तेंतीस करोरी । तिनके त्रिगुण गाज, जरत जस फागुन होरी ॥ देखो दिष्टि पसारके, नर तुम्हरे केतिक बात । देखतही तुम जावगे, ज्यों तरवरके पात ॥ सोवतहो केहि नींद, मूढ मूरख अज्ञानी । अंत समय पछताव, हंस जब देय पयानी ॥ काहे खोटी कर तहो, तुम्हारा बड़ा अभाग । लेखा मांगे वह धनी, तब का देहु जवाब ॥ झीनी माया बांन्ह, नैन चित कामिन चोरी । छिन छिन प्रीत बढाय, नाममें नाता तोरी ॥ लीन्हे अंग संगकरी, रही ठगोरी मेल । या बिध भंवर बिलंबिया, कँवल रहे मुखफेर ॥ माया खोटी हाट, समुझके सौदा कीजे । खोटा खरा बिचार, परख अपने दिल लीजे ॥ तुम जिन खोवो बावरे, हरि हीराकी साट । कितने नर डहका गये, इन साहुनके हाट ॥ जोबन जोर झकोर, नहीं उर अंतर बाड़ी । होहु मंन हुशियार, परख निज बांधो गाढी ॥ दे गजगीरा प्रेमको, मूंदो दसों दुवार । वहि साहबके मिलनको, पलक न लागे बार ॥ सोवतहो केहि नींद, मूढ मूरख अभिमानी भोर भये पछताव, हंस जब देह सिरानी ॥ छूटतहै यह अंगते, ज्यों सरवरके पार । अबमें सांची कहतहों,

उडिहो पंख पसार ॥ ना जाने केह हेत, भये मानुप तन येहा । मन बच करम बिचार, जान निज चेतो देहा ॥ लख चौरासी भरम के, पाये मानुप देह । सो तन पाय न खोइये, झूंठे प्रेम सनेह ॥ बिदा भये पछताव, जबै तीनों पन हारो । समुझ पुरानी प्रीत, बोल लागे तब प्यारो ॥ लचक धनुहियां जब गई, केस भये सब श्वेत । बोल बचन आवे नहीं, लूटे लियो घर प्रेत ॥ नांव झांझरी लाद, साज बैठे बैपारी । बोझे लोह पखान, मोहिं डरलागत भारी ॥ मांझ धार पर भँवरमा, आन परी तब भीर । एक नाम जाने बिना, को गहिलावे तीर ॥ सौ भइयाके बांह तपे, दुर्जोधन राना । परे नगायन बीच, भूमिमें विग्रह ठाना ॥ युद्ध रचा कुरुक्षेत्रमें, बानन बरसे मेह । तिनहुंके अभिमानगा, गीध न खाई देह ॥ छत्रपती महिपाल रहत, देखा नहिं कोई । दिन दस गये बजाय, अंत गरदहु मिल सोई ॥ परिहो नर्क अघोरमें, तब का चेतो अंध । एक नाम जाने बिना परो कालके फंद ॥ ऊंट पलीता बहुत बहुत, हाथी ओ घोडा । चलत बारके समय, न लागे एको डोरा ॥ कंचन महला धर रही; ओर सुंदरी नार । जो आये सो जात हैं, चले दोऊकर झार ॥ ऐसा यह संसार जान, जस रहटके घरिया । एक आवे एक जाय, एक पुन आवे भरिया ॥ उपज उपज बिनसत फिरे, फिर फिर

करे गराम । एही तमाशा देखके, चितमें भये उदास ॥ खेत विगाने लाग मृगा, एक वनमें गाथा । निन प्रति चरचर जाय, एक दिन आया व्याधा ॥ छूटन चाहै बलकरे, मन मनही पछताय । अब कैसेके छूटनो, जब धनी पहुंचा आय ॥ ऐसा यह संसार जान, जस गुडकी मंखी । लागी चाखन बैठ, बाझगये दोनों पंखी ॥ पंख मरोरे शिरधुने मनही मन पछताय । वह मलयागर छोडके, यह दुख पायेउ आय ॥ काह कहूं कित जाउं, आन चहुं दिशमें घेरा । मात पिता पुचकार, हाथ चोटीमें फेरा ॥ मोह फांसमें बांधके, छूटन न पावे जान । नारीनी बेरी भई, पुत्र भये निगमान ॥ यहां दूधका दूध, और पानीका पानी । सुनो संतो चितलाय, कछु यह अकथ कहानी ॥ कँवल कली बिगसित भई, अनभौ शब्द उचार । यह लीलाहै मुकतिका, कहै कबीर विचार ॥ ❋

शब्द १७२–हीरा तन पाय तूने सुमति गँवाई ॥टे०॥ नौ दस मास गरभमें राखे, नरक योनि भुगताई ॥ नरक योनिसे बाहिर काढे, मात पिताकी सुध बिसराई ॥ बालापनमें खेल गँवाये, पीछे ज्वानी आई ॥ जो माताने दूध पिलाई, सो माताको लात चलाई ॥ वृद्ध भये कफ आवन लागे, द्वारे खाट बिछाई ॥ पारपरोसी सब जुर आये, घरके कहैं यहि मौत न आई ॥ भवसागरकी अगम बात है,

जाके पार न पाई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, छोड चले सबही ठकुराई ॥

शब्द १७३–संतो करो साहबी तनमें ॥ टे० ॥ पांच पचीस फौज या मनकी खेलैं भीतर घरमें॥भरम मोरचा साहब काटे, बैठ जुगतके घरमें ॥ मूल कँवलकी खोल किंवारी, प्रेम मगन भये दिलमें ॥ स्वेत फूल निश बासर फूले, लेत लहरिया जलमें ॥ बंकनालको धावा देवे, चढगय सूर गगनमें ॥ घाट पाट सब औघट देखे, आवे तखत नजरमें ॥ ताल पखाल मृदंग जो बाजे, शोभा नगर महलमें ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, छायोनाम अधरमें॥

शब्द १७४–मैं सत्तनामका बेपारी ॥ टे० ॥ काहू लादे कांसा पीतर, काहू सामर खारी॥संतन लादे नाम धनीका, विष लादे संसारी ॥ पूंजी न टूटे नफा चौगुन, बनिज किया एक भारी ॥ गैल जगाती रोक ना सके, है निर भय राह हमारी ॥ हाल हजूर रहत साहबके, पटा चढो दरबारी ॥ जब साहबने पंजा रोपे, जम पर अदल हमारी॥ हीरालाल घटहीमें उपजे, सुक्रिति लगी किंवारी ॥ नाम साहबका लाद चले हैं, धर्मदास बैपारी ॥ लखचौरासी जिया जो इनसे, इनसे राह नियारी ॥ कहैं कबीर एक बनिज किया है, कबहुं न आवे हारी ॥

शब्द १७५–अलमस्ता जोगी नाम अमल रस चाखा॥ ॥ टे० ॥याही तनकी कूंडी करले, शब्दके करले घोटा ॥

भरम भांगको निशदिन घोटो, ज्ञानका साफी छनौटा॥ आव संत जुरमिलके पीवो, प्रेम मगन विस्वामा॥ सुरत समेट धरो हृदैमें, छूटजाय भरम फासा॥ रतन कटोरा भर भर पीवो, पांचों ईद्री साथा॥ रोम रोममें छाय गयाहै, का ठंढा का ताता॥ गुरुका शब्द अगिनका टनका, जब लागा तब चेता॥ सार शब्द खांडेकी धारा, सब हारा कोइ जीता॥ सिरके सांटे भगत कबूले, का तनकी कुसलाता॥ साहेब कबीर मगन होय गावे, का संध्या परभाता॥

शब्द १७६–साहब तेरा भेद न जाने कोई॥टे०॥ पानी लेले साबूलेले, मल मल काया धोई॥ अंदर घटका दाग न छूटे, निरमल कैसे होई॥ जा घट भीतर बेल बंधे हैं, निरमल ऐसी होई॥ सुखिया बैठे भजन करत हैं, दुखिया दिलभर रोई॥ या घट भीतर अगिन जरतहै, धुवां न परगट होई॥ कै दिल जाने आपना, कै सिर बीती होई॥ जरबिन बेल बेलबिन तूंबा, बे फूले फल होई॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, गुरु बिन ज्ञान न होई॥

शब्द १७७–साहब मेरामैं द्वालीबंद तेरा॥टे०॥ पांच हथियार कमर कस बांधो, ठग ठाकुर बहुतेरा॥ हनमन्ता चौकीपे राखो, चोर न मूसे डेरा॥ सब दिन जीन छुटन ना पावे, चरन न पावे घोडा॥ निश दिन लडे धनीके आगे, रनमें लडत अकेला॥ पांचों मार पचीसों बसकर,

जब मुजरा है तेरा ॥ मुजरा तेरा होन न पावे, लुटन लगे सब डेरा ॥ काया गढमें फिरे दोहाई, दुनिया रहन न पावे ॥ कहें कबीर ताहिको मारो, जो कोइ शीश उठावे ॥

शब्द १७८–ग्वलिन दधि बेच न जाना। मेरा सतगुरु दुहत दुहाना॥टे०॥ मूल चक्रपै रोपी मटकिया, सुषमन खेंच मथाना॥ सुरति निरतिकी करो कडनियां धीरज फुलका भवना॥ माखन खेंच छाछ कर न्यारी, त्रिकुटि महलमें छवना॥ गुहिज कमलमें कुपीका बासा, माखन उलट समाना॥उलटके मीन चढी गिरवरको, कहें कबीर पहिचाना॥

शब्द १७९–संतो अमल करे सो पावे, बिन समुझे का गावे॥टे०॥ जैसे सुराही लिये हाथमें, पलपल दरस दिखावे॥ औरन आगे करत उजेरो, आप अंधेरे जावे॥बनी समाध रुपी घट भीतर, दिलबर दिलहि मिलावे॥ चढो नसा उतरें ना कबहूं, नैनन बीच रमावे॥ बांचे पोथी अरथ उचारे, जगको कथा सुनावे॥जानत नहीं कहां हम जैहें, घर जरे घूर बुतावे॥ ध्रुव प्रह्लाद नामदेव छाके, मुरदा गाड़ जिवावे॥ कहें कबीर देख सदनाको, एकै घरे तुलावे॥

शब्द १८०–हां जग जाहिरा मेरा नाम कबीर॥टे०॥ तीन लोक ताना तनों,खूंटी है असमान॥पानी पवन सरूप

हमारा, या विधि रचों जहान ॥ अनहद नाद गगन धुन गाजै, लागी मोहं तार ॥ ब्रह्मबीज हमहींते आयो, हमहीं सिरजनहार ॥ गगन मंडलमें रहन हमारी, त्रिकुटी है अस्थान ॥ सुर नर मुनिवर पार न पावै, है कोइ संत सुजान ॥ जम बंधनमें जाय छुडाऊँ, निरभै करों शरीरा ॥ मुक्तिभेद ताहीमें भाखों, जो मत गहिर गंभीरा ॥ वेद किताबसे रहते न्यारा, ऐसा मतका धीर ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, दोई दीनका पीर ॥

शब्द १८१–तुम बिन कौन गरीब निवाजे ॥ जिनसे बज्र बज्रसे तिनका, जोई करे सो छाजे ॥ टे० ॥ जलमें थल थलमें घर कीन्हो, बिगरी फेर सँभारे ॥ नरते नारि किये नारदको, अजामिलसे तारे ॥ मत कोई गर्व करो करनीको, करता कितम बिचारे ॥ कहैं कबीर करतासे डरिये, मत कछु औरन टारे ॥

शब्द १८२–संतो पानीमें रजधानी। पानी पिंड ब्रह्मांड सकल सब पानीकी मंडानी ॥ टे० ॥ पानी खेत बीज है पानी, पानी सींचे ढारा ॥ नाद बिंद संजोग समाना, जुगल स्वरूप सँवारा ॥ पानीमें उपजे पानी बिनसे, पानीके पंडित ज्ञानी ॥ दस औतार पीर पैगंबर, पानीमें चारों खानी ॥ पानीके यह सकल रंगहै, ताहि देख नर भूला ॥ चिता तेज कलप नहिं छूटे, फिरफिर संकट झूला ॥ पानीके रे सकल भोगहैं, पानी सुखके

रासी ॥ जो पानीका मरन न जाने, सो भरमें चौरासी ॥ पानी ताता पानी सीरा, पानी खट्टा मीठा खारा ॥ पानी झलक सपेत जरदहै, लाल हरा औ कारा ॥ हिंदू तुरुक कहें हम दोनों, एक पानीते सिरजे ॥ आपुसमें दोऊ लड़े मरत हैं, दुबधामें दोई उरझे ॥ पानी काया पानी माया, जित देखो तित पानी ॥ पानीको करता घट भीतर, बोलत अमृत बानी ॥ जोग यज्ञ तीरथ व्रत संजम, ज्ञान ध्यानले आया ॥ कहैं कबीर एक समुझे बिन, काहू कछू न पाया ॥

शब्द १८३–मेरी प्रीत लगी गुरु नामसो ॥टे०॥ जैसे प्रीत है चंद चकोरकी, एकटक नैना ध्यानसो ॥ जा तन लगी सोई तन जाने, कठिन चोट गुरु ज्ञानसो ॥ जैसे मीन नीरके बिछुरे, तन मन तलफत प्रानसो ॥ भामिन प्रीत करि सतगुरुसों, छोड विरह रस कामसो ॥

शब्द १८४–दया करी गुरु जुगत बताई । आपा चीन्हे भरम नशाई ॥टेक॥ आपा चीन्हे त्रिभुवन सूझे । गुरु प्रताप कालमे जूझे ॥ बहुर न भटको रे नर भाई । पाप पुन्यको बीज नशाई ॥ पाप पुन्य दोनों कस बाती । जनम जनम इन जारी छाती ॥ काम कसाई क्रोध चंडाला । आशा बैरन तृष्ना काला ॥ लोभ डौमरो निद्रा डारा । मनसा चोर दियो दुखभारा ॥ कनक कामिनी कलहुको भांडो । इन ठगनोने सब जग डांडो ॥ कैसे छूटे मोहको

फंदा। कैसे खिजमत पावे बंदा ॥ कैसे भँवर कमल जो पावे। कैसे जग जंजाल नशावे ॥ जब सतगुरुने सार मत दीन्हा। बडे भागसे आतम चीन्हा ॥ बडे भागसे आतम जागे। कहैं कबीर जबही भरम भागे ॥

शब्द१८५- साधू यो संसारमें, कमला जल माही ॥ सदा सर्वदा संग रहे, जल परसत नाहिं॥टे०॥ जुगत जान जलकूकरी, जल मध्य रहाई ॥ पानी पंख न लागई, कछु कसरत पाई ॥ मीन तरै जल ऊपरै, कछु लगत न भारा ॥ आड अटक माने नहीं, पैरै जल सारा ॥ जुगत जमूरा पाइया, सरपे लपटाई ॥ ताको बिष व्यापे नहीं, गुरुगम्य बताई॥खीरखांड घृत भोजना, करसो लपटाई। जिभ्याको लागे नहीं, ताका चिकनाई ॥ सगल कला नट खेलई, घर न्यारा न्यारा ॥ खंड विहंडल होरहे, ज्योंका त्यों सारा ॥ जैसे सीप समुद्रमें, चित धरत अकाशा ॥ ऐसे पपीहा स्वातीको, नित प्यासा प्यासा ॥ कुंजसद का संचरे, ताकाको रखवारा ॥ सौमें गलने राखिया, ऐसे गुरू हमारा ॥ बंबीमें विषनाग बसे, कोई पकर न पावे ॥ कहैं कबीर गुरू मंत्रसो, सहजे चलि आवे ॥

शब्द१८६-ता घरमें तुम घर करो, घर बहुर न होई ॥ कोट-कल्प जुग बीतिया, बिनसे नहीं कोई ॥ टे० ॥ सेतन नीव गहरी दई, दे विवेकको गारा ॥ सारशब्द ईंटे दई, गुरु राज हमारा ॥ भक्ति महल ऊंचे बने, धीरज

धर पाटे॥ सत सुक्रित छहियां करो, पावे सिरके साटे । प्रेम संदला गारके, गच प्रीतिसों डारे ॥ शील दुलीचा डारके, साधुन बैठारे॥ दया क्षमा चौकी करो, राखो घर बारा ॥ कहे कबीर सतगुरु मिले, तब होय उबारा ॥

शब्द १८७—गुरुजी समुझ पकडियो बांहीं॥ जो बालक झुनझुनियां खेले, सो बालक हम नाहीं ॥ टे०॥ हमतो लेहीं सत्तका सौदा, परपंच पूजन नाहीं ॥ चौदासो चेला तुम जो कीन्हे, ले धरिहो केहि ठाहीं ॥ जियत ठिकानो सबहिं बतावे, मुए ठिकानो काहीं ॥ जो तुम्हरे कछु उद्यम नाहीं, भीख मांग फिन खाही ॥ मूल सजीवन जानत नाहीं, मत परबोधा काहीं ॥ नाव तुम्हरी करिया नाहीं, लहर उठे बिकरारा ॥ गुरू सहित सब चेला बूडे, कौन उतारे पारा ॥ सूखे काटे जो घुन लागे, लोहे लागे काई ॥ बिन परतीत गुरूका कीजे, काल घसीटे जाई ॥ अमृतकुंड सदाकी चौकी, बेली बेला राखे ॥ नेवर देखे बिषहर कंपे, चपल अमीरस चाखे॥ माया आय चौकमें बैठी, नवल बिवाहन आहीं ॥ दये कपाट महलमें पौढे, अब कछु संशय नाहीं॥ समझन होय तो समझो गुरुजी, नातर होत बिगारा ॥ कहें कबीर सुनो रामानंद, यह सिख लेउ हमारा ॥

शब्द १८८—नगरीया बौरी कोई चतुर न पावे पार ॥ टे० ॥ साकट सूकर कूकरा, तीनोंका मत एक ॥ कोट

जनन परबोधिये, नऊ न छाडे टेक ॥ तास नाम बेगमपुर, बसे सो बेगम होय ॥ या नगरी जो घर करे, बहुरि न आवन होय ॥ जात बरन यहां है नहीं, दरस दिवाना देश ॥ जतन जतनसों पाइये, बहुरि नहीं धरे भेश ॥ पांच तत्त्व तत्त्वहि मिले, पदहि समाने प्रान ॥ ज्ञान ध्यान पैंडे थके, ततका ना गलतान ॥

शब्द १८९-जिनकी गगन घटा घहरानी ॥ चमको बीज भयो उजियारो, मिटगई तिमर निशानी ॥टे० ॥ ज्ञान ध्यानके बैल चराये, खेत जोत निरबानी ॥ दुबिधा दूब खोद छिन डारो, फिर बोवो नामकी धानी ॥ अपनी अपनी बंधिया बांधो, बहि न जाय कहुं पानी ॥ चित चेतन रखवारे राखो, चरि न जाय मिरगानी ॥ उपजे खेत नाज घर आवे, आनंद मगन किसानी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, तृष्णा तपन बुझानी ॥

शब्द १९०-चलोरी वहि देसवा जहां बरषत रंग अपार। वहि देशकी औघट घाटी, बिरले पावे पार॥ टे०॥ सतगुरु सिंधु नाम पहिचानो, तन मन धन सब वार॥ वहि देशमें नौबत बाजे, तत मत झीनो तार ॥ सरवन सुनत कटे जम बाधा, साध सबद अधार॥ वहि देशमें जगमग जगमग, वहि शोभा उजियार ॥ तहवां हंस करे कौतूहल, पुरुषको रूप निहार॥ एक हंसकी बरनों शोभा, षोडस रवि छिटकार ॥ भोजन सुधा पुहुपकी सज्या, आनंद

अखंड अपार ॥ उबरे नाम पायते जगते, भगते होय नियार ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, आवागमन निवार ॥

शब्द १९१—यो मन ऐसा नीच संघाती । डोलत फिरत नीच नीचनमें, आठ पहर दिन राती ॥ टे० ॥ बिषकी बात लगत अति शीतल, हरि चरचा लग ताती ॥ शुभ करमनको भगे पीठदे, कुकरमन रोपे छाती ॥ वे जीव जाय परत नरकमें, मन सुख बांधे गाती ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, जाको जोन सजाती ॥

शब्द १९२—भले आये सतगुरुमैं बलिजाय । आतम अंध जगायो आय ॥ टे० ॥ अंधरी आतमके भरम भगाय । लख चौरासीकी बंद छुडाय ॥ अंधरी आतम जब उतरे पार । कोट करम फंदा भरमजार ॥ पूरन सतगुरु प्रगटे आय ॥ नौलख तारे गये छिपाय ॥ पूरे गुरुनकी पूरन कला ॥ और कला दीसे ना भला ॥ और कला त्रिगुनकी ओट ॥ सतगुरु कला परम संतोष ॥ येही कला मन राखो थीर ॥ जनम जनमकी मेटो पीर ॥ दसमास जननीको मारो बोझ ॥ भगति बिना भये बनके रोझ ॥ साहब कबीर गुरु जीत लियो मार ॥ पाये हम सतगुरु दीनदयाल ॥

शब्द १९३—माईमें जनम जनम अहिवाती ॥ टे० ॥ अब हम रांड होवें ना कबहूं, वर पायो अविनाशी ॥ तुलसीकी माला रुचरुच पहिरों, कांच की चुरिया लजाती ॥

काजर सिंदुर मनहि न आवे, द्वादश तिलक बनाती ॥
कहें कबीर सुनो भाइ साधू, अमरलोकको जाती ॥

शब्द १९४-नाचरे मन मेरा नट होय ॥ टे० ॥ ज्ञानके ढोल बजाव रैन दिन, शब्द सुने सब कोई ॥ राहु केतु नवग्रह कंपे, जम घर बंदन होई ॥ द्वादश तिलक बनावे बांस चढि, जगते होरहु न्यारा ॥ सहस कला होय नाच मन मेरे, रीझे साहब तेरा ॥ जो रीझे जगदीश जग सगुरु, देहे दान बुलाई ॥ भरी सभामें चोला बगसे, फाट न कबहूं जाई ॥ जो भौसागर कूद परोगे, कला न बदिहों तेरा ॥ कहें कबीर सतोव्रत साधो, तो निधि होवे चेरा ॥

शब्द १९५-भव भंजन गुन गाऊं, रमता राम रिझाऊं ॥ ॥ टे० ॥ तनकर घोडा मनकर चाबुक, सुरत लगाम लगाऊं ॥ पांच पचीस बखतरिया मारो, फिर मुजरेको आऊं ॥ ना मैं पूजों देवी देवा, ना मैं देवल बनवाऊं ॥ पांच मवासी इस नगरीमें, मान गुमान बहाऊं ॥ देवल जाते पत्थर पूजा, तीरथ भरमी पाऊं ॥ इस कायामें कोटन तीरथ, महवों बैठ अन्हवाऊं ॥ आगे आगे ओट दुलीचा, पीछे नौबत बाजा ॥ दस्तके ऊपर लाल बंदूक, फिर बैरीको साजा ॥ लोभ मोहकी गरदन मारों, ज्ञान कमान चढाऊं ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधू, वेद बिमल जस गाऊं ॥

शब्द १९६-तेरा रोकनवाला कौन, सुरतसों आवचली॥ लोकलाज कुलकी मरजादा, सिरतें डारअली ॥ टे० ॥

पटको भार मोह मायाको, सनमुख डगर धरी ॥ काम क्रोध हंकार कल्पना, दुरमति दूर करी ॥ मन अभिमान दोऊ घर पटके, निरभै राह गही ॥ क्षमा शील संतोष धीरज धर, करगहि ज्ञान छड़ी ॥ अगल बगलकी झार मार सब, होय निहशंक चली ॥ पांच पचीस करे बस अपने, गहिलई ज्ञान गली ॥ करत बिलास रहत संत· नमें, आनंद प्रेम भरी ॥ सबर विवेक चुनरिया पहिरी घरकी खबर करी ॥ कपट किंवार खुले जब तनके, सतगुरु मिहर करी ॥ दया धरम हिरदय करराखो, कर उपकार चली ॥ दया स्वरूप सकल जीवन पर, ज्ञान गुमान भरी ॥ समझ बिचार करो जिय अपने, कर सिंगार चली ॥ भये हुलास मिलन जद पियको, फूली कमवँल कली ॥ दीपक ज्ञान धरो घट भीतर, जगत बिसार चली ॥ निरखत बदन मदन छबि लाजत, आनंद प्रेम भरी । कहैं कबीर मिली जद पियको, पिय हिय लाग रही ॥

शब्द १९७—अपने लाल मनाइले सुन आतम प्यारी ॥ टे० ॥ पहिले पहरे रैनके, गुडियन संग साजे ॥ मो प्रीतम मन भावते, तेरे निकट बिराजे ॥ दूजे पहरे रैनके, कछु मरम न जाना ॥ जोबन मँहग मोलके, तुम विषमें साना ॥ तीजे पहरे रैनके, तुम बहु विध चूकी ॥ अंग ना दियो सुजानको, तुम बहु विध भूली ॥ चौथे

पहरे रैनके, शशि जोत समानी ॥ कहैं कबीर धर्मदाससों सुंदरि पछतानी ।

शब्द ११८-औगुन कहा निहारो स्वामी, ओर आपनी हेरो ॥टे०॥ होवे नहीं निवेरो तन मन, भरे कर्मके ढेरो ॥ वस्तु लई सो लई कृपानिधि, अब का लेकर फेरो ॥ कहि सुख लाल कहाया जगमें, तेरो तेरो तेरो ॥ वस्तु लई सो फेर न दीजे, लगे वानमें बंटा ॥ यह दुकान कोई फेर न आवे, उठ जैहैं यो टंटा ॥ ताते सुनो कृपानिधि स्वामी, साख राखिये हंटा ॥ अधम उधारन नाम टेरके, लिख दीन्हे हैं संटा ॥ जग जिव अंध लखे न वाको, जो सब आप खुदी है ॥ वह अखंड सो व्यापै घटघट, परघट नहीं मुंदी है ॥ निरगुन सरगुन मान एकपै, जैसे बदी सुदी है ॥ जगतजात औ आप गात सों, वह कछु बात जुदी है ॥ सतगुरु बिना कौन दरसावे, जाको सब घट तेजा ॥ सुर नर मुनि औतार आदि सब, वाही थानक रेजा ॥ सो नर समुझ उसीको गहना, जिसने जगमें भेजा ॥ गहिये अविचल स्थान पुरुषकी, सत्तपुरुषकी सेजा ॥ गरभवास प्रतपाल साहेबा, तिसपै कपट गुढे है ॥ सुन वे सुमर उमर गुजरानी, बाला ज्ञान बुढे है ॥ बिना बिवेक देख डिग अपने, जमकर बृथा सुदृढ़ है ॥ तिसपर नहीं सीखता अंधे, तुझको मूढ़ तुदृढ़ है ॥ निश दिन विषे वासमें भूला, प्रभुकी खबर बिसारी ॥ औसर

परं कहत है तिसपर, लेवेगा खबर हमारी ॥ माया हिरदे मोहकी फांसी, हांसी आवत भारी ॥ पहिरे अंग टाटकी चोलिया, कर नवावसों यारी ॥ कंठी तिलक छाप उर धारे, बिषे बासना गौरे ॥ भगत कहाय जुगत ना जानी, परम धामकी लौरे ॥ ना प्रभु भजन ना गुरुकी सेवा, एको नाहीं भौरे ॥ फिरत लगावत ऐसे अंधे, अंडन मांझ बिजौरे ॥ बेद पुराना बांचना बूझा, प्रभुको भारत जुल्हा ॥ जहांसे सबे तिसे नहिं जाना, भये आप कुल्ह कुल्हा ॥ सुर नर मुनि सब एक ठीकसे, ऐसी भूलनि भुल्हा ॥ या जग अंधा फूट मसींदी, मिले अंधेरे मुल्हा ॥ ऊंचे नीचे फिरे करमसे, कर्म कीचमें कुलबुल्हा ॥ खबर नहीं कुछ या कायाकी, है मायाके तुलतुल्हा ॥ गहि निज नाम तजे नहिं या जग, महकालकी भुलभुल ॥ करत घेंसुवा फिरत बटोई, जैसे अंधी बुलबुल ॥ माया जोर किया सबहीको, जपी तपी बहु भेखो ॥ कर बनवासा ऋषि दुरबासा, अजब तमाशा पेखो ॥ सुर नर मुनि औ पीर औलिया, नर निहारके देखो ॥ जगत ज्वालमें बरत गांजसे, कह पूरनको लेखो ॥ सिरज नहार ताहि बिसराया, जग सिर भार लिया है ॥ उरझे बृथा जगतके ज्वाला, प्याला बिषे पिया है ॥ तो अब दुक्ख देख क्यों डरपे, जो पेराहि कियाहै ॥ मूसर चोट ओट का भाई, उखरी मूंड दिया है ॥ पांचतत्त्वका

पिंजरा तेरा, दिन दिन होवै हानै ॥ बाला ज्वान वृद्ध फिर होवै, सो क्या तु नहिं जानै ॥ सुन समुझाय कहतहों तिसपर, इसपर गरब गुमानै ॥ माया महल जान ये धुवना, धुवना सींख सयानै ॥ सतगुरु चरन सरन गहु बंदे, सीधी देही जाती ॥ क्या लख भूला जात पांतमें, तात मात सुत नाती ॥ ये सब स्वार जगतहै सपना, भोर होत ज्यों राती ॥ माया रंग अंग ये कांचा, सांचा नाम संघाती ॥ नर निहार ये कहां गये सब, माया सबन बटोरा ॥ घोडा हाथी लाल जवाहिर, लाखन कोट करोरा ॥ सो समुझाय कहत हों तिसपर, जीवन जगमें थोरा ॥ जग जंजाल कालको फंदा, लागो प्रभुकी ओरो ॥ इत जग लाज उतै जिय कारज, दुई दुबीचा मूवा । यह अनिष्ट निज इष्ट मिलतही, सिष्ट उठाव न हूवा ॥ पीछे भोजल विरह भयानक, आगे दीसै हूवा ॥ तिसपै नहीं सूझता मुझपै, तुजपै आशिक हूवा ॥ श्रीगुरु सत्तनामका प्याला, भरिके घूंट घुटका ॥ काम क्रोध मद मोह भार शिर, ये भी डार पटका ॥ जो कुछ हतो कालको लशकर, लख निज नाम सटका ॥ सुखलालदास साकटते कोरे, तोरे खूब घटका ॥ काल कराल दुःखहै भारी, व्यापै राजा परजा ॥ देखतही मुख सूख जायगा भूल जायगा तरजा ॥ इंद्री फिरे लगाये अनुवां, मनुवां नेक न बरजा ॥ उस दिन कहा करेगा बंदे, जिस दिन जम शिर गरजा ॥

शब्द १९९—अछा निरंजन बनमें, कोई उलट समाना तनमें ॥टे०॥ का पहाड़पर धुनी लगाता, जिसकी भसम चढाता है ॥ अंचला कोपीन कछू न वाके, सेवा दिगंबर कराता है ॥ तन कर कूंडी मनकर घोटा, ज्ञानकी गुदरी लगाता है ॥ पांच पचीसों घटके भीतर, जिनहूंको भरभर पियाताहै । तत्त्वकी रोटी सबते मोटी, तेहिसे पिंड चलाता है ॥ गंग जमुनके निर्मल नीरा. ठाकुर भोग लगाता है ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, भूमंडल बिचलाता है ॥

शब्द २००—नैनन आगे ख्याल घनेरा ॥ जा कारन जग भरमत डोलै, सो साहेब ढिग लेत बसेरा ॥टे०॥ पूर रहो असमान धरनलो, जित देखो तित साहब मेरा ॥ लखत बने कछु कहत न आवे, जाने दिल बिच महरम हेरा ॥ अर्ध उर्ध बिच मनुवां राचे, का संध्या का रैन सबेरा ॥ माला एक दई मोहि सतगुरु, कहें कबीर बिनहीं कर फेरा ॥

शब्द २०१—गगनमें अवाज होती झीनी । कोई सुनता है गुरुज्ञानी ॥ टे० ॥ पहिले आया नाद बिंदसे, पीछे जमाया पानी ॥ सब घट पूरन पूर रहाहै, अलख पुरुष निरबानी ॥ वहांसे आया पटा लिखाया, जगमें कछु न आनी ॥ अमृत छोड बिषै रस चाखे, उलटा फांस फँसानी । राज करंते राजा जे हैं, रूप धरंती रानी ॥ वेद पढंते पंडित जे हैं, जेहें मुनिवर ज्ञानी ॥ सोहं सोहं बाजा बाजे, त्रिकुटी जाय समानी ॥ इंगला पिंगला

बीचहिं छांडे, सुन्न ध्वजा फहरानी ॥ दीद पदीद न जरा देखो, है यह अमर निशानी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, यही आदकी बानी ॥

शब्द २०२–प्रीतम आपुहीमें पायो ॥ जनम जनमकी मिटी कल्पना, पूरे गुरू लखायो ॥ टे० ॥ जैसे कुंवर मन बिसरगई थी, अभरन कहां गंवायो ॥ एक सखीने बताय दिये तब, मनको तिमर नशायो ॥ जों युवती सपने सुत ढूंढत, बालक कहां गमायो ॥ जागपरी जहंको तहूं, ना कहुं गयो न आयो ॥ मृगा पास बसे कस्तूरी, ढूंढत बनबन धायो ॥ नासा स्वाद परो जब वाके, फिर आपुन पहँ लायो ॥ कहें कबीर मगन भये मनुवां, ज्यों गूंगा गुड खायो ॥ वाके स्वाद कहे अब कासो, मनही मन मुसकायो ॥

शब्द २०३–सतगुरु शब्द है अगम अगोचर, रहन गहन बिन लख न परे ॥ टे० ॥ अनहद तार गगनमें बाजे, बिन समुझे कछु लख न परे ॥ सुरत समेट धरो घट भीतर, सहजे सरवन अवाज परे ॥ उठन तरंग नाना बिध बानी, भिन्न २ झनकार करे ॥ सुर गंभीर राग अनुरागी, चितदे सुने ताको काज सरे ॥ सुन अनहद मनको बस करले, निरस परख निरधार करे ॥ सुन्न सिखर छाजेके ऊपर, मगन हुवा जम काह करे ॥ आदि अधर अस्थान पुरुषको, जहां वह बेठ कलोल करे ॥ सदा

समीप रहत समरथके, हंस हिरंमर चँवर ढरे ॥ छवि निरखो समरथकी मूरत, कोट भान परकाश करे ॥ कहें कबीर निज बानी दरसे, जब सतगुरु दिव्य दिष्टिकरे ॥

शब्द २०४—नाम बिना धिग धिग नरनारी । तुम कहँ आय कियो संसारी ॥ टे० ॥ धिग वह रसना धिग वह ज्ञाना । आतम राम नहीं पहिचाना ॥ गरभ मुची मुच भई किन बंझा । सूकर स्वान फिरे गुलमुंझा ॥ जेहि कुल पुत्र ना भक्ति बिचारी । बिधवा काहे न भई वह नारी ॥ गनिका पुत्र पिता कासों कहई । बिन गुरु चेला ज्ञान न लहई ॥ बिधवा नारी करे सिंगारा । शोभा न पावे बिन भरतारा ॥ राज बिना कैसो रजपूता । ज्ञान बिना कैसो अवधूता ॥ कहें कबीर हम कहत न डरहीं । अंधे ना सूझें तो हम का करहीं ॥

शब्द २०५—मेहदी—देवराके पिछवार रोचन, महदी हम भई मोरे लाल ॥ टे० ॥ या काया नगर मंझार, माया रूप बजार है मोरे लाल ॥ काम क्रोध मद लोभ तृष्ना एक अनूप है मोरे लाल ॥ तृष्नाको सब कोई लेय दया धरम नहिं चीन्हें मोरे लाल ॥ या मनुवां है मुगध गँवार ओछी संगत लेरहो मोरे लाल ॥ पांच पचीसको खेल निरगुन, काहु न चीन्हे मोरे लाल ॥ या त्रिकुटी सोहंगम नार, सोहंसोहं होतहै मोरे लाल ॥ कहे कबीर बिचार संतन, पार उतारो मोरे लाल ॥

शब्द २०६-पावस रितु जबही जानवी आई ॥ टे० ॥ जब तेरी निज दसा पलटी है, दुरिहै नहीं दुराई ॥ खेत कुखेत बंजर औ भाटो, बरन भेद मिटजाई ॥ जब या तनकी तपन बुझैहै, गगन गरज बरसाई ॥ कहै कबीर रविउला टांकिये, नदिया बार अघाई ॥

शब्द २०७-गुरु दीजो दरस दीदार जामें मन मगन रहै ॥ टे० ॥ काहेके डंडिया करो, काहेके अजगर खंभ ॥ तन तरवर डंडिया करो, मनकर अजगर खंभ ॥ काह छवाऊं गुरुके झारझरोखा, काह छवाऊं चौपार ॥ पानन छवाऊं गुरुके झार झरोखा, फूलन छवाऊं चौपार ॥ बाहरसे गुर भीतर आये, जगमग जोत अपार ॥ धरम किवरिया खोलो मेरे सतगुरु, हंसा ठाढे द्वार ॥ प्राननाथ एक बानी बोले, राजा छत्रशाल बलिहार ॥ ❋

शब्द २०८-जियरा जायगा हम जानी ॥ टे० ॥ पांचतत्त्वके पींजरामें, जामें, वस्तु बिरानी ॥ लोभ लहर विष आयके, बूड मरे बिन पानी ॥ तन भीजैहै मन भीजैहै, जैहै मखमल खासा ॥ लाख टकाकी जिंदगी जैहै, एक दिन जंगल बासा ॥ दसभी जै है बीस भी जैहै, जैहै बरस पचासा ॥ बीसा सौ कोई बिरला रहिहै, फिर मरनेकी आशा ॥ राज करंते राजा जैहै, रूप धरन्ती रानी ॥ वेद पढंते ब्रह्मा जैहैं, अरु जैहं अभिमानी ॥ चंदा

जैहैं सूरज जैहैं, जैहैं पवन औ पानी ॥ कहें कबीर ते संत न जैहैं, जिनकी मत ठहरानी ॥

शब्द २०९–मेरा हो प्यारे सतगुरु सांइयां ॥ टे० ॥ बह्यो जातथो भौसागरमें, गहलीन्ही प्रभु बहियां ॥ अगम निगम जाको पार न पावे, अगम पंथ दरसहियां ॥ सबद सरूप सो जिन रित मानी, ते भाजल निधि पहियां ॥ मंतदास सो सतगुरु महिमा, और जतन नहि लहियां ॥ ❀

शब्द २१०–दिनदिन जोबन जात हैं, पियसो मिल नार ॥ टे० ॥ दिनते रैन रैनते रजनी, घरि घरि पलछिन होत अवार ॥ मिलना होय तो अबही मिलले, तन छुटे कछु वार न पार ॥ माझ धार नावरिया अटकी, पल ना लगे इहां कहधो बिचार ॥ जाना तुझे पारको चहिये, इहां खेवट सबही मतवार ॥ तेरो पिया तोहीमें दरसे, ज्ञान रतन ले सांचे ढार ॥ कासीराम काम साहब सो, सतगुरु खेइ लगावौ पार ॥ ❀

शब्द २११–जोगी मनना रंगावे रंगावे कपडा ॥ टे० ॥ तिल तिल जोर सरी बनाये, सिरजनहार नहीं पकरा ॥ या ठिकराके मरम न जाने, भटकत फिरे जंगल सेहरा ॥ सबसुख छाड जंगलमें बैठे, काम जराय भये हिजरा ॥ आसनमार डिंभ धर बैठे, दाढी रखाय भये बकरा ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, साहेब छोड पुजे पथरा ॥

शब्द २१२–जोगीजन जागत रहिये भाई ॥ जागत

रहिये चौकस करिये, चोर मूस ना पाई ॥ टे० ॥ तस्कर तरन रहन मन चितकर, कंद्रप लेत चुराई ॥ चितके चले मन चले मुनिनके, तनके चले व्रन जाई ॥ रस कस लेत चुराय नागिनि, बुध बल करके खाई ॥ ऊष- हिते छोई करडागी, नेकु न रहै मिठाई ॥ शृंगीऋषि बन भीतर लूटे, ले गइ संग लुगाई ॥ घृत पावक नर नार संग रहु, बिरला जन ठहराई ॥ जोगी जती तपी सब लूटे, तिहुपुर फिरी दोहाई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, मारत ढोल बजाई ॥

शब्द २१३—भजन कब करिहौ जनम सिरान ॥ टे० ॥ गरभ बासमें भगति कबूले, बाहर आयके गये भुलान ॥ बालापनमें खोय गँवाये, तरुनामें अभिमान गुमान ॥ वृद्ध- भये तन थाकन लागे, शिर धुनि धुनि मनुवाँ पछतान ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, जमके हाथमें गये बिकान ॥

शब्द २१४—भजन बिन दिन रे बीता जात ॥ टेक ॥ करले भजन भलो तन पायो, भजन बिना सुख पाया किन रे ॥ उपजत बिनसत जुग चारों गये, बेद बिचारत गये गन मुनि रे ॥ पलमांही परलै हो जैहै, बिनसत लगे घरी ना छिन रे ॥ कहै कबीर भजन कर वाके, पानीसे पिंड सँवारा जिन रे ॥

शब्द २१५—भजनकर निशिदिन टूटे न तार ॥ टे० ॥ एक ब्रह्मका सकल पसारा, घरिघरि पलपल लिजे संभार ॥

या मन मिलिया साधन सो रे, सोहं शब्दकी लगी लगार ॥ निश दिन भजन करो सतगुरुके, काया मधे है तत-सार ॥ कहे कबीर सुनो भाई साधो, बिन सतगुरु ना होय उबार ॥

शब्द २१६—भजनकर जगमें जीवनसार ॥टे०॥ नरदेहीको गरब न करिये, जरबर होय छिनमें छार ॥ पांचों मार पचीसों बसकर, जमराजाकी चोट संभार ॥ नदिया गहरी नाव पुरानी, बिन सतगुरु कैसे उतरे पार ॥ कहें कबीर सतगुरुके भजन कर, भौसागरसे उतरो पार ॥

शब्द२१७—भजनको भाईरे ऐसो तन पायके ॥टे० ॥ नाहिं रहे लंकापति रावन, नाहिं रहे दुर्योधन राई रे ॥ मात पिता सुत भाई बंद ठाढे, आइ जमराज पकर लेजाईरे ॥ लाल खंभपर देत ताडना, बिन सतगुरुको होत सहाई रे ॥ धरमदासके अजर गोसाईं, नाम कबीर कहो गोहराईरे ॥ ❋

शब्द २१८—जनम यह देखा देखी जात ॥ टे० ॥ ज्यों अंजुरीको नीर घटत है, ज्यों तरवरसे टूटे पात ॥ चार पहर धंधेमें खोये, रैन गँवाये सोवत खाट ॥ जब जमराजा आन गहेगा, पकर जीभ तोहि मारे लात ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, कहांलो कहों तेरी उतपात ॥

शब्द २१९—तकसीर भई है कैसे मैं पियाको मनाऊं ॥ ॥ टे० ॥ पांच पचीस मोहि रोकत टोकत, तीनों गुनसे

बचाऊं ॥ लिख लिख पतियां भेजों अमरपुर, मरजी होय तो आऊं ॥ दीनदयाल दयाकर जनपर, साहेब दरशन पाऊं॥धरमदासने पाये कबीर गुरु,करमन्ह्रू ऊ बगसाऊं॥ ❋

शब्द २२०—कैसे जाउं महलमें अटपट अगम चढाई॥ ॥टे०॥ दश दरवाजा बने महलके, सातसिंधु मोरा खाई ॥ चांद सूर दोय इतउत लागे, सुखमन सेज बिछाई ॥ सतगुरु बहियां नामसनेही, बांह पकरि ले जाई ॥ धरमदासने पाय कबीर गुरु, सब्द सुरत मिल जाई ॥

शब्द२२१—जो मैं साहब पाऊं, नैनोंदी मांझ बसाऊं ॥ ॥ टे० ॥ नैनोंदीमांझ बसे मोरे प्रीतम, डरसे पलक न लाऊँ ॥ एकटक ठाढी चरण निहारों, पलपल चौंर ढुराऊं ॥ त्रिकुटी महलमें बने झरोखा, दीदारोंदी सेज बिछाऊं॥ रोमरोम पिया संग राची, आनंद मंगल गाऊं ॥ बिछुरे प्रीतम जोमैं पाऊं, तब स्यानी होय जाऊं ॥ धरमदासके अरज गोसांई, सिंधुमें बुंद समाऊं ॥ ❋

शब्द २२२—गुरु मोरे बहियों जनि छाडो पकरके ॥टे०॥ बहे जात थी भौसागरमें, काढ लियो जिन अपनो करके॥ध्रुव प्रहलाद बचे करनीसे, तिनहूको लूटे छलबल करके ॥ शृंगीऋषि पाराशर लूटे, शंकर लूटे बन बन करके ॥ साहेब कबीर मिले गुरुपूरे, रखलेहु साहब आपन करके ॥ ❋

शब्द २२३—गुरु दरियाप नहानाहो, जाते दुरमत

भागे ॥ टे० ॥ गुरु दरियाव सदा जल निरमल, पैठत उपजत ज्ञानाहो ॥ जौ लग गुरु दरियाव न पावे, तौ लग फिरत भुलानाहो ॥ कोटिन तीरथ गुरुके चरनन, श्रीमुख आप बखाना हो ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, अजर अमर घर जाना हो ॥

शब्द २२४–दिलमगन हुवा जबको बोले ॥ टे० ॥ हंसा पाये मान सरोवर, ताल तलैयाको डोले ॥ तेरा साहब है तुजहीमें, बाहर नैनाको खोले ॥ सुरत कलारी मन मतवाली, प्याला पीवे अनतौले ॥ धर्मदासके अरज गोसांई, साहेब पाये तन बोले ॥ ❃

शब्द २२५–धुनसुनके मनुवा मगन हुवा ॥ लाग-समाधि रहो गुरु चरनन, अंदरका दुख दूर हुवा ॥ सार-सबदकी डोरी लागी, ता चढ हंसा पार हुवा ॥ सुन्न सिखरपैं झालर झलके, झरत अमीरस प्रेम चुवा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, चाख चाख अलमस्त हुवा ॥

शब्द २२६–गावत कहां गायबो सुनरे ॥ टे० ॥ बाजत तालपखावज बीना, निरतत अगम निगम नहिं गनरे ॥ अपने कहे कछु काम न आवे, मानत नहीं अपरबल मनरे ॥ सुन चातुर यह बचन हमारा, बिन सतगुरु लख पाया किनरे ॥ कहे कबीर सुनो भाई साधू, जब लख परी अगमकी धुनरे ॥

शब्द २२७—काया गढ जीतोरे भाई, तेरो काल अवध टरजाई ॥ टे० ॥ भरमकोट चहुं ओर फिराये, माया ख्याल रचाई ॥ कनक कामिनी फंदा रोपे, जन राखे उरझाई ॥ पच्चीस जाल जाके निशदिन व्यापे, काम क्रोध दोय भाई ॥ लालच लोभ खडे दरवाजे, मोह करे ठकुराई ॥ पांच मोरचा गढके भीतर, इन्हे नांघ जो जाई ॥ आशा मनसा तृष्ना कहिये, त्रिगुन बंधो है खाई ॥ ज्ञानके घोडा ध्यानके पाखर, जुगनकी जीन बंधाई ॥ सत सुकित दोउ शिरके ऊपर, विवेक लगाम लगाई ॥ चेतन सुरत चढी ताजीपर, सतगुरु सांग गहाई ॥ मूल कमल सो दोर करी है, कुमतिको मार भगाई ॥ मूल कमलपर डेराडारे, गुरुको शीश नवाई ॥ छऊ कमल एक सुरमें बेधे, चढे गगन गढ जाई ॥ सात कमल त्रिकुटीके ऊपर, तहवां पहुंचे जाई ॥ जोन निरंजन तहां बिराजे, वेद नेति कहि गाई ॥ आवागमन वेद ना जाने, कुरान रहे ठहराई ॥ आवे न जाय मरे ना जीवे, ताकी खबर न पाई ॥ बंकनालकी घाटी कहिये, तहां न पग ठहराई ॥ सोहं सुरलागे जहां दोहरे, अजपा नाम सहाई ॥ कोटि-चंद सूर तारागन, छत्रकि छांह छहाई ॥ जोजन एकके घेरे कहिये, पुरुष विदेह रहाई ॥ स्वेत चंदेवा स्वेत सिंहासन, स्वेत चौंर फहराई ॥ स्वेते फूल फूले निशि-बासर, शोभा बरनि न जाई ॥ द्वादश ऊपर सुन्न फेरे,

मन पौना थक जाई ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो अमर लोकको पाई ॥

शब्द २२८—गगन गढ जीतो रे भाई जहां संत करैं बादशाही ॥टे०॥ कच्चे कोट पके दरवाजा, गहरी जाकी खाई। और मोरचा लगे बत्तीसों, उनमुन तोप झुकाई ॥ तनके बंदुक मनके जामा, प्रीतका प्याला पियाई ॥ अधर छात कुदरतका बंगला, गुरु बिन लियो न जाई ॥ गुरु बिन फौज किलेमें बाढी, अहंकार ठहनाई ॥ नेम धरम लेचल भाई गौरा, छिनमें देत ढहाई ॥ उलटी नेह गगनको दौरी, भली बनी चतुराई। साहेब कबीर मिले गुरुपूरे, अदले अदल चलाई ॥

शब्द २२९—गगन गढ गैब निशान गड़े ॥टे०॥ गाडी-मेख सेष शिरऊपर, डेरा अदलखडे। चन्द्रभान एक तंबु ताने, रवि शशि जोत अडे ॥ संत सिपाही करत चाकरी, सो दरबार लडे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, शब्दमें सुरति मडे ॥ ❀

शब्द २३०—मिसलपर जाना होगा ठिकाना ॥ टे० आया प्यादा तलब तजीरा, जल्दी होगा जाना ॥ माल तुम्हारा जपत हुवा है, अदली देत बिराना ॥ जहांके माया तहां लुटाये, बचे न एकौ दाना ॥ साहेब तुम्हारा खफा हुवा है, टोटा परा खजाना ॥ मुंशी दरोगा पकर मँगावे, भगती होगा भरना ॥ जो भगतीमें चूकपरेगा,

डारदेगा बंदखाना ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, या पद है निरखाना ॥ जब मोहर पर छाप चढेगी, छूट जायगा बंदखाना ॥ ※

शब्द २३१—सत मन खेलले मेंदाना ॥ शब्द सिरोही बांध कमरमें, त्रिगुन तीर कमाना ॥ टे० ॥ कडाबीन कमरसे बांधे, माया मोह निशाना ॥ फांका फरी ज्ञानका गदका, बांध बनेटी बाना ॥ सन्मुख जाय कालसो लड़ई, सोई सूर मरदाना ॥ रंजक नाम ज्ञानका पेटी, बंद बरूद खजाना ॥ तोप धर्म्मका भरभरमारे, लूटत मुलक बिराना ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, ढालीबंदे मस्ताना। सत्तलोकमें डेरा दीन्हा, सतगुरु हनत निशाना ॥

शब्द २३२—अब तू खबरदार रहो भाई ॥ टे० ॥ सतगुरु दीन्हा माल खजाना, राखो हिये लगाई ॥ पाव रती भर घटन न पावे, दिन दिन बढत सवाई ॥ तन बंदूक सुरतके सिधरों, ज्ञान गजा ठहराई ॥ प्रेमपलीता हरदम चमके, करपर गखु चढाई ॥ क्षमा शीलके बख तर पहिरे, जुगतके लांग चढाई ॥ नाम टोप माथेपे धरके, जौभर अनी न आई ॥ पहरेदार सिपाही सांचे, वो नहिं सोवे भाई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, छिन-पल-देत जगाई ॥ ※

शब्द २३३—सतगुरु निरवानी निरबानी, जाके मुक्ति भरत है पानी ॥ टे० ॥ अष्टसिद्ध नौनिध करत मजूरी,

और बिधाता रानी ॥ चंद सूर दोउ बरे मसाले, सुरत गगन ठहरानी ॥ अर्थ धर्म और काम मोक्ष फल, बैल फिरे ज्यों घानी ॥ तहवाँ है एक अगोचर, निगम नेति ना जानी ॥ चार वेद नौ व्याकरण कहिये, अष्टादशौ पुरानी ॥ सत्यभगति बिन चार पदारथ, काग विष्ट सम जानी ॥ अवरन वरन रूप सब वाको, गरज गगन घहरानी ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अजरा अमर निशानी ॥

शब्द२३४—सतगुरु अविनाशी अबिनाशी, जाके मुक्ति रहत है दासी ॥ टे० ॥ ब्रह्मा जाको पार न पावे, निरंजन करे खवासी ॥ सेष सहस्र मुख निशिदिन गावें, सोभी पार न पासी ॥ शंकर जाको ध्यान धरत हैं, कहिये जोग उपासी ॥ चार वेद जाके भेद न जाने खोज खोज मर-जासी ॥ ओंकारमें भरमत डोले, विष्णु फिरे उदासी ॥ नाम पदारथ हाथ न आवे, परे कालकी फांसी ॥ अजर अमर वे परम पुरुष हैं, कहिये फूल सुबासी॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अमरलोकके बासी ॥

शब्द २३५—सतगुरु आदि संदेसी आये, सोरा असंख जग बीत गयो है, भेद न काहू पाये ॥टे०॥ दुनियाँ रही भुलाय ख्वाबमें, सोवत नींद जगाये ॥ दया भाव औ नाम पान ले, हंसन पार लगाये ॥ काशीमें सतगुरू प्रगट भये हैं, नाम कबीर कहाये ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, जीवन फंद छुडाये ॥ ❋

शब्द २३६-जपो मन सत गुरु सत्त कबीर ॥ टे०॥ भौसागरसे जीव उबारे, जमके कागद चीर ॥ साह दमोदर बुडत बचावे, रतनागरके तीर ॥ ईंद्रमतीको लोक पठाये, काटे जमके पीर ॥ साहब कबीर मिले गुरुपूरे, देखत मन भौ थीर ॥

शब्द २३७-सतगुरु ज्ञानकि गोली मारा । तीर न मारा तरवार न मारा, शब्दके मारा न्यारा ॥ टेक ॥ आंखभी अंधा कानभी बहरा, पांव अपंग करडारा ॥ औषद मूल कछु ना लागे, का करे बेद बिचारा ॥ कच्चा कोट पक्का दरवाजा, घायल आन पुकारा ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, तीर निकसगो पारा ॥

शब्द २३८-हमारे मन बसगये साहेब कबीर ॥ टे०॥ काशीमें गुरुप्रगट भयेहै, गुनके गहिर गंभीर ॥ काशी तज मगहरमें आये, दोई दीनके पीर ॥ एकदिन साहेब बेन बजाये, कालिंद्रीके तीर ॥ सुर नर मुनि सब छकित भये हैं, छकगये जमुना नीर॥कोई गाडे कोई अगिन भरावे, कोई न धरता धीर ॥ चार दागसे न्यारा साहब, बिन-सत नाहिं शरीर ॥ जगन्नाथके मंदिर थापे, हटगये सागर नीर॥दास मलूक मलूक कहतहै, खोजो खसम कबीर ॥

शब्द २३९-पढो मन ओंनामासिधं॥टे०॥ओंकारते सब जग सिरजा, है वाहीका रंग॥ वोतो पुरुष सबनसों न्यारा कर वाहीका संग ॥ नाम निरंजन नैना माते, नानारूप

धरंग ॥ निरंकार निरगुन अविनाशी, निरखत सबके अंग ॥ माया मोह मगन होय नाचे, माते मत्त मतंग ॥ माटीके तन थिर ना रहता, मन मायाके संग ॥ शील सुभाव दयाके दरपन, सदा सम्हारो अंग ॥ साधुके बचन सत्तकर माने, सिरजन वाला संग ॥ धत्ता ध्यान धरो दिल अंदर, लिखले नाम अनंद ॥ गोरख जोगी मिले सतसंगी, नाम कबीर सोहंग ॥ ❋

शब्द २४०-सांई मिलना नहीं आसानका ॥ टे० ॥
सांईका मिलना बरतके चढना, चितचूके किस कामका ॥
सतीको सत्त सूरमाको रनहै, सनमुख घाव सहे बानका ॥
कहे सुने कछु काम न आवे, भर्म न मिटे जिव जानका ॥-
कहें कबीर सुनो भाइ साधो, कठिन पंथ गुरुज्ञानका ॥ ❋

शब्द २४१-सांई तेरा नाम बिना न उबारा ॥ टे० ॥
काम क्रोध औ लोभ मोहसंग, ये चारों बटपारा ॥ इनके बस जीव भुलाने, कैसे उतरे पारा ॥ आशा तृष्ना मनसा डाकिन, खाये जग संसारा ॥ कनक कामिनिके बसपरिया, का करे जीव बिचारा ॥ साधुके संग परम आनंदा, सहजे उतरे पारा ॥ सतगुरु खोज संतसे बूझो, कहें कबीर बिचारा ॥ ❋

शब्द २४२-सांई तेरे तकियामें जाना जरूर ॥ टे० ॥
खांड चिरोंजी मन नहिं भावे, सांई तेरा टुकरा कबूल ॥
शाल दुशाला मन नहिं भावे, सांई तेरी गुदरी कबूल ॥

कोट अटारी मन नहिं आवे, सांई तेरे झुंपडा कबूल ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधू, साहेब हाल हजूर ॥ ❋

शब्द २४३-मांई तेरे मत बिन नर नहिं छूटे ॥ जौ लग पंथ न गहे पियाके, जम गये बडे घर लूटे ॥ टे० ॥ आयो नेम प्रेम परकाशा, छाडो कुल व्योहारा ॥ सरगुन निरगुन दोउ छोडके, समुझके होजा न्यारा ॥ जैसे काग रहन बोहितमें, तैसे जगके प्रानी ॥ तज अनरीत प्रीत कुल लज्जा, सुरत फिरे भटकानी ॥ जौ लग सत साहेब ना चीन्हे, निहअच्छर लख आवे ॥ घटनगिया तोहे जान न दे, सब तकलीफ बनावे ॥ है अजगैब गैब होय आया ताहि कहो करतारा ॥ कहे कबीर चेत नर अंधा, मैं बहुभांत पुकारा ॥ ❋

शब्द २४४-पानी बिच मीन पियासी ॥ मोहि देखत आवे हांसी ॥ टे० ॥ ब्रह्मज्ञान बिनानर भूला, का मथुरा का काशी ॥ घरकी माया मनहि न आवे; बन बन फिरे उदासी ॥ है हाजर को दूर बतावे, दूरकी आश निरासी ॥ जल बिच कँमल कँमल बिच कलिया, जहां पुरुष अविनाशी ॥ कहें कबीर सुनो,भाइ साधो, सिरपर काल मवासी ॥

शब्द २४५-तेरी पानी बिच प्यास न गई ॥ टे० ॥ बाहर आयके का सुख पाया; अंदर लहर न लई ॥ ऐसे सुख सागरके पाये, आश न पूरन भई ॥ अरे मन मूरख मीन अनारी, किन तोहि दुरमति दई ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, हो रहो आनंद मई ॥

शब्द २४६–पानी बीच बतासा संतो तनका एही तमाशा है ॥टे० ॥ का ले आया का ले जायगा, का बैठे पछताता है ॥ मूठी बांधे आया बंदे हाथपसारे जाता है ॥ किस की नारी कौन पुरुष है, कहांसे नाता लाया है ॥ बडे बिहाल खबर ना तनकी, बिरही लहर बुझाताहै ॥ एक दिन जीना दो दिन जीना, जीना बरस पचासाहै ॥ अंतकाल बीसा सौ जीना, फिर मरनेकी आशा है ॥ ज्यों ज्यों पांव धरो धरनीमें, त्यों त्यों काल नियराताहै॥ कहैं कबीर सुनों भाइ साधो, गाफिल गोता खाताहै ॥

शब्द २४७–साधु घट शील संतोष बिराजे ॥ दया-सरूप सकल जीवनपर, शब्द मरोत्तर गाजे ॥ टे० ॥ जहवां मनकी मनोरथ दौरे, ताहि संग ना जावे ॥ सत-बादी सतगुरु पहिचाने आतम दृष्टि दिखावे ॥ निर्मल दशा सरब सुखदाई, आनंद घर रहिवासा ॥ शुद्ध सुचाल सदा शीतल गति, निशदिन शब्द बिलासा ॥ सतगुरु गहे निशि बासर, सत्त नाम परकाशा ॥ कहैं कबीर कोइ संत बिवेकी, तहां हमारो बासा ॥

शब्द २४८–जगमें या विधि साधु कहावे । दया सरूप सकल जीवनपर, और दृष्टि ना आवे ॥ टे० ॥ झलकत दशा ब्रह्मके जामें, सबहीके मनभावे ॥ शीतल बचन सर्व सुख दाई, आनंद प्रेम बढावे ॥ जाको निश-

दिन प्रेम भगतिहै, दूजा देव ना ध्यावे ॥ कहैं कबीर हम वा घट परगट, आप अपन पो पावे ॥

शब्द २४९-साधुका होना मुसकलहै । काम क्रोधकी चोट बचावे. सोई निज साधूहै ॥ टे० ॥ काया मद्धे धुनी रमावे, रमता राम गहै ॥ सत विस्वाश हृदयमें राखे. जगसो न्याग रहै ॥ या माया झूंठ परपंचिन, जगमें दौर करै ॥ जीव जंत जितना धर पावे, सबको जपत करे ॥ माला तिलक औ बाना बांधे. ममता दूर करै ॥ आठ पहर गुरुज्ञान भजनमें, कम्मर बांध लरै ॥ मोटी माया सब कोई त्यागे, झीनी तजी न जाय ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू झीनी सबको खाय ॥

शब्द २५०-ठगनी का नैना झमकावे, तेरे हाथ कबीर न आवे ॥ टे० ॥ कद्दू काट मृदंग बनावे, निंबू काट मजीरा ॥ झिंगा तुरैया मंगल गावे, नाचे बालमखीरा ॥ रूपा पहिरके रूप दिखावे, सोना पहिर ललचावे ॥ गले डार तुलसीकी माला, तीन लोक भरमावे ॥ मूसोंकी सभा सरप एक नाचे, मेंडक ताल लगावे ॥ चोलनी पहिरके गदही नाचे, ऊंट विस्नुपद गावे ॥ वृच्छ चढी मछली फल तोरे, कछुवा भोग लगावे ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, विरला अर्थ लगावे ॥

शब्द २५१-या तन धनकी कौन बडाई, देखत नैनों माटी मिलजाई ॥ टेक ॥ कंकर चुन चुन महल बनाया ।

आपन जाय जंगल बसाया ॥ हाड़ जरे जस लाकर झूरी । केस जरे जस घासकी पूरी ॥ या तन धन कछु काम न आई । ताते नाम जपो लौलाई ॥ कहैं कबीर सुनो मेरे मुनियां । आप मुवे पाछे डूबगइ दुनियां ॥

शब्द २५२—ऐसे लोगनको बहिजानेदे ॥ टेक ॥ हंस हंस मिल चले सरोवर, बकुलन मछरी खाने दे ॥ हंस गयंद चले मदमाते, कूकर लोग भुसाने दे ॥ हंस हंस मिल चलो अमरपुर, कागा आमिख खानेदे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सत्य शब्दमें कानेदे ॥

शब्द २५३—साहेब कैसे करों तोहे राजी । चाकरी चोरनेवाला हाजिर, ऐसा बंदा पाजी ॥ टे० ॥ पांचों चोर करे कुफराना, इन संग दीन गमाऊँ ॥ इन संग लडूँकि करूं बंदगी, किन किनका समुझाऊं ॥ इन संग रहों तुमें ना पाऊं, घटके बीचमें गासा ॥ तखत तरेका पेंडा मारे, याका अजब तमाशा ॥ काह कहों कछु कहन न पाऊं, देत जगत मोहि गारी ॥ दोजक भिस्त दोऊ हम त्यागे, रहूं पनाह तुम्हारी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो; ये सब झूठी बाजी ॥ नाम बिना कोई पार न पावे, का पंडित का काजी ॥

शब्द २५४—देखो दुरमन या संसारकी । नामसों हीरा छांड हाथसे, बांधत मोट बिकारकी ॥ टे० ॥ कोइ खेती कोइ बनिजे चाले, कोइको हवस हथियारकी ॥ अंध

ब्रह्मादिक, शेष सहस मुख जोई ॥ जिन जिन देहधरी दुनियामें, थिर ना रहिया कोई ॥ पाप पुन्य दोउ जनम-संघाती, समुझ देख नर सोई ॥ कहें कबीर प्रभु पूरनकी गति, बूझे बिरला कोई ॥

शब्द २५७—करमगति टारिहु नाहिं टरे ॥ गुरु वशिष्ठ महामुनि ज्ञानी, लिखलिख लगन धरे ॥ टे० ॥सीता हरन मरन दशरथको, बनबन बिपति परे ॥ कहां वे राहू कहां वे रवि शशि, आन संजोग परे ॥ सतवादी हरीचंद राजा, नीच घर नीर भरे ॥ दुरबासा ऋषि श्राप दियो है, जदु-कुल नाश करे ॥ पंडवनके हरि सदा साथी, सोभी बन बन बिचरे ॥ तीनों लोक कर्मगतिके बस, जीवनसे काह सरे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, भूला भटक मरे ॥

शब्द २५८—नामको या बिधि ध्यान धरे । जैसे अमली अमलको चाहे, छिनछिन सुरत करै ॥टे०॥जो लग अमली अमल न पावे, तो लग तलफ मरे ॥ फनि मनियां भुई काढ धरत है, फैलके ओस चरे ॥ कछू चरे कछू मन तन चितवे, बिछुरत तलफ मरे ॥ जैसे सती जरे पियके संग, नेक न सोच करै ॥ आपन चारि पियाको लेके, बिहँ-सत जाय जरे ॥ जैसे सुरत गगनको चाहे, महलन खोज करे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, भूला सो भटक मरे ॥

शब्द २५९—रसभँवर गुफामें अजर झरे ॥ टे० ॥ गंगा जमुना मध्य सरस्वति, नाद बिंदसे गांठ जुरे ॥आसन मार

अमृतरस चाखै, दिलकी दुनिधा दूर करै॥ दसम दरवाजे तारी लागी, कोइ कोइ हंसा ध्यान धरै॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, अजर अमर कबहुं न मरै॥

शब्द २६०–कूंची घडाय लावो जिन लोहराके॥ ॥टे०॥ नरम निहाय नरम है औटन, ज्ञानके हथौरासे चोट घलाय लावो॥ खालहि खाल खालपर सोहै, वोह मोहं दोय पवन डोलाय लावो॥ संसे सीच वज्रको पकड, पानी बानी जायके बुझाय लावो॥ साहेब कबीर गुर कूंची घडलाये, खोल किवरवा दरस कराय लावो॥

शब्द २६१–जायरे दिनहीं दिन देहा। करले बावरे तू नाम सनेहा॥टे०॥ बालापन गये जोबन जन जासी। फिर फिर या जोनी संकट आसी॥ पलटे केस नैन जल छाये। मूरख चेत बुढापा आये॥ नाम लेन लज्जा ना कीजे। पलपल अवध घटे तन छीजे॥ सत्त नाम जे चितहिं विसारा॥ कहें कबीर सोई जन हारा॥

शब्द २६२–जारो भैया जगकी चतुराई। प्रभुको नाम लेत ना कबहुं, जिन या देही जुगति बनाई॥टे०॥ जोरत दाम काम अपनेको, हम खैहैं लरका बिलसाई॥ सो धन राजा चोर ले जैहैं, रहो सहो ले जात जैंमाई॥ या माया कलवारन कहिये, मद पिवाय राखे बिलमाई॥ एक ज परे धरनमें लोटे, एक कहे चोखा दे माई॥ या माया सुर नर मुनि डसिया, देवी देवा बैठी खाई॥ कोइ

कोइ भाग बचे शरनागत, जासो माया रही लजाई ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधू, ले फांसी हमहू पर धाई ॥ गुरु प्रताप संतनकी संगति, अब हम रहे निशान बजाई ॥

शब्द २६३—ऐसी रहन रहेसो बैरागी । सदा उदास नाश मायासे, सत्तनाम अनुरागी ॥ टे० ॥ क्षमाकि कंठी शील सुमिरनी, सुमति सुमरती जागी ॥ टोपी अभयगत माथेपै, कलह कलपना त्यागी ॥ ज्ञानगूदरी मुकति मेखला, सहज सुईले त्यागी ॥ जुगत जमात कूबरी करनी, अनहद धुन लौलागी ॥ शब्द अधार अधारी कहिये, भीक दयाकी मांगी ॥ कहें कबीर प्रीति सतगुरुसे, सुरति निरन्तर लागी ॥

शब्द २६४—कोई दोष न दीजे, करमकि बात नियारी ॥टे०॥ काहे बकुला स्वेत बरन भये, काहे कोयल कारी ॥ काहे कूप जल मीठो लगत है, काहे समुंदर खारी ॥ काहे मूरख राज करत है, पंडित काहे भिखारी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, गुरु चरनन बलिहारी ॥

शब्द २६५—अब मोहि ऐसेही बनि आई ॥ भावे कोई निंदे भावे कोई बंदे, छोडेउं लोक बडाई ॥ कुलसो निकस भई जग गनिका, फिर ना कुलहिं समाई ॥ हाथीको दंत कढे मुख बाहिर, फिरना मुखमहँ जाई ॥ कोटन लंघन करत केहरी, भूखे घास न खाई ॥ सौ जोजन मरजाद सिंधुकी, जल अचवे ना भाई ॥ सो जल पीवे कोई संत

विवेककी, जिनकी भरी तलाई ॥ भवसागर तरवेके कारन, नामकी नाव बनाई ॥ हल्के हल्के पार उतरगये, बूडे जो गरुवाई ॥ जैसे मिरगा नाद धुनि सुनके, प्रान तजतहै भाई ॥ ऐसे मीन मरै विन नीरा जलबिन रहो नजाई ॥ लागी छाप भक्ति निरभयकी, अब ना दूरदुराई ॥ कहै कबीर छूटै ना कबहूं, ऐसी अटल सगाई ॥

शब्द २६६—बानेका मरद दुहेलाहै ॥ टे० ॥ आगे चले पाछे ना चितवे, सोई शूरोंका मेलाहै । चढ़े तुरंग जब बाग सँवारे, कूदपरे रन पेलाहै ॥ गहै टेक छूटै ना कबहूं, भगति हंसी ना खेलाहै ॥ कहै कबीर सुनो भाइ साधो, सो सतगुरुका चेलाहै ॥

शब्द २६७—अबकी भली बिमाहन बनगई ॥ टे० ॥ जनम जनमके टोटा बाढो, नाम नफा गुरू करदई ॥ दीपक बार दिये मोहि सतगुरु, बस्तु अगोचर मिलगई ॥ दुष्ट जगाती निकट न आवे, अटल छाप गुरु कर दई ॥ कहै कबीर सुनो भाइ साधो, सकल भरमना मिटगई ॥

शब्द २६८—अपने घट दीपक बासरी ॥ तत्त्वको तेल दयाकी बाती, ब्रह्म अगिन उजासरी ॥ टेक ॥ निरमल जोत-निहार गगनमें, तन मन धन सब वाररी ॥ सुरत सोहागिन जोग ध्यानमें, गुरुगमपंथ सुधाररी ॥ काम क्रोध मद लोभ मोहकी, झोंको ये सब भाररी ॥ कहै कबीर सुनो भाइ साधो, अपने कंथ निहाररी ॥

शब्द २६९—काह कहों अनकही भलीहै॥ टे० ॥ उहवां वेद शास्त्र कछु नाहीं,उहां अकथ ईहां कथा चलीहै॥ जहवां मूल बीज कछु नाहीं, ना तरवर ना सुमति फली है॥ जहवां नहीं घाट औघट, ना खेवट ना तीरसई है॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, सोहै हंसा सर्व मई है॥

शब्द २७०—कैसे कैसे मिलाव बालम परदेसिया, रोकत दोय दरवानीहो॥ टेक॥ पांच पचीस बैठे रखवरिया, इन मोरी राह बिगारीहो ॥ दिल ना चैन रैन निश बासर, अपने अपने बारी हो ॥ नैन हमार महादारुनहै,स्वास-स्वास जमुहाईहो॥ जबजब करव प्रीतमसो, गहगह पल-कन पारीहो॥ दसहुं द्वार रोक जम बैठे, सुमति किंवाड लगाईहो॥ जिन दुख दीन्ह मान गढ ऊपर, पकर जंजीर भराईहो॥गहो गुरु चरन दया कर उपजे, ज्ञानके खरग बनाईहो॥ होय निहशंक नाम गुनगावे, ममता दूर बहाईहो॥ अर्ध उर्ध बिच तार लगाई, जहवां सुरति समाईहो ॥ कहें कबीर या घरका भेदी, बहुर न भौजल आईहो ॥

शब्द २७१—गांठपरी पिया बोले न हमसे॥टेक॥ नित-उठ देखों पिया तुम्हरी सेजरिया, लगगई नींद निकस गये घरसे॥ जो मैं जानति पिया रिसियैहैं, काहेको प्रीत लगाती ऐसे ठगसे॥ अपने पियाको फेर मनाऊं,

सों नकसीर होत हरिजनमें ॥ धर्मदासकी अरज गोसांई, साहेब कबीर पिया पाये बडे तपसे ॥

शब्द २७२-कैसे बोले अधरमें बोलवारे ॥ टे० ॥ या बोलवाके सकल पसारा, घटघट करत किलोलवारे ॥ या बोलवासे तीन देव भये,ब्रह्मा विष्णु महेशवारे ॥ या बोलवासे तीन लोक भये, चंद सूर तारागनवारे ॥ कहें कबीर बोलवाको चीन्हे, उतर जाय भौपरवारे ॥

शब्द२७३-ऐसी लगन लगाय कहां जासी ॥ टेक ॥ मूढ सुवा सेम्हर एक भयो, छांड चला संग साथी ॥ फूल झरे जबही फल लागे, सुवना भये हुलासी ॥ चोंच मार सुवना पछताने, लाग गले बिच फांसी ॥ हमतो जाने अमृत फल हैं, लालफूल विसवासी ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सुवना भये निरासी ॥

शब्द २७४-को सिखवे अधमनको ज्ञाना॥टे०॥ जहांसे आया ताहि बिसराया, फूटी आंख भयो निज काना ॥ गुरू साधकी कही न माने, चाहत है हमरो परवाना ॥ गीता और भागवत बांचे, ना लागे गुरु उनके काना ॥ मारहिं मार होरहे जमद्वारे, साहेब कबीर देख मुसकाना ॥

शब्द २७५-बिन सतगुरु नर फिरत भुलाना ॥ टे० ॥ एकके हरिसुत लाय गडरिया,पोष पालके कियो सयाना ॥ रहत अचेत फिरत अजयन संग, अपना हाल उनहु ना जाना ॥ एक केहरि सुत आय जंगलसे, देखत ताहि

बहुत सकुचाना ॥ बकरन भेद तुरत उन दीन्हा, आपन दशा देख मुसकाना ॥ मिरगा नाभि बसे कस्तूरी, वह मूरख ढूंढत चौगाना ॥ करत सोच पछतात मनहिं मन, यारे सुगंध कहांसे आना ॥ अरध उधर बिच डोरी लागी; रूप छका गहिं जात बखाना ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, उलटा राह सूत हम ताना ॥

शब्द २७६–बाबुल मरियो हो दइयामारे, कूरको दीन्ही ॥ टे० ॥ कूर अरोसी कूर परोसी कूरे भई सगाई ॥ कूरे कूर बराती आये, कूरे मिले संघाती ॥ अकवारेमें गदहा दीन्हे, द्वारे दीन्हे घूस ॥ मंडवातरमें दीन्हु लुख-रिया, लंबीलंबी पूंछ ॥ दाल बनाये भात बनाये, बरा बनाये कच्चे ॥ सबे बराती जेवन बैठे सारसकेसे बच्चे ॥ मंडवौ जरगै दुलेहो मरगै, दुलही भई अहवाती ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, नाचत चले बराती ॥

शब्द २७७–जियरा पराये बसनमें ॥ टे० ॥ सास ननद मोरी जनम कि बैरन चरचाकरे दसनमें ॥ काम क्रोध मद लोभ मोह बस, नफा नहीं है इसमें ॥ पांचपचीस घटभीतर, टरे नहीं निश दिनमें ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, सतगुरु चरन हियेमें ॥

शब्द २७८–निश बासर मोहिं नींद न आवे, लगा शब्दका तीराहो ॥ टे० ॥ गांसी मागी सारशब्दकी, बिध-गइ सकल शरीराहो ॥ अंतरधान भये जब सतगुरु,

छिनछिन व्याकुल शरीराहो ॥ अब यह प्रान कौन विधि राखों, कठिन विरहकी पीराहो ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, गुरुके चरन होय धीराहो ॥

शब्द २७९.—नाम अमल कहां पाये हो देखो देखो सखीरी ॥ टे० ॥ सोवत थी मैं लोभ मोहमें, ज्ञानके दृष्ट जगायेहो ॥ विषकी लहर उठी घट भीतर, अमृत बूंद चुनायेहो ॥ बंदी छोर मुकतिके दाता, जीवन बंध छुडायेहो ॥ साहेब कबीर मिले गुरु पूरे, तनके तपन बुझायेहो ॥

शब्द २८०—जिनको लगी शब्दकी चोट ॥ टे० ॥ का बरछी का छुरी कटारी, का ढालोंकी ओट ॥ का नदिया का कुवा बावडी, का खाईका कोट ॥ का भाई का बाप महतारी, का तिरिया का सोच ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, बचे गुरुकी ओट ॥

शब्द २८१—दिलकी गुढिया, खोल सतगुरु भला करेगा ॥ टे० ॥ पांच तत्त्वकी या तन गुढिया, लगी पवनकी डोर ॥ इस गुढियामें दस दरवाजा, जतन जतनसे खोल ॥ इस गुढियामें लाल अमोलक, वे प्रमान तामोल ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, बांध अगमकी डोर ॥

शब्द २८२—सुरत मतवाली राजा मोहिलिया ॥टे० ॥ शील दयाका बना घाघरा, तत क्षमाकी सारी ॥ त्रिगुनतारकी अंगिया सोहै, तापर भौंर गुंजारी ॥ करकंकन बाजूबंद सोहै, दुलारी दया सँवारी ॥ हिये हार हिरदे

बिच सोहै, जेहर शब्द अगारी ॥ रतन जतनके महल बनाहै, सुक्रित लगी किंवारी ॥ भौंर गुफामें सेज बिछीहै, पौढी सुषमन नारी ॥ अपने पियाको सनमुख देखों, भर लोचन अधिकारी ॥ कहें कबीर भरम जब छूटे, उपजे भगति करारी ॥

शब्द २८३–बोलन लागी तूती सांची बोल ॥ टे० ॥ दया धरमकी या तन कुंडी, तापर करत किलोल॥भूल-गई सब झूठी बतियां, अब जो भई अनमोल ॥ सत्त-नामकी सांची मिसरी, पी गइ जलमें घोर ॥ सुरति निर-तिके बने पायडे, आड़ा सुरति अडोल ॥ अष्टकमल ये आठ पंखुरी, दस खिरकी भइ गोल॥ छुटगौ तूती गर-भ बसेरा, मिटगये डामाडोल ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, अबका तेरो मोल ॥

शब्द २८४–लोगवा मतलबके गरजी, अब मोहि जानपरी ॥टे०॥ जौलौं बैल लदे बनियांके, तौलौं चाह धनी ॥ थकित भया कोइ बात न पूछे, फिरता गली गली॥मोह भरमसे सती होत है, पियके फंदपरी॥हरदम साहब ना पहिचाना, मुरदा संग जरी ॥ हरे वृच्छ पंछी दोय बैटे, किया मनोरथकी ॥ पंछी उडगये पत्ता झरगये, यही गीत है जगकी॥कहें कबीर सुनो भाइ साधो, मनसा विषैभरी ॥ मनुवा तो कहुं अंते डोलें, जपता हरीहरी ॥

शब्द २८५–हरत मूल ठिकाना जानो। ताहि चीन्हके

डोर संभारो, दिव्य दृष्टि पहिचानो ॥ टे० ॥ का भय पिंड ब्रह्मंडके खोजे, का भय पवन चढाये ॥ का भय त्रिकुटी ध्यानके कीन्हे, का भय भँवर गुफाके पाये॥ वह सो भवन सो न्यारा, कायासे भिन्न पसारा ॥ मूलडोर पुरुष सहिदानी, हंसन करे उबारा ॥ बिन गुरु गम शिक्षा ना पावे, फिर काया ठहरावे ॥ जो लग संधि हाथ ना आवे, तो लग भटका खावे ॥ गुरु जौहरी भेद बतावे, औघट घाट लखावे ॥ सुरति निरति औ शब्द सहायक, गुरु-मुख लोक सिधावे ॥ कोट ज्ञानसो भिन्न पसारा, कहों मूल निज बानी ॥ जहि प्रतापसे हंसा बांचे, सोहै अगम नि-शानी ॥ मूल ज्ञान सबहीं सो न्यारा, संत लेव पहिचानी॥ कहैं कबीर धर्मनि निजमानो, मिटै नरककी खानी ॥

शब्द २८९—अनुरागी निरगुन जोखो हो । जो तुम सुकित अंश हमारे, यह निजज्ञान समोखोहो ॥टे०॥ वह सकल घट व्यापक, घट घट रहो समाई ॥ उठत राग अनुराग सरूपी, ताको लखो बनाई ॥ जहां मूल उबार होत है, बिगसित मधुरी बानी ॥ गरज घुमड अंजोर होत है, चूवत फुही अघानी ॥ अगम पंथ जहां पांव टिके नहिं, सो मारग है झीनी ॥ तिल प्रमान जहां लगी किंवारी, तहां सुरति गम कीनी ॥ जब वह मारग प्रगट उघरि है, सुनो अमरकी बानी ॥ कहैं कबीर धर्मनि निज-मानो, मिटे नरककी खानी ॥

शब्द २८७–निजगत कहिये साहब मोही॥ गुन निरगुन दोनोंकी महिमा, बूझत हौं गुरु तोहि॥ टे०॥ को निरगुनको सरगुन कहिये, को करंत को करता॥ लख चौरासी जियाजूनमें, सर्व मई होय बरता॥ सुनो संत निरगुनकी महिमा, बूझे बिरला कोई॥ तिरगुन फांसमें सबे फंदाने, सुर नर मुनिवर लोई॥ आदि ब्रह्म निरगुन निहअच्छर, सो सबहीसे न्यारा॥ सरगुन सकल व्यापक है माया, ये उझले व्यौहारा॥ गुरु कबीर तव चरन मनाऊं, सब संतन सिरताजा॥ धरमदासपर दयालु कीजे, बांह गहेकी लाजा॥

शब्द २८८–समुझ बिन लाज नदीमें बोरे। जहां लाज तहां नेह न उपजे, शील समाधी फोरे॥ टे०॥ संकुच सनीप हीनता घेरे, मन मलीन झकझोरे॥ क्रोध अगिन मोह घन उपजे, ममता मंडल घेरे॥ लाज लहरकी उठे तरंगा, बिरह बूंद विष घोरे॥ लाज समाय कुमत झरबरसे, कुपथ कुसंगत डोले॥ ज्ञान देशकी राह बिसारे, सतसंगत हित फोरे॥ सतगुरु खोज लाज तज दीजे, बीरघटा मन मोरे॥ कहैं कबीर सतसंगति कीजे, सुमति तरंग हिलोरे॥

शब्द २८९–जतन बिन तन अभिमान उजारे॥टेक॥ ताते कीजे शील किंवारी, मन बद लहर निवारे॥ ममता मान महातम भारी, बिरह बान फटकारे॥ बरषत

काम घट अंधियारी, लाजित मुख विध टारे ॥ हांक डांक माया मद गरजे, जटाझार झर डारे ॥ डमडम गावे असत जगावे, लालच लहर फंवारे ॥ चारमास चार पन बरसे, त्रिगुन तत्त्व गुन डारे ॥ पांचो तत्त्व पांच रंग बरसे, पनपन रंग किनारे ॥ बाल किशोर तरुन वृद्धापन, पल-पल चढत उतारे ॥ रंगकी लहर तरग फुँहारे, सरसंधान संभारे॥प्रेमभक्ति लौलीन रहे मन, सुरति निरति संभारे॥ कहें कबीर जो सतगुरु सेवे, सो अभिमान बिडारे ॥

शब्द २९०-जतन बिन मोह दोहाई पारे ॥टेक॥ पशु पंछी सुर नर मुनि गंधर्व, मोहफांस ना टारे ॥ मोहमहा मद बिरह त्रिफागी, समना धीर बिडारे ॥ मन मकरंद कंद सबहीके, रज तज बिरस सुधारे ॥ लालच ललित कुपंथ कुबानी, कुकरम कुमति पसारे ॥ लाज सकुच तृष्णाके बांकुरी, सत्य सुमति मतवारे ॥ पाखंड हेत कठोर मूढमत, शीलकी रास बिडारे ॥ जड अज्ञान दृशा अतिचंचल, क्षमा धीरज झझकारे ॥ सतगुरु साज शब्द सरसाजे, मोह बांकुरी फारे ॥ कहें कबीर सतगुरु पद-परसे, आप तरे औ तारे ॥

शब्द २९१-जतन बिन मिरगोंने खेत उजारे । पांच मिरगवा, पचीस मिरगनी तामे तीन शिकारे ॥टे० ॥अपने अपने रसके कारन, चरतहैं न्यारे न्यारे ॥ अति बलवंत बड़े ना काहू, बिडरत नांहि बिडारे ॥ तन कर बारी मन

कर बिझुका, गुरुका शब्द रखवारे ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, मानो शब्द हमारे ॥

शब्द २९२—पतिबल जनके मोह निवारे छाडो दुख जंजाल सुमतिधर, माया मदहिं बिसारे ॥ टे० ॥ मोह तजे निरमोही होवे, मोह फंद सब टारे ॥ तजे प्रपंच जोग तप पूजा, तीनों ताप संभारे ॥ तीरथ बरत प्रतिमा अस्थापन, डिंभ कपट सब जारे ॥ तज प्रपंच बिकार बाजी सब, जंत्र मंत्र बिसारे ॥ विद्या वेद पुरान नाद मद, छंद बंद निरवारे ॥ नट नाटक तज भगति अराधे, तीनों पछ उबारे ॥ चार अचार वरन आश्रम तज, केवल भक्तिसुधारे ॥ कहैं कबीर सतगुरु बल बांचे, उतरि जास भौ पारं ॥

शब्द २९३—अपना काम संभारो भाई । सतगुरु शब्द गहौ चितलाई ॥ टेक ॥ मन औ काम कालके फंदा, एही फंदो संसारा ॥ बिरला संत कोउ काम संभारो, पहुंचे लोक मंझारा ॥ नारी अपनी नार पराई, नार नार सब एका ॥ अपनी नार दोष कछु नाहीं, सुक्रित करो विवेका ॥ नार पराई अपनीके देखे, सो नर पार न पावे ॥ पूरे ठीक पिंडसे छूटे, चौरासी भरमावे ॥ नार पुरुष हमही रच लीन्हा, जीवन जुगन बँधाया ॥ कहैं कबीर कोई संत विवेकी, तनके काम नहाया ॥

शब्द २९४—तेरी काया मद्धे सार । सतगुरु पाया दीन दयाल ॥ टे० ॥ इस बोलतेका खोज करना, जीवतेही

उलटा मरना काहेको जमडंड भरना ॥ उत्तर पैले पार ॥ महलकी जब सुधपाई, चीन्ह लीन्हा प्रान भाई ॥ अनंत मूरत दिष्ट आई, होगये निहचल मिटे दुचिताई ॥ ऐसा तत्त्व विचार ॥ कंद भीतर नाद गाजे ॥ जरा मरन उपाधि भाजे ॥ सुन्नमहलमें उनमुख साधे ॥ पावे पद निरबान ॥ ये तीनों है जमकी बाजी, अगम पंथ बैठे अबिनाशी ॥ कहें कबीर सुन गोरख जोगी, चीन्ह ता निजसार ॥

शब्द ७९७–साहब ऐसा अपरंपार जाका सत्यशब्द आधार ॥ टे० ॥ ब्रह्मा जाको खोजत धावे । बेद किताब पार नहि पावें । सुर नर मुनि बहुते पछतावे ॥ अस्तुति करे पार ना पावे । बिना बिवेक बिचार ॥ पिंड ब्रह्मंड कथे ब्रह्मचारी । जबलग कायाके मंझारी ॥ काया जरबर होवे छारी । जाके आगे बस्तु अपार ॥ पावे तन मन पार ॥ षट दरशन मिल कथे जो ज्ञाना । अस्थिर घरका मरम न जाना ॥ फिरफिर जोनी आय तुलाना । जमके हाथपरे पछताना ॥ किया न तत्त्व बिचार ॥ जो लग रहे कामिनि अरधंगा । चरचा करे कोधके संगा ॥ इनमे भक्ति होत है भंगा ॥ जोलग नहिं पांचो एक संगा ॥ छूटे न कपट लबार ॥ ये तीनों परपंची देवा । जीव लगावे अपनी सेवा ॥ करे प्रपंच लखे ना भेवा । उन जीवनको लगे न खेवा ॥ बूडे कालीधार ॥ जहां नहीं मन मनसा दोई । आशा तृष्णा लखे न कोई ॥ पाप पुन्य तहां एक न

होइ । निरभय नाम जपो नर सोइ ॥ छूटे सकल विकार ॥ सतगुरु मिलैं तो लागे तीरा । जम जालिमके मेटे पीरा ॥ हंसा होय ऐसे मतके धीरा । निरभय पद सतनाम कबीरा ॥ आवागमन निवार ॥

शब्द २९६–ऐसा जानता कोई ख्याल ऐसा ॥ टे० ॥ धरती बेध पतालहिं जावे । शेषनागको बसकर लावे ॥ बासुक अहै सत्यका सारा । निश बासर जाका बिस्तारा ॥ कमठ पीठपर साल ॥ पूरबमें पछमको लावे । अंधाधुंधका भेद मिटावे ॥ दच्छिन शिला द्वार दे राखा । उत्तर दिशा सजीव न चाखा ॥ चार दिशाको हाल ॥ दिनके सोध रैनमें लावे । रैनके भीतर भानु जगावे ॥ भानुके भीतर शशिका बासा । शशिके भीतर दिवस प्रकाशा ॥ ता बिच सार न तार ॥ नौको सो ध सिलसिला लावे ॥ एक बार सुमेर डुलावे ॥ मेरु दंडपर आसन लावे । मन मुख धागा सुरति गहावे ॥ गगन गुफाके हाल ॥ गगन गुफामें अति उजियाला । अजपा जाप जपे तहां माला ॥ बीना शंख सहनाई बाजे ॥ चहुँदिश राय निरंजन गाजे ॥ हीरा जनम मोहाल ॥ कहें कबीर कोई बिरला पावे । जाको सतगुरु अलख लखावे ॥ क्षमा शील संतोष समाई । दया गरीबी आवे भाई ॥ सो चले हमारे नाल ॥

शब्द २९७–शब्द जहाज चढो रे मन भाई ॥ टे० ॥ कर करतासे कौल गरभमें लिया बसेरा ॥ माताको दुख

दिया मास नौ रहा अकेला। शिर नीचे पग ऊपरे ॥ करतामें करे पुकार ॥ त्रिगुन फंद निरवारो स्वामी । अब ना आऊं यह देश गोसाई ॥ बालापनमें भूल नाम, हिरदे ना लीन्हा ॥ तरुनापन जब लगा, मोह त्रियासे कीन्हा ॥ आये बुढापा बावरा मुखमे कहे न नाम ॥ तीनोंपन ऐसेमें खोई, नर देही बेबाद गवाई ॥ भगति करे कछु आपतरे, औरनको तारे इतनी मनकी दौर ॥ दरशन मिले न साधको, निशदिन रहे उदास ॥ ले बैठारो अजर अमर घर, बहुर न आऊं यह देश गोसाई ॥ धर्मदासकी बीनती, सुनियो सत्त कबीर ॥ एक बार एको ना रहिहै, फिर करता कछु और उपाई ॥

शब्द २९८–चेत सबेरा चलना बाट । यह जग देखा झूठा ठाट ॥ टे० ॥ चलनेकी तजबीज न कीन्हा । मजलोंकी खरची ना लीन्हा ॥ अच्छी राह ताहि ना चीन्हा। अब का सोता गाफल खाट ॥ चंचल मनका घोडा कीन्हा । ज्ञान लगाम ताहि दे दीन्हा ॥ होय होशियार बाग गहि लीन्हा । भौसागरके चौडा पाट ॥ मित्र कुटम कोई ना तेरा। यह सब है स्वारथका बेरा ॥ यहां नहीं तेरा निहचल डेरा । इनसे चलना बेग उचाट ॥ मगमाहीं ठगबाग लगाया । वह तंबूसा छप्पर छाया ॥ और नको ठग लड्डू लाया ॥ मारलिया स्वादोंका घाट ॥ तन सरायमें मन अरुझाना, भटयारीके रूप लुभाना ॥ निश

वासरसो मनमें दीन्हा । सौदाकर सतगुरुकी हाट ॥ कहैं कबीर दयासे पावे । अपनो ज्ञान तोहि समुझावे ॥ तेरे भलेकी राह जनावे । जम कूचलकी पेंच न आवे ॥ बार-बार कहों तोसे डाट ॥

शब्द २९९-मन नेकी करले दो दिनका मिजमानरे ॥ टे० ॥ जोरू लडका कुटम कबीला, दोदिनका तन मनका मेला ॥ अंतकाल उठ चला अकेला ॥ तज माया मंडानरे ॥ कहांसे आया कहां जायगा, तन छूटे मन कहां समायगा ॥ आखिर तुझको कौन कहेगा, गुरु बिन आतम ज्ञानरे ॥ कोन तुम्हारा सच्चा सांई, झूठी है यह सकल सगाई ॥ कहां मुकाम कहां ठिकाना, का वस्ती का नाम रे ॥ रहट माल पनघट जो भरता ॥ आवत जात भरा औ रीता, जुगन जुगन तू मरना जीता ॥ क्यों करता अभिमान रे ॥ लाख चौरासी छेवे तासा, ऊंच नीच घर लेता बासा ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, जपना गुरुका नामरे ॥

शब्द ३००-मन मौला जाने गुजर गई गुजरानरे ॥ टे० ॥ कोइ दिन रूखा सूखा रांधा । कोइ दिन दूध मलीदा छांदा ॥ कोइ दिन पत्रपरायल कांदा । कोइ दिन रहैं हैरान रे ॥ कोइ दिन शाल दुशाला अंगे, कोइ दिन फाटे टूटेनंगे ॥ कोइ दिन खासे रंगे चंगे, कोइ दिन तोरे तान रे ॥ कोइ देवल कोइ दिन महजित ॥ कोइ

दिन बाग बगीचा वाडी, कोइ दिन रहे वृच्छकी छांहीं ॥ कोइ दिन रहे मैदानरे ॥ हिलमिल रहना देके खाना ॥ नेकी बात सिखाते रहना ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधो, जपना निरगुन नामरे ॥

शब्द ३०१–मारगमें लूटै पांच जनी ॥ टे० ॥ पांच पचीसने रोके बाटा, साधू चढगये औघटघाटा जाय लिया उन उबट बाटा, जो न उबारो आप धनी ॥ आशा तृष्णा नदिया भारी, बहिगये संत बडे ब्रह्मचारी ॥ जो उबरे सो शरन तुम्हारी, शिरपर चमके सेल अनी ॥ संकट लूटे नेजाधारी, उनकी रइयत कौन बिचारी ॥ त्रिदेवा लूटे सब झारी, चमके निरगुन तीन अनी ॥ बनमें डसलिये मुनिजन नागा, डसलियो ममता उन उठ भागा ॥ जाके कान गुरू ना लागा, शृंगीऋषि सो आनबनी ॥ मारग बांका पंथ दुहेला, रामानंद कीन्हें तहँ मेला ॥ साहब कबीर देत जहां हेला, सुनिये सिरजन आप धनी ॥

शब्द ३०२–देखके मगन भये गगन बहारवा ॥ टे० ॥ रतनसिंगासन पुरुषबिराजे, कोट भानु छबि निरखत लाजे ॥ माथे क्रीट मनोरथ राजे, चात्रिक भई लख दरस अपार वा ॥ बिनरग निरत होत जहां रुमझुम, घुंघुरु बाजे छुमछुम ॥ ताथेइ ताथेइ नाचे ठुमठुम, तबला बाजे घुमघुम घुमघुम ॥ उठत राग छत्तीस उचरवा ॥ अरर अरर

जहां अरबी बाजे, झरझर झरझर झालर साजे ॥ किडधो किडधो नौबत गाजे, शब्द सोहावन मुरली बाजे ॥ सहनाई सुर बजत बिशालवा ॥ भरो अमोलक अमी-सरोवर, पीवत हंसा करे कुतूहल ॥ लगी सुधा जहां झुरझुर झुरझुर ॥ मन भौंरा जहां करत गुंजारवा ॥ लीला देख भयो मन अस्थिर ॥ विषय बासना छूटी ततपर ॥ मोती दास कहें धनधन सतगुरु, उलट अभी पी पायो निजघर ॥ सत्तनाम सोई है निज सारवा ॥

शब्द ३०३—मनुष तन पायके तुम । भजलो सिरजन हार ॥ टे० ॥ कैसे रहे अचेत कबै फिर औसर पैहो ॥ फिर न मिले ऐसो दाव, बहुर पाछे पछतैहो ॥ लखचौ-रासी जियाजूनमें, मानुष जन्म अनूप ॥ ताहि पाय चेतत नाहींरे, कहा रंक भूप ॥ गरभ बासमें कौल किया मैं, भजिहौं तोही ॥ निशदिन सुमरों नाम, कष्टने काढो मोही ॥ एक नामको जानके, रहों नाम लौलाय। नेक न तोहि बिसारिहौं, या तन रहेकी जाय ॥ इतना किया करार काढ प्रभु, बाहर कीन्हा ॥ भूलगये वह-बात भये माया आधीना ॥ भूली बतियाँ वा दिनकी, आयगई मत आन ॥ बाराबरसनो ऐसे बीते, खेलत फिरत नदान ॥ तरुनापन जब लगा, देह जोबन मद-माता ॥ चलत निरारे छांह, तमकके बोले बांता ॥ चोवा चंदन लायके, पहिरे बसन बनाय ॥ गलियारे

झांखत फिरे, परत्रिया देख मुसकाय ॥ तरुनापन गये बीत, बुढापा आय तुलानो ॥ कंपन लागे शीश, चलत दोय चरन पिरानो ॥ नैन नाशिका चूवन लागे, मुखसे न आवे स्वास ॥ वात कफने घेर लिया है, छूटगया तन आश ॥ माता पिता सुत नार, कहो काके संगलागी। तन मन धन वरजत नहिं, कामिन होन सुभागी ॥ एकदिन काल गरासई, परिहो जमके दाव ॥ विन सतगुरु ना बाँचहू, कोटन करो उपाव ॥ सुफल भई या देह, नेह साहेबसो कीजे ॥ सतगुरु दाता आहि, मुक्तपद उनसे लीजे ॥ सुफल भई मनकामना, सुमरन लागे पीर ॥ यह लीलाहै मुक्तिकी, गावे साहेब कबीर ॥

शब्द ३०४—का सोचत बारमबारा, प्रभुका नाम न लेत गँवारा॥टे०॥बाजीगर डंक बजाया, सब लोग तमाशे आया॥बाजीगर डंक सकेला, तब रहगये आप अकेला ॥ मनुवां जहां हाट लगाया, दुनियां सौदागर आया ॥ सौदागर सौदा कीन्हा, बिरले सौदागर चीन्हा ॥ जब पार उतरना चहिये, तब खेवटसे मिल रहिये॥ जब उतरगये भौपार, तब को हमको संमारा ॥ जब वस्तु अगोचर चहिये, तब दीपक बारत रहिये ॥ जब वस्तु अगोचर पाई, तब जोतमें जोत समाई ॥ जब मुखड़ा देखन चहिये, तब दरपन मांजत रहिये ॥ जब दरपन लागी काई, तब दरशन कहांते पाई ॥ जब फूल पत्र फल

चहिये, तब बिरवा सींचत रहिये ॥ जब फूल पत्र फल लागा, तब दिलका दुविधा भागा ॥ साहेब कबीर कहे हम जाना, जानेसे मेरा मन माना ॥ कहनेसे नांहि पतीजे, तो मूरखसे का कीजे ॥ ❀

शब्द ३०५–कोई लोढ़ेरे संत सुजान. काया बन फूल रही ॥ टे० ॥ एकहि एक मिले गुरुपूरा, मूलमंत्र जो पावे ॥ साधु संतकी बानी बूझें, मन परतीत बढावे ॥ दूजे तनकी दुविधा मेटे, दूजा भाव न लावे ॥ भीतर बाहर एक देखे सो वह संतहिं पावे ॥ तीजे तीनों गुनसे न्यारा, तिरबेनी अस्नाना ॥ त्रिकुटी महलमें आसन मारे, अनहद धुन सुन काना ॥ चौथे चंचल बसकर राखे, चतुराई सब त्यागे ॥ चढके प्रेम हिंडोरा झूले, गुरुसो भगति बरमांगे ॥ पांचे पांच तत्त्व प्रकासे, पांचो इंद्री साधे ॥ पकड पवनका परचे करके, मनओ पवन गहि बांधे ॥ छठयें छऊ चक्रको बेधे, षट दल होय प्रकाशा ॥ इंगला पिंगला मारग सोधे, करे गुफामें बासा ॥ साते सत बचन परकासे, सत्य सुरत लखि आवे ॥ मकरतारकी डोरी गहिके, अजर अमर घर पावे ॥ आठे अष्ट कमल दलफूले, घट उजियारी होई ॥ आतम होय परमातम चीन्हे, संत कहावे सोई ॥ निरख देख नोमीके द्वारा, जब गुरु पूरा पावे ॥ अट्ठे संधि कायासे न्यारी, जो गुरु संधि लखावे ॥ दसएँ दसो द्वारको पावे, पढले एक पहारा ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, बहुतन साधो आरा ॥

शब्द २०६—दोय नैनोंके बीच मुसाफिर रमरहुरे ॥ ॥ टे० ॥ धोबी धोवे कापडा, झांझ मऊके घाट ॥ मछरी साबुन ले गइरे, धोबिया गा बारहबाट ॥ धोबिनियां लुट गइरे, ॥ कोठी ऊपर कोठरी, जहां चढ बोले मोर ॥ मोर बिचारा का करे, घरमें घुसगा चोर ॥ सबी धन लुटिग- योरे ॥ सराक कुवा पताल जलपानी, लंबी लागी डोर ॥ थरहर कंपे बाला जियरा, को प्रेमी लेत निचोर ॥ सुघर घर होय रहोरे ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, सौदा करले हाट ॥ हाट उसलगये सोदा बिक गये, होगये बाराबाट ॥ जहांके तहां होय गयोरे ॥

शब्द २०७—मिलना कठिन है मैं कैसे मिलों पियजाय ॥ टे० ॥ अगम भूमि जहां महल पियाको, हमपे चढ्यो न जाय ॥ औघट घाट गैल रपटीली, पांव नहीं ठहराय ॥ साधसाध पगधरों पंथपर, बारबार डिगजाय ॥ अति बारीक पंथ बहु झीना, सुरति झकोरा खाय ॥ लोकलाज मरजाद जगतकी, देखन मन सकुचाय ॥ जो या बात नये जोबनकी, लाज तजी ना जाय ॥ दूजे सतगुरु मिले पंथपर, मारग दिये बताय ॥ साहेब कबीर मुक्तिके दाता, शीतल अंग लगाय ॥

शब्द २०८—सोहागिन चेतकरो तोरे आवागमन नगि- चाय ॥ टे० ॥ बालापनमें खेल गँवाये, चलिया चाल कुचाल ॥ कोन जवाब देहु मोरि सखियां, साहेब पूछ

हवाल ॥ समुझ बिनका करवे ॥ सतसुकृतकी चूनरि पहिरो, सत मत रंग रंगाव ॥ प्रेमतत्त्वके मांग सँवारो, निरभे सिंदुर लाव ॥ घुंघुट पट खोल चलो॥ सुरत संभार चलो तुम ससुरे, नैहर नाहिं निबाह ॥ नैहर नेह पैहों सखियां, मत तुम भरम भुलाव ॥ भुलाने पिया ना पैहो ॥ आगे इत भौसागर गहिरा, सूझे वार न पार ॥ किस बिध पार उतरबे सखिया, बिन खेवट कडिहार ॥ खेव-इया बिनका करबे ॥ कहें कबीर सोई सहवानी, पिय-रंग राजी होय ॥ अमरलोक अस्थाना पावो, तब तोर अटल सोहाग ॥ मंडल बिसराम करो ॥

शब्द ३०९—सबका साक्षी मेरा सांई। ब्रह्मा विष्णु रुद्र ईश्वरलो. औ अव्याकृत तांई ॥ टे० ॥ पांचपचीस सो संचै करले, ये सब जग भर माया ॥ अकार उकार मकार मात्रा, इनके परे बताया॥ जागृत सपन सुपोपत तुरिया, इनते न्यारा होई ॥ राजस तामस सात्विक त्रिगुन, इनते न्यारा सोई॥ सूछम अस्थूल आनंदमय कहिये, इन मिल भोग बखाना ॥ राजस तेज प्रकाशहि कहिये, इनते न्यारा जाना ॥ परा पसंति मधमा बैखरी, चौबानी प्रपंच प्रमानी ॥ पंचकोश नीके कर देखो, इन मो राम न जानी ॥ पंचज्ञानके पंचकर्म हैं, दस इंद्री मानो ॥ चतुष्ट अन्तहकरन बखाने, इनमो राम न जानो ॥ कुर्मनेष किरकला धनंजय, देवदत्तहू देखो ॥ चौदा देव इंद्रिया

चौदह, इनमें अलख न पेखो ॥ तत पद त्वं पद और असि पद, वाच्य लच्छ समुझावें ॥ कहैं कबीर सोई गुरु पूरा, न्यारा कर बतलावें ॥ पं ॥

शब्द ३१०—सब औगुनका शिर अभिमान। तेउ न मूढ तजे अज्ञान ॥ टे० ॥ राजस जग्य नृपतिने कीन्हे, सुर नर मुनि अचवें जल पान ॥ संख पंचायन तबहीं बाजे, सुपचभगत रस लीन्हों सान ॥ यही चूक बलि गये रसताल, मारे बान एक सर तान ॥ यही चूक चूके लंका-पति, काटे शिर दशरथ सुत आन ॥ दुर्योधनके मेवा त्यागे, दासी सुत घर गये भगवान् ॥ झूठे बेर सेवरीके खाये, प्रेम प्रीत हित अपने जान ॥ शुकदेव मुनिसे को बड होई, इंद्री जीत विष डारे छान ॥ बैकुंठहुमें आदर नाहीं, कृपा भई न सुने गुरुज्ञान ॥ जोग जग्य व्रत तप कर संयम, चार वेद औ सुने पुरान ॥ कहैं कबीर थीर नहिं लागे, जौ लग संत नहीं पहचान ॥

शब्द ३११—धनहो धन्य बलखके मीरा । अपने जीव मुक्तिके कारन, सब तज भये फकीरा ॥ टे० ॥ तखतहु छोड दुलीचा छोडा, अंमारीके मीरा ॥ कोटन कोट खजाना छोडा, लाल जँवाहर हीरा ॥ जाके पग दुरमनसे मलते, ऐसे नरम शरीरा ॥ बिन पादत्रान बन बन डोले, कसकत नहीं शरीरा ॥ सोरा सहस सहेलरि छाडे, खासा मखमल चीरा ॥ तुरी लाप अठ्ठारा छांडे, लगा शब्दके

तीरा ॥ धन्य तुम्हारे मात पिताको, जाके पिये तुम छीरा ॥ धन तेरी करतूत कमाई, धन तेरे गुरुपीरा ॥ ज्योंहारिल लकरीको पकरे, यों मत गहिर गंभीरा ॥ कहैं कबीर ऐसी लौलावे, साहेब हाल हजूरा ॥

शब्द ३१२–सुलतान सो बलकबुखारेका । जाके खाना अजब सरहना, मिसरी कंद छोहारेका ॥ टे० ॥ जाकी सुरति लगी कदमसो; अल्लह पीर पियारेका ॥ जाके सेज फूलसो बिछती, करते सुख तन सारेका ॥ अबतो घास बिछावन लागे, मुठी एक गलियारेका ॥ जाके संग कटक दल बादल, झंडा न्यारे न्यारेका ॥ माल मुलक तज लई फकीरी, धन सो कीन्ह बिचारेका ॥ जो तनके चोला जोबनते, सवा टंक सब सारेका ॥ सो तो बोझ उठावन लागे, मन दस गूदर भारेका ॥ जा मुख चीज नेवाला खाते, करते जीव अहारेका ॥ सो अब रूखा पावन लागे, टुकरा शाम सकारेका ॥ आद मसे होगये औलिया, एक शब्द निरबारेका ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, फक्कर आद अखाडेका ॥

शब्द ३१३–दिवाने बंदे का गावे घर दूर ॥ टे० ॥ अनल हक्कहक्कर बोले, सूली दिया मनसूर ॥ सेख फरीद कुवामें लटके होगये चकनाचूर ॥ साह सुल्तान बलख तज निकसे, छांडे सोरहसो हूर ॥ गोरख गोपीचंद भरथरी, शिरमें डारे धूर ॥ नानक नामा औ वाजिंदा,

झिल मिल दरमे नूर ॥ खोजत खोजत उमर सिराने, ना पहुंचे रहे दूर ॥ या कलियुगके नर पाखंडी, कबहुं न रहत हजूर ॥ इनके मनमें कुफर बसत है, मायाके मग रूर ॥ गोरख काया खोज भुलाने, ना पाया भरपूर ॥ कहं कबीर दया सतगुरुकी, सब घट दरमे नूर ॥

शब्द ३१४—अबहम सबही मध्य बिराजें ॥ दोय दल जोर दिखावें कौतुक, हम जूझें हम भाजें ॥ टे० ॥ हस्ती चींटी लख चौरासी, लघु दीरघ हम खेलें ॥ उतपति परले खेल हमारा, आप पसा रस केलें ॥ त्रिभुवन सार सकल रसभोगी, घटघट हमरी पूजा ॥ सरग नरक दोउ खेल हमारा, हम बिन और न दूजा ॥ हमही देव असुर सुर राच्छस, हम ऋषि मुनि हम देवा ॥ हमही ठाकुर आप पुजारी, हम साहब हम सेवा ॥ अवनि अगिन जल पवन सूर शशि, हम जगसें प्रगटाया ॥ कहें कबीर तत दरसी जाने, कहेसे को पतियाया ॥

शब्द ३१५—मेरे जान मुझे न दिलसे भूल ॥ टे० ॥ डार डारमें पात पातमें, तुम्ही रंगीला फूल ॥ है हाजरको दूर बतावे, का नियरे का दूर ॥ मक्का ढूंढा मदीना ढूंढा तबहुं न मिलत रसूल ॥ स्याही गई सपेदी आई, कर चलने-का सूर ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सबघट दरमे नूर ॥

शब्द ३१६—सांईका अगम तखत है दूर ॥ बिन गुरु सद कोई भेद न पावे, भटक मुए सब कूर ॥ लाज छोड

जिन काज किया है, भया कदमका धूर ॥ चौदा तबक ख्वाबकी रचना, ज्यों आतसका फूल॥ जो निजके कोई समुझे बूझे, इसमें नही सहूर ॥ नासूतमें माया खड़ी, मलकूत गुन अस्थूल ॥ जबरूतमें जंजालह लाहूत अछर फूर ॥ हाहूतमें अचिंत पुर, बाजत अनहद तूर ॥ बेद पुरान कुरान कहिये, इहांलों खबर हजूर ॥ सात सुन्न दोय बेसुन कहिये, दसो धाम निज मूल। इंछा सोहं उहांसो आये, घट घट व्यापक नूर ॥ कहें कबीर हम खुदके अहदी, लाये हुकम हजूर ॥ सबरुहनके दर्द जानके, संग्रथ वचन कबुल ॥

शब्द ३१७–जगतमें काहु न मन बस कीन्ह ॥ टेक ॥ भरथखंडमें भरथ जोगी, मृग सुत मन हर लीन्ह ॥ ता कारन नर दोष लगाये, भरथ देह दोय दीन्ह ॥ सूखे पत्र पवन भख रहते, पारा सुरसे ज्ञानी ॥ तिनहूं रूप देख बनि-ताके, कामकंदला ठानी ॥ शृंगीऋषी बन भीतर रहते, बिषै बिकार न जाना ॥ पठई नार भूप दशरथने पकर अजोध्या आना ॥ पारबतीसी पतनी कहिये, तिनके मन क्यों डोला ॥ छकित भये शिव देख मोहनी, हाहा करके बोला ॥ सोरा सहस उरवसी जाके, ताका मन बौराना ॥ गौतम ऋषिकी नार अहिल्या, ताहि देख ललचाना ॥ नारद मुनिसे तपसी कहिये, कन्या हाथ दिखायो ॥ मांग्यो रूप भूपश्रीपतिको, स्वांग बंदरको

लायो ॥ जमदग्नी जाके नारि रेनुका, जात जमुना जल भरने ॥ मांही देख भूपके मंदिर, छकित भये दोयनैने ॥ एकहि नाल कमलसुत ब्रह्मा, जग उपराज कहायो ॥ कहैं कबीर एक नाम भजन बिन, जिव बिसराम न पायो ॥

शब्द ३१८—अलख हमारे राजा जाके बाजत अनहद्‌ बाजा ॥ टेक ॥ शंकरसे जाके जोगी कहिये, ब्रह्मासे ब्रह्मचारी ॥ सुरपतिसे जाके सुरता कहिये, कृष्णसे औतारी ॥ सात समुंदर शायर कहिये, अनगिनती नदि नारा ॥ अठरा भार रोमावलि कहिये, गिरि परवनसे भारा ॥ भूपति एक महाबलि राजा, चहुँ दिशि फिरै दोहाई ॥ अनंत कोट करनाके बागो, यहां प्रगटे ठकुराई ॥ तन बिन मेख तारबिन तंबू, ऐसा तंबूताना ॥ कहं कबीर सुनो भाई साधू, तंबू मांहि समाना ॥

शब्द ३१९—पाछे समुझ परेगा भाई ॥ टे० ॥ इहां अहार उदरभर कीन्हं बहुविधि मांस कढाई ॥ जीव जंत बहु झटका मारे, यह लेखा सब जाई ॥ इहवां लूट खावत तुम परधन, गले फाँसरी लाई ॥ सात सिपाही आगे पाछे, पल पल खबर जनाई ॥ या जग आये राज कराये, पातुर भांड नचाई ॥ एक बुंदके कारन मेरे, कुलके धरम नशाई ॥ ईहां तो कीन्हं साधुकि निंदा सातो जनम नशाई ॥ पेग पेग जम कांटा गाडे, उलटा फांस लगाई ॥ सांच कहों तो मारन धावे, झूठा जग पतियाई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, भरम भूल दुनियाई ॥

शब्द ३२०—निगम सुन कोन ऋषी उबरे ॥टे०॥ प्रथमें ब्रह्मा विष्णु भुलाने, जननी सो बिगरे । सत्यभक्ति जाने बिन दुरलभ, कहु कोने उबरे ॥ नारद मुनि जो दुरमति कीन्हें,बनचर रूप धरे । पराशरऋषि कुहरा उपराजे,पुत्रीसों बिगरे ॥ आसन मार जंगलमें बैठे, वृच्छके चाम चरे। सो भगवान भोगके कारन, शृंगीऋषि बिगरे ॥ दूब अहार कीन दुरबासा, अन्नको त्याग करे । ममता जोर रहे कायामें, इंद्रसभा बिगरे ॥ गुरुगनेश बुद्धिके सागर, शिवके पास खडे । चले अजोग जोगके कारन, नीरंजन बिगरे ॥ चौदालोक बेदको मंडल, जहां लग व्यास पढे । सोरा खंड अच्छर भगवाना, उपजके बिनस मरे ॥ सत्राखंड पर अधर दीप जहां, शब्द अतीत खडे । ताके आगे चार धाम है, रैन दिवस न टरे ॥ लोमस हंस मिले साहेबसो, चहुं जुग मुक्ति भरे । कहें कवीर सुनो मतिमंदा, सो हंसा उबरे ॥

शब्द ३२१—नानक ऐसा न्याव निवेरो । कलह कालकी ज्वाल न झंपे, मिटे भरमके फेरो ॥ टे० ॥ जो तन तंबू बहु बिस्तारा, बिनही मेख लगाना ॥ महातत्त्वका लकडा गाडो, पांच सदर ले ताना ॥ जैसे घटा आवमे डूबे, बिन सीझेना बाजे ॥ पांच तत्त्वके मिश्रित लागी, सहजे करत अवाजे ॥ जैसे जंत्री जंत्र बजावे, बाजे सोई बजावे ॥ बाजत है पर दीसत नाहीं, ताको कहा लखावे ॥ चाम

महलमें बानी बोले, रूप सवाया रानी ॥ ना जानो यह कहांसे आया, किनमें कहां समानी ॥ तत है चितमें चित है तनमें, तन चित कहिये सोई ॥ पहले देखे ब्रह्म आरसी, दूजा धोखा होई ॥ कहैं कबीर फकीर फिकर तज, न्याय सहित रहो भाई ॥ आवा जाई झूठ कल्पना, सहजे रहो समाई ॥

शब्द ३२२–मन रहना बड हुशियार एकदिन चोरवा आवेगा ॥ टे० ॥ तवल तीर तरवार बरछी, ना बंदूक चलावेगा ॥ आवत जात लखे ना कोई, घरमें दुंद मचावेगा ॥ ना गढ तोरे ना गढ फोरे, ना कछु रूप दिखावेगा ॥ नगरमें कछु काम नहीं है, तुम्हें पकर लेजावेगा ॥ नहीं सुने फिरियाद सकल पुनि, ऐसा तस्कर आवेगा ॥ लोग कुटम परिवार घनेरे, खोजी खोज न पावेगा ॥ ऐसाहै कोई संत विवेकी, नाम भजन गुन गावेगा ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, खोल किवारी जावेगा ॥

शब्द ३२३–अन घडिया देवा कोन करे तोरि सेवा ॥ ॥ टे० ॥ घडे देवको सब कोई पूजे, जस भीतीका लेवा ॥ जाकी सकलो सृष्टि रची है, ताहि लहे ना भेवा ॥ को निरगुन को सरगुन कहिये, को किरतम को करता ॥ आपमें सर्व सर्वमें व्यापक, सर्व मई होय बरता ॥ ब्रह्मा विष्नु महादेव कहिये, तिनहूंको लागी टंकिया ॥ पूरन ब्रह्म अखंडित न्यारा, सो करता अन घडि-

या ॥ दस औतार निरंजन कीन्हा, सो करता ना होई ॥ वेतो आपन करनी भुगते, करता औरे कोई ॥ जोगी जती तपी संन्यासी, आप आप मिल मुडिया ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, अलख लखै सो तरिया ॥

शब्द ३२४–ननदी जाहुरी महलनको, अपनो बीरन जगाव ॥ टे० ॥ बीरन जगाये ना जगेगी, लग न सके कछुदाव ॥ काया गढमे भई अंधियरिया, कोन करे वाके भाव ॥ भरमके ताला लगो महलमें, कीमत कुंजी लगाव ॥ कपट किंवरिया खोलके तुम, या बिध पियको रिझाव ॥ भक्ति घाघरा चित्त चुनरिया, चोली चाल सियाव ॥ कर्म मसीकी काजर करले, या बिध पियाको रिझाव ॥ ज्ञानके दीपक कर गह लीजे, बातीबार लगाव ॥ ततको तेल डार दीपकमें, मगन मसाल जराव ॥ सूरतिके बिजनी करगहि लीन्हा, सेवा सेज बिछाव ॥ शीतल चँवर ढार प्रीतमपर, प्रीति पिछोर उढाव ॥ बारंबार मिले नहिं या तन, भूल कोई मत जाव ॥ कहत कमाल कबीरके बालक, फिर ना मिले ऐसो दाव ॥

शब्द ३२५–काह भये मुखराम कहेसे ॥ टे० ॥ अंतर कपट बचन मुख चातुर, अति अधीन होय मनन कियेसे ॥ जैसे भुजंग ओट टाटीके बहु जीवनको हतन कियेसे ॥ जैसे बधिक ओट टाटीके बहु जीवनको हतन कियेसे ॥ कहैं कबीर वाके संग न करिये, बिनती विवेक जिन भेख लियेसे ॥

शब्द ३२६-मोको कहां ढूंढे बंदे मैं तो तेरे पासमें ॥ टेक॥ ना मैं बकरी ना मैं चिकवा, ना मैं छुरी गड़ासमें ॥ ना हां मैं खाल पूंछमें, ना हड्डी ना मासमें ॥ ना मैं मिलां जोग तप कीन्हें, ना बिराग संन्यासमें ॥ खोजी होय सो तुरत मिलावे, पलभरके तल्लासमें ॥ ना देवलमें ना महजिदमें, ना काशी कैलाशमें ॥ ना मैं आऊं अवध द्वारका, मैंतो सांचे आसमें ॥ मैं बसता सैरतमें नेरी, मेरी पुरी मवासमें ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, सब स्वासनके स्वासमें ॥

शब्द ३२७-गाफिला क्यों बिसराया धनी, तेरी सुंदर काया बनी ॥ टेक ॥ काल करंते आजुई करले, आजु करंते अबहीं ॥ शिरपर तेरा काल खडा है, मुरक जात जस अनी ॥ धीरे धीरे पाँव उठावो, सिढियाहै अति घनी ॥ या तन तेरी साख मिलेगी, कीरति रहेगी बनी ॥ या भौसागर अगम भराहै, नाव लगी अति झीनी ॥ गुरु मुख गुरुमुख पार उतरगये, निगुरा बूडे अनी ॥ बालापन तरुनापन बीते, देखलेव दरपनी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, भली बिसाहन बनी ॥

शब्द ३२८-खबर नहिं या जगमें पलकी । सुकृत करले नाम सुमिरले, को जाने कलकी ॥ टेक ॥ कौडी कौडी माया जोरी, बात करे छलकी ॥ पाप पुन्यकी बांध पोटरिया, कैसे होवे हलकी ॥ तारन बीच चंद्रमा

झलके, जोत झला झलकी ॥ एक दिन पंछी निकस जायगा, मट्टी जंगलकी ॥ मात पिता परिवार भाई बंधु, तिरिया मतलबकी ॥ माया लोभी नगर बसतहै, या अपने कबकी ॥ या संसार रैनका सपना, ओस बुंद झलकी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, बातें सतगुरुकी ॥

शब्द ३२९–महेरम होय सो लखि पावे, संतो ऐसा देश हमारा ॥ टेक ॥ वेद किताब पार ना पावे, कहन सुनन सो न्यारा ॥ जात बरन कुल किरिया नाहीं, संध्या नेम अचारा ॥ बिन धन बादर बिजली चमके, बिन सूरज उजियारा ॥ बिन नैनन जहां मोती पो है, बिन सुर सबद उचारा ॥ जैसे बुंद परे दरियामें, ना मीठा ना खारा ॥ सुन्न सिखरपर गजल संगीता, किनरी बीन सतारा ॥ जो जो गये ब्रह्म तेहि दरसे, गहु अच्छर तत सारा ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो पहुंचे गुरुका प्यारा ॥

शब्द ३३०–संतो मूलन बेटा जायो, जिन खोज कुटम्ब सब खायो ॥ टे० ॥ जनमत खाई ममता भाई, दुख सुख दोनों भाई ॥ पाप पुन्य पारोसी खाये, औ तृष्नासी दाई ॥ काम क्रोध दोय काका खाये, मन अभिमानी मामा ॥ मोह नगरके राजा खाये, तब पहुंचे सुखधामा ॥ हम बड दादा तुम बड दादू, देखतही मन मूवा ॥ आनंदरूप बधाई बाजे, तब वह बालक हूवा ॥ ज्ञानी नाम धरे लड़काको, उनकी महिमा गाई ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, सुखमें रहो समाई ॥

शब्द ३३१–हंसा उड चल आपन देश, प्रीत पुरानी भवली नाग ॥ टे० ॥हंसा सिंगलदीपके, उड आये यहि देश ॥ वंग मोती ना चुगे, हीडे आपन देश ॥ उड हंस कोदवारी लाग, मूरख विडारे जाय ॥ अरे अरे मूरख बावरा, कहा कोदना हंस न खाय ॥ ना हंसाके खेती बारी, नहीं बन जावे पार ॥ अनवेधे मोती चुगे, सो पुरवे करतार ॥ शशि झंप दरियावमें, मीन चढी आकाश ॥ जानेगा कोइ संत जौहरी, कहैं कबीर कोइ दास ॥

शब्द ३३२–जो कोइ निरगुन झर लख पावे ॥ टे० ॥ निरखत कूप कुआ बिन वारी, बिन कर रहट चलावे ॥ जल बिन शीश शीश बिन वारी, सो जल आन पियावे ॥ बिन करताल पखावज बाजे, बिन रसना गुनगावे ॥ गावन हारके रूप न रेखा, सो पद आन मिलावे ॥ कदलीपत्र जहर जंगलमें बिन गुरुके नहिं खावे ॥ उठन सनेह मरम ना पावे, आगमके गाहरावे ॥ जोगी जती तपी संन्यासी, नाहक भेख बनावे ॥ बिना नामके भौंरा घूमे, सुख सपने नहिं पावे ॥ पुरइन पत्र बसे नित दादुर, सोऊ सवाद न पावे ॥ कमल कलीके भौंरा लोभी, सौ जोजन उडजावे ॥ काजी हाथ किताब न आवे, मुलना बांग न भावे ॥ वेद पुरान विप्र ना भावे, राजा राज न भावे ॥ कर बिन कलम कलन बिन कागज, बिन मसि अंक बनावे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सतगुरु मिले लखावे ॥

शब्द ३३३-संतो समुझेका मतन्यारा, जो आतम तत्त्व बिचारा॥टे०॥ औरनसो कहें आपा खोजो, आप अपन ना जाने॥ मुख कछु आन हिये कछु आना, कैसे राम पहिचाने॥ औरनसो कहें मोह न कीजे, निरमोही होय रहिये॥ माया मोह सकल आपहिमें, या दुख कासो कहिये॥ औरनको कहे तजो बडाई, आप बडाई चावे॥ जोर बडाई छूटत नाही, झीना पीर कहावे॥ औरनसो कहैं पछ न कीजे, आपा पछ न छूटे॥ कहन सुननको साधु कहावे, सांच कहे रिस छूटे॥ जौं लग राग द्वेष मन माहीं, अस्तुति निंदा भावे॥ तब लग तीनों ताप ना छूटे, कहा भये बहुगावे॥ पद साखी औरन समुझावे, आपा समुझत नाहीं॥ कहें कबीर राम क्यों दरसे, मैं तैं छूटत नाहीं॥

शब्द ३३४-करोरे बंदे वा दिनकी तदबीर॥टे०॥ लाल खंभपर देत ताडना, सहि ना सके शरीर॥ मारमार मुगदर प्रान निकासे, नैनन भर आवे नीर॥ रंगमहल एक कामिनि बैठी, कर शृंगार गंभीर॥ दुनियां दौलत महल संग न जात शरीर॥ भौसागरके राह कठिन है, नदिया अति गंभीर॥ नाव न बारि लोग घनेरे, खेवनवाला बे पीर॥ जब जमराजा पकर मँगावे, पाँवन परे जंजीर कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अब ना करु तकसीर॥

शब्द ३३५-नाम गत पार न पावे कोई॥टे०॥ मच्छ

कच्छ वाराहौ मरगये, नरसिंह रूप जो होई ॥ परशराम बलिवावन मरिगये, कहो कहा कह गोई ॥ रघुबर मरे मरे वे दशरथ, भरथ शत्रुहन दोई ॥ रावन मार विभीषन थापे, उनहूके लंक बिगोई ॥ जदुपति मरे मरे दुर्योधन, एक रात ना होई ॥ पांच पंडवा सिझे हिमाले, मुक्त कहो नरलोई ॥ अंमरीप औ व्यास परीच्छिन, मरन देर ना होई॥ अज फल खाये धनंतर मरगये, तिनहूकी सुदबुद खोई ॥ कहें कबीर सुनो नर भोंदू, तुमरी कौन गत होई ॥ उपजत बिनशत जुग चारों गये, रहत न देखा कोई ॥

शब्द ३३६–जुगवे निशबासर जोग जती ॥ टे० ॥ जैसे ब्रह्मा वेदको जुगवे, शिवको जुगवे पारबती ॥ जैसे सुनार सोनाको जुगवे, घटन न पावे पाव रती॥ जैसे नार पुरुषको जुगवे, बरत अगिन हो जात सती ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, का राजाका छत्रपती ॥

शब्द ३३७–बैरागी रामारे मगन फकीरी तेरी पूरी ॥ ॥टे०॥ हाथ कमंडल बगलमें सोटा, चारों मुलक जगीरी ॥ दिल अंदर दीदार करोगे, आठों, पहर हजूरी ॥ रूखा सूखा साग अलोना टुकरा, राखत सदक सबूरी ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, जोगियाको जुगत जहूरी ॥

शब्द ३३८–जग देखा ठाठ तम्बूरेदा । पांच तत्त्वका बना तँबूरा, त्रिगुन तार महूरेदा ॥ टे० ॥ बाजत है पर दीसत नाहीं, इस मनही सहूरेदा ॥ टुटगये तार उखड-

गई खूंटी, मिलगये धूरम धूरेदा ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, साहेब हाल हजूरेदा ॥

शब्द ३३९—सौदा कर सोई जाने, कायागढ खूब बजार ॥ टे० ॥ याकाया गढमें हाट लगी है, लालच लोभ दलाल ॥ या काया गढमें हीरा मोती, परखेगा परखनहार ॥ या काया गढमें काजी मुलना, निशदिन करन पुकार ॥ या काया गढमें धनी बिराजे, तृनके ओट पहार ॥ या काया गढमें सात समुंदर, कोइ मीठा कोइ खार ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, गुरु बिन जग अंधियार ॥

शब्द ३४०—मेरा दिल साहेब जाने गूदरिया गलतान ॥ ॥ टे० ॥ पांचतत्त्वकी बनी गुदरिया, परी रहै मैदान ॥ अछे वृच्छ तर आसन मारा, गुरु मूरतको ध्यान ॥ अर्ध उर्ध बिच डोरी लागी, अनहद चढी कमान ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, पाया पद निरबान ॥

शब्द ३४१—चितवत चितवत नैन दुखित भये, अजहुं न आये साजनवा ॥ टे० ॥ निहारे बार अपार भई, सखि छूटो शिंगार सब दरपनवा ॥ पियाकी सोच रमोरी मनमें परी, सखि नीको न लागे जेवनवा ॥ एक पग ठाढी तोहे मनाऊं, ठाढी पछताऊं सखि आंगनवा ॥ धरमदासकी अरज गोसाईं, गावत पद सखी निरगुनवा ॥

शब्द ३४२—ना कीन्हा तैने हरिका सुमरन, सब दिन यों ही गयेरे ॥ टेक ॥ बालापनतो खेल गमाये, अबतो

मिल गये चौदह चौदसजासी ॥ पूनो प्याला पूरन पाये, कहें कबीर अविनाशी ॥

शब्द ३४५—बाबा कबीर गुरु पूराहै ॥ टेक ॥ पूरे-गुरुके जाउँ बलिहारी, जाका सकल जहूराहै ॥ सबमें व्यापक सबते न्यारा, हरदम रहत हजूराहै ॥ स्वेत ध्वजा फहरात गगनमें, बाजत अनहद तूराहै ॥ नाम कबीर जपे जन सूरा, नानक चरनके धूरा है ॥

शब्द ३४६—कर नैनो दीदार महलमें प्याराहै ॥ टे० ॥ नौ दरवाजा परगट दीसे, दसवां द्वारा मूंद कुलफ जड-ताराहै ॥ उलट सर्पनी गगन सँवारे, षटचक्रकी सोध बिचारे मेरु डंडपर सीधा पवन दो धाराहै ॥ चंद सूर दोउ एक घरलावे, सुषुमन सेती ध्यान लगावे, तिरबेनीके घाट उतर भौपारहै ॥ गगन मँडलमें उर्ध मुख कूवा, सूरा होयसो भरभरपीवा, निगुरा जात पियासे, हिये अंधिया-राहै ॥ नेती धोती वस्ती पाई, आसन पवन जुगत ठह-राई, गम घोडा असवार, भरमसे न्याराहै ॥ शब्द त्रिहं-गम चाल हमारी, कहें कबीर सतगुरु ले तारी, खुलगइ भरम किंवारी, सार शब्द झनकारा है ॥

शब्द ३४७—जबसें मन परतीत भई । मेरे गुरुने सजीवन मूरदई ॥ टे० ॥ दिन दिन औगुन छूटन-लागे, बाढन लागी प्रीति नई ॥ पावे दाव भाव बन आवे, मिल-गये सतगुरु साहेब सही ॥ सुरति निरति दोय ज्ञान

जौंहरी, निरख परखके वस्तु लई ॥ थोरे बनज लाभ भौ भारी, उपजन लागे लाल मई ॥ मानकपुरमें मोती उपजे, हीरा नगसो भेट भई ॥ आगम निगम नित खोज निरंतर, गुरूने नाम निज वस्तु दई ॥ सुखसागर अस-नान जो करले, स्वात बूंद सो भेट भई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, हर्ता बिकार सो दूर गई ॥

शब्द ३४८—बालापन बांके बतिया हंसा सुध करो ना ॥ टे० ॥ दसो दिशाके गम जहां नाहीं, संकट परे दिन रतिया ॥ बारबार तुम कौल किये हो, वसुधामें करब भगतिया ॥ गरभहिसे बाहिर प्रभु कीन्हा, माया घेरे दूनो अंखिया ॥ पांच पचीस कंठ चढ बैठे, परले तू मौज लफसिया ॥ बालापन बलहीमें बीते, तरुनीमें कडके छतिया ॥ काम क्रोध दस इंद्री जागे, ना सूझे जात न पतिया ॥ अंतसमैमें जान परी है, जब जम घेरे दुवरिया ॥ देवा देवी एको ना लागे, झूंठी होवे जडियासे बुटिया ॥ केसो दुख समुझके गावे, गुरुजीसे करे बिनवतिया॥श्याम बिहारी समुझके चेतो, अंतमे कोऊ ना संघतिया ॥ ❀

शब्द ३४९—तुम कौनहो मियां कहांके ॥ टे० ॥ कहांसे आये कहां जावोगे, किनने भेजा कौन काम है, नई नगरिया झांके ॥ आतेही तुम रोयदिये, का लायेथे सो खोयदिये, किस जिकरमें हो किस फिकरमें हो, आंखे खोलो का ढाँके ॥ वतन तुम्हारा कौन ठामहै, बडा शहर वोहै

कोई गाम। उत्तर दखिन पूरब पश्चिम, नैरितके हो ईशानके ॥ आये हो इस नगरीमें, कुछ मौज साईंका सुख देखो, अब ऐसी ना कीजिये, ना ईहांके हो ना उहांके ॥ हिंदू हो या मुसलमीन हो, दुनियां दार फकीर नदान, कहें कबीर सुनो भाइ साधो, तिरछे हो के बांके ॥

शब्द ३५०—हमतो सदा बने रंगलाल। लंडी दौलत काहे पाल ॥ टे० ॥ चार खूंट जागीर हमारी, गल बिच तुलसी माल ॥ काम वाम सबलिया बगलमें, कोई न पावे हाल ॥ अन जल आटा सब कुछ मिलता, घी गुड चावल दाल ॥ बहुत खजाना पास भरा है, देता है गोपाल ॥ खुसीसे भिछा लेते है हम, नासिर फोरी चाल ॥ साईं खातर लिया फकीरी, झूंठी माया जाल ॥ दया धरम कुछ करले बंदे, निकल जायगी खाल ॥ जितनी संपत उतनी बिपत, नाहक बजावे गाल ॥ सत्तनामका दिया है डंका, हाथ जोडता काल ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, लगा भजनका ढाल ॥

शब्द ३५१—कौन गुरु कालसो बांचे। जोतसरूपी नाथ बनाये, तामो सब नाचे ॥ टे० ॥ इच्छा सुरती जबते उपजी, भई जगत कांचे ॥ सत्तर जुगगये एक पलकमें, ताही ब्रह्मा राचे ॥ कर षट दरशन चार संपदा, सब जगको बांधे ॥ एकइस पुरी अखंड बसुधा, को कहु कैसे नाधे ॥ दान पुन्यका बडा भरोसा, या जुगमें सांचे ॥ पंडव

राजमें को बड़ दानी, दुंदकाल महँ फांसे ॥ केवल ब्रह्मको मन्त्र भुलाने, चले जीत जांचे ॥ अंधधुंधमें सुरति भुलाने, फिर भागे पाछे ॥ घाटे घाटे चौकी बैठी, कठिन काल ग्रासे ॥ शब्द बिना कोई जान न पावे, नाहि पकर नगासे ॥ जीनके आगे सतगुरु साहेब, अजर अमर सांचे ॥ कहें कबीर हम आवें जावें, हंस लिये साथे ॥

शब्द ३५२-कोई मफा न देखा दिलका । कहीं कुत्ता कहीं बकुली देखा, कही सांप देखा बिलका ॥ टे० ॥ कहीं पंडित कहीं काजी देखा, मुल्ना देखा अकिलका ॥ कहीं पूरब कहीं पच्छिम देखा, उत्तर देखा दखिनका ॥ ऊपर मनसे कथनि कहतहैं, भीतर गोला पथरका ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, एही हाल खिल्कतका ॥

शब्द ३५३-काया नगरीमें कौनसा पुरुष ॥ टे० ॥ आपहि गरजे आपहि बरसे, आपहिपवन झकोरता फिरत ॥ आपहि माली आप बगीचा, आपहि कलियां तोरता फिरत ॥ आपहि तखरी आपन राजी, आपहि सब जग तोलता फिरत ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, आपहि घटघट बोलता फिरत ॥

शब्द ३५४-मेरा हीरा हेरागये कचरेमें ॥ टे० ॥ कोई पूरब कोई पछिम बतावे, कोई बतावे पानी पथरेमें ॥ पंडित वेद पुरान बतावे, उरझ रहे जग झगरेमें ॥ सुर नर मुनि औ पीर औलिया, भूलगये सब नखरेमें ॥ धर्म दास गुरु हीरा पाये, बांधलिये निज अँचरेमें ॥

शब्द ३५५–गरीबी है सबमें सिरदार ॥ टे० ॥ उलटके देखो ज्ञान गरीबी, जाकी पैनी धार ॥ भौं भंजन सुखदायक जनको, कहर बिडारन हार ॥ सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग, परलै टारन हार ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, हंस उबारन हार ॥

शब्द ३५६–छकोरे मन गगन गली, जहां बजत बीन सुर झीनी ॥ टे० ॥ रुनक झुनक अनहद धुन गरजे, झिल मिल दरसे जोती ॥ बिन बादल जहां बिजली चमके, वरषत हीरा मोती ॥ अधर देहरा अधर पुजारी, अधर सकल बनाया ॥ अधर बैठ मन निहचल कीजे, ब्रह्ममें जीव समाया ॥ स्वेत सिंहासन स्वेत छत्र शिर, स्वेत ध्वजा फहराई ॥ हरो लाल पीरो असमानी, बहुरंगी दरसाई ॥ साहब मो मैंमैं साइबमें, झिल मिल दरसे नूर ॥ कहें कवीर दया सतगुरुकी, बैठे हाल हजूर ॥

शब्द ३५७–मेरे दिलदा सौख फकीरी। धन सतगुरु उपदेश दियो है, सुरति भई मेरी थोरी ॥ टे० ॥ सुन्न सिखर पर गजल संगीता, रहता सत्त सबूरी ॥ सत्त अवाज करो दरगाहमें, भिछा मिले भरपूरी ॥ पांच उमराव हजूर बंदगी, आठो पहर उजीरी ॥ अजब ख्याल देखा दरगाहमें, बाजे रबाब नफीरी ॥ काम क्रोध दोनों दल जीते हढ आसन तत सीरी ॥ सब घट साहेब समकर जाने, ऐसी रहन गंभीरी ॥ मांगो न भीख डरोना, दो मेरे

दिलकी माँगी ॥ कहैं कबीर दया सतगुरुकी, सहज भई घर मंगी ॥

शब्द ३५८-तेरे कायामें गुलजार बागों मतजारे ॥ टे० ॥ मन माली परमोधके, संजमकी करबार ॥ दया पौद मूखं नहां, क्षमा शील जड डार ॥ करनी क्यारी बोइये, रहनी कर रखवार ॥ दुरमतिका गढढायके, देखो अजब बहार ॥ चित्त चमनके बागमें, फूल रही फुलवार ॥ मुक्ति कला सदा खिलरही, पहिर गुंज गलहार ॥ अष्ट कमल दल ऊपरे, शोभा अगम अपार ॥ कहैं कबीर चित्त चेतियो, आवागवन निवार ॥

शब्द ३५९-संतो सुनत ज्ञान गलताना । अब सो पद पदहि समाना ॥ टे० ॥ अगम भूमिसों सतगुरु आये, रूपधरे कुरमाना ॥ ढूंढत ऊंट महलमें डोले, बूझत साह बिहाना ॥ यानी महल हमारा है रे, तै पंथी कित आना ॥ दूजे रूप खवास धरे जब, फूलन सेज बिछाना ॥ कोडा तीन मार तिन खायो, मारत चोट हेवाना ॥ कहै खवास सुनो इब्राहिम, कैसे खलक पत खाना ॥ एक घडी सेज्यापर पौढे, तनकी घाम उडाना ॥ हेत हुशन सब दूर हुये हैं, दरस तखत हीराना ॥ गैब खवास भये तिहिं बारी, कंपन लगे पराना ॥ उतरी चीरी भई फकीरी, फारा तोसे खाना ॥ मखमल खासा दूर बहाये, अलफी पहिर निमाना ॥ सोला सहस सहेली, छांडी, अठारा लाख

तुराना ॥ सतगुरु शब्दे लई फकीरी, हरखित तजे निशाना ॥ हीरा मोती मुक्ता त्यागे, अरबों खरब खजाना ॥ सत्तर खान उमराव बहत्तर, तजे अमीर मस्ताना ॥ मेवा पान मिठाई त्यागे, अमृत भोजन खाना ॥ नंगे पैरों भये पयादे, इब्राहीम सुलताना ॥ चढत गयंद इंद्रके नांई, सूरज अस्त छिपाना ॥ सैना सकल भीर दल बादल गरद उडे असमाना ॥ दसों दिशा मक्काको फेरा, चरनों बांध कुराना ॥ दास गरीब कबीर पुरुषने, अमर किये सुलताना ॥ ❋

शब्द ३६०—अवधू जोग अध्यातम जोई । एकै ब्रह्म सकल घट दरसे, और न दूजा कोई ॥ टे० ॥ प्रथम कमल जान चतुरदल, देव गनेशको बासा ॥ रिधि सिधि दोय संग उपासे, जाप छैसो परगासा ॥ षटदल कमल ब्रह्माको बासा, सावित्री संग सेवा ॥ षटसहस्र जाको जाप जपत है, इन्द्र सहित सब देवा ॥ अष्टदल कमल हरि संग लछमी, तीजे सेवक पौना ॥ षटसहस्र जाको जाप जपत है, मिटगये आवागौना ॥ द्वादस दल कमल शिवको बासा, पारबती संग सेवा ॥ षट सहस्र जाको जाप जपत है, लखो ज्ञानके भेवा ॥ षोडस कमलमें जिवको बासा, सकती अद्या जानी ॥ एक सहस्र जाको जाप जपत है, ऐसा भेद बखानी ॥ त्रिदल कमलमें सरस्वति बासा, उज्वल कमल निवासा ॥ एक सहस्र जाको जाप

जपत है, होय ज्ञान परकासा ॥ भँवर गुफा जहां दोय दल कमला, परम हंसको बासा ॥ सहस्र जाको जाप जपत है, करम भरमको नासा ॥ सहस्रदल कमलमें झिलमिल दरसे, आपहिं ईश अपारा ॥ जोतिसरूप सकलमें बरते, अलख निरंजन सारा ॥ सुरति कमल सतगुरुको बासा, एक जाप जपे सोई ॥ छेसो एकईस जाको जाप जपत है, चीन्हे बिरला कोई ॥ जो चीन्हे सो गुरुमुख होवे, भेद अगोचर भाई ॥ जो गुरुमुख सो शब्दहिं पावे, कहैं कबीर समुझाई ॥

शब्द ३६१-सुरत मेरी नाममें अटकी ॥ करम भरम औ वेद बडाई, या फल सो सटकी ॥ टे० ॥ नामके चूके पार न पैहो, जैसे कला नटकी ॥ जागत सोवत सोवत जागत, मोहि परे चटसी ॥ जैसे पपिहा स्वात बूंदको, लाग रही रटसी ॥ भरमकी मटकी शिरके ऊपर, सो मटकी पटकी ॥ हमतो आपनि राह चलत हैं, औरन को उटकी ॥ प्रीति पुरानी नई लगन है, या दिलमें खटकी ॥ और नजर कछु आवत नाहीं, ना माने हटकी ॥ प्रेमकी डोरी सो मन लागी, ज्ञान डोर झटकी ॥ जैसे सरिता सिंधु समानी, फेर नहीं पटकी ॥ गहो निजनाम खोज हिरदेमें, चीन्ह परे घटकी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, फेर नहीं भटकी ॥

शब्द ३६२-सतगुरु अगमकी राह उघारी ॥ टे० ॥

जतन जतन कर तन मन साधो, सुखमन सुरति संभारी ॥ मिटगइ तिमिर दरस भयो तिनको, पाइ परमपद भारी ॥ हीरालाल जौहर तहां दरसे, हरदम नाम निहारी ॥ निश दिन पलपल नाम सो लागे, ऐसो अमल करारी ॥ महा बारीख मुकुतिको मारग, पच्छिम खुली किंवारी ॥ नौपत नाम ध्वजा फहरावे, चढगइ सुरत अटारी ॥ याही चाल मिलो सतगुरुसो, मानो सीख हमारी ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, चेत लेहु नर नारी ॥

शब्द ३६३–थोरे थोरे खाऊंगी, मैं अंत न जाऊंगी गुरुके शब्द लेके सहज समाऊंगी ॥ टे० ॥ खाई मैं ननद दुलहे भुजा मरोगी, सासु मैं खाई दोय पग नोरी ॥ खाऊं मैं देवर खाऊं मैं जेठ । पुनि मैं खाऊँ ससुरा ठेठ खाऊं मैं माई खाऊं मैं भाई । पुनि मैं खाऊं घरक जँमाई ॥ खाऊं मैं पांच कुटुमके लोग । कहें कबीर तब सीझा जोग ॥

शब्द ३६४–हरि मोहिं एक अचंभा भावे । सासुको बहुवा खिलावे ॥ टे० ॥ बहुवाके घर ससुरा जाई । सासु बधैया ले घर आई ॥ मूसाके सभा सरप एक नाचे, मैंडक ताल बजावे ॥ कौवा बैठे सगुन बिचारे, भैंस बिसुन पद गावे ॥ बिना बीजके बृच्छ लगाया, बिन पानी पलुवाया ॥ ऊपर मूल नीचे भई डारी, अमृत फूल

फुलाया ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, जो या शब्द बुझावे ॥ जो या पदको गाय बिचारे, सोई सदा रहावे ॥

शब्द ३६५-नइया मेरी नीकी चलने लागी । आंधी मेह कछु ना व्यापे, चढे संत बड भागी ॥ टे० ॥ उथल परे तो डर कछु नाहीं, ना गहिरेका साँसा ॥ उलट जाय तो बार न बांका, याका अजब तमासा ॥ औसर परे तो परवन बोझो, तेऊ न लागे भारी ॥ धन सतगुरु जे जुगति बनाई, ताकी मैं बलिहारी ॥ सार शब्दकी नइया बनी है, मोहकी मकरिया लाय ॥ गुन लहासकी हाजत नाहीं, ऐसा साज बनाय ॥ कहै कबीर जो बिन शिर खेवै, सो यह संत बखाने ॥ या बोहितकी अकथ कथा है, बिरले खेवट जाने ॥

शब्द ३६६-मन मौजी बैरागी । आवना मन भावना ॥ टे० ॥ पांचतत्त्वके या तन गुदरी, सुरतिकी तोप चढावना ॥ इंगला पिंगला सुषुमन नारी, त्रिकुटी ध्यान बसावना ॥ अनहद बाजा निशदिन बाजे, भँवर गुफा ठहरावना ॥ गगन मंडलको किये पयाना, कहैं कबीर समुझावना ॥

शब्द ३६७-बाबा शरनागत ताकी है ॥ सुरति सोहागिन भई मतवाली, नाम सुधारस छाकी है ॥ टे० ॥ नाम अमोल अपार साहबका, ताहीके रंग राची है ॥ निरख परख चरनों चित लागे, उझक झरोखा झांकीहै ॥

अंतरगतिमें भई उजियारी, बिन दीपक बिन बाती है ॥
कहें कबीर सुमर सत नामैं, आदि अंतसो थाकी है ॥

शब्द ३६८—अहो कब मिलोगे सनेही आय ॥ टे० ॥
चलो सखी जहां देखन चलिये, जहां पुरुष निरबान ॥
हंस हिरंमर चौंर ढुरावे, तनकी तपन बुझान ॥ चारों जुगके हंस उबारे; अजहुं उबारे आय ॥ जाकी सांची सुरति लगी है, सो वा घरको जाय ॥ भौसागर औगाह अगम है, सूझे वार न पार ॥ सतगुरु साहब हंस उबारन, बांह पकरके तार ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो शब्द रहो लौलाय ॥ नाम पान पानी मिल लै हो, तब सतलोक सिधाय ॥

शब्द ३६९—भला परदेसिया तू मेरी कही मान रे ॥ ॥ टे० ॥ जुगन जुगन तोहिं कहि समुझाऊं, आद संदेसा मोहि जान रे ॥ त्रिगुन तत्त्व ता इक बावरे, कारजमें सकल जहान रे ॥ पांच पचीस तोहि निशदिन ब्यापे ताको रंग पहिचान रे ॥ पांच पचीससो रहे निरन्तर, पावे निरबान रे ॥ झिल मिल जोत झलक एक निर्मल, रंगसुरंगी जान रे ॥ कहैं कबीर संत सोइ आला, जापर भगति निशान रे ॥

शब्द ३७०—गोरख हम तबसे भयेउ बैरागी । मेरी सुरति आदसे लागी ॥ टे० ॥ धुंधीकाल धुंधका मेला, नहीं गुरु नहिं चेला । ताही दिन हम मूंड मुंडाये, जब

वह पुरुष अकेला ॥ धरती नहीं जब टोपी दीन्हा, ब्रह्मा नहीं तब टीका । महादेवका जनम नहीं हतो जबते योग हम सीखा ॥ सतयुगमें हम लीन फाउरी, द्वापर लीन्हें डंडा ॥ त्रेतामें हम आडबंद खैंचे, कलऊ फिरे नौखंडा॥ काशीमें विसराम कियो है, रामानंद चेताया ॥ कहैं कबीर सुन गोरख जोगी, हंस उबारन आया ॥

शब्द ३७१—सुरतसों देखले वह देश । देखत देखत दीसन लागे, मिटगये सकल अंदेश ॥ टे० ॥ ना उहां चंदा ना उहां सूरज, नहीं पवन परवेश ॥ ना उहां जाप नहीं उहां अजपा, नहिं अक्षर लवलेश ॥ उहांके गये बहुर ना आये, ना कोई कहत संदेश ॥ कहै कबीर सुनो भाई साधो, गहु सत गुरु उपदेश ॥

शब्द ३७२—कोई कछु कहै दिल लागा है । तनभी लागा मनभी लागा, ज्यों सुई बिच धागा है ॥ टे० ॥ मेरे मन लागा नाम भजनमें, हटकत लोग अभागा है ॥ बरत अगिनमें कंचन डारे, सोनामें मिलत सोहागा है॥ हंसकी चाली हंस पहिचाने, क्या जानेगा कागा है ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, जीव ब्रह्म होय जागा है ॥

शब्द ३७३—एक दिन साहेब बेन बजाई ॥ टे० ॥ सब गोपी मिल धोखा खाई, कहै जसोदाके कन्हाई ॥ कोई जंगल कोइ देवल बतावे, कोइ द्वारका जाई ॥ कोइ अकाश पताल बतावे, कोइ गोकुल ठहराई ॥ जमुना

विमल प्रवाह थकित भये, पवन रहे ठहराई ॥ सोरा बसुधा एकइश पुरलो, सब मुरछित होय जाई ॥ सात समुन्दर जबे घहराने तेतिस कोट अघाई ॥ तीन लोक तीनो पुर थाके, इंद्र उठे अकुलाई ॥ दस औतार कृष्णलों थाके कूर्म बहुत सुख पाई ॥ समुझ न वार पारलों, यह धुन कहांसे आई ॥ शेषनागऔ राजा वासुक, वाराह मुर्च्छित होय जाई ॥ देव निरंजन अद्या माया, ये दुनहूं शिर नाई ॥ कहैं कवीर सतलोकके पुरष, शब्द केर सुर नाई ॥ अमी अंकते कुहुक निकारी, तीन लोक रहु छाई ॥

शब्द ३७४– अपने पियाके मैं प्यारी सबसौं न्यारी ॥ टे० ॥ एक कंचन दूजे कामनी इन जग मोहा ॥ ऐसा कोइ न देखिया इनते बांचा ओहा ॥ कामदेव एक भूप है सबको लागा ॥ केते तपसी बनगये बनमें जागा ॥ गोपीके कारन कृष्णजी बनबन नाचा ॥ सीताके कारन राम रावनरन माचा ॥ ब्रह्मलोक ब्रह्म डिगे कन्या मोहा ॥ सुर नर मुनि सब पच मरे बांधे लोहा ॥ गगर मंडल बिच बैठके सुनले बाजा ॥ कहैं कवीर गुरु ज्ञानसे आतम जागा ॥

शब्द ३७५–याद करो दिन बाद जाताहै, सतगुरु शब्द सनेह बिना रे ॥टे०॥ जठर अग्निमें बुंदे जमाया, पानीसे पिंड किया रचनारे ॥ उहां तुझे खान पान पहुंचावे, ऐसो साहबहै अपना रे ॥ नौ दस मास गरभ प्रतिपाले, करकर कोटि जतना रे ॥ नाम लेत तोहि लाज लग-

नहै. मायामें भूल रह्यो मना रे ॥ बालापनमें खेल गँवाये. तरुनामें कछु रूप बना रे॥ त्रिध भये तन आलस उपजे. जीवन मरन रैन सपना रे ॥ अवध घंट जब काल गरामें. उठगये हाट तब कछु न बना रे ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो मूल गँवाय चले अपनारे ॥

शब्द ३७६-निज घर जान बेजाना । दगाबाज घट-पार बटोही, इनका लगा जमाना ॥टेक॥ अपने दिलका कोइ न मिलिया, मिलिया लोग बिगाना ॥ भूला लोग फिरे बेअक्कल, इनका नहीं ठिकाना ॥ सेमरफूल जगत इक फूला, ताहि देख लोभियाना ॥ मारत चोंच रुवा उघराने, फिर पाछे पछताना ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, या पद है निरबाना ॥ जो या पदको समुझे बूझे, पहुंचे पुरुष ठिकाना ॥

शब्द ३७७-अब हम सोई परमपद जाना ॥ टे० ॥ ना उहां सिद्ध नहीं उहां साधक, दूसर कहत दिवाना ॥ न वहां चंद नहीं वहां सूरज, ना रजनी ना भाना ॥ मकरीको तार स्वेतहै झीनी, तहां मेरो मन माना॥ कहें कबीर चीटीके सुरमें, पिंड ब्रह्मंड समाना ॥

शब्द ३७८-अजगेबी बंदा गेब नगरसे आया ॥टे०॥ गेबी आया गेबसे, इहां लगाया ऐब ॥ उलट समाना गेबमें, छूटगया सब पेब ॥ आप रहा जब रहा न कोई, एकहि एक कहाया ॥ जात बरन कुल रूप न रेखा, जिन यह

राह चलाया ॥ पांचतत्त्व गुन तीन ना पहुंचे, सो वह देश कहाया ॥ ब्रह्मपुरीते इच्छा उलटी, निरगुन नाम धराया ॥ षट दरशनके बंद छुडाये, इब्राहिमहि चेताया ॥ कहें कबीर सुनु गोरख जोगी, जिन ढूंढा तिन पाया ॥

शब्द ३७९—जो बूझे सो बावरा । क्या उमर हमारी ॥ असंख्य जुग आगे गये, तबके हम ब्रह्मचारी ॥ टे० ॥ तीन देव जाने नहीं, सोई आदि हमारी ॥ कोट आये परमातमा, परलोक सिधारी ॥ हमतो सदा मौजूद है, प्रगटे जुग चारी ॥ कोटन ब्रह्मा होगये, दस कोट कन्हाई ॥ अनंत कोट बिष्नु गये, मोरे एक पलाई ॥ सातकोट शंभू गये, मुहम्मद कोट चारी ॥ देवतनकी गिनती नहीं, का सृष्टि बिचारी ॥ बलि बावनकेने भये, कौरव दलभारी ॥ लंका पति रावन गये, रघुपति कइ वारी ॥ ना बालक ना वृद्ध हों, ना पुरुष न नारी ॥ कहें कबीर सुन गोरख, यह उमर हमारी ॥

शब्द ३८०—तुज बिन मेरा कोई नहीं, मै किसे भजोंरे दिवाना ॥ टे० ॥ मूल कमल चौकी गनपतकी, सुन बुध सबैं हैराना ॥ लोकलाज कुल पांचो मिलिया, हिलमिल मंगल गाना ॥ नाभ कँमलसे लहर उठत है, सुनियो संत सुजाना ॥ इंगला पिंगला सुषुमन नारी, उनमुनके घर लाना ॥ बंकनालते अमीरस झरिया, चाखे संत सयाना ॥ चंद सूर दोय आसन कीन्हे, अनहद घोर निशाना ॥

कहै कबीर सुनो भाइ साधो, तत्त भई अब जाना ॥
जो कोइ होय नामका भेदी, नामहि सो लौ लाना ॥

शब्द ३८१–मेरे मन बसगये गगन अटरिया ॥ टे० ॥
गगन अटरिया पियाको बासा, ज्ञान पुरुष मठ धरिया ॥
जापर सुरम नगारा बाजे, उठत शब्द धुनझरिया ॥
त्रिकुटी महलमें ध्यान लगावे, जहां अमीरस झरिया ॥
कहै कबीर जेहि शब्द न बेधे, तापर हनत कटरिया ॥

शब्द ३८२–तै बनधारी नामका तोहे और न भावे। कांच बांधके का करे, कंचन जो पावे ॥ टे० ॥ जप तप तीरथ संजमा, कोई काम न आवे ॥ त्रिषे पियासे ना बुझे, नलका समुझावे ॥ स्वाति बुंदके कारने, चात्रिक ललावे ॥ सोई बुंद मोती भये, का सागर नावे ॥ राई ते लख नाम है, गुरुकृपा ते पावे ॥ कहै कबीर धावत बने, तो गरभ न आवे ॥

शब्द ३८३–देखो रे घट जंतर बाजे, कौन बजावन हारा ॥ टे० ॥ तनकी तांत सरंगी बाजे, केहि बिधि गावन हारा ॥ उग्रगीता बांच सुनाऊं, जाने दास हमारा॥ टूटा तार फूटगो तुंबा, जंत्री होगये न्यारा ॥ अपरंपार पारपुरुषोत्तम, ताका करो बिचारा ॥ जंत्री बिना जंत्र ना बाजे, बाजे सोई बजावे। कहै कबीर सुनो भाइ साधो, शब्दमें सुरति समावे ॥

शब्द ३८४–यह संसै मोहि निशदिन व्यापे, कोई ना कहे समुझाई ॥ दीपक जोत ओ प्रान आतमा,

ना जानो कहां जाई ॥ टे० ॥ नाहीं ग्रह द्वार जहां नाहीं, पांचतत्त्व जहां नाहीं ॥ इंगला पिंगला सुषुमन नाडी, बिनसे कहां समाहीं ॥ जल जरे तृण जहां बांचे, ले बैमं दर सीचे । भीतर मूल फूल फल बाहिर, समुझपरे कहु कैसे ॥ सीखे सुने पढे का होई जौलो पद ना परसे ॥ कहैं कबीर गगना बिनसे, ज्यों धागा उनमुनमें दरसे ॥

शब्द ३८५–अपने साहबसों मिल रहिये ॥ टे० ॥ जो काहूकी भली न आवे बुरी काहेको कहिये ॥ जो कोइ संत मिले बडभागी, दुख सुख उनसो कहिये ॥ जो कोई बादी बाद बढावे, चार बात सुन रहिये ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, गुरुके चरन चित गहिये ॥

शब्द ३८६–मेरे मन लागा बान सुरंगी ॥ टे० ॥ जा तन लगी सोई तन जाने, का जाने जगत पतंगी ॥ ध्यान का धनुष ज्ञानका तुक्का, घायल पांचों संगी ॥ धन सतगुरु उपदेश दियोहै, कीटते हो गये भृंगी ॥ कहैं कबीर सोई जन बिरही, निशदिन प्रेम उमंगी ॥

शब्द ३८७–धनहो धन साहब बलिहारी । दाया कर जिव राख लियेहो, सुनिये परम उपकारी ॥ टे० ॥ प्रथमैं प्रगट भये मथुरामें, तारे गोप गँवारी ॥ विप्र मधूकर लोक पठाये, काल रहा झक मारी ॥ तक्षक आय डसे रानीको, बिषम चढे अति भारी ॥ सुमिरत प्रगट भये द्वापरमें, लीन्हे हंस उबारी ॥ एक समैं हरि जाचन आये,

लीन्हा बसन उतारी ॥ अंमर देत बार ना लाये, राखे लज्जा भारी ॥ पांडव यज्ञ सुफल ना होवे, बहुतक जुरे अचारी ॥ तुमरे भक्त जब ग्रास उठाये, अधर घंट झनकारी ॥ हरिके मंदिर उठ न पावे, सिंधु लहर अधिकारी ॥ शब्द देयके सिंधु हटाये कूनम चले संसारी ॥ साह-सिकंदर करमनी लीन्हा, अगिनमें दिये झुकाई ॥ मस्ता हाथी आन झुकाये, सिंहरूप दिखलाई ॥ मगहर जाय लीला एक कीन्हा, हिंदू तुरुक ब्रतधारी ॥ दोनों दीन प्रतिज्ञा दीन्हे, मिटगये झगरा भारी ॥ काशी प्रगटे हांसी कराये, संग गनिका मनवारी ॥ हरिके पंडा जगत उबारे, आपन चरन जल ढारी ॥ जो जन सुमरे तहां तस प्रगटे, काह पुरुष को नारी ॥ साहु दमोदर बूडत बचाये, गये सिंधु मझारी ॥ जो जो सरन गहे सतगुरुकी जिन जन सुरति संभारी ॥ धर्मदासपर दाया कीन्हे, राजदिया लिख भारी ॥ जो सुमरे तेहि लोक पठाये, धर्मनि कहे पुकारी ॥ साहब कबीर परम सुखसागर, हमहूको लेव उबारी ॥

शब्द १८८–लखे कोई बिरला पद निरबान ॥ टे० ॥

करम काट जब भरम नशान ॥ सतगुरु चरन कमल धर ध्यान ॥ बिन रसनाके अंतर ध्यान ॥ ता बिच दरसे पुरुष पुरान ॥ तीन लोकमें काल समान ॥ चौथे लोकमें नाम निशान ॥ रामानंद गुरु कीन्ह बखान ॥ साहेब कबीरके निरमल ज्ञान ॥

सत्यनाम ।

# अथ शब्द बीजक प्रारम्भः ।

शब्द ३८९—संतो भगति सतो गुरु आनी । नारी एक पुरुष दुइ जाये बूझहु पंडित ज्ञानी ॥ टे० ॥ पाहन फोरि गंग यक निकरी चहुंदिशि पानी पानी । तेहि पानी दुइ-परबत बूडे, दरिया लहरि समानी ॥ उडि मक्खी तरुवर को लागी बोलै एकै बानी । वहि मक्खीके मक्खा नाहीं गरभ रहा बिन पानी ॥ नारी सकल पुरुषहिं खायो ताते रही अकेला । कहहिं कबीर जो अबकी समुझै सोई गुरु हम चेला ॥ १ ॥

शब्द ३९०—संतो जागत नींद न कीजै । काल न खाय कल्प नहिं व्यापै देह जरा नहिं छीजै ॥टे०॥ उलटि गंग समुद्रहि सोखै, शशि औ सूर ग्रासै । नौ ग्रह मारि रोगिया बैठे, जलमें बिंब प्रकाशै ॥ बिन चरननको चहुँ-दिशि धावै, बिन लोचन जगसूझै । ससा उलटि सिंहको ग्रासै, ई अचरज को बूझै ॥ औंधे घडा नहीं जल बूडे, सीधे सो जल भरिया । जेहि कारन नर भिन्न भिन्न करै, गुरु प्रसादसे तरिया ॥ पैठि गुफामें सब जग देखै, बाहर कछुव न सूझै । उलटा बान पारथिहिं लागै, सूरा होय सो बूझै ॥ गायन कहै कबहुं नहिं गावै, अन बोला नित गावै । नटवत बाजा पेखनी पेखै, अनहद हेत बढावै ॥

कथनी बदनी निज के जोहै, ई सब अकथ कहानी। धरती उलटि अकाशहिं बेधे, ई पुरुषन की बानी॥ बिना प्याला अमृत अचवे नदी नीर भरि राखे। कहैं कबीर सो जुग जुग जीवे, राम सुधारस चाखे॥ २॥

शब्द ३९१-संतो घरमें झगरा भारी। राति दिवस मिलि उठि उठि लागैं पांच ढोटा एक नारी॥टे०॥ न्यारो न्यारो भोजन चाहैं पांचों अधिक सवादी। कोइ काहू को हटा न मानै आपुहि आप मुरादी॥ दुर्मति केर दोहागिनि मेटे ढोटे चांप चपेरे॥ कहहिं कबीर सोइ जन मेरा घरकी रार निबेरे॥ २॥

शब्द ३९२-संतो देखत जग बौराना। सांच कहौं तो मारन धावे झूठे जग पतियाना॥टे०॥ नेमी देखे धरमी देखे प्रात करे अस्नाना। आतम मारि पषानहिं पूजे उनमें कछुव न ज्ञाना॥ बहुतक देखा पीर औलिया पढे किताब कुराना। करि मुरीद तदबीर बतावें उनमें इहै जो ज्ञाना॥ आसन मारि डिम्भ धरि बैठे मनमें बहुत गुमाना। पीतर पाथर पूजन लागे तीरथ गरब भुलाना॥ माला पहिने टोपी दीन्हे छाप तिलक अनुमाना। साखी शब्दे गावत भूले आतम खबरि न जाना॥ हिंदू कहै मोहि राम पियारा तुरक कहै रहिमाना। आपसमें दोउ लरि लरि मूये मरम न काहू जाना॥ घर घर मंत्र जे देत फिरत हैं महिमा के अभिमाना। गुरुवा सहित

शिष्य सब बूडे अंतकाल पछिताना ॥ कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो ई सब भरम भुलाना। केतिक कहौं कहा नहिं मानै सहजै सहज समाना ॥ ४ ॥

शब्द ३९३—सन्तो अचरज एक भौ भाई। कहौं तो को पतियाई ॥ टे० ॥ एकै पुरुष एक है नारी ताकर करहु विचारा। एकै अंड सकल चौरासी भरम भूल संसारा ॥ एकै नारी जाल पसारा जगमें भयो अंदेसा। खोजत काहू अंत न पाया ब्रह्मा विष्नु महेशा ॥ नाग फांस लिये घट भीतर मूसि सकल जग खाई। ज्ञान खड्ग बिनु सब जग जूझै पकरि काहु नहिं पाई ॥ आपुहि मूल फूल फुलवारी आपुहि चुनि चुनि खाई। कहहिं कबीर तेई जन उबरे जेहि गुरु लियो जगाई ॥ ५ ॥

शब्द ३९४—सन्तो अचरज एक भौ भारी, पुत्र धरल महतारी ॥ टेक ॥ पिताके संगहि भई बावरी कन्या रहल कुमारी। खसमहिं छोडि ससुर संग गवनी सो किन लेहु बिचारी ॥ भाईके संग सासुर आई सासु सौतिया दीन्हा। ननद भौज परपंच रच्यो है मोर नाम कहि लीन्हा ॥ समधीके संग नाहीं आई सहज भई घरुबारी। कहहिं कबीर सुनहु हो सन्तो पुरुष जनम भौ भारी ॥ ६ ॥

शब्द ३९५—सन्तो कहौं तोको पतियाई। झूंठा कहत सांच बनि आई ॥ टेक ॥ लोके रतन अवेध अमोलिक नहिं गाहक नहिं सांई। चिमिक २ चमकै दृग चहुँ दिशि

अरव रहा छुगियाई ॥ आपहि गुरु किरपा कछु कीन्हो निर्गुन अलख लखाई । सहज समाधि उनमुनी जागै सहज मिले रघुराई ॥ जहँ जहँ देखों तहँ तहँ सोई मन मानिक बेध्यो हीरा । परमतत्त्व यह गुरू सो पायो कहै उपदेश कबीरा ॥ ७ ॥

शब्द ३१६—सन्तो आवै जाय सो माया । है प्रतिपाल काल नहिं वाके ना कहुं गया न आया ॥ टे० ॥ क्या मकसूद मच्छ कच्छ होना संखासुर न संहारा । अहैं दयाल द्रोह नहिं वाके कहौ कौन को मारा ॥ वे कर्ता नहिं वराह कहावे धरनि धरे नहिं भारा । ई सब काम साहबके नाहीं झूठ कहै संसारा ॥ खंभ फोर जो बाहर होई ताहि पतीज सब कोई । हिरनाकुश नख उदर विदारे सो नहिं करता होई ॥ बावन रूप न बलिको जांचे जो जांचे सो माया । बिना विवेक सकल जग जहँडे माये जग भरमाया ॥ परशुराम छत्री नहिं मारा ई छल मायहिं कीन्हा । सतगुरु भगति भेदनहिं जाने जीव अमिथ्या दीन्हा ॥ सिरजन हार न ब्याही सीता जल पषान नहिं बंधा । वे रघुनाथ एकके सुमिरे जो सुमिरे सो अंधा ॥ गोपी ग्वाल गोकुल नहिं आये करते कंस न मारा । है मिहरबान सबनको साहेब नहिं जीता नहिं हारा ॥ वे कर्ता नहिं बौध कहावे नहीं असुर को मारा । ज्ञान हीन करता के भरमें माया जग संहारा ॥

वे कर्ता नहिं भये निकलंकी, नहिं कलिंगहि मारा। ई छल बल सब माये कीन्हा, जत्त सत्त सबटारा ॥ दश औतार ईसरी माया कर्ता के जिन पूजा। कहहिं कबीर सुनोहो सन्तो उपजै खपै सो दूजा ॥ ८ ॥

शब्द ३९७—सन्तो बोले ते जग मारै। अन बोलेते कैसे के बनिहै शब्दै कोइ न बिचारै ॥ टे० ॥ पहिले जन्म पहिले जनम पूतको भयऊ बाप जनमिया पाछे। बाप पूतकी एकै नारी ई अचरज को काछे ॥ उंदुर राजा टीका बैठे विषहर करै खवासी। स्वान बापुरा धरनि ढाकनो बिल्ली घरमें दासी ॥ कौर दुकार कार करि आगे बैल करै पटवारी। कहहि कबीर सुनो हो सन्तो भैसे न्याव निवारी ॥ ९ ॥ १ पाठ भेद—( कागज कार कारकुड आगे बैल करे पटवारी )

शब्द ३९८—सन्तो राह दुनो हम दीठा। हिन्दू तुरक हटा नहिं मानै स्वाद सबनको मीठा ॥ टे० ॥ हिन्दू बरत एकादशी साधै दूध सिंघाडा सेती ॥ अनको त्यागे मन नहिं हटके पारन करै सगोती ॥ तुरुक रोजा निमाज गुजारै बिसमिल बांग पुकारै। उनकी भिस्त कहांसे होइहैं सांझै मुरगी मारैं ॥ हिंदू की दया मेहर तुरकनकी दोनों घटसो त्यागी। वे हलाल वे झटका मारैं आगि दुनों घर लागी ॥ हिंदू तुरुककी एक राह है सतगुरु इहै बताई। कहै कबीर सुनो हो संतो राम न कहौं खुदाई ॥ १० ॥

शब्द ३९९-मंतो पांडे निपुन कसाई । बकरा मारि भैसापर धावै दिलमें दरद न आई ॥ टे० ॥ करि अस्नान तिलक दे बैठे विधि सो देवि पुजाई । आतम राम पलकमो विनशे रुधिरकी नदी बहाई ॥ अति पुनीत ऊंचे कुल कहिये सभा माहिं अधिकाई । इनते दिच्छा सब कोई मांगे हंसि आवै मोहिं भाई ॥ पाप कटनको कथा सुनावै कर्म करावै नीचा । बूड़न दोऊ परस्पर देखा गहे हाथ जम घींचा ॥ गाय बधे तेहि तुरका कहिये उनते क्या वै छोटा । कहहिं कबीर सुनो हो संतो कलिके ब्राह्मण खोटा ॥ ११ ॥

शब्द ४००-संतो मते मात जन रंगी । पीवत प्याला प्रेम सुधारस मतवाले सतसंगी ॥ टे० ॥ अरध ऊरध लै भाठी रोपी ब्रह्म अग्नि उदगारी । मूंदे मदन कर्म कटि कस्मल संतन चुवै अगारी ॥ गोरख दत्त वशिष्ट व्यास कवि नारद सुक मुनि जोरी, सभा बैठि शम्भू शनकादिक तहं फिरि अधर कटोरी ॥ अम्बरीष औ जाज्ञ ( वल्क ) जनक जड़ सेष सहस मुख पाना । कहंलों कहीं अनन्त कोटि लैं अमहल महल दिवाना ॥ ध्रुव प्रह्लाद विभीषन माते माती शिवकी नारी । सगुन ब्रह्म माते वृन्दावन अजहूं न छूटि खुमारी ॥ सुर नर मुनि जेते पीर औलिया जिनरे पिया तिन जाना, कहैं कबीर गूंगेकी सक्कर क्यों कर करै बखाना ॥ १२ ॥

शब्द ४०१-राम तेरि माया द्वन्द मचावै गति मति

वाकी समुझ परे नहिं सुर नर मुनिहिं नचावे ॥ टे० ॥ क्या सेमरकी साखा बढये फूल अनूपम बानी। केतिक चात्रिक लाग रहे हैं चाखत रुवा उडानी ॥ कहा खजूर बडाई तेरी फल कोई नहिं पावे। ग्रीषम रितु जब आय तुलानी छाया काम न आवे ॥ अपना चतुर औरको सिखवे कामिनि कनक स्यानी। कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो राम चरण रति मानी ॥ १३ ॥

शब्द ४०२—रामरा संशय गांठ न छूटै, ताते पकरि जम लूटै ॥टे०॥ होय मिसकीन कुलीन कहावे तुम जोगी सन्यासी। ज्ञानी गुनी सूर कवि दाता ई मति काहु न नासी ॥ सुम्रिति वेद पुरान पढैं सब अनुभव भाव न दरसै। लोह हिरन्य होय धौं कैसे जो नहिं पारस परसै ॥ जियत न तरे मुयेका तरिहो जियते जो न तरे। गहि परतीति कीन जिन जासों सोई तहैं मरे ॥ जो कछु कियो ज्ञान अज्ञाना सोई समुझ स्याना। कहैं कबीर तासोंका कहिये देखत दृष्टि भुलाना ॥ १४ ॥

शब्द ४०३—रामरा चली बिनावन माहो। घर छोडे जात जोलाहो ॥ टे० ॥ गज नौ गज दस गज उनइसकी पुरिया एक तनाई। सात सूत नौ गाड़ बहत्तरि पाट लागु अधिकाई ॥ तापट तूल न गजन अमाई पैसन सेर अढाई। तामें घटै बढै रतिओ नहीं करकच करध रहाई ॥ नित उठि बैठ खसम सो बरबस तापर लागु

निहाई । भीनी पुरिया काम न आवे जोलहा चला रिसाई ॥ कहैं कबीर सुनो हो सन्तो जिन यह सृष्टि उपाई, छाड़ि पसार राम भजु बौरे भव सागर कठिनाई ॥ १८ ॥

शब्द ४०४–गगरा झीझी जंतर बाजै । कर चरन बिहूना राजै ॥ टे० ॥ कर बिनु बाजे सुनै सरवन बिनु सरवनै सरोता होई । पाटन स्ववस सभा बिनु अवसर बूझे मुनि जन लोई ॥ इंद्रि बिनु भोग स्वाद जिह्वा बिनु अछय पिंड बिहूना । जागत चोर मंदिर तहं मूसै खसम अछत घर सूना ॥ बीज बिनु अंकुर पेड़ बिनु तरुवर बिनु फूले फल फलिया । बांझके कोख पुत्र अवतरिया बिनु पग तरुवर चढ़िया ॥ मसि बिनु द्वाइत कलम बिनु कागज़ बिनु अच्छर सुधि होई । सुधि बिनु सहज ज्ञान बिनु ज्ञाता कहैं कबीर जन सोई ॥ १९ ॥

शब्द ४०५–राम गाइ औरन समुझावे, हरि जाने बिनु बिकल फिरै ॥ टे० ॥ जा मुख वेद गायत्री उचरै तासु बचन संसार तरै । जाके पांव जगत उठि लागे सो ब्राह्मन जिव बद्ध करै ॥ अपना ऊंच नीच घर भोजन घीन कर्म करि उदर भरै । ग्रहन अमावस ढुकि ढुकि मांगे कर दीपक लिये कूप परै ॥ एकादशी व्रतो नहिं जाने भूत प्रेत हठि हृदय धरै । तजि कपूर गांठी विष बांधे ज्ञान गंवाय मुग्ध फिरै ॥ छीजे साहु चोर प्रतिपाले संत जनन

की कूट करे। कहहिं कबीर जिह्वाके लम्पट यहि विधि प्रानी नरक परे ॥ १७ ॥

शब्द ४०६—रामगुन न्यारो न्यारो न्यारो। अबुझा लोग कहां लौ बूझैं बूझनहार विचारो। केते रामचन्द्र तपसी सो जिन यह जग विटमाया ॥ केते कान्ह भये मुरलीधर तिनभी अन्त न पाया ॥ मतस्य कच्छ बाराह स्वरूपी बामन नाम धराया। केते बौध भये निकलंकी तिनभी अंत न पाया ॥ केतिक सिध साधक संन्यासी जिन बनबास बसाया। केते मुनि जन गोरख कहिये तिनभी अंत न पाया ॥ जाकी गति ब्रह्मै नहिं पाई शिव शनकादिक हारे। ताके गुन नर कैसे पैहो कहे कबीर पुकारे ॥ १८ ॥

शब्द ४०७—ए तत राम जपो हो प्रानी तुम बूझो अकथ कहानी। जाको भाव होत हरि ऊपर, जागत रैन बिहानी ॥ टेक ॥ डाइनि डारे सोनहा डोरे सिंह रहे बन घेरे। पांच कुटुम्ब मिलि जूझन लागे बाजन बाज घनेरे ॥ रोहु मिरगा संशय बन हांके पारथ बाना मेलै। शायर जरे सकल वन डाहे मच्छ अहेरा खेलै ॥ कहैं कबीर सुनो हो संतो जो यह पद निरधारे। जो यह पदको गाइ विचारे आपु तरे अरु तारे ॥ १९ ॥

शब्द ४०८—कोइ राम रसिक रस पियहुगे। पियहुगे सुख जियहुगे ॥ टेक ॥ फल अंकुते बीज नहिं बोकला

सुक पंछी रस खाई । चुवै न बुंद अंग नहिं भीजै दास भँवर सँग लाई । निगम रसाल चारि फल लागे तामें तीनि समाई । एक है दूरि चहै सब कोई जतन जतन काई पाई ॥ गयउ बसंत ग्रीषम ऋतु आई बहुरि न तरुवरतर आवै । कहै कबीर स्वामी सुख सागर राम मगन ह्वै पावै ॥ २० ॥

शब्द ४०९-राम न रमसि कौन दंड लागा । मरि जैबे का करिबे अभागा ॥ टे० ॥ कोइ तीरथ कोइ मुंडित केशा । पाखंड भरम मन्त्र उपदेशा ॥ विद्या वेद पढ़ि कर हंकारा । अन्त काल मुख फांके छारा ॥ दुखित सुखित सब कुटुम्ब जिवैवे । मरन बेर अकसर दुख पैवे ॥ कहैं कबीर यह कलि है खोटी । जो रह करवा निकसै टोटी ॥ २१ ॥

शब्द ४१०-अवधू छोडो मन विस्तारा । सो पद गहु जाहि ते सद्गति पार ब्रह्म ते न्यारा ॥ टे० ॥ नहीं महादेव नहीं महम्मद हरि हजरत तब नाहीं । आदम ब्रह्मा नहीं तब होते नहीं धूप नहिं छांही ॥ असी सहस पेगम्बर नाहीं सहस अठासी मूनी । चन्द्र सूर तारा गन नाहीं मच्छ कच्छ नहिं दूनी ॥ वेद किताब सुम्रिति नहिं संजम नहिं जमन परसाई । बांग नेमाज कलमा नहिं होते रामो नहीं खुदाई ॥ आदि अन्त मन मध्य न होते आतत पवन न पानी । लख चौरासी जीव जन्तु नहिं साखी

शब्द न बानी ॥ कहैं कबीर सुनो हो अवधू आगे करहु विचारा । पूरनब्रह्म कहांतेप्रगटे किरतम किन उपचारा॥२२

शब्द ४११–अवधू कुदरतकी गति न्यारी । रंक निवाज करै वह राजा राजा भूपति करै भिखारी ॥ टे० ॥ येते लौंगहिं फल नहिं लागे चन्दन फूल न फूलै । मच्छ शिकारी रमैं जंगलमें सिंह समुद्रहिं झूलै ॥ रेंडा रुख भया मल्यागिरि चहुं दिशि फूटी बासा । तीन लोक ब्रह्मंड खंडमें देखै अन्ध तमाशा ॥ पंगुल मेरु सुमेरु उलंघै त्रिभुवन मुकता डोलै । गुंगा ज्ञान विज्ञान परगासै अनहद बानी बोलै ॥ बांधि अकाश पताल पठावै शेष सरग पर राजै । कहैं कबीर राम है राजा जो कछु करै सो छाजै ॥ २३ ॥

शब्द ४१२–अवधू सो जोगी गुरु मेरा । जो ई पद को करै निवेरा ॥ टेक ॥ तरुवर एक मूल बिन ठाढ़ो बिन फूले फल लागा । साखा पत्र कछू नहिं वाके अष्ट-गगन मुख जागा ॥ पौ बिन पत्र करह बिन तुम्बा बिनु जिह्वा गुन गावै । गावन हारके रूप न रेखा सतगुरु होइ लखावै ॥ पंछिक खोज मीनको मारग कहैं कबीर दोउ भारी । अपरम पार पार पुरुपोत्तम मूरतिकी बलिहारी ॥ २४ ॥

शब्द ४१३–अवधू ओ ततु रावल राता । नाचै बाजन बाज बराता॥टे०॥मौरके माथे दुलहा दीन्हो अकथा जोर

कहाता। मडनकू चारन समधी दीन्हो पुत्र विवाहल माता॥ दुलहिनि लीप चौक बैठाये निरभय पद परभाता। भातहिं उलटि नगातहिं खायो भली बनी कुशलाता॥ पाणि ग्रहन भये भव मंड्यो सुषुमुनि सुरति समाता॥ कहैं कबीर सुनो हो संतो बूझो पंडित ज्ञाता॥ २५॥

शब्द ४१४-कोइ बिरला दोस्त हमारा भाइ रे बहुत का कहिये। गांठन भजन संवारे सोई ज्यों राम रखे त्यों रहिये॥ टे०॥ आसन पवन जोग श्रुति सुमृति ज्योतिष पढि बैलाना। छौ दरशन पाखंड छानवे ये कल काहु न जाना॥ आलम दुनी सकल फिरि आये या कल जीव न आना। ताही करिके जगत उठावे मनमें मनन समाना॥ कहैं कबीर जोगी औ जंगम फीकी उनकी आशा। रामै नाम रटे ज्यों चात्रिक निश्चय भगति निवाशा॥ २६॥

शब्द ४१५-भाई अद्भुत रूप अनूप कथा है कहौं तोको पतियाई। जहँ जहँ देखों तहँ तहँ सोई सब घट रह्यो समाई॥ टे०॥ लच्छ बिनु सुख दरिद्र बिनु दुख है नींद बिना सुख सोवे॥ जस बिनु ज्योति रूप बिनु आशिक रतन बिहूना रोवे॥ भरम बिनु ज्ञान मनै बिनु निरखे रूप बिना बहु रूपा। थिति बिनु सुरति रहस बिनु आनंद ऐसो चरित अनूपा॥ कहै कबीर जगत बिनु (हरि) मानिक देखौ चित अनुमानी। परि हरि लाभे लोग कुटुम्ब सब भजहुँ न शारंग पानी॥ २७॥

शब्द ४१६—भाइरे गैया एक विरंचि दियो है भार अभर भौ भाई । नौ नारीको पानि पियति है तिरषा तऊ न बुताई ॥ टे० ॥ कोठा बहत्तरि औ लौ लाय वज्र केवांर लगाई । खूटा गाडि डोरी दृढ बांधो तैयो तोरि पराई ॥ चारि वृच्छ छौ साख वाके पत्र अठारह भाई । एतिक लै गैया गम किन्हो गैया अति हरहाई ॥ ई सातो अवरन है सातौ नौ औ चौदह भाई । एतिक गैया खाय बढायो गैया तऊ न अघाई ॥ घूंटामें राती है गैया स्वेत सींग हैं भाई । अवरन बरन कछू नहिं वाके भच्छ अभच्छौ खाई ॥ ब्रह्मा विष्णु खोजिकै आये शिव शनकादिक भाई । सिद्ध अनन्त वहि खोज परे हैं गैया किनहुँ न पाई ॥ कहैं कवीर सुनो हो सन्तो जो या पद अरथाई । जो या पदको गाइ विचारिहैं आगे ह्वै तरि जाई ॥ २८ ॥

शब्द ४१७—भाईरे नयन रसिक जो जागे । परब्रह्म अविगत अविनाशी कैसेहुकै मन लागे ॥ टेक ॥ अमली लोग खुमारी तृष्ना कतहुं सन्तोष न पावे । काम क्रोध दोनों मतवाले माया भरि भरि प्यावे ॥ ब्रह्म कलाल चढा इनि भाठी लै इन्द्री रस चाखै । संगहि पोच ह्वै ज्ञान पुकारै चतुर होइ सो नाखै ॥ संकट सोच पोच या कलिमों बहुतक व्याधि शरीरा । जहँवां धीर गँभीर अति निर्मल तहँ उठि मिलहु कवीरा ॥ २९ ॥

शब्द ४१८—भाईरे दुइ जगदीश कहांते आया, कहु

कौने भग माया । अल्लाः राम करीम केशव हरि हज़रत नाम धराया ॥ ट० ॥ गहना एक कनक ते गहना तामें भाव न दूजा । कहन सुननको दुइ करि थाये यक निमाज़ यक पूजा ॥ वही महादेव वही महम्मद ब्रह्मा आदम कहिये । कोइ हिन्दू कोइ तुरुक कहावै एक जमींपर रहिये ॥ वेद किताब पढ़ें वे खुत्बा वे मोलना वे पांडे । बिगत बिगतके नाम धरावें यक माटीके भांडे ॥ कहें कबीर वे दोनों भूले रामहिं किनहु न पाया । वे खसिया वे गाय कटावें वादे जनम गँवाया ॥ ३० ॥

शब्द ४१९–हंसा संशय छूरी कुहिया । गैया पियै बछरुवै दुहिया ॥ टेक ॥ घर घर सावज खेलै अहेरा पारथ वोटा लेई । पानी मांहि तलफि गे भूभुरि धूरि हिलोरा देई ॥ धरती बरसे बादल भींजे भीट भया पैराऊ । हंस उड़ाने ताल सुखाने चहले बींधा पाऊ ॥ जौ लगि कर डोलै पग चलई तौ लगि आश न कीजे । कहहिं कबीर जेहि चलत न दीखे तासु बचनका लीजे ॥ ३१ ॥

शब्द ४२०–हंसा हो चित चेतु सबेरा । इन्ह परपंच कयल बहुतेरा ॥ टेक ॥ पाखंड रूप रच्यो इन्ह त्रिगुन तेहि पाखंड भूलल संसारा । घरको खसम बधिक भौ राजा परजा काधौं करे विचारा ॥ भगति न जाने भगत कहावे तजि अमृत विषके लिय सारा । आगे बडे ऐसेहि बूड़े तिनहुँ न मानल कहा हमारा । कहल हमारा गांठी

बांधो निशि बासर रहिहहु हुशियारा। ये कलिके गुरु बड परपंची डारि ठगोरी सब जग मारा॥ वेद किताब दोय फन्द पसारा ते फन्दे परु आप बिचारा। कहें कबीर ते हंस न बिछुरे जेहि मै मिलों छोडावन हारा॥ २२॥

शब्द ४२१—हंसा प्यारे सरवर तेजे जाय॥ टे०॥ जेहि सरवर बिच मोतिया चुगते बहुबिधि केलि कराय॥ सूखे ताल पुरइनि जल छोडे कमल गयो कुंभिलाय। कहैं कबीर जो अबकी बिछरे बहुरि मिलै कब आय॥२३॥

शब्द ४२२—हरि जन हंस दशा लिये डोलैं। निर्मल नाम चुनि चुनि बोलैं॥ टे०॥ मुकताहल लिये चोंच लोभावैं। मौन रहै कि हरिगुन गावैं॥ मान सरोवर तट के बासी। राम चरन चित अन्त उदासी॥ काग बुद्धि निकट नहिं आवे। प्रति दिन हंसा दरशन पावै॥ नीर छीर को करै निबेरा। कहँ कबीर सोई जन मेरा॥२४॥

शब्द ४२३—हरि मोर पीव मैं राम की बहुरिया। राम मोर बडो मैं तन की लहुरिया॥ टे०॥ हरि मोर रहँटा मैं रतन पिउरिया। हरि को नाम लै कातल बहुरिया॥छः मास ताग वरष दिन कुकुरी। लोग कहल भल कातल बपुरी॥ कहैं कबीर सूत भल काता। रहँटा न होय मुकति कर दाता॥ २५॥

शब्द ४२४—हरि ठग ठगत ठगौरी लाई। हरि बियोग कैस जियहु रे भाई॥ टे०॥ को काको पुरुष कवन

कारि नारी । अकथ कथा जम जाल पसारी ॥ को काको पुत्र कवन काको बापा । को रे मरे को सहै सन्तापा ॥ ठगि ठगि मूल सबन को लीन्हाँ । राम ठगौरी बिरले चीन्हाँ । कहँ कबीर ठग सो मन माना । गई ठगौरी ठग पहिचाना ॥ ३६ ॥

शब्द ४२५-हरि ठग ठगत सकल जग डोले । गवन करन मोसे मुखहु न बोले ॥ टे० ॥ बालापनके मीत हमारे । हमें छोडि कहँ चले सकारे ॥ तुम अहु पुरुष हौं नारि तुम्हारी । तुम्हरी चाल पाहनहूं ते भारी ॥ माटिक देह पवनको शरीरा । हरि ठग ठग सो डरल कबीरा ॥ ३७ ॥

शब्द ४२६-हरि बिनु भरम बिगुरचन गन्दा । जहं जहं गये अपनपो खोये तेहि फंदे बहु फन्दा ॥ टे० ॥ जोगी कहँ जोग है नीको द्वितिया और न भाई । चुंडित मुंडित मौन जटाधारि तिनहुं कहां सिधि पाई ॥ ज्ञानी गुनी सूर कवि दाता ये जो कहहिं बड हमहीं । जहंसे उपजे तहहिं समाने छूटि गये सब तबहीं ॥ बाँये दहिने तजो बिकारै निजु के हरिपद गहिया । कहं कबीर गुंगे गुरखाया पूछे सो का कहिया ॥ ३८ ॥

शब्द ४२७-ऐसे हरि सो जगत लरतु है । पंडुर कतहुं गरुढ धरतु है ॥ टे० ॥ मूस बिलारी कैसनि हेतू । जम्बुक कर केहरि सो खेतू ॥ अचरज यक देखा संसारा । सोनहा खेदै कुंजर असवारा ॥ कह कबीर सुनो संतो भाई । यह संधी कोइ बिरले पाई ॥ २९ ॥

शब्द ४२८–पंडित बाद बदौ सो झूठा। रामके कहे जगत गति पावै खांड कहे मुख मीठा ॥ टे० ॥ पावक कहे पांव जो दाहै जल कहे तिरषा बुझाई। भोजन कहे भूख जो भाजै तौ दुनिया तरि जाई ॥ नरके संग सुवा हरि बोलै हरि प्रताप नहिं जानै। जो कबहूं उडि जाय जंगलको तौ हरि सुरति न आनै * ॥ बिनु देखे विनु अरस परस के नाम लिये का होई। धनके कहे धनिक जो होतो निर्धन रहत न कोई ॥ सांची प्रीति विषय माया सों हरि भगतनकी हांसी। कह कबीर यक राम भजे विनु बांधे जमपुर जासी ॥ ४० ॥

शब्द ४२९–पण्डित देखौ मनमों जानी। कहु धौं छूत कहांते उपजी तबहि छूति तुम मानी ॥ टेक ॥ नादै बिन्दु रुधिर यक संगै घटहीमें घट सज्जै। अष्ट कमलकी पुहुमी आई यह छूति कहांते उपज्जै ॥ लख चौरासी बहुत बासना सो सब सरिभौ मांटी। एकै पाट सकल बैठारे सींच लेत धौं काटी ॥ छूतिहिं जेवन छूतिहिं अचवन छूतिहि जग उपजाया। कह कबीर ते छूति बिवर्जित जाके संग न माया ॥ ४१ ॥

शब्द ४३०–पंडित सोधि कहहु समुझाई। जाते आवागमन नशाई ॥ अर्थ धर्म औ काम मोक्ष फल कौन दिशा बस भाई ॥ टे० ॥ उत्तर दछिन पूरब पच्छिम सरग

* देखो सुवाबत्तीसी।

पतालके माहीं । बिन गोपाल ठौर नहिं कतहुं नरक जात धौं काहीं ॥ अनजानेको नरक सरग है हरि जानेको नाहीं । जेहि डरको सब लोक डरतु है सो डर हमरे नाहीं ॥ पाप पुन्यकी शंका नाहीं सरग नरक नहिं जाहीं । कहै कबीर सुनो हो संतो जहँ पद तहां समाहीं ॥ ४२ ॥

शब्द ४३१-पंडित मिथ्या करो विचारा । नाहीं सृष्टि न सिरजनहारा ॥टेक॥ थूल स्थूल पवन नहिं पावक रवि शशि धरनि न नीरा । ज्योति स्वरूपी काल न उहवां बचन न आहि शरीरा ॥ धरम करम कछुवो नहिं उहवां ना कछु मंत्र न पूजा । संजम सहित भाव नहिं एको सो तो एक न दूजा ॥ गोरख राम एको नहिं उहँवा ना वहिं भेद विचारा । हरि हर ब्रह्म नहीं शिव सकती तिरथौ नहीं अचारा ॥ माय बाप गुरु जाके नाहीं सो दूजा कि अकेला । कह कबीर जो अबकी समझे सोइ गुरू हम चेला ॥ ४३ ॥

शब्द ४३२-बूझहु पंडित करहु विचारी, पुरुष अहै कि नारी ॥ टेक ॥ ब्राह्मन केरे ब्रह्मनी होती जोगी के घर चेली । कलमां पढि पढि भई तुरकिनी कलिमें रहै अकेली ॥ वर नहिं वरै ब्याह नहिं करई पुत्र जनम होनिहारी । कारे मूंड एक नहिं छाडे अबहूं आदि कुवांरी ॥ मायिक न रहै जाइ न ससुरे सांई संग न सोवे ॥ कह कबीर वे जुग जुग जीवे जाति पांति कुल खोवे ॥४४॥

शब्द ४३३-कौन मुआ कहु पंडित जना । सो

समुझाय कहो मोहि सना ॥ टे० ॥ मूये ब्रह्मा विष्नु महेशा । पार्वती सुत मुये गनेशा ॥ मूये चन्द्र मुये रवि केता । मुये हनुमत जिन बांधी सेता ॥ मूये कृष्ण मुये करतारा । यक न मुआ जो सिरजन हारा ॥ कहैं कवीर मुआ नहिं सोई । जाको आवागमन न होई ॥ ४५ ॥

शब्द ४३४—पंडित अचरज यक बड़ होई । यक मरमुये अन्न नहिं खाई यक मर सीझ रसोई ॥ टे० ॥ करि अस्नान तिलक करि बैठे नौगुण कांध जनेऊ । हांडी हाड हाड थारी मुख अब षट करम बनेऊ ॥ धरम कथै जहं जीव बधै तहं अकरम कर मेरे भाई । जो तोह-रेको ब्राह्मन कहिय तौ केहि कहिय कसाई ॥ कह कवीर सुनो हो संतो भरम भूलि दुनियाई । अपरम पार पार पुरुषोत्तम यह गति विरलै पाई ॥ ४६ ॥

शब्द ४३५—पंडित बूझ पियो तुम पानी । जा माटीके घरमें बैठे तामें सृष्टि समानी ॥ टे० ॥ छप्पन कोटि जादव जहं विनशे मुनि जन सहस अठासी । परग परग पैगम्बर गाडे ते सरि माटी मासी ॥ मच्छ कच्छ घरियार वियाने रुधिर नीरजल भरिया । नदिया नीर नरक बहि-आवै पशु मानुष सब सरिया ॥ हाड झरी झरि गूद गली गलि दूध कहांते आयो । सो तुम पांडे जेवन बैठ मटिअहि छूत लगायो ॥ बेद किताब छोडि दिहु पांडे ई सब मनके करमा । कहैं कवीर सुनो हो पांडे ई सब तुम्हरे धरमा ॥ ४७ ॥

शब्द ४३९—बुझ बुझ पंडित मन चितलाय। कबहिं भरल वहे कबहि सुखाय ॥टे०॥ खन ऊबे खन डूबे खन अवगाह। रतन न मिलै पाव नहिं थाह॥ नदिया नाहिं सरस बहे नीर । मच्छ न मरै केवट रहे तीर ॥ पोहकर नहीं बांधल तहं घाट। पुरइनि नहीं कमल महि बाट ॥ कहैं कवीर यह मनका धोखा। बैठा रहै चला चह चोखा ॥९१॥

शब्द ४४०—बूझ लीजे ब्रह्म ज्ञानी । घुरि घुरि बरषा बरषावै परिया बुंद न पानी ॥ टे० ॥ चीटीके पग हस्ती बांधे छेरी बीगै खायो । उदधि मांहते निकसि छांछरी चौड़े गेह करायो ॥ मेढुक सर्प रहै इक संगै बिल्ली स्वान बियाही । नित उठि सिंह सियार सों डरपै अद्भुत कथो न जाही ॥ (कौने) संशय मृगा तन वन घेरे पारथ बाना मेलै । शायर जरै सकल बन डाहै मच्छ अहेरा खेलै ॥ कह कवीर यह अद्भुत ज्ञाना को यहि ज्ञानहि बूझै । विनु पंखे उड़ि जाय अकाशै जीवहि मरन न सूझै ॥ ९२ ॥

शब्द ४४१—वह बिरवा चीन्है जो कोय । जरा मरन रहितै तन होय ॥ टे० ॥ बिरवा एक सकल संसारा । पेड एक फूटल तिन डारा ॥ मध्यके डार चारि फल लागा । साखा पत्र गनत को बागा ॥ वेलि एक त्रिभुवन लपटानी। बांधे ते छूटिहिं नहिं प्रानी ॥ कहहिं कवीर हम जात पुकारा। पंडित होय सो करै विचारा ॥९३॥

शब्द ४४२-साईंके संग सासुर आई । संग न सूती स्वाद न मानी गौ जौबन सपनेकी नाईं ॥ टे० ॥ जना चार मिलि लगन सोधाई जना पांच मिलि मंडप छाई। सखी सहेली मंगल गावै दुख सुख माथे हरदि चढाई ॥ नाना रूप परी मन भांवरि गांठी जोरि भई पतियाई। अरघे दे दे चली सुवासिनि चौकहि रांड भई संग सांई ॥ भयो विवाह चली विन दूलह बाट जात समधी समझाई । कहै कबीर हम गौने जैबे तरब कन्त लै तूर बजाई ॥ ८४ ॥

शब्द ४४३-नलको ढाढस देखो आई । कछु अकथ कथा है भाई ॥ टे० ॥ सिंहसारदूल यक हर जोतिनि सीकस बोइन धाना। बनकी भुलइया चाखुर फेरे छागर भये किसाना ॥ छेरी बाघहि व्याह होत है मंगल गावै गाई । बनके रोझ धै दाइज दीन्हों गोह लोकंदै जाई ॥ कागा कपडा धोवन लागे बकुला किरर दांता । मांछी मूँड मुडावन लागी हमहूं जाब बराता ॥ कहहि कबीर सुनो हो सन्तो जो यह पद अर्थावै। सोई पंडित सोई ज्ञाना सोई भक्त कहावै ॥ ८५ ॥

शब्द ४४४-नलको नहिं परतीति हमारी। झूठे बनिज कियो झूठे सन पूंजी सबै मिलि हारी ॥ टे० ॥ षट दरशन मिलि पंथ चलायो तिरदेवा अधिकारी ।राजा देश बडो परपंची रैयत रहत उजारी ॥ इतते उतरहु उतते इतरहु

जमकी सांट सवारी । ज्यों कपि डोर बांधि बाजीगर अपने खुशी परारी ॥ यहै पैठ उतपति परलयको विपया सबै विकारी । जैसे स्वान अपावन राजी त्यों लागी संसारी ॥ कहैं कवीर यह अद्भुत ज्ञाना मानो बात हमारी । अजहूं लेहु छोडाय कालसों जो घट सुरति संभारी ॥ ९६ ॥

शब्द ४४५—न हरि भजसि न आदत छूटी । शब्दै समुझि सुधारत नाहीं अंधरे भये हियेकी फूटी ॥ टे० ॥ पानी मांहि पषानकी रेखा ठोंकत उठै भभूका । सहस घडा नितहीं जल ढारै फिर सूखेका सूका ॥ सेते सेते सेत अंग भौ सैन बढो अधिकाई । जो सन्निपात रोगि यहि मारै सो साधुन सिधि पाई ॥ अनहद कहत कहत जग विनसे अनहद सृष्टि समानी । निकट पयाना जमपुर धावै बोलहि एकै बानी ॥ सतगुरु मिलै बहुत सुख लहिया सतगुरु शब्द सुधारै। कहैं कवीर सो सदा सुखारी जो यहि पदहिं विचारै ॥ ९७ ॥

शब्द ४४६—नरहर लागी दव विकार विन ईंधन मिलै न बुझावन हारा । मैं जानों तोही ते व्यापै जरत सकल संसारा ॥टे०॥ पानी माहिं अग्निको अंकुर मिलत बुझावन पानी । एक न जरै जरै नौ नारी जुगति न काहू जानी॥सहर जरै पहरू सुख सोवै कहै कुशल घर मेरा। पुरिया जरै वस्तु निज उबरै बिकल राम रंग तेरा ॥

कुबिजा पुरुष गले यक लागी पूजि न मनकी साधा। करत बिचार जनम गौ खीसाई तन रहत असाधा ॥ जानि बूझ जे कपट करत है तेहि अस मन्द न कोई। कहै कबीर सब नारि रामकी मोते और न होई ॥ ५८ ॥

शब्द ४४७—माया महा ठगनी हम जानी। निरगुन फांस लिये कर डोलै बोलै मधुरी बानी ॥ टे० ॥ केशवके कमला है बैठी शिवके भवन भवानी। पंडाके मूरति है बैठी तीरथमें भइ पानी ॥ जोगीके जोगिन है बैठी राजाके घर रानी। काहूके हीरा है बैठी काहूके कौडी कानी ॥ भगतनके भगतिन है बैठी ब्रह्माके ब्रह्मानी। कहै कबीर सुनो हो संतो यह सब अकथ कहानी ॥ ५९ ॥

शब्द ४४८—माया मोह मोहित कीन्हा। ताते ज्ञान रतन हरि लीन्हा॥टे०॥ जीवन ऐसो सपना जैसो जीवन सपन समाना। सब्द गुरु उपदेश दियो तैं छाड्यो परम निधाना ॥ जोतिहिं देखि पतंग हुलसै पशु नहिं पेखै आगी। काम क्रोध नल मुगुध परे हैं कनक कामिनि लागी॥ सय्यद सेख किताब नीरेखे पंडित शास्त्र बिचारे। सत गुरुके उपदेश बिना तुम जानिके जीवहि मारे॥ करो विचार बिकार पीरहरो तरन तारनै सोई। कह कबीर भगवंत भजन करु द्वितिया और न कोई ॥ ६० ॥

शब्द ४४९—मारिहौ रे तन काले करिहौ। प्राण छुटे बाहर लै धरिहौ ॥टे०॥ काया बिगुरचन अनवनि बाटी।

कोइजारे कोइ गाडै माटी ॥ हिंदू लै जारे तुरुक लै गाडै। यहि बिधि अन्त दुनौ घर छाडै ॥ करम फांस जम जाल पसारा । ज्यों धीमर मछरी गहिमारा ॥ राम बिना नल है हो कैसा । बाट माझ गोबरौरा जैसा ॥ कह कबीर पाछे पछितैहो । या घरसे जब वा घर जैहो ॥ ६१

शब्द ४५०—माइ मैं दूनो कुल उजियारी । बारह खसम नैहरे खायो सोरह खायो ससुरारी ॥ टे० ॥ सासु ननद मिलि पटिया बांधल भंसुरा परलौ गारी । जारों मांग मैं तासु नारि की सखिर रचल हमारी ॥ जनाँ पांच कोखियामें राखों औ राखों दुइ चारी । पार परोसिनि करों कलेवा संगहिं बुधि महतारी ॥ सहजे बपुरी सेज बिछायो सुतलों पांव पसारी । आउं न जाउं मरों नहिं जीवों साहब मेटल गारी ॥ एक नाम मैं निज के गहिल्यो तो छूटल संसारी । एकनाम मैं बदिके लेखो कहै कबीर पुकारी ॥ ६२ ॥

शब्द ४५१—मैं कासों कहौं को सुने को पतियाय । फुलवाके छुअत भवँर मरिजाय । टेक ॥ गगन मँडल बिच फुल यक फूला । तर भो डार उपर भो मूला ॥ जोतिय न बोइयै सिंचिय न सोइ । बिन डार बिन पात फुल यक होइ ॥ फुल भल फुलल मालिनि भल गाँथल। फुलवा विनशि गयल भवँर निरासल ॥ कह कबीर सुनो सन्तो भाइ । पंडित जन फुल रहे लुभाई ॥ ६३ ॥

शब्द ४५२-जोलहा हो बिनहु हरिमाना । जाके सुर नर मुनि भये ध्याना ॥ टेक ॥ ताना तने को अउठा लीन्हे चर्खी चारिहु वेदा । सर खूंटी इक राम नरायण पूरन परगटे भेदा ॥ भवसागर यक कठवत कीन्हो तामें माडी सानी । माडीको तन माडि रह्यो है माड़ी विरला जानी ॥ त्रिभुवन नाथ जो मंज्जन लागे स्याम मुरारया दीना । चांद सूर दुइ गोडा कीन्हो मांझ दीप किय तीना ॥ पाइ करिके भरना लीन्हों, वे बान्धेको रामा । वय भर्गी तिहुं लोके बांधे कोई न रहै उबामा ॥ तीन लोक यक कारिगह कीन्हो दिग मग कीन्हो ताना । आदि पुरुष वैठावन बैठे कविरा ज्योति समाना ॥ ६४॥

शब्द ४५३-जोगिया फिर गयो नगर मझारी । जाय समान पांच जहं नारी ॥ टेक ॥ गये देशांतर कोई न बतावे । जोगिया बहुरि गुफा नहिं आवे ॥ जरिगो कंथ ध्वजा गो टूटी । भजि गो दंड खपर गो फूटी ॥ कह कबीर यह कलिहै खोटी । जो रह करवा निकसै टोटी॥ ६५॥

शब्द ४५४-जोगियाकी नगरि बसै मत कोई । जोरे बसे सो जोगिया होई ॥ टे० ॥ वहि जोगियाको उल्टा ज्ञाना । कारा चोला नाहिं म्याना ॥ प्रकट सो कंथा गुप्ता धारी । तामें मूल सजीवनि भारी ॥ वा जोगियाकी जुगुति जो बूझे । राम रमै सो त्रिभुवन सूझे ॥ अमृत वेली छन छन पीवे । कह कबीर सो जुग जुग जीवे ॥ ६६॥

शब्द ४५५—जोपै बीजरूप भगवाना । तौ पंडितका बूझौ आना ॥ टे० ॥ कहं मन कहां बुद्धि अहंकारा । रज सत तम गुन तीन प्रकारा ॥ विष अमृत फल फूल अनेका । बहुधा वेद कहै तरवेका ॥ कह कवीर ते मैं का जानों । को धौं छूटल को अरुझानो ॥ ६७ ॥

शब्द ४५६—जो चरखा जरिजाय बढैया ना मरै । मैं कातों सूत हजार चरुखला ना जरै ॥ टे० ॥ बाबा ब्याह करायदे अच्छा बरहि तकाहु । अच्छा बर जो ना मिलै तुमहिं मोहिं विवाहु ॥ प्रथमे नगर पहुंचते परिगो शोक सन्ताप । एक अचंभो हौं देखा बेटी ब्याहै बाप ॥ समधीके घर लमधी आयो आयो बहुको भाइ । गोड चूल्हौने देरहे चरखा दियो दिढाइ ॥ देवलोक मरि जाहिंगे एक न मरै बढाय । यह मन रंजन कारने चरखा दियो दिढाय ॥ कह कबीर संतो सुनौ चरखा लखै न कोई । जाको चरखा लखि परा आवागमन न होई ॥ ६८ ॥

शब्द ४५७—जंत्री जंत्र अनूपम बाजै । वाके अष्ट गगन मुख गाजै ॥ टे० ॥ तूही गाजै बाजै तुही लिये कर डोलै । एक शब्दमें राग छत्तीसो अनहद बानी बोलै ॥ मुखको नाल सरवनको तुम्बा सतगुरु साज बनाया । जिह्वातार नाशिका चरही माया मोम लगाया ॥ गगन मंडल मां भौ उजियारा उल्टा फेर लगाया । कह कवीर जनभये विवेकी जिन जंत्री मनलाया ॥ ६९ ॥

शब्द ४५८--जस मांसु नरकी तस मांसु पशुकी रुधिर रुधिर यक सारा जी। पशुको मांस भखै सबकोई नरहिं न भखै सियारा जी॥ टे०॥ ब्रह्मकुलाल मेदिनि भरिया उपजि बिनशि कित गइयाजी। मांस मछरिया जोपै खैया जो खेतनमें बोइया जी॥ माटीको करि देवी देवा जीव काटि काटि देइया जी॥ जो तेरा है सांचा देवा खेत चरत किन लइयाजी॥ कहैं कबीर सुनो हो सन्तो राम नाम नित लेयाजी। जो कछु कियो जिह्वाके स्वारथ बदल पराया देइयाजी॥ ७०॥

शब्द ४५९.-चात्रिक कहां पुकारे दूरी। सो जल जगत रहा भरपूरी॥टे०॥ जेहि जल नाद बिन्दुका भेदा। षट कर्म सहित उपान्यो वेदा॥ जेहि जल जीव सीवका बासा। सो जल धरनि अमर प्रकाशा॥ जेहि जल उपजे सकल शरीरा। सो जल भेद न जान कबीरा॥ ७१॥

शब्द ४६०-चलहुका टेढो टेढो टेढो। दसौं द्वार नरकमें बूडे तू गंधीको वेढो॥ टे०॥ फूटे नैन हृदय नहिं सूझे मति एको नहिं जानी। काम क्रोध तृष्णाके मारे बूडि मुये बिन पानी॥ जारे देह भसम ह्वै जाई गाडे कीम किट खाई। सूकर स्वान कागके भोजन तनकी यहै बडाई॥ चेत न देखु मुगुध नर बौरे तुते काल न दूरी। कोटिन जतन करै बहुतेरे तनकी अवस्था धूरी॥ बालके

घरवामें बैठे चेतत नाहिं अजाना । कहइ कबीर यक राम-भजे बिन बूडे बहुत स्ययाना ॥ ७२ ॥

शब्द ४६१–फिरहु क्या फूले फूले फूले । जो दस मास उरध मुख झूले सो दिन काहेक भूले ॥ टे० ॥ ज्यों माखी स्वादै लहि बिहरै सोचि सोचि धन कीना । त्योंही पीछे लेहुलेहु कर भूत रहनि कछु दीना ॥ देहरी लौं बर नारी संग है आगे संग सहेला । मृतक थान संग दियो खटोला फिर पुनि हंस अकेला ॥ जारे देह भसम है जाई गाडे माँटी खाई । कांचे कुम्भ उदक जो भरिया तनकी इहै बडाई ॥ राम न रमसि मोहमें माते परयो काल वस कूवा । कह कबीर नल आप बँधायो ज्यों नलनी भरम सूवा ॥ ७३ ॥

शब्द ४६२–जोगिया ऐसो है बदकरनी । जाके गगन अकाश न धरनी ॥ टे० ॥ हाथ न वाके पाँव न वाके रूप न रेखा । विना हाट हटवाई लावै करै बयाई लेखा ॥ करम न वाके धरम न वाके जोग न वाके जुगती । सिंगी पत्र कछुव नहिं वाके काहेक माँगै भुगती ॥ तै मोहि जाना मैं तोहिं जाना मैं तोहि माह समाना । उत्पति परलय एक नहिं होती तब कहुं कौन को ध्याना । जोगिया एक आनि किय ठाढो राम रहा भरि पूरी । औषधि मूल कछुव नहिं वाके राम सजीवनि मूरी ॥ नटवत बाजी पेखनी पेखै बाजीगरकी बाजी । कहै कबीर सुनो हो संतो भई सो राज विराजी ॥ ७४ ॥

शब्द ४६३—ऐसो भरम बिगुरचिन भारी। वेद किताब दीन औ दोजख को पुरुष को नारी॥ माटीको घट साज बनाया नाद बिंद समाना। घट बिनशे क्या नाम धरहुगे अहमक खोज भुलाना॥ एकै हाड़ त्वचा मल मूत्रा रुधिर गूद यक मूद्रा। यक बिन्दु ते सृष्टि रच्यो है को ब्राह्मन को शूद्रा॥ रजोगुनि ब्रह्म तमोगुनि शंकर सतोगुनी हरि सांई, कहै कबीर राम रमि रहियो हिन्दू तुरुक न कोई॥ ७८॥

शब्द ४६४—आपनपो आपहि बिसरयो। जैसे सोनहा कांच मदिलमें भरमत भूंकि मरयो॥ टे०॥ ज्यों केहरि वपु निरखि कूप जल प्रतिमा देखि परयो। ऐसेहि मदगज फटिक शिलापर दसनन आनि अरयो॥ मरकट मूठी स्वाद न बिहुरै घर घर नटत फिरयो। कह कबीर नलनीके सुवना तोहि कौने पकरयो॥ ७६॥

शब्द—४६५—आपन आश कियो बहुतेरा। काहु न मरम पाव हरि केरा॥ टे०॥ इन्द्री कहां करै बिसरामा। सो कहँ गये जो कहते रामा॥ सो कहँ गये होत स्यान। होय मृतक यहि पदहि समान॥ रामानन्द रामरस छाके। कह कबीर हम कहि कहि थाके॥ ७७॥

शब्द ४६६—अब हम जाना हो हरि बाजीको खेल। डंक बजाय देखाय तमाशा बहुरि सो लेत सकेल॥ टे०॥ हरि बाजी सुर नर मुनि जहँडे माया चेटक लाया। घरमें

डारि सबन भरमाया हृदया ज्ञान न आया ॥ बाजी झूठ बाजीगर साँचा साधुनकी मति ऐसी । कहहिं कबीर जिन जैसी समुझी ताकी गति भइ तैसी ॥ ७८ ॥

शब्द ४६७–कहो हो अम्बर कासों लागा । चेतन हारे चेतु सुभागा ॥ अम्बर मध्ये दीसै तारा । यक चेतै दूजै चेतवन हारा ॥ टे०॥ जेहि खोजै सो उहँवा नाहीं । सो तो आहि अमरपद माहीं ॥ कह कबीर पद बूझै सोई । मुख हृदया जाके यक होई ॥ ७९ ॥

शब्द ४६८–बन्दे करिले आप निवेरा । आप जियत लखु आप ठवर करु मुये कहाँ घर तेरा ॥ टेक ॥ यहि अवसर नहिं चेतौ प्रानी अन्त कोई नहीं तेरा । कहैं कबीर सुनो हो संतो कठिन कालको घेरा ॥ ८० ॥

शब्द ४६९–रहु ररां मम्माकी भांती हो सब संत उधारन चूनरी ॥ टे० ॥ बालमीकि बन बोइया चूनि लिया शुक देव । कर्म बेनौरा ह्वै रह्यो सुत काते जयदेव ॥ तीन लोक ताना तनो ब्रह्मा विष्णु महेश । नाम लेत मुनि हारिया सुरपति सकल नरेश ॥ विन जिह्वा गुन गाइया विन वस्तीका गेह । सूने घरका पाहुना तासों लावे नेह ॥ चार वेद कैंडा कियो निरंकार किय रास । विनै कबीरा चूनरी पहिरै हरिके दास ॥ ८१ ॥

शब्द ४७०–तुम यहि विधि समझौ लोई । गोरी मुख मंदिर बजोई ॥ टे० ॥ एक सगुन षट चक्रहिं बेधै विनु

वृषभ कोल्हू मांजे । ब्रह्म पकारि अग्नि मां होमैं मछ गगन चढ़ि गाजे ॥ नितै अमावस नितै ग्रहन होय राहु ग्रास नित दीजे । सुरभा भच्छन करैं बेद मुख घर बरसें तन छीजे ॥ पहुमिक पानी अम्बर भरिया यह अचरज को कीजे । त्रिकुटि कुंडल मध मन्दिर बाजे औघट अम्बर भीजे ॥ कहै कबीर सुनो हो संतो जोगिन सिद्धी प्यारी। सदा रहै सुख संजम अपने बसुधा आदि कुंवारी ॥ ८२॥

शब्द ४७१—मुला रे अहमक नादाना । तुम हरदम रामहिं ना जाना ॥ टे०॥ बरबस आनिके गाय पछारी गला काट जिव आप लिया । जीता जीव मुरदा करि-डारे तिसको कहत हलाल किया ॥ जाहि माँसुको पाक कहत हैं ताकी उनपति सुनु भाई । रज बीरज सो माँस उपानी मासु नापाक जो तुम खाई ॥ अपनो दोष कहत नहिं अहमक कहत हमारे बडेन किया । उसकी खून तुम्हारी गर्दन जिन तुमको उपदेश दिया ॥ सियाही गई सफेदी आई दिल सफेद अजहूं न हुआ । रोजा निमाज बांग क्या कीजे हुजरे भीतर बैठि मुआ ॥ पंडित वेद पुरान पढै मुलना पढै सो कुराना । कह कबीर वे नरक गये जिन हरदम रामहिं ना जाना ॥ ८३ ॥

शब्द ४७२--काजी तुम कौन किताब बखाना । झंखत बकत रहौ निशि बासर मति एको नहिं जाना ॥ टे० ॥ सकति न माने सुनति करतहो मैं न बदोंगा

भाई । जो खोदाय तुव सुनति करत तो आप काटि किन आई ॥ घालि जनेऊ ब्राह्मन होना मेहरीको क्या पहिराया । वो तो जन्मकी शूद्रिन परोसा सो तुम पांडे क्यों खाया ॥ हिन्दू तुरुक कहांते आये किन यह राह चलाई । दिलमें खोजु खोज दिलहीमें भिस्त कहां किन पाई ॥ ८४ ॥

शब्द ४७३–भूला लोग कहै घर मेरा । जा घर-वामें फूला डोलै सो घर नाहीं तेरा ॥ टे० ॥ हाथी घोडा बैल बाहनो संग्रह कियो घनेरा । बस्तीमेंसे दियो खदेरी जंगल कियो बसेरा ॥ गांठी बांध खरच नहिं पठयो बहुरि कियो नहिं फेरा । बीबी बाहर हिरम महलमें बीच मियां को डेरा ॥ नौ मन सूत अरुझि नहिं सुरझै जनम जनम अरुझेरा । कहैं कबीर सुनो हो संतो यहि पद का करो निवेरा ॥ ८५ ॥

शब्द ४७४–कबिरा तेरो घर कंदलामें यह जग रहत भुलाना । गुरुकी कही करत नहिं कोई अमहल महल दिवाना ॥ टेक ॥ सकल ब्रह्ममें हंस कबीरा काग न चोंच पसारा । मनमत कर्म धरे सब देही नाद बिंदु बिस्तारा ॥ सकल कबीरा बोले बानी पानीमो घर छाया । लूटि अनन्त होत घट भीतर घटका मरम न पाया ॥ कामिनि रूपी सकल कबीरा मिरगा चरिन्दा होई । बड़ बड़ ज्ञानी मुनिवर थाके पकरि सकै नहिं कोई ॥ ब्रह्मा वरुन कुबेर

पुंरदर पीपा प्रल्हाद चाखा । हिरनाकुश नख उदर विदारा तिनहुक काल न राखा ॥ गोरख ऐसो दत्त दिगम्बर नाम देव जयदेव दासा । उनकी खबर कहत नहिं कोइ कहां कियो है वासा ॥ चौपर खेल होत घट भीतर जन्मके पासा ढारा । दम दमकी कोइ खबरि न जाने करि न सके निरुआरा ॥ चारि दिशा महिमंड रच्यो है रूम साम बिच डिल्ली । ता ऊपर कछु अजब तमाशा मारे है जम किल्ली ॥ सकल अवतार जासु महि मंडल अनंत खडो कर जोरे । अद्भुत अगम अथाह रच्यो है ई सब शोभा तोरे ॥ सकल कबीरा बोले बीरा अजहूं हो हुशियारा । कहे कबीर गुरु सिकली दरपन हरदम करो पुकारा ॥ ८६ ॥

शब्द ४७५–कबिरा तेरो घर कन्दलामें मने अहेरा खेलै । वपुबारी आनन्द मिरगा रुची रुची सर मेलै ॥ टेक ॥ चेतन रावल पावन खेडा सहजहिं मूलै बांधे । ध्यान धनुष धरि ज्ञान बान बन जोगसार सरसाधे ॥ षटचक्र बेधि कमल बेध्यो जब जाय उजारी कीन्हा । काम क्रोध अरु लोभ मोह ये हांकि साउजन दीन्हा ॥ गगन मध्य रोक्यो सो द्वारा जहां दिवस नहिं राती । दास कबीर जाय सो पहुंच्यो सब बिछुरच्यो संग संघाती ॥ ८७ ॥

शब्द ४७६–सावज न होई भाइ सावज न होइ । वाको मांस भखे सब कोइ ॥ टेक ॥ सावज एक सकल

संसारा अविगति बाकी बाता। पेट फारि जो देखिय रे भाई आहि करेज न आंता॥ ऐसी बाकी माँसु रे भाई पल पल मासु बिकाई। हाड गोड लै धूरि पवांरे आगि धुवां नहिं खाई॥ शिर औ सींग कछू नहिं बाके पूछ कहां वह पाई। सब पंडित मिलि धनधे पारिया कबीर बनौरी गाई॥ ८८॥

शब्द ४७७—सुभागे केहि कारन लोभ लागे रतन जनम खोयो। पूरब जनम भूमिके कारन बीज काहेको बोयो॥ टेक॥ पानीसे जिन पिंडे साजे अग्निहिं कुंड रहाया। दसे मास माताके गरभ कढि बहुरि लागिलि माया॥ बालकसे पुनि ब्रिध हुआ है होनी रही सो होवे। जब जम ऐहैं बांधि ले जैहैं नयन भरीभरि रोये॥ जीवन कै जनि आशा राखो काल गेहेहै स्वासा। बाजी है संसार कबीरा चित चेति ढारो पासा॥ ८९॥

शब्द ४७८—संत महंतो सुमिरो सोई जो काल फांस ते बांचा होई॥ टे०॥ दत्तात्रेय भरम नहिं जाना मिथ्या स्वाद भुलाना। सलिला मथिके घृतिको काढयो ताहि समाधि समाना॥ गोरख पवन रखै नहिं जाना जोग जुगति अनुमाना। रिद्धि सिद्धि संजम बहुतेरा पारब्रह्म नहिं जाना॥ बसिष्ठ सिष्ट विद्या सम्पूरण राम ऐसे शिष्य साखा। जाहि रामको करता कहिये तिनहुंको काल न

राखा ॥ हिन्दू कहै हमें लै जरवै तुरुक कहै मोर पीर। दूनों आइ दीनमों झगरें ठाढे देखें हंस कबीर ॥ ९० ॥

शब्द ४७९–जो देखा सो दुखिया देखा तन धरि सुखी न देखा । उदय अस्तकी बात कहत हौं ताकर करहु विवेखा ॥ टे० ॥ बांटे बांटे सब कोइ दुखिया क्या गिरही वैरागी । शुकाचार्य दुखहीके कारन गरभै माया त्यागी ॥ जोगी दुखिया जंगम दुखिया तापसको दुख-दूना । आशा तृष्ना सब घट व्यापै कोइ महल नहिं-सूना ॥ साच कहौं तो सबै जग खीझै झूठ कहो नहिं जाई । कह कबीर तेई भै दुखिया जिन यह राह चलाई ॥९१॥

शब्द ४८०–ता मनको चिन्हो रे भाई । तन छूटै मन कहां समाई ॥ टे० ॥ सनक सनन्दन जयदेव नामा । अम्बरीष प्रहलाद सुदामा ॥ भक्त सही मन उनहूं न जाना । भगति हेतु मन उनहुं न झाना ॥ भरथरि गोरख गोपी चंदा । ता मन मिलि मिलि कियो आनन्दा ॥ जा मनको कोइ जान न भेवा । ता मन मगन भये शुक-देवा । एकल निरंजन सकल शरीरा । तासे भ्रमि भ्रमि रहल कबीरा ॥ ९२ ॥

शब्द ४८१–बाबू ऐसो है संसार तिहारो ये कलि है व्यवहारा । को अब अनख सहै प्रति दिनको नाहिं न रहनि हमारा ॥ टे० ॥ सुमृति सुभाव सबै कोइ जानै हृद-या तत्त्व न बूझै । निरजिव आगे सरजिव थापै लोचन कछुन

न सूझे ॥ तजि अमृत विष काहे को अंचवे गांठी बांधो खोटा । चोरनको दिये पाट सिंहासन साहुनको कीन्हो ओटा ॥ कह कवीर झूठे मिलि झूठा ठगहीं ठग व्यवहारा । तीन लोक भरि पूरि रहो है नाहीं है पतियारा ॥ ९३ ॥

शब्द ४८२–कहौ निरंजन कवनी वानी । हाथ पां मुख सरवन नहिं जिह्वा का कहि जपहु हो प्रानी । टे० ॥ जोतिहिं जोति जोति जो कहिय जोति कौन सहिदानी । जोतिहि जोति जोति दै मारै तब कहं जोति समानी ॥ चार वेद ब्रह्मा निज कहिया तिनहुँ न या गति जानी । कहैं कवीर सुनो हो संतो बूझहु पंडित ज्ञानी ॥ ९४ ॥

शब्द ४८३–को अस करै नगर कोतवलिया । मास फैलाय गिध रखवरिया ॥ मूस भौ नाव मंजार कँडहरिया ॥ सोवै दादुर सरप पहरिया ॥ बैल बिलाय गाय भइ बांझा । बछवे दुहिया तिन निन सांझा ॥ नित उठि सिंह सियार सो जूझै । कविरके पद जन विरला बूझै ॥ ९५ ॥

शब्द ४८४–का कहिये रोवहुगे बहु तेरा । बहुतक गये फिरे नहिं फेरा ॥ टे० ॥ हम रोया तब तै न संभारा । गरभवासकी बात विचारा ॥ अब तैं रोया क्या तैं पाया । केहि कारन तैं मोहिं रोवाया ॥ कहै कवीर सुनो नर लोई । कालके वसहिं परो मत कोई ॥ ९६ ॥

शब्द ४८५–अल्लह राम जिव तेरी नाई । जन पर मेहर होहु तुम साँई ॥ टे० ॥ का मूडी भूमि शिर नाय का जल देह नहाये । खून करै मिसकीन कहावै अवगुन रहै छिपाये ॥ क्या भो वज्जू मज्जन कीन्हे का मसजिद शिर नाये । हृदया कपट निमाज गुजारे कहा भो मक्का जाये ॥ हिंदू एकादशि चौविस रोजा मुसलिम तीस बनाये ग्यारह मास कहो किन टारो, एकहि माहिं समाये ॥ पूरब दिशा हरिको बासा, पच्छिम अल्लह मुकामा । दिलमें खोज दिलैमें देखो, यहै करीमा रामा ॥ जो खुदाय मसजिद बसतु है, और मुलुक केहि केरा । तीरथ मूरत राम निवासी, दुहुमें किनहु न हेरा ॥ वेद कितेब कहो किन झूठा, झूठा जो न विचारै । सब घट एक एक करि लेखै, भो दूजा करि मारै । जेते औरत मरद उपाने, सो सब रूप तुम्हारा । कबीर पोगरा अलह रामका, सो गुरु पीर हमारा ॥ ९७ ॥

शब्द ४८६–आवबे आव मुझे हरिको नामा । और सकल तजु कौने कामा ॥ टे० ॥ कहँ तब आदम कहँ तब होआ । कहँ तब पीर पैगम्बर हुआ ॥ कहँ तर जमी कहँ अशमाना । कहँ तब वेद किताब कुराना ॥ जिन्ह दुनियामें रची मसीद । झूठे रोजा झूठी ईद ॥ साँच एक अल्लहको नामा । ताको नयनय करहु सलामा ॥ कहु धौं बिहिस्त कहाँ ते आई । किसके कहे तुम छुरी चलाई ॥

करता किरतम बाजी लाई। हिंदू तुरुक दुई राह चलाई ॥ कहँ तव दिवस कहाँ तब राती। कहँ तव किरतिमकी उत्पाती ॥ नहिं वाकि जात नहिं वाकि पाँती। कहहि कवीर वाके दिवस न राती ॥ ९८ ॥

शब्द ४८७–अब कहँ चलेहु अकेले भिता। उठि किन करहु घरहुकी चिंता ॥ टे० ॥ खीर खांड घृत पिंड सँवाँरा। सो तन लै बाहर करि डारा ॥ जेहि शिर रचि रचि बाँधो पागा। सो शिर रतन बिडारहिं कागा ॥ हाड जरै जस लकडी झूरी। केश जरै जस त्रिनकी कूरी ॥ आवत संग न जात संघाती। काह भये दल बाँधे हाती ॥ मायाके रस लेहु नहि पाया। अंतर जम बिलारि होय आया ॥ कह कवीर नल अजहुँ न जागा। जमका मोगरा मध शिर लागा ॥ ९९ ॥

शब्द ४८८–देखो लोगो हरिकि सगाई। माय धरै पुत धिया संग जाई ॥ टे० ॥ साधु ननद मिलि अदल चलाई। मादरियाके घर बैठी आई ॥ हम बहनोई राम मोर सारा। हमहीं बाप हरि पुत्र हमारा ॥ कहै कवीर हरिके बूता। राम रमे ते कुकरिक पूता ॥ १०० ॥

शब्द ४८९–देखि देखि जिय अचरज होई। यह पद बूझे बिरला कोई ॥ टे० ॥ धरती उलटि अकाशे जाई। चींटीके मुख हस्ति समाई ॥ बिन पवने जहँ परवत ऊडे जिया जंतु सब बिरछा बूडे ॥ सूखे सरवर उठै हिलोल।

विनु जल चकवा करै कलोल ॥ बैठा पंडित पढै पुरान। बिन देखे का करै बखान ॥ कहहिं कबीर जो पदको जान। सोई संत सदा परमान ॥ १०१ ॥

शब्द ४९०—हो दारि कीले देहुं तोहि गारी। तुम समुझ सुपंथ बिचारी ॥ टे० ॥ घरहुके नाह जो अपना। तिनहूँ सो भेंट न सपना ॥ ब्राह्मन औ क्षत्री बानी। तिनहू कहल न मानी ॥ जोगी औ जंगम जेते। आपु गये हैं ते ते ॥ कहहिं कबीर इक जोगी। भरमिभरमि भौ भोगी ॥१०२॥

शब्द ४९१—लोगो तुम मतिके भोरा। ज्यों पानीमें पानी मिलिगौ, ज्यों ढुरि मिलै कबीरा ॥ टे० ॥ जो मैथिलको सच्चा नाम। तो मरन होय मगहर पास। मगहर मरै मरन नहिं पावै। अनत मरै तो राम लजावै ॥ का काशी का मगहर उस्सर, (जो पै) हिरदय राम बसु मोरा। जो काशी तन तजै कबीरा, रामै कौन निहोरा ॥ १०३॥

शब्द ४९२—कैसे के तरो नाथ कैसे के तरो, अब बहु कुटिल भरो ॥ टे० ॥ कैसी तेरी सेवा पूजा, कैसो तेरो ध्यान। ऊपर उज्जर देखो, बग अनुमान ॥ भाव तो भुवंगम देखो, अति बिभिचारी ॥ सुरति सचान तेरी, मति तो मंजारी ॥ अतिरे बिरोधी देखो, अतिरे दिवाना। छौ दरशन देखो, भेष लपटाना ॥ कहहिं कबीर सुनो नल बंदा। डाइन डिम्भ सकल जग खंदा ॥ १०४ ॥

शब्द ४९३—यह भरम भूत सकल जग खाया।

जिन जिन पूजा तिन जहं डाया ॥ टे० ॥ अंड न पिंड प्रान नहिं देहा । काटि काटि जिव केतिक एहा ॥ बकरी मुरगी कीन उछेहा । आगिल जनम उन अवर लेहा ॥ कहहिं कबीर सुनो जन लोई । भुतवाके पुजले भुतवे होई ॥ १०५ ॥

शब्द ४९४–भँवर उड़े बग बैठे आया । रैन गयी दिवसो चलि जाया ॥ हल हल कांपे बाला जीव । ना जानो का करिहै पीव ॥ कांचे बासन टिकै न पानी । उडिगौ हंस काया कुंभिलानी ॥ काग उडावत भुजा पिरानी । कह कबीर यह कथा सिरानी ॥ १०६ ॥

शब्द ४९५–खसम बिनु तेलिके बैल भयो । बैठत नाहिं साधुकी संगति, नाधे जनम गयो ॥ टे० ॥ बहि बहि मरै पचै निज स्वारथ, जमके दंड सहो । धन दारा सुत राज काज हित, माथे भार गहो ॥ खसमहिं छाडि विषय रंग माते, पापके बीज बयो । झूठ मुकुति नर आश जिवनकी, प्रेतको जूठ खयो ॥ लख चौरासी जीव जोइनमें, शायर जात बहो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, स्वानकी पूंछ गहो ॥ १०७ ॥

शब्द४९६–अब हम भैल बहिर जल मीना । पूरब जनम तप कामद कीना ॥ टे० ॥ तब मैं अछलों मन बैरागी । तजलौं कुटुम्ब राम रट लागी ॥ तजलों काशी मैं मति भोरी । प्राननाथ कहु को गति मोरी ॥ हम चलि गैलौं

तुम्हरो मरना । कबहुँ न देखलौं हरिजिको चरना ॥ हमहिं कुमतिक कि तुमहिं अयाना । दुइ महँ दोष काहि भगवाना ॥ हम चलि गेल तुम्हारे पासा । दास कबीर भल कैल निराशा ॥ १०८ ॥

शब्द ४९७-जोग बोले दुरि गये कबीर । या मति कोइ जानै धीर ॥ टे० ॥ दसरथ सुत तिहुँ लोकहिं जाना । राम नामको मरनमें आना ॥ जेहि जिय जान परा जस लेखा । रजुको कहै उरग का पेखा ॥ जदपि फल उत्तम गुन जाना । हरिहिं छोडि मन मुकुति अनुमाना ॥ हरि अधार जस मीनहिं नीरा । और जतन कछु कहै कबीरा ॥ १०९ ॥

शब्द ४९८-अपनो करम न मेटो जाई । करमक लिखा मिटै धौं कैसे, जो जुग कोटि सिराई ॥ टेक ॥ गुरु वसिष्ठ मिलि लगनसो धाई, सूरज मंत्र इक दीन्हा । जो सीता रघुनाथ ब्याही, पल इक संचु न कीन्हा ॥ नारद मुनिको वदन छिपायो, कीन्हों कपिको रूपा । शिशु पालहुको भुजा उपारी, आपन बोध सरूपा ॥ तीन लोकके करता कहिये, वालि बधो बरियाई । एक समय ऐसी बनि आई, उनहूं औसर पाई ॥ पारवतीको बांझ न कहिये, ईश न कहिय भिखारी । कह कबीर करताकी बातें, करमकी बात नियारी ॥ ११० ॥

शब्द ४९९-है कोइ गुरु ज्ञानी जगत महं, उलटि वेद को बूझे ॥ पानीमें पावक जरे अन्धे आंखी सूझे ॥ टे० ॥

गइया तो नाहरको खायी, हरना खायो चीता। कागा लंगरे फादिके, बटेरन बाजे जीता॥ मूसा तो मंजारहिं खायो, सियारे खायो स्वाना। आदि को ऊ देश जाने, तासो बैसै बाना॥ एकहि दादुर सो खायो पांचों जे भुवंगा। कहैं कवीर पुकारि के है दोऊ यक संगा॥ १११॥

शब्द ५००—झगरा इक बढो जिय जान। जो निरुवारे सो निरबान॥टे०॥ ब्रह्म बडा कि, जहँ ते आया। बेद बडा कि, जिन उपजाया॥ ई मन बडा कि, जिहिं मन आना। राम बडा कि, रामहिं जाना॥ भरमि भरमि कविरा, फिरै उदास। तीरथबडा कि, तिर थक दास॥ ११२॥

शब्द ५०१—झूठे जनि पतियावहु हो, सुनु संत सुजाना। घटहीमें ठग पूर है, मत खोवहु अजाना॥ टेक॥ झूठेका मंडान है, धरती अशमाना। दसहूं दिशा जाके फन्द है, जिव घेरे आना॥ जोग जग तप संजमा, तीरथ बरत दाना। नौधा वेद कितेब है, झूठेका बाना॥ काहूके बचनहिं फुरे, काहू करमाती। मान बडाई लेरहै, हिन्दू तुरुक दुइ जाती॥ बात कथे अशमानकी, मुद्दत नियरानी। बहुत खुदी दिल राखते, बूड़े विनु पानी॥ कहै कवीर कासों कहौं, सकलो जिव अन्धा। सांचे सो भागे फिरे, झूठेसो बन्धा॥ ११३॥

शब्द ५०२—सार शब्दसे बाँचि है, मानहु इतबारा हो॥ टेक॥ आदि पुरुष इक वृक्ष है, निरंजन डारा हो।

त्रिदेवा साग्वा भये, पत्ता संसारा हो ॥ ब्रह्मा वेद सही कियो शिव जोग पसारा हो ॥ विष्णु माया उतपति किया, उरले बेवहारा हो ॥ तीन लोक दसहुं दिशा, जम रोकिन द्वाराहो । कीर होय सब जीयरा, लीन्हे विषको चारा हो ॥ जोतिसरूपी हाकिमा जिन अमल पसारा हो । करमकी बंसी लायके, पकरो जग साराहो ॥ अमल मिटाऊं तासुका, पठवों भव पारा हो । कहै कवीर निरभय करों, परखो टकसारा हो ॥ ११४ ॥

शब्द ५०३–संतो ऐसी भूल जगमांहीं । जाते जीव मिथ्यामें जाहीं ॥ टे० ॥ पहिले भूले ब्रह्म अखंडित, झाईं आपुहि मानी । झाईं मानत इच्छा कीन्हा, इच्छातें अभिमानी । अभिमानी करता होय बैठे, नाना पंथ चलाया । वोही भूलमें सब जग भूले, भूलक मरम न पाया॥लख चौरासी भूलते कहिये,भूलहिं जग बिटमाया॥ जो है सनातन सोई भूला अब सोइ भूलहिं खाया ॥ भूल मिटे गुरु मिले पारखी, पारख देइ लखाई । कहहिं कवीर भूलकी औषध, पारख सबकी भाई ॥ ११५ ॥

इति बीजकका शब्द ॥ ११५ ॥

---

भेदवाणी ।

शब्द ५०४–कर नैनों दीदार महल में प्यारा है॥ टे०॥ काम क्रोध मद लोभ बिसारो, शील सँतोष छिमा सत धारो । मद मांस मिथ्या तजि डारो, हो ज्ञान घोडे असवार भरम से न्यारा है ॥ १ ॥ धोती नेती बस्ती

पाओ, आसन पदम जुगतसे लाओ। कुम्भक कर रेचक करवाओ, पहिले मूल सुधार कारज हो सारा है॥ २॥ मूल कँवल दल चतुर बखानो, कलिंग जाप लाल रंग मानो। देव गनेश तहँ रोपा थानो, रिध सिध चँवर ढुलारा है॥ ३॥ स्वाद चक्र षटदल विस्तारो, ब्रह्म सावित्री रूप निहारो। उलटि नागिनी का शिर मारो, तहाँ शब्द ओंकारा है॥४॥ नाभी अष्ट कमल दल साजा, सेत सिंहासन बिष्णु बिराजा। हिरिंग जाप तासु मुख गाजा, लछमी शिव आधारा है॥५॥ द्वादश कमल हृदयके माहीं, जंग गौर शिव ध्यान लगाई। सोहं शब्द तहाँ धुन छाई, गन करै जैजैकारा है॥६॥ दो दल कमल कंठ के माहीं, तेही मध बसे अविद्या बाई। हरि हर ब्रह्मा चँवर ढुराई, जहं श्रींग नाम उचारा है॥७॥ ता पर कंज कमल है भाई बग भौंरो दुइ रूप लखाई। निज मन करत तहाँ ठकुराई, सो नैनन पिछवारा है॥८॥ कमलन भेद किया निर्वारा, यह सब रचना पिंड मँझारा। सतसँग कर सतगुरु शिर धारा, वह सत नाम उचारा है॥९॥ आँख कान मुखबन्द कराओ, अनहद झिंगा शब्द सुनाओ। दोनों तिल इक तार मिलाओ, तब देखो गुलजारा है॥ १०॥ चंद सूर एक घर लाओ, सुषमन सेती ध्यान लगाओ। तिरबेनीके संधि समाओ, भौर उतर चल पारा है॥ ११॥ घंटा शंख सुनो धुन दोई, सहस्र कमल दल जगमग होई। ता

मध्य करता निरखो सोई, बंकनाल धस पारा है ॥१२॥ डाकिनी बहु किलकारें, जम किंकर धर्म दूत हकारें। सत्तनाम सुन भागे सारें, जब सतगुरु नाम उचारा है ॥ १३ ॥ गगन मँडल बिच उर्धमुख कुइया, गुरुमुख साधू भरभर पीया। निगुरे प्यास मरे बिन कीया, जाके हिये अँधियारा है ॥१४॥ त्रिकुटी महलमें विद्या सारा, घनहर गरजे बजे नगारा। लाल बरन सूरज उजियारा, चतुर कमल मंझार शब्द ओंकारा है ॥१५॥ साध सोई जिन यह गढ लीन्हा, नौ दरवाजे परगट चीन्हा। दसवाँ खोल जाय जिन दीन्हा, जहाँ कुलुफ रहा मारा है ॥१६॥ आगे सेत सुन्न है भाई, मानसरोवर पैठि अन्हाई। हंसन मिलि हंसा होई जाई, मिलै जो अमी अहारा है ॥१७॥ किंगरी सारँग बजै सितारा, अच्छर ब्रह्म सुन्न दरबारा। द्वादश भानु हंस उँजियारा, खट दल कमल मँझार शब्द ररंकारा है ॥१८॥ महा सुन्न सिंध विषमी घाटी, बिन सतगुरु पावे नहिं बाटी। व्याघर सिंह सरप बहु काटी, तहं सहज अचिंत पसारा है ॥ १९ ॥ अष्ट दल कमल पारब्रह्म भाई, दहिने द्वादश अचिंत रहाई। बायें दसदल सहज समाई, यों कमलन निरवारा है ॥ २० ॥ पाँच ब्रह्म पाँचों अँड बीनो, पाँच ब्रह्म निःअच्छर चीन्हों। चार मुकाम गुप्त तहं कीन्हो, जा मध बंदीवान पुरुष दरबारा है ॥२१॥ दोपर्वतके संध निहारो भँवर गुफातें संत

पुकारो । हंसा करते केल अपारो, तहँा गुरन दर्बारा है ॥२२॥ सहस अठासी दीप रचाये, हीरे पन्ने महल जड़ाये। मुरली बजत अखंड सदाये, तहँ सोहं झनकारा है ॥२३॥ सोहं हद्द तजी जब भाई, सत्तलोककी हद्द पुनि आई। उठत सुगंध महा अधिकाई, जाको वार न पारा है ॥२४॥ षोड़स भानु हंसको रूपा, बीना सत धुन बजै अनूपा। हंसा करत चँवर शिर भूपा, सत्तपुरुष दर्बारा है ॥ २५ ॥ कोटिन भानु उदय जो होई, एतेही पुनि चंद्र लखोई। पुरुष रोम सम एक न होई, ऐसा पुरुष दिदारा है ॥२६॥ आगे अलख लोक है भाई, ऐसा अलख पुरुषकी तहँ ठकुराई । अरबन सूर रोम सम नाहीं, ऐसा अलख निहारा है ॥ २७ ॥ ता पर अगम महल इक साजा अगम पुरुष ताहिको राजा। खरबन सूर रोम इक लाजा, ऐसा अगम अपारा है ॥ २८ ॥ ता पर अकह लोक है भाई, पुरुष अना मय तहां रहाई । जो पहुँचा जानेगा वाही, कहन सुनन ते न्यारा है ॥ २९ ॥ काया भेद किया निरुवारा, यह सब रचना पिंड मँझारा । मायां अवगति जाल पसारा, सो कारीगर भारा है ॥ ३० ॥ आदि माया कीन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिंड दिखाई । अवगति रचन रची अँड माहीं, ताका प्रतिबिंब डारा है ॥ ३१ ॥ शब्द बिहंगम चाल हमारी, कहैं कबीर सतगुरु दइ तारी। खुले कपाट शब्द झनकारी, पिंड अंडके पार सो देश हमारा है ॥ ३२ ॥

शब्द ५०५-कर नैनों दीदार यह पिंडसे न्यारा है। तू हिरदे सोच विचार यह अंड मँझारा है॥ टेक॥ चोरी जारी निंदा चारो, मिथ्या तज सतगुरु शिर धारो। सतसँग कर सत नाम उचारो, तब सनमुख लहो दिदारा है॥१॥ जे जन ऐसी करी कमाई, तिनकी फैल जग रोशनाई। अष्ट प्रमान जगह सुख पाई, तिन देखा अंड मँझारा है॥ सोई अंडको अवगत राई, अमर कोट अकह नकल बनाई। शुद्ध ब्रह्म पद तह ठहराई, सो नाम अनामी धारा है॥२॥ सातवीं सुन्न अंडके माहीं, झिलमिलाहटकी नकल बनाई। महा काल तहँ आन रहाई, सो अगम पुरुष उच्चारा है॥४॥ छठवीं सुन्न जो अंड मँझारा, अगम महलकी नकल सुधारा। निरगुन काल तहाँ पग धारा, सो अलख पुरुष कहु न्यारा है॥५॥ पंचम सुन्न जो अंडके माहीं, सत्तलोककी नकल बनाई। माया सहित निरंजन राई, सो सत्त पुरुष दीदार है॥६॥ चौथी सुन्न अंडके माहीं, पद निरबानकी नकल बनाई। अविगत कला है सतगुरु आई। सो सोहं पद सारा है॥७॥ तीजी सुन्नका सुनो बडाई, एक सुन्नके दोय बनाई। ऊपर महासुन्न अधिकाई, नीचे सुन्न पसारा है॥८॥ सतवीं सुन्न महाकाल रहाई, तासु कला महासुन्न समाई। पारब्रह्म कर थाप्यो ताही, सो निःअच्छर सारा है॥९॥ छठवीं सुन्न जो निरगुन राई, तासु कला या सुन्न समाई। अच्छर ब्रह्म कहैं पुनि

ताही, सोई शब्द ररंकारा है ॥ १० ॥ पंचम सुन्न निरंजन राई, तासु कला दूजी सुन छाई । पुरुष प्रकिरती पदवी पाई, शुद्ध सरगुन बचन पसारा है ॥ ११ ॥ पुरुष प्रकृति दूजी सुन माहीं, तासु कला परथम सुन आई । जोत निरंजन नाम धराई, सरगुन स्थूल पसारा है ॥ १२ ॥ परथम सुन्न जो जोत रहाई, ताकी कला अविद्या बाई । पुत्रन सँग पुत्री उपजाई, यह सिंध बैराट पसारा है ॥ १३ ॥ सतवें अकाश उतर पुनि आई, ब्रह्मा विष्नु समाधि जगाई ॥ पुत्रन सँग पुत्री परनाई, यहँ शृंग नाम उचारा है ॥ १४ ॥ छठे अकाश शिव अवगति भौंरा, जंग गौर रिधि करती चौरा ॥ गिरि कैलाश गन करते सोरा, तहँ सोहं शिर मौरा है ॥१५॥ पंचम अकाश में बिष्नु बिराजे, लछमी सहित सिंहासन गाजै ॥ हिरिंग बैकुंठ भगत समाजे, जिन भक्तन कारज सारा है ॥१६॥ चौथे अकाश ब्रह्मा बिस्तारा, सावित्री सँग करत बिहारा । ब्रह्म रिधि ओं पद सारा, यह जग सिरजनहारा है ॥ १७ ॥ तीजे अकाश रहे धर्मराई, नरक स्वर्ग जिन लीन्ह बनाई । करमन फल जीवन भुगताई, ऐसा अदल पसारा है ॥१८॥ दूजे अकाश मैं इन्द्र रहाई, देव मुनी बासा तहँ पाई । रंभा करती निरत सदाई, कलिंग शब्द उच्चारा है ॥१९॥ प्रथम अकाश मृत्यु है लोका मरन जनम का नित जहँ धोखा । सो हंसा पहुँचे सत लोका, जिन सतगुरु नाम

उच्चारा है ॥ २० ॥ चौदह तबक किया निरवारा, अब नीचेका कहों सुनो विचारा। सात तबक में छः रखवारा। भिन भिन सुनो पसारा है ॥ २१ ॥ शेष धौल बाराह कहाई, मीन कच्छ औ कूरम रहाई। सो छः रहे सातके माहीं, यह पाताल पसारा है ॥ २२ ॥

## गजल कव्वाली आरम्भ। *

कव्वाली १-मेरी नैया पडी भवसागर में सतगुरु इसे पार लगा देना। ये आधि औ व्याधि सतातरही, इनसे प्रभु मोहिं बचालेना॥ में शिष्यतो आपका कहलाया, नहिं करम धरम कुछ बनि आया। करुणानिधान कीजे दाया, दिलसे मेरा दोष हटा देना॥ पापी हूं पतित मलीन हूं मैं, सब भांति लाचार ओ दीन हूं मैं। साहब बस तेरे आधीन हूं मैं, तारो अब चाहे डुबा देना॥ विनतीपे मेरी ध्यान धरो, संकटको मेरे अब बेग हरो। मेरे शुद्ध अचार विचार करो, मेरी बिगडी समयको बना देना॥ सतज्ञान प्रदान मुझे करदो, बल बुद्धी दे निरभय करदो। मेरे पापोंको परलय करदो, मुझे कदमोंमें अपने बुलालेना॥ दुख हरन तुम्हारा नाम भि है, भगवानको आपसे कामभि है। जहां क्लेश तहां आराम भि है, इनसे परे मोक्ष दिला देना॥ १॥

* यहांसे लेकर अगले चार गजल कव्वाली इन्दौर कबीर मंदिरके सेवक भगवान प्रसादका बनाया है।

कव्वाली २—दीन दयाल दया करके मुझे चरनकी शरण बुला लेना। खट खट झंझट इस दुनियांकी बिलकुलही मेरि छुड़ा देना॥ मुझे कर्म कुलालने है घेरा, चोरासी योनिनमें गेरा। अब मिला है नरतनमें डेरा, इससे प्रभु पार लगा देना॥ शुद्ध अंतःकरण होवे मेरा, नित उठ मैं ध्यान धरूं तेरा॥ हे नाथ यही चाहता चेरा, मुझे ऐसीही बुद्धी सदा देना॥ चित चंचल निश्चल हो जावे, गुरू जिससे पूजा पाठ कुछ वन आवे। सब विषय भोगसे अलगावे, मेरे मनको शुद्ध बना देना॥ मेरे कार्य्य न कोई पापके हो नितभजन कीरतन आपके हो। मेरे नाश दुख त्रिपतापके हो मेरा आवागमन मिटा देना॥ मुझे अहंकार एक आपका हो, भगवान कहें नजर आपका हो। मेरा सुमिरन अजपा जापका हो, मुझे अपनेमें आप मिला लेना॥ २॥

कव्वाली ३—मेरि विनय सुनो करुना निधान मुझे चरणोंका दास बनालेना। मैं फंसा मोह पापमें आन, कर कृपा जरा सुलझा देना॥ कर कृपा आपने दी काया, शुभ कार्य्य करनेको फरमाया। नहीं मुझसे कुछभी बन आया, इस दोषको मेरे भुला देना॥ निशि दिन मैं करूंगा भजन तेरा, ये वादा है बेशक मेरा। यहां आतेही मोहने घेरा, जिससे पड़ा दुःख सदा सहना॥ हूँ महा मूर्ख अवगुनकी खान, विषयोंसे लीन पापी महान।

कर दया दृष्टि दो भक्ति दान, मेरे मनका मैल छुड़ा देना॥ तुम्हें नेति २ कहें चारों वेद, नहीं ऋषी मुनी कोई पाता भेद। ये सुनके मुझे है बडा खेद, मेरे संशयको नाथ मिटा देना ॥ व्याकुल हो टेरता तुम्हें भगवान, होकर दयाल दो दरश आन। मुझे दीन दुखी मति हीन जान, कहिं चितसे न अपने भुला देना॥३॥ अरे मान मान मन मूढ मान, मुझे भजन प्रभूका करने देना । क्यों करे रात दिन परेशान, जग भवमें मुझे तरने देना ॥ पड़ तेरे संग अती दुख पाया, तूने जहां तहां मुझे भटकाया। अब हुई कुछ उस प्रभूकी दाया, मुझे ध्यान उसीका धरने देना । हे चित चंचल बड़ा बेइमान, पल २ में रचे नित नयी तोफान । नहीं धरन देत मोहिं नेक ध्यान, उसको भी मुझे हरने देना ॥ लिया अंतःकरणको मैंने जान, जहां वसे हो तुम सब आन आन। है बुद्धी बिचारी अभी नदान, जरा विवेकमें इसे परने देना॥ मेरेही बल-बने पहलवान मेराही बुरा चाहते हैवान । अभी तोड दूंगा मैं सबका मान, नहीं कार्य्य मेरा सरने देना॥ भगवान दास गुरु ज्ञान पाय, ये खुर्दी करन लगते सहाय। बिन भगती सदा जीव गोते खाय, मुझे चरन गुरुके पडने देना॥ ४॥

इति गजल कव्वाली ।

# अथ सुआ बत्तीसी प्रारम्भः ॥

( भय्या भगवती दासके ब्रह्मविलाससे )

दोहा—नमस्कार जिन देवको, करों दुइ कर जोर ।
सुवा बत्तीसी सुरस मैं, कहूं अरिन दल मोर ॥१॥
आतम सुआ सुगुरु बचन, पढत रहै दिन रैन ।
करत काम अघरीतिके, यह अचरज लख नैन ॥२॥
सुगुरु पढावे प्रेमसो, यह पढत मन लाय ।
घटके पट जो ना खुले, सबहिं अकारथ जाय ॥३॥
( साखी—गुरु बिचारा क्या करे शिष्यहिमें है चूक ।
शब्द बान बेधे नहीं, बाँ बजावे फूँक ।
गुरु विचारा क्या करे, कहै न खुलै कपाट ।
स्वान चौक बैठायके, फिरि फिरि ऐपन चाट ॥ )
बीजक ॥

चौपाई—सुवा पढायो सुगुरु बनाय । करम बनहिं-जिन जइयो भाय ॥ भूले चूके कबहुं जो जाहु । लोभ नलनिपे दगा न खाहु । ४॥ दुर्जन मोह दगाके काज ॥ बांधी नलनी तर धर नाज ॥ तुम मति बैठहु सुवा सुजान। नाज विषय सुख लहि तिहिं थान ॥ ५ ॥ जो बैठहु तो पकडि न रहियो । जो पकडो तो दिढ मति गहियो ॥ जो दिढ गहो तो उलटि न जइयो । जो उलटो तो तजि भगि जइयो ॥६॥ यहि विधि सुवा पढायो नित्त । सुवटा पढिके भयो बिचित्त ॥ पढत रहै निशि दिन यह बैन ।

सुनत लहे सब प्रानी चैन ॥ ७ ॥ इक दिन सुवटे आई मने गुरु संगति तजि भजिंग बनै ॥ बनमें लोभ नलनि अति बनी । दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ ता तरु विषय भोग अन धरे । सुवटे जान्यो ये सुख खरे ॥ उतरे विषय सुखनिके काज । बैठि नलनिपै विलमे राज ॥ ९ ॥ बैठो लोभ नलनिपै जबै । विषय स्वाद रस लटके तबै ॥ लटकत तरे उलटिगे भाव । तर मूंडी ऊपरभे पाँव ॥१०॥ नलनि दिढ पकरे पुनि रहै ॥ मुखने बचन दीनता कहै ॥ कोउ न बनमें छुडावनहार । नलनी पकरहिं करहिं पुकार ॥ ११ ॥ पढन रहे गुरुके सब बैन । जे जे हितकर सिखये पैन ॥ सुवटा बनमें उड़ि जनि जाहु । जाहु तो भूल खना मनि खाहु ॥ १२ ॥ नलिनीके मति जइयो तीर । जाहु तो तहां न बैठो कीर ॥ जो बैठो तो दिढ मति गहो । जो दिढ गहो तो पकरि मत रहो ॥ १३ ॥ जो पकरे तो चुगा न खैहो । जो खाओ तो उलटि न जैहो ॥ जो उलटो तो तजि भगिगैहो । इतनी सीख हृदयमें लहिहो ॥ १४ ॥ ऐसे बचन पढत पुनि रहै । लोभ नलनि तजि भजो न चहै ॥ आयो दुर्जन दुर्मति रूप । पकडि लयो सुवटा सुन्दर भूप ॥ १५ ॥ डारे दुखके जाल मंझार । सो दुख कहत न आवे पार ॥ भूख प्यास बहु संकट सहै । परबस परे महा दुख लहै ॥ १६ ॥ सुवटाकी सुधि बुधि सब गयी । यह तो बात और कछु भयी ॥ आय

परे दुख सागर माहिं । अब इतते कितको भगि जाहिं ॥१७॥ केनो काल गयो इह ठौर । सुवटे जियमें ठानी और ॥ यह दुख जाल कटै किहि भांति । ऐसी मनमें उपजी खांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु सुमिरन करे । पाप जाल काटन चित धरे ॥ क्रम क्रम कर काट्यो अघ जाल । सुमिरन फल भयो दीनदयाल ॥ १९ ॥ अब इतते जो भजिके जाऊँ । तो नलनी पर बैठि न खाऊं ॥ पायो दाव भजो ततकाल । तजि दुर्जन दुर्गति जंजाल ॥ २० ॥ आये उडत बहर बन माहिं । बैठे नर भव द्रुमकी छाहिं ॥ तित इक साधु महा मुनिराय । धर्म देशना देत सुभाय ॥ २१ ॥ यह संसार कर्म बन रूप । ता महिं चेतन सुवा अनूप । पढत रहे गुरु बचन विशाल । तौहु न अपनी करै संभाल ॥ २२ ॥ लोभ नलनि पर बैठे जाय । बिषय स्वाद रस लटके आय ॥ पकरहिं दुर्जन दुर्गति परे । तामें दुख बहुत जिय भरे ॥ २३ ॥ सो दुख कहत न आवे पार । जानत जिन वर ज्ञान मंझार ॥ सुनते सुवटा चौक्यो आप । यहि तो मोहिं पर्यो सब पाप ॥२४॥ ये दुख तो सब मैंही सहे । जो मुनिवरने मुखते कहै । सुवटा सोचै हिये मंझार । ये गुरु सांचे तारन हार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिर्यो करम बन मांहि । ऐसे गुरु कहिं पाये नाहिं ॥ अब मो पुन्य उदय कछु भयो । सांचे गुरुको दरशन लयो ॥ २६ ॥ गुरुकी गुन

स्तुति बारम्बार । सुमिरे सुवटा हिये मंझार ॥ सुमिरन आप पाप भजि गयो । घटके पट खुलि सम्यक् थयो ॥ समकित होत लखि सब बात । यह मैं यह पर द्रव्य विख्यात ॥ चेतनके गुन निज महिं धरे । पुद्गल रागादिक परिहरे ॥ २८ ॥ आप मगन अपने गुन मांहि । जनम मरन भय जियकी नाहिं ॥ सिंह समान निहारत हिये । कर्म कलंक सबहीं तजि दिये ॥ २९ ॥ ध्यावत आप माहिं जगदीश । दुहुं पद एक विराजत ईश ॥ यहि विधि सुवटा ध्यावत ध्यान । दिन दिन प्रति प्रगटत कल्यान ॥ ३० ॥ अनुक्रम शिव पद जिवको भयो । सुख अनन्त विलसत नित नयो ॥ सत संगति सबको सुख देय । जो कछु हियमें ज्ञान धरेय ॥ ३१ ॥ केवलि पद आतम अनुभूत । घट घट राजत ज्ञान संजूत ॥ सुख अनंत विलसे जिय सोय । जाके निज पद परगट होय ॥ ३२ ॥ सुआ बतीसी सुनहु सुजान । निज पद प्रगटत परम निधान ॥ सुख अनंत विलसहु ध्रुव नित्त । भय्याकी विनती धर चित्त ॥ ३३ ॥ सम्बत सत्रह त्रेपन माहिं । आश्विन पहिले पच्छ कहाहिं ॥ दसमी दशा दिशा परगास । गुरु संगति ते शिव सुख भास ॥ ३४ ॥

इति श्री आत्मनिष्ट परमार्थीवेद्य कबीराश्रमाचार्य स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी द्वारा संग्रहीत कबीरपंथी शब्दावली छः खण्डका प्रथम भाग समाप्त ॥ शुभम् ।

सत्यनाम ।

# शब्दार्थ चिन्तामणि कोषका उपक्रम ॥

सद्गुरु कबीर साहबकी सर्ववाणी अध्यात्मतत्त्वके उपदेशोंसे भरी पडी है । अध्यात्मतत्त्वके सच्चे जिज्ञासुओंके लिये, यदि वह सच्चा अधिकारी है, तो उसे, आधी साखीमें ही सार मिल जाता है, जैसा सद्गुरुने कहा है–

**आधी साखी सिर खडे, जो निरुवारी जाय ।**
**क्या पंडित क्या पोथिया, रात दिवस मिलि गाय ॥**

किन्तु वर्तमान कालमें अधिकारियोंके कमी और साधारण लोगोंकी वृत्ति बहिर मुख होनेके कारण तथा श्रद्धा भक्तिके अभावसे, साधारण वाणियोंमें भी लोगोंको सन्देह रहा करता है और उसके ही समझनेमें उनकी बुद्धि असमर्थ होती है । तब गूढ वाणियोंमें वह बहिरमुख वृत्तिकैसे परवेश कर सकती है । इतना होनेपर भी साम्प्रदायिक पक्षपातके कारण अथवा रिवाजके कारण, लोगोंकी प्रवृत्ति वाणियों के संग्रह करने और कभी कभी जमाव आदिके अवसरपर वाणियोंको बांचने गाने और बचन विलास–( सत्संग ) की आवश्यकता तो पडतीही है । अथवा जो लोग श्रद्धापूर्वक कुछ जानने और पानेकी अभिलाषासे वाणियोंका पाठ करते हैं उन्हेंभी अर्थ करने और समझने में बडी कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं । क्योंकि कबीर साहबकी वाणीमें अनन्त ऐसे सांकेतिक शब्द भरे पडे हैं जिनको भेदी विना जानना अत्यन्त कठिन है । यथार्थ बात तो यह है कि संसारकी किसी भी वाणीका अर्थ उस वाणीके यथार्थ रहस्य ज्ञाताके विना समझाये समझमें आना अत्यन्त दुस्तर है तथापि मनुष्य मनन शील प्राणी हैं, सबको अपनी बुद्धिद्वारा समझनेकी अभिलाषा रहा करती है ।